प्रकाशक
श्री हजारीमल बाँठिया
सयोजक–श्री अगरचंद नाहटा अभिनन्दन-ग्रन्थ प्रकाशन समिति
बीकानेर (राजस्थान)

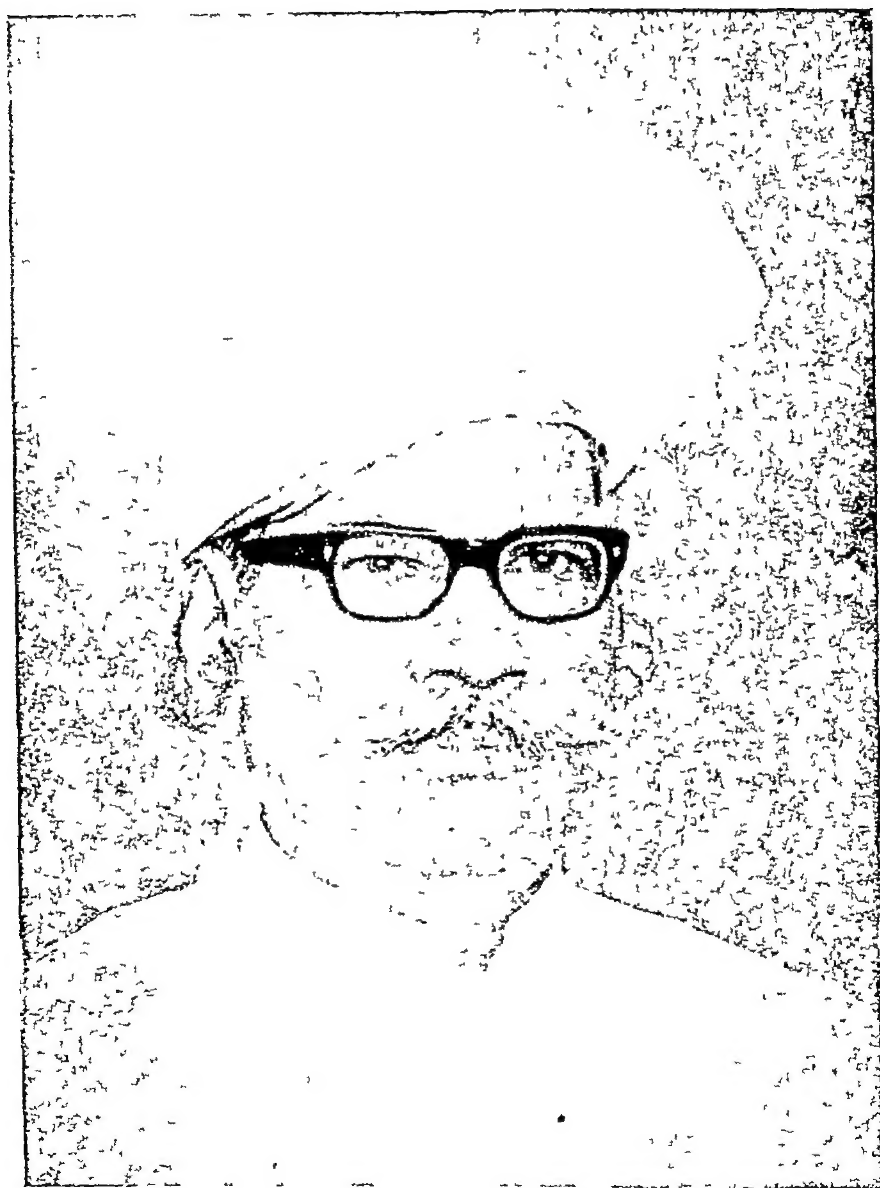
प्राप्तिस्थान १. श्री अभय जैन ग्रन्थालय
नाहटोकी गवाड, बीकानेर (राजस्थान)
फोन . १३६५

२ नाहटा-बन्धु
५२।१६ शक्करपट्टी, कानपुर–१
फोन ६६१३४

सस्करण प्रथम (५०० प्रतियाँ)
सन् १९७६ ई०

मूल्य प्रथम खड १०१)
दोनो खड १५१)

मुद्रक
बाबूलाल जैन फागुल्ल
महावीर प्रेस, भेलूपुर, वाराणसी (उ० प्र०)
फोन . 65848



सिद्धान्ताचार्य श्री अगरचन्द जी नाहटा

आत्म-निवेदन

राजस्थान प्राचीनकालसे ही विविधताओका क्रीडास्थल रहा है। कही आकाशको छूती-सी पर्वत-शृखलाएँ हैं, तो कही पठार और मैदान। विशाल मरुस्थल भी इस प्रदेशका मुख्य आकर्षण है। राजस्थान वीर-प्रसूता भूमिके नामसे जगविख्यात है। जहाँ इसने अपने गर्भसे अनेक वीरो और चूडामणियोको जन्म दिया वहाँ अनेक साहित्यकारो, लेखको और कवियोकी भी प्रसूता रही है। मेरे मामा परमपूज्य श्रद्धेय श्री अगरचन्दजी नाहटा और भ्राता परमपूज्य श्री भँवरलालजी नाहटा भी इस मरुभूमिकी अनमोल देन हैं। आप मेरी माता श्रीमती मगनबाईके अनुज है। मेरा जन्म ननिहालमे ही नाहटाजीके घर वि० स० १९८१ आसौज वदी १० को बीकानेरमे हुआ। मेरे पिता श्री फूलचन्दजी बाँठिया व्यापारनिमित्त कलकत्तामे ही निवास करते थे। अत ननिहालमे ही मै अपने बाल्यकाल की अठखेलियाँ करता हुआ युवा हुआ। अपने मामा और नाहटा परिवारके सरक्षणसे ही मै जीवनके वास्तविक मूल्यको समझ सका। मेरा यह कथन किंचित्मात्र भी अतिशयोक्ति-पूर्ण नही होगा कि आज मै जीवनमे जो कुछ भी कर सका वह सब नाहटा-परिवारके आशीर्वादका ही परिणाम है। मेरे पिताजीसे जहाँ मुझे उदारता, जीवनकी व्यावहारिकता और प्रामाणिकता मिली वहाँ जीवनके अन्य सब पहलुओपर नाहटा-परिवारकी गहरी छाप मुझपर पडी। परमपूज्य स्वर्गीय मामा भेरुदानजीसे सामाजिक सस्थाओमे काम करना सीखा तो दूसरी तरफ नानाजी स्व० शकरदानजी नाहटा व मामा सुभैराजजीसे व्यापारिक दिलेरी व साहस, और श्री मेघराजजीसे सहृदयता। मामा अगरचन्दजीने बाल्यकालसे ही साहित्य और लेखनकी तरफ मेरे मानसको मोडा, जो शनै -शनै मेरे जीवनका एक महत्त्वपूर्ण अग बन गया। भाईजी श्रीभवरलालजीसे विनम्रता और माताजीसे परोपकारिताका गुण भी मैने ग्रहण किया। स्व० अभयराजजीका देहावसान मेरे जन्मसे पूर्व ही हो चुका था। उनकी स्मृतिमे स्थापित ग्रन्थालय आज भी उनकी स्मृति दिला रहा है।

आजसे ३७-३८ वर्ष पूर्वसे ही मामाजी अगरचन्दजी मेरे प्रेरणास्रोत रहे हैं। उनका जीवन-चरित्र मैने 'सामाजविकास' साप्ताहिक कलकत्ता, 'जैनध्वज' अजमेर व 'अनेकान्त' मासिक सहारनपुरमे लिखा था। सन् १९४०मे पुरातत्त्वाचार्य पद्मश्री मुनि जिनविजयश्रीजी बीकानेर पधारे तो उन्होने मामाजीकी अध्यक्षतामे आयोजित सभामे प्राचीन साहित्यके सरक्षणपर बडा महत्त्वपूर्ण भाषण दिया जिससे प्रभावित होकर मैने अनेक लेख लिखे जिन्हे मामाजीने विभिन्न पत्र-पत्रिकाओमे प्रकाशित कराकर मेरे उत्साहको दुगना किया। आपकी छत्रछायामे मेरी साहित्यिक रुचि निरन्तर बढती गयी। मैंने मुनिश्री जिनविजयजीका भाषण लिपिबद्ध करके 'अनेकान्त'मे प्रकाशित

कराया। उसी वक्त एक लेख मैने 'जैनध्वज' साप्ताहिक अजमेरमे लिखा—"विद्वानों-की कद्र करना सीखो"। उसमे मैने जैन-समाजसे आग्रह किया था कि जैन-साहित्य और समाजकी अनवरत सेवामे लीन मुनिश्री जिनविजयजी, श्री अगरचन्दजी नाहटा, श्री भवरलालजी नाहटा और श्री मोहनलालजी दल्लीचद देसाईका उनकी अमूल्य सेवाओके लिए अभिनन्दन करना चाहिये किन्तु जैन-समाजने इस ओर कोई ध्यान नही दिया।

आज ३६ वर्षोंके भीतर श्री अगरचन्दजी नाहटा और भवरलालजी नाहटा अपनी पुरातत्त्वगवेपणा, शोधनिबन्ध और इतिहासको नयी दिशा देनेके कारण न केवल जैन-समाज और राजस्थानके ही वरन् सम्पूर्ण भारतके अत्यन्त लोकप्रिय विद्वान् हो गये हैं। सन् १९६४मे सुप्रसिद्ध हास्य-कवि 'काका हाथरसी'की हीरक-जयन्ती समारोह व अभिनन्दन समारोह मेरे ही सयोजनमे हाथरसमे हुआ। उसी क्षण मेरे मस्तिष्कमे आया—पूज्य मामाजी जिनके अतुल स्नेह और आशीर्वादसे आज मैं कुछ बन सका, क्यो न उनके सम्मानमे एक 'अभिनन्दन-ग्रन्थ'के प्रकाशनकी योजना बनायी जाये। मैंने अपना मन्तव्य मामाजीके समक्ष रखा तो उन्होने यह कहकर इन्कार कर दिया कि "मेरेमे क्या गुण है। मेरेसे अधिक गुणी और सेवा-भावी पुरातत्त्वाचार्य विद्यमान हैं।" आपका यह कथन सुनकर रह-रहकर मेरे मस्तिष्कमे कवि रहीमका उक्त दोहा घूमता था—

"बडे बडाई न करे, बडे न बोले बोल।
हीरा मुखसे न कहे, लाख हमारा मोल॥

"विद्या ददाति विनय"की सजीव प्रतिमा तब मैने मामाजीके रूपमे पायी और बरबस ही मेरा दिल श्रद्धासे गद्गद् हो गया। मामाजीके मना करनेपर भी मैंने डॉ० हरीशके निर्देशनमे अभिनन्दन-ग्रन्थका कार्य प्रारम्भ कर दिया। जिससे भी बात हुई, सबने एक ही स्वरमे कहा—"नाहटा-बन्धुओ का अभिनन्दन ग्रन्थ होना चाहिये।" इससे मेरा उत्साह द्विगुणित हो गया।

१६ मार्च, १९७१को बीकानेरमे नाहटाजीके पष्ठि-पूर्त्तिके दिन चैत वदी ४ को सोनागिरिके कुएँपर महाराजा बीकानेर डॉ० कर्णीसिहजीके परामर्शपर एक बृहत् सभाका आयोजन नाहटाजीके अभिनन्दनके निमित्त हुआ। सभाकी विशालता और भव्यता देखकर मेरा मन-मयूर नाच उठा। मैंने डॉ० मनोहर शर्मा और श्री लाल-नथमल जोशी आदिके उत्साहित करनेपर घोषणा की कि ४ अक्टूबर, १९७१को नाहटा अभिनन्दन-ग्रन्थ प्रकाशित कर दिल्लीके भव्य समारोहमे उनको भेंट किया जावेगा। इस सभाकी अध्यक्षता महाराज कुमार नरेन्द्रसिहजीने की थी।

मै कृतज्ञ हूँ श्री रामवल्लभजी सोमाणीका, जो इस ग्रन्थके प्रबन्ध सम्पादक है। उन्होने इस गुरुत्तर कार्यको अपने कधेपर लेना स्वीकार किया। भारत-प्रसिद्ध विद्वानोका एक सपादक-मडल इस ग्रन्थके लिए सगठित किया गया और लब्ध-

प्रतिष्ठ विद्वान डॉ० दशरथ शर्माने प्रधान सम्पादक बननेकी अपनी स्वीकृति दे दी। जब विद्वानोंसे नाहटा अभिनन्दन-ग्रन्थके लिए लेख आदिके लिए प्रार्थना की गयी तो इतने महत्त्वपूर्ण लेख आये कि उन सबके प्रकाशित होनेपर नाहटा अभिनन्दन-ग्रन्थ स्वय अपने आपमे राजस्थानी जैन-साहित्य, सस्कृति और इतिहासका 'एनसाइक्लोपीडिया' बन जायेगा।

इस कार्यको शीघ्र क्रियान्वित करनेके लिए उदयपुरके सुप्रसिद्ध लोक-गायक श्री चन्द्रगन्धर्वने अपना अमूल्य समय दिया और दिल्लीमे विश्वधर्मप्रेरक मुनि सुनीलकुमारजीके सान्निध्यमे अभिनन्दन समारोहकी समितिका निर्माण भी किया। किन्तु दुर्भाग्यवश मेरी व्यक्तिगत उलझनोके कारण यह नही हो सका, इसके लिए मैं स्वय दोषी हूँ। दिल्लीमे जहाँ भी गया सबने तन, मन और धनसे इस पुनीत कार्यमे सहयोग देनेका वचन दिया।

इधर कुछ वर्षोमे महँगाई अधिक हो जानेसे जितने बजटमे इस ग्रन्थके प्रकाशन व समारोहकी व्यवस्था सोची थी, वह सारी स्कीम चौपट हो गयी। मै इतनी बडी धनराशिके अभावमे निराश हो गया। दो वर्ष पूर्व जब मै मद्रास गया तो मेरे परम-मित्र श्री केशरीचदजी सेठियाने उत्साहित होकर कहा, "**नाहटाजीका सम्मान सरस्वती देवीका सम्मान है**। पैसेकी कोई कमी नही, आप १५-२० दिन रुके, सारी अर्थव्यवस्था यहीसे सग्रहीत हो जावेगी।" मेरा मद्रासमे इतना ठहरना सम्भव नही था। फिर एक दिनमे ही २-४ घटोके अन्दर ही अर्थसग्रहके कार्यका श्रीगणेश किया गया। जहाँ भी गया, वहाँ इस योजनाकी प्रशसा और आवश्यकता बतायी उनमे स्वनामधन्य स्व० सेठ पूनमचद आर० शाह (साउथ इण्डिया फ्लावर मिल, मद्रास) जिनका कुछ महीनो पूर्व स्वर्गवास हो गया, ने कहा, "नाहटा-बन्धुओके सम्मानमे एक लाख रुपये देओ तो भी कम है।" फिलहाल मद्रासकी सामाजिक मर्यादाके कारण सिर्फ ५०१) दे रहा हूँ और बाकी बादमे दूँगा। ऐसे ही उत्साहजनक वचन श्री मिलापचन्दजी ढढ्ढा मद्रासवालोने व्यक्त किये थे।

समय व्यतीत होता गया और आज यह हर्षका विषय है कि यह भव्य आयोजन श्री नाहटा-बन्धुओकी जन्मस्थली बीकानेरमे ही बीकानेरके कतिपय उत्साही कार्यकर्त्ताओकी सूझ-बूझ व श्री महावीर जैन—मडलके तत्त्वावधानमे होना निश्चित हुआ है। श्री भँवरलालजी कोठारी बधाईके पात्र हैं जिन्होने अभिनन्दन समारोहके गुरुतर कार्यको सहर्ष करना स्वीकार कर लिया। वे इस समारोहके सर्वसम्मत सयोजक चुने गये।

अर्थाभावके कारण ग्रन्थका प्रथम खड श्री नाहटाजीका जीवन-चरित्र और सस्मरण ही अब तक प्रकाशित हो सका है, वह भेट किया जा रहा है। दूसरे खडमे विद्वानोंके लेख सग्रहीत है, प्रकाशित किये जायेंगे। आशा है, वह अगले वर्ष प्रकाशित कर नाहटा-बन्धुओको भेट किया जायेगा। मै उन विद्वान् बन्धुओका आभारी हूँ जिन्होने अमूल्य लेख-सामग्री भेजकर इस ग्रन्थकी शोभा बढायी है।

श्री महावीर प्रेस, वाराणसीके स्वामी श्री बाबूलालजी जैन फागुल्ल भी धन्यवादके पात्र है जिन्होने साजसज्जा और ग्रन्थ-प्रकाशनमे अभूतपूर्व सहयोग दिया है। ग्रन्थमे जो त्रुटियाँ रह गयी है उनका दोषी मै स्वय ही हूँ और सब महानुभावोसे क्षमाप्रार्थी हूँ।

हजारीमल बाँठिया
सयोजक
श्री अगरचद नाहटा अभिनन्दन-ग्रन्थ
प्रकाशन समिति

१९ मार्च, १९७६
कानपुर

निवेदन

श्री अगरचदजी नाहटा राजस्थानके प्रतिभा-सम्पन्न साहित्यकार, लेखक, विचारक और इतिहासकार ही नही, अपितु समस्त भारतके गौरव हैं। आप बहुमुखी प्रतिभाके धनी है। अपने व्यवसायमे लगे रहते हुए भी आपका साहित्य-प्रेम बराबर बना हुआ है। अद्भुत स्मरण-शक्तिके साथ-साथ विद्यानुराग विरले मनुष्योमे ही होता है। जैसलमेरके शिलालेखोका जो सग्रह नाहटाजीने किया, वह आपके पुरातत्त्व-प्रेम का द्योतक है। कठिन परिस्थितियोमे जैसलमेरके रेतीले टीलों, मदिरो आदिमे जाकर आपने जो सग्रह किया है, वह अद्भुत है। राजस्थानका ही नही अपितु भारतके किसी भी भागका ऐसा जैन-लेख-सग्रह अभी तक नही छपा है।

इस प्रकार जिस किसी भी कार्यमे श्री नाहटाजी हाथ डालते है, वह सागोपाग पूर्ण होता है। प्राचीन साहित्यके उद्धारके लिए जो कार्य आपने किया, उसकी मिसाल बहुत ही कम देखनेको मिलती है।

विद्यादानके सम्बन्धमे आप बहुत ही उदार हैं। हिन्दी और इतिहासमे शोध करनेवाले विद्वानोको मुक्तहस्तसे जिस प्रकार नाहटाजीने सहयोग दिया है, वैसी मिसाल बहुत कम है। प्राय विद्वानोको शोध-कार्यमे सामग्रीके लिए कई जगह भटकना पडता है किन्तु जब वे श्री नाहटाजीके यहाँ आ जाते है तो उनको यथेष्ट सामग्री बिना किसी रोक-टोकके एक साथ ही मिल जाती है। इस प्रकार श्री नाहटाजीके अद्भुत व्यक्तित्वके लिए जितना भी कहा जाये, कम होगा।

श्री नाहटाजीको अभिनन्दन-ग्रन्थ भेट करनेकी योजना प्रारभमे श्री हजारीमलजी बाँठियाने बनायी थी। श्री नाहटाजी स्वय नही चाहते थे कि उनका अभिनन्दन-ग्रथ प्रकाशित किया जाये, किन्तु जब काफी दबाव डाला गया तब इन्होने इसके लिए स्वीकृति दी।

नाहटाजीकी सेवाओको देखते हुए अभिनन्दन-ग्रन्थ कई वर्ष पूर्व ही प्रकाशित होना चाहिये था, किन्तु राजस्थानमे अन्य साहित्यसेवी मुनि जिनविजयजी, पडित चैनसुखदासजी आदिके ग्रथोमे भी इसी प्रकारसे अप्रत्याशित देर हुई है।

मूलरूपसे डॉ० हरीशने इस कार्यको प्रारभ किया था किन्तु कई कारणोसे वे इसे पूर्ण नही कर सके। कालान्तरमे डॉ० मनोहरजीकी प्रेरणासे वह कार्य मैने लिया। स्व० डॉ० ए० एन० उपाध्ये, श्री रत्नचद्रजी अग्रवाल, डॉ० साडेसराजी, डॉ० बी० एन० शर्मा और श्री नरोत्तमदासजी स्वामीने सम्पादक-मडलमे रहनेकी स्वीकृति देकर अपना सहयोग प्रदान किया।

ग्रन्थको मूलरूपसे एक ही भागमे प्रकाशित करनेकी योजना थी, परन्तु अब इसमे २ खड होगे। पहले खडमे श्री नाहटाजीकी जीवनी, सस्मरण आदि हैं। दूसरे खडमे इतिहास, पुरातत्त्व, साहित्य, धर्म, दर्शन आदि विषयोके लेख प्रकाशित होगे।

जीवनी और सस्मरणवाले खडमे कुछ पृष्ठ यद्यपि अधिक हो गये हैं किन्तु श्री नाहटाजीके सम्बन्धमे आये हुए सस्मरणोको अविकल रूपसे प्रकाशित करना हमने आवश्यक समझा है। यदि ऐसा नही करते तो भेजनेवालोकी पुनीत भावनाओपर आघात पहुँचता।

गत २-३ वर्ष पूर्व श्री बाँठियाजीके प्रयत्नसे दिल्लीमे मुनि श्री सुशीलकुमारजीके नेतृत्वमे इस सम्बन्धमे समारोहकी योजना बनायी थी। इसके लिए स्व० मोहनसिंह सेंगर आदि कई सज्जनोने भी सहयोग देनेका आश्वासन दिया था। किन्तु उस समय ग्रन्थ प्रकाशित नही हो सका। कागजकी महँगाई आदिके कारण इस पूरे ग्रन्थके छपनेमे देरीको देखते हुए इसका पहला खड आपके सम्मुख प्रस्तुत है।

श्रीमान् नाहटाजीने अति महत्त्वपूर्ण कार्य किया है, अतएव आपका अभिनन्दन-ग्रन्थ प्रकाशित करते हुए हम सभी स्वयको गौरवान्वित अनुभव कर रहे हैं।

रामवल्लभ सोमानी

अनुक्रमणिका

प्रथम खण्ड
जीवन परिचय

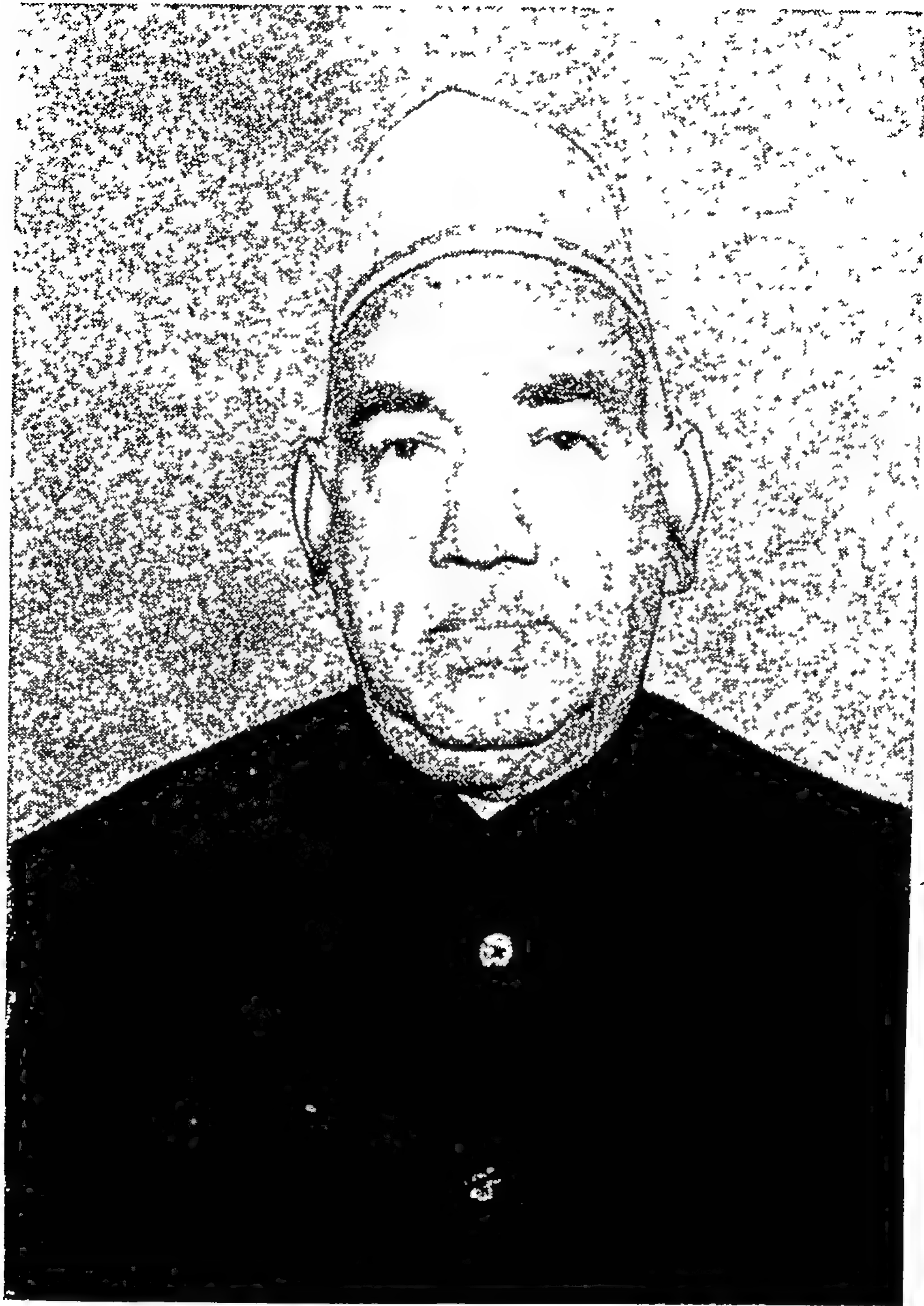
द्वितीय खण्ड
श्रद्धा-सुमन

तृतीय खण्ड
व्यक्तित्व, कृतित्व और संस्मरण

इतिहास-रत्न-सिद्धान्ताचार्य-शोधमनीषि-विद्यावारिधि-जैन-श्वेताम्बराम्नायिक-राजस्थान-विद्वत्कुल-शिरोमणि-श्रीमद् अगुरुचन्द्र-नाहटा-षट्षष्टि-पूर्ति-समारोह-प्रशस्ति-श्लोक-द्वादशी

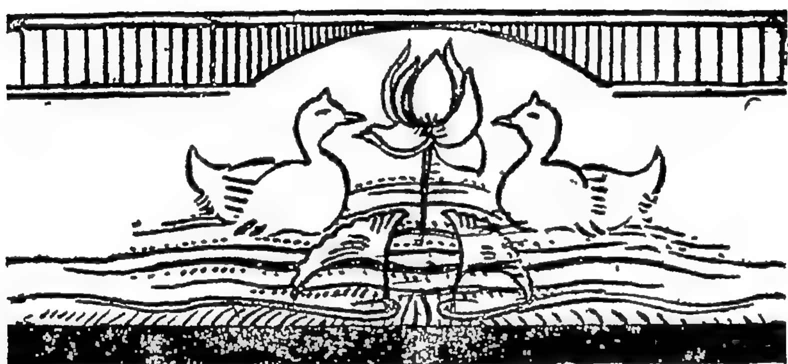
कृतिरिय गौड-श्रीसुनीतिकुमार-देवशर्मणा काश्यपस्य ।
खिस्ताब्दा १९७६ वर्षे मार्चस्य द्वादशे दिवसे ॥

भारते मरुदेशस्य विश्रुत ख्याति पञ्चकम् ।
शूरता राजपुत्राणा सूरता विदुषा तथा ॥ १ ॥
उद्योगे नेतृता ख्याता कौशल्य तु कलासु च ।
दायन्ते वणिजो वित्त धर्मदेयात्र साधव ॥ २ ॥
राजानो यत्र योद्धार स्त्रिय सर्वा पतिव्रता ।
सम्मान देशमातुर्यै प्राणैरपि सुरक्ष्यवे ॥ ३ ॥
वज्रादपि कठोर हि वोराणा यत्र जोवनम् ।
वीराङ्गणा-चरित्रन्तु मधुर कोमल मृदु ॥ ४ ॥
मरुवाट नदीहीन वालु-पर्वत-सङ्कुलम् ।
रुक्ष-भूमि हरिद्वर्ज्यं श्रमिष्णु-जन-पोषणम् ॥ ५ ॥
निखिल-पृथिवी-व्यापी व्यापारो मरु-वासिनाम् ।
न केवल तु व्यापारे विद्यासु मानवीषु च ॥ ६ ॥
मानसिक्या तथात्मिक्या सदा धन्या मरो कृति ।
प्रख्याता मरु-वाटस्य श्रेष्ठिन सूरिणस्तथा ॥ ७ ॥
विद्या-विनय-धर्येण पूर्णा लोकहिते रता ।
अधुना मूर्ध्नि तेषा वै अगुरुर्नाहटान्वय ॥ ८ ॥
बीकानेर-वास्तव्य स सत्शिष्यैरनुनेवित ।
प्रज्ञान-सौरभेनास्यामोदित सुधिया जगत् ॥ ९ ॥
सर्वेषा वदनीयो यो शीलेन सुकृतेन च ।
सर्व-शास्त्रे बुध-श्रेष्ठ आर्षे जैने च वैदिके ॥१०॥
इतिहासे पुराणे च भाषासु निखिलास्वपि ।
सस्कृते प्राकृते तद्वत् पिङ्गले डिङ्गलेऽपि च ॥
बहुभाषा-विलासो य आङ्ग्ल-गूर्जर-हैन्दवे ॥११।
षट्षष्टि-वर्षपूर्तिर्वै सञ्जाता तस्य जीविते ।
अगुरुचन्द्र-सूरि-श्रीर् जीव्याद् वै शरद शतम् ॥१२॥



श्री हजारीमल जी बांठिया
संयोजक
अगरचन्द नाहटा अभिनन्दन-ग्रन्थ

प्रथम खण्ड



जीवन-परिचय

श्री अगरचंद नाहटा
वंश-परम्परा एवं जीवन-चरित्र

डॉ० ईश्वरानन्द शर्मा, एम० ए०, पी-एच० डी०, शास्त्री
प्रोफेसर, राजकीय डूगर स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीकानेर

जयन्तु ते सुकृतिन, शोधशास्त्राङ्गपारगा ।
नास्ति येषा यश काये, जरामरणज भयम् ।।

आचार्य श्रीतुलसीके शब्दोमें श्रीअगरचद नाहटा "जैन-शासनके बहुश्रुत साधना-शील उपासक है"[१], श्री देवेन्द्र मुनि उन्हे "बहुमुखी प्रतिभाके धनी"[२] और श्री मधुकर मुनि 'सरस्वती-समुपासक श्रीमन्त सेठ'[३] के नामसे अभिहित करते है ।

परम साध्वी सज्जनश्री जी आर्याको श्री नाहटा जी ने 'आदर्श श्रावक, अथक परिश्रमी साहित्य-सेवी और अध्यात्म साधक व्यक्ति'[४] के रूपमें प्रभावित किया है, मुनि जिनविजय[५] श्री नाहटा जी को 'समव्यसनी' कहते है ।

श्री श्रीरजन सूरिदेवके शब्दोमे श्री नाहटा जी 'शोध पुरुप',[६] श्री देवेन्द्रकुमार जैनके शब्दोमें 'शोध योगी'[७] और डॉ० नेमिचन्द्र शास्त्रीके अनुसार 'वाङ्मय पुरुप'[८] है ।

हिन्दी साहित्यके वरेण्य विद्वान् श्री हजारीप्रसाद द्विवेदीने उन्हे 'अवढर दानी',[९] पुरातत्त्व मनीषी श्री वासुदेवशरण अग्रवाल ने 'अतिश्रेष्ठ कर्मठ साहित्यिक',[१०] इतिहासवेत्ता श्री गौरीशकर हीराचन्द ओझाने 'खोजके वडे प्रेमी',[११] डा०सत्येन्द्र और श्री नरोत्तमदास स्वामीने उन्हे 'पुरातत्त्वेतिहास-साहित्यके अन्वेषक विद्वान्'[१२]के रूपमें देखा है। श्री माताप्रसाद गुप्तके लिए आप अत्यन्त उदार और अतिरिक्त कृपालु हैं।[१३] श्री चिम्मनलालजी गोस्वामीने उन्हे 'साहित्य-गगनका दैदीप्यमान नक्षत्र' कहा है श्री हीरालाल शास्त्री, डॉ० हीरालाल माहेश्वरी, श्री भोगीलाल साडेसरा, श्री दलसुख मालवणिया, डॉ० जेटली प्रभृति मूर्धन्य सरस्वती समुपासकोके श्री नाहटा आराध्य एव श्रद्धेय रहे है ।[१४]

कवियाकी अमर गिराने आपका सहस्रधाराभिषेक किया है। श्री भरत व्यासकी भावावलीमें आप मधुमय सुगध फैलानेके लिए साहित्यकी अगरबत्तीके समान सतत सक्रिय[१५] हैं। श्री कन्हैयालाल सेठियाने आपके चरणोमे भावपुष्पाञ्जलि अर्पित करते हुए स्वर्णधूलि-मरुधराको अपने जन्मसे कृतार्थ करनेवाला वताया है।[१६] श्री विमलकुमारकी रागात्मक वाणीमें आप 'ज्ञान-ज्योति दिनकर'[१७] और 'कवि शशि' की शब्दावलीमें

---

१ आचार्यजी का शुभ सन्देश, ५ अगस्त, १९७१, लाडनू राजस्थान से। २ श्री देवेन्द्र मुनिका सस्मरण। ३ श्री मधुकर मुनिका सन्देश। ४ श्री आर्या सज्जनश्री जी के आशीर्वचन। ५ मुनि श्रीजिन-विजय जी के पत्र। ६ श्री श्रीरजन सूरिदेवका आशीर्वाद। ७ श्री देवेन्द्रकुमार जैन के सस्मरण। ८ श्री नेमिचन्द्र शास्त्री का लेख। ९ समयसुन्दर कृति कुसुमाञ्जली, भूमिका, भाग, पृ० १। १० बीकानेर जैन लेख सग्रह, प्राक्कथन, पृ० १। ११ युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरि, सम्मति, पृ० ६। १२. अगरचन्द नाहटा लेख सूची, प्राक्कथन, पृ० ३। १३ वीसलदेव रासो, प्रस्तावना, पृ० ३। १४ इसी अभिनन्दन ग्रन्थ का सस्मरण भाग। १५ 'मधुमय सुगध फैलानेको, साहित्य अगरबत्ती जलती' जब तक यह कार्य न हो पूरा, तब तक ये साँस रहे चलती। १६ भेजूं हूँ मैं म्हांरै हिरदै री सरधा, चढाऊं हूँ चरणां मे भावा रा फूल। थां नै जलम दे'र धिन हुई, इं धरती री सोनल धूल। १७. 'ऐसे ज्ञान ज्योति दिनकरका, अभिनन्दन शत बार है'।

'विश्व कोशमें अमर रहेगा अगरचन्दका नाम' जैसी कमनीय कीर्त्तिके भाजन हैं।[१] राजस्थानीके प्रौढकवि श्री उदयराज उज्ज्वलने आपको मातृभाषाके सम्मानका आश्रय बताया है।[२]

इस प्रकार श्री अगरचन्द नाहटा जगम-तीर्थ ऋषि-मुनियोकी अहैतुकी कृपाके भाजन है, ज्ञानराशि-रस प्रमुदित पण्डित-मण्डलीके प्रमाण-पुरुप है, रसैकप्राण कवियोकी भावधाराके अजस्र आलम्बन है। आप अनेक सस्थाओके सचालक-निदेशक है। आपने अपने अगाध ज्ञान-प्रकाशसे अभिभापकके रूपमें शतश कृत्वा 'ज्योतिर्गमय' को साकारता प्रदान की है। आपकी ज्ञान-पिपासाने अनेक पुस्तक-कला-रत्नाकरोको रूपायित किया है। आप शतश अनुसधित्सुओके समर्थ सबल रहे है। इतिहासरत्न, सिद्धान्ताचार्य, विद्यावारिधि, राजस्थानी साहित्य वाचस्पति, जैनसघरत्न, जैसी अतीव सम्मानजनक उपाधियोसे विभूपित किए गए हैं। श्री नाहटाजी अपने आपमें परम-सारस्वत और विश्वकोप है।

ऐसे उत्तम श्लोक श्री अगरचन्द जी नाहटाके दिव्य व्यक्तित्व एव व्यापक कृतित्वके विपयमें अधिकाधिक जाननेके लिए कौन सुधी समुत्सुक नही होगा।

निवृत्ततर्षैरुपगीयमानात् भवौषधात् श्रोत्रमनोऽभिरामात्।
क उत्तमश्लोक गुणानुवादात्, पुमान् विरज्येत विना पशुघ्नात्॥[३]

अर्थात्—सतत सन्तुष्ट विवेकशीलोसे उपगीयमान, भवौपधिभूत, मन और श्रोत्रेन्द्रियोके लिए अभिराम, उत्तमश्लोक पुरुपोके गुणानुवादसे पशुघ्न नराधमको छोडकर और कौन विज्ञ नर विमुख होगा।

वे पुत्र धन्य हैं, जो अपने गुण-प्रकर्पसे अपनी माताकी गोदको श्लाघ्य चरितार्थ कर देते है। तुलसीके कारण हुलसीकी गोद[४] और महाराणा प्रतापके कारण उनकी वन्दनीया जननीकी कुक्षि सुन्दर भावोका आलम्बन बन सकी थी।[५] हमारे चरित-नायककी सतत सरस्वती समुपासना, सकल्प स्थिरता और प्रतिकूल परिस्थितियोसे जूझनेके सफल उत्साहसे प्रेरित एक कविने माता चुन्नीबाई नाहटाकी कुक्षिकी किस प्रकार सराहना की है, अवलोकनीय है—

धन्य धन्य चुन्नी बाई, जिसने सुत जाया अगरचन्द।
है नाहटा, ना हटा, सत्पथ से, गिर गये विपम विकराल बन्ध॥[६]

पुण्य-भूमि भारतके स्वर्णिम इतिहासमें जो गौरव-मडित स्थान वीर भूमि राजस्थानको प्राप्त है, वही स्थान राजस्थानकी गाथाओमें सैकतावृतधरा बीकानेरको उपलब्ध है। यह स्थल प्रकृतिका लीला-स्थल हैं। 'सावण बीकानेर' तो एक सर्वविदित उक्ति है। आकाशमें सघन घुमडते जलधर, उनमें मव्रीडा क्रीडारत सौदामिनीका लास्य, धरापर अकुरित हरित शस्यावलि, इतस्तत धरास्थित वीरवधूटी, रजत आभूपणोपम वर्पाजल,[७] मन्द मदिर गतिसे थिरकने वाला हृद्य समीरण, सुदूर वन प्रान्तरमें वृक्षकी उच्च शाखासे उपातमे प्रतिध्वनित मदिर केका, ग्राम सीमान्तमें सायकाल प्रविष्ट पशुधनकी क्वणित-रणित घटियो[८] और कृपक-पुत्रके हृदयोल्लाससे अनायासोद्भूत 'तेजा' का स्वर-निनाद कितना आह्लादक है, कितना मादक है और कितना

१ 'विश्व कोपमे अमर रहेगा, अगरचन्दका नाम'। २ बीकाणैं विदवान, अेकठ कीधा ईसवर,' मातर भासा मान, इसा सपूता आसरैं। ३ श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध पूर्वार्ध अध्याय १ श्लोक ३। ४ सुरतिय, नरतिय, नागतिय, सब चाहति अस होय। गोद लिए हुलसी फिरैं, तुलसी सो सुत होय। रहीम। ५ माई एहडा पूत जण, जैडा राण प्रताप, अकबर सूतो ओझकैं, जाण सिराणे साप। ६ आचार्य चन्द्रमौलि, 'नाहटा प्रशस्तिका'। ५ निहसे वूठउ घण, विणु नीलाणी, वसुधा थलि थलि जल वसइ प्रथम समागमि वसत्र पदमणी, लीवइ किरि ग्रहणा लसइ, क्रिसन-रुकमणी-री वेलि पद सख्या १९४। ८ मारू देस सुहामणउ, साँवणि साँझी वार', 'ढोला मारूरा दूहा सख्या २५१'।

आकर्षक है। मारूदेशका उक्त सौन्दर्य अपना द्वितीय नही रखता, जब बाजरियाँ हरी हो जाती है, उनके मध्यमें बेलोमें फूल लग जाते है और सारा भाद्रपद मास बरसता रहता[1] है।

यहाँ वर्षाऋतु जितनी आह्लादक है, सर्दी और ग्रीष्म भी उतनी ही सुखकर है। शीतका आरम्भ इसलिए मधुर है कि काचर-बोर और मतीरोको वह मीठा कर देता है—

दीयाली रा दीया दीठा, काचर बोर मतीरा मीठा।

ग्रीष्मका दिन अत्यन्त गर्म होता है लेकिन उसका सुखान्त-रात्रिपक्ष इतना मादक और शीतल होता है कि नीद अमृत-घूँटके समान मधुर लगती है।

ऊनाले मे तपै तावडो, लू आरा लपका। रातडली इमरत बरसावै, नीदा रा गुटका।।

बीकानेरके सुखद ऋतुपरिवर्तन और भौगोलिक परिवेशने स्थानीय जनजीवनको अत्यन्त उत्साही और स्पृहणीय बना दिया है। यहाँका जल आरोग्यप्रद और मानव मधुरभाषी होते है—

'देस सुहावउ, जल सजल, मीठा बोला लोइ'

बीकानेरीय भूखण्डका एक दूसरा पक्ष भी है, जो प्रत्यक्षमे आह्लादक न होते हुए भी गुणसर्जक अवश्य है। वर्षाके अभावमें यहाँ कई बार अकालकी स्थिति बन जाती है, कभी-कभी टिड्डीदल कृषककी आशाओपर तुषारापात कर देता है, जगल विषैले साँपोसे भरा रहता है, सघन वृक्ष और शीतल सुखद छाया तो मिलती ही नही। लोग भुरट खाते है, भेड बकरियोका दूध पीते है और ऊनी वस्त्र पहनते है। निस्सन्देह ऐसे कष्टकर भूखडमें कठोरतासे जीवन जीनेवाली जाति स्वभावसे ही साहस-सहिष्णुता और वीरता-दृढताकी धनी होगी। हमारे चरितनायकश्री अगरचन्द नाहटामे अगर ये गुण उभरे है तो इन्हे 'स्वर्गादपि गरीयसी' बीकानेरी-वसुन्धराका वरदान ही समझना चाहिए।

मरुधराके राजनीतिक, धार्मिक, सास्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक और नैतिक निर्माणमे ओसवाल जातिका बहुत बडा हाथ रहा है। नाहटा, बैद, बछावत, कोठारी, कोचर, सुराणा, खजाँची, राखेचा, मेहता प्रभृति परिवारोने जनता और जनपतियोकी तन, मन, धनसे श्लाघ्य सेवा की है। बुद्धि और वैभवके धनी इन लोगोने साम, दाम, दण्ड और भेद नीति द्वारा समय-समयपर आनेवाली विपत्तियोसे जनता-जनार्दनकी केवल रक्षा ही नही, अपितु उसके सुख-सौभाग्यके सवर्द्धन हेतु प्राण पणसे प्रयत्न भी किये है। उन्होने सन्धि-विग्राहक, रक्षा-सचिव और सेनापति तथा दीवान जैसे पदोपर साधुवादार्ह कर्त्तव्यपालन किया है। ये अहिंसाके पुजारी, धर्म और धरतीकी रक्षा हेतु खड्गपाणि होकर समरागणमे जूझते रहे है। ये आन-बान और शानके पक्के गिने जाते है और युद्धमें इनके बढते चरण कट सकते थे लेकिन वे मुड नही सकते थे। हमारे चरित-नायकके पूर्वजोके लिए यह निर्विवाद स्वीकृत ख्याति है कि वे जिस विषम परिस्थितिमे जूझना आरम्भ करते थे, वहाँ अडिगरूप बन जाते थे। शत्रुका दशगुणित बल, उनके उत्साह, शौर्यसम्पन्न व्यक्तित्वको 'भीरु' नही बना सकता था। युद्धकर्ममें रत उन पुण्य स्मरणीय पूर्वजोको स्थानविचलित करना टेढ़ी खीर थी, वे अपनेमे अचला नगाधिराजका गुरुतर भार समाहित कर मानो रण-सरोवरमे अवगाहनार्थ उतरते थे और स्वस्थानसे हटनेका नाम तक नही जानते थे। इसीलिए वे 'नाहटा' नामसे प्रसिद्ध हुए।

---

१ बाजरियाँ हरियालियाँ, बिचि बिचि बेला फूल। जउ भरि वूठउ भाद्रवउ, मारू देस अमूल।।'
—ढोला मारू रा दूहा सख्या २५०।

आज का नाहटा-वंश शतियो पूर्व 'नाहट्ट वश' नाममे अभिहित होता था। यह वश उपकेश ओसवाल वशकी शाखाओमेसे एक शाखा है।[1] नाहटा वशोत्पन्न महानुभावोकी सामाजिक प्रतिष्ठा, अद्वितीय उदारता और आप्तपुरुषोके प्रति श्रद्धावनत विनय-शीलता सदैव गेय रही है। चतुर्दश शतीमें अनूदित एक ग्रन्थमें पुष्पापीडका वर्णन पठितव्य है —

यस्मिन् जाग्रत्पुरुषसुमनस्तोमसौरभ्यभगी, भोगाकृष्टै बुधमधुकरैस्तन्यते कीर्तिगीति ।
पृथ्वीकान्ताकमनकरणत्राणशृगारकोऽसौ, पुष्पापीडो जगति जयति श्रीमदूकेशवश ॥[2]

जिनके लोकप्रसिद्ध पौरुषरूपी पुष्पके समूहकी सुगन्धि प्राप्त करनेके लिए आकृष्ट विद्वान्‌रूपी भ्रमर कीर्तिगान करते हैं, जो पृथ्वीरूपी नायिकाकी कामनाओका पूरक है, उसकी रक्षाका प्रसाधक है, ऐसा शोभा सम्पन्न, उकेशवशोद्भव पुष्पापीड ससारमें सर्वोत्कृष्ट है, उसकी जय हो।

नाहटा वशोद्भव उदयी आसनागका चित्रण भी ध्यातव्य है। कवि ने आसनागके अनुपम व्यक्तित्वमें कर्मठता, शालीनता और सदाशयता का जो समवेत स्वरूप प्रस्तुत किया है, वह सस्कृत साहित्येतिहास की अनुपम निधि है—

तस्मिन् सिद्धिवधूवशीकृतिविधौ गाढानुवन्धान्न्यधात्,
य स्वस्वान्तवसुन्धरान्तरतुल सम्यक्त्वसत्कार्यणम् ।
सर्वांगीणविभूषण त्वचकलच्छील शरीरेऽसकौ,
पुन्नागोऽभवदासनागउदयी, नाहट्टवशोद्भव ॥[3]

उसने जीवनमें सफलता प्राप्त की थी और भाग्यको भी वशमें कर लिया था। उसके अतिशय प्रेम के कारण जिसने पृथिवी के समान अपने अन्त करण को उसमें लगा दिया था, जो सत्य रूपसे सत्कार्य को करता था, जिसके शरीर मे सर्वांग का भूषणशील सदा विद्यमान था, ऐसा पुरुषो मे श्रेष्ठ 'नाहट्ट' वश मे उत्पन्न उदयी आसनाग हुआ।

प्राचीन साहित्यमें यत्र-तत्र उपलब्ध नाहटा वशोत्पन्न वरेण्य व्यक्तियोकी प्रशस्तियोके अध्ययन-मननसे यह निष्कर्षनिचय असम्भव नही है कि प्राकरणिक पुरुष अतीव गुरुभक्त होते थे। वे गुरूपदेश का सश्रद्धा श्रवण करते थे और उसे व्यवहारमें लाकर अपना जीवन सफल बनाते थे। निम्नाकित उद्धरण उपर्यंकित तथ्यका परिचायक है—

इति हितमुपदेश सन्मरन्दावभास, जिनकुशलयतीन्दोर्वक्त्रपद्मान्निरीतम् ।
मधुकर इव वर्यानन्दसन्दोहसिन्धु, स्म पिबति वत वेगादीश्वर श्राद्धरत्नम् ॥[4]

श्रीजिनकुशल यतीन्द्ररूपी चन्द्रमाके मुखरूपी कमलसे निकले हुए पुष्पधूलिके समान हितकर उपदेशोको भ्रमरके समान श्रद्धालु, श्रेष्ठ आनन्दोके सागर नाहटा वशोद्भव 'श्रीईश्वर' सदा तीव्रतासे पान किया करते थे।

जैसी भावभक्ति, उदाराशयता और सच्चरित्रता हमे नाहटा नर-रत्नोमें देखने-पढनेको मिलती है, वैसी ही धर्म-भावना, पवित्रता और श्रद्धावृत्ति इस वश की वीराङ्गनाओ मे भी उपलब्ध होती है।

---

१ श्रीमदुपकेशवश सद्वश शोभते सुपर्वाढ्य । नानाशाखोपगत, सरसश्चि तुनो कठिन ॥ तत्र च 'नाहटा' शाखा समस्ति तत्रापि देवगुरुभक्त । आवश्यक सूत्रवृत्ति । २ प्रज्ञापना सूत्रवृत्ति, श्रीजेमलमेरुदुर्गस्थ जैन ताडपत्रीय ग्रन्थ भडार सूचीपत्र । ३ 'श्रीमलयगिरिविरचिताया प्रज्ञापनाटीकाया' श्रीजेसलमेरुदुर्गस्थ जैन ताडपत्रीय ग्रन्थ भडार सूचीपत्रे क्रमाक २८ । ४ उपाध्याय लब्धिनिधान रचित प्रज्ञापना टीका, श्रीजेमलमेरुदुर्गस्थ जैन ताडपत्रीय ग्रन्थ भंडार ।

इस सन्दर्भ में यथानाम तथा गुणवाली धन्या अभिधेया नाहटा कुलाङ्गनाकी प्रशस्तिका पठितव्य है—

समजनि जनी मान्या धन्याभिधास्य, सुधारसप्रसरमधुरव्याहारोद्धा सुशीलरमानघा।
यतिजन सदा सेवा हेवा कलाकलिता हि याऽजनयत निज नामान्वर्थं विवेकवती सती॥[1]

उसकी (कुमारपाल की) परम मान्या, अमृत वर्षी मधुर व्यवहारोवाली, अत्यन्त पवित्र 'धन्या' नामकी सुशीला स्त्री थी, जो यतिजनोकी सेवामें सदा तत्पर रहती थी, जिस विवेकवती सतीने अपने नामको सार्थक किया था।

जिस वशमें पिता सद्‌गुणोका आकर हो, माता श्रेष्ठ श्रद्धास्वरूपा हो, उसकी सन्तान कितनी सच्चरित्र और सर्वोपकारी होगी, यह कहने की आवश्यकता नही है।

स्व शाखेव सुखावहान् कलफलान् प्रासूत सा सत्सुतान्।
त्रयोऽपि मूर्ता इव पुरुषार्था —

उसने कल्पवृक्षके समान सबको सुख देनेवाले, सुन्दर फलोवाले तीन अच्छे, परम पुरुषार्थी पुत्रोको जन्म दिया।

इसी महनीय नाहटा गोत्रमें जैनधर्मोपासक श्रीयुत् जालसीके वशमें श्रेष्ठिप्रवर गुमानमलजी उत्पन्न हुए। श्री गुमानमलजी हमारे चरितनायकके उत्तम वृद्ध प्रपितामह थे। वृद्ध प्रपितामह श्री ताराचन्दजी लगभग १५० वर्ष पूर्व बीकानेर में उच्चपदपर राजकीय सेवा करते थे। उनका घर सुसमृद्ध और अत्यन्त प्रतिष्ठित था। बीकानेर नरेश महाराज सूरतसिहजी से किसी कारणवश आपका मनमुटाव हो गया और आपने राज्यमें आना जाना बन्द कर दिया। जनश्रुति है कि नाहटा श्री ताराचन्दजी बीकानेरीय गाँवों मे उगाही करके लाया करते थे और नजरानारूप में दरबार को कुछ हिस्सा मेंट कर देते थे। एक बार इन्होने गाँव की उगाही न मिलने से कुछ भी नजराना नही दिया तो राजाजी ने इन्हें दुगुना नजराना देने को कहलाया। श्री नाहटा नजराना न देनेके अपने पूर्वनिश्चयपर अटल रहे और उन्होने बीकानेर छोडकर पार्श्वस्थ[2] गाँव कानासर को अपना निवास स्थान चुन लिया और वहाँ शानशौकतसे रहने लगे। भरेपूरे परिवारमें गायें, भैंसें, ऊँट, बैल प्रभृति पशुधनकी प्रभूतता थी, घरमें काम करनेके लिए दास-दासियाँ नियुक्त थी, आसपासके गाँवोमें साख और धाक थी और धन्धा अच्छा चलता था।

कुछ वर्षो तक सानद समय बीता। एक दिन घरमें अग्नि-प्रकोप हुआ और सारा घर जलकर राख हो गया। इस प्रबल अनलमें बीकानेरके घर, जमीन-जायदादके पट्टे, राजकीय खास रुक्के, परवाने, खाता-बही एवं आवश्यक कागजात सब नि शेष हो गए।

सेठजीने उक्त गाँवको अशुभ जानकर छोडनेका निश्चय कर लिया। और जलालसर नामक गाँवमें जाकर सपरिवार बस गए।

एकबार इनके घरकी दासी अपने घडेमे कुएँ पर दूसरोसे पहिले पानी भरनेके लिए हठ करने लगी। गाँववालोने उसकी एक न चलने दी और कहा—यहाँ तो बारी-बारीसे घडे भरे जायेंगे, यह कुँआ सबका है, न कि तुम्हारे सेठोके खुदवाया हुआ है। अत तुम्हारी उतावल नही चलेगी।

स्वात्माभिमानी सेठोके घरकी दासी भी स्वाभिमानिनी थी। उसने तत्काल खाली घडा सीधा अपने मस्तक पर रखा और घरकी राह ली। सेठ श्री ताराचन्दजी घरके आगे कई मनुष्योके बीच पलग पर बैठे

---

१ उपाध्याय लब्धिनिधान रचित प्रज्ञापना टीका, श्रीजेसलमेरुदुर्गस्थ जैन ताडपत्रीय ग्रन्थ भंडार।
२ यह गाँव बीकानेरसे ८ मील उत्तरमें है।

अगीठी तप रहे थे। दासीने कहा—सेठा घडो उतरात्रो। सेठ साहबने नौकरसे घडा उतारनेका कहा तो दासी खाली घडेको चौकीमें पटक कर घरमें चली गई। बादमें जब सेठ साहबने दासीको खाली घडा लानेका कारण पूछा तो उसने कहा—आपका यहाँ कोई कुँआ खुदवाया हुआ नही है, तब मुझे ताना सुनना पडा। और इसीलिए मैं खाली घडा लिए लौट आई।

सेठ साहबने सारा वृतान्त ज्ञातकर, जब तक उस गाँवमें अपना कूप खुदकर तैयार न हो जाय, तब तक उस गाँवका पानी न पीनेकी प्रतिज्ञा कर ली और अपने चपरासी जलालसाहको शीघ्रातिशीघ्र कुँआ खुदवानेकी आज्ञा देकर कूप-खनन प्रारभ करवा दिया।

अब दूसरे गाँवोंसे ऊँटो पर मीठा पानी लाया जाता और प्रणपालक सेठ केवल उसीसे पिपासा शान्त करते थे। संकल्पकी स्थिरतामें सिद्धिका निवास रहता है, सेठाका कूप अविलम्ब तैयार हो गया। धूमधामसे कूप-प्रतिष्ठा हुई और जलालसर ग्राममें स्वनिर्मित कूपको जनसाधारणके लिए उन्मुक्त करके अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण की।

सेठ साहबका मन जलालसरसे उखडा हुआ था। बीकानेर तहसीलमें जलालसरसे अनति दूर दक्षिणमें एक गाँव है, जिसे डाडसर कहते हैं। यह चारणोका ग्राम था। यहाँके चारण वीर योद्धा और परम देवी-भक्त रहे हैं। उनके पवित्र आचरण और सौहार्द भावने गाँवके जन-मानसको भी प्रभावित किया था, क्योकि जैसा राजा होता है, प्रजा भी वैसी ही बन जाती है—'यथा राजा तथा प्रजा'। गुणग्राहकता धर्मकथा श्रवण और परोपकार वृत्ति इन लोगोका आनुवशिक गुण रहा है। माताजी श्रीकरणीजी पर इनकी अनन्य आस्था है। इनका विश्वास है कि करणीजीके समान कोई देवता नही है—

करणी समो न देवता, गीता समो न पाठ। मोती समो न ऊजलो, चन्दण समो न काठ॥

जलालसर गाँव छोडनेकी श्री ताराचन्दजी नाहटाकी इच्छाको जानकर डाडूसरके तत्कालीन ठाकुर साहब सेठजीके पास पहुँचे और उन्हें स्थायी रूपसे डाडूसरमें ही बस जानेके लिए आग्रह करने लगे। सेठ श्री ताराचन्दजीने अयाचितको अमृत जानकर ठाकुर साहबके प्रस्तावको सहर्ष स्वीकार किया और सदलबल डाडूसर ग्राममें रहने लगे। इस गाँवमें ओसवाल जातिके लगभग बीस घर पहलेसे ही थे। श्री ताराचन्दजी जैसे सुविख्यात धनी-मानी सेठको पाकर डाडूसर ग्राम अत्यन्त प्रसन्न हुआ। सज्जन और गुणग्राहक ग्रामीणोमे रहकर श्री ताराचन्दजी बीकानेरको भूलसे गये और बीकानेरका आना जाना समाप्त प्राय हो गया। सेठ साहब डाडूसरसे प्रसन्न थे और डाडूसर सेठ साहब से। यहाँ तक कि आज तक भी डाडूसर नाहटा (सेठा) वाली प्रसिद्ध है। जामसर रेलवे स्टेशन पर धर्मशाला बनवायी, जहाँ गाँवसे बीकानेर आनेजाने वाले वहाँ ही ठहरते थे।

कबीरने अपने छोटेसे दोहेमें ससारका बहुत बडा शाश्वत सत्य प्रस्तुत कर दिया है—'जो आते हैं, वे जाते हैं, चाहे राजा हो, रक हो या फकीर हो।' लेकिन जाते समय सब एक ही तरहसे नही जाते—पुण्यात्मा सिंहासनासीन होकर जाते है और पापात्मा निगडबद्ध स्थितिमे।[1] कहनेकी आवश्यकता नही कि समय पाकर सेठ श्री ताराचन्दजी धवल कीर्त्तिके पावन विमान पर आसीन होकर इस ससारसे विदा हुए। उन्होने नाहटा वशको सुग्रामवास तो दिया ही, साथमें स्वाभिमान और सामाजिक-प्रतिष्ठा भी दी।

परिवर्तिनि ससारे, मृत को वा न जायते। स जातो येन जातेन, याति वश समुन्नतिम्॥

परिवर्तनशील इस ससारमें कौन नही मरता और कौन उत्पन्न नही होता। उत्पन्न होना उसी प्राणीका सार्थक है, जिससे वश उन्नत होता है।

---

१ आये है सो जायँगे, राजा रक फकीर, इक सिंहासन चढि चले, इक बँधे जजीर।

हमारे चरितनायकके पडदादा, ताराचन्दात्मज श्री जैतरूपजी नाहटा डाँडूसरमे ही रहे। कीर्त्ति-शेष पितृजीने जो आध्यात्मिक और भौतिक सम्पत्ति उनके लिए छोडी थी, उसका सदुपयोग करते हुए वे भी सवत् १८९० के आसपास स्वर्गवासी हुए।

स्वर्गीय श्री जैतरूपजी नाहटाके उदयचन्दजी, राजरूपजी, देवचन्दजी और बुधमलजी नामक चार पुत्र थे। ऊदी नामिका ज्येष्ठ पुत्री बीकानेरसे ८ मील पश्चिम नाल नामक ग्राममें विवाहित थी। हमारे चरित-नायकके पितामह श्री उदयचन्दजी सबसे बडे भाई थे। उन दिनो लोग विदेशी व्यापारकी ओर आकर्षित होने लगे थे और सुदूर पूर्व तथा दक्षिणकी यात्राएँ होने लगी थी। अधिकाश व्यक्ति बगाल, बिहार, आसाम और उडीसा जाते थे और दीर्घावधिके पश्चात् आवागमनके सुखद साधनोंके अभावमें कष्टयात्रा पूरी कर स्वदेश लौटते थे।

श्री उदयचन्दजी नाहटा उद्यमशील थे और बाधाओंसे जूझनेकी उनमें सामर्थ्य थी। डाडूसर ग्राममें कृषिकर्म उन्नत स्थितिमें था, अभाव अभियोगकी कोई स्थिति नही थी, घर सब प्रकारसे भरापूरा था, लेकिन वे वैश्यधर्म—कृषि, गोरक्षा तो करते ही थे, वाणिज्य भी करना चाहते थे, क्योकि शास्त्रोंमें कृषि, गोरक्ष्य और वाणिज्य ये तीन काम वैश्य-विहित हैं।[1]

परमोत्साही श्री उदयचन्दजीने परदेश जाकर व्यापार करनेकी प्रबल इच्छा अपनी स्नेहमयी जननीके सम्मुख प्रस्तुत की। माताने कहा "बेटा! पहिले यही शहर बीकानेरमें जाकर काम सीखो, तदुपरान्त विदेशका विचार करना अथवा तुम्हारी बहिन नालमें है, वहाँ काम सीखो और तदुपरान्त बीकानेर चले जाओ।"

मनस्वी उदयचन्दजी किसी सम्बन्धीके घर रहना पसन्द नही करते थे, इसलिए माताका प्रस्ताव उन्हें रुचिकर प्रतीत नही हुआ। साथ ही बहिनका आग्रह भी माताकी आज्ञामें सहायक हुआ और आप अन्यमनस्क भावसे सम्बन्धी-ग्राम नालमें आ गये। नालमें रहते थोडे ही दिन हुए थे कि एक दिन बहिन ऊदीने भाई उदयचन्दसे कहा—

'भाई! गायो रहाधोको जवे खायेंगे, अत वहाँकी पुरानी खतवाय हटाकर साफ बालू रेत डाल दो।' स्वाभिमानी भाई उदयचन्द नाहटा सम्बन्धीके घर कोई भी निकृष्ट काम करना अपने गौरवके प्रतिकूल समझते थे। इसलिए उन्होने बहिन द्वारा सकेतित कार्य न करके तत्काल ग्राम डाँडूसर लौटनेका निश्चय किया। वीरचरित क्रिया और फलमें अधिक अन्तरालको प्रश्रय नही देते। इसलिए श्री उदयचन्द भी निश्चयके साथ ही स्वग्राम, डाँडूसर पहुँच गये।

उन दिनो कुछ परिचित व्यक्ति परदेश जा रहे थे। उत्साही उदयचन्दने विशेष आग्रहके साथ माताजीसे अपना निश्चय दुहराते हुए कहा "माँ—मैं परदेश जाऊँगा, आप सब यहाँ आनन्दपूर्वक रहें।। मैं जहाँ भी जाऊँगा आपके आशीर्वादमे आनन्दसे रहूँगा और साथ हुआ तो पत्र भेज दूँगा।' माँके कल्पनालोकमें परदेशकी दु खद-कष्टकर लम्बी यात्राका चित्र उभर आया, अपरिचित लोग, अपरिचित भाषा, आवागमनके उचित साधनोका अभाव, वर्षों पश्चात् पुन मिलनकी क्षीण आशा, मार्गके मध्य घात लगाकर बैठे जानलेवा डाकू-चोर-लुटेरे, सब कुछ भयावह। लेकिन माँने किसी प्रकारका विघ्न उपस्थित न होने देनेके लिए मूकभाव एवं साश्रुनयनोमे अपने पुत्रको भारतमाताकी विशाल गोदमें विचरण करनेके लिए हृदयको कठोर बनाकर आशीर्वादपूर्वक अनुमति प्रदान कर दी।

कार्यार्थी मनस्वी-मडल अपरिचित भविष्यत्के तमस्तोयमें उत्साहकी विरल परन्तु सशक्त रेखासे

---

१. 'कृषि गौरक्ष्य वाणिज्य वैश्यकर्म स्वभावजम्', गीता, अ० १८, श्लो० ४४।

मार्गदर्शन प्राप्त करता हुआ अग्रेसर हुआ । पाथेयके रूपमें आत्मीयोंकी मगल-भावनाएँ उनके साथ थी । वे मार्गमें कही पदाति, कही अश्वारोही, कही उष्ट्रारूढ और कही नौकारोहण करते हुए लक्ष्यकी ओर निरन्तर वढते गये । उन्होंने न वुभुक्षाकी चिन्ता की और न पिपासाकी । भूमि मिली तो उसपर सोकर रात वितायी और पलग मिला तो उसे भी निर्लिप्तभावसे अपना लिया । ऐसे ही कार्यार्थी मनस्वियोके लिए भर्तृहरिने लिखा है —

क्वचिद् कन्धाधारी, क्वचिदपि च दिव्याम्बरधर , क्वचिद् भूमिशय्य , क्वचिदपि च पर्यंङ्कशयन ।
क्वचिद् शाकाहारी, क्वचिदपि च मृष्टाशनरुचि, मनस्वी कार्यार्थी, गणयति न दु खं न च सुखम् ॥[1]

प्रकरण—पुरुप श्रीउदयचन्दजी नाहटा सहित यह कर्मण्य दल सवत् १८९१ के आसपास दिनाजपुर पहुँचा । वहाँ कुछ दिन व्यापार किया और तदुपरान्त सिराजगज गये और आसाममे माल आनेकी वडी मण्डी गवालपाडा ज्ञात कर नौकारूढ होकर गवालपाडा गये । उन दिनों वहाँ महासिंह मेघराजकी दूकान स्थापित ही हुई थी । श्री मेघराजजी कोठारी गेरसर ग्रामके थे, जो डाडूसरके पास है । श्री उदयचन्दजीने भी गवालपाडामें 'उदयचन्द राजरूप' नामसे व्यापारका श्रीगणेश कर दिया और वहांके एक आसामी व्यक्तिको आपने नौकर रख लिया ।

आप सिराजगंज इत्यादि स्थानोसे नौकामें माल भर लाते और गवालपाडेके दूकानदारोको वेच देते । और गवालपाडासे तमाकू, रवड आदि माल नौका द्वारा भेजते थे । चोरी-डकैतीका भय अधिक था, इसलिए मालको नौकामें घासके वीचमें विछाकर और छिपाकर लाया जाता था । उस समय नौका-यात्रा बड़ी कष्टप्रद और प्रकृति-निर्भर थी । जव अनुकूल वायु होती तो चलना होता अन्यथा सप्ताहो तक उसकी प्रतीक्षामें लगर डाले पडा रहना पडता । दाल-चावल आदिका सग्रह रहता था । आवश्यकता होनेपर नौकामें ही दाल-भात या खिचडी वना ली जाती थी और वडे किनारेकी थाली तस्तरी या केलेके पत्तोपर यथा-तथा खाकर समय यापन कर लेते थे । कभी-कभी वाँसके चूगोपर मिट्टी लपेटकर उसीमें भात पकाना पडता था । किनारेपर नौका ठहराकर मल विसर्जन हेतु जाते तो जगलोमेंसे वडी-वडी जोकें आकर चिपक जाती और खून पीने लगती तव पता चलता कि जोक लग गयी है । तत्काल थोडा नमक उसपर डाल देते, जिससे वह नीचे गिर पडती । नमकके विना जोकको छुडाना सहज नही होता । इसीलिए उन लोगोको नमककी पुडिया हमेशा साथ रखनी पडती थी ।

उन दिनो आसाममें रवड, सरसो, लाख, तमाकू आदि वहुतायतसे उत्पन्न होती थी, जिसे देकर वहाँके आदिवासी व्यापारी लोग विनिमयमें नमक, कपडा आदि आवश्यक वस्तु खरीद लेते थे ।

तत्कालीन आसाममें जादू-टोनेका इतना प्रचार था कि वहाँकी औरतोसे अत्यन्त सतर्क रहना पडता था । कहा जाता है कि मारवाडी व्यापारी जव आसामी स्त्रियोके चगुलमें किसी प्रकार नही फँसते तो क्षुब्ध स्त्रियाँ एक चमत्कार दिखा ही देती । भात पकाते हुए लोगोंसे वे कहती—"क्यो, पोका सिद्ध करते है ?" और आश्चर्यका ठिकाना नही रहता जव सारा भात कीटसकुल-लटमय हो जाता और उसे तुरन्त फेंकना पडता ।

श्री उदयचन्दजी नाहटाने गवालपाडेमें घास-फूसकी छाई हुई (झोंपडी जैसी) दुकानमें काम प्रारम्भ किया था । भूकम्प और अग्निप्रकोपका वाहुल्य था, कोठेके द्वार लोहेके थे, जिनपर मिट्टी लपेट दी जाती थी । इससे भीतरकी वस्तुएँ सुरक्षित रह जाती और अग्निशमनोपरान्त तुरन्त निकाल ली जाती । उस समयके लौह-द्वार और काष्ठ-विनिर्मित 'कैश वक्स' अव भी गवालपाडेकी गद्दीमें सुरक्षित हैं ।

---

१ भर्तृहरि—नीतिशतक ।

श्री उदयचन्दजीने भरी जवानीमें जाकर २२ वर्षकी मुसाफिरी अखण्ड ब्रह्मचर्य पालनपूर्वक सबके साथ मित्रताके साथ की। उस जमानेमें आसामवाले मारवाडियोके सात्त्विक भोजन, शील और कर्मठतासे प्रभावित होकर श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते थे एवं 'देवता' कहकर पुकारते थे।

श्री उदयचन्दजीको वहाँ कतिपय अपूर्व वस्तुएँ भी प्राप्त हुई थी, लेकिन वे पचास, पचपन वर्ष पूर्व हुई चोरीमें चली गईं। इन प्राचीन दुर्लभ वस्तुओमें आसामके "गारुखोरे" अब भी विद्यमान हैं। लोगोका विश्वास है कि ये पूज्य गारुखोरे शनैः शनैः बढते हैं और अपने रक्षकस्वामीका कुशलक्षेम बढाते हैं।

ग्राम डाँडूसरमें स्थित कल्याणमयी माता एवं इतर पारिवारियोको गवालवाडेकी अभ्युदयकारक सुन्दर व्यापार-व्यवस्थाका तनिक भी समाचार नही था। लगभग पाँच वर्ष पश्चात् किसीका साथ होनेपर उदयचन्दजी नाहटाने कुछ द्रव्य और क्षेम-कुशलका समाचार घर भेजा। देशमे इधर दानमलजीके जन्मकी थाली बजी और उसी समय श्री उदयचन्दजीके कुशल समाचार मिले अत दो बधाइयाँ एक साथ हुईं।

उदयचन्दजीके अनुज श्री राजरूपजीका विवाह लूणकरणसरके नारायणदासजी छाजेडके यहाँ हो गया था और उन्हे पुत्ररत्न भी प्राप्त हो चुके थे, लेकिन इन उत्सवोमें भी उदयचन्दजी अनुपस्थित थे। कतिपय वर्षोंके उपरान्त श्री राजरूपजी गवालपाडा गये और वहाँ अग्रज उदयचन्दजीके साथ कुछ वर्ष रहकर उनके साथ स्वदेश लौटे।

इस प्रकार श्री उदयचन्दजीने २२ वर्षकी सुदीर्घ परदेश-यात्रा पूरी की। अवधिकी दृष्टिसे यह यात्रा नाहटा वशमें कीर्त्तिमान (Record) समझी जाती है। कहनेकी आवश्यकता नही है कि इस सुदीर्घ यात्राने उदयचन्दजीके वशको उतना ही सुमधुर और सुदीर्घ फल दिया है जिसे सात पीढी बाद वाले भी भोगते नही अघाते। इसे कहते हैं—शुभ घडी और शुभवेलामें शुभ हाथो द्वारा वपित बीज, कमनीय कल्पवृक्ष बन जाता है और अक्षय्य निधिका आगार बनकर चारो ओर आनन्दकी वर्षा करता है।

गवालपाडेमें छापर निवासी हुकुमचन्दजी नाहटाके विशेष प्रेमसे श्री उदयचन्दजीका वैवाहिक सम्बन्ध छापरमें हुआ और वहाँ निवास करनेके हेतु जमीन खरीद ली गई थी। पर छोटे भाइयो व माताजीके कारण उन्हें डाँडूसरमें आकर निवास करना पडा।

गवालपाडेमें महासिंह मेघराज फर्म थोडे अरसे पूर्व ही स्थापित हुआ था आपके साथ उदयचन्दजीकी बडी सौहार्दता थी। एक ही धर्मके अनुयायी होनेसे परस्पर खूब सहयोग रहता और आपकी विद्यमानतामें स० १९०५ में वहाँ गौडी पार्श्वनाथ जिनालयकी स्थापना हुई। उन दिनो वहाँ यतियोके चातुर्मास होते थे और धार्मिक सस्कार, व्याख्यान, पठनपाठन और पर्वाराधन चारुतया सम्पन्न होते थे।

जब उदयचन्दजी गवालपाडामें रहते थे, तब छापर-निवासी नाहटा हुकमचन्दजी भी वहाँ जा पहुँचे थे और उन्हीके पास काम-काज सीखकर अपना स्वतत्र व्यापार करने लगे थे। श्री उदयचदजी और श्री हुकमचन्दजीमें परस्पर इतना प्रगाढ प्रेम था कि लोग इन्हे 'सहोदर बधु' समझते थे। आज भी गवाल-पाडेके लोग "बाबाजी और काकाजी वालोकी गद्दी" शब्दका वाग्-व्यवहार करते हैं और उसी प्राचीन स्नेहाधिक्यका स्मरण दिलाते है। श्री हुकमचन्दजीके स्नेहाग्रहके कारण छापरमें निवासके लिए उदयचन्दजी द्वारा भूमि भी खरीदी गई लेकिन पारिवारिकोके अनुमोदनके अभावमें वह विचार सदाके लिए त्याग दिया गया।

बीकानेरके गुलगुलिया परिवारके पूर्वज उदयचन्दजीके समयमे ही गवालपाडा जाकर आपके 'फर्म'मे मुनीम नियुक्त हो गये थे। इस परिवारने लगभग ८०-८५ वर्ष तक 'फर्म'को सेवा दी और अब भी कर रहे

हैं। भीनासरके सेठिया भी अनेक वर्षों तक इस 'फर्म' में रहे। आजकल रंगपुर आदि फारनीसगंज कलकत्ता-में उनका स्वतन्त्र व्यापार है।

नाहटा वंशके 'अन्नदाता' और 'कल्पवृक्ष' स्वरूप श्री उदयचन्दजीकी गौरव-गाथा इस परिवारमें आज भी प्रेम और श्रद्धाके साथ कही-सुनी जाती है। गवालपाडेके दुर्लभ लौह-द्वार नाहटा वंशजोंके लिए किसी भी 'मंदिरद्वार'से कम पवित्र नहीं है। वे लौह-कपाट श्री उदयचन्दजी नाहटाके फौलादी व्यक्तित्वका स्मरण दिलाकर विविध प्रेरणाओंके स्रोत बन गये हैं। वंशमें कोई-कोई ही ऐसा नर-रत्न उत्पन्न होता है जिसकी श्रम-साधनाका सुमधुर फल अनेक पीढियों तक प्राप्त होता रहता है।

कहते हैं जब उदयचन्दजी नाहटा स्वदेश लौटे तो घोडेकी जीनमें स्वर्णमुद्राएँ भरकर लाये थे और चीनमें निर्मित स्वर्णपत्र भी था। आपने गवालपाडेमें नाहटा-वंशकी कीर्त्ति-कौमुदीको चतुर्दिक् प्रसरित किया था और व्यापारी-वर्गमें अपनी प्रामाणिकता स्थापित की थी। आपके हाथमें एक अंगुली अधिक थी, इसलिए लोग आपको 'इक्कीसिया बाबू' कहते थे। आपने अपने कर्मठ जीवनसे स्वयंको सर्वतोभावेन 'इक्कीस' ही प्रमाणित किया।

कहाँ पश्चिमोत्तर राजस्थानका एक छोटा-सा गाँव और कहाँ सुदूर पूर्वका आसामान्तर्गत गवाल-पाडा, लेकिन धुनके धनी, परम उत्साही श्री उदयचन्द नाहटाने उसे स्वदेशमें परिवर्तित कर लिया। यह कथन अक्षरशः सत्य है कि—

> को वीरस्य मनस्विनः स्वविषयः, को वा विदेशस्तथा।
> यं देशं श्रयते तमेव कुरुते, बाहुप्रतापार्जितम्॥

मनस्वी वीरके लिए न स्वदेश है और न कोई विदेश। वह जहाँ रहता है, अपने बाहुबलसे उसे अपना बना लेता है। वास्तवमें व्यवसायियोंके लिए कोई दूर नहीं है—'किं दूरं व्यवसायिनाम्'

इस प्रकार यह असंगत नहीं है कि श्री ताराचन्दजी नाहटाने अगर नाहटा वंशको सुग्राम और प्रतिष्ठा दी तो श्री उदयचन्दजी नाहटाने स्ववंशको व्यापारके माध्यमसे लक्ष्मीपतियोंमें सुप्रतिष्ठित किया। स्वाभिमान-की अमन्द मन्दाकिनी दोनों ही महापुरुषोंमें समान वेगसे प्रवाहित होती रही।

श्री उदयचन्दजी नाहटाके चरित्रवर्णन प्रसंगमें हमने उनके अनुज श्री राजरूपजीका भी उल्लेख किया है। श्री राजरूपजी नाहटा हमारे चरित-नायकके पितामह थे। इन्हींके घर चार पुत्र उत्पन्न हुए। १. लक्ष्मीचन्दजी, २. दानमलजी, ३. शंकरदानजी, ४. गिरधारीमलजी (जिनका लघुवयमें निधन हो गया था)।

१. लक्ष्मीचन्दजीका जन्म सं० १९११ में हुआ था। इन्होंने लूणकरणसरमें हजारों मन घासकी दो बागरें सं० १९५५-५६-५७ में दराईं। उस समय दुष्कालमें गरीबोंको रोटी-रोजी दी। यह घास इतना अधिक परिमाणमें था कि सं० १९९९ तक दुष्कालोंमें गौएँ बे-रोकटोक चरती थी। यह पुण्य-कार्य ४०-४२ वर्ष तक चलता रहा, सेठ साहबकी पुण्य व कीर्त्ति फैलती गई। सं० १९६२ में आपका स्वर्गवास हो गया।

२. दानमलजीका जन्म सं० १९१६ में हुआ। वे भी बडे सरल और प्रभावशाली व्यक्ति थे। ग्रामीण लोग खेती, औसर व विवाह आदिके लिए आपके पास सहायतार्थ आते, वे कभी खाली हाथ नहीं जाते। डांडूसर गांव कर्ज-कोट हो गया तो ऋणमुक्त कराके अल्पवयस्क ठाकुरके सावालिग होने तक सार सँभाल करके गाँव दिलाया। तालाव, देवस्थान आदि जीर्णोद्धार कराये। जोधासरके ठाकुर साहबपर जब राजा नाराज हो गए तो आपने उन्हें इज्जतसे गाँवमें रखा और दरबारसाहबसे वापस गाँव दिलाया। यति-

महात्माओ, स्वधर्मी बन्धुओंके साथ शत्रुञ्जयादि तीर्थोंकी यात्रा की। सं० १९९० मे आप स्वर्गवासी हुए। स्वर्गवासके ८ मास पूर्व ही आप भविष्य-सकेत करते रहे। आप देवगतिमें विद्यमान हैं।

श्रीराजरूपजी नाहटाके तृतीय पुत्र स्वनामधन्य श्रीशकरदानजी नाहटाका जन्म स० १९३० की आषाढ कृष्णा ८ बुधवारको डाँडूसर ग्राममें हुआ। श्री शकरदानजी नाहटाको हमारे चरित नायक श्री अगरचन्दजी नाहटाके पूज्य पिता होनेका महनीय पद प्राप्त है। आपके चरित्र-निर्माणमें श्रीशकरदानजीके व्यक्तित्व को बहुत अधिक श्रेय सम्प्राप्त है अत उनके विविध गुण-विभूषित चारित्र्यका सक्षिप्त उल्लेख यहाँ आवश्यकीय है।

श्री शकरदानजी नाहटाने डाँडूसरके अत्यन्त शान्त, स्वाभाविक-धर्मप्राण ग्राम्य वातावरणमें वृद्धि पाते हुए योग्य वयमे आवश्यक शिक्षा अर्जित की। उन दिनो बाल-विवाहकी प्रथा विशेषतः प्रचलित थी और अपने सद्गुणोसे परिवार एव परिवारेतरोके अत्यन्त प्रीति-भाजन थे, अत बारह वर्षकी अवस्थामे ही स० १९४२ मिति वैशाख कृष्ण पचमीको आपका शुभ-विवाह आपके ननिहालके गाँव लूणकरणसरमे शहर-सारणी आदि कार्यों द्वारा प्रसिद्धिप्राप्त सेठ नन्दरामजी बोथराके सुपुत्र श्री खेतसीदासजीकी ज्येष्ठ पुत्री श्रीचुन्नीबाईके साथ हो गया। बाल्यकालमे ही आप बडे परिश्रमी और साहसी थे। ग्राममें रहनेके कारण आप कृषिकर्म और व्यावहारिक कार्योंमें भी अत्यन्त पटु बन चुके थे। आपके चाचा देवचन्दजी और उनके पुत्र भीमसिंहजी एव मोतीलालजी बीकानेरमें रहने लगे और वहाँ हुण्डी चिट्ठीके लेन-देनका सराफा व्यापार बडे पैमाने पर खोल दिया था। सैंकडो गाँवोसे इस व्यापारका घनिष्ठ सम्बन्ध था। उन्होने श्री शकरदानजीको बहुत योग्य समझकर गाँव डाँडूसरसे बीकानेर बुला लिया और इस व्यापारका सारा ज्ञान उन्हे भलीभाँति करा दिया।

व्यापारपाटवकी प्रौढताकी स्थितिमें श्री शकरदानजीने सवत् १९५० की आश्विन शुक्ल १० को गवालपाडेके लिए प्रस्थान किया। यह वही गवालपाडा है, जहाँ आपके बाबाजी उदयचन्दजीने श्रम-सीकरोसे नाहटा वशके लिए एक अमर वृक्ष-वपन किया था जिसे आपके पिता राजरूपजी बडे भ्राता लक्ष्मीचन्दजी व दानमलजी द्वारा अनुदिन सिंचन करते, पत्रित-पुष्पित होता हुआ फलित हो रहा था।

श्री शकरदानजी नाहटाका साहस और सेवा-भाव उच्चस्तरका था। स० १९५४ में गवालपाडामें भयावह भूकम्प हुआ। वहाँके निवासियोके लिए वह काल-स्वरूप बनकर आया था। भवन धराशायी हो गए, पथ विकट दरारोसे खोखले बन गए, पृथ्वीसे जल निकलने लगा और आकाशसे वर्षा होने लगी। चारो तरफ जल, हवामें कडाकेकी ठण्ढक और आकाशमें बिजलीकी कडक, घन-गर्जन विद्युत्-तर्जन। देखते-देखते सूचि-भेद्य अन्धकार छा गया, प्रलयकाल उपस्थित हो गया, प्राणी मौत और जिन्दगीके बीच डूबने-उतराने लगे।

निर्वाणोन्मुख दीपज्योतिमें जिस प्रकार तेलकी, अन्धकारमें प्रकाशरश्मिकी और निराशाके अम्बरमें आशाकी स्वर्णरेखाकी उपस्थिति जितनी हृद्य और जीवनदायिनी होती है उतनी ही मनोहारिणी उपस्थिति श्री शंकरदानजी नाहटाकी थी। आप संकटापन्नोके मध्य सेवा और साहसका कवच पहिनकर उतर पडे। आपने अधीरको धैर्य, विमूढको दिशाज्ञान, बुभुक्षितको भोजन, वस्त्रहीनको वस्त्र और अकिञ्चनको स्नेहाचित आत्मीयता प्रदान की। आप सत्रस्त और अभावग्रस्त लोगोको पहाड पर ले गए और उन्हे आश्रय देकर तूफानकी शान्ति होनेपर हाथमें बाँस लेकर कई साथियोके साथ जीवन-मरणकी परवाह न करते हुए तूफान-ग्रस्त क्षेत्रमें जनहितार्थ प्रविष्ट हुए। सर्वप्रथम आप पार्श्वनाथ भगवान्के मन्दिर गए जो पूरा भूमिमें धँस

चुका था। रामदेव पाडेको भग्न शिखरसे भीतर उतारा गया, जव प्रभु-प्रतिमा सुरक्षित मिली तो अपनेको धन्य माना। प्रभु-प्रतिमाजी वाहर निकाल कर अस्थायी स्थानमे विराजमान की गई। फिर मानवकी प्राथमिक आवश्यकताओकी सम्पूर्त्ति हेतु सबकी दुकानें सँभाली।

कहते हैं कि खोजीको राम मिलता है, उसने अपने गुमाश्ता चतुरभुजजी गुलगुलियाको वेहोश पाया, जिन्हें कम्वलमें लपेटकर उपचारपूर्वक सचेत किया। इस अन्वेषणमे आपको सीरेसे भरी हुई एक कढाई हाथ लगी। शकरदानजी कुछ मारकीनके थान व सीरेकी कढाई लेकर पहाडपर पहुँचे और कडाकेकी ठढमें सत्रस्त लोगोको सीरा खिलाया व थानोके टुकडे फाड-फाडकर यह कहते हुए वितरित कर दिया कि "लो, जीवो तो यह वेष्टन है और मरो तो कफन है। आपकी इस साहसभरी सेवाने चतुर्दिक् आशीर्वाद तो प्राप्त किया ही साथमें आपका यश भी फैला। गवालपाडे और वीकानेरमें आपकी भूरि-भूरि प्रशसा हुई।

धर्माराधनके लिए जिनालय-निर्माणकी सर्वप्रथम आवश्यकता थी, जव वह विशाल मन्दिर वनकर तैयार हुआ तो विचार हुआ कि मन्दिरके योग्य मूलनायक भगवान्की वडी प्रतिमा चाहिए। आपने इसके लिए कई स्थानोमें भ्रमण किया पर जहाँ जाते यही स्वप्न होता कि मूलनायक वही रहेंगे। अन्तमें निराश लौटकर अपने विशेप प्रिय उपकेशगच्छीय श्री पूज्यजीसे मिले जो नाहटागोत्रीय होनेसे आपको वहुत मानते थे। श्री पूज्यजीने अपने देहरासरसे प्रतिमाएँ देना स्वीकार किया और मुहूर्त्त भी निकाल दिया, अन्तमें समस्त तैयारी हो गई तव रवानगीके समय उनसे भी निराशा ही हाथ लगी। आपने श्री पूज्यजीको प्रचुर भेट करनेका प्रस्ताव रखा पर उन्होने कहा, तुम्हारे और हमारे वीच निछरावल(भेट)का प्रश्न नही है पर वस्तुतः वही जो मूलनायक भगवान् पार्श्वनाथ हैं वे ही रहेंगे। अन्तमे स० १९६८ में आपके वडे भ्राता श्री दानमलजी नाहटाकी सपत्नीक उपस्थितिमें उपाध्याय जयचन्द्र श्रीगणिके हाथसे प्रासाद-प्रतिष्ठा व विम्व-स्थापना अनुष्ठित हुई।

गवालपाडेके पार्श्वनाथ मन्दिरकी प्रतिष्ठा और सुव्यवस्थामें श्री शकरदानजीकी दूरदर्शिता वडी लाभकारी सिद्ध हुई। उन्होने अपने व्यक्तिगत प्रभावसे तत्स्थानीय लोगोको समझा-बुझाकर सरसोपर तीन आना सैकडा धार्मिक लाग (वित्ती) वाँध दी, आगे चलकर कुस्टे (पाट, जूट) की आमदनी अधिक होनेपर कुस्टेपर भी यह लाग प्रारम्भ कर दी गई, जिससे किसीपर व्यक्तिगत वोझ नपडकर सहज ही मन्दिरजी, ठाकुरवाडी, रामदेवालयके मन्दिरके सारे खर्च निकलनेके अतिरिक्त हजारो रुपये भी जमा हो गए।

व्यापारका मूल आधार सद्व्यवहार और प्रामाणिकता है। आप इस तथ्यसे पूर्णत अवगत थे, इसलिए इन दोनो अमूल्य रत्नोको आपने सतत व्यवहारमें प्रयुक्त किया। फलस्वरूप व्यापारका स्वत विस्तार होने लगा। लोग आपकी सचाई, तोल-मोलकी प्रामाणिकता और वितण्डावादमें न फँसानेकी नीतिसे प्रभावित होकर आपसे ही व्यापार-सम्बन्ध वढानेके लिए लालायित रहने लगे। अगर तौलमें कही झगडा खडा होता है तो आज भी इसी फर्मके काँटे वटखरोंसे तौलकर निर्णय किया जाता है। आपकी गद्दियाँ धर्मघरके नामसे प्रामाणिकताके लिए प्रसिद्ध हैं।

गवालपाडेका पौधा तो आपश्रीके वावाजी व पिताजीने लगाया था, पर आपके समयमें वह खूव फला-फूला और उसकी शाखाका विस्तार अनुदित होने लगा। सं० १९५८ में गवालपाडेसे १५ मील चापड नामक स्थानमें, सवत् १९६५ में वोलपुरमे, सं० १९६८ में कलकत्ता, स० १९८० में दीपावलीके दिन सिलहट और स० १९९१ में वावूरहाटकी दुकानोकी स्थापना हुई। आपके स्वर्गवासी होनेके पश्चात् भी हाथरस, अमृतसर और वम्वईमे फर्म स्थापित हुए थे। सिलहट और वावूरहाट पाकिस्तानमें पड जानेपर सिलचर, करीमगज, अगरतला और कानपुरमे व्यापार केन्द्र खोले गए। यह सव आपका ही पुण्य-प्रभाव है।

संतति

सुयोग्य पिताकी सन्तान भी प्राय गुणवान् और योग्य ही होती है। सं० १९४९ में आपके प्रथम कन्या सोनकुवर वाई उत्पन्न हुई जो वहुत ही मिलनसार, धर्मिष्ठ और गृहकार्य दक्ष थी। स० १९५२ में आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री भैरूदानजीका जन्म हुआ। आप बीकानेरीय जैन-समाजके ठोस कार्यकर्त्ताके रूपमें शनै-शनै ख्यातिप्राप्त हुए।

भैरुदान-परिचय

सामाजिक उन्नतिके लिए कार्यरत रहना आपकी अभिरुचि थी। आप सौम्य और सौजन्यकी साक्षात् मूर्ति थे। ओसवाल-समाजमें रीति, नीति और मर्यादाओके सुन्दर स्वरूप सरक्षणमें आप सतत प्रयत्नशील रहते थे। आपने अपने मित्रोके सहयोगसे 'शिक्षा प्रचारक जैन सभा'को जीवन-दान दिया और 'श्री महावीर जैन मंडल'के नामसे उसे ख्याति प्रदान की। बीकानेरके ओसवाल-समाजके उन्नयनमें इस सस्थाका बहुत बड़ा योग है। आपने आजीवन इस सस्थाकी सेवा की। आप 'होली' पर्वको आदर्श पर्वके रूपमें मनानेके पक्षघर थे। होलिकासे दस दिन पूर्व अपने सहयोगियोके साथ आप गाडीमें सुसज्जित वाद्य-यन्त्रोपर होली सुधारक गायन गाते हुए प्रत्येक मोहल्लेमें घूमते और सदाचारका प्रचार करते थे।

उन दिनो कलकत्तामें खादी आन्दोलनका जोर था। महात्मा गान्धीका शख महाध्वनिसे राष्ट्रको जगा रहा था। आपपर भी देशभक्तिकी छाप पडी और खादी पहिननी आरम्भ कर दी। (बीकानेरकी अत्यन्त कठोर राजशाही गगाशाहीके उच्चपदाधिकारियोकी दमन-दृष्टि आपके खद्दरधारी स्वरूपपर भी पडी, लेकिन आपपर उसका कोई प्रभाव नही पड़ा) और आपका खादी पहिनना यथावत् चालू रहा।

आपने जैन श्वेताम्बर पाठशालाके माध्यमसे भी समाज और शिक्षाकी सेवा सम्पादित की। आप इस सस्थाके सभापति और उपसभापति पदको अनेक वार सुशोभित कर चुके थे। श्री महावीरमडलके भी आप सभापति, सचिव और सदस्य रहे थे। आप निरभिमान और कर्मठ कार्यकर्त्ता थे। सार्वजनिक कार्योंको अपने हाथोसे करनेमें आप गौरव अनुभव करते थे। आपका विनयशील और धार्मिकस्वरूप वडा ही प्रेरक था। अभिवादन शैलीमें मोहकता थी और विवेकमें गहन चिन्तन मन्थन। और आप मान प्रतिष्ठाके भूखे नही थे, समाज-सेवाके प्रत्येक कार्यमें आप आगे रहते थे।

निरन्तर कठोर परिश्रमका आपके स्वास्थ्यपर कुप्रभाव पडा और आप लीवरके रोगसे पीडित रहने लगे। औषध उपचारका कोई सुपरिणाम दृष्टिगत नही हुआ। आप अस्थिमात्रावशेष रह गये। वाणी भी वन्द हो गई। लेकिन आपका अन्तर्ज्ञान निरन्तर वना रहा। धार्मिक स्तवन, सज्झाय आप वरावर सुनते रहे। कार्त्तिक शुक्ला पूर्णिमाको भगवान्की सवारी जव नाहटोकी गवाडमें पधारी तव अकस्मात् प्रभु-कृपासे आपकी वाणी खुल गई। इसीको कहते है, 'मूक करोति वाचालम्' मूक होहिं वाचाल आप भगवान्की भेंट-दर्शन और सवारीमें सम्मिलनके लिए पारिवारिकोको आग्रहपूर्वक आदेश देने लगे। उसी समय समाजके धनी-मानी-प्रतिष्ठित व्यक्ति आपसे मिलने भी आये। अन्तमें मिती मार्गशीर्ष कृष्णा तृतीया स० २०१५ को अपनी आत्माको धर्ममें स्थिर रखते हुए, धार्मिक प्रवचनोको सुनते हुए लगभग ८-४५ पर आपने नश्वर शरीर का त्याग कर दिया। और आप शुभ ध्यानके प्रभावसे स्वर्गमें देवरूपमें उत्पन्न हुए। स्मरण करनेवालोको आप समय-समयपर साहाय्य करते रहते है।

आपके निधनसे समाजने उच्चकोटिका विचारक, निष्काम सेवाव्रती और कर्मठ कार्यकर्त्ता खो दिया। सफल जीवन उसी व्यक्तिका है, जो अपने वान्धवोको सहारा देता है, और उन्हें जीनेके सुन्दर अवसर प्रदान करता है। अपना पेट तो सभी पाल लेते है, लेकिन उन्हे आदर्श नही कहा जा सकता है—

यस्य जीवन्ति धर्मेण पुत्रमित्राणि बान्धवाः ।
सफल जीवित तस्य, नात्मार्थे को हि जीवति ॥

सेठ शकरदानजीके द्वितीय पुत्र-स्वनामधन्य-अभयराजजी

सवत् १९५५ की चैत्र कृष्णा ६ को अभयराजजीका जन्म हुआ। स्वर्गीय अभयराजजी जैसे पुत्ररत्न विरले ही होते हैं। उन्होने अपनी विनयशीलता, नम्रता, सज्जनता, वाग्मितासे सबको मुग्ध कर किया था। वे परम धार्मिक, गहरे विचारक, धैर्यके धनी, उत्साही, अध्ययनशील और सुधारवादी सामाजिक कार्यकर्त्ता थे। वे अनेक सस्थाओके सस्थापक और सचिव रह चुके थे। सभा-सम्मेलनो और विचारगोष्ठियोसे उन्हे हार्दिक अनुराग था। वे सर्वथा महामानव बननेके पूर्वरूप थे, सब कुछ तदनुरूप था, लेकिन उनका आयुष्य दीर्घ नही था। इसलिए युवावस्थाके प्रारम्भमे ही सवत् १९७७ मिती वैशाख कृष्ण सप्तमीको रोते बिलखते परिवारको छोडकर आप विकराल कालके शिकार बन गए। आपका यह दुःखद निधन जयपुरमें हुआ था। पिताजी-माताजी एव सारे परिवार पर वज्राघात-सा हो गया वे जीवनपर्यन्त इस पुत्रके गुण प्रकर्षको विस्मृत न कर सके और वेदना अनुभव करते रहे। उन्होंने माताकी अश्रुधारा देखकर सात्वना देनेके लिए स्वर्गसे प्रकट होकर परिजनोको साहाय्य करनेका वचन दिया।

श्री अभयराजजीकी धर्मपत्नीका भी स्वर्गवास तीन वर्ष बाद हो गया। आपके एकमात्र सन्तान चम्पा-बाई है। श्री अभयराजजीका सक्षिप्त परिचय अभयरत्नसार नामक ग्रथमें प्रकाशित किया गया है, यह ग्रन्थ आपकी स्मृतिमें प्रकाशित हुआ था।

आपके पूज्य पिता श्री शकरदानजी नाहटाने आपकी स्मृतिमें श्री अभय जैन ग्रथमालाकी स्थापना की और इसके अन्तर्गत जनहितकी दृष्टिसे प्रकाशन कार्य प्रारभ किया गया।

विश्वविश्रुत, अप्राप्य, दुर्लभ, हस्तलिखित ग्रन्थोका आकर "श्री अभयजैन ग्रन्थालय" की स्थापना भी आपके नामपर ही की गई।

स० १९५८ में श्री शुभैराजजीका जन्म हुआ। आप बडे साहसी और व्यापार-विदग्ध है। स० १९६० में मगनकुँवर, स० १९६२ में मोहनलाल, स० १९६५ में श्री मेघराज और स० १९६७ मिती चैत्र कृष्णा चतुर्थीको स्वनामधन्य हमारे चरित-नायक श्री अगरचन्दजी नाहटाका जन्म हुआ।

इस प्रकार श्री शकरदानजी नाहटाके छ पुत्र और दो पुत्रियाँ उत्पन्न हुई, जिनमें सोनकुँवर, अभय-राज और मोहनलाल आपकी विद्यमानतामें ही स्वर्गवासी हो गए।

स० १९६८ की आश्विन कृष्ण द्वादशीको आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री भैरूदानजीके घर भँवरलाल नामक पुत्ररत्न उत्पन्न हुआ।

श्री भँवरलालजी नाहटा साहित्य ससारके विश्रुत विद्वान् हैं। आपने अनेक ग्रन्थोका सम्पादन, लेखन और प्रकाशन किया है। आप प्राकृत, अपभ्रश, संस्कृत, बगला, गुजराती, राजस्थानी प्रभृति भाषाओके ज्ञाता और कवि हृदय हैं। हमारे चरित-नायक श्री अगरचन्दजी नाहटाको आपका सर्वविध सहयोग उपलब्ध है। आपकी रुचि साहित्योन्मुखी है।

श्री शकरदानजी नाहटाके अनेक पौत्र, पौत्रियाँ, दोहिता, दोहिती-प्रपौत्र और प्रपौत्रियाँ उत्पन्न हुई। इस प्रकार सतान, सरस्वती और लक्ष्मीकी दृष्टिमे आप अपने जीवनकालमें अत्यन्त समृद्ध बन गए।

पूज्य पुरुषो व हर मनुष्यकी सेवा करना श्री शकरलालजी नाहटाका जन्मजात गुण था। वे इस पुण्यकार्यमें कभी आलस्य एव प्रमाद नही करते थे। अपने पूज्य माता-पिताके अतिरिक्त अपने चाचा, बडे भाई, भौजाइयाँ-आदिकी महती सेवा कर उनका जो आशीर्वाद प्राप्त किया, वह सबके लिए प्रेरणाप्रद और

अनुकरणीय है। अपने पितृव्य देवचन्दजीके पुत्र भौमसिहजी एवं मोतीलालजीका तरुणावस्थामें ही स्वर्गवास हो गया था। अत आपने अपनी दोनो भौजाइयोंकी आजीवन सेवा की। अपने अग्रज भ्राता श्री दानमलजीकी आपने जो सेवा की, वह अन्यत्र दुर्लभ है। आप उनके प्रत्येक आदेशको शिरोधार्य करते थे और उनकी हर इच्छाकी सम्पूर्ति करना अपना प्रथम कर्त्तव्य समझते थे। आपने उनके नामको अमर बनानेके लिए अपने पुत्र श्री मेघराज नाहटाको दत्तक पुत्रके रूपमें सौंप दिया और इस प्रकार अपने अग्रजकी नि सतानत्वकी वेदनाको भी उन्मूलित कर दिया। इसी प्रकार अपने ज्येष्ठ भ्राता श्री लक्ष्मीचन्द्रजीकी बहूकी भी आपने आजीवन सेवा की और उनकी पुत्रियोके विवाह आदिका सारा कार्य बडी लगनसे सम्पन्न किया। अन्तमें श्री लक्ष्मीचन्दजी-के नामको अमर रखनेके लिए पहिले अपने पुत्र अभयराजजीको और उनके स्वर्गवासी होनेपर अपने बडे पौत्र भंवरलालजी को उनके गोद दिया।

श्री शकरदानजी नाहटा परम धर्मानुरागी थे। नियमित सामायिक और पूजा-पाठ करना आपके जीवनका एक आवश्यक अग वन गया था। दैनिक धर्म-क्रिया सम्पादित करनेसे पूर्व आप जल तक ग्रहण नही करते थे। जिनदर्शन, व्याख्यानश्रवण, व्रत-उपवास-आचरण आपके जीवनका अग बन गया था और आप ईस पक्षको अधिक-से-अधिक परिपुष्ट बनानेके लिए कृतसकल्प थे।

आपने चिरकाल तक चतुर्दशीका व्रतोपवास किया और उसको पालन करते हुए ही आप उसी तिथिको कीर्त्तिशेष बन गये।

आचार्य श्री जिनकृपाचन्द्रसूरिजीके सं० १९८४में बीकानेर पधारनेपर आपने व आपके बडे भाईजी ने उन्हें अपने स्थानमें ही ठहराकर बडी श्रद्धा-भक्तिसे उनकी सेवा-शुश्रूषा की। आपने इतर समागत साधुओं-की सेवा करनेमें भी अतीव तत्परता दिखलाई।

श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरिजीके उपाश्रयका निर्माण एव ज्ञानभण्डारकी देखभाल आपने जिस निष्ठा और लगनमे की, उसकी अद्यावधि सुचर्चा होती है। श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरि धर्मशालाके आप ट्रस्टी थे। इसी प्रकार बडे उपाश्रयके ज्ञानभण्डारके भी आप व श्री दानमल जी ट्रस्टी रहे। स्थानीय जैन श्वेताम्बर पाठ-शालाके आप सभापति थे।

आपने एकाकी, सपरिवार और इतर इष्टमित्रोंके साथ अनेक वार तीर्थयात्राएँ की थी। आप सह-यात्रियोकी सेवा करना महत् पुण्य कार्य समझते थे और ऐसे शुभ अवसरको कभी हाथसे नही निकलने देते थे। अनेक तीर्थों और मन्दिरोके जीर्णोद्धार एव सुव्यवस्थाके लिए भी आपने स्वोपार्जित द्रव्यका अच्छा सद्व्यय किया था।

आप परम परोपकारी वृत्तिके व्यक्ति थे। जब भी आप किसी अभाव-ग्रस्त प्राणीको पाते, आप उसके अभाव-सकटको दूर करनेके लिए कृत-सकल्प हो जाते और आपको तभी प्रसन्नता होती, जब दु खी व्यक्ति सुखी हो जाता। ग्रामीणोकी अभावभरी आत्मकथाएँ आप बडे ध्यान और मनोयोगसे सुनते थे और अपनी शक्ति-सामर्थ्यके अनुसार उनकी सहायता भी करते थे।

नाडी और औषधिका आपको अच्छा ज्ञान था। मियादी-बुखारके तो आप विशेषज्ञ समझे जाते थे। रात-दिन आपके द्वार रुग्णोंके लिए खुले थे। जब भी कोई रोगी आया, आपने उसकी तन-मन और धनसे सेवा की। रोग-निदान और निवारण आपकी परोपकारी-वृत्तिका अभिन्न अग बन गया था। इसलिए आप रोगीसे कुछ भी नही लेते थे, हाँ अभावग्रस्त रोगी या उसके परिवारको देते अवश्य थे।

यस्य जीवन्ति धर्मेण पुत्रमित्राणि बान्धवा ।
सफल जीवित तस्य, नात्मार्थे को हि जीवति ॥

सेठ शकरदानजीके द्वितीय पुत्र-स्वनामधन्य-अभयराजजी

सवत् १९५५ की चैत्र कृष्णा ६ को अभयराजजीका जन्म हुआ। स्वर्गीय अभयराजजी जैसे पुत्ररत्न विरले ही होते है। उन्होने अपनी विनयशीलता, नम्रता, सज्जनता, वाग्मितासे सबको मुग्ध कर किया था। वे परम धार्मिक, गहरे विचारक, धैर्यके धनी, उत्साही, अध्ययनशील और सुधारवादी सामाजिक कार्यकर्त्ता थे। वे अनेक सस्थाओके सस्थापक और सचिव रह चुके थे। सभा-सम्मेलनो और विचारगोष्ठियोसे उन्हें हार्दिक अनुराग था। वे सर्वथा महामानव बननेके पूर्वरूप थे, सब कुछ तदनुरूप था, लेकिन उनका आयुष्य दीर्घ नही था। इसलिए युवावस्थाके प्रारम्भमे ही सवत् १९७७ मिती वैशाख कृष्ण सप्तमीको रोते बिलखते परिवारको छोडकर आप विकराल कालके शिकार बन गए। आपका यह दुःखद निधन जयपुरमें हुआ था। पिताजी-माताजी एव सारे परिवार पर वज्राघात-सा हो गया वे जीवनपर्यन्त इस पुत्रके गुण प्रकर्षको विस्मृत न कर सके और वेदना अनुभव करते रहे। उन्होने माताकी अश्रुधारा देखकर सात्वना देनेके लिए स्वर्गमे प्रकट होकर परिजनोको साहाय्य करनेका वचन दिया।

श्री अभयराजजीकी धर्मपत्नीका भी स्वर्गवास तीन वर्ष बाद हो गया। आपके एकमात्र सन्तान चम्पाबाई है। श्री अभयराजजीका सक्षिप्त परिचय अभयरत्नसार नामक ग्रथमें प्रकाशित किया गया है, यह ग्रन्थ आपकी स्मृतिमें प्रकाशित हुआ था।

आपके पूज्य पिता श्री शकरदानजी नाहटाने आपकी स्मृतिमें श्री अभय जैन ग्रथमालाकी स्थापना की और इसके अन्तर्गत जनहितकी दृष्टिसे प्रकाशन कार्य प्रारभ किया गया।

विश्वविश्रुत, अप्राप्य, दुर्लभ, हस्तलिखित ग्रन्थोंका आकर "श्री अभयजैन ग्रन्थालय" की स्थापना भी आपके नामपर ही की गई।

स० १९५८ में श्री शुभैराजजीका जन्म हुआ। आप बडे साहसी और व्यापार-विदग्ध हैं। स० १९६० में मगनकुँवर, स० १९६२ में मोहनलाल, सं० १९६५ में श्री मेघराज और सं० १९६७ मिती चैत्र कृष्णा चतुर्थीको स्वनामधन्य हमारे चरित-नायक श्री अगरचन्दजी नाहटाका जन्म हुआ।

इस प्रकार श्री शकरदानजी नाहटाके छ पुत्र और दो पुत्रियाँ उत्पन्न हुईं, जिनमें सोनकुँवर, अभयराज और मोहनलाल आपकी विद्यमानतामे ही स्वर्गवासी हो गए।

स० १९६८ की आश्विन कृष्ण द्वादशीको आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री भैरूदानजीके घर भँवरलाल नामक पुत्ररत्न उत्पन्न हुआ।

श्री भँवरलालजी नाहटा साहित्य ससारके विश्रुत विद्वान् हैं। आपने अनेक ग्रन्थोका सम्पादन, लेखन और प्रकाशन किया है। आप प्राकृत, अपभ्रश, संस्कृत, बगला, गुजराती, राजस्थानी प्रभृति भाषाओके ज्ञाता और कवि हृदय हैं। हमारे चरित-नायक श्री अगरचन्दजी नाहटाको आपका सर्वविध सहयोग उपलब्ध है। आपकी रुचि साहित्योन्मुखी है।

श्री शकरदानजी नाहटाके अनेक पौत्र, पौत्रियाँ, दोहिता, दोहिती-प्रपौत्र और प्रपौत्रियाँ उत्पन्न हुई। इस प्रकार सतान, सरस्वती और लक्ष्मीकी दृष्टिमे आप अपने जीवनकालमें अत्यन्त समृद्ध बन गए।

पूज्य पुरुषो व हर मनुष्यकी सेवा करना श्री शकरलालजी नाहटाका जन्मजात गुण था। वे इस पुण्यकार्यमें कभी आलस्य एव प्रमाद नही करते थे। अपने पूज्य माता-पिताके अतिरिक्त अपने चाचा, बडे भाई, भौजाइयाँ-आदिकी महती सेवा कर उनका जो आशीर्वाद प्राप्त किया, वह सबके लिए प्रेरणाप्रद और

अनुकरणीय है। अपने पितृव्य देवचन्दजीके पुत्र भीमसिहजी एवं मोतीलालजीका तरुणावस्थामें ही स्वर्गवास हो गया था। अत आपने अपनी दोनो भौजाइयोकी आजीवन सेवा की। अपने अग्रज भ्राता श्री दानमलजीकी आपने जो सेवा की, वह अन्यत्र दुर्लभ है। आप उनके प्रत्येक आदेशको शिरोधार्य करते थे और उनकी हर इच्छाकी सम्पूर्ति करना अपना प्रथम कर्त्तव्य समझते थे। आपने उनके नामको अमर बनानेके लिए अपने पुत्र श्री मेघराज नाहटाको दत्तक पुत्रके रूपमें सौप दिया और इस प्रकार अपने अग्रजकी नि संतानत्वकी वेदनाको भी उन्मूलित कर दिया। इसी प्रकार अपने ज्येष्ठ भ्राता श्री लक्ष्मीचन्द्रजीकी वहूकी भी आपने आजीवन सेवा की और उनकी पुत्रियोके विवाह आदिका सारा कार्य बडी लगनसे सम्पन्न किया। अन्तमें श्री लक्ष्मीचन्दजी-के नामको अमर रखनेके लिए पहिले अपने पुत्र अभयराजजीको और उनके स्वर्गवासी होनेपर अपने वडे पौत्र भवरलालजी को उनके गोद दिया।

श्री शकरदानजी नाहटा परम धर्मानुरागी थे। नियमित सामायिक और पूजा-पाठ करना आपके जीवनका एक आवश्यक अंग बन गया था। दैनिक धर्म-क्रिया सम्पादित करनेसे पूर्व आप जल तक ग्रहण नही करते थे। जिनदर्शन, व्याख्यानश्रवण, व्रत-उपवास-आचरण आपके जीवनका अंग बन गया था और आप इस पक्षको अधिक-से-अधिक परिपुष्ट बनानेके लिए कृतसकल्प थे।

आपने चिरकाल तक चतुर्दशीका व्रतोपवास किया और उसको पालन करते हुए ही आप उसी तिथिको कीर्त्तिशेष बन गये।

आचार्य श्री जिनकृपाचन्द्रसूरिजीके सं० १९८४में बीकानेर पधारनेपर आपने व आपके बडे भाईजी ने उन्हें अपने स्थानमें ही ठहराकर बडी श्रद्धा-भक्तिसे उनकी सेवा-शुश्रूषा की। आपने इतर समागत साधुओ-की सेवा करनेमें भी अतीव तत्परता दिखलाई।

श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरिजीके उपाश्रयका निर्माण एव ज्ञानभण्डारकी देखभाल आपने जिस निष्ठा और लगनमे की, उसकी अद्यावधि सुचर्चा होती है। श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरि धर्मशालाके आप ट्रस्टी थे। इसी प्रकार बडे उपाश्रयके ज्ञानभण्डारके भी आप व श्री दानमल जी ट्रस्टी रहे। स्थानीय जैन श्वेताम्वर पाठ-शालाके आप सभापति थे।

आपने एकाकी, सपरिवार और इतर इष्टमित्रोंके साथ अनेक वार तीर्थयात्राएँ की थी। आप सह-यात्रियोकी सेवा करना महत् पुण्य कार्य समझते थे और ऐसे शुभ अवसरको कभी हाथसे नही निकलने देते थे। अनेक तीर्थों और मन्दिरोके जीर्णोद्धार एव सुव्यवस्थाके लिए भी आपने स्वोपार्जित द्रव्यका अच्छा सद्व्यय किया था।

आप परम परोपकारी वृत्तिके व्यक्ति थे। जब भी आप किसी अभाव-ग्रस्त प्राणीको पाते,. आप उसके अभाव-सकटको दूर करनेके लिए कृत-सकल्प हो जाते और आपको तभी प्रसन्नता होती, जव दु खी व्यक्ति सुखी हो जाता। ग्रामीणोकी अभावभरी आत्मकथाएँ आप वडे ध्यान और मनोयोगसे सुनते थे और अपनी शक्ति-सामर्थ्यके अनुसार उनकी सहायता भी करते थे।

नाडी और औषधिका आपको अच्छा ज्ञान था। मियादी-बुखारके तो आप विशेषज्ञ समझे जाते थे। रात-दिन आपके द्वार रुग्णोके लिए खुले थे। जव भी कोई रोगी आया, आपने उसकी तन-मन और धनसे सेवा की। रोग-निदान और निवारण आपकी परोपकारी-वृत्तिका अभिन्न अग वन गया था। इसलिए आप रोगीसे कुछ भी नही लेते थे, हाँ अभावग्रस्त रोगी या उसके परिवारको देते अवश्य थे।

आपने कष्ट-सहिष्णुता और विपत्तिमें धैर्य अपनानेका मूल रहस्य जान लिया था। आपकी प्रवृत्ति उन महात्माओसे मेल खाती थी, जो अपने शरीर-आचरणके लिए वज्रसे भी कठोर और परदु खके लिए कुसुमसे भी कोमल थे।

आप अत्यन्त कर्मठ, कार्यदक्ष व्यक्ति थे। श्रमकी महत्ता आपकी रग-रगमें भरी थी। आप कामको भगवदाराधन समझते थे। आपकी दृष्टिमे कोई काम छोटा या तुच्छ नही था। पाकशास्त्र, गोदोहन, पशुसेवा, भवन-निर्माण एव मरम्मत, बढईगिरी, सिलाई, कृषिकर्म, खाता-बही, तोल-जोख, हिसाब पत्र आदि सबमें आपकी अबाध रुचि और अगाध गति थी। आपके कार्य करनेकी एक शैली थी। जिस काममें आप लगते, उसीमें दत्तचित्त हो जाते। आपकी स्थिति साधनालीन योगी जैसी प्रतीत होती थी।

आप सादा जीवन और उच्च विचारकी साक्षात् प्रतिमूर्त्ति थे। आपकी वेशभूषा अत्यन्त साधारण और खानपान सात्त्विक था। सम्पत्ति पाकर बौखला जाने वाले व्यक्तियोमें से आप नही थे, अपितु आप तो उन लोगोंमें से थे जो अधिक पाकर अधिक गहरे, अधिक विनम्र और अधिक सरल बनते हैं। आपने अप-व्ययके नामपर एक पैसा भी कभी व्यय नही किया, लेकिन आवश्यकता और परिस्थितिके आग्रह पर लाखो रुपये व्यय कर दिये।

आपकी वर्णन-शैली अत्यन्त सजीव थी। जब आप कोई अनुभव वृत्त सुनाते तो उसका चित्र सा उभर जाता था। आप असाधारण स्मरण शक्तिके धनी थे। अपने जीवनकी घटनाएँ मिति-सवत्के अनुसार आपको याद थी। परिवारमें किस व्यक्तिकी कब मृत्यु हुई, कौन कब उत्पन्न हुआ और कब कहाँ किसका विवाह हुआ आदि तथ्य आपकी अगुलियों पर थे।

पुण्यवान जीवके बिना समाधिमरण प्राप्त होना संभव नही है। सवत् १९९९के माघ शुक्ला चतुर्दशी का दिन था। प्रकरण-पुरुष श्री नाहटाजी का वह चौविहार उपवास दिवस था। प्रतिक्रमण करनेके निमित्त आप बाजारसे घर पधारे और दीवानखानेमें एक तकियेके सहारे बैठ गये। हमारे चरित-नायक श्री अगरचन्द-जी नाहटा उस समय किसी साहित्यिक कार्यमें सलग्न थे, पितृश्री को आया देखके प्रतिक्रमणकी तैयारीमें लग गये। पितृश्री ने फरमाया "प्रतिक्रमण तो करना ही है, पर मेरे हृदयमें कुछ वेदना सी हो रही है, अत. थोडा तेल ले आओ, मालिश करके फिर प्रतिक्रमण करेंगे।" पितृश्रीकी आज्ञाके अनुसार पुत्रोने तेलमर्दन किया। श्री शुभैराजजी अगारोंकी सिगडी ले आये और सर्दीका दर्द समझकर सिकताव करने लगे। कुछ समय पश्चात् आपको नीद-सी आने लगी और सेक बन्द कर दिया गया। कुछ क्षण उपरान्त ही श्री अगर-चन्दजी नाहटाने आपके शरीरमें हुए एक कम्पनका अनुभव किया और पार्श्वस्थ भाई शुभैराजजीको इसकी सूचना देते हुए पितृश्रीके वस्त्रावृत मुँहको उघाडकर देखा तो पुण्यात्मा स्वर्ग प्रयाण कर चुकी थी। सहसा किसीको विश्वास न हुआ। श्रीमेघराजजी नाहटा भी झटिति वहाँ गये। डॉ० सूर्यनारायणजी आसोपा भी आये, परन्तु वहाँ केवल पार्थिव शरीर शेष था, हस उड चुका था।

स्वर्गीय श्री शंकरदानजी नाहटाका जो शरीर अनाथो, कष्ट-पीडितो और बेसहारोका सहारा था, सताप और सवेदनासे अधीर हुए व्यक्तियोको जो धैर्य और ढाढस दिया करता था, वही आज स्वपारिवारिको के करुण-क्रन्दनको, उनकी असह्य वेदनाको उपेक्षित बनाकर अनसुनी कर रहा था। जिसके वरद हाथोकी सुखद शीतल छायाके नीचे नाहटा परिवार सानन्द फल-फूल रहा था, आज वह महान् वृक्ष ही जैसे गिर पडा था और उस अनन्त पथकी ओर मुडकर चल पडा था, मानो किसीके साथ उसकी कोई पहिचान ही नहो थी। पुण्यवानका चेहरा प्रफुल्लित और मृतशरीर भी मन भावना कान्ति फैला रहा था। ठीक है, मौतका वश केवल पार्थिव शरीर पर है, पर वह श्री शकरदानजी नाहटाकी उस कमनीय कीर्त्तिको नही मार सकती,

जिसे उन्होंने परोपकार, सेवाभाव और जनहित सम्पादन करके अर्जित किया था। वह सुखद कीर्त्ति आज भी है और तब तक रहेगी, जब तक उनके वंशजोंमें मानवता, परदु:खकातरता, सेवा-वृत्ति और सत्कर्माचरण भावनाका सन्निवास है। शंकरदानका शरीर चला गया लेकिन नाम शंकरदान अमर रह गया।

आन-बान और स्वाभिमानके धनी जिस नाहटावंशको ताराचन्द्रजी जैसे सुयोग्य सत्पुत्रने राजप्रतिष्ठा, सामाजिक सम्मान और सुग्राममें शुभ फलद स्थायी आवास दिया, उदयचन्द्रजी नाहटा जैसे मनस्वी, कर्मवीर, वंशजने जिसे व्यवसाय विदग्धता, कर्मशीलता और श्रीसम्पन्नता प्रदान की, श्रेष्ठिरत्न शंकरदान नाहटाने अपने सेवाभाव, उदारवृत्ति और साधनानिष्ठासे जिस वंशकी फलकीर्त्तिको चतुर्दिक् प्रसारित किया, समाज-प्राण, वाग्मी नररत्न सेठ श्रीभैंरूँदानजी नाहटा जैसे उत्साही, समाज और राष्ट्रसेवी व्यक्तित्वने जिसे चिन्तन-शील-विवेक-बल दिया, स्वर्गीय श्री अभयराजजी नाहटा जैसी प्रतिभाशील देवमूर्त्तिने जिसे अपनी अद्भुत क्षमता, विनयशीलता और विद्वत्तासे विस्मयाविष्टपूर्वक विषादावृत भी किया, श्रीशुभैंराजजीकी शुभदृष्टिसे जो कल्याणसुखासीन बना और श्री मेघराजजी नाहटाकी लगनशीलता, मिलनसारिता और परोपकारिताने जिसे उच्चासनस्थ बनाया। ऐसे श्रीसम्पन्न, विपुलपरिवारयुक्त बीकानेरवासी नाहटा परिवारमें श्री शंकरदानजी नाहटाकी धर्मपत्नी श्री चुन्नीबाईकी दक्षिण कुक्षिमें संवत् १९६७ मिती चैत्र कृष्णचतुर्थीको बीकानेरमें कनिष्ठ किन्तु कनिष्ठिकाधिष्ठित एक सारस्वत नररत्न उत्पन्न हुआ, जो हमारा चरितनायक है और जिसे भारत और भारतेतर भूभागका लक्ष्मी और सरस्वतीका संसार श्रीअगरचन्द नाहटाके नामसे सम्यक्तया जानता है—

चौथ सुतिथि मधु मास पुनीता, कृष्ण पक्ष शुभग्रह सुख प्रीता।
शंकर सुत मा चुन्नी नन्दन, प्रगट भए श्री गोष्पति मंडन॥

अर्थात्—चैत्रमासकी कृष्णा चतुर्थीको माता चुन्नीबाईको प्रसन्न करनेवाले श्री शंकरदानके पुत्र जो लक्ष्मीपति और वाणीपतिके आभूषण हैं, उत्पन्न हुए।[1]

विशेष पुरुषोंके जीवनके साथ कोई न कोई असामान्य घटना या बात प्राय: संलग्न रहती है। हमारे चरित-नायक भी इसके अपवाद नहीं रहे हैं। सामान्यत: जातकका 'नामकरण' उसके जन्मके पश्चाद्वर्त्ती होता है, परन्तु हमारे चरितनायकका नामकरण जन्मसे पहिले ही हो गया था। उत्पत्तिसे पूर्वका यह नामकरण सहेतुक था। संवत् १९५८ में ग्वालपाडा (आसाम)से १०-१२ मील दूर स्थित 'चापड' नामक स्थानपर नाहटा वंशजोंने एक राजरूप लक्ष्मीचन्द नामसे दुकानका श्रीगणेश किया था। बादमें नाम बदलनेकी आवश्यकता होनेपर संवत् १९६६ में भीनासर (बीकानेर)के सेठियोंने उस दुकानमें अपने पूर्वजका नाम अगरचन्द सहनामके रूपमें रख दिया। इस प्रकार उस दुकानका नाम "अभयकरण (नाहटा) अगरचन्द (सेठिया)" चल पड़ा। पर चतुर व्यवसायी नाहटोंके मुनीम श्री सदारामजी सेठियाको इस अनपेक्षित नामके भावी परिणामको समझनेमें विलम्ब नहीं लगा। उन्होंने झटिति निर्णय लिया कि नाहटा वंशमें अब जो भी प्रथम पुत्र उत्पन्न होगा, उसका नाम 'अगरचन्द' ही रखा जायेगा। इस निर्णयके उपरान्त हमारे चरित-नायकका जन्म हुआ और उन्हें पूर्वनिश्चित नाम 'अगरचन्द' प्राप्त हुआ। इस प्रकार आपने अपने जन्मसे पारिवारिकोंकी दुश्चिन्ताका उन्मूलन तो किया ही, साथमें व्यापार संवृद्धिका शुभ संकेत भी दिया।

जब आप कुछ बड़े हुए तो आपने अपनेको एक भरे-पूरे परिवारका सदस्य पाया। पिता, माता, चार सहोदर, दो बहिनें, बाबा पड़ीया, चाचा, चाची, दादियाँ, बड़ी माँ आदिकी पर्याप्त संख्या थी। घरमें सेवा-भावी और नौकर-नौकरानी थे। घर ग्रामीण संस्कृति और नागरिक सभ्यताका केन्द्र बना हुआ था। बीकानेरके

१. कविवर आचार्य चन्द्रमौलि—नाहटा प्रशस्तिकासे उद्धृत।

निवास भवनमें ग्राम डाडूसर और उसके आसपासके व्यक्ति प्राय आते ही रहते थे और पूर्ण सत्कार पाते थे। उस सेवा-टहलमें घरके सभी आवालवृद्ध सक्रिय रहते थे। बालक अगरचन्दको भी यथाशक्ति सेवाका सभार वहन करना पडता था। चूँकि नाहटा बन्धुओका व्यापार दूरवर्ती परदेशमें था, अतः वहाँसे आनेवाले व्यक्ति भी दूकानका कुशल-समाचार अथवा कोई वस्तु देनेके लिए आते थे और रोचक अनुभव सुनाते थे। स्थानीय व्यक्ति भी अपनी विविध समस्याओका समाधान पानेके लिए उपस्थित होते थे। इस प्रकार श्री नाहटाका घर उनके शैशवमें विभिन्न प्रवृत्तिके लोगोका केन्द्रस्थल बन गया था और उसके प्रत्यक्ष और परोक्ष सस्कार बालक अगरचन्दपर भी जम रहे थे।

शैशवमें हमारे चरितनायकका सबसे प्रियपात्र था लाभू बाबा। वह नाहटा-परिवारका अत्यन्त विश्वस्त भृत्य था, लेकिन सारा परिवार उसे अपना अभिन्न अग समझता था और उसका आदर करता था। श्री भवरलालजी नाहटाने उसका बडा सुन्दर रेखाचित्र खीचा है—

'धोतै मूढैरो छोरो, जवान हो जद वही म्हारैं घरमें रैंवतो आयो हो। हो तो बौ दो रुपिया को महीनैदार पण म्हारा घररा लोगा उणनै कदेई नोकरको समझियो नी—काई छोटा अर कोई बडा—सगला उणरो आदर करता। बडा लोग लाभू, लुगाया लाभूजी अर म्हे टाबर 'लाभूबाबोकै बतलावता।'[1] लाभू बाबा बच्चो-को कहानियाँ, दोहे, भजन, हरजस वातें आदि सुनाता था, उन्हें गोदी-कधे और पीठपर बिठाकर काम करता था, जिससे बच्चे बडे ही प्रसन्न रहते थे। वह बच्चोके साथ खाता भी था, उन्हें खिलाता भी था और उन्हे थपथपाकर सुलाता भी था। श्री भवरलालजी नाहटाके शब्दोमें

"टाबरा नै, विसेसकर म्हा तीनो नै—काकोजी मेघराजजी, काकोजी अगरचन्दजी, और मनै, बडी हीयाली सू राखतो। एक नै गोदीमें, दूजा नै खाधा माथै अर तीजै नै मगरा माथै राखियाँ काम करतो रैतो। म्हानै घणा ओखाणा अर दूहा सुणावतो। सिज्या पडती जद म्हें लाभू बाबा नै बात कैवण वासतै पकडनै बैठाय लेता। बाबो म्हारी फरमास अर रुचि मुजब वाता सुणावतो—कदेई रामायण री—कदेई महाभारतरी कदेई इतिहास री, कदैई धूनीरी, कदैई पैलाद री, कदैई नरसी जी रै माहेरैरी"[2]।

लाभू बाबा एक क्षण भी व्यर्थ और विना काम बैठना नही चाहता था। वह कुछ न कुछ गाता जाता था और तल्लीनतापूर्वक काम करता रहता था। उसे अनेक 'ख्याल' याद थे—प्रभातियाँ याद थी—राम-चरित मानसकी चौपाइयाँ-दोहे, नीति-वचन आदि प्राय कठस्थ थे। वह कहा करता था—'नाणो अटरो, विद्या कठरी'[3]।

नाहटा-परिवार लाभू बाबा की अन्तिम समय तक इज्जत करता रहा और आज भी उस प्रेमपुजारी की स्मृति उसमें वैसी ही बनी है। श्री भवरलालजी नाहटाके शब्दोमें—

"लाभू बावै नै सर्गवासी हुया आज तीस बरस हुग्या, पण म्हारै मनमैं बावैरी अर बावै रै गुणारी याद आज भी ताजी है"[4]। हमारे चरित-नायक अब भी लाभू बावाका गुणगान करते नही अघाते। लाभू बावाका निष्कपट सहज स्नेह, उसकी श्रमशीलता और उसका आत्मीयभाव—जब उनके स्मृति पथमें आते हैं तो वे सुदूर अतीतमे खो जाते है और उसके व्यक्तित्वसे प्रेरणा प्राप्त करतेसे प्रतीत होते हैं।

श्री नाहटाजीको जब अपनी शैशवलीलाका एक अन्य पात्र याद आता है तो भी वे थोडा सा मुस्करा देते हैं। उनके चेहरेकी सहज गभीरता एक क्षणके लिए दूर हट जाती है और वे स्मितिके साथ उसका नाम

१ श्री भवरलाल नाहटा-बानगी पृ० ७। २. श्रीभवरलाल नाहटा—'बानगी' पृ० ८। ३. श्रीभवर-लाल नाहटा—बानगी पृ० ७। ४. श्रीभवरलाल नाहटा—बानगी पृ० ९।

● श्री अगरचन्द जी नाहटा तथा उनका परिवार मण्डल



श्री अगरचन्द जी नाहटा



श्री अगरचन्द जी नाहटा की बडी माँ साहब
सेठ दानमल जी नाहटा की धर्मपत्नी स्व० श्री पानकँवर जी
पौत्र विमलचन्द व तनसुखराय के साथ।



अगरचन्द नाहटा की मातुश्री
श्रीमती चुन्नीबाई (धर्मपत्नी सेठ शकरदान जी नाहटा)



भैरूँदान जी, शुभैराज जी, मेघराज जी, अगरचन्द जी नाहटा
(चारो भ्राता)



भँवरलाल नाहटा　　　　अगरचन्द नाहटा

श्री अगरचन्द जी नाहटा के सम्बन्धी



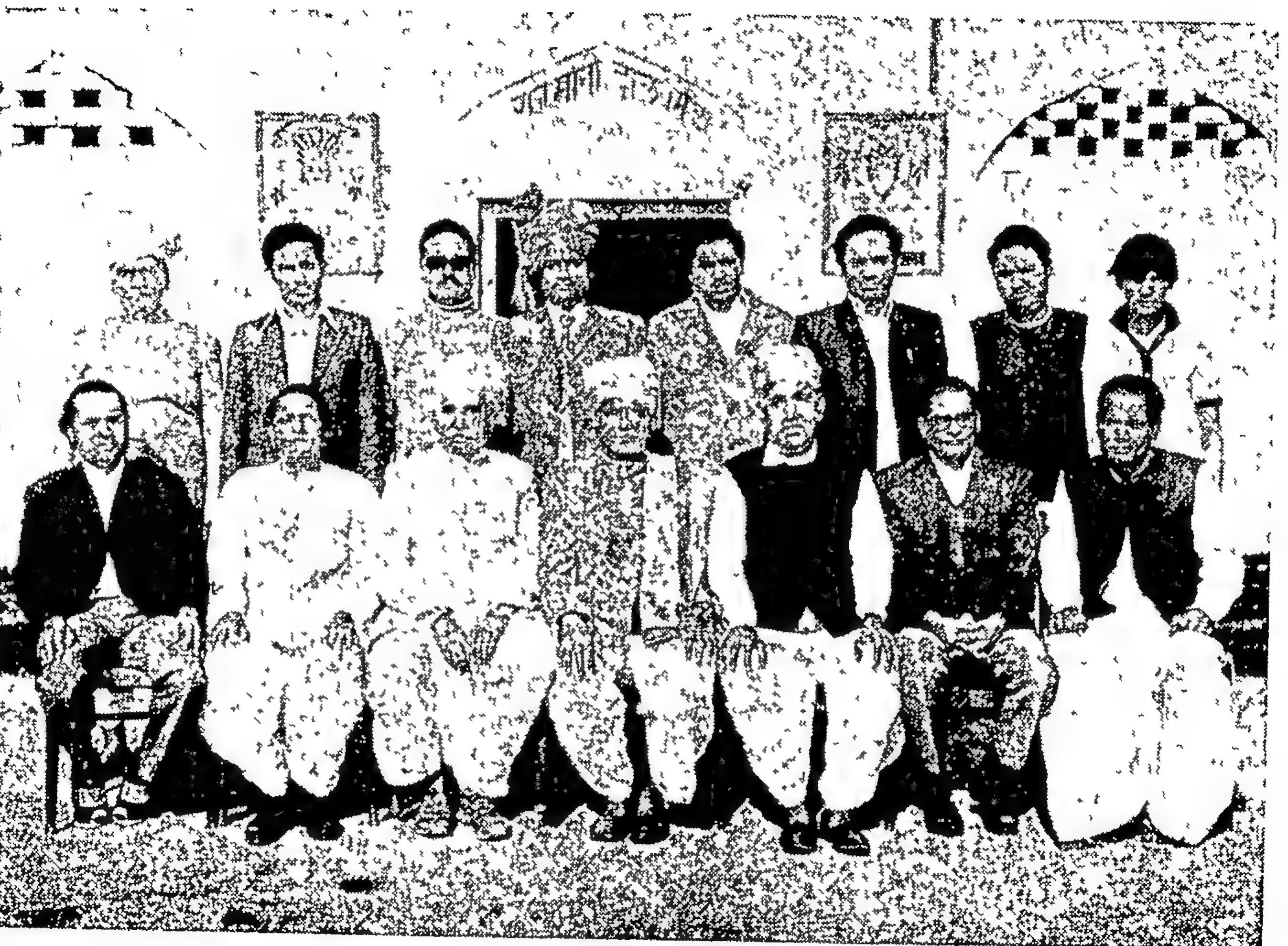
(बहनोई)
स्व० सेठ फूलचन्द जी बांठिया



(वहिन)
श्रीमती मगनवाई



स्व० श्रीमती पन्नी देवी जी
(श्री अगरचन्द जी नाहटा की धर्मपत्नी)



सयोजक के परिवार के साथ श्री अगरचन्द जी नाहटा ।



सिलहट दुकान के कर्मचारियो के साथ

वैठे हुए—इन्द्रचन्द्र वोथरा, अगरचन्द जी नाहटा, मूलचन्द जी ललवानी, तोलाराम जी डोसी ।

पीछे खडे हुए—वगाली सरकार (कर्मचारी) वर्ग ।



अगरचन्द नाहटा   भँवरलाल जी नाहटा

(वि०सं० १९९२.कलकत्ता)।

वताते है 'रावतिया नाई'। वह जन्मान्ध था। नाहटाजीके पैतृक गाँवका वह निवासी था और वीकानेर आकर इनके परिवारकी सेवा करने लगा था। घरके जूठे वतन प्राय वही साफ करता था। वह तेल मालिश करनेमें भी पटु था। नाहटा परिवारके वच्चे जब उससे तेल मालिश कराते तो उसे अन्धा जानकर चिढानेके लिए किसी दूसरे वच्चेका एक हाथ या पाँव उसे पकडा देते। इस चालाकीको वह झट ताड जाता और हाथ-पैरको टटोल कर कह देता 'ओ पग तो थारो कोयनी'—यह पैर तो तुम्हारा नही है। श्रीनाहटाजीके शब्दोमे "वह वडा मनमौजी था। जब वैठा-वैठा अकेला उकता जाता तो वेशिर-पैरकी गप्पें हाँकने लगता। कभी कहता 'सेठा, आज तो आया रै गाँव कानी वादल दीसै है, गाज-वीज है, मेंह सातरो वरससी'। अर्थात् सेठ साहव, आज अपने गाँव डाडूसरकी तरफ आकाशमे जलधर दृष्टिगोचर हो रहे है, गर्जन और विद्युत्स्फुरण भी है, वर्षा खूव होगी।

हमारे चरितनायकको शैशवमें कभी एकाकीपनका अनुभव नही हुआ क्योकि भ्रातृपुत्र श्री भवरलालजी नाहटा आपसे छह मास छोटे थे और भ्राता मेघराजजी लगभग ढाई वर्ष वडे। तीनोकी सुन्दर और सुखद मडली थी। खेलना-पढना-पाठशाला जाना और भोजन आदि सव साथ-साथ चलता था। वाल स्वभावसे कभी-कभी आपसमे अल्प समयके लिए ठन जाती तो भतीजे भवरलालजी मेघराजजीके पक्षमें होते। आनन-फाननमें क्रोध-मनमुटाव मिट जाता और तीनो एक-हृदय होकर उत्फुल्ल भावसे फिर वैसे ही खेलते-खाते और गप्पें हाँकते।

श्री भवरलालजी नाहटाके शब्दोमें —

"कभी-कभी दोनो काकाजीके आपसमें वोलचाल वन्द हो जाती तो मैं मेघराजजीके पक्षमें हो जाता था। थोडी देरका मनमुटाव हवा होते देर नही लगती और हमारे तीनोमें परस्पर वडा प्रेम रहता। काकाजी मेघराजजी हमारेसे आगे थे और हम दोनो एक ही क्लासमें पढते थे। मेघराजजी चौथी क्लासमें शायद दो तीन वर्ष जमे रहे तो हम दोनो तीसरी क्लासमें थे, फिर पाँचवी क्लासमें हम तीनो (श्री मेघराजजी नाहटा, श्री अगरचन्दजी नाहटा एव भ्रातृपुत्र श्री भवरलालजी नाहटा) साथ-साथ थे।"[१]

हमारे चरितनायकको वचपनमें वडी माताका अपार स्नेह प्राप्त हुआ था। माता-पिता कलकत्ता चले गये थे और उन्हें वडी माताके पास छोड गये थे। श्री नाहटाजीके शब्दोमें "वडी माँ अत्यन्त सरल-हृदया थी। उनके स्नेहाधिक्यने मेरी माँको भुला दिया था। वह खाखरे (पतली ठडी रोटी) पर ताजा मक्खन लगाकर सवेरे-सवेरे खानेको देती और तव पढनेके लिए भेजती। एक वार शाला जीवनमें ओरी निकली, वडी माँजीने अहर्निश सचेष्ट रहकर खूव सेवा की। वे प्राय कहती थी —

"लडको वहुत स्याणो है, न ओय करै न आय करै"। वडी माताका स्नेह वाल नाहटाको किसी भी स्थितिमें दु खी या रोता हुआ नही देख सकता था—उन्होने एक वार मारजाको भी कह दिया था कि "मेरे अगरूको न मारा करो"।

विद्यारम्भ अक्षय तृतीयाको जैन पाठशालामें हुआ। तव यह सस्था सेठिया गवाडमें थी। तत्पश्चात् यह शाला सुनारोके मोहल्लेमे चली गई और अद्यावधि वही पर स्थित है। नाहटाजी एकमात्र इसी शालामे पढे। आपने पचम कक्षा इसीसे उत्तीर्ण की और छठी कक्षामे शालीय अध्ययन समाप्त हो गया।

श्री नाहटाका शालीय-जीवन अत्यन्त श्लाघ्य था। आप परिश्रमी छात्र थे और हमेशा पूरा गृहकार्य करके शाला जानेका स्वभाव था। आपकी तत्कालीन अभ्यास पुस्तिकाओके सुरक्षित सग्रहको देखनेसे प्रतीत

---

१ श्री भंवरलाल नाहटा लेख।

होता है कि आपकी विशेष रुचि निबन्ध-प्रवचन-भाषण-लिखने और उन्हे साप्ताहिक सभाओमे पढनेकी थी। आप शालाकी प्रत्येक छात्र-सभाके प्रवक्ताओमें अपना नाम सर्वप्रथम लिखाते थे।

श्री मयाचन्द टी० शाह उन दिनो जैन पाठशालामे धर्माध्यापक थे। वे जैन-धर्म पढाते थे। हमारे चरित-नायक उम्रमें छोटे अवश्य थे, लेकिन जैनधर्मकी अधिकाश उपदेशावलियाँ, प्रतिक्रमण विधियाँ उनके कठस्थ थी और धार्मिक ग्रथोके पठन-व्यसनने उनमें निखार लाना आरम्भ कर दिया था। इसलिए शाह साहब आपसे अत्यन्त प्रसन्न थे और अपने अच्छे प्रतिभा सम्पन्न शिष्योमें आपको समझते थे। जब कभी शालीय उत्सव होता या सामान्य गोष्ठी होती तो श्री नाहटाजीको जैनधर्मपर प्रवचन करनेके लिए कहा जाता। इस प्रवचनका आशय धर्माध्यापकजी द्वारा अध्यापित छात्रोके माध्यमसे उनकी श्रमशीलताका प्रमाणीकरण होता था। श्री नाहटाकी रुचि खेलोमें कम थी। उनका अधिकांश समय शालासे मिले गृहकार्य करनेमें लग जाता और शेष समयमें वे आगामी साप्ताहिक सभामें बोलनेके लिए जोरशोरसे तैयारीमें सलग्न हो जाते। उनकी रुचि अधिक-से-अधिक श्लोक-गाथाएँ याद करके अपने भाषणको अधिक धर्मप्राण-बनानेकी ओर विशेष थी। श्री नाहटाने अपने शालीय जीवनपर लेखकके प्रश्नका उत्तर देते हुए बताया कि —

"हमारे शिक्षक हमसे बहुत स्नेह रखते थे। वे हमें ही अपना पवित्र पुत्र समझते थे। व्यवहार अत्यन्त आत्मीयताका था। हमारे सही उत्तर सुनकर उनका रोम-रोम खिल जाता था, उनकी आँखें जैसे हमें आशीर्वाद देनेको समुत्सुक थी, हम उन्हें सबसे प्रामाणिक और हितैषी समझते थे। हमारी अनन्य आस्था और श्रद्धा हमें निरन्तर आनन्दित रखती थी।

श्री चिम्मनलालजी गोस्वामी (वर्तमान संपादक कल्याण) तब जैन पाठशालाके प्रधानाध्यापक नियुक्त हुए थे। उनका प्रभाव बहुत था। उनकी पाठन शैली, व्यक्तित्व मधुरता और शिक्षक-शिष्योके साथके आत्मीयता-पूर्ण व्यवहारने उन्हें लोकप्रिय बना दिया था। मैं मन ही मन श्री गोस्वामीजीका अत्यन्त आदर करता और वैसा सज्जन, उच्च विद्वान् बननेका बार-बार सकल्प दुहराता था।"

स्व० श्री रामलोटनप्रसादजी तो अपने शिष्यकी योग्यता को देख गदगद हो जाते थे और भूमि-भूरि प्रशसा करते थे।

यह निर्विवाद स्वीकृति है कि बचपन, भावी जीवनकी आधार-शिला है। आदर्श, वरेण्य और अनुकरणीय जीवनका निर्माण-स्थल बचपन ही है और नाश-स्थल भी यही है। इसमें जिसकी पकड सही होती है। वह आजीवन सफल होता है और जिसकी सही नही होती, उसे बिगडते भी देर नही लगती। महाभारतका बाल-युधिष्ठिर अपने अन्य साथियोकी तुलनामे "सदा सच बोलो"के पाठमें थोडा पिछड गया था, लेकिन यह उसकी मन्द बुद्धिके कारण नही था। युधिष्ठिर चिन्तनशील थे और प्रत्येक अच्छी बातको व्यवहारमें उतारना चाहते थे। बाल-नाहटाकी प्रवृत्ति भी प्राय वैसी ही थी। वे पाठ्य पुस्तकोमें जो सूक्ति-उपदेश पढते थे, उसे आजीवन व्यवहारमें जमानेके लिए दत्तचित्त रहते थे। परिणामत आज श्री नाहटा साधिकार इस तथ्यको चरितार्थ करनेकी स्थितिमें है कि उन्होने बचपनमें जो प्रेरक दोहे पढे थे, उन्हीके निष्ठापूर्वक परिपालन करनेसे वे इस स्थितिमे आ पाये है। श्रीअगरचन्दजी नाहटाके ही शब्दोमें—[1]

---

१ 'वे दोहे जो मुझे प्रेरणा देते हैं' लेखक श्रीअगरचन्द नाहटा—जैन जगत् पृष्ठ ११।

भाटोकी बहीके अनुसार नाहटा वंश पीढी नामावली

पालनसिंहजीका बेटा— ४ वेटोसे ४ गोत्र—

१ नारसिंह—'नाहटा'।

२ वुधसिंह—'वाफणा'।

३ मुकतराव—'मुकुन्दीया'।

४ जोगसिंह—'जागड'।

पीढियोसे निवासस्थान

आबू २७, भोज २६, मडोर १३, जडाया ३, बीकानेर १४, जलालसर गहमर बीकानेर।

नार्रसिहजी
|
चंद्रभान
|
इद्रचदजी
|
कुशानचदजी
|
सतोकचदजी
|
नथमलजी
|
वीजराजजी
|
हीराचदजी
|
थातमलजी
|
उदैचन्दजी
|
शिवजी
|
केशवदासजी
|
गोकलचंदजी
|
गुलावचंदजी

	भोज पीढी २६
सदासुखजी	रूपचदजी
अभैचदजी	हनुमानमलजी
पिरथीराजजी	गौरीशकरजी
गुमानमलजी	जैनसुखजी,
वनेचदजी	पोकरमलजी

छोगमलजी	धरमचंदजी
भोपतमलजी	आनददेव
धोकलदासजी	कपिलदेव
कीसनरामजी	सूरतरामजी
केशरीचदजी	चद्रसेनजी
जेसराजजी, चादमलजी	रतनपाल
प्रेमराजजी, हेमराजजी	हुकमजी
सामतमलजी २७	ठाकुरजी
	पचायणदासजी
	नेतजी
	गोरजी
	पर्नसिहजी
	छतरसिहजी
	अमरावसिहजी
	देवसिहजी
	जयचदजी
	रामचदजी
	फूलचदजी
	भीवराजजी
	दुर्गाप्रसादजी २६ पीढी

मंडोर १३ पीढी		
मजुलालजी	पतेसिहजी	
हरीरामजी	माणकचदजी	
हरजीमलजी	सोनपालजी	
खुसालजी	रामचदजी	
रूपसी[illegible]	देवचंदजी	
इन्द्राजमलजी	वीरभानजी	
जगमालजी	उतमीचदजी	
पंचायणदासजी	फतैचदजी	अखैराज
दीपचन्दजी	कवरपालजी	नरसिहजी
हेमराजजी		पतसिहजी
पालनसिहजी	पदमसीजी	
रायपालजी	भोमसीजी—धोकलदासजी—ठाकुरसी—पंचानदास	
आपजी पीढी १३	सादुलमलजी—जालसीजी	

जोरजी (रामकंवरपीजी सेरजीकी कानसर)

जलालसर सवाईजी,

वडाया ३ पीढी
वसतमलजी
अजयराजजी
मैणसीजी पीढी ३

जोरजी
|
गुमानमलजी
सरूप कवर बोथरा वेटी समेरमलजो
|
ताराचदजी
रतनकवरपारस वेटी सुखजी
|
जैनरूपजी
हस्तकवर वैद वेटी खेतसीजी १९०० में फूल घाल्या

उदैचदजी (१)	राजरूपजी (२)	देवचदजी (३)	बुधमलजी (४)
उदयकवर छाजेडवेटी	सिणगार कंवर	दीपकवर दुगड	सावसुखाव वेढ कुंवर
वीजराजजीकी गाव	छाजेड वेटी फुसराजजी	वेटी भीखनदास	पेमचदजी
चुगनी छापरसे ४ कोश	लूणकरणसर		
गोपालपुराके पास			
पहाडके पास			

मघा वरठिया उपदेमलजी चाडासर गाँव
उदीबाई गुलगुलिया गुलावचदजी नाल गाँव
सेरो वाई गुलगुलिया राजमलजी नाल गाँव
राजरूपजीके

१ लक्ष्मीचंदजी	२ दानमलजी (चादकवर सेठिया मानकवर ददा)	३ गिरधारीमल	४ शकरदानजी

पुत्री गौरीवाई (सुराना)
सुगनी वाई (साडमूलचदजी)
हजू वाई (गोलछा अलकरणजी)

प्रेरकतत्त्व

बचपनमें पाठ्यक्रमकी पुस्तकमें एक दोहा पढा था—

करत करत अभ्यासके, जडमति होत सुजान।
रसरी आवत जाततै, सिलपर परत निसान ॥

साधारण नीतिके इस दोहेको सभी जानते हैं, सभी सुनते है, पर मेरे समस्त जीवनके लिए तो यह दोहा वरदान बन गया है। जाने क्या वात हुई कि इस दोहेको मैंने केवल पढा नही, केवल गुनगुनाया ही नही, यह तो मेरे प्राणोमें रम गया।

मैं जो कुछ वन गया, उसमें इस दोहेका कितना महत्व है, इसको कैसे वताऊँ।

मेरी स्कूलकी शिक्षा नहीके वरावर समझिये। ५ वी कक्षातक कुल ले देकर पढ पाया। श्री कृपाचन्द्र सूरिके समागम और उपदेशोसे मैं वाङ्मयके विशाल सागरको थाहने चल पडा। साहित्य ठहरा सागर और मैं निराधार, मुझे उस समय न सस्कृतका सम्यक्ज्ञान था, न प्राकृत, अपभ्रंश, मागधी, अर्धमागधी या गुजराती मारवाडी आदि देशी भाषाओका, फिर भी 'करत-करत अभ्यासके' मुझे प्रेरणा देता रहा। मैं हारा नही, ऊवा नही, निरन्तर अभ्यासमें रत रहा। फलत असाध्य और कठिन कार्य सरल वन गया।

मेरे सग्रहमें करीव १५ हजार हस्तलिखित ग्रन्थ हैं, जिनकी पुरानी, विचित्र एव विभिन्न लिपियाँ है। वे सभी मेरे लिए कठिन थी, पर मुझे आत्म-विश्वास था। 'करत-करत अभ्यासके'। कोई मार्गदर्शक नही,

सहायक नही, पर इस वाक्यने वह कमी पूरी की। अभ्यास चालू रखा और लिपियाँ एव भापाओका विषय-पथ सरल हो गया। लाखसे अधिद हस्तलिखित ग्रन्थ इधर-उधर भारतवर्पके अनेक ज्ञान-भण्डारोमें देखनेका सुअवसर मुझे मिला। मैं बराबर इसी दोहेको अपना पथ-सम्बल बनाये हुए अडिगभावसे, अस्खलित चरणोसे आगे बढता चला और आज भी मेरे जीवनका यह ध्रुव-सूत्र बन मेरे पथमें प्रकाश फैला रहा है।

दूसरा दोहा, जो मेरे स्मृति-पटलपर गहरा खुद गया है—

काल करै सो आज,कर, आज करे सो अब्ब।
पलमे परलै होयगी, बहुरि करैगो कब्ब॥

इस दोहेके अनुसार मेरी जीवन-धारा प्रवाहित हो रही है और मेरी आदत पड गई है कि आजका काम आज ही निबटाना। कलके लिए टालना मुझे सुहाता ही नही। बहुतसे व्यक्ति मुझे साश्चर्य पूछते हैं कि आप इतना अधिक कार्य कैसे कर लेते है? इसका प्रत्युत्तर इसी दोहेसे मिल जाता है कि जितना काम आज कर सकते हो, उसे कर ही डालनेका प्रयत्न करो, कलके लिए न टालो।

भारतके कोने-कोनेमें मुझे विद्वानोका ऐसा स्नेह प्राप्त है कि उनकी आज्ञाएँ, शकाएँ और जिज्ञासाएँ आती ही रहती हैं। हिन्दी-ससारके सामान्य पडितोका ही नही, गुजराती, मराठी भापाके सुधीजनोका भी स्नेह प्राप्त है। अत उनके पत्र भी बराबर आते रहते है। आज जितने पत्र मिले उनका जवाब आज ही देना, यह मेरा नित्यका कार्यक्रम सा बन गया है। जब किसी पत्रकी ओरसे मुझे लेखके लिये लिखा जाता है, तो उसके लिए तुरन्त लेख तैयार करना और भेजना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। काम बढ जानेपर भारी हो जाता है। उसे निपटाते रहनेसे स्वपरकी असुविधा नही होती। काम होता भी अधिक है।

कभी-कभी एक पत्रके उत्तरके लिए मुझे घण्टो अपने ग्रन्थागारका अवगाहन करना पडता है। वह मैं करता हूँ परतु पत्रका उत्तर यथा सभव उसी दिन देनेका प्रयत्न रहता है। साथ ही विद्वानोको अपने सग्रहालयोंसे मौके-मौके पर हस्त प्रतियाँ भी भेजनेका कार्य रहता है।

एक बात यहाँ स्पष्ट लिख दूँ कि जब मुझे किसीसे कुछ मगाना पडता है तो अधिकाश विद्वानोको बराबर लिखना पडता है, तब कही उनकी तद्रा भग होती है। बहुत थोडे विद्वान् ऐसे है, जो दीर्घ-सूत्री न हो। मुझे जिनसे तुरन्त उत्तर मिलते रहते हैं उनमें भण्डारकर ओरिएटल रिसर्च इन्स्टीयूटके क्यूरेटर श्री० पी० के० गोडेका नाम शीर्ष-स्थानीय है।

मेरे जीवनका तीसरा सूत्र यह है—

रे मन! अप्पहु खच करि; चिंता जाल मप्पाडि।
फल तित्तउ हिज पामिसइ, जित्तउ लिहउ लिलाडि॥

(रे मन! अपने आपको खीच ले, अपने आपको चिन्तामें न फँसा। तुम्हे इतना फल तो मिल ही जायेगा, जितना तुम्हारे ललाटमें लिखा है।)

यह पद्य जैन-कथा श्रीपालचरित्रका हे और यह भी मेरे दैनिक जीवनमे, गृहस्थ जीवनमें एव व्यापार व्यवसायके जीवनमें शक्तिका प्रबल स्रोत बन गया है। मेरा मन जब फलके लिए और भविष्यकी चिन्तासे आतुर होने लगता है, उस समय यह मुझे बडा बल देता है। उस समय इसका स्मरण कर मै सुस्थिरता और शातिका अनुभव करता हूँ। गीताका नैष्कर्म्यभाव और अनासक्ति योगका सन्देश मुझे इसी दोहेसे मिल जाता है। किसीको सम्भवत इस दोहेमें भाग्यवादकी ध्वनि मिले परन्तु मुझे तो यह दोहा हमेशा कर्मनिरत जीवनमे फलाकाक्षाकी तृष्णासे बचाता रहता है। इससे मैं चिन्ताके भ्रमरजालमें नही फँसता और सकल्प-विकल्प कम होकर निराकुलता और शातिका अनुभव करता हूँ।

अपने भावी जीवनके कार्यक्रममें मैं अब एक चौथे दोहेकी इस पंक्तिको स्थान देना चाहता हूँ—

"एके साधै सब सधै"

समस्त साधनाका केन्द्र-बिन्दु आत्मा ही होना चाहिए। आत्माको भूलकर अन्य कोई भी साधना करना बेकार है। अतः आत्मानुभवकी साधना करना ही मेरा लक्ष्य है।

शालीय-जीवनके आसपास श्री नाहटा कविताके नामपर 'तुकबन्दी' करने लग गये थे। आपकी कविताका विषय 'धर्म' होता था। पितृश्री शकरदानजी नाहटा व बड़े भाई भैरूदासजी कविप्रवृत्तिको देखकर आपको 'कविसम्राट्' कहा करते थे। इस प्रकार आपका समय या तो तुकबन्दी करनेमें बीतता अथवा बड़े-बूढोंके पास बैठकर अच्छी बाते सुननेमें। साधारण लडकोंके साथ न आप कभी बैठते और न कभी खेलते। श्री भवरलालजी नाहटाके शब्दोंमें—

"पिताजी हमेशा अगरचन्दजी काकाजीको 'कविसम्राट्' कहा करते, वैसे उन्हे 'बाबू' नामसे भी सम्बोधन किया जाता था। गवाडके लडकोंके साथ कभी नही खेलते। शामको पाटेपर बडे-बूढोंके पास बैठते, दादाजीके पैर दबाते। हमें बडोंका इतना भय और आतक था कि कभी पतग उडाना तो दूर, लूटनेके लिए भी छतपर नही जाते"[1]।

श्री नाहटा जैसा अध्ययनशील, अन्तर्मुखी प्रवृत्तिका प्रतिभावान् बालक उच्चशिक्षा क्यो नही प्राप्त कर सका, जब कि घरके सब सदस्य विद्यानुरागी थे और आर्थिक स्थिति सुदृढ थी? यह प्रश्न श्रद्धेय श्री नाहटा-जीके सम्मुख प्रस्तुत किया गया। उन्होने उच्चशिक्षा प्राप्त न कर सकनेके तीन कारण बताये।

प्रथम कारण बताते हुए श्री नाहटाजीने कहा कि "मेरे अग्रज श्री अभयराज नाहटा परिवारमें सर्वाधिक शिक्षित थे। इन्दौरमें वैद्य सम्मेलनमे १ घटा उन्होने ओजस्वी भाषण दिया था। वे विद्याव्यसनी और सभा-सगोष्ठियोंमें सोत्साह सक्रिय भाग लेनेवाले सामाजिक कार्यकर्त्ता थे। सारा नाहटा परिवार उनकी वाग्मिता, विद्यानुराग और अध्ययनशीलतापर उल्लसित था, इनके अक्षर बहुत सुन्दर थे। उन्होने कई पाठ्य पुस्तकें तैयार की व अन्त समयमें जयपुरमें जिस रामनिवास बागके कमरेमे ठहरे थे उसकी सभी दीवारोपर सुवाक्य लिखे और पुस्तकोंका ढेरका ढेर चारो तरफ लगा था। पक्षियोंको हाथपर रखकर दाना चुगाते थे इसी कारण उनकी मृत्युपर मयूर जोर-जोरसे कई दिन तक रोते रहे थे। लेकिन उनके अचिन्तित आकस्मिक निधनसे नाहटा-परिवारपर वज्र-सा पड गया। पूज्य पिताजी उनके ग्रन्थोंको शोकवश देख नही सकते थे, इसलिए वे दूसरोसे इधर-उधर करवा दिये गये। इस दुर्घटनाके कारण परिवारमे सन्तानको पढानेके लिए उत्साह नही रह गया था और उस मूक अनुत्साहका प्रथम शिकार मुझे ही होना पडा।"

द्वितीय कारणपर प्रकाश डालते हुए श्री नाहटाजीने बताया कि बचपनमें उनकी आँखें खराब हो गई थी। वे दुखने लगी और उनसे पानी पडने लगा। यह दुष्क्रम काफी लम्बा चला। इसलिए पिताजीने मेरी नेत्रज्योतिक्षीणताकी सम्भावित आशंकासे सत्रस्त होकर अध्ययन-विराम करा दिया।

तृतीय कारणकी ओर संकेत करते हुए श्री नाहटाजीने बताया कि उन दिनो बोलपुरमें आरब्ध दूकान-पर उन्हे रख दिया गया और बगाली सीखनेके लिए व्यवस्था की गई। व्यापारका ज्ञान करानेकी ओर सबका ध्यान था, इसलिए उच्चशिक्षाको गौण मानकर छोड दिया गया।

निस्सन्देह ये तीनो ही कारण अपने आपमें पर्याप्त प्रबल थे और इन परिस्थितियोंमें सामान्यत वही किया जाता, जो श्री नाहटाजीको करना पडा। लेकिन श्री नाहटाजीने अपने गहन अध्ययन, निरन्तर सुचिन्तित

---

१. श्री भवरलाल नाहटा सस्मरण।

स्वाध्याय और सद्-असद् विवेकिनी बुद्धिसे यह प्रमाणित कर दिया है कि सरस्वतीके क्षेत्रमे निरन्तर साधनाकी जितनी महती आवश्यकता और गुरुता है, उतनी गरिमा अनध्याय सम्पृक्त श्वेत उपाधिपत्रोकी नही है ।

श्री नाहटाजीकी प्राथमिक शिक्षाकी अभ्यास-पुस्तिकाओका सम्यक् अवलोकन करनेका शुभ अवसर लेखकको मिला है । अक्षर और अक इतने सुन्दर हैं कि कहते ही नही बनता । श्री नाहटाजीने पाँचवी तक हजारो पृष्ठ लिख दिये थे । उनके अक्षरोकी बनावट, आकृति, सुघडता उत्तरोत्तर निखरती गई है । अग्रेजी और बगालीकी हस्तलिखित वर्णावलि भी अत्यन्त सुन्दर थी ।

श्री नाहटाजीके आजके अक्षरोमें और बचपनके अक्षरोमे चकित कर देनेवाला वैभिन्न्य और वैपम्य है । भारतके अनेक विद्वानोकी शिकायत है कि श्री नाहटाजीके हस्तलिखित पत्र वे पढ नही पाते । एक विद्वान्ने लिखा है "आप लिखें, खुदा पढे—अपने लिखेको नाहटाजी स्वय भी पढने बैठें तो माथा चकराने लगेगा "[1] ।

लेखकने बचपनके अतिसुन्दर सुपाठ्य अक्षर और श्री नाहटाके आजके अतीव दुष्पाठ्य अक्षरोके विषय अन्तरालका कारण जाननेकी भावनासे इस प्रसगमें चरितनायक महोदयसे वार्त्तालाप किया था । वार्त्ता प्रसगमें उसे आभास हुआ कि श्री नाहटाजी इस तथ्यसे पूर्णत अवगत है कि उनके अक्षर सुपाठ्य नही है ।

उन्होने इस विपम परिवर्त्तनके लिए अनेक कारण सकेतित किये, जिनमेंसे कतिपय निम्नाकित हैं—

१ अज्ञात सामग्रीको शीघ्रसे शीघ्र प्रकाशमें लानेकी ललक। शोध-जिज्ञासुको प्राय ऐसी चीजें मिलती रहती है, जिनके सद्य प्रकाशनका लोभ वह सवरण नही कर सकता । जिस किसी भी क्षण अलभ्य वस्तु उपलब्ध होती है, उसके विषयमें तत्क्षण लिखनेका मानसिक आग्रह बन जाता है—और हर समय किसी नियुक्त-वेतनभोगी लेखकका उपलब्ध होना सम्भव नही होता । इसलिए अधिकाश सामग्री-स्वहस्तसे और वह भी कुछ ही मिनटोकी परिधिमें लिखकर समाप्त करना मेरे लिये आवश्यक नैतिक बन्धन बन जाता है, फलस्वरूप मेरे हाथोको अत्यन्त द्रुतगतिसे सक्रिय होना पडता है। और अल्प समयमें अधिकसे अधिक लिखना पडता है । इस द्रुतगामिताके कारण मेरा अक्षर-विग्रह बिगडकर दुष्पाठ्यकी सीमाका स्पर्श करने लगा है ।

२ श्री नाहटाजीने स्वाक्षरोको दुष्पाठ्य बनानेमें अपने दस घटेके निरन्तर दैनिक स्वाध्याय और विविध पत्रिकाओके लिए लिखे जाने वाले लेखो तथा प्रतिदिन उत्तर चाहने वाले दर्जनो पत्रोको भी कारणभूत बताया । वे स्वाक्षरोमें औसतन तीन लेख, एक दर्जन पत्र और दस-पाँच पन्नोका लेखन कार्य करते ही हैं । इसलिए अक्षरोकी बनावटमें बहुत शीघ्र परिवर्तन आ गया । उनका यह महद् लेखन अनुदिन बढ रहा है । इसलिए उनके अक्षर कभी सुपाठ्य हो सकेंगे, यह सोचना केवल कल्पना मात्र है ।

हमारे चरितनायकके शैशवसम्बन्धी भोलापनकी बातें भी परिवारमें कही और सुनी जाती है । माता चुन्नीदेवी कहा करती थी कि "जितने अधिक वर्प (५ वर्प) तक मेरे स्तनोका पान अगरचन्दने किया, उतने अधिक वर्पों तक मेरी और किसी सतानने नही किया । एक दिन जब अगरू स्तनपान करनेके लिए हमेशाकी तरह मेरे पास आया तो मैंने स्तनोको वस्त्रावृत कर निपेधकी हस्तमुद्रा दिखाते हुए कहा "बोबा तो गमग्या" और भोले अगरचन्दने उन्हें हमेशाके लिए गया हुआ समझ कर भुला दिया" ।

स० १९७६-७७में अपनी माता-पिताके साथ जोधपुर गये । वहाँ अभयराजकी चिकित्सा वैद्य लच्छीरामकी चल रही थी ।

सवत् १९८०में हमारे चरितनायक अपने अग्रज श्री भैरूदानजीके विवाहमे झज्झू गये । यह गाँव बीकानेरसे पश्चिममें ३५ मीलकी दूरी पर बसा है । बरात ऊँटो पर गई । धनपतियोकी बरातके ऊँट और

---

१ श्री जमनालाल जैन वाराणसी, 'नाहटाजी एक जीवन्त सग्रहालय' ।

जानी खूब सजधजसे जाते हैं। रणित झणित सस्वर चौरासी, नेवरी, चठिया पलाण, मौक्तिक माकडो, चमचमाती दर्पण खड जडित छेवटी, शालीन, नखराला, गिरवाण, दोलडा मो'रा और उस पर राठौडी साफा कसे बाकी मूँछो वाला चुस्तवस्त्र परिधीत युवक जब मधुरी चालमे डालनेके लिए उष्ट्र ग्रीवाको मो'रके सहारे वृत्ताकार बनाता तो करहेका सशब्द नृत्य अश्व नृत्योपर भी पानी फेर देता।

पडजानियो और जानियोके वाहनोकी प्रतिस्पर्द्धी दौड जब ग्राममें मचलती तो ग्राम ललनाओके कण्ठ भी निनादित हो उठते। अमल अरोगण, प्रशस्तिकरण और स्नेहमिलन राजस्थानी विवाहकी अपनी निधि रहे हैं। हमारे चरितनायकके किशोर हृदय पर इस सुखद वातावरणका बडा प्रभाव पडा। बीकानेर लौटकर वे अपने गाँव डाडूसर गये। वहाँ मतीरा तोड-फोडकर खाना, ककडी छीलना और नमक-मिर्चके साथ उसे सस्वाद निगलना, बाजरीके सिट्टे मोरना खाना और शरद्की चांदनीमे चाँदी जैसे शान्त शीतल सैकत सरोवरो (धारो)में अवगाहन करना—जैसे स्वयसिद्ध था। स्वतः प्रेरित था और अनिवार्य करणीय था।

एक रात आप गाँव डाँडूसरमें राजस्थानका प्रसिद्ध खाद्यपदार्थ खीचडा खा रहे थे। कोई बडा कीडा उसमें गिर गया और गर्मागर्म खीचडेमें गिरकर तद्रूप बन गया। इस जीवहिंसासे आपको बडी आत्मग्लानि हुई और आपने सदाके लिए रात्रिभोजनका परित्याग कर दिया। यह घटना सवत् १९८१के आस-पासकी है।

इसी वर्ष हमारे चरितनायक श्री नाहटाजीकी सगाई ग्राम मोलाणिया हाल श्री गगा शहरके सेठिया श्री मोरसीदासजीकी सुपुत्री चिरसौभाग्यवती श्री पन्नीबाईसे हुई। तब न दहेजका दूषण था और न लडकेके द्वारा लडकी और लडकीके द्वारा लडकेको देखनेका नाटक। उन दिनो घर और वर देख लिये जाते थे और आवश्यक हुआ तो घरका कोई बडा बूढा लडकी देख आता। वाग्दानकी विधि सम्पादित की गई। इसी वर्ष आप अपने व्यापारको समझने और उसका प्रशिक्षण प्राप्त करनेके लिए प्रथम बार परदेश गये।

परदेशमें हमारे चरित्र-नायकके लूणकरणसर वास्तव्य बडे मामाजी श्री मगलचन्दजी और छोटे मामाजी श्री भागचन्दजी रहते थे। बडी गद्दीमे मगलचन्दजी और छोटीमें छोटे मामाजी काम करते थे। श्री भागचन्दजी श्री नाहटाजीको खाता-रोकड, लिखना व माल बेचना-खरीदना आदि सिखाते थे। उन्होने हमारे चरित्र-नायकको व्याज फैलानेमें पारगत किया। आपमे कसबढकी जो वृत्ति उपलक्षित होती है, उसका श्रेय श्री भागचन्दजीको है। आज आप जो अनेक स्थानो पर वस्तु-क्रयमे कस करते हैं, वह देन भी लघुमातुल श्री भागचन्दजीकी है।

कलकत्तामें श्री नाहटाजीके बूआके बेटे भाई श्री रूपचन्दजी गोलछा काम देखते थे। आपको रोकड और खातेका प्रशिक्षण इनसे प्राप्त हुआ। रुपये गिनना, तकादा लाना, बाजारसे माल खरीद करना श्री गोलछाजीने ही सिखाया। श्री गोलछाजी प्रसिद्ध दलाल, श्री प्रेमचन्दजी नाहटाके साथ हमारे चरित्र-नायकको भेजते और बाजारका रुख समझाते। कलकत्तामे न० ५/६ आर्मेनियन स्ट्रीटपर नाहटा बधुओकी गद्दी थी। वही पर बीकानेरके सर्वसुखजी नाहटा सोते थे। वे बडे हसोड थे। श्री नाहटाजी उनके साथ सामायिकमे मृत्युञ्जयरास, गौतमरास आदि पाठ करते। रिणीके श्री हजारीमलजी बोथरा 'लम्बू लक्कड'के नामसे विख्यात थे। सर्वसुखजी नाहटासे उनकी खूब पटती थी। लम्बू सेठ बडे उत्साही और हसमुख थे, देशमे परदेश पहुँचने वालोके साथ आप जो मजाक करते थे उसका चित्रण श्री भवरलालजी नाहटाके शब्दोमे पठितव्य है।

"कदेई कोई देस सूँ आवतो तो बैंसे सिरावणी रो उबो सिगला रैं सूया पछै सफाचट कर देवता। एक थोथो नारेल राखता जिको कोई देस सूँ नारेल लावतो जिकोलेर बदलैमे थोथो नारेल घाल देता। अर सावत नारेल नै एक चोट सूँ फोडताके गोटो सापतो अलग हुय जावतो। जोटी भेली कर'र भोली बाँध देवता।

गण्डरीवालो आवतो गिद्दी आ'र डाक देवतो, लोग गण्डेरी दो च्यार[1] पईसा री लेंवता पण लवू सेठ रै गण्डेरी री वडी चिड ही।"

श्री हजारीमलजी वोथराने श्री नाहटाजीको माल मिलाने, कपडेकी गाँठें वाँधने आदि काममें, शिक्षित किया। एक वार वोलपुरकी दूकानमें हमारे चरितनायकने चावल खरीदके हिसावमें सौ रुपये अधिक दे दिये, जिससे रुपये घट गये। मामाजी मगलचदजीसे वहुत खरी-खोटी सुननेको मिली। उस दिनसे आपको अनुभव हो गया कि रुपये-पैसेका हिसाव सावधानीसे रखना चाहिये। एक वार कलकत्तेमें भी रुपये गिनते समय हजार रुपयेकी गड्डी आलमारीके नीचे खिसक गई। खूव डॉट फटकार पडी। इस प्रकार श्री नाहटा रुपये-पैसेके मामलेमें सदाके लिए सजग हो गये। उन्होने तवसे लेकर आज तक इस प्रकारकी घटनाकी पुनरावृत्ति नही होने दी। श्री नाहटाजी जव सोलह मासकी प्रथम परदेश-यात्रा करके वीकानेर लौटे तो उनके विवाहकी तैयारियाँ हो रही थी। मिति आपाढ कृष्णा १२ सवत् १९८२मे आपका विवाह सम्पादित हुआ। आपके ससुर श्री मोढसीदासजी सेठिया थे। पत्नीका नाम पन्नीवाई था। आप साधारण पढीलिखी धार्मिक स्वभावकी पतिव्रता महिला थी। चूंकि उनका पितृपक्ष तेरह-पथको मानता था, इसलिये श्री नाहटाजीको मूर्तिपूजक व खरतरगच्छके ढाँचेमें ढालनेके लिए प्रयत्न करना पडा। श्री नाहटाजी अपनी अर्धाङ्गिनीको प्रतिदिन पढाते और याद करनेके लिये पाठ देते। घर वाले इसका विरोध करते, लेकिन नाहटाजी अपने संकल्प पर अडिग रहे। घर वाले कहते, पढाकर क्या वैरिस्टर वनाना है? अथवा हुँडी नावेंका काम करवाना है? ज्यो-ज्यो घर वाले विरोध करते, नाहटाजी अधिक उत्साहके साथ पढाते। अन्तमें नाहटाजी अपने कार्यमे सफल हुए। उनकी पत्नी पत्र लिख लेती, घरका हिसाव-किताव रख लेती और खरतरगच्छके धार्मिक दैनिक कृत्य भी सम्पादित कर लेती। श्रीमती पन्नीवाईका जन्म सवत् १९७०मे हुआ था, वे नाहटाजीसे लगभग ढाई वर्ष छोटी थी।

हमारे चरितनायकके भ्रातृपुत्र श्री भँवरलालजी नाहटाका विवाह भी आपाढ कृष्णा १२ सवत् १९८३-को ही हुआ। विवाहोपरान्त दोनो ही परदेशके लिए रवाना होकर कलकत्ता पहुँच गये। श्री भवरलालजी नाहटाके शब्दोमें

"हम लोग फिर कलकत्ता आ गये। काम काज गद्दी पैं सिखते-करते प्रतिदिन मन्दिर जानेका नियम तो था ही, सामायिक भी प्रतिदिन करते। सरवसुखजी नाहटाके साथ 'शत्रुजय रास, गौतमरास' आदि वोलनेसे कठस्थ हो गये। काकाजी श्री अगरचन्दजी सिलहट रहने लगे।"

सवत् १९८४का वर्ष हमारे चरितनायकके जीवनमें सर्वाधिक महत्त्व रखता है। यह वही वरेण्य वर्ष है, जिसने श्री नाहटाजीको इतिहास, कला, विद्वत्ता और धार्मिकताके महनीय पदका गौरव दिलाया और उनके जीवनकी धाराको नव्य दिशा प्रदान की। इस प्रसगमें अगर हम यह भी कह दें तो सभवत अतिशयोक्ति नही होगी कि यही वह शुभ वर्ष था जिसने श्री नाहटाजीको अन्धकारसे प्रकाशकी ओर, असद्से सद्की ओर और मृत्युसे अमरताकी ओर उन्मुख किया। मात्र लक्ष्मीके संग्रहका स्वप्न देखनेवाला प्राणी सरस्वतीका अद्वितीय साधक और लक्ष्मीका भी भाजन वना रहकर एक प्रेरक पथ प्रशस्त करनेमें सलग्न हो गया।

परम सौभाग्यका विपय था कि श्री जिनकृपाचन्द्रजी सूरि वसन्त पचमी सवत् १९८४ को वीकानेर पधारे और वे नाहटा परिवारकी कोठडीमे ही विराजे। हमारे चरित-नायकके लिए अपने जीवनको सार्थक वनानेका यह अनुपम अवसर था। उसके सस्कार सरस्वती साधना, धार्मिक ग्रथ पठन, प्रवचन और काव्य प्रवचनके तो थे ही, उन्हें तव विशेप प्रेरक तत्त्वकी ही आवश्यकता थी। या यो कहें कि श्रेष्ठ धरामे वीज-

---

१ श्री भँवरलाल नाहटा—वानगी पृष्ठ १३।

वपन हो चुका था, अकुरणकी स्थिति भी थी, लेकिन उसे संवर्द्धक-सुजलकी समीहा थी। उसे ऐसे संरक्षककी भी अपेक्षा थी, जो अपने कुशल वरद हाथोसे उसे उत्साहित करता, साहित्य और अध्यात्मके क्षेत्रमें डगमगाते पैरोको सबल देता और निराशाके अन्धकारमें स्वय प्रकाशपुज बनकर उपस्थित हो जाता। तृपातुरको शीतल सलिल पानसे, क्षुधातुरको हृद्य भोजन अवाप्तिसे और अभ्यर्थीको इष्ट वस्तु उपलब्धिसे जो परम आनन्द मिलता है, वही परमानन्द ज्ञानसागर जैनाचार्य श्री जिनकृपाचन्द्रजी सूरिके सुखद-शान्त-सौम्य मुखमडलको देखकर श्री नाहटा जैसे ज्ञानपिपासुको हुआ।

आप गुरु चरणोमें चित्त लगाने लगे, उनके अगाध ज्ञानगुफित प्रवचन सुनने लगे और अधिकसे अधिक समय उनके पास बैठकर अपनी शंकाओका समाधान प्राप्त करने लगे।

श्री गुरु-महाराजके अत्यन्त प्रभावक और प्रेरक-महामहिम व्यक्तित्वने आपके भावसागरमें उत्ताल तरगें उत्पन्न कर दी, आपकी श्रद्धापूरित भावधारा शब्दोका परिधान अपनाकर प्रवाहित होने लगी, आप परम श्रद्धालु भक्त-कवि श्रावक बन गये।

गुरु महाराजके व्याख्यान अवसर पर आपको स्वनिर्मित गेहूली सुनानेका शुभ अवसर प्राप्त होता। अनेक भजन भी आप बनाते और भक्त श्रावकोको गुरुगण सान्निध्यमें गाकर सुनाते। कठकी मधुरिमा, वाणीका आकर्षण और गायक नाहटाकी भाव-विभोर मन स्थिति, जनसागरको आत्मविस्मृत कर देती। नाहटाके मुखसे भजन-गीत अधिक सुननेकी उसमें ललक रहती और गुरु महाराज भी युवक नाहटाकी भक्ति-मूलक श्रद्धासे सतोपलाभ करते। पितृश्री शकरदान नाहटा स्वय अपने कानोसे सुपुत्रकी भावभीनी भक्ति-रचनाएँ और उनकी मुक्तकठ प्रशसा सुन चुके थे। इसलिए वे फूले नही समाते और अपने कविसम्राट्को मन ही मन कुशल-क्षेमवान् रहनेका मगल आशीष देते। श्री भर्तृहरिने ऐसे ही पुत्रोको 'सुपुत्र' की सज्ञा दी है —

"प्रीणाति य सुचरितै पितर स पुत्र"

"पुत्र वही है जो अपने सुचरितसे पिताको प्रसन्न रखता है" जिस प्रकार विकसित-सुगधित सुवृक्ष समस्त वन-उपवनको सुवासित कर देता है, उसी प्रकार सुपुत्र अपने श्रद्धावनत सौम्य स्वभाव, वरेण्य विचार वीथि और शिष्ट भावाचरण, अभिव्यजनसे वंशकी कमनीय कीर्त्तिको चतुर्दिक् प्रसरित करता है—

एकेन हि सुवृक्षेण, पुष्पितेन सुगन्धिना। वासित तद्वन सर्वं, सुपुत्रेण कुल यथा॥

इसी अवसरपर युवक नाहटा को अपने विचार व्यक्त करनेका सुन्दर अवसर मिलता। बचपनसे ही श्लोक, गाथाएँ, चरित्रावली और शास्त्रोका जो गूढ ज्ञान आप अर्जित कर चुके थे और सुदीर्घ अवधिसे जो धार्मिक प्रक्रिया प्रशिक्षण आप प्राप्त कर रहे थे, मानो उस समस्त हृदयगम कृत निदिध्यासनको प्रस्तुत करनेका यह परीक्षण अवसर था, गुरुदेवसे उस प्राप्त ज्ञान-ज्योतिपर शुद्ध और सहीकी मोहर लगवानी थी और जो कुछ फल्गु था उसे दूर करना था। प्राप्तको सुरक्षित रखने और प्राप्यको प्राप्त करनेकी विधि भी सीखनी थी। इसी भावनासे आप गुरु महाराजके पण्डित शिष्य उपा० सुखसागरजीके पास अधिकसे अधिक बैठे रहते और अहर्निश ज्ञानचर्चा करके अपने विचारोका परिष्कार करते। सूर्यकी दिव्य रश्मियाँ भूतलके समस्त पदार्थो पर समान भावसे पडती है, लेकिन उनसे शिलाखड उतना नही चमकता जितना निर्मल दर्पणाश। ठीक उसी प्रकार गुरु-मडलीकी उपदेशावली समस्त श्रोताओंके लिए एक जैसी ही थी लेकिन उसका जैसा विस्मयोत्पादक-गूढ प्रभाव हमारे चरितनायक पर पडा, वैसा प्रभाव इतर श्रोता-श्रावकोपर उस रूपमें कदाचित् ही पडा हो। हिमकरकी शीत-रश्मियोंसे पाषाण-कठोर चन्द्रकान्त मणि, प्रभाकरकी तिग्म-रश्मियोसे कमलदल अवलि और आर्त्त-दुखी दीनकी वाणी जैसे दीनबन्धु दीनदयालको द्रवित कर देती है, उसी प्रकार

युवक नाहटाकी प्रवल जिज्ञासाने ज्ञानगुरुओंके ममताविरक्त, वैराग्यरसैकमत्त मानसको भी द्रवित कर दिया और वे अपने पात्र श्रावकको इस प्रकार ज्ञानामृत पिलाने लगे जिस प्रकार धेनु वत्सको पिलाती है।

महापुरुष वाणीसे कम कहते हैं। उनकी तप पूत मनोभावनाका प्रभाव बडा प्रबल होता है और जिसपर वह प्रभाव पड जाता है, वह उसीकी मस्तीमें दिन-रात छका रहता है। रामकृष्ण परमहसने नरेन्द्रनाथको क्या कहा था ? कुछ भी तो नही, लेकिन उनके व्यक्तित्वके प्रभावने नरेन्द्रको दीवाना बना दिया, अर्थात् अध्यात्मने विज्ञानको अभिभूत कर दिया। श्री जिनकृपाचन्द्रसूरिजी व उपा० सुखसागरने अपनी वाणीसे युवक नाहटाको चाहे कुछ न कहा हो, लेकिन किसी न किसी रूपमें उनके सम्मुख श्रीयुत देसाईका शोधपूर्ण लेख प्रस्तुत होना गुरुदेवके इसी मूकभावका व्यजक था कि "हे युवक ! तुम अन्त सलिला सरस्वतीको प्रकट करो, विगुण, अनर्ह दभियोके पाशमें आवद्ध, अपमानित, पाताल गर्भान्धकार पतित-मूर्च्छित सरस्वतीका उद्धार करो और उसे नव्य-जीवन देकर सारस्वत-संसारमें सम्मान-भाजन बनाओ।"

हृदयके उद्गारोको हृदयवाले ही समझते हैं। गुरुवरने जिस मूकभावनाका सम्प्रेषण उपयुक्त पात्र श्री नाहटाकी ओर किया था, उसे युवक नाहटाके हृदय-ग्राहकने चुपचाप ग्रहण कर लिया। गुरु-शिष्योके अन्तरात्मा प्रेरित इस अनुवन्धको समझनेवाले तो समझ रहे थे, पर जो नही समझे वे नही ही समझे। वे 'अनाडी' थे और कदाचित् 'हैं' भी। उस ऐतिहासिक दिनके पश्चात् श्री युवक नाहटा—'शोध ससार'के जिज्ञासु छात्र बन गये। गुरुदेवकी मूकभावना शोधोन्मुख युवक नाहटाके मानस पर किस प्रकार अनुदिन जादूई असर करती रही, वह कम विस्मयोत्पादक नही है। श्री अगरचन्दजी व श्री भँवरलालजी नाहटाके शब्दोमें ही यह प्रसग सविस्तर पठनीय है और उसका अन्तिम अंश अवश्य ध्यातव्य है—क्योकि हमारी इस मधुर कल्पनाका उत्पत्ति केन्द्र वही है।

"लगभग चालीस वर्षसे ऊपरकी बात है हमारे दीवानखानेकी अलमारीमें थोडी-सी पुस्तकें थी। इनमें अधिकाश अंग्रेजी पाठचपुस्तकें थी। एक हस्तलिखित पोथिया भी रखा हुआ था, जिसमें जिनराजसूरिजीकी चौवीसी आदि कृतियाँ थी। कागज जीर्णशीर्ण वडकनेवाले थे। यह हमारे घरकी हस्तलिखित सग्रहकी प्रथम पुस्तक थी जो उपेक्षित होते हुए भी हमारे विद्यार्थी जीवनमें सभालकर रखी जाती रही। जब जिन-कृपाचन्द्रसूरिजीका स० १८८४ की वसतपंचमीको आगमन हुआ और कुछ धार्मिक साहित्य-अध्ययनकी ओर हमारी रुचि हुई तो महाकवि समयसुन्दरके साहित्यसग्रहके निमित्त नानाहस्तलिखित संग्रहोको देखना प्रारम्भ किया। महावीर-मंडलके कुछ गुटके मगवाकर देखे तो उसमें स० १८०४ का वह गुटका मिला जिसमें समयसुन्दरजीकी शताधिक कृतियाँ थी। चिपके हुए पत्रोको यत्नपूर्वक खोलकर नकलें शुरू की। दूसरी भी कितनी ही कृतियोंकी नकलें की गयी।

इस प्रकार पुरानी लिपि और ग्रन्थोंके परिशीलनमें हमारा प्रवेश हुआ। इस समय हमारा कार्य केवल कृतियोको देखकर आदि अत नोट कर लेने व नकल कर लेनेतक ही सीमित था। इतिहासके अभिलेखादि इतर साधनोपर भी हमारी दृष्टि रहती और उन्हें भी सग्रह करनेका प्रयत्न करते। स० १९८७ में चिन्तामणिजीके भडारकी प्रतिमाएँ निकली और स्वर्गीय मो० द० देसाईको आमन्त्रित किया गया, परन्तु वे राजकोट आकर सम्भवत साली्के लग्न समारोहमें रुक गये और बीकानेर नही आ सके। हमने प्रतिमाओके लेख पढे। कतिपय संवतोल्लेखवाले लेख थे उनकी नकल भी की गई। वे वम्बईके साँज वर्त्तमान पत्रमे श्री देसाईके मार्फत प्रकाशित भी किये गये। इसी समय हमने बीकानेरके समस्तमन्दिरोके अभिलेखोका सग्रह कर लिया और ओझा-जी जैसे विद्वानोसे भी शिललेख आदिका अनुभव प्राप्त किया।

समयसुन्दरजीके साहित्यका सग्रह करते समय सुन्दरजीकृत पाप छतीसीके नामसे देसाई द्वारा श्री

पूरणचन्द्रजी नाहरके संग्रहमें कृतियोको देखकर मैं कुमारसिंह हालमें जाकर उनका कलाभवन देखने लगा। जब नाहरजीको पता लगा तो वे स्वयं आकर मुझे सारे सग्रहको दिखाकर अपने मकानमें ले गये। फिर तो उनके साथ इतना घनिष्ट सम्बन्ध हो गया कि रविवारको ८-८ घंटे हम उनके यहाँ जमकर बैठे रहते। उनके सग्रहको देखकर हमारे मनमें होता कि कभी हम भी ऐसा सग्रह करनेमें सफल हो सकेंगे। सचमुच ही सग्रह-कर्त्ता नाहरजी अद्वितीय पुरुष थे और हमारे जीवनमें उनसे एतद्विषयक बडी भारी प्रेरणाएँ प्राप्त हुई।

मिलहटमें हमारी दुकानमें एक श्री महिमचन्द्र पुरकायस्थनामक मुहर्रिर काम करते थे। वे हमारी शोध वृत्तिसे प्रभावित तो थे ही और हमारे अनुरोधपर उन्होने वगाललिपिके (संधिवृत्ति, चडीमाहात्म्य, पद्म-पुराण) कागज व ताडपत्रके ग्रन्थ खरीदकर भेजे। कलकत्तेमें हमारे यहाँ काम करनेवाले कार्त्तिक सरदार (उत्कलनिवासी) ने दो एक उत्कल लिपिके ताडपत्रीय उत्कीर्णित ग्रन्थ पाकर हमारे संग्रहके लिए खरीद दिये। बीकानेरके गोपाल मथेरण आदि व्यक्तियोसे सम्बन्ध था ही। इस तरह हमारे सग्रहमें कुछ प्राचीन सामग्री सगृहीत हो गई।

हमारे जन्मसे २०-३० वर्ष पूर्व ही सैकडो मन अनमोल साहित्य भडारके तीतर-कबूतर उडानेवाले कुशिष्य यतियो द्वारा व अज्ञानी रक्षको द्वारा नष्ट हो चुका था तथा इस विषयके दलाल अपने डोरे डालकर हस्तलिखित ग्रन्थोकी हजारो पेटियाँ विदेश पहुँचानेमें भी सफल हो चुके थे।

हस्तलिखित ग्रन्थोकी खोजके सिलसिलेमें सर्वप्रथम बीकानेरके ज्ञानभडारोका अवलोकन प्रारम्भ किया गया। हम उनमेंसे आवश्यक सामग्री लाकर पढते और नकल करते। स० १९८६ में उपाश्रयोमें घूमते-फिरते पुराने पोथी पन्ने देखते रहते थे।

कई वर्ष पूर्व एक पुराने भंडारके ग्रन्थ, जो अव्यवस्थित हो चुके थे, निकालकर वाडेमें डाल दिये गये। उनमेंसे कुछ तिलोकमुनिने इकट्ठे करके रखे और कुछ मुकनजीयतिने वटोरकर रख लिये। एक वार मैं वहाँ गया और उन पन्नोको देखने लगा तो मुझे उसमें वहुत-सी महत्त्वपूर्ण सामग्री मिलनेका आभास हुआ। मैंने पन्नालालजी यतिसे पूछा कि यह खतड क्यो सग्रह कर रखा है ? उन्होने कहा ये रद्दी हैं, पखाल एक पानी लगेगा, यतिलोग कूढा वना लेंगे। मैंने कहा—कृपाकर जितना भी इस कूढसेका मुनासिव समझें मेरेसे पैसा लेकर इसके मालिकसे मुझे दिला दें। पन्नालालजीने मुकनजीके एक शिष्यसे, जिसके अधिकारमें वह खंतड था, मुझे खूब सस्तेमें दिला दिया। कुल १३) रुपयेमें कितने ही छवडे भरे हुए ग्रन्थ हमारे हस्तगत हो गये। इस सौदेकी एक शर्तके अनुसार यतियोके सैकडो आदेश पत्र मुझे वापस लौटा देने पडे थे जो कि इतिहासके लिए एक महत्त्वकी वस्तु थी। फिर भी उसमें कई राजाओके खास हुक्के, ज्ञानसारजीकी कृतियोके विकीर्ण पत्र व खरडे आदि महत्त्वपूर्ण वस्तुएँ प्राप्त हुई। खतडको एक कमरेमें रखकर उसके वर्गीकरणमें लम्वे समय तक कठिन परिश्रम करना पडा। आदिपत्र, मध्य पत्र, अन्त्यपत्र, भाष्य, पंचपाठ, त्रिपाठ आदि तथा विभिन्न दृष्टिकोणसे छांटकर थाग लगाये जाते और एक-एक पन्ना एकत्र करते कितने ही ग्रन्थ पूरे हो जाते और हमारे उत्साहमें वृद्धि करते पर वीच-वीचमे भोला पक्षी कवूतर आकर अपने पखोके फडफडाहटसे पन्नोको उडाकर हमारा सारा काम गुडगोवर कर देते। हमें उनपर बडा रोष आता पर निरुपाय थे। पसीनेसे शरीर तरवतर हो जाता और उसपर ग्रन्थोका गर्दा आकर शरीरको इतना गन्दा कर देती कि विना नहाये, कपडा वदले कही भी वाहर जाना मुश्किल हो जाता। परन्तु इस सौदेमें सैकडो ग्रन्थ हमारे सग्रहमें हो गए।

एक वार वडे उपाश्रयमें त्रिलोकयतिसे ज्ञात हुआ कि उसने २५) रु० में २५-३० वडल हस्तलिखित ग्रन्थ (अव्यवस्थित खतड) खरीदके रखे हैं तथा वाडेमेंसे इकट्ठे किये हुए कुछ वडल भी अलग रखे हुए है। मैंने उन्हे समझा-बुझाकर प्रार्थना की कि वे अपने अधिकृत सारा खतड मुझे वेच दें। उन्होने कहा कि मैं

ज्ञानको वेचता नही, स्वयं इन्हें खोजकर ठीक करूँगा। मैंने कहा—आपको वर्षों बीत गये। ये बडल यों ही पडे हैं और पडे रहेंगे। आप यह काम कर नही सकेंगे। उन्हे यह बात जँच गई क्योकि इसमें बडी बात यह थी कि एक ही ग्रन्थके कुछ पन्ने हमारे संग्रहमें आ गये और कुछ पन्ने उनके पास रह गये। दोनो सग्रह मिले विना वे वेकार हो जाते। उन्होने अपने सग्रह किये हुए सारे बडल नि शुल्क हमें दे दिये और खरीदे हुए ग्रन्थ भी ३०) देकर मैं उनसे ले आया। हमारे संग्रहमें अभिवृद्धि होने लगी और अधूरे ग्रन्थ भी पूरे होने लगे।

एक वार पन्द्रहवी शतीकी लिखी हुई पद्यानुकारीतपागच्छ गुर्वावली जो एक महत्त्वपूर्ण प्राचीन कृति थी, का अन्तिम तीसरा पत्र मुझे प्राप्त हो गया और उसके दो पत्र यति मुकनजीके सग्रहमें थे। मैंने कहा, वावाजी एक ग्रन्थ दो जगह आधा-आधा रहे यह ठीक नही। उन्होने कहा, तुम अन्तिम पत्र मुझे दे दो। मैंने कहा, मुझे देनेमें कोई आपत्ति नही परन्तु आपके यहाँ इसका क्या उपयोग होगा ? जैसे अन्य पन्ने पडे नष्ट होते हैं, यही हाल इसका होगा, आप जितना पैसा चाहें ले लें। उन्होने २ पन्नोंका एक रुपया माँगा। मैं इस जीतके सौदेको खरीदनेमें कैसे चूक सकता था ? कहना नही होगा कि मैंने उसे तत्काल लाकर अपने सग्रहमें रख लिया। इसी तरह यत्र-तत्र जो भी सग्रह कर सकता, करनेमें विलम्ब या प्रमाद नही किया जाता।

एक वार कीर्त्तिसागरजीका चातुर्मास (१९८७) नागौर में था तो मैं वहाँ गया। बाबू कोटडीके उपाश्रयमें कितने ही हस्तलिखित ग्रन्थ पडे थे जिनका अधिकाश भाग तो वेचकर समाप्त कर दिया गया था। उनमें कुछ ग्रन्थ कीर्त्तिसागरजीकी अनुमतिसे मैं बीकानेर ले आया जिसमें एक मखमली जिल्दका ज्ञानसारजीके पदोका गुटका भी था। परन्तु नागौर सघने जब सुना तो मुझे उन्होने वापस भेज देनेके लिए पत्र दिया और न भेजने पर लिखा कि हमें पुस्तकें लानेके लिए आदमी भेजना पडेगा। मैंने तत्काल वह बडल उन्हें लौटा दिया। खेद है कि ज्ञानसारजीके पद सग्रहका मैं उपयोग न कर सका और न आज तक किसीने उस गुटकेका उपयोग ही किया।

नागौरमें साध्वीजी कनकश्रीजी महाराजने मुझे एक कल्पसूत्र तथा कुछ अन्य पत्रे दिये थे। इसी तरह समझदार व्यक्ति हमारे पास अपने पासके हस्तलिखित पोथी-पत्रे हमें भेज देनेमें उस सामग्रीका सदुपयोग महसूस करने लगे। पूनरासर निवासी श्री कालूरामजी रावत मलजी बोथराने हमें एक बोरा भरे हुए ग्रन्थ (पूर्ण-अपूर्ण व रद्दी) भेजे थे।

एक वार मैं पालीताना गया तो गुलाबचन्द शामजी भाई कोरडिया, जो जैन पडित थे और रुग्णावस्थामे विपन्न दशा विता रहे थे, से स्वर्गीय प्रेमकरणजी मरोटीने मुझे मिलाया। मैंने उन्हे ११) रु० दिये तो उन पण्डितजीने मुझे कुछ हस्तलिखित पत्रे प्रेस कापियाँ व कुछ पुस्तकें भेंट कीं।

राँघडीके चौकमें एक हाथी जयपुरिया नामक कलाकार रहता था। उसके सग्रहमें शेरकी भालेसे शिकार करते हुए घुडसवार महाराज पद्मसिंहजीका एक महत्त्वपूर्ण चित्र था, जिसे देखनेपर मैंने खरीदनेकी इच्छा प्रकट की और सौदा लगभग तै हो चुका था परन्तु मुझे उसी दिन कलकत्ते आना था। अतः पीछेसे यह कार्य अवश्य कर देनेके लिए मैंने श्री ताजमलजी बोथराको निवेदन किया। उन्होने उससे वह चित्र लेकर पूज्य दादाजीको दे दिया। यह चित्र ठा० रामसिंहजीने शभुदयालजी सक्सेनाके मार्फत ओझाजीको दिखानेके लिए मंगवाया और महाराज माधवसिंहजी उसे ओझाजीसे मागकर स्वर्गीय महाराजा गगासिंहजी वहादुरके पास ले गये। पचासो बार लालगढ़ और महकमोका चक्कर काटकर भी अपने सग्रहकी इस अमूल्य सपत्तिको हम लौटाकर न ला सके, जिसे कि राजसे १०००) रु० उसकी कीमत स्वरूप देना स्वीकार कर लिया था पर हमने बेचना अस्वीकार कर दिया, वास्तवमें महाराजा साहवको यह पता नही था कि यह चित्र हमारे सग्रहका है और केवल देखनेके लिए लाया गया है, परन्तु अधिकारी वर्ग उनके सामने मुँह

न खोल सका और आज २५-३० वर्षसे हमारी यह धरोहर लालगढमें विद्यमान है जिसका उल्लेख ओझाजीने बीकानेर राज्यके इतिहास तकमें किया है, हमारे वर्त्तमान बीकानेरनरेश करणसिंहजीको चाहिए कि वे हमारे सग्रहालयकी धरोहरको सम्मानपूर्वक हमें लौटा देनेकी उदारता दिखायें । अस्तु ।

इस प्रकार चित्रादि प्राचीन कलात्मक वस्तुओके सग्रहमें भी हमारा ध्यान रहता और जहाँसे भी वे प्राप्त होती, सग्रह कर ली जाती । एक वार राजगृहीमें १५ दिन रहना हुआ और वहाँसे कुछ मृण्मूर्त्तियाँ (Terracotas) सील, हरगौरी मूर्ति, एक कुशाणकालीन हुविष्ककी स्वर्णमुद्रा व २०-२२ चाँदी व १००-१२५ ताँबेके दो हजार वर्ष प्राचीन पचमार्कड सिक्को (Coins) का सग्रह १६०) रुपयेमें खरीदकर लाया गया ।

श्री पूज्यजी महाराज श्री जिनचारित्रसूरिजीके सग्रहकी हस्तलिखित ग्रन्थोको जव काकाजी अगरचन्दजीने व्यवस्थित कर सूची तैयार कर दी तो उन्होने उदारतापूर्वक अपने सग्रहके कितने ही अपूर्ण ग्रन्थ हमारे सग्रहके लिए भेंट कर दिये थे । पृथ्वीराज रासोकी एक मध्यम सस्करणकी प्रति भी श्री पूज्यजी महाराजने हमें दी थी, जो वाहर एक आलमारीके ऊपर पडी थी । हमने उसे डा० बूलरके अवलोकनार्थ डॉ० वनारसीदास जैनको लाहोर भेजा और आज भी वह हमारे सग्रहमें विद्यमान है ।

उन दिनो हमे एक ही धुन सवार थी कि संग्रह कैसे हो । रातमें सोते हुए स्वप्न भी ऐसे आते । कभी तो किसी ऐतिहासिक स्थानके दर्शन होते, कभी हस्तलिखित ग्रन्थ-चित्रादि दीखते । आश्चर्यकी वात है कि हरे रगका एक चित्र स्वप्नमे दिखाई दिया, जिसमे भगवान् ऋषभदेव अपनी पुत्रियो, ब्राह्मी सुन्दरीको लिपि विज्ञान सिखा रहे हैं और सामने पूरी वर्णमाला (ब्राह्मी लिपिकी) लिखी हुई है । श्री देवचन्दजी महाराजके जन्मस्थानके सवन्धकी ऊहापोहमे स्वय देवचन्दजी महाराज ऋषभदेवजीके मदिरके (नाहटोकी गवाड) सामने मिलते हैं और अपना जन्मग्राम वतलाते है जो कि बीकानेर रियासत या जोधपुर रियासतमें है ? इस ऊहा-पोहमें विस्मृत हो जाता है । समयसुन्दरजीके माता-पिताके नामकी खोजमें दूसरे ही दिन वडे उपाश्रयके एक सग्रहके पत्रोमे उन्हीके शिष्यो द्वारा निर्मित गीत मिल जाते हैं और स्वप्न साकार हो जाता हैं । चित्तकी एकाग्रता और सग्रह तमन्ना ही इसके मुख्य कारण हो सकते है, जो भावनाओके साकारकी पूर्वसूचनारूप प्रतिभासित हो जाते हैं ।

जयपुरके श्री पूज्यजी श्री धरणेन्द्रसूरिजी महाराजने भी कुछ ताड़पत्रीय पन्ने आदि हमारे सग्रहमें आजसे २५ वर्ष पूर्व भेंट किये थे तथा जयपुरके दुकानदारोंके यहाँ घूमघामकर कई बार चित्रोका सग्रह किया गया ।

हस्तलिखित ग्रन्थोको जो चिपककर थेपडे हो गये थे, उन्हे खोलनेमें वडी सावधानी रखनी होती हैं, उन्हें उचित मात्रामें सरदी पहुँचाने पर स्याहीका गोद ढीला हो जाता और उनकी पकड ढीली हो जाने-पर वे आसानीसे खुल जाते है । जितने मजवूत कागज होते है, उतने ही सरलतासे वे खुलते है और फटते नही ।

कभी-कभी असावधानीसे मूल्यवान सामग्री भी गायव हो जाती है । एक वार एक विज्ञप्तिपत्र (सस्कृत) जो हमारे सग्रहमें था, किसीको मरोटियोमे मिला और वह पत्र किसीने पाकर हमें दे दिया तो खोया हुआ हाथ आ गया । उदयपुरका सचित्र विज्ञप्तिपत्र हमें श्री पूज्यजी श्री जिनचारित्रसूरिजी द्वारा प्राप्त हुआ । रतनगढके उपाश्रयमें रखडते हुए महत्त्वपूर्ण वौद्ध चित्रपटको हम जब सम्मेलनके अवसरपर गये तो सग्रह करके लाये । झुझुणुकी यात्रामें किवामरासो—दौलत खा की पैडी आदि जानकविकी कृतियाँ मिली तथा फतेहपुर (शेखावाटी)के यति श्री विसुनदयालजीसे पृथ्वीराज रासोका लघुतम सस्करण प्राप्त हुआ ।

प्राचीन सामग्रीको अच्छी तरहसे पैक करके सुरक्षित पंजीकृत (Reagistered) डाकमें भेजना चाहिए। यदि उपेक्षा करनेसे वह इतस्तत हो जाय तो उसका हमेशा धोखा रह जाता है। हीराणदसूरिके कलिकालरामकी प्राचीन प्रति, जो हमारे सग्रहमें थी, देसाई महोदयके बबई मगाने पर भेजी गई। उस दिन डाकघर बद हो गया था मैंने बुक पोस्टसे ही वह पोस्ट कर दी। वह देसाई महोदयको न मिली और वे डाक विभागसे पत्र व्यवहार करके भी प्राप्त करनेमें असफल रहे।

एक-एक पत्रको बडी सावधानीसे देखनेपर सग्राहकको उसमें कुछ न कुछ मिल ही जाता है। एक २ इचके पन्नेमें हमें कुछ बारीक अक्षरोमें लिखे दोहे मिले, जिससे ज्ञानसारजीके माता-पिताका नाम, जन्मस्थान, सवत्, दीक्षाकाल, गृहनाम, राज्यसबध आदि प्राप्त हो गये। इसी प्रकार कितनी ही महत्वपूर्ण सामग्री इन विकीर्ण पत्रोमें, गत्ते (पूठे) बनाये हुए पत्रोमें मिल जाती है। जिसे पुरातत्व, कला-साहित्यका चस्का लग गया हो उसे आजके सिनेमा और मौज-शौक आदि सब फीके लगते हैं, यह कार्य जितना ही विशाल है उतना ही मनोरजक और सुरुचिपूर्ण है। जब इसमें प्रविष्ट हो जाते है तो भूख-प्यास थकावट सब विस्मृत हो जाती है। घटो कठिन परिश्रम करने पर भी तमन्ना रहती है कि और अधिक कार्य करें। इसमें नई-नई शैली, नये-नये शब्द, नये-नये तथ्योका वह भडार भरा पडा है, जो पूर्वकालकी सामाजिक-साहित्यिक-धार्मिक और कलापक्षकी जीवित गरिमाका प्रत्यक्षीकरण करा देती है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमिपर आये हुए नाना छायाचित्र और धरातलके स्तरपर चढकर जो परिवर्त्तन आया है, उसकी सूक्ष्म और पारदर्शी दृष्टि प्राप्त हो जाती है और प्राप्त हो जाता है वह टेलिस्कोप जिसमें भारतीय जनताकी हृदयकी धडकनें, तद्वर्ती भाव-ऊर्मियाँ और सास्कृतिक सूक्ष्म विचार कणोका तुमुल आन्दोलन जो मानवको आत्मविभोर कर देता है। इसे कहते हैं —

"कैसे छूटे, शोधरस लागी?" रामरसमें जैसे विघ्नोका अम्बार अवरोधक बनकर आ जाता है? परतु भक्तने उसकी कब परवाह की है? शोध-रस लगे श्री नाहटाको भी इस साधनामें अनेक मधुर-कटु अनुभव हुए है और अब भी होते जा रहे हैं लेकिन वह लगन छूटनी तो दूर रही, न्यून भी नही, अनुदिन पीन होती जा रही है। श्री अगरचन्द जी नाहटाके शब्दोमें —

"प्राचीन एव कला-पूर्ण वस्तुओका सग्रह एक बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य है। प्राचीन सस्कृतिका पता लगानेके लिए यह अत्यन्त आवश्यक भी है। परन्तु यह सग्रह-कार्य कोई साधारण कार्य नही है। इसके लिए काफी सूझ-बूझ, परख, धैर्य, लगन और प्रभविष्णुताकी आवश्यकता है। दूसरे शब्दोमें कहा जाय तो सग्रहकार्य भी एक कला है। गीतामे कहा है "कर्ममें कुशलता ही कला है" और सग्राहकका कई बातोमें कुशल होना बहुत ही जरूरी है।

अपने जीवनके विगत ३५ वर्ष मैने शोध एव सग्रहके कार्यमे बिताये है और उस कार्यमें काफी प्रेरणा दायक और कटु-अनुभव भी हुए हैं। यहाँ उनमेंसे थोडेसे अनुभव या सस्मरण दिये जा रहे हैं। मेरे इस कार्यमे मेरे भातृपुत्र भँवरलाल नाहटाका भी सदा सहयोग रहा है।

वि० सवत् १९८४ को वसन्त-पचमीकी जैनाचार्य जिनकृपाचन्द्रसूरिजीका बीकानेर पधारना हुआ और वे हमारी नानाजीकी कोटडीमें ही विराजे। उनके घनिष्ठ एव निकट सम्पर्कमें हमें बहुत बडी धार्मिक एव साहित्यिक प्रेरणा मिली। राजस्थानके जैनकवि समयसुन्दर सबधी मोहनलाल देसाईका एक निबन्ध उसी समय हमें पढनेको मिला और उससे प्रेरणा पाकर उनकी जीवनी और रचनाओकी खोजका काम प्रारम्भ कर दिया गया। उस प्रसगमें सर्वप्रथम बीकानेरके हस्तलिखित ग्रन्थ-भण्डारोका अवलोकन करते हुए हमें प्राचीन हस्तलिखित प्रतियोका महत्व विदित हुआ और उनके सग्रह करनेकी प्रेरणा भी मिली।

समयसुन्दरजीकी 'पाप-छत्तीसी' नामक एक रचनाकी हस्तलिखित प्रति कला-मर्मज्ञ स्व० पूर्णचन्दजी नाहर, कलकत्ता, की लायब्रेरीमें होनेकी सूचना श्री मोहनलाल देसाईने अपने निबन्धमे दी थी, उसे देखनेके लिए हम श्री नाहरजीके यहाँ पहुँचे और उनका सग्रहालय तथा कलाभवन देखकर हमारे मनमें भी प्राचीन कलापूर्ण वस्तुओके सग्रहकी रुचि उत्पन्न हुई। इन दोनो प्रसगोका ही यह परिणाम है कि अव तक हमने करीब वीस हजार हस्तलिखित प्रतियाँ, अपने वडे भाई स्व० अभयराजजी नाहटाके नामसे स्थापित "अभय जैन ग्रन्थालय"में सग्रहीत कर ली हैं और अपने पूज्य पिताजीकी स्मृतिमें स्थापित "श्री शकरदान नाहटा कला-भवन"मे हजारो चित्र, सैकडो सिक्के, मूर्तिया और अनेक कला-पूर्ण प्राचीन वस्तुओका सग्रह कर सके है। इस सग्रहकार्यमे हमें जो सुखकर एव कटु अनुभव हुए, उनमे कुछ यहा प्रस्तुत किये जा रहे हैं —

बीकानेरके रागडी चौकमे स्थित वडे उपाश्रयमे करीव १०० वर्ष पूर्व शताधिक यति रहते थे और उनके पास हस्तलिखित प्रतियाँ भी काफी परिमाणमें थी। उनमेंसे कुछ यतियोका सग्रह तो वृहद् ज्ञान-भण्डारमें सुरक्षित हो गया है, पर लावारिस यतियोके जो ग्रन्थ एक पचायती-भण्डारमे पडे थे, उचित सार-सम्हालके अभावमे वह विशिष्ट सग्रह अव्यवस्थित हो गया और उसे रद्दी समझकर एक वाडेमें डाल दिया गया था। उनमेंसे कुछ तो कृपाचन्द्रसूरिके शिष्य तिलोक मुनिने अपने पास इकट्ठे करके रख लिये और कुछ मुकनजी यतिने बटोर लिये। एक बार भँवरलालने उसके खन्तडके कुछ पन्नोको देखा तो उसे रद्दी समझकर डाले हुए ढेरमें बहुत-सी महत्वकी सामग्री मिलनेकी सम्भावना दिखाई दी। उसने उसी उपाश्रयके यति पन्नालालजीसे पूछा कि यह खन्तड इस तरह क्यो डाल रखा है? और इसके सग्रहका क्या प्रयोजन है? तो पन्नालालजीने कहा यह रद्दी है पखाल भर पानी लगेगा, यति लोग इसका कूडा बना लेंगे। यह सुनकर भँवरलालको वडा दु ख हुआ और उसने कहा कि इस कूटलेका जो भी मुनासिव हो पैसा दिलवाकर जिन्होने इसे कूटा वनानेके लिये वटोर रखा है, उनसे हमे दिलवा दें। यति पन्नालालजीने मुकुनजीके एक शिष्यके अधिकारमें जितना भी वह खन्तड (अव्यवस्थित हस्तलिखित प्रतियोका ढेर) था, हमें खूब सस्तेमें दिलवा दिया। कुल २३ रुपयेमें कई छबडो-भरे ग्रन्थ हमारे हस्तगत हो गये। इस सौदेकी एक शर्तके अनुसार आचार्यो द्वारा यतियोको दिये हुए सैकडो आदेशपत्र हमें वापस लौटाने पडे जो कि तत्कालीन इतिवृत्तकी जानकारीके लिए वहुत ही उपयोगी थे। फिर भी उस सग्रहमे राजाओके दिये हुए कई खास रुक्के, मस्त योगी ज्ञानसागरजीकी कृतियोके विकीर्ण पत्र एव खरडे आदि काफी महत्वकी वस्तुएँ हमें प्राप्त हुई। पर इस सग्रहको सुव्यवस्थित करनेमें हमें जो कठिन परिश्रम करना पडा वह भी चिरस्मरणीय रहेगा।

हस्तलिखित प्रतियाँ खुले पत्रोके रूपमें होती है इसलिये उनके पन्ने इधर-उधर हो जानेपर विशेषत अनेक प्रतियोका जब ढेर कर दिया जाता है तो, उनमेंसे एक-एक पत्रको छाँटकर उस प्रतिको पूर्ण करना वहुत ही समय एव श्रमसाध्य बन जाता है। हमने उन अस्त-व्यस्त पत्रोको ठीक करनेके लिए एक पूरा कमरा रोका और आदि—पत्र, मध्यपत्र, अन्तपत्र, भापा, लिपि, टवपाठ, त्रिपाठ आदि शैलियोके पन्नोके अलग-अलग थाग लगाये और एक-एक पत्रको छाँट-छाँटकर सैकडो प्रतियोको पूर्ण किया। ज्योही एक प्रति पूर्ण होती, हमारा मन उत्साहसे भर जाता और इस तरह पूरी तत्परता एव उत्साहके साथ उस कार्यमें कई महीने जुटे रहे। बीच-बीचमें भोलापक्षी—कबूतर आकर अपने पखोकी फरफराहटसे हमारे छाँटे हुए पन्नोको जब उडाकर हमारे कामको गुड-गोवर कर देता तो हमे इसपर वडा रोष आता, पर निरुपाय थे क्योकि प्रकाशके लिए कमरेका दरवाजा खुला रखना आवश्यक था। गर्मीके दिनोमें उन पत्रोको छाँटते हुए हमारा शरीर पसीनेसे तरवतर हो जाता और उन हस्तलिखित प्रतियोके साथ जो बहुत-सी धूलकी गर्दी लगी हुई थी वह

हमारे शरीर और कपडोके चिपक जाती। कई घन्टोतक निरन्तर छँटाईका कार्य करनेके वाद जव हम कमरेसे वाहर आते तो हमारे शरीर और कपडे इतने गन्दे हो जाते कि विना नहाये और कपडा वदले किसीको मुँह दिखाना कठिन हो जाता। पर कई महीनोके वाद जब हमें सैकडो महत्वपूर्ण ग्रन्थ उस खन्तडमेंसे प्राप्त हो गये और वहुत-सी महत्वपूर्ण ऐतिहासिक सामग्री मिली तो हमे अपने श्रमका सुफल मिलनेसे वडा सन्तोष हुआ।

उसी समय तिलोक मुनिने उसी रद्दीके ढेरमेंसे छाँट-छाँटकर या पन्नोको इकट्ठाकर २५ रुपयेमें खरीदे हुए खतडको कई वन्डलोमें वांधकर रखा था। हमने उनसे यह प्रार्थना की थी कि यह सारा खन्तड हमें वेच दें, क्योकि इसी ढेरके वहुतसे पन्ने हमारे खरीदे हुए सग्रहमे आ चुके हैं। तिलोक मुनिने कहा कि मैं ज्ञानको वेचता नही, समय मिलनेपर इसको ठीक करूँगा। हमने उनसे कहा कि वहुत दिनोसे आपके पास ये वन्डल यो ही पडे हैं और आपको अवतक समय ही नही मिला तो कृपया उनको हमें ही दे दें, हम ठीक कर लेंगे। उनको भी हमारी यह वात जँच गई। फलत खन्तडमेंसे सगृहीत सारे वन्डल हमें नि.शुल्क दे दिये और खरीदे हुए ग्रन्थोका मूल्य ३० रुपया देकर हम वह सारा सग्रह ले आये। इससे हमें अपने यहाँकी अपूर्ण प्रतियोको पूर्ण करनेमें वडी सुविधा हो गई।

इसी खन्तडका कुछ अग जो यति मुकनजीने अपने पास रख छोडा था, उसमें सवत् १४८८ की लिखी हुई एक तपागच्छ-गुर्वावलीकी ३ पत्रोकी प्रतिके २ पत्र भी थे। इस प्रतिका तीसरा पत्र हमारे खरीदे हुए खन्तडमें आ चुका था। इस महत्वपूर्ण प्रतिको पूर्ण करनेके लिए हमने मुकनजीसे वहुत अनुरोध किया तो अन्तमे उन्होने उन दो पत्रोका मूल्य एक रुपया माँगा। हमने इसे भी जीतका ही सौदा समझा और तत्काल मुँहमाँगा देकर उन दोनो पत्रोको खरीद लिया। वैसे दो पत्रोकी अपर्ण प्रतिका दो आना भी कोई नही देता, पर हमें तो अपनी प्रतिको पूर्ण जो करना था।

प्राचीन वस्तुओका सग्रह केवल पैसोके द्वारा ही नही होता। इस कार्यमें काफी मिलनसारिता व होशियारीकी जरूरत होती है जो कार्य पैसेके वलपर नही होता उसे सम्पन्न करनेके लिए अन्य उपाय सोचने पडते हैं, जो व्यक्ति अपनी अधिकृत वस्तु वेचना नही चाहता उससे वह वस्तु कैसे ली जा सकती है। इस सम्वन्धकी हमारी एक रोचक अनुभूति यह है कि उस व्यक्तिकी रुचि एव प्रकृतिका पता लगाना चाहिये। फिर उसीके अनुसार कोई उपाय करनेपर सफलता मिल सकती है। इस सम्वन्धमें हमारा एक सस्मरण यहाँ दिया जा रहा है।

बीकानेरमें पूनमचन्दजी श्रीमाली नामक एक सज्जन मत्रविद् विद्वान् थे। मुझे किसीसे विदित हुआ कि उनके यहाँ वहुतसे हस्तलिखित जैनग्रन्थोकी प्रतियाँ पडी हैं। तत्काल मैं उनके पास पहुँचा और उन्होने अपने सहज सौजन्यवश उन प्रतियोको मुझे दिखा दिया पर वे उन्हे पैसे लेकर देनेवाले नही थे। और मुझे किसी तरह भी उनको सग्रह कर लेना ही था। इसलिये श्रीमालीजीको एक दिन मैं अपने घर पर लाया और अपने सग्रहीत वस्तुओको हमने कितनी सारसम्हालके साथ रखा है, ये दिखाते हुए उनसे कहा कि आपको मत्रशास्त्रका शौक है, अत हम अपने सग्रहके मत्रो-सवंधी छाँटे हुए हस्तलिखित पत्रोको आपको भेंट दे देंगे और आप कृपया हमें अपने यहाँकी प्रतियाँ हमारे सग्रहके लिए दें दें। हमारी यह सूझ-बूझ काम कर गई। हमारे सग्रहको सुव्यवस्थित देखकर वे प्रभावित हुए और अपने कामको शीघ्र प्राप्त होनेकी अभिलाषा-ने उन्हे हमारी इष्ट-सिद्धिके लिए तैयार कर दिया। हम दो वोरोमें भरकर उनकी प्रतियोको अपने यहाँ ले आये। इनमेंसे सचित्र प्रतियाँ भी थी जिनको खरीदनेपर मूल्य शताधिक रुपये होता।

अव मेरे अविस्मरणीय एव कटु अनुभवोको भी सुनिये।

मारवाड जक्शनके एक यतिजीके अधीनस्थ बहुत-सी हस्तलिखित प्रतियोंके बन्डल वहांके जैन-मदिरकी एक आलमारीमें पडे थे। मैं उन्हे देखने गया तो उन्होने चाभी नही मिलने आदिका कहकर टाल-मटोल की। पर मुझे उन प्रतियोको देखना ही था इसलिये मैंने एक पत्थरसे लेकर आलमारीके तालेको किसी तरह खोल डाला पर आलमारीके फाटक खुलते ही मुझे मर्मान्तिक दु:ख हुआ क्योकि वर्षाका पानी उस आलमारीमें प्रविष्ट होनेसे सारे ग्रन्थ चिपक कर थेपडे हो गये थे और क्षुद्र जन्तु वहां उत्पन्न हो गये थे कि उन प्रतियोंके हाथ लगाते ही असख्य जन्तु बाहर भागने लगे। फिर भी यतिजीसे मैंने कहा कि इन नष्ट हुए ग्रन्थोको भी हमें दे दें पर वे इसके लिए तैयार नही हुए और दूसरी बार जानेपर विदित हुआ कि उन सैकडों प्रतियोको पानीमें बहा दिया गया।"

कहनेकी आवश्यकता नही है कि जो शोधरस श्री नाहटा (चाचा-भतीजे)ने आदरणीय जैन आचार्य श्री जिनकृपाचन्द्रजीसूरि व उपा० सुखसागरजीसे आस्वादित किया था, उसकी ललक प्रतिदिन बढती ही गई। अधिकसे अधिक प्राप्त करनेकी प्रबल इच्छासे आप कहाँ-कहाँ नही गये ? आप श्मशानोमें भटके, उजडे-उखडे ध्वस्त-अवशेष खण्डहरोमें भयकर भुजगमोके बिलोपर गहन अधकारमें खोज की, भूखे-प्यासे, चिलचिलाती धूपमें मीलो पैदल गये, प्राचीन शिलालेखोको पढा और उनके छाया-चित्र प्राप्त किये। युगोंसे बन्द कपाटोंको आपने इस पवित्र कार्य हेतु उद्‌घाटित किया। कही चमगादडोसे स्नेह-टक्कर हुई तो कही मधुमक्खियोसे रार और तकरार। कई इंच जमे धूलदलको हाथोसे इकट्ठा कर बर्तनमें भर उसे शिरपर उठाकर बाहर फेंकनेके अनेक अवसर आपके जीवनमें आये, क्योकि उसके नीचे दबी सरस्वती आपका आह्वान जो कर रही थी। टूटे-फूटे, बन्द घरो और तहखानोमें विषैले बिच्छू अपना साम्राज्य बना लेते है और यह साम्राज्य कभी-कभी बीसो हाथ लम्बा होता है। इस कष्टकर और भयकर भूगर्भ मार्गको पार करके ही 'अब पडूँ तब पडूँ' जैसी जीर्ण-शीर्ण छतके नीचे कूडे-करकटमें दबी सरस्वतीको पाना-सम्भालना-टटोलना और फिर उसे बोरियोमें भरकर मस्तकपर रखकर बाहर निर्जन खंडहरमें एकत्र करना और अनेक दिनो तक चनेचबेने खाकर-पानी पीकर सप्ताहान्त कर देना साधारण बात नही है। शरीरपर परिधीत वस्त्र धूल धूसरित हो गये है, श्रमसीकरोसे मिलकर रज-कण-दुर्गन्ध देने लगे है, हाथकी अगुलियोके नख कच्चे फर्शकी धूलिको साफ करनेके कारण सक्षत हो गये हैं, शिरके केश धूलराशिमें छिपकर अदृश्य हो गये हैं, दाढ़ी 'अस्तित्ववाद' की तरह पुरजोर मचलने लगी है, लेकिन शोधरस-मत्त श्री अगरचन्द नाहटाके मुखमण्डल पर एक विशेष आह्लाद है, एक छवि है, एक स्मिलि थ्रिरकन है और वह इस कारण कि जिसे आज तक किसीने नही पाया, वह उन्होने प्राप्त कर लिया। जिस प्रकार कवियोकी अमरगिरामें 'गोकुल गाँवको पैडो ही न्यारो' है, ठीक उसी प्रकार 'शोध लगेको पैडो भी' अद्‌भुत है, असामान्य है। शोध-पथिक होनेके नाते आप मदिरोमें गये, मस्जिदोमें गये, ग्रन्थी तथा गुरुद्वारेको मस्तक झुकाया और उपाश्रयोके भाग्य-विधाताओका विश्वास अर्जित किया। इसी हेतु आपको अनेक पुरातत्त्वालय, हस्तलिखित-पुस्तकालय, वृहद्‌ज्ञान-ग्रन्थालय, सामाजिक सस्थान, व्यक्तिगत प्रतिष्ठान, टटोलने पडे, पासके, दूरके, गाँवके, शहरके, आस्तिकोंके, नास्तिकोके जो भी सारस्वत सग्रह थे, वे आपके सर्वस्व थे और वहा आप दौडे गये। अगर कोई भडारद्वार दीवारोंसे ढक दिया है तो आप मजदूरो और कारीगरोंके साथ मिलकर उसे तुडवा रहे है, अगर किसी भडारकी महत्त्वपूर्ण दीवार गिर पडी तो उसके स्थानपर नयी दीवार उठानेमें मदद कर रहे हैं। ऐसी ही स्थितिमें भवभूतिने कहा था :

'लोकोत्तराणा चेतासि, को वा विज्ञातुमर्हति'

लोकोत्तर पुरुषके चरितको कौन जान सकता है ?

किसी कविने ठीक कहा है कि ससारमें बहुत व्यसन हैं, लेकिन श्रेष्ठ व्यसन तो केवल दो हैं, प्रथम विद्या व्यसन और द्वितीय प्रभुभक्तिव्यसन।

व्यसनानि सन्ति बहुधा, व्यसनद्वयमेव केवल व्यसनम्।
विद्याव्यसनं व्यसनं, अथवा हरिपादसेवन व्यसनम्॥

हमारे चरित-नायक श्री अगरचन्द जी नाहटाका विद्या-व्यसन उच्चकोटिका है। वे प्रतिदिन दस घटे पढते-लिखते और मनन-चिन्तन करते है। उनके विद्या-व्यसनका इससे बडा प्रमाण क्या हो सकता है कि उन्होने स्वश्रमसे 'श्री अभय जैन ग्रन्थालय' जैसी विश्वविश्रुत संस्थाको जन्म देकर पल्लवित, पुष्पित और फलित किया। इसमें लगभग चालीस हजार हस्तलिखित दुर्लभ ग्रन्थोका सग्रह है और इतनी ही मुद्रित पुस्तकोका। इसका समस्त श्रेय आपके विद्या-व्यसनी व्यक्तित्वको है।

श्री शकरदान नाहटा कलाभवनमें आज तीन हजार दुष्प्राप्य चित्र, सैकडो सिक्के, हजारो प्राचीन मूर्त्तियाँ और कलाकृतियाँ सुरक्षित एवं सगृहीत हैं। इसका अनुमानित मूल्य दस लाखसे अधिक है। इस गौरवपूर्ण सग्रहालयको प्रथम श्रेणीके सग्रहालयोकी श्रेणीमें बिठाना आपके विद्याव्यसनका ही सुफल है।

आपके विद्यावैभवसे प्रभावित होकर देशकी अनेक सस्थाओने आपका सम्मान किया है। जैन सिद्धान्त भवन, आराने आपको 'सिद्धान्ताचार्य', जिनदत्तसूरिसघने 'जैन इतिहास रत्न', दी इण्टरनेशनल अकादमी जैन विजडम एण्ड कल्चर, आराने 'विद्यावारिधि' माणिकलरी अष्टम शताब्दी समारोह पर 'सघरत्न' और राजस्थान भाषा प्रचार सभा, जयपुरने 'राजस्थानी साहित्य वाचस्पति' जैसी उच्चस्तरीय उपाधिसे आपको विभूषित किया है। देशकी अनेक सस्थाओने आपको अभिनन्दित किया है। कुछ अभिनन्दन पत्र गद्यमें हैं तो कुछ पद्यमें। अभिनन्दन पत्रोको पढनेसे यह प्रभाव पडता है कि आपके विद्याव्यसनी स्वरूपने आपके प्रशसको को कितना गहरा प्रभावित किया है। मैं तो यह कहनेकी स्थितिमें हूँ कि शब्दावलीके माध्यमसे अपने भावोको आपके चरणोमें समर्पित करने वाले विद्यानुरागी-गुणग्राहक-समर्पक आपसे अभिभूत हैं, आपकी सरस्वतीसे अभिभूत हैं और आपके विद्याव्यसनसे अभिभूत हैं।

श्री श्वेताम्बर जैन महासभा उत्तर प्रदेशकी ओरसे इतिहासरत्न श्री अगरचन्दजी नाहटाके कर-कमलोमें सादर समर्पित पद्यबद्ध अभिनन्दन-पत्रकी भावभरी पंक्तियाँ पठितव्य हैं—

श्री श्वे० जैन महासभा, उत्तर प्रदेश, की ओर से

इतिहासरत्न श्री अगरचन्दजी नाहटाके करकमलोमे सादर समर्पित

अभिनन्दन-पत्र

जिनका विद्यातरु सदा, फलित रहा सर्वत्र ॥
उनके करमे भेट है, यह अभिनन्दन-पत्र ॥ १ ॥

× × ×

तुम अगरचन्द अभिधावाले पर निश्चय चन्द्र निराले हो।
वह नभका चन्द्र कलंकित है, तुम विमल कीर्तिको धारे हो ॥
शुभपथसे किंचित् हटे नही, इसलिये नाहटा गोत्र मिला।
है किन्तु महा आश्चर्य कि बीकानेरमे कैसे कमल खिला ॥
"गुदडीमे लाल छिपे रहते" यह तो हम हैं सुनते आये।
'रेतेमे रत्न छिपे रहते" यह ज्ञान आज ही है पाये ॥
क्या कहे सरस्वति पुत्र ! तुम्हारा आलम एक निराला है।
मनमध्य ज्ञान भगवान बसे हाथोमे ज्ञानकी माला है ॥
इस ज्ञानयोगके अमृतमे अमरत्व ढूँढने वाले हो।
तुम अगरचन्दसे अमर चन्द्रमा जल्दी बनने वाले हो ॥
सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश आदिके कितने ग्रथ खोज डाले।
इतिहास-हारकी लडियोमे हाँ, कितने रत्न जोड डाले ॥
देवी शारदा महामुदिता, अमृतवर्षा तुमपर करती।
अवसर्पिणी काल है, किन्तु ज्ञानकी निर्झरिणी सुखदा झरती ॥
है यथा सुगधित अगर द्रव्य, है यथा चन्द्रमा सुधा भरा।
तव कीर्ति-सुगन्ध प्रसारित हो अरु रहे ज्ञान घट सदा भरा ॥
श्री शान्ति प्रभूकी छायामे हस्तिनापुरमे जो आये हो।
भागीरथवत् निज ज्ञान सुरसरी इस प्रदेशमे लाये हो ॥
बालाश्रम रूपमान सरसे भारतमे यह सुरसरी बहे।
गुरु 'विजयानन्द'की जय-जय हो, श्री अगरचन्दकी कीर्ति रहे ॥
इस शिलान्यासकी यादगार इक शिलालेख-सी बन जाये।
जैनोकी युनीवर्सिटी बने, 'वल्लभ', 'समुद्र'के मन आये ॥

रचयिता
रामकुमार M. A., B. T.
हस्तिनापुर
दिनाक ३१-७-६३

आपकी विद्वत्ताके प्रति प्रणत
ज्ञानचन्द मोघा (सभापति)
विनयकुमार जैन (मन्त्री)
श्री श्वे० जैन० महा०, उत्तर प्रदेश

इस गद्यबद्ध सम्मान-पत्रको भी प्रस्तुत किया जाता है। यह सम्मान-पत्र राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुरकी ओरसे हमारे चरित-नायक श्री नाहटाजीको समर्पित किया गया था

राजस्थान साहित्य अकादमी (संगम) उदयपुर

सम्मान-पत्र

श्रीमान् अगरचन्द नाहटा

- राजस्थान प्रदेशकी साहित्यिक तथा सांस्कृतिक चेतनाके प्रसारमे आपके सृजन एव अध्ययनशील व्यवितत्वका विशिष्ट योगदान रहा है।
- आपने अपनी साधना तथा विद्वत्ता द्वारा राजस्थानकी प्रतिभाके विकासमे प्रेरणा प्रदान की है।
- आपके कर्तृत्व एव परिशीलनसे राजस्थानका साहित्य और समाज लाभान्वित हुआ है।

अस्तु—राजस्थान साहित्य अकादमी [सगम] उदयपुर
यह सम्मान–पत्र सादर समर्पित करती है।

निदेशक, उदयपुर　　　　　　　　　　　　　　　　　　अध्यक्ष

दिनाक ३० ५ १९६८

राजस्थान सरकार तो आपकी विद्वतासे परिचित थी ही, केन्द्रीय सरकारने भी आपकी अगाध ज्ञानराशिसे एक बार लाभ उठाना चाहा था। जव उक्त प्रसगको श्री भँवरलालजी नाहटाके शब्दोमे पढना और भी आह्लादक होगा · "जव सरदार वल्लभ भाई पटेलने आवूको राजस्थानसे निकालकर गुजरातमें मिला दिया था, तो श्री नेहरू सरकारने राजस्थानकी न्यायोचित माँगपर सद्विचार करना तै किया, फलत राजस्थानके प्रमुख विद्वानोकी एक मडली नियुक्त हुई, जिसने आवू प्रदेशमे भ्रमण करे ऐतिहासिक, सास्कृतिक, वेशभूषा, वोलचाल-भाषा, रीति-रिवाज, कला आदिपर रिपोर्ट दी जिसमे आप भी एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति थे और उन्हीकी रिपोर्टोंसे राजस्थानको उचित न्याय मिला था।[1]

हमारे चरितनायक श्री नाहटाका विद्याव्यसन लभगभग चार युग पुराना है। इस सुदीर्घ अवधिमें आपने लगभग चालीस ग्रथ लिखे और सम्पादित किये हैं। तीन सौ पत्र-पत्रिकाओमें आपके तीन हजार लेख प्रकाशित हो चुके हैं। आपके विद्या-व्यसनका लाभ, अनेक पत्र-पत्रिकाओने आपको सपादक वनाकर अथवा सम्पादक मंडलमें स्थान देकर, लिया है। आपके सम्पादकत्वसे लाभान्वित होनेवाली पत्रिकाओमें 'राजस्थानी', 'राजस्थान भारती', 'विश्वम्भरा', 'परम्परा', 'मरु-भारती', 'वरदा', 'अन्वेपणा', 'वैचारिकी' आदि प्रमुख है। 'राजेन्द्रसूरि स्मारक ग्रन्थको भी आपके सम्पादकत्वका गौरव प्राप्त होता है।

हमारे चरितनायक श्री नाहटाजीके विद्याव्यसनी कल्पवृक्षके सुमधुरफल मुक्तभावसे वितरित हुए हैं। कई लोगोंको ये अमरफल खिलाये गये हैं और अनेकोको हठात् दिलाये गये है। शताधिक शोध-छात्रोका मार्ग-दर्शन आपने किया है और कर रहे हैं। ऐसे व्यक्तियोकी सख्या हजारोंसे ऊपर है जिनको आपने आवश्यक जानकारी एवं सम्वन्धित विपयसामग्री प्रदान की है। आप शोध-प्रवन्धोके परीक्षक भी रह चुके हैं। आपने लाखसे अधिक हस्तलिखित प्रतियोको खोज निकाला है और अश्रुतपूर्व-अज्ञात ग्रन्थोका विवरण प्रकाशित किया हैं।

---

१ श्री भँवरलालजी नाहटाके सरमरणमे उद्धृत।

आपका विद्याव्यसन उस भगवती भागीरथीके समान है, जिसका सुमधुर जीवन सबको सुलभ होता रहता है। आपको जो भी व्यक्ति, सस्था, विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय, शोधसस्थान सप्रेम निमन्त्रित हैं, आप उनका आग्रह स्वीकार करते हुए अपनी असुविधाओ और कठिनाइयोको ध्यानान्तरित करते हुए, वहाँ पहुँचते हैं और बडे ही शिष्ट तथा जिज्ञासु भावसे सुनते है और स्वाभिमत प्रस्तुत करते हैं। आप अखिल भारतीय स्तरके अनेक आसनोके अभिभाषक रहे हैं, जिनमेंसे कतिपयके नाम उल्लेखनीय हैं —

१ महाकवि सूर्यमल मिश्रण आसन, उदयपुर।

२ नोपानी भाषणमाला, कलकत्ता विश्वविद्यालय, कलकत्ता।

३ मध्य प्रदेश शासन परिषद्, भोपाल।

४ महाराणा कुभा सगीत समारोह, उदयपुर।

५. महाराणा कुभा पचम शताब्दी महोत्सव, चित्तौडगढ।

३ अखिल भारतीय लोक सस्कृति सम्मेलन, वम्बई।

७ व्रज साहित्य मडल (साहित्य विभाग) उज्जैन।

राष्ट्रके विभिन्न राज्योमें हुए आपके सम्मानसे एक वार यह फिर चरितार्थ हो जाता है कि विद्वत्ता नृपत्व कभी भी समान नही है, क्योकि राजाकी पूजा स्वदेशमें होती है जबकि विद्वान् सर्वत्र पूजा जाता है—

विद्वत्व च, नृपत्व च नैव तुल्य कदाचन। स्वदेशे पूज्यते राजा, विद्वान् सर्वत्र पूज्यते ॥

आपने अन्धकारमें उपेक्षित भावसे वँधे पडे ज्ञानभण्डारोके हस्तलिखित ग्रन्थोकी अनेक सूचियाँ वनाकर सारस्वत-ससारको उनका परिचय देते हुए उनके महत्त्वपर विद्वज्जनका ध्यान आकृष्ट किया है। आपने नई शोधकृतियोके आधारपर नई मान्यताएँ स्थापित की है और प्राचीन भूलभरी मान्यताओको अपदस्थ किया है।

आपके द्वारा सम्पन्न सूचीनिर्माणकार्यमें वीकानेरके वृहद् खरतर गच्छ भण्डार बडा उपसराकी सूचीका नाम विशेषत उल्लेखनीय है। इसमें नौ ज्ञान भण्डारोकी लगभग दस हजार प्रतियोको छाटा-पढा और उनका आद्यन्त लिख आपने पूर्ण विवरणके साथ सूचीबद्ध कर उन्हें तैयार किया है। इसी प्रकार आपने श्री जिनचारित्रसूरि ज्ञान भण्डार, उपाध्याय जयचन्दजी ज्ञान भण्डार, श्री जिनकृपाचन्द्रसूरि ज्ञान भण्डार तथा श्री अभय जैन ग्रथालयकी हस्तलिखित करीव ६०००० प्रतियोकी आवश्यक विवरण सहित सूची तैयार की है। आपने अनेक ज्ञानभण्डारोकी सूचियोका सशोधन भी किया है। आपके द्वारा अनेक अप्राप्य एव अज्ञात छोटी-मोटी सैकडो रचनाओकी प्रतिलिपियाँ की गई हैं और करवाई गई है। प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थोके सूचीनिर्माणका श्रम और समय-साध्य कार्य वही कर सकता है, जिसकी बैठक तकडी हो, जिसका धैर्यधन अक्षय्य हो और जिसे शोधरसका चस्का लग चुका हो। कहनेकी आवश्यकता नही है कि ये समस्त गुण हमारे चरितनायक श्री नाहटाजीमें विद्यमान हैं। वे कष्टको कष्ट समझते ही नही, धीरताके वे अगाध सागर हैं—एक स्थान पर निरन्तर घटो तक वैठे रहनेकी उनकी सहज प्रवृत्ति है और 'शोधरस' के तो वे 'चाखनहार' हैं। यही कारण है कि उनकी श्रमशीलता और विद्याव्यसनने इतनी विशाल ग्रन्थसूचियोका निर्माण कर साहित्यससारको और भी सम्पन्न बनाया है।

आपके विद्याव्यसनका इससे अधिक और क्या प्रमाण हो सकता है कि आप स्वाध्याय-तल्लीनतामें खाना-पीना तक भूल जाते है। भोजन-वेलाका अतिक्रमण होते देख घरवालोको बार-बार आपके पास सन्देश

भेजना पडता है कि 'भोजनका समय हो गया है, चलिए।' इस प्रकारके एक दो सन्देश तो श्री नाहटाजी 'हाँ-हूँ' मे टाल देते है, लेकिन अपने बडे भाईका कथन नही टाल सकते। तब वे 'बलादाकृष्ट इव' खडे होकर भोजनार्थ चले जाते है और दो-चार ग्रास लेकर झटिति वापिस आप शोधरसपानाथ स्वाध्यायमे लीन हो जाते है। इस प्रकार उनका अधिकाश समय विद्याव्यसनमें ही व्यतीत होता है। उनपर यह उक्ति सर्वतोभावेन चरितार्थ होती है—

विद्याशास्त्रविनोदेन, कालो गच्छति धीमताम्। व्यसनेन तु मूर्खाणा, निद्रया कलहेन च॥

अर्थात् बुद्धिमानोका समय विद्याशास्त्ररूपी विनोदमें और मूर्खोंका निद्रा, कलह और व्यसनमें व्यतीत होता है।

श्री नाहटाजी विमल-मति हैं, इसलिए आप विद्यातीर्थमें अवगाहन करते है। वे ज्ञानी भी है, अत ज्ञानसरोवरमें स्नान करना उन्हें अभीष्ट रहता है। संयमी और साधक होनेके कारण चित्ततीर्थ और श्री सम्पन्नता उन्हे दानतीर्थका पुण्यभाजन बनाती है। उनके इस विमल चारित्र्यको देखकर निम्नाकित श्लोक स्मृतिपथमे उभर जाता है

विद्यातीर्थे विमलमतय, ज्ञानिन ज्ञानतीर्थे, धारातीर्थे अवनिपतय, योगिनश्चित्ततीर्थे।
पातिव्रत्ये कुलयुवतय, दानतीर्थे धनाढ्या, गगातीर्थे त्वितरमनुजा पातक क्षालयन्ति॥

विमल-मति मानव विद्यातीर्थोमें स्नान करते है। ज्ञानी लोग ज्ञानके तीर्थोमे, राजा असिधारातीर्थमें, योगी चित्ततीर्थमें, कुलागनाएँ पतिसेवाव्रतमें और धनाढ्य दानतीर्थमें स्नान करते हैं। केवल साधारण मानव ही गगातीर्थमें स्नान करते हैं और अपने पाप धोते है।

हमारे चरितनायक श्री नाहटा विशेषत. आध्यात्मिक और विचार-प्रधान साहित्य पढते हैं। कहानी, उपन्यास, नाटक, यात्रा सस्मरण भी आप पढते है, लेकिन यात्रा में। श्री आनन्दघनजी, देवचन्दजी, चिदानन्दजी, राजचन्द्रजी और बुद्धिसागर सूरि आपके प्रिय लेखक-कवि हैं। आपके स्वाध्यायमें उक्त साहित्यकारोकी रचनाओका विशेप प्रयोग-उपयोग होता है। उपन्यासकारोमें आपने चतुरसेन, गुरुदत्त, प्रेमचन्द, प्रसाद और भगवतीप्रसाद वाजपेयीको पढा है। शरत् बाबूके उपन्यासोको आपने अपेक्षाकृत्त अधिक रुचिसे पढा है। दर्शन भी आपका प्रिय विषय रहा है।

आप ग्रन्थप्रेमी ऐसे है कि जहाँ भी जाते हैं, वहाँके हस्तलिखित सग्रहालयोको अवश्य देखते हैं। अगर कोई नई पुस्तक उपलब्ध होती है तो उसका आद्यन्त परिचय लिखकर हाथोहाथ उसे प्रकाशनार्थ भेज देते है। आपकी एक धुन है कि नईसे नई चीजको पाठक-जगत्के सम्मुख अविलम्ब प्रस्तुत किया जाय। यही कारण है कि किसी नूतन तथ्योपलब्धि पर पूरा लेख लिख और प्रकाशनार्थ प्रेपित करनेके उपरान्त ही नाहटाजी दूसरे काममें लगते हैं।

किसी भी पुस्तकको पढनेका श्री नाहटाजीका ढंग अलग-सा है। श्री भवरलालजी नाहटाके शब्दोमें "ग्र थालयमें जो भी ग्र थ आते है, एक बार सभी पर दृष्टि-प्रतिलेखन हो जाता है और जो पढने योग्य है, उन्हे पूरा पढ डालते हैं। उसमे यदि कही भी भूल-भ्रान्ति विदित हुई तो तुरत सशोधन अण्डरलाइन आदि कर डालते है। विशेप सशोधन योग्य हुई तो उन भूल-भ्रान्तियोके सम्बन्धमें लेख भी लिख डालते हैं। प्रेरणादायक गुणोके अनुकरण हेतु जनतामें उन ग्र थोका परिचय कराने वाले नोट भी लिखकर लेखरूपमें प्रकाशित कर देते हैं। कोई भी ज्ञान-भण्डारकी सूची या ग्र थ जो उनके दृष्टिपथसे निकला है, देखते ही विदित हो जायगा, क्योकि उस पर काकाजीके सशोधन-टकण किये रहते है।"[१]

१ श्री भँवरलालजी नाहटाके सस्मरणसे उद्धृत।

श्री नाहटाजी खूब पढते हैं और खूब लिखते हैं। उन्हें 'मूड'का रोग नही लगा है। जब चाहा बडा, छोटा, गभीर, हल्का या भारी लेख लिख दिया। किसी भी विषय पर ५०–६० पृष्ठ और वह भी एक बैठकमें लिख देना, आपके लिए सामान्य बात है। प्रतिदिन इतना अधिक लिखने के कारणोपर प्रकाश डालते हुए आपने जिज्ञासु लेखकको बताया कि 'मैं साठ पत्र-पत्रिकाओमे नियमित रूपसे लिखता हूँ, क्योकि सम्पादकोका विशेष आग्रह रहता है और मैं किसीका आग्रह टालनेमें बडा ही दुर्बल हूँ।'

दूसरे कारण पर प्रकाश डालते हुए आपने बताया कि मेरे पास प्राय हर प्रकारकी लभ्य, अलभ्य, और दुर्लभ पुस्तकोका अच्छा सग्रह है। जो भी अन्य ग्रन्थालयसे आते है। उन्हें भी सग्रह कर लेता हूँ पत्र-पत्रिकाएँ आती है। मै ज्यो-ज्यो अधिक पढता हूँ, मेरा लेखक मचलता है और मै लेखनमे सलग्न हो जाता हूँ।

आपने अपने अधिक लिखनेके तृतीय कारणको उपस्थित करते हुए बताया कि "मै नया-पुराना सब पढता हूँ। उसमे अनेक विचार ऐसे होते है जो मेरे विचारोमे मेल नही खाते। फलस्वरूप वैचारिक मन्थन आरभ हो जाता है और जब तक मै अपने उक्त प्रकारके विचारोको शब्दबद्ध नही कर देता, वे मेरे मस्तिष्कसे बाहर होते ही नही। इसलिए तद्भिन्न विचारोके लिए कोई भी चिन्तनका अवसर नही मिल पाता। यही कारण है कि मैं अपने विचारोको लिखकर अपना मस्तिष्क रिक्तवत् कर लेता हूँ और तब और किसी विचारको प्रश्रय दे पाता हूँ।

अज्ञात सामग्रीको शीघ्रसे शीघ्र प्रकाशमे लानेकी अदम्य ललकने भी आपके लेखन कार्यको बढाया है। इस तथ्यको आपने चतुर्थ कारणके रूपमे प्रस्तुत किया।

पाँचवे कारणको स्पष्ट करते हुए श्री नाहटाजीने बताया कि 'मेरे जीवनमे नियमितता है—भोजन, शयन, स्वाध्याय, सब नियमबद्ध चलते हैं और लेखन भी नियमके अनुसार अग्रेसर होता है। मेरा अनुभव है कि नियमबद्धतासे काम अधिक होता है और अच्छा होता है। थोडे समयमें मैं जो अधिक लिख लेता हूँ, इसका बहुत कुछ श्रेय मैं नियमितताको ही देना चाहता हूँ।

निरन्तर लगन और विद्याव्यसनने श्री नाहटाजीको अनेक भाषा-लिपियोका पारगत ज्ञाता बना दिया है। आप गुजराती, बगाली, हिन्दी, सस्कृत, अपभ्रश, प्राकृत और राजस्थानीके अत्यन्त निष्णात विद्वान् हैं। इन भाषाओमें लिखते भी हैं और पढते भी है। भाषाविज्ञान, इतिहास, आलोचना, दर्शन-धर्म, पुरातत्त्व, कला आपके प्रिय विषय हैं।

श्री नाहटाजीके साहित्यिक ज्ञान-वैभव, उनकी शोधरुचि और सुदृढ लगनके विषयमें उनके भ्रातृ-पुत्र शोधमनीषी, महान् लेखक-आलोचक और सपादक श्री भँवरलालजी नाहटासे अधिक प्रामाणिक और कौन हो सकता है? अत उन्हीकी शब्दावलीसे हमारे चरितनायकके विद्याव्यसनी-सारस्वत स्वरूपको उपसहृत किया जाता है—"आप साहित्यिकोके लिए तीर्थरूप हैं और ज्ञानगरिमाकी चलती-फिरती 'इन-साइक्लोपीडिया' हैं। सैंकडो वर्षोमें एकाध व्यक्ति ही क्वचित् इस प्रकारकी निष्ठावाला और वह भी व्यापारी-वर्गमें प्राप्त हो जाय, तो बहुत समझिये। साधु-सन्तोकी बात दूसरी है। वे भी इतना समय निरन्तर लगावें, वैसे कम मिलते हैं परतु गृहस्थोमें इतनी अप्रमत्त जागरूकता, एक अनुपम आदर्श और दृष्टान्त जैसी ही है।"[1]

हमारे चरितनायक श्री अगरचन्दजी नाहटाका जीवन धर्मसे ओतप्रोत रहा है। आपने धर्मके माध्यमसे अपने जीवनको पवित्र उन्नत और सफल बनानेका निरन्तर प्रयत्न किया है। परम श्रद्धेय जैन आचार्य

---

१ श्री भँवरलाल नाहटाके सस्मरणसे उद्धृत।

श्री जिनकृपाचन्द्रसूरिजीके ज्ञान एव वैराग्य भाव-वर्धक भाषणोका आपपर वडा ही प्रभाव पडा। आपने उपाध्याय श्री सुखसागरजी एव मुनि श्री मगलसागरजीके सारगर्भित आदेश-उपदेशोका निरन्तर चिन्तन-मनन किया। उन्हीकी प्रेरणासे आप जैनधर्मके सिद्धान्त-ग्रन्थोका अध्ययन करने लगे। जब श्री जिनकृपाचन्द्रसूरिजी महाराज बीकानेरमे थे तब आपने कुछ चीजोको आजीवन त्यागनेका गुरु महाराजके सम्मुख सकल्प लिया, जिनमेंसे कतिपय निम्नाकित है—जुआ न खेलना, मास-मदिरा सेवन न करना, परस्त्रीगमन न करना, रात्रि-भोजन न करना, मधु तथा जमीकन्द न खाना, गांजा, तम्बाकू, भाँग न पीना, किसी भी दिशामें १५०० कोससे अधिक दूर नही जाना और पाँच लाखसे अधिक रुपयोका सग्रह नही करना। (भवन भूमि आदि छोडकर)।

आप बचपनसे ही जैनधर्म ग्रन्थोको कठस्थ करने लगे थे। समय-समय पर आनेवाले पर्व और उत्सवोका नियम-पालन भी आप करते रहे। अपने पूज्य पिता एव माताजीकी दैनिक धार्मिक क्रियाओसे प्रेरणा लेकर आपने भी दैनिक, सामायिक प्रतिक्रमण आदि आरम्भ कर दिये थे। चौदह-पन्द्रह वर्षकी उम्रसे आप नित्य सामायिक करने लगे थे। कलकत्तामें सर्वसुखजी नाहटाके साथ नित्य पाठ करते रहनेसे गौतमरास-शत्रुञ्जय रास आदि भी आपको कठस्थ हो गये थे। स्वर्गीय अग्रज श्री अभयराजजीके पास आपने आठ-नौ वर्षकी उम्रमे ही अष्टमी और चतुर्दशीको हरा न खानेका सकल्प ले लिया था। अठारह वर्षकी उम्रसे ही आप नित्य चौविहार, अभक्ष अनन्तकाय त्याग, अचार, वासीत्याग शीतला सातम आदिको ठण्डा न खाना। आर्द्रा नक्षत्रके बाद आम्रफल न खाना आदि सभी श्रावकोचित नियमोमे रह रहे है। खाने-पीनेमे आप रसलोलुप नही है। जब जैसा और जितना मिला, आपने उसे सहर्ष स्वीकार किया। न कभी नमककी शिकायत की और न कभी मिर्चकी, न कच्चेकी और न पक्के की। इसीलिये पाचक आपके विषयमें कहते थे—

"इया ने जिमावणो सगलासूँ सोरो। न लूण मांगै और न
मिरच, न साते री शिकायत करै और न ठंडै री।"

कभी-कभी आप ऊणोदरी करते है। आप प्रातः साय भोजनके अतिरिक्त दिनमें और कुछ नही खाते। प्राय प्रतिदिन पौरसी रहती है। आप चाय कभी नही पीते, दूध भी पौरसी आनेके बाद ही लेते हैं। नवकार श्रीसे पूर्व मुँहमे पानी तक नही डालते है। उपासनामें पूर्ण आस्था रखते है। जब सामायिकमें लग जाते हैं, तब चाहे कितना ही वडा विघ्न क्यो न हो, सामायिक पूरा करके ही उठते है। इस प्रसगमें एक घटना पठितव्य है—

एक बार आपके मकानके सामने ही भयकर अग्निकाण्ड हो गया। पास ही मिट्टीके तेलका गोदाम था। भाईजी वहाँ थे। उन्होने हमारे चरितनायक श्री नाहटाजीको सूचना दी और वहाँसे चले आनेको कहा लेकिन श्री नाहटाजी आसनसे डिगे नही। उन्होने वहीसे कहा, "मैं अभी सामायिकमें हूँ, जो होगा सो होगा। चिन्ता न करें।"

थोडी देरमें अग्नि शान्त हो गयी और नाहटाजीके मकान गोदाम सुरक्षित बच गये। अब तो प्राय प्रतिदिन आप सात-आठ सामायिक कर लेते हैं।

श्री नाहटाजी मूलत अध्यात्म क्षेत्रके साधक हैं। दर्शन, धर्म, प्रतिक्रमण, सामायिकमें उनका मन रमना है। अध्यात्मने ही उन्हें साहित्य-क्षेत्रमें प्रविष्ट किया है। उनकी स्मरणशक्ति सदैव अच्छी रही है। वे बचपनमें सैकडो भक्तिपूजाके पद याद कर चुके थे और उन्हें सस्वर गाकर सामायिक पूजा करते थे। शनै शनै उनका भक्ति-भजनावलीका भाण्डार बढता ही गया। आपने जिन भक्त कवियोके भजन और पद याद कर रक्खे थे, उनके प्रामाणिक जीवनको जाननेकी जिज्ञासाने आपमे शोधकी प्रवृत्तिको जन्म दिया। अपने दैनिक पूजा-विधानमें जो भक्ति पद आप पढते, सुनते और भक्त श्रोताओको सुनाते थे, उससे आपमें पदोकी मार्मिक

व्यजना समझनेकी क्षमता उत्पन्न हुई और एक अच्छे आलोचकके संस्कार आपमें जमने लगे। आपकी अध्यात्मवृत्तिने आपको पवित्रता, नैतिकता और परदु ख-कातरता जैसे अमूल्य गुण दिये है। आपकी दृष्टिमें प्रत्येक धर्मग्रन्थ पवित्र है, उसका प्रतिपद और प्रति अक्षर पवित्र है, उसमें जो ज्ञान और विचार निहित है, वे अपने परिवेश और परिस्थितियोके शाश्वत मूल्य हैं। आपकी इसी आध्यात्मिक साधनाने आपको उच्च-स्तरीय मानवताका विकास दिया है, हर्ष, शोकसे अप्रभावित होनेका अभेद्य कवच दिया हैं, जिसके वलपर आप वज्र-कठोर परिस्थितियोमे भी प्रकृतिस्थ बने रहते हैं।

आपका सुदृढ़ विश्वास है कि मानवभव दुर्लभ है और उसके प्रत्येक क्षणका सदुपयोग करना हमारा सर्वोपरि कर्त्तव्य है। यही कारण है कि श्री नाहटाजी एक क्षण भी व्यर्थमें खोना नही चाहते और न अना-वश्यक बातोमें ही उनकी रुचि है। उनकी साहित्य-साधना आध्यात्मिक साधनाका माध्यम है। वे कहा करते हैं कि प्राचीन भक्ति साहित्य रसास्वादमे इन्द्रियोकी चचलता कम होती है, मनको परमशान्ति मिलती है और नरभवका सदुपयोग होता है। इसी साहित्य व्याजसे भक्तिसाधना, योगसाधना, समत्वसाधना और विकथा बचावका सुखद अवसर प्राप्त करनेके वे आदी हो गये है। उनका हृदय और चिन्तन इतना व्यापक, उदार और अध्यात्मकेन्द्रित हो गया है कि वे राजनीतिके रगमचपर अनुदिन घटनेवाली घटनाओको विशेष महत्त्व नही देते। ऐसा प्रतीत होता है, मानो उस क्षेत्रको समझते हुए भी वे उससे नितान्त विमुख बने हुए हैं। यही कारण है कि वे दैनिक समाचार पत्र नही पढते और न अपने पुस्तकालयमें ऐसा कोई समाचार पत्र खरीदकर मगवाते ही हैं। अगर उनके सामने कोई राजनीतिका भक्त कुछ चर्चा भी चला देता है तो वे किसी धार्मिक पत्रिकाका लेख पढना आरम्भ कर देते हैं और वक्ताकी ओरसे ध्यानान्तरित हो जाते हैं।

युगो वीत गये, श्री नाहटाजीने कोई सिनेमा नही देखा और खान-पानमें, रहन-सहनमें विशेष रुचि प्रदर्शित नहीं की। आपके जो विचार शतश पत्रिकाओंमें प्रकाशित होते है, उनका एक ही प्रबल स्वर है और वह है 'आध्यात्मिकताका स्वर'। इसलिए श्री नाहटाजीके लिए यह कथन सर्वथा सत्य और समीचीन है कि उनका जीवनरस अध्यात्म है वे उसीमें जीते हैं और उसीमें जीना चाहते हैं।

श्री नाहटाजी अध्यात्मचर्चा करना भी चाहते हैं और सुनने-सुनानेके इच्छुक भी रहते है। विकथा चर्चामें वे जितने कृपण है, सत्कथामें उतने ही उदार, उत्साही और अतृप्त। अगर उन्हे उनकी जोडीका कोई पात्र, अध्यात्म प्रेमी मिल जाए तो घटो और रात्रियाँ विता देंगे और उससे और अधिक समय देनेके लिए आग्रह करेंगे। सत्सग, तीर्थाटन और अध्यात्म-पुरुषोके सस्मरण-अनुभव सुनानेमें श्री नाहटाजीको आनन्द आता है और यह जानकर प्रसन्न भी होते हैं कि सज्जन-सकीर्त्तनके माध्यमसे वे पुण्यार्जन कर रहे है। नीचे हम श्री नाहटाजीके सत्संगमें सुने कतिपय सस्मरण-प्रसग उन्हीकी शब्दावलीमें प्रस्तुत कर रहे है—

"सवत् १९८४-८५ में श्री कृपाचन्द्रसूरि और उनके शिष्य सुखसागरजीकी प्रेरणासे हम सपरिवार तीर्थयात्रापर गये। शत्रुञ्जय, पाटण और अनेक तीर्थोके दर्शन करते हुए आबू पहुँचे और योगीराज मुनिश्री शान्तिविजयजी महाराजके दर्शन किये। देलवाडा जाते ये दर्शन रास्तेमे हुए थे। उन्होने फरमाया—सोते-जागते, उठते-वैठते 'ॐ अर्हं नम'का जाप करना चाहिये। हमने पुन दर्शनकी इच्छा व्यक्त करते हुए योगीराजसे समय माँगा तो आपने स्वर-विचारकर कहा, नही आना, मिलना नही होगा। हमने दर्शनकी प्रवल इच्छाकी पूर्तिके लिए योगीराजको दिन भर खूब ढूँढा परन्तु वे नही मिले। उन्होने जो फरमा दिया था, वही हुआ और हम दर्शनसे वंचित ही रहे।"

योगीराजके विषयमें और अधिक बताते हुए श्री नाहटाजीने कहना जारी रखा "श्री योगीराजकी स्मृति विलक्षण थी। वे अलौकिक अनुभूतियोके पुरुष थे। उनके सानिध्यमे चित्त परमशान्तिसुखका अनुभव

करता था। एकवार मिलन-प्रसगमें योगीराज श्री शान्तिविजयजीने कहा, 'नाहटा आगे आओ'। मैं आदेशपालन करता हुआ श्री चरणोके समीप जा वैठा। उन्होने फरमाया 'तुम ठीक हो नाहटा'। प्रसग यह था कि श्री ज्ञानसुन्दरजीने ओसवालोकी उत्पत्तिके सम्वन्धमें एक गद्य व लेख लिखकर उसका प्रकाशन कराया था। मुझे वे तथ्य प्रामाणिक प्रतीत नही हुए और उनका प्रतिवाद किया। योगीराजको इस पूर्वपक्ष और उत्तर पक्षका पूर्णज्ञान था और पूर्वापरका विचारकर उन्होने अपना निर्णय मेरे पक्षमें दिया था।"

धार्मिक सम्मरण-प्रसगमें श्री नाहटाजीने वताया—"एक वार मैं प्रतिष्ठा-प्रसगमें उम्मेदपुर गया। वहाँ श्री विजयशातिसूरिजी व ललितसूरिजीकी देख-रेखमें वह आयोजन वडी धूमधामसे हो रहा था। फलोदीके श्री फूलचन्दजी झावक, पू० शातिसूरिजीके पाम ही वैठे थे। श्री शातिसूरिजी महाराज आर्यसमाज दम्पतीके सम्मुख मूर्त्तिपूजाका मडन प्रस्तुत कर रहे थे। उनकी प्रवहमान वाग्धारा मंडन पक्षके प्रमाणोका पुंज और आत्मविश्वास सद्योतक अभिव्यक्तिसे स्पष्ट आभाम होता था कि कोई अलौकिक शक्ति उन्हें साहाय्य दे रही है।

श्री नाहटाजी ने अपने अनुभव प्रमगमें वताया कि एक वार उमेदपुरमें श्री विजयशातिसूरिकी उपस्थितिमें आगे पीछे वैठनेको लेकर वाद-विवाद चला। वाग्युद्ध और फिर डडे चले—अनेक लोगोमें उथल-पुथल मच गई। लोग उठकर खडे हो गए। और आचार्य शान्तिसूरि जी की शातिको कोसने लगे। लेकिन गुरु पू० शातिसूरिजी महाराजके भव्य मुख मडलपर कोई विकृति दृष्टिगोचर नही हुई, जबकि यह समस्त विवाद काण्ड उनके सम्मुख ही हुआ था। नाहटाजी कहने लगे कि 'गुरु महाराजके उस निर्विकार व प्रशान्त व्यक्तित्वका मुझपर वडा ही प्रभाव पडा। उनकी धीरता और सहनशीलता मेरे लिए श्रद्धेय थी। वह विकट परिस्थिति ऐसी ही थी, जिसमें कोई भी वीर अधीर वन जाता, पर गुरुदेव नही वने। मेरे मानसमें उसी समय एक सूक्ति जग गयी

"विकार हेतौ सति विक्रियन्ते, येषा न चेतासि त एव धीरा"

विकार हेतुकी उपस्थितिमें भी जो विकारग्रस्त नही होते धीर वही हैं।

श्री नाहटाजी हम्पीके जैन योगी पुरुप श्री सहजानन्दघनजीके आश्रम भी पधारते रहे हैं। वीकानेरके उपनगर उदयरामसर गिववाडी आदिमें भी उनके प्रवास आयोजित किये गये। श्री नाहटाजीके कारण अनेक जैन जैनेतर उनसे प्रभावित होते रहे हैं। वे महान् आत्मानुभवी योगीराज थे और योग-साधनाका अच्छा अभ्यास वे जानते तथा वताते थे। वीसवी शताव्दीके आरभसे अव तक हुए जैन महापुरुषोमें आप मूर्धन्य कोटिके सन्त, ज्ञानी और साधक थे।

श्री नाहटाजी ने इसी प्रसगमें वताया कि भद्रकरविजयजी महाराज वडे आध्यात्मिक पुरुप है। आपने आवूमें उनके दर्शन किये। श्री नाहटाजीका धार्मिक दृष्टिकोण उदार है। आपके लिए किसी भी धर्म अथवा सम्प्रदायका आध्यात्मिक सत उतना ही पूज्य है, जितना कि जैनधर्मका। आपकी दृष्टिमें सत सव समानभावसे पूजित होने चाहिये। हमें वस्त्रोके रगोपर ध्यान नही देना चाहिये—किसी रगका वस्त्र हो—वह पवित्रज्ञान पुज एव सदाचारी अगर हैं तो हमारा पूज्य है। अपने धर्मयात्राप्रसगमें आपने निरजन सम्प्रदायके श्री मगलदासजी महाराज एव अनेको साधु-महात्माओके विद्वानोके दर्शन किए। गृहस्थी अध्यात्मप्रेमी श्री मणि-भाई पादराकरके साथ भी आपका सत्सग होता था। श्री शुभकरणजी वोथरा जयपुरवालोके साथ आपकी तत्त्वज्ञानकी चर्चा होती रही है और यह चर्चा रात-रातभर चलती रहती। आपने वैदिक धर्मावलम्वी सतो, मठाधीशो-मडलेश्वरोको कभी हाथसे नही जाने दिया। आप जैन पत्र-पत्रिकाओके जितने नियमित और

ध्यानरत पाठक हैं, उतने सजग पाठक कल्याण आदि मासिक पत्रके है। आपके धर्म प्रधान लेख भी इसमें प्राय छपते रहते है।

श्री नाहटाजीकी रुचि तीर्थाटनमें विशेष है। वे काम-काजमें से समय निकालकर धार्मिकयात्रापर प्राय चले ही जाते हैं। उनके लिए पाटण और पाडीचेरी, कलकत्ता और काची, पुरी और पालीताना, सब तीर्थस्थान श्रद्धास्थल है। उन्होने पावापुरी, रामेश्वरम्, मीनाक्षी, वाराणसी, अरविन्द आश्रम, रामकिशन आश्रम, अयोध्या, मथुरा जैसे तीर्थोंमें भ्रमण ही नही किया, भक्तिभावके साथ उसका सदुपयोग किया है। श्रीनाहटाजीने ध्यान साधनाका प्रयत्न किया, लेकिन उससे आपके मनकी चचलता कम नही हुई, अत आपको योगसाधना और उसकी प्रक्रिया छोडनी पडी और मनकी एकाग्रताके लिए स्वाध्यायको अपनाना पडा। स्वाध्यायने आपको चित्तवृत्तिका निरोध तो दिया ही, साथमें ज्ञान और आनन्द अनुभूति भी प्रदान की। आपको भक्तिपद सुनने और सुनानेका बडा चाव रहता है। भाव-विभोर, भक्ति रस-विस्मृत, भक्त हृदयके सच्चे सगायन उद्गार सुनकर आप खो-से जाते है, आपकी स्थिति समाधिस्थ योगी जैसी हो जाती है और जब आप स्वय भक्तिपद गाते हैं तो श्रोतागण मुग्ध होकर रसलीन हो जाता है। सब इच्छा आपके सुमधुर मुखसे अधिकसे अधिक सुननेकी रहती है। बम्बई विश्वविद्यालयके गुजराती विभागके अध्यक्ष डॉ० रमणलाल शाहके स्वसुर एव श्री ताजमलजी बोथरादि आपके पद-भजनोके गायन पर मुग्ध हैं। वे साग्रह कहते हैं—"नाहटाजी! आपके मुखसे वो भजन सुननेका है—बस! एक तो और सुनाइये ही" और हमारे चरितनायक श्री नाहटाजी गाते हैं, फिर गाते हैं और गाते ही जाते हैं। जिस प्रकार हरि अनादि है उनकी कथा भी अनन्त है—ठीक उसी प्रकार भावुक भक्त हृदयोके अगाध भाव कोश मडलीमें सान्त कब हुए हैं—वही तो एक ऐसा स्थल है जहाँ गाने वालोको गाते जानेकी और सुनने वालोको अधिक सुनते रहनेकी ललक विवश करती है। भक्त नाहटाकी जो स्थिति बम्बईमें है, वही कलकत्तामें भी। श्री हनुमानमलजी बोथरादिके प्रयत्नसे सत्सगका आयोजन किया जाता है, भावुक भक्त मडली उपस्थित होती है और हमारे चरितनायक श्री नाहटाजी अपने कलकठोसे भावविभोर कर देनेवाले पद सुनाते हैं, साथमें उनका हृदयंगमकारी विवेचन भी प्रस्तुत करते है। इस भक्ति गोष्ठीमें जो अनिर्वचनीय आनन्द उपलब्ध होता है, उसका वर्णन इस तुच्छ लेखनीसे होना नितान्त असभव है।

वस्तुत' नाहटाजीके दो ही व्यसन हैं। आध्यात्मिक भक्ति-व्यसन और स्वाध्याय, शोध व विद्याव्यसन। गार्हस्थ्य जीवनमें कितनी ही व्यस्तता हो, इन दोनो व्यसनोकी प्राप्तिके लिए श्री नाहटाजी समय निकाल ही लेते हैं। धर्मगुरुओके व्याख्यानश्रवणमें कभी आलस्य नही दिखाते, समय पर वहाँ पहुँचते है और आद्यन्त श्रवण कर उसपर चिन्तन-मनन करते हुए घर लौटते हैं। नाहटाजी अध्यात्मप्रेमी हैं और आध्यात्मिक दृष्टिसे जो जितना ऊँचा साधक है, उनके हृदयमें उसके लिए उतना ही ऊँचा स्थान है। एक दिन वार्त्ता प्रसगमें उन्होने कहा था—"मेरी दृष्टिमें म० गान्धी जैसा महापुरुष इन सदियोमें नही हुआ—जब मैंने सुना कि महात्माजीको गोली मार दी गयी तो मैं सामायिक करते-करते रो पडा—मुझे इतना दु ख और रुदन मेरे पिताजीके निधन पर भी नही हुआ था—जितना महात्माजीकी हत्या पर"।

गन्ध. सुवर्णे, फलमिक्षुदण्डे, नाकारि पुष्प खलु चन्दनस्य।
विद्वान् धनो, नृपति. दीर्घजीवी, धातु पुरा कोऽपि न बुद्धिदोऽभूत्॥

सोनेमें गन्ध, ईखमें फल, चन्दनमें पुष्प, विद्वान् धनी और नृपतिको विधाताने दीर्घजीवी नही बनाया, क्योकि वैसा करनेके लिए किसीने उसे सुझाया ही नही।

हमारे चरितनायक श्री अगरचन्दजी नाहटाके लिए यह उक्ति यथार्थ नही है क्योकि वे विद्वान् भी हैं और धनी भी है। उनकी गणना अच्छे सीमन्त सेठोमें की जाती है। पजाव, वगाल, आसाम और दिल्ली प्रभृति नगरोमें आपका अच्छा व्यापार है और वह भी आजका नही, सैकडो वर्ष पुराना। साहित्य ससारमें जिस प्रकार आपकी ख्याति है, विद्वान् आपकी बातको सुप्रामाणिक समझते हैं, उसी प्रकार व्यापार-क्षेत्रमें भी आपकी सुप्रतिष्ठा है, व्यापारी आपकी सम्मतिको जैसे अनुपालनार्थ ही सुनते हैं। जिस प्रकार समाजमें आपकी लोकप्रियता, नि:स्पृहता और निर्लोभता प्रसिद्ध है, उसी प्रकार नाहटा वशमें भी आपकी अत्यन्त प्रतिष्ठा है। वडे-छोटे सव आपको श्रद्धाभाजन समझते हैं। परिवारकी पवित्र भावना है कि जिस दुकानमें आपका नाम रहता है, वहाँ सुख, शान्ति और श्री सम्पन्नताका अधिवास होता है। यही कारण है कि परिवारकी अधिकाश दुकानोमें आपका नाम दिया गया है—जैसे—

१ श्री मेघराज अगरचन्द—संवत् १९८० में स्थापित वडी गद्दी, सिलहट

२ श्री मेघराज अगरचन्द—रिटेल कपडेकी दुकान, सिलहट

३. श्री अगरचन्द नाहटा—गल्लेकी दुकान, सिलहट

४ श्री अभयकरण अगरचन्द—थापड

५. श्री अभयकरण अगरचन्द—वोलपुर

६ श्री अगरचन्द नाहटा—वावुर हाट

७. श्री ए० सी० नाहटा एण्ड कपनी—वम्वई

साहित्य ससारने जिम प्रकार आपका अनेकश सम्मान किया है, और अनुवर्ष अधिकसे अधिक सम्मानित करनेको लालायित है, उसी प्रकार व्यापारी वर्गने भी आपका भूरिश सम्मान किया है। सवत् १९९० के आसपासकी एक ऐसी ही घटना हमारे चरितनायकके मुखसे सुननेको मिली थी, उसे प्राय उन्हींके शब्दोमें उद्धृत कर रहा हूँ—

"वावुरहाटकी हमारी दूकान विशेष प्रसिद्ध थी, यह ढाकाके पास थी, ताती कपडेका बाजार था, मारवाडीकी यही दुकान थी। वहाँ हमारे मुनीमजी थे किसनलालजी बुच्चा। वडे जोरदार आदमी, साख भी जोरदार—साहसी कर्मठ, अपार सम्पदाके स्वामी जैसा प्रभाव—जैसे सारे हाटको खरीदनेकी शक्ति रखते हो—सबसे अधिक माल खरीदते थे, वडे-वडे सशस्त्र सिपाही सुरक्षा और शानके लिए वाहर खडे रहते। उस गाँवके जमीदार पर नाहटा-व्यापार और वशका इतना अधिक प्रभाव पडा कि जव हमारे चरितनायक वहाँ प्रथम वार पहुँचे तो उनके लिए जमीदार साहवने वडी सुन्दर चमकती हुई सुसज्जित कहारोकी पालकी भेजी, सैकडो आदमी स्वागतके लिए भेजे, पुष्प मालाओकी तो सख्या ही नही थी, अपने अधिकारियोको समारोहके लिए भेजे—सारा गाँव ही स्वागतके लिए जैसे उमड पडा, हर जवानपर एक ही वाक्य था "सेठ अगरचन्द नाहटा आइसँ, अगरचन्द नाहटा आइसँ"।

श्री नाहटाजीकी व्यापार और साहित्य दोनोमें समान गति है। आप अपने सेवा भावी कर्मचारियोको एक मासमें जो व्यवस्था और मार्गदर्शन देते है, वह साल भरके लिए पर्याप्त रहता है। वर्षान्तमें आप फिर निर्देश दे देते हैं, जिसका स्वरूप अग्रिम वर्ष के लिए पर्याप्त रहता है। और इस प्रकार आपके पथ-दर्शनमें व्यापार चलता रहता है। आप वर्ष भरके खाता पत्रोकी परीक्षा कुछ ही घटोमें कर देनेमें सक्षम है और इसी तीव्र गतिसे सालभरका काम घटोमें ही जाँच लेते हैं। नाहटावशके विभिन्न स्थानोमें चल रहे व्यापार-व्यवसायमें जो सवसे वडा और तनिक पेचीदा है, उस व्यापारको आप ही सभालते है और सबसे कम समय में। एक वार आपने प्रतिदिनके मालके स्टाकको जाँचते रहनेका आदेश दिया, गुमाश्तोने इस कामको असभव

बताते हुए कहा कि सारे मालको रोज चैक करना उनके बलबूतेसे बाहरकी चीज है। श्री नाहटाजी ने उनकी असुविधाओको और असमर्थताओंको बडे ध्यानसे सुना और एक अतिरिक्त कर्मचारीकी नियुक्ति करके उसे ऐसा सुगम पथ बताया कि वह काम जो कठिन समझा जाता था, बडी सरलतासे और आनन-फाननमें होने लगा। मुनीम-गुमाश्ते सेठ साहबकी इस प्रतिभासे अभिभूत हो गये। जो व्यापार आप देखते हैं, आपने उसकी नई पद्धति दे दी है। उसपर चलनेसे समस्त कार्य सुखकर हो गया है और लाभ-हानि दर्पणके समान प्रस्तुत हो जाते हैं, इससे समय और श्रम दोनोकी बचत होती है। आपकी बैठक बडी सशक्त है। जबतक सारा हिसाब नही मिल जाता, आप उठनेका नाम तक नही लेते और वर्षोका काम कुछ ही घटोमें सम्पूर्ण कर जाच तत्सम्बन्धी निर्देश दे झटिति दूसरा काम समाप्त करनेकी धुनमें रम जाते हैं। आपका ध्यान घाटे और डूबनके कारणोको पकडनेमें बडा सिद्धहस्त है, इसलिए उनकी पुनरावृत्ति प्राय नही होने दी जाती। आप अपने मुनीमो-गुमाश्तो आदिकी असुविधाओको पूरे ध्यानसे सुनते हैं और उन्हे दूर करते हैं। आपके किसी भी कार्यमें विलम्ब अथवा टालमटोलकी स्थिति नही रहती। जो त्वरा निर्णय लेनेमें आप दिखाते हैं, वही त्वरा उसके क्रियान्वयनमें रहती है और उससे भी अधिक उसके भावी परिणामोको जाँचनेपर। यही कारण है कि आपकी सजगता और सतर्कताके कारण व्यापारश्री अनुदिन समृद्ध होती जा रही है। पहिले आप लगभग आठ-दस मास तक व्यापार सलग्न रहते थे, लेकिन अब आठ-दस मास साहित्यसेवामें तल्लीन रहते हैं। वर्षमें एक-दो मास व्यापारजाचके लिए बडी कठिनाईसे निकाल पाते है। उन दो मासोमें भी साहित्यसेवा साथ-साथ होती ही रहती है।

ज्यो-ज्यो आपकी उम्र अधिक होती जा रही है, त्यो-त्यो आपकी चिकीर्षा बढती जा रही है, आप व्यापारसे और भी समय बचाकर साहित्यसेवामें तल्लीन हो जाना चाहते है। इस सदर्भमें आपके कतिपय वाक्य बडे ही हृदयहारक हैं। आपके वे वाक्य वाक्य ही नही, अपितु स्वर्णाक्षरोमें मँढाने योग्य एक महामहिम सारस्वतरत्नके आन्तरिक उद्गार हैं। वे प्रेरणाके स्रोत और प्रच्छन्न वेदनाके कदाचित् व्यजक भी हैं।

"काम बहुत है, समय कम है, दूसरा कर नही सकता। इसलिए अधिक-से-अधिक करलेनेकी प्रबल इच्छा है। व्यापारिक कामोमें भी साहित्यके काम बन्द नही करता, व्यापार तो सभाला हुआ है, सभल भी जायेगा, लेकिन साहित्यको कौन सभालेगा—चि० भवरलाल! वह केवल छहमास ही तो मुझसे छोटा है, अब मेरा साहित्यिक काम कभी बन्द नही रहता, वह तो मेरी श्वासके साथ बँधा हुआ है—वह बन्द तभी होगा, जब मेरी श्वास बन्द होगी।"[1]

उत्तु ग शिखर मारवाडी पगडी, बलखाती सघन निर्दंभ मूँछें, भव्य गौरवमयी मुखाकृति, निर्मल नेत्र, भौंहें, सघन अन्वेषणरत सूक्ष्मग्राहिणी दृष्टि, महापुरुषलक्षणोपेत कर्णरोम, सुन्दर स्थूलनासिकौष्ठ, व्यूढोरस्क, वृषस्कन्ध, भारी शरीर, सामान्य कद, बन्द गलेका लम्बा कोट, उसपर पडा आवर्त्तक सुखासीन श्वेत उत्तरीय, राजस्थानी विधिसे परिधीत धौतवस्त्र और साधारण उपानत्। यह बाह्य स्वरूप है श्री अगरचन्द जी नाहटाका, उस महामहिम मूर्धन्य विद्वान्का, जो लक्ष्मीपतियोमें श्रीमन्त सेठ है तो सरस्वती पुत्रोमे परम सारस्वत, शोधछात्रोका जो परम सबल है तो निराश्रितोका प्रबल आत्मबल। उसने ज्यो-ज्यो विद्यागुण अर्जित किया है, त्यो-त्यो वह विनयावनत होता गया है। विद्या अपने आपमें एक गुण है और वह गुण जब विनयोपेत हो जाता है, तब उसकी शोभा लोचनानन्ददायक काञ्चनमणि सयोगसे न्यून नही होती

विद्याविनयोपेतो हरति न चेतासि कस्य मनुजस्य।
काञ्चनमणिसयोगो, नो जनयति कस्य लोचनानन्दम्॥

१ लेखकके साथ श्री अगरचन्दजी नाहटाका वार्ता-प्रसग।

हमारे चरितनायक श्री नाहटाजी अत्यन्त धर्मभीरु है, उनका जीवनरस आध्यात्मिक साधना है, इसलिए वे मन, वचन और कर्मसे किसीका भी अहित करना तो क्या, सोचना भी नही चाहते, वे असत्य भाषण-परुषवचन और प्रवचनकर्मसे वहुत दूर रहनेके अभ्यासी हैं। निरन्तर स्वाध्याय, तपश्चरणसे आत्म-कल्याणके ऊर्ध्वपथको प्राप्त करनेकी सतत सदिच्छता उनमें जाग्रत है, वे ज्ञानयज्ञके पुरोधा हैं, विद्वानोका हार्दिक नमन और वन्दन उनका नित्य-नैमित्तिक कर्म है। सस्कृत कविकी निम्नाकित भावराशिके आलम्बन मानो श्री नाहटाजी ही रहे हो

सत्य तपो ज्ञानमहिंसता च, विद्वत्प्रणाम च सुशीलता च।
एतानि यो धारयते स विद्वान्, न केवल यः पठते स विद्वान्॥

केवल पुस्तक अध्येता विद्वान् नही होता, विद्वान् तो वह हैं जो सत्य, तप, ज्ञान, अहिंसा, विद्वत्-नमन और सुशीलता जैसे सद्गुणोको धारण करता है।

श्री नाहटाजी विद्वानोंके भक्त और गुणग्राही पुरुप है। वे किसीको देकर जितने प्रसन्न होते है, उतने लेकर नही। उनकी मान्यता है कि जो अपूर्व आनन्द त्यागमे है, वह ग्रहणमे नही है। यह उनका अभिलेख है कि अगर किसीने उनके लिए थोडा भी श्रम किया तो श्री नाहटाने उसके लिए दस गुणित किया। उनकी विद्वत्-पूजाका इससे वडा प्रमाण और क्या हो सकता है कि वे प्रतिवर्ष किसी न किसी विद्वान्का समारोहपूर्वक स्वागत सम्मान करते हैं और 'पत्र पुष्प फल तोय'के रूपमे १०१) रुपयोकी राशि सश्रद्धा अर्पण करते है। इस स्वागत कार्यक्रममें वे वहुतसे राजस्थानी विद्वानोको उक्त राशि प्रदान पुरस्सर सम्मानित कर चुके है

श्री नाहटाजीके व्यक्तित्वमें परगुणदर्शन और परमहत्त्वप्रकाशनकी अदम्य भावना और विशिष्ट आकाक्षा सन्निहित है। उनके द्वारा विविध विद्वानोको समर्पित ग्रथोकी समर्पणभाषामें उक्त तथ्यका स्पष्ट अभिव्यजन होता है। 'वीकानेर जैन लेख सग्रह'को 'स्वर्गीय श्री पूरणचन्द्रजी नाहर'की पवित्र स्मृतिमें समर्पित करते हुए उन्होने लिखा है—

"जिन्होंने अपना तन-मन-धन और सारा जीवन जैन पुरातत्त्व, साहित्य, सस्कृति और कलाके सग्रह, सरक्षण, उन्नयन और प्रकाशनमें लगा दिया और जिनके आन्तरिक प्रेम, सहयोग और सौहार्दने हमें निरन्तर सरस्वती-उपासनाकी सत्प्रेरणा दी, उन्ही श्रद्धेय स्वनामधन्य स्वर्गीय वावू पूरणचन्दजी नाहरकी पवित्र स्मृतिमें सादर समर्पित ‥ · "

समर्पणकी भावव्यजनासे स्पष्ट हो जाता है कि श्री नाहटाजी जैसा व्यक्तित्व उसी पर रीझता है जिसने तन-मन-धन और अपने जीवन तकको पुरातत्त्व, साहित्य, सस्कृति और कलाके सग्रह, सरक्षण, उन्नयन और प्रकाशनमें अर्पण कर दिया हो, मैं तो श्री नाहरजीको धन्यवाद देना चाहता हूँ जिन्होने श्री नाहटा जैसे निकष-पुरुषसे उक्त प्रकारकी गुण-गरिमा मडित शब्दावली प्राप्त कर ली। इस सन्दर्भमे श्री नैषधकारके निम्नाकित श्लोकका भावार्थ कितना समीचीन और अवसरोचित प्रतीत होता है। कविने वैदर्भीकी प्रशस्तिमें भावाभिव्यजन किया है कि वह विदर्भ कन्या दमयन्ती धन्य है, जिसने अपने गुणप्रकर्षसे निषधराज-नलको भी आकृष्ट कर लिया। चन्द्रिकाकी प्रशसा इससे अधिक और क्या हो सकती है, जो सागरमें भी ज्वार ला देती है।

"धन्यासि वैदर्भि! गुणैरुदारै, यया समाकृष्यत् नैषधोऽपि।
इत स्तुति का खलु चन्द्रिकाया, यदब्धिमभ्युत्तरलीकरोति॥

श्री नाहटाजीके ग्रन्थ-समर्पणकी सवसे वडी विशेषता यह है कि या तो वे दिवगतोको समर्पण करते

है, अथवा पारिवारिकोको अथवा वीतराग सन्तोको अथवा उपयुक्त पात्रोको । उनके इस समर्पण-मूल्याकनसे यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि श्री नाहटाजी भौतिक-समृद्धि अथवा किसी एपणाके निमित्त आदर्श और पात्रताका गला नही घोटते । उनके समर्पणमें पात्रगत औचित्यका पूरा ध्यान रक्खा जाता है । उनका समर्पण अन्तर्ध्वनिसे सम्वद्ध अधिक है और लौकिक तुष्टिसे कम । यही कारण है कि श्री नाहटाजीने अपना कोई ग्रथ किसी स्वार्थ विशेप की सम्पूर्तिके निकृष्टतम उद्देश्यकी अवाप्तिके लिए—किसी अनधिकारीको समर्पित नही किया । इससे वडी गुण-ग्राहकता और क्या हो सकती है ? यह उच्चस्तरकी निष्काम सेवा-भावना है, जिसकी आज सर्वाधिक आवश्यकता है ।

श्री पूर्णचन्द्रजी नाहरने अगर अपने जीवनको साहित्य एव कला-सेवामें लगा दिया था तो मोहनलाल दलीचद देसाईने जैन एव गुजराती साहित्य उद्धार-सरक्षणके लिए अपना सर्वस्व होम दिया था । वे निष्णात साहित्य महारथी थे, 'जैन गुर्जर कविओ भाग १ २ ३ 'जैनसाहित्य नो सक्षिप्त इतिहास' जैसे अमर ग्रंथ रत्न उनके कीर्तिशरीरको अमर बनानेके लिए पर्याप्त हैं । हमारे चरितनायक श्री नाहटाजीने अपना ग्रथ 'समयसुन्दर कृति कुसुमाञ्जली' इन्ही प्रात स्मरणीय श्री देसाईको समर्पित किया है क्योकि श्री देसाई लिखित 'कविवर समयसुन्दर' निबधने ही आपको साहित्यक्षेत्रमें आगे बढनेकी प्रेरणा दी थी। इसीको कहते है—

'त्वदीय वस्तु गोविन्द ! तुभ्यमेव समर्पये'

किसी सारस्वतसे उऋण होनेका कितना श्लाघ्य पथ है यह जिसे श्री नाहटाजीने अपना रक्खा है ।-'तेरा तुझको सौपते, क्या लागत है मोर' जैसी पवित्र भावनाका दर्शन हमें श्री नाहटा-लिखित ग्रथ 'युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरि'के समर्पण सन्दर्भमें भी उपलब्ध होता है । उक्त ग्रथ परमपूज्य श्री जिनकृपाचन्द्रसूरिजी महाराजको श्री नाहटाने निम्नाकित शब्दावलीमें समर्पित किया है, जो पठितव्य है —

"आपके सदुपदेशसे हमारे हृदयक्षेत्रमें साहित्यानुराग और साहित्यसेवाका जो भव्य बीज प्रस्फुटित और पल्लवित हुआ है, उसीके फलस्वरूप यह प्रथम पुष्पाञ्जलि प्रेम श्रद्धा और भक्तिपूर्वक आपके कर-कमलोमें सादर समर्पित है"—

वस्तुत इस समर्पणमें इतिहास है, यथार्थ छिपा बैठा है । श्री नाहटाजीके अपने गुरुदेवके प्रति अभिव्यक्त ये उद्‌गार एक घटना है जो सवत् १९८४में घटित हुई थी ।

साराश यह है कि नाहटाजीने अपनी श्रद्धाके पुष्प उन्ही लोगोके चरणोमें चढाये है जो अत्यन्त कर्मठ, त्यागी, परिश्रमी और लगनके धनी रहे हैं और जिन्होने साहित्य, सस्कृति और उनके सरक्षण-उन्नयन तथा प्रचार-प्रसारके लिए अपना सर्वस्व होम दिया है । इस प्रसगमें लोगोका यह कथन अक्षरश सत्य प्रतीत-होता है कि श्री नाहटाजीके मुखसे अनौपचारिक भावमूलक हार्दिक 'शाबाशी' लेनी बडी कठिन है । "वे सौ दे देंगे लेकिन 'शाबाशी' नही देंगे ।" इसका कारण यह है कि साधुवाद अत्यन्त अभिभूत मनकी प्रतिक्रिया है और श्री नाहटाजी जैसे कर्मठ, श्रमशील, विद्वान् लेखकको अभिभूत करना साधारण खेल नही है । इसलिए उनके 'शाबाशी'की आशा वही रख सकता है, जिसने कबीरके निम्नाकित दोहोका सार केवल समझा ही न हो अपितु उसे जीवनमें सघटित भी कर लिया हो

सीस उतारै भुइ धरै, ता पर राखे पाँव।
दास कबीरा यो कहै, ऐसा होय तो आव ॥१०२॥
कसत कसौटी जो टिकै, ताको शब्द सुनाय।
सोई हमरा बस है, कह कबीर समुझाय ॥१३०॥

साईं सेवत जल गई, मास न रहिया देह।
साईं जब लगि सेइहो, यह तन होय न खेह।।१७१।।
ढारसु लखु मरजीवको, धँसि कै पैठि पताल।
जीव अटक मानै नही, गहि ले निकर्‍यो लाल।।२६६।।[1]

हमारा तात्पर्य यह है कि श्री नाहटाजी की गुणग्रहण भावना अत्यन्त मृदु है, लेकिन गुण ससिद्धिकी उनकी कसौटी अत्यन्त कठोर। उनके सहस्रों मित्रो, आदरणीयो-पूज्योमेंसे कितने हैं जो उन्हें अभिभूत कर सके हैं ? वस्तुतः बहुत कम।

'भये न केते जगतके, चतुर चितेरे चूर—बिहारी।

श्री नाहटाजी किसी वस्तुका, धनका अथवा समय-श्रमका अपव्यय नही करते। अत' वे सुव्ययी हैं। उनकी मान्यता है कि प्रत्येक वस्तुका अधिकसे अधिक उपयोग-लाभ लेना चाहिये; जो ऐसा नही करते, श्री नाहटाजीकी दृष्टिमें वे या तो नादान हैं अथवा मदान्ध। उनका सुप्रतिष्ठित तर्क है फलको आधा ही खाकर फेंक देनेमें जैसे वुद्धिमत्ता नही है अथवा किसी अभ्यास पुस्तिकाका केवल आधा पृष्ठ लिखकर छोड देनेमें कोई सार नही है, उसी प्रकार प्रत्येक उपभोग्य वस्तुको पूरे उपभोगमें न लेना कमसे कम समझदारी तो नही है। यह कथन श्री नाहटाजीके लिए अक्षरश सत्य है कि जहाँ कार्डसे काम चलता है, वहाँ लिफाफा नही खर्चेंगे, वे साहित्यके रोकडिये या मुनीम हैं।[2] लेकिन इसका तात्पर्य यह कदापि नही है कि श्री नाहटाजी कजूस और वद्धमुष्टि है। वास्तविकता तो यह है कि जिस व्यक्तिने लाखो रुपये व्यय करके कला और सरस्वती-का उद्धार किया और सौ पचास प्रतिदिन व्यय कर कलात्मक वस्तुएँ अथवा पाण्डुलिपियाँ अब भी खरीदता है, जो भूखो, पीडितो और कष्टप्राप्त व्यक्तियोको अन्न, वस्त्र, औषध आदिसे साहाय्य पहुँचाता है, जो वेकारोको काम देकर भुगतान करता है, जिसकी इच्छा विद्वत्-पूजन और विद्वानोका स्वागत करनेकी निरन्तर वनी रहती है, जिसके द्वार शोधछात्रो और विद्वानोके लिए नि शुल्क आवास और भोजन कराने हेतु सतत उद्घाटित है और व्यापार क्षेत्र एव गार्हस्थ्य दायित्वोके लिए जो लाखो रुपये प्रतिवर्ष व्यय करता है, वह कजूस कैसे हो सकता है ?

श्री नाहटाजी धैर्यधनी है। विपत्तियोके टूटने वाले पहाडोको आप अपने शान्त-गभीर स्वभावसे सह लेते हैं। आपकी रुचि दर्शनमे विशेष है, अत सुख-दु ख, ग्लानि आदि विषयो पर पढते ही रहते हैं। दु'खकी व्याख्या करते हुए एक दिन श्री नाहटाजीने लेखक को वताया कि

दु खका प्रभाव तो वहुत अच्छा है, वह सजगके लिए वरदान है लेकिन उसका भोग वेदना प्रसू होता है। दु:खके भोगकी दशामें मानवको सामान्य परिस्थितिसे थोडा ऊपर उठकर तटस्थ दर्शक बननेका अभ्यास करना चाहिये। ऐसा करनेसे दु खकी असह्य वेदना अपेक्षाकृत न्यून होती जायेगी और शनै.-शनै गीतामें वर्णित समत्व योगकी स्थिति वनती चलेगी। मनकी अनुकूल वेदनीय दशा और उसकी प्रतिकूल वेदनीय स्थिति पर श्री नाहटाजीका गहन अध्ययन है और वे उसे जीवनकी प्रयोगशालामें भी उतारते है। आपपर अनेक सकट पडे है, लेकिन आपने अपना प्राकृतिक सन्तुलन नही खोया। आपके घर लाखो रुपयोकी चोरी हो गयी, पत्नी-का देहान्त हुआ और हमारी दृष्टिमें आपके घरपर अभूतपूर्व वज्राघात तव हुआ जव आपके घरका समस्त दायित्व सभालने वाली, एकमात्र २५ वर्षीया पुत्रवधू, अत्यन्त सुशील, चरित्रवती, सती, पुत्र धर्मचन्दजी

---

१. दोहासख्या 'कवीर वचनावली' प्रकाशक-नागरी प्रचारिणी सभा काशीके अनुसार है।

२ श्री जमनालाल जैन वाराणसी—नाहटाजी : एक जीवन्त सग्रहालय।

नाहटाकी अर्धांगिनीको कुछ ही घटोमें विकराल, निर्दयी कालने कवलित कर घरका सुख, सार सभाल, नाहटाजीकी सेवा, देवर-ननदोका आश्रय और स्नेह, सब कुछ छीन लिया।[1] जिसने भी यह सुना वह रोया, घरके सब प्राणी आँसूकी नदी बहा रहे थे; लेकिन श्री नाहटाजी प्रकृतिस्थ वने बैठे थे, मानो वे दुःखके इस कालकूटको पी गये थे और ज्ञानजलसे मोहपकको धो रहे थे।

गीताकारकी भाषामें ऐसा व्यक्ति ही तो 'स्थितधी' कहलानेका अधिकारी है

दु खेष्वनुद्विग्नमना , सुखेषु विगतस्पृह ।
वीतरागभयक्रोध स्थितधी मुनिरुच्यते ॥

दु खोमें उद्वेगरहित, सुखोमें स्पृहात्यागी, राग भय और क्रोधको नि शेष करनेवाला 'स्थितधी' मुनि कहा जाता है।

श्री नाहटाजीका व्यक्तित्व समन्वय-पाटवका विलक्षण उदाहरण है। आप व्यवसायकी दृष्टिसे व्यापारी, कर्मकी दृष्टिसे अध्येता, लेखक तथा रुचिकी दृष्टिमे अध्यात्म-प्रधान धार्मिक फक्कड सत है। ये तीनो ही स्वरूप प्रकृत्या परस्पर मेल नही खाते। व्यापारमें लक्ष्मीका निवास समझा जाता है। उसका लक्ष्य अधिकसे अधिक, येन केन प्रकारेण लक्ष्मीकी उपासना, उसका अर्जन और सरक्षण रहता है, जब कि लेखक और निरन्तर अध्येताका चित्त ज्ञानोन्मुखी होता है, वह चिन्तनकी आदर्शवादितामें मस्त रहता है, और अध्यात्मका क्षेत्र तो इन दोनोंसे भी दूरका है। उसमें लोकैषणाको तनिक भी महत्त्व नही दिया जाता।

श्री नाहटाजी कुशल व्यापारी, उच्चकोटिके अध्ययनशील लेखक और अध्यात्मसाधक सत है। प्रकृत्या विरोधी इन तीनो क्षेत्रोकी एक व्यक्तित्वमें संहति कम आश्चर्यकी वात नही है। श्री नाहटा जैसे व्यक्तिका साहित्य और कलाप्रिय जीवन अत्यन्त व्ययशील है। वे चलते-फिरते हजारो रुपयोकी कलात्मक चीजें खरीद लेते हैं, हस्तलिखित पाण्डुलिपियाँ तो छोडते ही नही। इस अभिरुचिमें आपने लाखो रुपये व्यय कर दिये हैं और करते जा रहे हैं।

आपका ही कथन है कि "मै जो भी कलात्मक वस्तु या प्राचीन पाण्डुलिपि खरीदता हूँ, वह बेचनेके लिए नही होती"। ऐसी स्थितिमें आपका साहित्यकलाप्रेम व्ययसाध्य है, और सयुक्त व्यापारमें जब कि इतर पारिवारिक केवल व्यापारी हैं, आपके इस बहुल व्ययको, व्यापारके लिए समय अदानको और गार्हस्थमें विशेष रुचि न लेनेको किस प्रकार प्रश्रय देते आ रहे है और तब जबकि आप भाइयोमें सबसे छोटे हैं, और आज्ञावशवर्त्ती हैं। लेखकने इसी जिज्ञासाको श्री नाहटाजीके सम्मुख प्रस्तुत किया। श्री नाहटाजीने बताया कि आरम्भमें घरवालोको मेरा साहित्य साधनाका काम अच्छा नही लगता था। वे इस कामके प्रतिकूल भी थे। पिताजी-भाई और भ्रातृपुत्रोंकी यही इच्छा थी कि मैं एकान्तभावसे व्यापारमें लगा रहूँ और घरकी श्रीवृद्धिको दिन दूनी रात चौगुनी करूँ।

श्री नाहटाजीने कहा कि 'मेरे पारिवारिक अपनी विभिन्न रुचियोमें हजारो-लाखो रुपये व्यय करते हैं; लेकिन मैं एक भी पैसा किसी अन्य रुचिमें व्यय नही करता, जो थोडा-बहुत व्यय करता, वह प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थोको खरीदनेमें अथवा कलात्मक वस्तुओमें। मेरे इस भावका पारिवारिकोपर अनुकूल प्रभाव पडा और उन्होंने मुझे हजारो रुपये खरचनेकी छूट दे दी।

मेरे साहित्यिक श्रमका लाभ जिज्ञासु छात्रो और विद्वानोको भी मिलने लग गया था और मेरे पिताजी प्रभृतिने इसको 'परपरोपकार' समझा और मुझे इस काममें लगे रहनेकी आज्ञा प्रदान की।

---

१ यह दु खद निधन दिनाक २ अगस्तको हुआ था।

तीसरे कारणपर प्रकाश डालते हुए श्री नाहटाजीने वताया कि मेरे अनेक प्रकारके प्रकाशित लेखोसे चारो तरफ यश फैला। देश-परदेश-सर्वत्र-सहस्रो मुखोसे पिताजी आदि परिजनोको मेरा सुखद यश सुननेको मिला, इसलिए वे बडे प्रभावित हुए और उन्होने साहित्यसेवाकी मुझे पूर्ण अनुमति प्रदान कर दी। चतुर्थ कारणकी ओर सकेत करते हुए नाहटाजीने वताया कि मेरी सच्ची लगन और ईमानदारीसे पिताजी प्रभृति वहुत प्रभावित हुए। वे समझ गये थे कि मेरे प्राण साहित्य और कलाके सरक्षण-अध्ययन और उन्नयनमें वसते है, इसलिए उन्होने मुझे साहित्यसाधनासे विमुख करनेका वादमें कभी प्रयत्न नही किया। शनै -शनै वे मेरे प्रति इतने उदार हो गये कि मेरा एक क्षण भी गार्हस्थ दायित्वोमें व्यग्र करना उन्हें अभीष्ट नही था। वे स्वय कार्य कर लेते, पर मुझे न कहते और इस प्रकार मेरे पक्षधर वनकर मुझे अध्ययनका शुभ अवसर स्वय तो देते ही, दूसरोसे भी दिलवाते।

पंचम कारण यह भी था कि मैं व्यापार भी सम्भालता था और साहित्यसेवा भी करता था। जो लोग निरन्तर वर्षभर व्यापारमें लगकर जितनी दक्षता ला पाते थे, उसे मैं कुछ महीनोके क्रमसे ले आता था और शेष समयमे पढता-लिखता रहता था, इसलिए पारिवारिकोकी ओरसे विशेष आपत्तिका पात्र मैं नही वना।

श्री नाहटाजीने अपने व्यक्तित्वमें व्यापार-अध्यात्म और अध्ययनके समन्वयके विपयमें लेखकको वताया कि मेरी मूल अभिरुचि अध्यात्ममें है। साहित्य मेरी आध्यात्मिक साधनाका साधन है और व्यापार लौकिक दायित्वोके निर्वाहका साधन और प्रकारान्तरसे वह भी मेरी आध्यात्मिक साधनाका साधक ही वन गया है, वाधक नही है। व्यापारने मेरी न्यूनतम आवश्यकताओकी सम्पूर्ति कर मुझे अर्थकी ओरसे निश्चिन्त वना दिया है, इसलिए मै निर्द्वन्द्वभावसे अपनी साधना—अध्यात्म साधना कर लेता हूँ।

श्री नाहटाने कहा कि अगर मैं अर्थलोलुपताका चेरा वनकर व्यापार करता तो मै अपनी साधनासे गिर जाता और तृष्णाकी तरुणता मुझे ले डूवती। अतएव मैने आजसे ४० वर्ष पूर्व सम्पत्तिकी सीमा निर्धारित कर ली थी और वह भी केवल पाँच लाख। आज राज्य सरकारें भी तो यही कर रही है, जो मैंने चालीस वर्ष पूर्व कर लिया था। श्री नाहटाजीने वताया कि मैं सुख-दु खके हर्ष-विषादके समस्त लौकिक दायित्वोको निवाहता हूँ, लेकिन निर्लिप्त भावसे, केवल करणीय है, इसलिए करता हूँ। यही कारण है कि मेरी अध्यात्मसाधना मुझसे दूर नही हुई और मुझे सवल देना उसने छोडा नही। इसीको गीतामे निष्काम भाव कहते है। मेरे समस्त कार्य, विशेपत लौकिक कार्य, निष्कामभावसे प्रेरित होते हैं। मैं उनमें अपनेको लिप्त नही करता, जलमें कमलकी भाँति जीवन जीनेका अभ्यासी हूँ—और उसी जीवन-पद्धतिपर चलते रहना चाहता हूँ।

श्री नाहटाजी शरीरस्थ महान् आलस्यको पास तक नही फटकने देते। उन्हे जो करना होता है, तुरत और उसी समय कर डालते है। वे समयका एक क्षण भी आलस्य, प्रमाद, तन्द्रा या गपशपमें विताना नही चाहते। उन्होने यह भलीभाँति हृदयगम कर लिया है कि आयुका क्षणलेश स्वर्णकोटियोसे भी प्राप्त नही हो सकता और उसीको अगर व्यर्थ गँवा दिया, तो उससे वडी हानि और क्या होगी।

आयुष क्षणलेशोऽपि, न लभ्य स्वर्णकोटिभि.।
स एव व्यर्थता नीत, का नु हानिस्ततोऽधिका ॥

श्री नाहटाजीकी प्रवृत्ति सग्रहकारिणी है। उन्होने उस प्रवृत्तिकी सतुष्टि प्राचीन हस्तलिखित ग्रथो और प्रकाशित पुस्तको एव प्राचीन कलात्मक वस्तुओंके पवित्र संग्रहसे की है। उनका 'श्री अभयजैन ग्रथालय' और 'शकरदान नाहटा कलाभवन' इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। आपने सवत् १९७६-७७ के आसपासकी

लिखित कक्षा चार-पाँचकी अपनी अभ्यास पुस्तिकाओको भी बडे ध्यानसे सुरक्षित रक्खा हुआ है। उस समयके लेख, पद, कवित्त और निबन्ध भी ज्योके त्यो सुरक्षित पडे हैं। जो चीज एक बार आपके हस्तगत हो जाती है, उसका अकारण त्याग आपको सह्य नही है।

नाहटाजी स्वावलम्बी हैं। हर काम अपने हाथसे करनेके आदी हैं। उन्हें काम करनेमें गौरवकी अनुभूति होती है। पुस्तकालयका छोटा-मोटा साधारण-असाधारण काम स्वय ही सम्पन्न करते हैं और घर-बाजारका भी आप ही निबटाते हैं।

श्री नाहटाजीकी यात्रा 'कष्टयात्रा' होती है। श्री भँवरलालजी नाहटाके शब्दो में—

"आपकी रेल मुसाफिरी प्राय कष्टकर होती है, क्योकि पहलेसे रिजर्वेशन कराते नही और कार्य-व्यस्ततासे गाडी छूटते-छूटते जाकर पकडते है। भागते दौडते जीमे और तुरन्त चौविहार किया''। आपकी आवश्यकताएँ अल्प हैं, अत मुसाफिरीमें इने-गिने कपडे बीडिंगमें डालते हैं और उसमें भी भार अधिकतर पुस्तकोका ही रहता है। मुसाफिरीमें पेटी रखते नही, यदि कुली नही मिला तो स्वय ही बगलमें बीडिंग डालकर चल पडते हैं।"

कहनेकी आवश्यकता नही कि हमारे चरितनायक श्री अगरचन्दजी नाहटा सरस्वती और लक्ष्मीके वरद-पुत्र हैं। उनके जीवनका रस अध्यात्मरस है। वे अत्यन्त धर्मभीरु लेकिन चारित्र्यपालनमें वज्रसे भी कठोर हैं। श्रम और स्वावलम्बन उनका जीवट है। वे सुव्ययी, धर्मधनी, निर्भय, स्मृतिशील, प्रेरक, और समन्वलशील उदार महापुरुष है। ऐसे पुरुषोके अवतरणसे ही धराका नाम वसुन्धरा सार्थक होता है।

श्री नाहटाजी भरे-पूरे परिवारके मुखिया है। आपके पाँच लडकियाँ और दो लडके हैं। सबसे बडी लड़की जेठी बाई है। शेष लडकियोके नाम है—शान्तिबाई, किरणबाई, सतोषबाई और कान्ताबाई। धर्मचन्द बडे पुत्र और विजयचन्द छोटे पुत्र है। नाहटाजीने अपनी सन्तानको सुपठित और सुशिक्षित किया है। कान्ता और धर्मचन्द दशम कक्षोत्तीर्ण हैं। विजयचन्दने बारहवी कक्षा उत्तीर्ण की है। आपके एक पोता और एक्कीस नाती-नातिनें है। आपकी वशावली पृष्ठ २३ से २५ पर।

विद्वद्वरेण्य श्री अगरचन्दजी नाहटाके व्यक्तित्वमें ही उनका कृतित्व सन्निहित है। उन्होने अनेकरूप होकर माँ सरस्वतीकी सेवा की है और करनेमें सलग्न हैं।

श्री नाहटाजीने हजारो अज्ञात कवियोको और बीस हजारसे अधिक पाण्डुलिपियोको सारस्वत ससार-के सम्मुख प्रस्तुत किया है। जो सरस्वती छिन्नभिन्न स्थितिमें जीर्णशीर्ण होकर अन्धकारावृत थी, उसे श्री नाहटाने स्वकरस्पर्शसे स्वस्थ-शुद्ध बनाकर सार्वजनिक एव सार्वजनीन बना दिया है। उन्होने अनेक ग्रन्थोकी सारगर्भित एव प्रमाणपुष्ट भूमिका-प्रस्तावनाएँ लिखकर नयेसे नये तथ्योका उद्घाटन किया है। श्री नाहटाकी दृष्टि शोधमुखी है, इसलिए उनके द्वारा लिखित किसी भी लेखमें आप अधिकसे अधिक नये और अश्रुतपूर्व निष्कर्ष अवश्य प्राप्त करेंगे। श्री नाहटाजी शोधकर्ता तो है ही, वे शोधसहायक भी हैं। शोध करनेवाले जिज्ञासुओकी हर सभव सहायता हेतु वे सदैव तत्पर रहते हैं। वे अपने विस्तृत अध्ययन, गहन चिन्तन और स्पष्ट निर्णायक प्रतिभासे हजारो छात्रो और विद्वानोको लाभ पहुँचा चुके हैं और पहुँचाते ही जा रहे हैं। इस पवित्र कर्ममें न उन्हें आलस्य घेरता है और न तन्द्रा। नि शुल्क भोजन और आवासकी व्यवस्था भी प्रायः नाहटाजीकी ओरसे की जाती है। शोधछात्रोंके लिए श्री अभय जैन ग्रंथालयकी पुस्तकें तो आरक्षित हैं ही, वे आवश्यकता पडनेपर इतर व्यक्तियो अथवा हस्तलिखित पुस्तकालयोंसे अपने दायित्व-पर पुस्तकें भी दिलाते हैं और इस प्रकार 'शोध-सहायक' के स्वरूपका भी सुन्दर निर्वाह करते है।

श्री नाहटाजीका एक स्वरूप प्राचीन ग्रन्थोके उद्धारक और संग्राहकका भी रहा है। उन्होने अपने पुस्तकालय श्री अभय जैन ग्रंथालयमें लगभग चालीस हजार प्राचीन पाण्डुलिपियोका संग्रह किया है और उसे अधिक समृद्ध बनानेके लिए प्रतिपल जागरूक हैं। उन्होने सहस्रश. हस्तलिखित ग्रन्थोको द्रव्यकी महती राशिसे क्रय किया है और सरस्वती उद्धारके पवित्र कार्यको सम्पादित करनेके लिए वे कही भी जानेको समुत्सुक एव तत्पर रहते हैं। उनकी इसी भावनाने उन्हे दुर्लभ, प्राचीन, पाण्डुलिपियोके समृद्ध सग्राहकके रूपमें अखिल भारतीय स्तरपर ख्याति दान किया है।

श्री नाहटाजी कलाकृतियोके प्रेमी-सग्राहक हैं। उन्होने अपनी इसी कलाप्रियताके कारण शंकरदान कला भवन जैसी सुविख्यात सस्थाको जन्म दिया है। आज श्री नाहटाजीको प्राचीन कलात्मक वस्तु विक्रय करनेवाले घेरे रहते हैं और प्रतिदिन सैंकडो रुपयोका क्रय होता रहता है।

साहित्यससारमें श्री नाहटाजी प्रखर आलोचक, प्राचीन एव मध्यकालीन हिन्दी साहित्यके गहन अध्येता एव अध्यात्मप्रेमी निबंधलेखकके रूपमें सुविख्यात हैं। बहुत कम सुधी इस तथ्यको जानते हैं कि श्री नाहटाजी अपने उद्दाम सयमशील, मर्यादाबद्ध यौवनमें अत्यन्त समर्थ कवि रहे है। उनकी भावधारा सहजोद्भूत प्रतीत होती है और उनका चिन्तन जैनदर्शनभक्ति प्रवण।

श्री नाहटाजी भक्तिक्षेत्रके मुक्तक कवि रहे हैं। उन्होने अधिकाशत तीर्थंकरोके प्रेरणा-प्रसू पावन चारित्र्य गुणोको अपनी कविताका विषय बनाया है। श्री पार्श्वनाथ जिनाष्टकमें वे प्रभु पार्श्वनाथके अनुपम त्याग, असीम सहिष्णुता और धैर्य-गाम्भीर्य पर मुग्ध हैं।

सागर सम गभीर धीर मदार गिरी सम, विजयी कर्म सुवीर और नही आवै ओपम।
नाग भयकर विषधर देखत विष तजि दीनो, रहे चरण तुम देव सेव करतो गुण लीनो ।।

भक्त कविका विश्वास है कि श्री पार्श्वप्रभु सर्वज्ञ विज्ञ हैं। सेवकोके आश्रय और सन्मति हैं। कविका इष्ट सासारिक सम्पत्ति अर्जन नही है। वह पार्श्वभक्तिके गुणप्रकर्षसे परमगतिप्राप्तिका अभिलाषी है—

हो सर्वज्ञ विज्ञ सब भावोंके तुम सन्मति। सेवक जन आधार सार तारो यह विनती।
अगर मदा मन मुदा भक्तिभर ललित गुणस्तुति। तव पद वदन कर्म निकदन, प्राप्ति परम गति ।।

आराध्यके अगाध गुणगरिमा भावमें निमज्जित भक्त कवि नाहटाका मानस यदाकदा अहेतुमें हेतुकी कल्पना भी करने लगता है—

रुचिर शान्त अम्लान्त पार्श्वमुख अतिहि मनोहर, देख इन्दु भयो मन्दु सदा आकाश कियो घर।

प्रभु पार्श्वनाथका मुख अत्यन्त मनोहर है। चन्द्रमा उसे देखकर मन्द हो गया और आकाशमें रहने रहने लगा है। कवि प्रभुके 'पारस' नामका माहात्म्य स्मरण कर अत्यन्त आह्लादित अनुभव करता है। उसकी दृष्टिमें पार्श्व नाम अपने आपमें गुणधाम है।

पार्श्वनाम गुणधाम अहा ! पारस पत्थर भी। करे लोहको स्वर्ण, कहें फिर क्या प्रभुवर की।

कवि नाहटाके विविध भक्तिस्तवनोमें श्री 'महावीर स्तवन' का उत्कृष्ट स्थान है। कविकी शैली अत्यन्त प्रौढ, उक्तिमें सहज आलकारिक छटा और भावोमें अजस्र प्रवाह सब मिलकर सहृदय सामाजिकको भक्तिरसाम्बुधिमें अवगाहन प्रदान करते हैं। प्रारभ-पदमें कवि वर्ण्यके अगाध गुणगणिमाविमडित चरित्र और अपने अल्पज्ञत्वकी तुलनाके व्याजसे अपना विनयभाव प्रस्तुत करता है—

सिद्धारथ कुल कमल दिवाकर, त्रिशला कुक्षी मानस हस।
चरम जिनेश्वर महावीर हैं, मगलमय त्रिभुवन अवतस ।।

यद्यपि उनमे अनुपम गुण गण, हैं अनन्त नहिं कोई पार।
पा सकता है, किन्तु भक्तिवश, कहता हूं मैं वही विचार॥

कविका मानस महावीर प्रभुकी सहनशीलताका स्मरण कर हठादिव मुखरित हो जाता है—

अहो अहो समता थी कैसी, सहे कष्ट मरणान्त अनेक।

स० १९८४के वसतपचमीके शुभदिन खरतरगच्छके आचार्य श्री जिनकृपाचन्द्रसूरिजी बीकानेर पधारे और २ वर्ष विराजे तभी आपने गुरु-गीत बनाये। श्रीनाहटजीके व्यक्तित्वपर श्री कृपाचन्द्रसूरिजीका बडा प्रभाव रहा है। जैनदर्शन-भक्ति और शोधश्रमकी प्रेरणा उन्हे उक्त सूरिजी से ही प्राप्त हुई थी। गुरु कृपाचन्द्रजीके प्रति आभारके इस भारको कविने स्वरचित अनेक प्रशस्ति स्तवनोमें अभिव्यक्त किया है। यथा—

श्री कृपाचन्द्रसूरिराज, देखी तोरी शान्त मुद्रा सुखकारी मेघराज के नदन कहिये,
अमरा मात उदार चोमू गाम मे जन्म आपको, भविजन आनन्दकार।

भक्तहृदय कवि गुरूपदेशवाणीपर मुग्ध प्रतीत होता है। वह उसे 'अमृतधारा'से उत्प्रेक्षित करता है .

बीकानेर मे आप पधारे, सौभाग्य अपरपार। देशना अजब सुहावनी, मानो अमृत की धार॥

भक्त मानसका कथन है कि श्री कृपाचन्द्रसूरि किसी पूर्वपुण्यके प्रतापसे बीकानेर पधारे हैं और श्रावकोको कृतार्थ किया है। वह उन दर्शकोके भाग्यको साधुवाद देता है जिन्होने गुरुमहाराजके पावन दर्शन किये हैं। कविका मुमुक्षुहृदय अपने गुरुसे सहजभावमें मुक्तिका मार्ग भी पूछने लगता है .

कविके ही शब्दो में :

बताओ मुक्तिकी राह गुरुज्ञानी
भव जल को नही थाह गुरुजी—फिरतो फिरतो हार्यो।
तुम बिन नही कोई मेरा सहारा, तुमरी शरण मे आयो॥

इसी प्रकार—

कृपाचन्द्रसूरि राय रे, कोई पुण्य से आये,
शान्ति मूरति सोहणीरे, सहुने आवे दायरे।
पच महाव्रत कैहै धारी, रक्षा करै छहुँ काय रे॥

कवि अनेक पदोमें उपदेशकके रूपमें भी उपस्थित हुआ है। वह जीवको आत्मज्ञान प्राप्त करने को कहता है। उसकी आस्था जिनवचनश्रवणमें है। निदा, विकथा, आदिसे बचनेकी उसकी शिक्षा सर्वहितकारी है। यथा—

चेतनजी करवो आतम-ध्यान
बुद्धितत्त्व विचारण फोरो, जिन वचन सुणन मे कान।
निंदा विकथा मिच्छर भाषा छोड मुखसे करो प्रभुगान॥

अनेक पदोमें कवि पर्यूपण पर्व मनानेकी शिक्षा देता है। वह इसी प्रसगमें सुपात्रको दान देनेका आग्रह भी करता है। यथा—

भवि भावधरी, पर्व पजूसण आराधो आनद सु।
ए पर्व भलो, छै सहु मे सिरदार चिन्तामणि रत्न ज्यू॥
अमारी पडहो बजवाइजे, जिनराज पूजन विधि सुं कीजे,
वलिदान सुपात्र ने दीजै।

कवि नाहटाने 'अध्यात्म छत्तीसी' शीर्षक रचनाका निर्माण भी किया है। इसमें संसारसे राग विरतिका उपदेश दिया गया है। जैनदर्शनसे सम्बद्ध पारिभाषिक शब्दावलीका आधिक्य इसमें परिलक्षित होता है। कतिपय उदाहरण

जो जो वस्तु दृश्यमान वह, वह पुद्‌गल रूप। राचो क्या सोचो जरा, तूँ परमात्म स्वरूप ।।
कर्मबंध नही वस्तुत, जानो निश्चय एह। राग द्वेष नहि होय जो, उडे कर्मदल खेह ।।

कविने 'देवतत्त्व छत्तीसी' शीर्षक रचनाका निर्माण भी किया है। यह चिन्तनप्रधान जैनदर्शनसे सम्बद्ध पदावली है। साम्प्रदायिकोके लिए इसका महत्त्व विशेष है।

कवि नाटहाने शोक गीतियाँ भी लिखी है। ऐसी गीतियो में श्रीजिनचारित्रसूरिजीके निधनपर रचित रचना विशेष रूपसे पठितव्य है। इस प्रकारकी गीतियो में भाव-शवलता के उदाहरण द्रष्टव्य है

'जैन शासनके सितारे, स्वर्गमे जाकर बसे। चारित्रसूरि गुणके आकर, चल बसे! हा चल बसे ।।
गोत्र छाजेड पाबुदान सुत, मात सोनको धन्य है। जन्म उगणीस सौ बयालोस, चल बसे हा! चल बसे ।।

कहनेकी आवश्यकता नही कि युवक कवि श्री नाहटा भावोकी दृष्टिसे अत्यन्त समृद्ध और भाषाकी दृष्टि-से अतीव समर्थ प्रतीत होते है। उनकी वाणीका स्फुरण सहज है। उसमें स्वाभाविकता और सरलता है। उनके अनेक पद पढते समय भारतेन्दुयुगीन कवियोकी कविताका स्मरण हो आता है। उनकी प्रतिनिधि कविता 'पार्श्व जिन अष्टकम्' है, जिसे हम यहाँ अविकल उद्धृत कर रहे हैं

श्रीपार्श्व-जिन-अष्टकम्

श्री अगरचन्द नाहटा

गुण अशेष विश्वेश, प्रगट तुम गुणके सागर।
अष्ट कर्म निःशेष शेष, सब दुरित भयाकर ।।
रुचिर शान्त अम्लान्त, पार्श्व मुख अति ही मनोहर।
देख इन्दु भयो मन्दु, सदा आकाश कियो घर ।।१।।
राग द्वेषको त्याग, मार्ग निर्वाण दिखायो।
भये मुक्त गुणयुक्त, जन्म मरणादि गमायो ।।
नील वरण सुखकरण, श्याम पारस मन भायो।
अति प्रमोद मन मोद, प्रभु दरशन मैं पायो ।।२।।
सागर सम गम्भीर, धीर मदार गिरि सम।
विजयी कर्म सुवीर, और नही आवै ओपम ।।
नाग भयकर विषधर देखत विष तजि दीनो।
रहे चरण तुम देव सेव करतो गुण लीनो ।।३।।
ह्वै अनत सुख मुख देखत जारत दुख दूरै।
अधम वृत्ति अज्ञान रूपी तमको चकचूरै ।।
पार्श्वनाम गुण धाम, अहा पारस पत्थर भी।
करे लोहको स्वर्ण, कहे फिर क्या प्रभुवरको ।।४।।

आतम गुण निष्पन्न, भिन्न पुद्गल परभाव।
भये वुद्ध अति शुद्ध, सिद्ध निज आत्म स्वभाव ॥
आतम विभव अनत, अत जसु आवत नाहि।
तुलना इस जग माहि, देनको वस्तु न पाहि ॥५॥
वाणी तव सताप ताप, भव अनल बुझावे।
भटकत भव जल माहि, उन्हे सन्मार्ग सुझावे ॥
वस्तु स्वभाव स्वरूप, अनूप प्रकाशक भानु।
बहै अमिय रसधार, सार गुण किते बखानु ॥६॥
स्यादवाद सयुक्त, युक्त नय भग प्रमाण।
तत्वान्वेषण गहिर रुचिर, निष्पक्ष विनाण ॥
प्राकृत वाणी सुबोध बोध, पावत भट भविजन।
सत्य प्रिय अति हिय, असर तत्काल करत मन ॥७॥
भवसागरके पोत, स्रोत समता सिन्धुके।
वसे जाय मनभाय, सिद्धि सुस्थान जु नीके ॥
निर्विकार वीतराग आग क्रोधादि विनाशी।
गुणागार भव पार करो, यह वीनति प्रकाशी ॥८॥
हो सर्वज्ञ विज्ञ सब भावोके तुम सन्मति।
सेवक जन आधार सार तारो यह वीनति ॥
'अगर' सदा मन मुदा भक्ति भर ललित गुण स्तुति।
तव पद वदन कर्म **निकंदन, प्राप्ति** परम गति ॥९॥

श्री नाहटाजीमें मूर्धन्य कोटिके कविमें पाये जानेवाले गुण बीज रूपमें हमें उपलब्ध होते हैं। अगर निरन्तर अभ्यास वना रहता तो वे कविता क्षेत्रके वरवरेण्य कवियोमेंसे एक होते। यह पूछा जानेपर कि आपने कविता करना क्यो छोड दिया, तो श्रीनाहटाने उत्तर दिया

"कवितामे मेरी रुचि थी लेकिन जव मैंने देखा कि मेरेसे सहस्रगुणित अच्छे कवियोकी कविता समाजमें उपेक्षित भावसे देखी जाती है। कोई भी व्यक्ति तन-मन-धन और सच्ची लगनसे उसका उद्धार नही कर रहा है। ऐसी स्थितिमें मेरे मानसने मुझसे यही कहा, कविता लिखनेका नहीं, उसका उद्धार करनेका समय है और मेरी अन्त-ध्वनिने मूझे कविता करनेके क्षेत्रसे निकालकर प्राचीन कवियोकी कृतियोंके शोधक्षेत्रका पथिक वना दिया।

श्री नाहटाजीने अपनी आत्मकथा भी लिखी है। अपने विषयमें तटस्थ भावसे लिखना कितना कठिन होता है यह इसी तथ्यसे स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दी-साहित्यमें सच्चे अर्थमें बहुत कम आत्मकथाएँ लिखी गयी है। इधर भारतीय भाषाओमें भी इस विधाका समृद्ध स्वरूप दृष्टिगत नही होता। श्री नाहटा-जी इस दृष्टिसे आत्मकथाकी उस परम्परामें आते है जिसका आरम्भ श्री वनारसीदास जैनने लगभग चार सौ पहिले 'अर्द्ध कथानक' लिखकर अपनी चारित्रिक त्रुटियोका उद्घाटन किया था। स्वामी श्रद्धानन्द और महात्मा गाँधीने भी अपने गुण-दोषोको पाठकोके सम्मुख रखनेमें तनिक भी मन्दता प्रदर्शित नही की। श्री नाहटाजी भी उसी पद्धतिके पदाति हैं। उन्होने आत्मकथाके रूपमें बहुत थोडा लिखा है लेकिन जो लिखा

है वह अत्यन्त विश्वसनीय और सच्चे कच्चे चिट्ठेके रूपमे है। लेखकने यह निसंकोच भावसे लिखा है कि यौवनके देहली द्वारपर कामोत्तेजक पुस्तक-चित्र और कुसगने उसको आत्मघाती पथपर अग्रसर कर दिया था और उससे मुक्ति पानेमें उसे कितना हर्ष-विषादका अनुभव हुआ था। आदि आदि।

अब हम एकैकश उन पुस्तकोका परिचय प्रस्तुत कर रहे है, जिन्हे या तो श्री नाहटाजीने लिखा है या सम्पादित किया है अथवा शुभ आशीर्वाद दिया है।

विधवा कर्त्तव्य

श्री अगरचन्दजी नाहटाकी प्रथम कृति होनेका सौभाग्य इस पुस्तकको है। इसे लेखकने जैनाचार्य श्री १००८ श्री जिनकृपाचन्द्रसूरीश्वरजी महाराजकी शिष्या साध्वी श्री महिमाश्रीजीको समर्पित किया है। इसका प्रकाशन सवत् १९८६ है।

पाटणके प्रसिद्ध भण्डारसे प्राप्त, ताडपत्राकित, गाथाबद्ध 'विधवा कुलक' नामक लेखका विवेचन-सहित हिन्दी अनुवाद इस पुस्तकमें किया गया है। यह कुलक 'जैनधर्मप्रकाश' नामक गुजराती मासिक पत्रमें भी प्रकाशित हुआ था। लेखकने समाजके ही अभिन्न अग विधवा समाजको उनके कर्तव्यके प्रति जागरूक करनेके लिए इस पुस्तकका प्रकाशन किया है। लेखकने ग्रन्थादिमें अपने गुरु श्री जिनकृपाचन्द्रसूरीश्वरको नमन किया है और इस ग्रन्थरचनाके मूल प्रेरणास्रोत उन्हीको बताया है

पूर्वाचार्य कृत कुलकका, करूँ भाषा अनुवाद। विधवा कर्त्तव्य वर्णवूं, सद्गुरु भणे सुप्रसाद॥

पुस्तकके 'विवेचन' उपशीर्षकमें युवक नाहटाका विचार मन्थन झलकता है। मूलगाथाको बात को स्पष्ट करनेके लिए वे अनेक उदाहरणोको प्रस्तुत करते हुए, दिन रात घटनेवाले क्रिया-व्यापारोका खुलकर उल्लेख करते है, जिससे गाथाका मूलभाव अत्यन्त स्पष्ट होकर हृदयगम हो जाता है। प्रत्येक 'गाथा'पर उनका विवेचन सुन्दर विचारोका एक छोटा-सा निबन्ध बन जाता है, जिसे स्वतन्त्ररूपसे भी अगर पढें तो वह अपूर्ण प्रतीत नही होता और उसका स्वाध्याय पवित्र प्रेरणाका सचार करनेमें सक्षम सिद्ध होता है।

गाथामें प्रस्तुत कथ्यको अधिक स्पष्ट और प्रभावक बनानेके लिए लेखकने अनेक उद्धरण दिये है, जिससे उसके व्यापक अध्ययनका संकेत मिलता है।

लगभग आधी पुस्तकमे, गाथा भावार्थ और विवेचन है। शेषार्द्ध भागमें विधवा सज्जीवन यापनके लिए व्यावहारिक उपदेश-कर्तव्य, दिनचर्या, आदिपर प्रकाश डाला गया है। इस पुस्तकमें यहाँतक बताया गया है कि विधवाको कपडे कैसे पहिनने चाहिये, भोजन कैसा और कैसे करना चाहिये—कहाँ बैठना और कहाँ नही बैठना चाहिये आदि। लेखकने इस प्रसंगमें घरवालोको भी मार्गदर्शन दिया है कि वे विधवाओके साथ किस प्रकारका व्यवहार करे। उसने समाजको भी विधवाओके प्रति अपने दायित्वको वहन करनेके लिए सजग किया है। पुस्तकान्तमें श्री देवचन्दजीकी मर्मस्पर्शी पक्ति दी गयी है

'बाधक भाव अद्वेष पणे तजेजी, साधकसे गतराग'

अर्थात्—आत्मिक उन्नतिमे जो साधक हो उसे बिना रागभावसे ग्रहण करो और जो बाधक हो उसे द्वेषरहित होकर छोड़ दो।

युगप्रधान श्री जिनचन्दसूरि

यह महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ श्री अभय जैन ग्रंथमालासे सप्तम पुष्पके रूपमे प्रस्फुटित हुआ है। इसका प्रकाशन संवत् १९९२ है। समर्पणकी भावभरी भाषासे अभिव्यजित होता है कि उक्त पुस्तक निर्मिति-लेखनमे जैनाचार्य श्री जिनकृपाचन्द्रजी सूरीश्वरका पूर्ण आशीर्वाद रहा है और उनके श्रीमुखसे जो ज्ञानराशि एव उत्प्रेरण

लेखक द्वयने प्राप्त किये थे, उन्हींके प्रसाद स्वरूप यह पुस्तक लिखी जा सकी। अत उन्हींकी वस्तु उन्हें ही समर्पित करनेमें लेखकद्वयने जो आनन्दका अनुभव किया है, वह एक वास्तविकता है।

लेखकद्वयने अपने सारगर्भित वक्तव्यमें बहुमूल्य शोधसामग्री प्रस्तुत की है। उन्होने उसमें अनेक प्रश्न उठाये हैं और उनका विद्वत्तापूर्ण समाधान-उत्तर भी दिया है। इस शोधपूर्ण ग्रन्थको लिखने-सामग्री संकलन करने और उसकी प्रामाणिकताको जाचनेमें लेखकद्वयको पाँच वर्षों तक निरन्तर श्रम करना पडा है। उन्होने अपने श्रमको व्यंजित करते हुए वक्तव्यमें एक श्लोक उद्धृत किया है—

विद्वानेव विजानाति, विद्वज्जनपरिश्रमम्।
न हि वन्ध्या विजानाति, गुर्वी प्रसववेदनाम्॥

विद्वान्का परिश्रम विद्वान् ही जानता है। गुर्वी प्रसववेदनाको वन्ध्या नही जानती।

प्रामाणिकता-सारगर्भितता और सरल शैलीने इस ग्रथको अत्यन्त लोकप्रिय बना दिया। विद्वद्वर्य श्री लब्धिमुनिजीने इसे आधार बनाकर सूरिजीके चरित्रको सस्कृत पदावलिमें पुस्तकीकरण किया है यह गुजराती अनुवादमें प्रकाशित हो चुका है। इसकी प्रस्तावना श्री मोहनलाल दलीचद देसाई ने लिखी है, जो अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण है। यह ग्रन्थ संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, गुजराती, बंगला, अग्रजी प्राचीन भाषाओ और सैकडो हस्तलिखित प्राचीन पाण्डुलिपियो, प्रशस्तियो, पट्टावलियो, विकीर्ण पत्रो, रिपोर्टों आदिके गहन अध्ययन चिन्तन और मननके आधारपर लिखा गया है, अतः इसकी प्रामाणिकता निस्सन्देह है। पुस्तकको उपयोगी बनानेके लिए लेखकद्वयने साकेतिक अक्षरोका स्पष्टीकरण, अनुक्रमणिका, चित्रसूची, सम्मति, विशेषनाम सूची और शुद्धाशुद्धि पत्रक भी दिये है।

पुस्तककी सामग्री, उमका चिन्तन, उसमें प्रस्तुत तर्क और प्रस्तुति—अत्यन्त प्रौढ हैं। लेखकोके प्रकाण्ड पाण्डित्य, अत्यन्त सूक्ष्मदर्शिनी दृष्टि और उसकी शोधप्रवृत्तिको स्पष्टत इस ग्रन्थमें अवलोकित किया जा सकता है।

नीरक्षीरविवेकी शोध विद्वान् और इतिहासकार उस समय बडी दुविधामें पड जाते है जब उन्हें किसी चरित्रकी अलौकिक एवं अत्यन्त चमत्कारिक घटनाओको लिखना पडता है। वे इस प्रकारके विस्मयोत्पादक अलौकिक घटनाचक्रको अगर ध्यानान्तरित करते है तो लाखो भावुक भक्तोकी भावनापर आघात पहुँचता है और अगर वैमा करते है, अलौकिक घटनाओको अपने पूर्ण समर्थनके साथ प्रस्तुत करते हैं तो इतिहासकारके पथसे च्युत हो जाते हैं। श्री नाहटाजीके लेखन-कर्ममें उक्त प्रकारका धर्मसकट आ पडा था। उन्होंने मध्यम मार्ग अपनाया और जीवनी प्रकरणोसे भिन्न एक अलग अध्यायमें समस्त चमत्कारिक घटनाओको सुव्यवस्थित कर दिया। इम प्रकार वे इस ग्रन्थमे इतिहासकारके पुनीत कर्तव्यका जहाँ पालन कर सके हैं, वहाँ उन्होने धार्मिक जनताकी भावनाका आदर भी किया है।

ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह

श्री अगरचन्द्रजी नाहटा एव श्री भवरलालजी नाहटाके सहवर्त्ति सपादकत्वमें सवत् १९९४ में श्री अभय जैन ग्रथमालाके अष्टम पुष्पके रूपमें इस ग्रथरत्नका प्रकटन हुआ है। पुस्तकका समर्पण श्री दानमल जी नाहटाकी स्वर्गस्थ आत्माको उनके अनुज और उक्त ग्रथके प्रकाशक श्री शकरदानजी नाहटाने किया है। प्रकाशक नाहटा श्री अगरचन्दजीके पिता एव श्री भवरलालजीके पितामह थे।

यह ग्रथ तीन दृष्टियोंसे अत्यन्त उपयोगी है। पहला दृष्टिकोण ऐतिहासिकताका है, द्वितीय भाषिकताका और तृतीय साहित्यिकताका। इसमें कतिपय साधारण काव्योके अतिरिक्त प्राय सभी काव्य ऐतिहासिक दृष्टिसे सग्रह किये गये हैं। अद्यावधि प्रकाशित सग्रहोंसे भाषासाहित्यकी दृष्टिसे यह सग्रह सर्वाधिक

उपयोगी है, क्योकि इसमें १२ वी शताब्दीसे लेकर बीसवी शताब्दी तक लगभग आठ सौ वर्षोके, प्रत्येक शताब्दीके थोडे-बहुत काव्य अवश्य सग्रहीत हैं। इस सग्रहसे भाषाविज्ञानके अभ्यासियोको शताब्दीवार भाषाओंके अतिरिक्त कई प्रान्तीय भाषाओका भी अच्छा ज्ञान हो सकता है। कतिपय काव्य हिन्दी, कई राजस्थानी और कुछ गुजरातीके है। अपभ्रंश भाषाके लिए तो यह सग्रह विशेषत महत्त्वपूर्ण है वैसे इसमें सस्कृत और प्राकृतके काव्य भी दे दिये गये हैं।

काव्यकी दृष्टिसे जिनेश्वरसूरि, जिनोदयसूरि, जिनकुशलसूरि, जिनपतिसूरि आदिके रास-विशेष महत्त्व रखते हैं।

इसमें रास सार भी दे दिया गया है जो अति सक्षिप्त और सारगर्भित है। लेखकद्वयने काव्य रचनाकालका सक्षिप्त शताब्दी अनुक्रम भी दिया है। श्री हीरालाल जैनने इसकी विद्वत्तापूर्ण प्रस्तावना लिखी है। 'प्रति परिचय' शीर्षकके अन्तर्गत उन पाण्डुलिपियोका परिचय दिया गया है, जिनका उपयोग इस ग्रन्थमें किया गया है। प्रकाशक, पाण्डुलिपि, ताडपत्र, हस्तलिपि आदिसे सम्बद्ध एकादश चित्रोसे ग्रथ सुसज्जित है, पुस्तकान्तमें कठिन शब्दकोष और विशेष नामोकी सूची देकर उसे और भी उपयोगी बना दिया गया है। सर्वान्तिमें 'शुद्धाशुद्धि पत्रम्' रक्खा गया है।

समयसुन्दर कृति कुसुमाञ्जलि

श्री अगरचन्द नाहटा एव श्री भंवरलाल नाहटाके सग्रहकत्व एव सम्पादकत्वमें श्री अभय जैन ग्रंथ-मालाके पंचदशम पुष्पके रूपमें प्रस्फुटित यह कृति अपना विशेष महत्त्व रखती है। इसमें कविवर समय-सुन्दरकी ५६३ लघु रचनाओका सग्रह है। श्री हजारीप्रसादजी द्विवेदीने इसकी भूमिका लिखकर-इस ग्रथके महत्त्वका उद्‌घाटनपूर्वक पुरस्सरण किया है। महोपाध्याय श्री विनयसागरजीने अपनी प्रखर विद्वत्तासे समय-सुन्दरके व्यक्तित्व एव कृतित्वका सार संभरित मूल्याकन किया है और उस महाकविको असाधारण मेधावी, और सर्वतोमुखी प्रतिभाके धनीके रूपमें प्रस्तुत किया है। यह शोधपूर्ण साहित्यिक कृति परम अध्यवसायी, सहृदय, शोधनिरत, महान् परिश्रमी और निष्णात साहित्य महारथी स्व० श्री मोहनलाल दलीचन्द देसाईको समर्पित की गयी है।

समयसुन्दर कृति कुसुमाञ्जलिग्रंथ भाषा, छन्द, शैली और ऐतिहासिक सामग्रीकी दृष्टिसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमें सन् १६८७के अकालका बडा ही जीवन्त वर्णन है। वह बडा हृदयद्रावक और प्रभावक है। इस ग्रंथकारके विषयमें श्री नाहटाजीने नागरी प्रचारिणी पत्रिकाके सं० २००९के प्रथम अकमें जो लिखा था, उससे ज्ञात होता है कि श्री समयसुन्दरकी जन्मभूमि मारवाड प्रान्तका साचौर स्थान है। ये पोरवाड वंशके रत्न थे और इनका जन्मकाल सभवत सवत् १६२० है। अकबरके आमत्रणपर इनके दादागुरुजी भी लाहौरमें सम्राट्‌से मिलने गये थे तो ये भी गये थे। इन्होने सस्कृतमें पच्चीस और भाषामें तेईस ग्रथ लिखे थे। संवत् १७०२में चैत्र शुक्ला त्रयोदशीके दिन अहमदाबादमें इन्होने अनशन आराधनापूर्वक शरीरत्याग किया।

'समयसुन्दर कृति कुसुमाञ्जलि'से कविकी कवित्वशक्तिकी प्रौढताका निदर्शन होता है। कविकी भाषामें भावोको अभिव्यक्त करनेकी अद्‌भुत क्षमता है। कविका ज्ञान परिसर बहुत ही विस्तृत है, इसलिए वह किसी भी कर्म विषयको विना आयासके सहज ही सभाल लेता है। कवि द्वारा प्रयुक्त छन्दो और रागोंसे तत्कालीन व्रजभाषामें प्रचलित पद शैलीके अध्ययनमें सहायता मिल सकती है।

वस्तुत नाहटाजीने इस ग्रंथका सपादन-प्रकाशन करके हिन्दी साहित्यके अध्येताओके सामने बहुत

अच्छी सामग्री प्रस्तुत की है। वैसे कवि अत्यन्त व्यापक है और उसकी लिखित-रचित सामग्रीका पार पाना बडा कठिन है—

'समयसुन्दरना गीतड़ा, भीता पर ना चीतरा या कुभेराणा ना भीतडा।'

कविने अष्टलक्षी ग्रथकी रचनाके १ पदके आठ लाख प्रामाणिक अर्थ पडित विद्वत् सभा अकबरकी में मान्य करवाया था।

दानवीर सेठ श्री भैरूँदानजी कोठारीका सक्षिप्त जीवनचरित्र

जैसा कि नामसे ही स्पष्ट है, यह अत्यन्त लघु पुस्तिका दानवीर सेठ भैरूँदानजीके जीवनकी रूप-रेखा मात्र प्रस्तुत करते हुए लिखी गयी है। प्रकृत्या यह पुस्तक न होकर लेखकका वक्तव्य है जो पुस्तकायित कर दिया गया है। स्व० सेठ साहबके दानीरूपको विज्ञापित करना लेखकका लक्ष्य रहा है। उसने प्रकारान्तर-से यह व्यजित किया है कि धनका होना उतना महत्त्वपूर्ण नही है जितना उसका सदुपयोग महत्त्वपूर्ण होता है। लक्ष्मीपतियोके लिए यह लघु पुस्तक प्रेरक बन सकती है।

युगप्रधान श्री जिनदत्तसूरि

प्रस्तुत पुस्तकके लेखक नाहटाद्वय है। इसका प्रकाशन श्री अभय जैन ग्रंथमालाके बारहवें पुष्पके रूपमे हुआ है। इसे लेखकोने अपने स्व० पिता एव पितामह श्री शंकरदानजी नाहटाको समर्पित किया है। इसका प्रकाशन संवत् २००३ है।

नाहटाद्वयने इस पुस्तकको लिखे जानेमें श्री जिनदत्तसूरिचरित्रनिर्णायक समिति फलौदीके द्वारा प्रकाशित उस विज्ञप्तिको कारण माना है, जिसमें उक्त समितिने ता० २१-७-१९३४ के पूर्व सूरिजीका जीवन-चरित्र लिख भेजनेका निवेदन किया था। इस ग्रन्थको लिखनेके लिए लेखकद्वयको पर्याप्त श्रम करना पडा, तदर्थ जैसलमेरकी यात्रा भी करनी पडी। इस पुस्तककी सबसे बडी विशेषता यह है कि इसमें गतानुगतिकता नही है। प्रत्येक घटना और तथ्यको ऐतिहासिकताके आधारपर परखनेका प्रयत्न किया गया है। सूरिजीके प्रामाणिक चरित्रको प्रस्तुत करके अन्तमें विशेष बातें, गोत्रसूची, पदव्यवस्था, कतिपय स्तवन और विशेष नामसूची दी गयी है।

राजस्थानमे हिन्दीके हस्तलिखित ग्रथोकी खोज—द्वितीय भाग

यह कृति हिन्दीके अज्ञात हस्तलिखित ग्रथोकी शोधविवरणिका है। इसका प्रकाशन प्राचीन साहित्य शोध सस्थान उदयपुरकी ओरसे सन् १९४७में किया गया था।

श्री अगरचन्दजी नाहटा लिखित इस पुस्तककी अनेक विशेषताएँ और मौलिकताएँ है।

इस ग्रथमें मूल ग्रथके उद्धरण अधिक प्रमाणमें लिये गये है और लेखककी ओरसे कुछ भी नहीं या कमसे कम लिखनेकी नीति अपनायी गयी है। ग्रन्थका नाम, ग्रन्थकार, उनका जितना भी परिचय ग्रथमें है, ग्रथका रचनाकाल, ग्रथ रचनेका आधार आदि ज्ञातव्य, जिस ग्रथमें संक्षेप या विस्तारसे जितना मिला, विवरणमें दे दिया गया है जिससे प्रत्येक व्यक्ति ऊपर निर्दिष्ट लेखकके लिखित सारको स्वयं जाँचकर निर्णय कर सकें। इसकी द्वितीय विशेषता यह है कि इसमें एक-एक विषयके अधिकसे अधिक अज्ञात ग्रथोका विवरण सगृहीत किया गया है और उनका विषयानुसार वर्गीकरण कर दिया गया है। इसकी तीसरी विशेषता यह है कि इसमें ऐसे विषय एव ग्रथोके विवरण हैं जो हिन्दी साहित्यके इतिहासमें एक नवीन जानकारी उपस्थित करते है, जैसे नगर वर्णनात्मक गजल साहित्य। "हिन्दी ग्रंथोकी टीकाएँ" विभाग भी अपनी विशेषतासे परिपूर्ण है। इसमें हिन्दी ग्रथोपर तीन सस्कृत टीकाएँ एव एक राजस्थानी टीकाका विवरण दिया गया है। अभी तक हिन्दी ग्रथो पर सस्कृतमें टीकाएँ रची जानेकी जानकारी शायद यहाँ पहली ही बार दी गई है।

जसवंत उद्योत

श्री अगरचन्दजी नाहटाके सम्पादकत्वमें श्री सादूल प्राच्य ग्रन्थमालासे संवत् २००६में इस ग्रन्थका प्रकाशन हुआ है।

यह ग्रंथ जोधपुरके राठौडोके इतिहाससे सम्बद्ध है। ग्रन्थान्तमें प्रस्तुत पद्यमें कविने सूर्यवंशी वृहद्-वाहु तककी वशावली विष्णुपुराणसे एवं उसके परवर्त्ती ६० राजाओका विवरण लोककथाके आधारसे दिये जानेका उल्लेख किया है। माननीय ओझाजीके मतानुसार सीहाके पिता सेतरामसे परवर्ती राजाओके नामादि तो इतिहाससे वहुत कुछ समर्थित हैं, पर जयचन्द गाहडवालके साथ उनका सम्बन्ध जोडना स्पष्टत भूल है, जब कि प० विश्वेश्वरनाथ रेऊ गाहडवाल व राठौडोका एक ही वंश मानकर इसे ठीक समझते है।

जसवत उद्योतके प्रारंभमें इसका रचनाकाल संवत् १७०५ आषाढ शुक्ला तृतीया दिया है, पर इस ग्रन्थमें सवत् १७०७के कार्त्तिकमें हुई पोहकरण विजय तकका वृत्तान्त पाया जाता है, अत प्रस्तुत ग्रन्थकी रचनाका प्रारभ सवत् १७०५में होकर १७०८के करीब परिसमाप्ति हुई समझनी चाहिये, क्योकि इसके पीछे-का कोई वृत्तान्त इस काव्यमें नही पाया जाता।

जोधपुरके राजवशमें महाराजा जसवन्त सिंह बडे साहित्यप्रेमी, विद्वान् एवं प्रतापी राजा हुए हैं। कवि उनके आश्रयमें ही रहता था और कई वर्षों तक साथ रहनेके कारण उसे राठौडोके इतिहासकी अच्छी जानकारी हो गयी थी। फलत उसने कई स्थानोमें राठौड वशके प्रधान पुरखाओसे चली शाखाओका व उनके विशिष्ट व्यक्तियोका महत्वपूर्ण निर्देश किया है। मुहणोत नैणसीकी ख्यातसे भी प्रस्तुत ग्रथ प्राचीन एव महाराजा जसवत सिंहकी विद्यामानतामें रचना होनेसे इसका ऐतिहासिक महत्व और भी वढ जाता है। इससे काव्यकी एक मात्र प्रति अनूप सस्कृत लाइब्रेरीमें हैं।

क्यामखारासा

मुस्लिम कवि जान रचित क्यामखारासाका सम्पादन श्री दशरथ शर्मा एव श्री अगरचन्द नाहटा व भँवरलाल नाहटा द्वारा तथा प्रकाशन राजस्थान पुरातत्व मंदिर जयपुरकी राजस्थान पुरातन ग्रथमालासे सवत् २०१० में हुआ।

यह रासा अनेक दृष्टियोंसे महत्त्वपूर्ण है। इसकी साहित्यिक महत्ता उच्चकोटि की है। इसकी शैलीमें प्रवाह है। प्रेम पूर्ण आख्यायिकाओ और प्राकृतिक वर्णनोसे कवि जान भी इसे सुसज्जित कर सकता था, वह वीर रसका ही नही, शृङ्गार रसका भी कवि था; किन्तु उसने सरल ओजस्विनी भाषामें अपने वशके इतिहासको ही प्रस्तुत करना उचित समझा, उसने यथाशक्ति मितभाषिता और सत्यका आश्रय लिया। इसकी भी एकमात्र प्रति झुंझुनूके जैन भण्डारसे प्राप्त हुई।

बीकानेरके दर्शनीय जैन मन्दिर

श्री अगरचन्दजी नाहटाने यह अत्यन्त लघुकाय पुस्तिका सवत् २०१० में लिखी और प्रकाशित की। इसमें वीकानेरके दर्शनीय जैन मंदिरोका प्रामाणिक इतिहास दिया गया है। सुन्दर, कलात्मक जैन मदिरोके आधिक्यके कारण वीकानेरको जैनतीर्थोंमें स्थान प्राप्त है।

वीकानेर ज वंदीए, चिरनदीये रे, अरिहत देहरा आठ-तीर्थ ते नमु रे।

कविवर समयसुन्दरके समय वीकानेरमें आठ मंदिर रहे होगे, लेकिन आजकल उनकी सख्या चालीस-के लगभग है।

वीकानेरकी तीर्थयात्रा पर जानेवाले जैन यात्रियोंके लिए उक्त पुस्तक अच्छी पथदर्शिका है। इसका

यही महत्त्व है। स्थानकवासी साधु-सम्मेलन भीमसरके प्रसंगसे हजारो व्यक्ति बाहरसे आये थे उनके मदिर दर्शनकी सुगमताके लिए पुस्तक रूपमें लिखकर प्रकाशित कर दी गई थी।

श्रीमद् देवचन्द्र स्तवनावली

श्रीमद् देवचन्द्रजीके प्रामाणिक जीवन और उनके भक्तिरस आपूरित पदोके सकलनसे श्री अगरचन्दजी नाहटाने उक्त पुस्तक लिखकर मवत् १०१२ में प्रकाशित की है।

श्रीमद् देवचन्द्रजीका जन्म वि० सवत् १७४६ में बीकानेरके निकटवर्ती किसी ग्राममें हुआ था। आप शनै शनै सस्कार विकास करते-करते उच्चकोटिके साधक कवि बन गये। आपने स्वरचित स्तवनोमें तत्त्व-ज्ञानके साथ-साथ भक्तिका अखण्ड प्रवाह बहाया है। श्री नाहटाजीने भक्तकविके जीवनचरित्रको लिखते समय जैन दर्शन पर भी प्रसग वश प्रकाश डाला है, वह प्रकाश कही सूचनात्मक है और कही तुलनात्मक। भक्त श्रावकोके लिए पुस्तकका मूल्य बहुत है। वह परम उपयोगी है।

बीकानेर जैन लेख सग्रह

श्री नाहटाद्वयकी कल कीर्त्तिको चतुर्दिक् प्रसरित करनेवाले ग्रथरत्नोमेंसे उक्त ग्रथ भी एक है। ग्रथके प्राक्कथन लेखक श्री वासुदेवशरण अग्रवालने श्री नाहटाजीके प्रकाण्ड पाण्डित्य, श्रमनिष्ठा और शोध-रुचिकी भूरि-भूरि प्रशसा की है।

इस ग्रथका प्रकाशन श्री अभय जैन ग्रथमालाके पचदश पुष्पके रूपमें सन् १९५६ में हुआ। इसमें बीकानेर राज्यके २६१७ तथा जेसलमेरके १७१ अप्रकाशित लेखोका सग्रह है। प्रारम्भमें शोधपूर्ण-विद्वत्ता-परिपूर्ण विस्तृत भूमिका दी गयी है। परिशिष्टमें वृहद् ज्ञान भण्डारकी वसीयत, श्री जिनकृपाचन्द्रसूरि धर्मशालाका व्यवस्थापत्र और पर्यूषणोमें कसाईवाड़ा बन्दीके मुचलकेकी नकल है।

बीकानेर जैन लेख सग्रहमें ९वी-१०वी शताब्दीसे लेकर आज तकके करीब ग्यारह सौ वर्षोंके लगभग ३००० लेख हैं। इस लेख सग्रहकी एक विशेष वात यह है कि इसमें श्मशानोके लेख भी खूब लिये गये हैं। बीकानेरके जैन इतिहाससे सम्वद्ध इतनी ज्ञानवर्द्धक ठोस भूमिका भी इसी ग्रन्थकी दूसरी उल्लेखनीय विशेषता है। बीकानेर राज्य भरके समस्त लेखोके एकीकरणका प्रयत्न भी इस ग्रन्थकी अन्य विशेषता है।

प्रस्तुत लेखोमें इतनी विविध ऐतिहासिक सामग्री भरी पडी है कि उन सब बातोके अध्ययनके लिए सैंकडो व्यक्तियोकी जीवन साधना आवश्यक है। इन लेखोमें राजाओ, स्थानो, गच्छो, आचार्यो, मुनियो, श्रावक-श्राविकाओ, जातियो और राजकीय, धार्मिक, सामाजिक, सास्कृतिक इतनी अधिक सामग्री भरी पडी है कि जिसका पार पाना कठिन है। इसी प्रकार इन मन्दिर एव मूर्त्तियोसे भारतकी शिल्प स्थापत्य, मूर्त्तिकला और चित्रकला आदिके विकासकी जानकारी ही नही मिलती, पर समय-समयपर लोक-मानसमें भक्तिका किस प्रकार विकास हुआ, नये-नये देवी देवता प्रकाशमें आये, उपासनाके केन्द्र बने, किस-किस समय भारतके किन-किन व्यक्तियोने क्या क्या महत्त्वके कार्य किये, उन समस्त गौरवशाली इतिहासोकी सूचना इन शिलालेखो, पत्रलेखो, ताडपत्र लेखो और मूर्तिलेखोमें पायी जाती है। श्री नाहटाजीने लेख सग्रहके क्षेत्रमें यह बहुत बडा काम किया है। ग्रन्थके प्रत्येक चित्रफलकपर उनका कठिन श्रम झलकता है और उनकी अगाध विद्वत्ता ग्रथके आद्यन्त भागमें। इस उत्कृष्ट कोटिके ग्रथ प्रणयनके लिए नाहटाद्वयकी जितनी ही प्रशसा की जाय, वह थोडी है। इसमें करीव १०० चित्र भी दे दिये गये है।

वम्बई चिन्तामणि पार्श्वनाथादि स्तवनपद सग्रह

उक्त पुस्तक संवत् २०१४ में श्री अगरचन्द भँवरलालजी नाहटाके सम्पादकत्वमें ट्रस्टी गण श्री

चिन्तामणि पार्श्वनाथ मदिर बम्बईके द्वारा प्रकाशित की गयी। इसमे बम्बईके चिन्तामणि पार्श्वनाथकी स्तुति-पदोकी सख्या अपेक्षाकृत अधिक है, अत पुस्तकका नाम बम्बई चिन्तामणि पार्श्वनाथपर रक्खा गया है। ये समस्त स्तवन वाचक श्री अमरसिंधुरजी रचित है। श्री अमरसिंधुरजीने बम्बईमे रहते हुए ही अधिकांश रचनाएँ की है और एक विशिष्ट कार्य यह किया कि श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथका मदिर, धर्मशाला व उपाश्रय श्रावकोको उपदेश देकर प्रतिष्ठित किया। इन सबके लिए उन्हें आठ वर्षों तक प्रयत्न करना पडा।

भक्त श्रावकोके लिए यह पुस्तक अनुपम रत्न है।

ज्ञानसार ग्रन्थावली

श्री अगरचन्दजी नाहटा एव श्री भँवरलालजी नाहटा द्वारा सम्पादित एव श्री अभय जैन ग्रथमाला द्वारा प्रकाशित यह पुस्तक सन् १९५९ में तैयार हो सकी। इसमें महायोगी ज्ञानसारजी द्वारा रचित पदावली एव अन्य रचनाओका सग्रह है। योगीराजकी प्रामाणिक जीवनी भी दी गयी है। महापण्डित श्री राहुल साकृत्यायनने इसकी भूमिका-प्राक्कथनमें उचित ही लिखा है कि 'ज्ञानसार ग्रन्थावलीका प्रकाशन करके श्री नाहटाजीने हिन्दी साहित्यके ऊपर बडा उपकार किया है।" भाषा, भाव, ऐतिह्य और धार्मिकताकी दृष्टिसे पुस्तक अतीव महत्त्वपूर्ण है।

छिताईचरित

यह पुस्तक श्री हरिहरनिवास द्विवेदी एव श्री अगरचन्दजी नाहटाके सम्पादकत्वमें विद्यामन्दिर प्राचीन ग्रन्थमालाके तृतीय पुष्पके रूपमें सन् १९६० में प्रकाशित हुई है। सम्पादक श्री द्विवेदीने ठीक ही लिखा है।

"छिताईचरित हिन्दीका गौरव ग्रन्थ है। हिन्दीकी लौकिक आख्यान काव्यधाराकी श्रेष्ठ रचनाके रूपमे, राजनैतिक इतिहासकी घटनाओके कथाबीजपर आधारित सर्वप्रथम प्रामाणिक रचनाके रूपमें छिताई-चरितका स्थान हिन्दी साहित्यमें अत्यन्त श्रेष्ठ है · इतनी महत्त्वपूर्ण रचनाकी प्रतियाँ खोज निकालनेके लिए हिन्दी ससार उन (श्री अगरचन्दजी नाहटा)का सदा ऋणी रहेगा।"

यह सत्य है कि श्री नाहटाजीको छिताईचरित लेखन-शोधन-सशोधन और मुद्रणमें अनेक कठिनाइयो-का सामना करना पडा था, लेकिन वे हमारे दृष्टिमें "कठिनाइयाँ" हो सकती है, श्री नाहटाजी तो उन्हे 'प्रेरक तत्त्व' कहते हैं, इसलिए उनके लिए वे वरदानभूत है। निस्सन्देह श्री नाहटाजी छिताई-चरित प्रकाशनमें तथाकथित वरदानके विशेष पात्र रहे होगे, यह हमारी और द्विवेदीजीकी मान्यता है।

पीरदान लालस ग्रन्थावली

यह पुस्तक श्री अगरचन्दजी नाहटा द्वारा सम्पादित और सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट बीकानेर द्वारा सन् १९६०में प्रकाशित हुई है। सम्पादकने इसे चारण जातिके दो उज्ज्वल रत्नो—श्री शकरदान जेठी भाई और श्री उदयराजजी उज्ज्वलके करकमलोमें सादर समर्पित किया है।

प्रस्तुत ग्रन्थावलीमें नारायण नेह, परमेसर पुराण, हिंगलाज रासो, अलख आराध, अजपा जाप, ज्ञानचरित और पातिक पहार नामक सात ग्रन्थो और ३० डिंगल गीतोको स्थान प्राप्त हुआ है। लालसजी-की ये समस्त रचनाएँ प्राय भक्तिप्रधान हैं। इन रचनाओमें दूहा, चौपई, गाहा, चौसर, मोतीदाम, कवित्त, भुजगी, पद्धरी, झम्पाताली और डिंगल गीतोके अटूट तालो साणोर आदि कई ग्रन्थोका प्रयोग हुआ है। पुस्तकातमें शब्दकोश और अन्तरकथाएँ देकर उसकी उपयोगिताको और भी बढा दिया गया है। पुस्तकके प्रारम्भमें कवि पीरदान लालसकी हस्तलिपिका चित्र भी दिया गया है।

जिनहर्ष ग्रन्थावली

श्री अगरचन्दजी नाहटा द्वारा सम्पादित और श्री सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट बीकानेर द्वारा सन् १९६० मे प्रकाशित 'जिनहर्ष ग्रन्थावली' श्री अगरचन्दजी नाहटाके ३० वर्षके शोधश्रमका रूपीकरण हैं। उन्होने कविकी लगभग ४०० लघु रचनाएँ इस ग्रन्थावलीमें प्रकाशित की हैं।

महाकवि जिनहर्ष सरस्वतीके वरद पुत्र थे। उन्होने निरन्तर ६० वर्ष तक काव्यसाधना की थी। उनके भावुक पवित्र हृदय और विवेकशील मस्तिष्कने मां सरवस्तीके रत्नकोशको सम्भरित करनेके लिए सात महाकाव्य, इक्कीस एकार्थकाव्य, इक्कावन खण्डकाव्य और लगभग २०० मुक्तक रचनाओ तथा हजारो फुटकर पदोका निर्माण किया था। उन्होने लगभग एक लाख परिमित सख्या पद बनाये थे।

श्री नाहटाजीने ऐसे सरस्वती पुत्रको प्रकाशमे लानेका सदैव प्रयत्न किया। उन्हीके निर्देशसे प्रस्तुत पक्तियोके लेखकने "महाकवि जिनहर्ष एक अनुशीलन" शीर्षकसे शोधप्रवन्ध प्रस्तुत करके राजस्थान विश्व विद्यालयसे पी-एच डी की उपाधि प्राप्त की।

वस्तुत महाकवि जिनहर्ष इतने व्यापक और विशाल है कि उन पर अनेक दृष्टियोसे विचारविमर्श किया जा सकता हैं।

जिनराजसूरि-कृति-कुसुमाजलि

प्रस्तुत पुस्तकका सम्पादन श्री अगरचन्दजी नाहटा और प्रकाशन सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट बीकानेरने सवत् २०१७ में किया। सम्पादकने इस कृतिको श्री बुद्धिमुनिजी महाराजके करकमलोंमें श्रद्धा एव भक्तिपूर्वक समर्पित किया है। प्रस्तुत पुस्तक ऐतिहासिकता, भक्तिभावना, भाषा और साहित्यकी दृष्टिसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। सम्पादक महोदयने पुस्तकारम्भमें श्री जिनराजसूरिका प्रमाणपुष्ट जीवनचरित और उनकी साहित्यसेवापर प्रकाश डाला हैं। पुस्तकमें कतिपय चित्र भी दिये गये हैं। कृतिका साहित्यिक अध्ययन प्रस्तुत करके एक अभावकी पूर्ति की गयी है। पुस्तकान्तमे दिये गये राजस्थानी शब्दकोश और श्री जिनराज सूरि प्रयुक्त देशी सूचीसे उसकी उपयोगिता बढ गयी है।

धर्मवर्द्धनग्रन्थावली

प्रस्तुत पुस्तकका सम्पादन श्री अगरचन्द नाहटा और प्रकाशन सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूटने सवत् २०१७ मे किया है। सम्पादकने इसका समर्पण राजस्थानीके विद्वान् श्री नरोत्तमदासजी स्वामीको किया है। पुस्तकारम्भमें कवि धर्मवर्द्धनकी हस्तलिपिका चित्रण और पुस्तकान्तमें धर्मवर्द्धन ग्रन्थावलीमें प्रयुक्त देशियोकी सूची दी गयी है। पुस्तकमे कविवर धर्मवर्द्धनजीकी प्रामाणिक जीवनी और उनकी गुरुपरम्पराका परिचय दिया गया है। कविके स्मारक स्तूपका चित्र भी कृतिके आरम्भमें रखा गया है। कविवरकी साहित्यसाधनाका अति सुन्दर और सन्तुलित मूल्याकन प्रसिद्ध विद्वान् डॉ मनोहर शर्माकी सवल लेखनीसे हुआ है, जो स्तुत्य है। इस सग्रहकी एक मात्र प्रति बीकानेरके ज्ञान भंडारमें है।

सीताराम चौपाई

इस पुस्तकके सम्पादक श्री अगरचन्द नाहटा और भँवरलाल नाहटा है। इसका प्रकाशन सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टी-ट्यूटसे सवत् २०१९ में हुआ है।

महोपाध्याय कविवर समयसुन्दर १७वी सदीके महान् विद्वान् और कवि थे। आपका साहित्य वहुत विशाल हैं। आपने गद्य और पद्य दोनो ही विधाओमे साहित्यसर्जना की थी। आपकी पद्य रचनाओमे सीताराम चौपाई सवसे वडी रचना है। इसका परिमाण ३७०० श्लोक परिमित है। जैन परम्परा की रामकथाको इस काव्यमें गुफित किया गया है।

प्राचीन काव्योकी रूप परम्परा

इस पुस्तकका प्रकाशन भारतीय विद्या मन्दिर शोध प्रतिष्ठान बीकानेरने सन् १९६२ में किया। श्री अगरचन्द नाहटा द्वारा लिखित प्राचीन काव्योकी रूप परम्परा पुस्तक उनके गत ३१ वर्षोमें लिखे गये प्राचीन भाषा-काव्योकी रूप परम्पराके सम्बन्धमें लेखोका सग्रह है जो समय-समय पर नागरी प्रचारिणी पत्रिका, हिन्दी अनुशीलन, सम्मेलन पत्रिका, भारतीय साहित्य, कल्पना प्रभृतिमे प्रकाशित होते रहे हैं। इस पुस्तकमें चर्चित काव्य रूपोमेंसे अधिकाशकी परम्परा अपभ्रशकालसे निरन्तर चली आ रही है।

सभा शृगार

इस पुस्तकके सकलनकर्ता तथा सम्पादक श्री अगरचन्दजी नाहटा हैं। इसका प्रकाशन नागरी प्रचारिणी सभासे सवत् २०१९ में हुआ।

सभा शृ गार वर्णक साहित्यकी कोटिमें आता है। इस साहित्यका सम्बन्ध किसी वस्तुके उस परि-निष्ठित वर्णनसे होता है जिसे सार्वजनिक रीतिसे आदर्श वर्णनके रूपमें स्वीकार कर लिया जाता था। इस प्रकारके वर्णनमें कवि और कलाकार दोनो ही सहायक होते है एव श्रोता तथा वक्ता दोनोको इस प्रकारके वर्णनोमें वस्तुका ज्वलन्त चित्र प्राप्त होता है। इसलिये श्री नाहटा सम्पादित सभा शृगार पुस्तकमें उपयो-गिता असदिग्ध है।

पच भावनादि सज्झाय सार्थ

प्रस्तुत पुस्तक श्री अगरचन्द नाहटाके सम्पादकत्वमे श्री भवरलाल नाहटाने सम्पादित की है। इसके कर्ता श्रीमद्देवचन्द हैं। पुस्तकमें पच भावनाओका पद्यात्मक वर्णन है। परिशिष्टमे तपस्वी मुनियोकी जीवनियाँ दी गयी हैं।

रत्न परीक्षा

यह पुस्तक अभय जैन ग्रन्थमाला बीकानेरसे नाहटा अगरचन्द भवरलालके सम्पादकत्वमें प्रकाशित हुई है। रत्नपरीक्षा सम्बन्धी इनीगिनी पुस्तकोमें इस पुस्तकका महत्त्वपूर्ण स्थान है। पुस्तकके भूमिका भागमें विद्वान् सम्पादकोने रत्न परीक्षा सम्बन्धी हिन्दी साहित्यके ग्रन्थोका सविवरण उल्लेख किया है। इसमें चोटीके विद्वानोके लेख भी सग्रहीत हैं। परिशिष्टमें नवरत्नपरीक्षा, मोहरारीपरीक्षा इत्यादि देकर पुस्तकको और भी उपयोगी बनाया गया है।

दादा श्री जिनकुशलसूरि

श्री अगरचन्द नाहटा एव भवरलाल नाहटाने इस पुस्तकको लिखकर द्वितीयावृत्ति १९६३ में प्रका-शित की है। इसकी भूमिका मुनि जिनविजयजीने लिखी है। पुस्तकमें दादाजीकी प्रमाणपुष्ट जीवनी प्रस्तुत की गयी है। पुस्तकान्तमें उनके ग्रन्थोकी रचना और शिष्यपरम्परापर प्रकाश डाला गया है। पुस्तकान्तमें सूरिजी रचित कतिपय प्राकृत संस्कृत स्तवन भी दिये गये है।

भक्त-माल सटीक

इस पुस्तकका सम्पादन श्री अगरचन्दजी नाहटाने किया है। राघवदासकी यह मूल रचना है और चतुरदासने इसकी टीका लिखी थी। यद्यपि नाभादासजीकी भक्तमालके अनुकरणमें ही राघवदासने अपनी भक्तमाल बनायी, फिर भी वह तद्वत् नही है। यह उससे काफी बडी है और इसमें अनेक सन्त एव भक्तजनोका उल्लेख है जिनका उल्लेख नाभादासजीने नही किया है। नाभादासजीने जहाँ केवल वैष्णव भक्तोको स्थान दिया है वहाँ श्रीराघवदासने, जो कि स्वय दादूपन्थी थे, अपने पथके सन्तोके अतिरिक्त रामानुज, विष्णुस्वामी, कबीर, नानक आदि अन्य मतावलम्बियोका भी विवरण दिया है।

राजस्थानी साहित्यकी गौरवपूर्ण परम्परा

यह पुस्तक श्रीअगरचन्दजी नाहटा द्वारा कलकत्ता विश्वविद्यालयकी रघुनाथप्रसाद नोपानी स्मृति व्याख्यानमालाके अन्तर्गत दिये व्याख्यानोका सकलन है। इन व्याख्यानोमें उन्होने राजस्थानी साहित्यकी गौरवपूर्ण परम्परापर प्रकाश डालते हुए उसके विकासको दिखाया है। उन्होने यह भी वताया है कि राजस्थानमें सस्कृत, प्राकृत और अपभ्रशमें कौन-कौनसे गौरवग्रन्थ रचे गये। उन्होने मध्यकालीन राजस्थानी साहित्यपर भी सारगर्भित विवेचन प्रस्तुत किया है। राजस्थानी लोक साहित्यपर भी उनका विचार मन्थन हुआ है।

मणिधारी श्री जिनचन्द्रसूरि

यह पुस्तक नाहटाद्वय द्वारा मणिधारी श्रीजिनचन्द्र सूरिके अष्टम शताब्दी महोत्सवके उपलक्ष्यमें सूरिजीकी जीवनीके रूपमें प्रकाशित की गयी है। इसमें मणिधारीजीकी अत्यन्त प्रभावक पाण्डित्यपूर्ण और परहित-काररत व्यक्तित्वको उभारा गया है। अन्तमें सूरिजीपर बने अष्टक स्तवन भी दिये गये हैं। सबसे अन्तमें 'सार्थक व्यवस्था शिक्षा कुलकम्' दिया गया है।

अष्टप्रवचनमाता सज्झाय सार्थ

सम्पादक श्री अगरचन्द नाहटाने श्री देवचन्द्रकृत अष्टप्रवचनमाता सज्झायोको इस पुस्तकमें सग्रहीत किया है। उन्होने सज्झायोका हिन्दीमें अर्थ देकर पुस्तकको और भी श्रावकोपयोगी वना दिया है।

ऐतिहासिक काव्यसग्रह

प्रस्तुत काव्यसग्रहके सम्पादक श्री अगरचन्दजी नाहटा हैं। इसमें स्था० जैन इतिहासके निर्माणमें उपयोगी महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक काव्योका संकलन किया गया है। इसका प्रकाशन मुनि श्री हजारीमल स्मृति प्रकाशन ब्यावरने किया है। इस संग्रहकी अधिकाश रचनाएँ अप्रकाशित हैं। इसमें अनेक विधाओका समावेश हुआ है। उनकी संख्या लगभग २१ से अधिक है।

शिक्षासागर

यह राजस्थानके मुसलमान कवि जानका लिखा हुआ उपदेशप्रधान नीतिकाव्य है। सम्पादक श्री अगरचन्द नाहटाने अपने प्राक्कथनमें वल दिया है कि इस कवि पर खूब अनुसंधान कार्य होना चाहिए। इसका प्रकाशन राजस्थान साहित्य समिति विसाऊसे हुआ है।

बी बी बादीका झगडा

कवियित्री ताजकी लिखी हुई इस पुस्तिकाका सम्पादन श्री अगरचन्द नाहटाने और प्रकाशन राजस्थान साहित्य समिति विसाऊकी ओरसे हुआ है। इस रचनाका उद्देश्य स्त्रीसमाजमें प्रचलित कहावतोंके प्रयोगका रहा है। प्रस्तुत काव्यमें कही-कही आध्यात्मिक सन्देश भी व्यजित होता है। कवयित्री ताजकी इस विविध रचनाकी केवल दो ही प्रतियाँ प्राप्त हैं। १. अभयराज ग्रन्थ भण्डारमें २. अनूप संस्कृत लाइब्रेरी में।

रुक्मणी मंगल

इसका कवि पदमा तेली था। उसने प्राचीन राजस्थानीमें इस पद्यपुस्तककी रचना की। विसाऊकी राजस्थान साहित्य समितिने श्री अगरचन्दजी नाहटाके सम्पादकत्वमें इस पुस्तकका प्रकाशन किया है। पुस्तक भाषा और भावोकी दृष्टिसे अत्यन्त मनोहर है। रुक्मणी मंगल राजस्थानीका अत्यन्त लोकप्रिय व प्रसिद्ध

भक्ति काव्य है। इसके बडे-बडे अभिवर्द्धित सस्करण कई उपलब्ध है पर मूल लघुकाव्यका एक मात्र सग्रह इसकी प्राचीनतम प्रतिसे यह सम्पादन किया गया है।

श्री नाहटाजीके सम्पादकत्वमें निम्नाकित पुस्तकें छप रही हैं—

१. मरु-गूर्जर जैनकवि और उनकी रचनाएँ।

२ दम्पति विनोद (इन्स्टीट्यूटसे कई वर्ष पूर्व मुद्रित पर प्रकाशित अव होगी।)

३ प्राचीन गुर्जर काव्य सचय (ला० द० मन० वि० स० स०)

निम्नाकित पुस्तके श्रद्धेय श्री अगरचन्दजी नाहटाके सत्परामर्शसे उनके साहित्यप्रेमी विद्वान् भ्रातृपुत्र श्री भँवरलालजी नाहटाके सम्पादकत्वमें प्रकाशित हुई हैं। पुस्तकोकी भूमिकाएँ अत्यन्त सारगर्भित विद्वत्तापूर्ण और प्रमाणपुष्ट है। कतिपय भूमिकाएँ तो अपनेआपमें एक शोधपूर्ण ग्रन्थका रूप ले लेती हैं।

पुस्तक नामावली

१ सहजानन्द-सकीर्त्तन। २ बानगी। ३ जीवदया प्रकरण-काव्यत्रयी। ४ विनयचन्द्र-कृति-कुसुमाजलि। ५ पद्मिनीचरित्र चौपई। ६. युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरिचरितम्। ७ समयसुन्दर रास पंचक। ८ हम्मीरायण। ९ राजगृह। १० सती मृगावती।

श्री नाहटाजीका कृतित्व पुस्तको तक ही सीमित नही है वे गत चालीस वर्षोंसे विभिन्न पत्र पत्रिकाओमें निरन्तर लिखते आ रहे हैं। उनके लगभग तीन हजार सारगर्भित लेख पत्र-पत्रिकाओमें प्रकाशित हो चुके है। वे प्रतिमास लगभग साठ पत्र-पत्रिकाओमें लिखते रहे हैं। उनके लेखोकी अपूर्ण सूची सवत् २०१० मे प्रकाशित हुई थी, उस सूचीमें उनके लेखोकी सख्या १०८४ बताई गयी है। लेकिन आज नाहटाजीके लेखोकी सख्या ३००० से ऊपर हो गयी है। वे ज्यो-ज्यो वृद्ध होते जाते हैं उनका विवेक-चिन्तन प्रौढ और लेखनशक्ति अधिक सक्रिय और सबल होती जाती हैं।

श्री नाहटाजीके लेखोको विषय-वर्गीकरणकी दृष्टिसे हम निम्नाकित शीर्षक एव उपशीर्षक दे सकते हैं—

विभाग १ सन्दर्भ, इतिहास, पुरातत्त्व, कला

१ सन्दर्भ—ये लेख नागरी प्रचारिणी पत्रिका, हिन्दुस्तानी, ज्ञानोदय, जैनधर्मप्रकाश प्रभृति पत्रिकाओमें प्रकाशित हुए है। इनका वर्ण्य विषय विविध है। अधिकाश लेख भाषा वैज्ञानिक और दार्शनिक विषयोसे सम्बद्ध हैं।

२. इतिहास—ये लेख महावीर सन्देश, जैन सिद्धान्त भास्कर, अनेकान्त, राजस्थान भारती प्रभृति पत्रिकाओमे प्रकाशित हुए हैं। इनमें राजवशोके इतिहास, जैन इतिहास, प्राचीनतम सामाजिक एव सास्कृतिक स्थितिसे सम्बद्ध लेख अत्यन्त प्रसिद्ध हैं।

३ पुरातत्त्व नगर, तीर्थ, मन्दिर, प्रतिमा लेख आदि—नाहटाजीने राजपूतानेकी बौद्ध वस्तुएँ, चित्रकला जैनमूर्तिकला, आबू, चित्तौड आदिपर शतश लेख लिखे हैं। इनका प्रकाशन धर्मदूत, शोधपत्रिका, कल्पना, लोक वाणी, जैनसत्यप्रकाश प्रभृति पत्रिकाओमें हुआ है।

४ जैन सम्प्रदाय तथा गच्छ—नाहटाजीने जैनधर्म सम्प्रदाय और गच्छोंपर अनेक प्रकारसे प्रकाश डाला है। यति समाजकी उन्नतिके लिए जहा उन्होने नये उपाय सुझाये हैं वहाँ उन्होने प्राचीन जैनधर्मके गुण भी गाये हैं। उन्होने अपने लेखोमें अनेक प्रकारके छोटे-मोटे साम्प्रदायिक प्रश्न भी उठाये है और गच्छ

विद्वानोसे समाधान चाहा है। उन्होने अनेक गच्छोकी पट्टावलियाँ भी प्रस्तुत की हैं और संशोधनकी आवश्यकतापर बल दिया है। इस प्रकारके लेख प्राय जैनध्वज, श्रमण, जैनसत्यप्रकाश, वीरवाणी और महावीरसन्देश जैसी पत्रिकाओमें छपते रहे हैं।

५ **जैन जातियाँ और वंश**—इस उपशीर्षकमें श्री नाहटाजीने जैनधर्म और जातिवाद ओसवंश स्थापना जैसे लेखोको लिखा है। इन लेखोमें उनका पुरातत्त्वविद् और इतिहासज्ञका स्वरूप सामने आता है। उनके ये लेख अनेकान्त, जैनभारती, ओसवाल नवयुवक जैसे पत्रोमें प्रकाशित होते रहे है।

६. **जैन महापुरुष**—नाहटाजीने जैन आचार्यो तथा विद्वानोकी प्रमाणपुष्ट जीवनियाँ लिखकर उन्हें विद्वत् समाजके सम्मुख प्रस्तुत किया है। जैन समाजमें पूजित श्री कृष्ण, वत्सराज उदयन, सम्राट विक्रम, आचार्य हरिभद्रसूरि तथा सती मृगावती, राजीमति आदिपर प्रकाश डालकर उन्होने उनके आदर्श स्वरूपको जिज्ञासुओके सम्मुख प्रस्तुत किया है। उसी उपशीर्षकमें उन्होने युगप्रधान जिनचन्द्रसूरि और सम्राट् अकवर जैसे ऐतिहासिक लेख भी लिखे है।

७. **जैन महापुरुष (श्रावक)**—इस शीर्षकमें श्री नाहटाजीने अनेक प्रश्न उठाये। जैसे, क्या पैथडसाह पल्लीवाल थे, क्या भामाशाह गौड थे। श्री मोहनलाल दलीचन्द देसाई और श्री पूर्णचन्दजी नाहर जैसे विद्यारत्नके प्रति उन्होने अपनी श्रद्धा संस्मरणके माध्यमसे इसी शीर्षकमें व्यक्त की है। पण्डितरत्न सुखलालजी और पण्डित भगवतजीपर तो श्री नाहटाजीने लिखा ही, उन्होंने जैनेतर महापुरुषो तथा विद्वानोपर भी मुक्तहस्त लिखा है। चूँकि श्री नाहटाजीका जीवनरस आध्यात्मिकरस है। इसलिए उन्हे महर्षि रमण, अरविन्द और यतीजीने वहुत प्रभावित किया है। उन्होने अपनी इस भावनाको महर्षि रमणका आत्मज्ञान शीर्षक लेखमें व्यजित किया है। इस प्रकारके नाहटाजीके लेख राजस्थान क्षितिज, जैन जगत्, वीरवाणी, प्रजामित्र जैसे पत्रोमें प्रकाशित होते रहे है।

विभाग २ : साहित्य

श्री नाहटाजी शोधमनीषी है। वे शोधरसके आस्वादक है और शोध और साहित्यका पुरातन सम्वन्ध है। साहित्यकी अधुनातन नवीन विधाओंसे नाहटाजीका अनुराग नही है। वे मध्यकालीन, भक्त कवियोकी कविताओके अध्ययन, मनन और अन्वेपणमें ही दत्तचित्त रहते हैं। चूँकि साहित्यमें शोधका क्षेत्र प्राय पुरातनसे सम्बद्ध है, इसलिए नाहटाजी शोधक्षेत्रमें सलग्न रहते है, उन्होने अपने अनुभवके वलपर हस्तलिखित ग्रन्थोकी समस्याओसे सम्बद्ध अनेक लेख लिखे है। उन्होने हजारो जैन ज्ञान भण्डारोको देखा, पढा और सुव्यवस्थित एव सूचीवद्ध किया है। लगभग एक लाख पाण्डुलिपियोकी वे सूची वना चुके है। नाहटाजीने ज्ञान भण्डारोके अपने अनुभवोको अनेक लेखोंके माध्यमसे प्रकाशित किया है।

श्री नाहटाजीने साहित्यका इतिहास और साहित्यकारोको भी अपना निवध विषय बनाया है।

उन्होने जैन और जैनेतर साहित्यपर समान भावसे अपनी कलम चलायी है। इस प्रकारके निवधोमें उन्होने पृथ्वीराजरासोकी प्रामाणिकता आदिपर तथा कल्पसूत्रपर विशेष प्रकाश डाला है। उन्होने सस्कृत साहित्य और साहित्यकारोपर भी पर्याप्त निवध लिखे है। इसी प्रकार प्राकृत साहित्य और साहित्यकार, अपभ्र श साहित्य और साहित्यकार, राजस्थानी साहित्य और साहित्यकार आपके प्रिय विपय रहे हैं। आपने आलोचना साहित्यको भी अच्छी देन दी हैं। साहित्यिक सस्थाओपर भी आपने अनेक निवध लिखे है।

इस प्रकार आपके साहित्य विभागके निवधोकी संख्या सहस्रात्मकसे भी अधिक हो जाती है। आपके ये निवध साहित्यसदेश, जैनजगत्, जैनध्वज जैसी बीसियो पत्रिकाओमें छपते रहे है।

विभाग ३ · जैन-धर्म और जैन-समाज

इस शीर्षकमें आपने जैनधर्म और समाज पर सैकडो निवध लिखे है। ऐसे निवधोमें आपने धार्मिक मान्यताओ और परम्परित विवेकानुमोदित पद्धतियोका समर्थन किया है। आपका स्वर नैतिकता और सच्चरित्रता-का स्वर है और उसीके व्यापक प्रसार-प्रचारके लिए आप लिखते रहते है। आपने जिज्ञासा भावसे अनेक प्रश्न प्रकाशित करवाये थे जिनका सुन्दर समाधान कुँवर आणदजीने किया था। ये प्रश्नोत्तर जैनधर्मप्रकाशमें प्रकाशित हुए हैं। ऐसे निवधोकी सख्या भी हजारसे ऊपर है।

विभाग ४ · अध्यात्म-आचार-शिक्षा-अर्थशास्त्र

श्री नाहटाजीका जीवन अध्यात्मोन्मुखी है। वे स्वय पापप्रवृत्तियोसे बचते है और दूसरोको बचानेके लिए लेख लिखकर उपाय बताते हैं। ऐसे निवधोमें उनका एक ही प्रबल स्वर है और वह है आत्मविस्तार-आत्मोन्नतिका स्वर। उनकी शिक्षा है कि आवश्यकताओको कम करो, कहना नही-करना सीखो। और ये सब उन्होने विभिन्न पत्रिकाओमें छपे निवधोके माध्यमसे बताया है। उनके सैकडो ऐसे लेख कल्याण, जीवन साहित्य, अखड ज्योति प्रभृति पत्र-पत्रिकाओमें छपते रहे हैं।

श्री अगरचन्दजी नाहटा सरस्वती और लक्ष्मीके वरद पुत्र है। उन्होने माँ भारतीका उद्धार तो किया ही है साथमें अनेक ग्रथरत्नोसे उसका कोप भी भरा है। कलात्मक वस्तुओके संग्रहसे उन्होने जिस कला भवनको जन्म दिया है, उसमें आज लाखो रुपयोके मूल्यकी दुर्लभ वस्तुएँ संगृहीत है। श्री नाहटाजीके कारण बीकानेर शोध छात्रोका तीर्थस्थल बन गया है। श्री नाहटाजीमें उच्चकोटिकी मानवताका विकास हुआ है। वे परदु:खकातर, विश्वसनीय और निष्कपट सखा एव मार्गदर्शक हैं। उनके जीवनका प्रमुखरस अध्यात्म है और वे इसीकी साधनामें दत्तचित्त है।

श्री नाहटाजी एकरूप होकर भी अनेकरूप हैं। वे विद्वानोके वरेण्य, दीनदुखियोके शरण्य और जिज्ञासुओके ज्ञानार्णव है। वे सफल गृहस्थ, अच्छे पिता, कर्तव्यपरायण पति, स्नेहशील नाना और दादा है। व्यापारियोकी दृष्टिमें वे 'दक्ष व्यापारी' और समाजसेवकोमें समाज हितकारी है। धर्मप्राण व्यक्तियोंके वे धर्मसिन्धु और ज्ञानपिपासुओके लिए वे अमृतबिन्दु हैं। अगर-तगर और चन्द्र रश्मियोकी शीतलता, आत्मीयता तथा सुजनतासे कौन श्रान्त हुआ है, उसी प्रकार सुगन्धित एव परम शीतल व्यक्तित्व श्री अगर-चन्दजी नाहटासे किसका मन भरा है! किसीका भी नहीं। श्री नाहटाजीका व्यक्तित्व और कृतित्व अत्यन्त व्यापक आकाशके समान है आकाशमें हर क्षमताका जीव अपने सामर्थ्यके अनुसार भरपूर उड तो सकता है, लेकिन उसका ओर-छोर नही पा सकता, ठीक उसी प्रकार श्री नाहटाके चरित पर यथाशक्ति लिखना तो संभव है, पर उसकी सम्पूर्णताकी सीमाका स्पर्श करना अत्यन्त कठिन है।

यावत: स्खलन क्वापि भवत्येव प्रमादत: ।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनाः ॥

नाहटा-वंश-प्रशस्तिः

रचना-ज्येष्ठ शुक्ला ११, सम्वत् २०२३

सरस्वती नमस्कृत्य गुरुदेवप्रसादत । वर्णयामि समासेन स्वीया वशप्रशस्तिकाम् ॥ १ ॥
अस्त्युपकेशवशेऽस्मिन् नाहटा-नाम-गोत्रक । विद्या-वैभव-सम्पन्नो राजते वैक्रमे पुरे ॥ २ ॥
पूते खरतरे गच्छे क्षत्रियान् परमारजान् । जिनादिर्बोधयामास दत्तान्तो मुनिसत्तम ॥ ३ ॥
नाहटा-'जालसी'-वशे-अर्हद्धर्मानुवर्तक । तस्मिन्ग्मानमल्लस्य ताराचन्द्र सुतोऽभवत् ॥ ४ ॥
तत्सुतो जैतरूपाख्यो ग्राम-डाडूसर-स्थित । राज्ञा सम्मानितश्चापि ग्रामलोकेन पूजित ॥ ५ ॥
चत्वारस्तत्सुता आसन् धर्म-कर्म-परायणा । ऊदी-नाम्नी सुता जाता नालग्रामे विवाहिता ॥ ६ ॥
सुश्रेष्ठ्युदयचन्द्राख्यो राजरूपो द्वितीयक । देवचन्द्रस्तृतीयश्च बुधमल्लश्चतुर्थक ॥ ७ ॥
ग्वालपाडा-नगर्यां च, गत्वा ह्युदयसज्ञक । व्यापार स्थापयामास तत्र वाणिज्यवृत्तिक ॥ ८ ॥
प्रवास च विधायैप वर्ष-द्वाविंशपूर्वकम् । अर्थलाभ यशोलाभ कृतवान् निजभ्रातृयुक् ॥ ९ ॥
तस्याभवन् त्रय पुत्रा राजरूपस्य धीनिधे । लक्ष्मीचन्द्रस्तथा दान-मल्ल शकरदानक ॥१०॥
प्रथमोऽस्थान्निजे गेहे द्वितीयोदयचन्द्रक । तृतीयो देवचन्द्रस्य गृहेऽभूच्च सुदत्तक ॥११॥
र॒॰॰द्राङ्के॰न्दु॰शुभे वर्षे लक्ष्मीचन्द्रो ह्यजायत । द्विपष्टिवैक्रमे स्वर्गं चतस्रश्च गता सुता ॥१२॥
'पन्नाधाई' वरावरजी कालीबाईति चाभिधा । गोग्रासर्ढिगलान् या वै वितरार सहस्रश ॥१३॥

श्रृङ्गाराङ्केन्दु (१९१६) सद्वर्षे जातो वै दानमल्लक ।
उदारो धार्मिकश्चैव ख्यातनामा सुकीर्त्तित ॥ १४ ॥
खनिधिद्वयचन्द्रे (१९९०) च श्रावणे प्रतिपत्तिथौ ।
क्षमाप्य सकलान् भूतान् दिव यात समाधिना ॥ १५ ॥

गोमसी-मोतीलालाख्यौ देवचन्द्रस्य पुत्रकौ । स्वर्यातौ, गृहीतो वै शकरदानो दत्तक ॥१६॥
श्रेष्ठिशकरदानस्य गुणाना बृहती ततिम् । वर्णयितु न शक्तोऽह धीर-वीर-मनस्विनः ॥१७॥
शून्यनेत्राङ्कचन्द्राब्दे(१९३०)जात शकरदानक । आजानुबाहु-पुण्यात्मा, अङ्गुष्ठरसवल्लिक ॥१८॥
पुनीता चुन्नीबाई च गृहश्री रत्नकुक्षिका । बोथरा-खेतसी-पुत्री सौख्यसम्पत्प्रवर्धिनी ॥१९॥
श्रद्धालुर्धार्मिक श्रेष्ठी सौम्यो दीर्घविचारक । परोपकारलीनात्मा ह्यप्रमादी विशेषत ॥२०॥
दक्षो व्यापारवाणिज्ये नाडीज्ञानविशारद । ज्योतिर्भैषज्यशास्त्रज्ञ साधुभक्तिपरायण ॥२१॥
श्रीकृपाचन्द्रसूरेर्वै खरतरनमोरवे । अभयजैनग्रन्थाना माला सच्छिक्षया कृता ॥२२॥
दानमल्लस्य गेहे च चातुर्मास्ये निधापिता । सद्धर्मज्ञानवृद्ध्यै वै स्वापत्येषु विशेषत ॥२३॥
एकोनद्विसहस्राब्दे माघशुक्ले चतुर्दशे । त्यक्त्वा चतुर्विधाहारं स्वर्यात शुभभावत ॥२४॥
श्रेष्ठि-शकरदानस्य पञ्च पुत्रा सदाशया । पुत्रिके च प्रजाते द्वे स्वर्णा-मग्नाभिधानिके ॥२५॥
ज्येष्ठो भैरवदानोऽभूत् प्रशान्तो नरसत्तम । देवनिघ्नो गुरोर्भक्त सर्वलोकस्य सेवक ॥२६॥

युग्मबाणमिते (१९५२) वर्षे जन्म यस्य महामते ।
मण्डलादि-समाध्यक्ष-भारो व्यूढश्च तेन वै ॥२७॥
मार्ग (शीर्ष) कृष्णतृतीयाया बाणेन्दुर्विशतौ तथा ।
प्रस्थान कृतवान् स्वर्गं भैरुदानः श्रेष्ठिवर ॥२८॥

शान्त. स्वभयराजश्च विद्याशीलो गुणाग्रणी ।
शिक्षा-समाज-सेवाया व्यापृतश्च दिवानिशम् ।।२९।।
वाणवाणाङ्कचन्द्राब्दे (१९५५) जन्म यस्य शुभे क्षणे ।
मघुकृष्णस्य षष्ठ्या वै भार्या गङ्गा बभूव च ।।३०।।
सप्तसप्ततिवैशाखे (१९७७) स्वस्तिथि कृष्णसप्तमी ।
जाता स्वभयराजस्य चम्पा नाम्नी सुपुत्रिका ।।३१।।
तृतीय शुभराजश्च साहसिक-शिरोमणि । व्यापारदक्षो वर्चस्वी प्रमादमुक्तः कर्मठ ।।३२।।
वसुबाणनिधौ चन्द्रे (१९५८) मासे मार्गसुशीर्षके ।
शुक्लषष्ठ्या सुवेलाया जन्म यस्य महामते ।।३३।।
युगप्रधान-योगीन्द्र-सहजानन्दगुरो कृपा । आत्मज्ञानरसास्वादो भक्तिशीलो विशेपत. ।।३४।।
पञ्चषष्टितमेऽब्द आश्विनकृष्णे त्रयोदशे । जातो मघासुनक्षत्रे चतुर्थो मेघराजक ।।३५।।
चौरैरपहृता यस्य शैशवे स्वर्ण-शृखला । साहसेनोद्धृता येन सस्तुत. कोट्टपालकै ।।३६।।
ऋषि-वसु-निधौ चन्द्रे दानमल्लस्य दत्तक । परोपकार-प्रेमी च नानागुणगणान्वित ।।३७।।
पञ्चमोऽगरचन्द्रो वै धर्मिष्ठो ज्ञानवान् महान् । अध्यात्मरससिक्तो य क्रियाशील सतावर ।।३८।।
ऋषि-ऋत्वङ्क चन्द्राब्दे (१९६७) चतुर्थ्यां चैत्रकृष्णके ।
अग्रचन्द्रस्य सजातो बीकानेरे शुभोद्भव ।।३९।।
वहुज्ञो ज्ञानपूतश्च लेखने निशि वासरे । पुरातत्त्वेतिवृत्तस्य व्यापृत. शोधने तथा ।।४०।।
हिन्द्या च राजस्थान्या च नाना ग्रन्था गवेपिता ।
निबन्धा लिखिता नैकाः सूचीपत्र विशेषत ।।४१।।
जिनदत्तप्रभोरष्ट-शताब्ध्युत्सव-सगमे । जैनेतिहासरत्नाख्य विरुद प्राप्तवान् महत् ।।४२।।
अल्यादिगजेऽखिलविश्वजैनसस्थागतैर्विज्ञजनै प्रदत्त ।
यस्मा उपाधिर्वरणीय एव विद्यादिशोभी किल वारिध्यन्त ।।४३।।
आरानगर्यां गुणिवर्यमध्ये सम्मानितो य किल राज्यपालै. ।
सिद्धान्तयुक्ते भवने पुराणे सिद्धान्त-प्राचार्य-पदेन मान्य ।।४४।।
ग्रन्था. सम्पादिता येन भूमिकालोचनायुता । अप्रमत्त सदा विज्ञो ह्यश्रान्त शास्त्रशीलने ।।४५।।
श्रीविक्रमपुराधीश-शार्दूलसिंह-भूमिपै । स्थापित शोधसस्थान राजस्थान्या यशस्करम् ।।४६।।
निदेशकपद तत्र प्राप्य मान्यं प्रशस्तकम् । व्याख्याता लिखिताश्चैव ग्रन्थास्तेन महर्द्धिका ।।४७।।
श्रेष्ठिनो भैरूदानस्य रत्नत्रयीव सुतत्रयी । भवर-हर्पचन्द्रश्च विमलचन्द्रकस्तथा ।।४८।।
सप्त सुपुत्रिका जाता पैपा-इचर्ज-सपद । छोटा-बाधू पुन पाची कमलाबाईति सप्तमी ।। ४९ ।।
वसु-दर्शनाके चन्द्रे शुभे आश्विनमासके । अश्लेषायुतद्वादश्या जन्म मगलवासरे ।। ५० ।।
श्रेष्ठिनो लक्ष्मिचन्द्रस्य दत्तको भंवरलालक. । भाषा-लिपि-पुरातत्त्व-कथा-साहित्य-लेखक ।। ५१ ।।
अग्रचन्दस्य सहाय कार्ये शीघ्रगति पुन. । सम्पादिताः कृता ग्रन्था वहुला वै अनूदिता ।। ५२ ।।
पुत्र पार्श्वकुमारोऽभूत् एम०काम० उपाधिक । द्वितीय पद्मचन्द्रश्च पौत्र पौत्री तथैव च ।। ५३ ।।
श्रीकान्ता-चन्द्रकान्तेति जाता च पुत्रिकाद्वयी ।
सुशील-सुनीलवरौ समीरश्च राजेशक रूपक ।। ५४ ।।
सुतास्तुर्या हर्षचन्द्रो ललिताशोकदिलोपा । प्रदीपाख्यश्चिरञ्जीवी विद्याध्ययनतत्पर ।। ५५ ।।

श्रेष्ठिश्रीशुभराजस्य तनसुखोऽस्तिप्रिय । तनयं प्रकाशाभिधः पुत्रिके प्रतिभाप्रभे ।। ५६ ।।
आत्मजौ मेघराजस्य केसरि वशिलालकौ ।
तनसुख कनिष्ठश्च जाता पञ्च सुता शुभाः ।। ५७ ।।
भँवरी-सूरज-पुष्पा-माणकदेवी च निर्मला ।
नीलम-प्रेमा-ताराश्च, पौत्र्य , पौत्रो देवेन्द्रक ।। ५८ ।।
अग्रचन्द्रमनस्विन द्वौ सुतौ पञ्च पुत्रिका ।
धर्मचन्द्रो विजयश्च ज्येष्ठी शान्तिश्च कन्यके ।। ५९ ।।
किरणसन्तोषकान्ताश्च पौत्रो राजेन्द्रनामक ।
चिर नन्दतु सद्वश नाहटा वटवृक्षवत् ।। ६० ।। पुनश्च
बुधमल्लस्य त्रिलोक-तेजकर्णाभिधौ सुतौ । रेखचन्द्रस्तुलारामस्तेजकर्णस्य द्वौ सुतौ ।। ६१ ।।
बालचन्द्रो द्वितीयस्य छगनीनाथीति सूते । सत्पुत्रो बालचन्द्रस्य मनोहरः स्वर्गतः ।। ६२ ।।
मोहिनी विदुषी पुत्री सद्वैराग्ये च दीक्षिता । पार्श्वे विचक्षणश्रियश्चन्द्रप्रभेति विश्रुता ।। ६३ ।।
शब्दशास्त्र-कोश-काव्यजैनागमाना पारगा । शतध्यात्री बोधदात्री शीलालङ्कारभूषिता ।। ६४ ।।
कीर्त्तिजुषो ग्रन्थालय स्थापितो विश्वविश्रुत ।
लिखित-मुद्रित-ग्रन्था सन्ति यत्रार्धलक्षका ।। ६५ ।।
मुद्रा-चित्र-पुरातत्त्व-मूर्त्तिसत्क सुसग्रह । श्रेष्ठिशकरदानस्य कलाभवने प्रदर्शित ।। ६६ ।।
तयोरेव शुभनाम्ना कृत सुकृतकोषक । सप्तक्षेत्रे सुपुण्यस्य वृद्धचर्थं सुमहाशयै ।। ६७ ।।
जलालसरसुग्रामे ग्रामे डाँडूसरे तथा । कारितौ सजलौ कूपौ परोपकृतिहेतवे ।। ६८ ।।
ग्रामे जामसरे शुभे धर्मशालापि कारिता । शिक्षालयेभ्यश्च दत्तो, द्रव्यराशिर्मुहुर्मुहु ।। ६९ ।।
श्रीजिनकृपाचन्द्राख्य-सूरीन्द्रसदुपाश्रये । जीर्णोद्धाराद्विस्तीर्णं व्याख्यानगृह कारितम् ।। ७० ।।
शत्रुञ्जये जिनदत्त-ब्रह्मचर्याह्व आश्रमे । कारितो हॉल पुण्यार्थं, राजगृहपावापुरे ।। ७१ ।।
आदिनाथप्रभोश्चैत्ये, नाहटागापाटके । गर्भगृहे सुमनोज्ञे सगमर्मर कारित ।। ७२ ।।
रजतमयी सदङ्गी पुनर्भक्त्यर्थं ढौकिता । नानापुण्यकार्येषु च दत्तमना अहर्निशम् ।। ७३ ।।
अमृतसर 'दा'वाटया रूप्यकाणि सहस्रश । अन्येष्वपि स्थानेषु च सत्कार्येषु वै दत्तवान् ।। ७४ ।।
मणिसागरोपाध्यायान् सुगुरूनाकार्य पुन । वर्षा-सुवासद्वय च कारयामास भक्तित ।। ७५ ।।
तीर्थराजो विमलाद्रेरुपत्यकाया श्रद्धया । कारापिता धर्मशाला जैनभवन विश्रुतम् ।। ७६ ।।
श्रीजगजीवनाश्रमे कोलायते गृहद्वार । निर्मित्त भूरिदानेन भूरिकीर्त्तिश्चोपार्जिता ।। ७७ ।।
पार्श्वनाथप्रभोश्चैत्ये आसामे ग्वालपाटके । कारिता श्रीमहासिंहकोष्टागारिकादि सह ।। ७८ ।।
कृतमुद्धारप्रतिष्ठाञ्च ध्वस्तालयभूकम्पया । जयचन्द्रोपाध्यायेन दानमल्ले उपस्थिते ।। ७९ ।।
ठाकुरवाडीसम्पत्तिर्वृत्तिर्मर्यादा च शुभा । कारिता शकरदानेन स्वय महत्परिश्रमै ।। ८० ।।
डाण्डूसर-जोधासर-महाजनादिपुराणा । कृत्वा हि राजपुत्राणा साहाय्य सचित यशः ।। ८१ ।।
कालिकातापुर्या जैने भवने प्रचुर धन । दत्त गवालपाडे च औषधालयहेतवे ।।८२।।
अभयग्रन्थमालायां नानाग्रन्था प्रकाशिता । अल्पमूल्या अमूल्याश्च सर्वोपकृति हेतवे ।।८३।।
अभयरत्नसारश्च पूजासग्रहनामक । सतीमृगावतीसज्ञो विधवाकृत्यतुर्यकः ।।८४।।
जिनराजभक्त्यादर्श. स्नात्रपूजेति पुस्तिका । भक्तिकर्त्तव्यात्मसिद्धि-दर्शनीयमन्दिराह्वाः ।।८५।।
जिनचन्द्रसूरिवृत्त बुधश्लाघ्य सत्शोधक । ऐतिह्यकाव्यसग्रहो वृत्त सोमसघपते ।।८६।।

श्रीजिनकुशलसूरेर्मणिधारिणश्च पुन. । गुरोर्जिनदत्तसूरेश्चरित वैदुषीयुतम् ॥८७॥
कुसुममाला तथैव ग्रन्थावलि: ज्ञानसार । रत्नपरीक्षा रामाय (ण) काव्यत्रयी जीवदया ॥८८॥
बीकानेर-जैन-लेख-सग्रह-नामको ग्रन्थ । त्रिसहस्रलेखात्मको विस्तृतभूमिकायुत. ॥८९॥
गुरो सहजानन्दस्य सकोर्त्तन सदुत्तम । एते स्वकीयसस्थया ग्रन्था सर्वे प्रकाशिता ॥९०॥
पुनरपि श्रीमद्देव-चन्द्रग्रन्थमाला शुभा । स्थापिता द्विशताब्द्यन्ते श्रीजिनभक्तिभावतः ॥९१॥
चौवीसी-बीसी-स्तवाश्च सार्था पच सुभावना. । अष्टक-प्रवचनाली सार्थ स्वाध्यायसग्रह. ॥९२॥
चत्वारश्चरित्तग्रन्था. कृता बुद्धिमुनिना । बुधेन लब्धि मुनिना काव्यानि च निर्मितानि ॥९३॥
अगरचन्द्रेण कृता वद्धा भँवरलालेन । शार्दूलसस्थया ग्रन्था. काले काले प्रकाशिता ॥९४॥
सभाशृङ्गारउद्योतो जसवन्तादिर्भक्तमा(लक) । राजगृह-कायमरासो फेरूग्रन्थावली च ॥९५॥
राजस्थाने हस्तलेखा खण्डद्वये प्रकाशिता । निर्मिता च प्राचीना काव्यरूपपरम्परा ॥९६॥
जिनराजेण प्रणीता कुसुमाञ्जलिर्विश्रुता । धर्मवर्द्धन-जिनहर्ष, सीतारामचतुष्पदी ॥९७॥
कविसमयसुन्दर-कृता रासाश्च पचका. । हम्मीरायण पद्मिनी-पीरदान ग्रन्थावली ॥९८॥
कालिकाता-शान्तिचैत्यसार्धशताब्दिकाया च । स्मारिकेतिवृत्तसत्का सम्पादिता ज्ञानप्रदा ॥९९॥

चन्द्राकनिधिवसुचन्द्रे (१८९१) ग्वालपाडास्थानके ।
ब्रह्मपुत्रनदीतीरे सद्व्यापारश्च स्थापित ॥१००॥

उदय-राजरूपकौ सुप्रसिद्धौ महीतले । पश्चाच्चापड़े स्थाने च राजरूपलक्ष्मीचन्द्रौ ॥१०१॥
वसुवाणाकचन्द्राब्दे (१९५८) विपणि स्थापितवन्तौ । पश्चादभयकरणागरचन्द्रनाम्ना पुनः ॥१०२॥
इन्द्रियदर्शननिधिचन्द्रे बोलपुरे वरे । शान्तिनिकेतने शुभे व्यापारालय. स्थापित ॥१०३॥
एकोनसप्ततिवर्षे कालिकातापुरे वरे । राजरूप-भैरुदाननाम्ना व्यापार स्थापित ॥१०४॥
शून्यसिद्धयके चन्द्रे च श्रीहट्टे स्थापना कृता । मेघागरचन्द्रनाम्ना शुभफलदायिन ॥१०५॥
चन्द्राके वावूरहाटे अगरचन्द्र नाहटे । तिनाम्नाढतदारी च कृता कर्पटहट्टिका ॥१०६॥
द्विसहस्राब्दे द्व्युत्तरे हाथरसामृतसरश्रीचरकरीमोगजादिषु व्यापार. स्थापित. ॥१०७॥
मोहमय्या कलकत्ताया हट्टिकादि व्यापारक । त्रिपुरे आउट् एजेन्सी सचालिता वृहत्तरा ॥१०८॥
प्रशस्ति मालिका एषा सुधीजनसदाग्रहात् । कृता भँवरलालेन गीर्वाणभाषया मुदा ॥१०९॥
त्रयपक्षखयुग्माब्दे ज्येष्ठ शुक्ल सुवासरे । एकादश्या विक्रमाख्ये सत्पुरे निर्मिते वरे ॥११०॥

श्रेष्ठिवर श्री अगरचंदजी नाहटा और उनकी साहित्य-साधना

प्रो० श्रीचन्द जी जैन, एम० ए० एल-एल० बी०

एक विशिष्ट व्यक्तित्व

लक्ष्मीपुत्र होकर भी श्री नाहटाजीने अपने जीवनको साहित्यसाधनामें लीन किया तथा भगवती सरस्वतीके श्रीचरणोंमें स्वयम्को निष्कामभावसे समर्पित कर एक ऐसा उदात्त आदर्श उपस्थित किया जो व्यापक दृष्टिसे शिक्षितोंको प्रभावित कर रहा है। अध्ययन-शीलता किस प्रकार सामान्य शिक्षाप्राप्तको गहन मनीषी बना सकती है—इस तथ्यको प्रमाणित करनेके लिए विद्यावारिधि श्री नाहटाका जीवन-चरित्र पर्याप्त है।

श्री नाहटा स्वयं एक संस्था हैं, जिसके प्रांगणमें बैठकर हजारों शोधस्नातकोंने अपनी साधनाको सफल बनाया है तथा साहित्य-जिज्ञासुओंने निज कामना की पूर्ति की है और आज भी कर रहे हैं।

उदार दृष्टिवाले होनेके कारण श्री नाहटाका ज्ञानमंदिर सबके लिए खुला हुआ है। ज्ञान-पिपासु यहाँ सुगमतासे प्रवेश पा सकता है। तन, मन और धन इन तीनोंका समन्वयात्मक सहयोग श्री नाहटाके श्री नाहटा विशाल ज्ञान-देवालयमें निरन्तर द्रष्टव्य है। कहा जाता है कि "अतिपरिचयादवज्ञा सन्ततगमनादनादरो भवति"—मान घटे नितके घर आए—लेकिन इस शोधमनीषीका सतत साहचर्य अनादरके स्थान पर आदर-प्रदाता कहा गया है।

पूर्णरूपसे सम्पन्न परिवारके मध्यमें रहते हुए श्री नाहटाजीकी साहित्यिक साधना अबाधगतिसे चल रही है एवं आपके गहन अध्ययन तथा चिंतनने आपको मनीषियोंकी प्रशस्त श्रेणीमें समादृत कर दिया है। ऐसी स्थितिमें निम्न कथन कहाँ तक सिद्धान्ताचार्य श्री नाहटाके सम्बन्धमें लागू हो सकेगा, यह विचारणीय है।

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः, स पण्डितः स श्रुतवान्गुणज्ञः।
स एव वक्ता स च दर्शनीयः, सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति।

धनवान ही कुलीन कहा जाता है तथा वही पंडित, श्रुतवान् और गुणज्ञ होता है एवं वही वक्ता तथा वही दर्शनीय कहा गया है। सत्य तो यह है कि स्वर्णके साथ ही सब गुण रहते हैं।

पुरुषार्थमें अटूट श्रद्धा एवं आस्था रखनेवाले श्री नाहटाके कर्मठ व्यक्तित्वने ही उन्हें यशस्वी और गुणवान् बनाया है।

साधारण वेश-भूषासे निज शरीरको ढके रहनेवाले श्रेष्ठिवर-श्री नाहटा बड़े विनम्र तथा विवेकशील हैं। गोस्वामी तुलसीदासकी निम्न उक्ति आपके संबंधमें पूर्णरूपेण व्यवहृत होती है —

बरसहिं जलद भूमि नियराए। यथा नवहिं बुध विद्या पाए[1]॥

श्री नाहटाकी कर्मसाधना लोक-कल्याणकारी है। वस्तुतः आपका 'स्व' परमें इतना लीन हो गया है कि उसे पृथक् करना अत्यन्त कठिन है।

लगभग पाँच हजार निबन्धोंको लिखकर जो यश एक समर्थ निबन्धकारके रूपमें श्री नाहटाने अर्जित किया है। उसकी कुछ विवेचनात्मक चर्चा यहाँ की जाती है —

---

१ भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमैर्नवाम्बुभिर्भूरिविलम्बिनो घनाः।
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः स्वभाव एवैष परोपकारिणाम्॥

निवंधकी परिभाषा एवं उसके विविध रूप

मानव अपने विचारोंको प्रकट करनेके लिए सदा उत्सुक रहा है। कभी वह अपनी भावनाको पद्यके सहारे व्यक्त करता है तो कभी गद्यको माध्यम बनाकर अपनी सहज अनुभूतियोंको सरस अभिव्यक्ति देता है। समयानुसार इस अभिव्यक्तिके माध्यमोंमें परिवर्तन होता रहा है। एक समय था कि प्रकाशनकी असुविधाओंके कारण इसानने पद्यको विशेषत अपनाया और गद्यकी ओर कम ध्यान दिया। शनैः शनैः भावाभिव्यक्तिको अनुरंजित करनेके हेतु विविध साधनोंको अपनाया गया और आज निवन्धोंके प्रति प्रत्येक विद्वान्का अधिक आकर्षण देखा जा रहा है। सुगठित रचना निबंध कहलाती है। फिर भी एक व्यापक परिभाषा देना कठिन है। विविध प्रकारोंकी परिभाषाएँ देकर मनीषियोंने अपने विचारोंको प्रकट किया है तथा निबंधको कभी व्यापक रूपमें परखा है तो कभी इसे संकुचित रूपमें आवद्ध कर दिया है।

'आचार्य' पंडित रामचन्द्र शुक्ल निबंधको गद्यकी कसौटी मानते हैं और निबंधका चरम उत्कर्ष वहाँ स्वीकार करते हैं जहाँ एक-एक पैराग्राफमें विचार दबा-दबाकर ठूँसे गए हो और एक-एक वाक्य किसी सम्बद्ध विचार खण्डके लिए हो। स्पष्ट है कि शुक्लजी विचार गाम्भीर्य तथा भाषाकी सामासिकताको तरजीह देते हैं लेकिन बाबू गुलाबरायने स्वच्छन्दता, निजीपन एवं सजीवतापर बल दिया है—निबंध उस गद्य रचनाको कहते हैं जिसमें एक सीमित आकारके भीतर किसी विषयका वर्णन या प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छन्दता, सौष्ठव और सजीवता तथा आवश्यक संगति और सम्बद्धताके साथ किया गया हो। निबंधकी इस परिभाषामें आये विशेष निजीपन, स्वच्छन्दता, सौष्ठव, सजीवता सापेक्षिक शब्द हैं, और फिर विशेष निजीपन तथा स्वच्छन्दता एक साथ रहे ही यह जरूरी नहीं है। बेकनके निबंधोंमें विशेष निजीपन है लेकिन स्वच्छन्दता नहीं है। इसके साथ ही सीमित आकार भी किसी खास मात्राका बोधक नहीं है। बाबूजीने जो भी सराहनीय बातें एक रचनामें होनी चाहिए वे सब यहाँ रख दी है, किन्तु परिभाषा देखनेमें अच्छी होनेपर भी अस्पष्ट है।[1]

निबंध आज अपने रूढ़ या प्राचीन अर्थोंसे निकलकर साहित्यमें एक नये रूपमें प्रयुक्त होने लगा है। परम्परागत अर्थोंसे वह भिन्न है। रचना, लेख, प्रबंध सभीका क्षेत्र प्रायः निश्चित है। रचना किसी भी कृतिको कह सकते हैं। अंग्रेजीके कम्पोजीशन और रचनामें प्राय समानता है। लेख किसी विषयपर लिखे गये निर्वैयक्तिक लघु-निबंधके लिए प्रयुक्त होता है, इसकी तुलना अंग्रेजी 'आर्टीकल'से की जा सकती है। ये कोई भी निबंधका स्थान नहीं ले सकते। निबंध इनसे कई अंशोंमें भिन्न है।

निर्वैयक्तिकता निबंधमें संभव नहीं, वह निबंधके अन्तर मनन और आत्मानुभूतियोंका व्यक्त रूप है। प्राचीन संस्कृत परम्पराके अनुसार निबंध केवल बौद्धिक अभिव्यक्तिका माध्यम था। दार्शनिक विश्लेषणोंको निबंधका रूप दिया जाता था। आजके निबंधका वास्तविक अर्थ एवं स्वरूप बदल गया है। तार्किकताको स्थान नहीं रहा। तार्किकताका स्थान सहृदयताने ले लिया है। उसमें व्यक्तित्व, भावों, विचारों तथा अनुभूतियोंका सहज-स्वाभाविक अंकन रहता है, विचारोंका खंडन-मंडन नहीं। अतएव वर्तमान निबंधको अतीतकी स्थापित निबंधोंकी कसौटीपर कसना अनुचित होगा। जीवन-समाजके प्रगतिशील स्वरूपपर हमें ध्यान रखना होगा।

निबंध निर्बंध रचनाकी विधा है। निबन्धकार स्वच्छन्दतापूर्वक जिस किसी भी विषयपर अपने आन्तरिक विचार बिना किसी आडम्बरके व्यक्त करता है। आत्मीयता, सरलता, अनुभूति प्रवणताकी प्रधानता रहती है। न उसपर कोई नियंत्रण है और न निषेध।"[2]

---

१ डॉ० मोहन अवस्थी—हिन्दी साहित्यका अद्यतन इतिहास, पृष्ठ १४७।

२ डॉ० गंगाप्रसाद गुप्त—हिन्दी साहित्यमें निबंध और निबंधकार, पृष्ठ ४-५।

निबंधोके विविधरूप हमें आज उपलब्ध हो रहे हैं तथा पाश्चात्य निबंधकारोका आजके भारतीय निवध लेखकोपर पर्याप्त प्रभाव पड़ रहा है। ऐसी स्थितिमें निवधोके भिन्न-भिन्न रूपोको एक विशिष्ट वर्गीकरणमें आवद्ध करना सरल नही है।

कतिपय विद्वानोने विषयको आधार मानकर निबंधोको वर्गीकृत किया है तो कुछ साहित्य-विशारदोंने वाह्य आकार-प्रकारको अगीकार कर निवधोकी विविध श्रेणियोको अकित किया है। कुछ ऐसे भी आधुनिक समीक्षक हैं जिन्होने शैलीको विशेपता देकर निवधोको विभिन्न रूपोमें विभाजित करनेका प्रयास किया है।

साधारणतया निवधोको १ विचारात्मक, २ वर्णनात्मक, ३ आलोचनात्मक या साहित्यिक, ४ आख्यात्मक और ५ भावात्मक रूपोमें विभक्त किया गया है। (देखिए सस्कृत निवध-नवनीतम्—ले० डॉ० पारसनाथ द्विवेदी तथा श्री वशीधर चतुर्वेदी)

बोधपक्ष, भावपक्ष, सवेदना, विधानक कल्पना एव शैली तत्त्वोंसे समन्वित निवध-कलाका आज जो उत्कर्ष दिखाई दे रहा है, वह गद्य-साहित्यके परमोज्ज्वल भविष्यका परिचायक है।

डॉ० राममूर्ति त्रिपाठीके मतानुसार लाघव, आपेक्षिक गाभीर्य, अपूर्णता सवधनिर्वाहका कलात्मक ढग, भापा और शैलीकी प्रौढि तथा सोद्देश्यता, ये आदर्श निवधकी विशेपताएँ हैं। (द्रष्टव्य हिन्दी साहित्यका इतिहास, पृष्ठ २५२)

निवध निरूपणमें शैलीका विशेप महत्त्व है। यह शैली ही निबधको रोचक तथा प्रभावशाली बनाती है। इसीके माध्यमसे पाठक लेखककी आत्मीयतासे परिचित होता है और तथा अपने आपको उसमें एकाकार करनेका प्रयत्न भी करने लगता है। एक ओर शैली निवधके कई रूपोको जन्म देती है तो दूसरी ओर इनकी आन्तरिक भावना तथा अनुभूतिको विविध रूपोमें समलकृत भी करती है।

"शैली व्यक्तित्व एव अभिव्यक्तिको विशिष्टता प्रदान करती है। शब्दचयन, ध्वनियोजना, अलकार सलिष्ट रूप बना देते हैं। वही उसे अन्योसे अलग करती है। वामन द्वारा प्रतिपादित 'यह विशिष्ट पद रचना'का भाव पाश्चात्य एव भारतीय साहित्यमें स्वतः स्वीकृत हो गया है।

वस्तुत शैली किसी लेखककी कृतिको समझनेमें वहुत सहायक होती है। इससे (शैलीसे) कभी भी लेखकका व्यक्तित्व अलग नही रहता। हमारे भाव, विचार, भापा, ढग, व्यक्तित्व सभी शैलीमें आ जाते हैं। निवध साहित्यमें शैलीके ९ रूप मान्य है: १ प्रसाद शैली, २ व्यास शैली, ३ समास शैली, ४ विवेचन शैली, ५ व्यग्य शैली, ६ तरग शैली, ७ विक्षेप शैली, ८ प्रलाप शैली और ९ धारा शैली।"[1]

इस प्रकार लिखनेके ढगको (शैलीको) निवध-साहित्यमें प्रधानता देकर साहित्य-मनीपियोने कहावतो, मुहावरो, सूक्तियो, अलकारो आदिके प्रति जो आकर्पण प्रदर्शित किया है वह प्रत्येक दृष्टिसे अभिनंदनीय है।

श्री नाहटाकी निबंध-कला

श्री नाहटाकी निवध-कला उस उद्यानके समान है जिसमें विविध रगोके सुरभित पुष्प खिलते रहते हैं। जीवन-यापनके साधनोको यथावसर अपनाते हुए आपने अपनी साहित्यिक अभिरुचिको निरन्तर परिष्कृत किया एव जीवनके गहन अनुभवोके साथ आपने जो कुछ लिखा है अथवा जो भी कुछ लिख रहे हैं उसमें गहनता आत्मीयता, निष्पक्षता, भावमुग्धता, आध्यात्मिकता, दार्शनिकता, अनुरजित अभिव्यक्तियाँ, सास्कृतिक-चेतना, ऐतिहासिक शोध-तत्परता, प्राचीनता एव आधुनिकताका सुखद समन्वय, राजनैतिक नव-चेतना, लोक-

---

१ हिन्दी साहित्यमें निवध और निवधकार . डॉ० गगाप्रसाद गुप्त, पृ० ३१।

सस्कृति अनुरक्ति, निश्चल आस्था-विश्वास, अन्तरानुभूति-भावुकता, विशालचिन्तन-शीलता, विवेचन-क्षमता, कुशल समालोचक-मौलिकता, सरसता-रोचकता आदि अनेक विशेषताएँ परिलक्षित होती हैं। धर्म, कर्म, शिक्षा, मानवता, अहिंसा, अनेकान्तवाद, साहित्य-इतिहास, पुरातत्त्व, कला, विनोद, शब्द-चर्चा, गोत्र-जाति, राजा, प्रजा, सस्मरण, कल्पसूत्र, कृषि, स्तुति, अर्थ, काम-मोक्ष, कथा, पुराण, भूगोल, सन्त-परम्परा, सज्जन-दुर्जन, अनुरक्ति-विरक्ति, लोक-कथा, प्रहेलियाँ, पुरातन एव आधुनिक गद्य-पद्यात्मक साहित्य-विश्लेषण, वैदिक-पौराणिक एव स्मृति-विषयक तत्त्व-चिन्तन, विविध लोक-भाषा चिन्तन, भाग्य आदि शताधिक विषयो-पर साधिकार लिखकर श्री नाहटाजीने अपने विशाल अध्ययन एव विस्तृत गभीर-विवेचनकी जो प्राणवन्त अनुभूतियाँ प्रस्तुत की हैं वे उनकी शोध-परक विचार-धाराकी अविच्छिन्न कला कृतियाँ हैं। राजस्थानी साहित्यकी विवेचनामें श्री नाहटाजीकी मान्यताएँ चिरकालसे सर्वमान्य हैं।

आपके निबन्ध साहित्यिक विश्लेषणके साथ-साथ वाञ्छित विषयके प्रतिपादनमें एक मौलिक दृष्टि-कोण प्रस्तुत करते हैं। फलत शोध-पत्र-पत्रिकाओंमें ये प्रकाशित होते रहते हैं एव मनीषी सम्पादक उन्हें छापकर अपने पत्रोको गौरवान्वित समझते हैं। धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक एव सास्कृतिक पत्रोमें श्री नाहटाके निबध पूर्ण सम्मानके साथ प्रकाशित होते रहते हैं। कतिपय ये पत्र-पत्रिकाएँ हैं, जिनमें श्री नाहटाके सुविचारित तथा मार्मिक निबध प्रकाशित होते रहते हैं १ कल्पना, २ नया-समाज, ३ नागरी-प्रचारिणी पत्रिका, ४ भारतीय विद्या, ५. भारतीय सस्कृति, ६. मरुभारती, ७ मरुवाणी, ८ राजस्थान भारती, ९. राजस्थान साहित्य, १० राष्ट्र भारती, ११ सम्मेलन पत्रिका, १२ सरस्वती, १३. साहित्य, १४ साहित्य सदेश, १५. सप्त सिन्धु, १६ हिन्दी अनुशीलन, १७ हिन्दुस्तान, १८ हिन्दुस्तानी, १९ आलोचना, २० नवनीत, २१ नवभारत टाइम्स, २२. कल्याण, २३ अवन्तिका, २४ जनपद, २५. आज, २६ जनपथ, २७ अखड ज्योति, २८ कलाधर, २९ जैन जागृति, ३०. जैन भारती, ३१ जैन-सन्देश, ३२. नई दिशा, ३३ महावीर सन्देश, ३४ युगान्तर, ३५ लोक-जीवन, ३६ व्रज भारती, ३७. राजस्थान-क्षितिज, ३८ राष्ट्रदूत, ३९. वीर, ४०. वीर सन्देश, ४१ संगीत आदि लगभग १५० पत्र-पत्रिकाओंमें श्री नाहटाके विविध विषयोंपर आलोचनात्मक निबंध निकल चुके हैं और निकल रहे हैं। आपके वार्धक्यमें नव-जीवनकी प्रखर ज्योति निरन्तर प्रकाशमान है एवं साहित्य-साधनाकी भावना एक विशिष्ट तन्मयतासे दिनोदिन वर्धमान भी है।

श्री नाहटाके विविध निबंधोंमें यह प्राय देखा जाता है कि वे विषयानुसार प्रत्येक लेखके प्रारभमें 'उपक्रमके रूपमें' कुछ ऐसी भावोत्पादक पक्तियाँ लिखते हैं जो निबधकी आन्तरिक भावनाको प्रकट करती है एवं जिस प्रकार नीवकी सुगठित परिसमाप्तिपर प्रासाद अथवा गृहका निर्माण शीघ्रातिशीघ्र होने लगता है उसी प्रकार यह उपक्रम निबधकी पूर्णतामें विशेषत सहायकके रूपमें यहाँ ग्राह्य माना जाता है। उप-क्रमात्मक यह वैशिष्ट्य श्री नाहटाकी निबन्धकलाकी एक असाधारण विशेषता है। यहाँ यह स्मरणीय है कि इस लघु भूमिकाकी भाषा-शैली निबधकी रूप-रेखापर अवलबित रहती है। शोध-परक लेखोंके उपक्रमोकी भाषा संस्कृतनिष्ठ एवं शैलीमें सर्वत्र गाम्भीर्य रहता है लेकिन लोक-साहित्यसे सम्बद्ध निबंधोंमें लोक-भाषा जनित माधुर्यके साथ जन-जनमें प्रचलित शब्दोका आधिक्य रहता है। उपक्रम भी सरस, सरल तथा संवेद-नात्मक रहते हैं। 'एक मुसलमान कविकी अज्ञात रचना 'पेमाइ कथा'का उपक्रम इस प्रकार है

'हिन्दी भाषा और साहित्यके निर्माणमें मुसलमानोका भी उल्लेखनीय योग रहा है। राजस्थानमें सन्तवाणीसंग्रहकी जो हस्तलिखित प्रतियाँ मिलती हैं उनमें मुसलमान कवियोंके पद, साखी आदि रचनाएँ भी मिली हैं। १४ वी शताब्दीसे लेकर १९ वी शताब्दी तकके अनेक मुसलमान कवियोकी रचनाएं मेरे

अवलोकनमें आई हैं' उनमेंसे बहुतसे कवि और उनकी रचनायें हिन्दी साहित्य संसारमें अभी तक अज्ञांत सी हैं। (भारतीय साहित्य, वर्ष ८ अंक ४)

'कवयित्री पदमाके तोन अप्रकाशित गीत'का प्रारंभिक अक उपक्रमात्मक है, जिसका आरभ निवध-की प्रासगिक भावनाकी परिपूर्णताका साकेतिक चिह्न है

'चारण जातिमें कवि तो हजारो हुए हैं और ख्यात एव वात आदि गद्य रचनाओके लेखक कई चारण विद्वान् हो गये हैं। पर इस जातिमें कवयित्रिया दो-चार ही हुई हैं जब कि शक्तिके अवताररूपमें कई चारण देवियाँ समय-समय पर प्रकट होकर चारणो एव राजा-महाराजाओ तथा जन-साधारण द्वारा पूजी जाती रही है। करणीजीकी मान्यता तो सर्वत्र प्रसिद्ध हैं ही। उनकी स्तुतिरूपमें काफी साहित्य रचा गया है। वर्तमान चारण कवयित्री सौभाग्य देवी रचित 'करणी करुणा कुज'के सम्बन्धमें मेरा लेख प्रकाशित हो चुका है। प्राचीन चारण कवयित्रियोमें झीमा चारणी और पद्मा चारणी तथा विरजू बाईका नाम लिया जाता है। ,इनमेंसे प्रथम कवयित्री झीमाके मुँहसे कहलाये हुए पद्य खीची अचलदास और लालाजी मेवाडी और उमादेकी वातमें प्राप्त होते हैं। ये पद्य वास्तवमें झीमाने ही वनाये थे या बातको लिखने या रचने वालेने भावनाका दूहा अपनी ओरसे जोडकर झीमाके मुखसे कथा-प्रमगमें कहला दिये हो, यह विचारणीय है। [विश्वम्भरा, पृ० ५०]

'महाराणा कुम्भारचित गीतगोविन्दका अर्थ शीर्षक निवन्धसे सम्वन्धित उपक्रममें वीरता एव साहित्यिक निष्ठाका एक विलक्षण समन्वय प्रस्तुत किया गया है जो निबन्धकलाकी एक अविस्मरणीय विभूति है।

'राजस्थानके शासक अपनी वीरताके लिए तो प्रसिद्ध है ही, पर साहित्यिक क्षेत्रमें भी उनकी विशिष्ट देन है। सस्कृत, राजस्थानी व हिन्दी तीनो भाषाओमें राजस्थानके राजाओ, जागीरदारो और ठाकुरो और उनके आश्रित कवियोकी सैंकडो रचनाएँ प्राप्त हैं। मेवाडका राजवश अपनी आन-वानके लिए प्रसिद्ध है ही पर १५वी शताब्दीमे इस राजवशमें एक ऐसे राणा हुए, जिनकी वीरताके साथ-साथ साहित्य और कलाका प्रेम विशेषरूपसे उल्लेखनीय हैं।' [शोध पत्रिका, पृ० ६०]

'जैन-तत्र-साहित्य' निवन्धका प्रारम्भिक अश सक्षिप्त होता हुआ भी व्यापक है तथा साधारण होनेपर भी असाधारण है। इसमें जैनधर्मकी प्राचीनताके साथ तत्र-साहित्यकी पुरातनताका भी उल्लेख हुआ है :

"जैनधर्म भारतका एक प्राचीनतम धर्म है। उसके प्रवर्तक चौवीस तीर्थंकर भारतभूमिमें ही पैदा हुए, यही साधनाकर उन्होने सिद्धि प्राप्त की। भगवान ऋषभदेव, जिनका पावन चरित्र भागवत आदि पुराणोमें भी पाया जाता है, यावत् वेदोमें भी नामोल्लेख प्राप्त है, जैन मान्यतानुसार सारे ज्ञान-विज्ञान या सस्कृतिके प्रवर्तक आदिपुरुष थे। इसीलिए उन्हें आदिनाथ या आदीश्वर कहा जाता है। नाथपथके प्रवर्त्तक भी आदि-नाथ माने जाते हैं, पर सम्भव है वे वादके कोई अन्य व्यक्ति हो। प्राचीन जैनागमोके अनुसार भगवान् ऋषभ-देवसे पूर्व यह आर्यावर्त्त भोगभूमि थी। अर्थात् उस समयके लोग वृक्षोके फलादिसे अपना जीवननिर्वाह करते थे। असि,मसि और कृषिका व्यवहार तवतक नही था। एक वालक और वालिकाका युग्म साथ ही जन्मता और वयस्क हो जानेपर उनका सम्वन्ध पति-पत्नीका हो जाता था।

उनकी समस्त आवश्यकताओकी पूर्ति दस प्रकारके कल्पवृक्षोंसे होती थी, इसीलिए परवर्ती साहित्यमें कल्पवृक्षकी उपमा इस अर्थमें रूढ हो गयी कि जिसके द्वारा मनोवाञ्छितकी पूर्ति हो जाय और वस्तु प्राप्त हो जाय वह कल्पवृक्षके समान है। आदि " [श्री मरुधर केसरी मुनि श्री मिश्रीलालजी महाराज अभिनन्दन ग्रन्थ पृ० १२३]

साहित्य, इतिहास, भाषा आदिसे सम्बद्ध शोधात्मक निवन्धोंमे एक ओर प्राचीन साहित्यके विनाशकी

ओर मन्ताप अभिव्यक्त किया गया है तो दूसरी ओर इस प्रकारके उदात्त साहित्यके संरक्षण एवं प्रकाशनकी तरफ प्रवुद्ध विद्वत्समाजका ध्यान भी आकर्षित किया गया है। इस प्रकारके लघु उपक्रम वडे उपयोगी सिद्ध हुए है। श्री नाहटाकी निवन्धकलाका यह वैशिष्टच अन्य निवन्धकारोके लेखामें अप्राप्त-सा है। इस सन्दर्भमें निम्न कतिपय निवन्ध पठनीय है

१ एक अज्ञात ऐतिहासिक वेलि (शोधपत्रिका)।

२ खरतरगच्छके आचार्योसम्वन्धी कतिपय अज्ञात ऐतिहासिक रचनाएँ। (श्री महावीर जैन विद्यालय सुवर्ण महोत्सव ग्रन्थ)।

३ कवि विजयशेखरके कतिपय अनुपलब्ध रास। (परिपद् पत्रिका)

४ कविवर जान और उसके ग्रन्थ। (राजस्थान भारती)

५ कविवर सूरत मिश्र। (व्रजभारती—स० २००९)

६ कवि जगतनन्द सम्वन्धी कुछ विशेप जानकारी। (व्रजभारती अक १ वर्प १६)

७. एक मुसलमान कविकी अज्ञात रचना पेमाइ कथा। आदि इस प्रकारके निवन्धोकी एक वडी सख्या है।

लोक-साहित्य एव सस्कृतिके निवन्धोकी उपक्रमात्मक पक्तियाँ वडी साधारण तथा सर्वजनवोधगम्य है। प्रचलित शब्दोका प्रयोग करके श्री नाहटाने इस तथ्यको प्रमाणित कर दिया है कि वे सस्कृतनिष्ठ भापाके लिखनेमें पूर्ण समर्थ होते हुए भी लोक-गम्य वोलीमे भी पूर्ण अधिकारसे लिख सकते है।

राजस्थानी-भापाका वात-साहित्य वहुत ही विशाल और महत्त्वका है। विविध प्रकारकी सैकडो वार्त्ताएँ गत ३०० वर्पोमें लिखी जाती रही है जिनमेंसे कई केवल गद्यमें है, कई पद्यमें और कई गद्य-पद्य-मिश्रित। [कृपाराम वणा सूर कृत सगुणा-सत्र सालरी वना]

राजस्थानी भापाका वात-साहित्य वहुत विशाल व विविध प्रकारका है। वहुत सी वातें ऐतिहासिक वाक्यो व स्थानोंसे सम्वन्धित हैं, यद्यपि वे अर्द्ध ऐतिहासिक ही कही जा सकती हैं, पर उनके द्वारा वहुत सी नई व कामकी जानकारी मिलती है। एक वात कई प्रकारसे लिखी हुई मिलती है। [एक अपूर्ण प्राप्त महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक वात]

यह विश्व विविध प्रकारके प्राणियोका शम्भु-मेला है। प्रत्येक मनुष्यकी आकृति, भापा और प्रकृति अलग-अलग प्रकारकी पाई जाती है। कोई प्रकृतिसे वहुत ही सरल होता है तो कोई वहुत ही धूर्त प्रकृतिका होता है। अनादिकालसे यह प्रवाह चला आ रहा है। ग्रन्थातरोमे धूर्ताकी कहानियोका अच्छा वर्णन मिलता है। यह तो आज भी हमारे प्रत्यक्ष है ही ? कई-कई धूर्त वडी गप्पें हाँका करते है जिनको सुनकर वडी हँसी आती है और कौतूहल होता है। (धूर्ताख्यान नवी शतीका एक महत्त्वपूर्ण अमूल्य ग्रन्थ)

श्री मान् नाहटाजीकी यह प्रवृत्ति विशेपत प्रशंसनीय है कि वे शोधात्मक निवन्धोमें अपनी मान्यताको प्रतिष्ठित करनेके लिए सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी आदिके उद्धरणोको देते हैं तथा तर्कोके माध्यमसे स्वकथनकी परिपुष्टि करते हैं। यह इनकी तार्किकशैली साहित्यिक शोध-निवन्धोमें सर्वत्र परिलक्षित होती है। इस सम्वन्धमें आदिकालीन राजस्थानी जैन साहित्य मथुरामे रचित तीन हिन्दी ग्रन्थ, महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रणकी वीर सतसईकी पूर्ति, जैन प्रवन्ध-ग्रन्थोमें उद्धृत प्राचीन भापा-पद्य, प्राचीन जैनग्रन्थोमें कुल और गोत्र, कृष्ण-रुक्मणि वेलिकी टीकाएँ, कतिपय वर्णनात्मक राजस्थानी गद्य-ग्रन्थ, कवि मयण वम्वका महत्त्वपूर्ण परिचय, १५वी शताब्दीका महत्त्वपूर्ण अज्ञात ग्रन्थ, पृथ्वीराज रासोमे उल्लिखित ५२ वीरोकी नामावली, दवावैत सज्ञक

रचनाओकी परम्परा, तारातंवोलके यात्रा सम्वन्धी कतिपय उल्लेख एवं पत्र, प्राचीन जैन राजस्थानी गद्य-साहित्य, राजस्थानी साहित्यका आदिकाल आदि-आदि निवन्ध उल्लेख्य है ।

आयु-वृद्धिके साथ साहित्यकारकी अनुभूतियोमें सघनता आती है, जीवनकी कर्कश-कठोर और कोमल भावनाएँ पनपकर एक विशाल प्रतिमाके रूपमें स्थापित हो जाती है एवं सासारिक सम्पर्कजनित अनुभव, जो कभी क्षणिक होते थे, वे वार्धक्यमें पाषाण-रेखाकी भाँति गहरे और स्थिर वन जाते है । चिन्तनकी चपलतामें स्थिरता आ जाती हैं और वाणी गहनतम शब्दोसे मुखरित हो उठती है। यही गहनता, निजात्मचिन्तन-शीलता, अनुभवपरिपक्वता, गम्भीरता, परोपकारनिरता, उदारता, भाव-प्रवणता एव परदु खकातरता साहित्यकारके अखिल साहित्यको सूक्तियोका एक अनुपम भाण्डार बना देती हैं। ऐसी स्थितिमें महावरकी लालिमा सतीत्वका ओज वनती है, मुखका लालित्य दिनकरके तेजमें परिणत हो जाता है, मथरगतिका चापल्य एक दृढ सकल्पका उद्घोष करने लगता है तथा केशोकी कालिमा रौद्रका भयावह रूप धारण कर लेती है। नयनोकी चपल चितवनमें अगाध अनुभव एक ऐसी अनुरक्ति समुत्पन्न कर देता है जो जनताके प्रवोधनार्थ प्रतिक्षण सुभाषितोके रूपमें मुखरित होने लगती है।

यौवनका मदिर सरस राग-रति-रग वार्धक्यके गहन चिन्तनके रगोसे रजित होकर जीवनकी वास्तविकतासे अवगत होता है और उसके कल्पित अभिमानकी व्यग्रता शीघ्र तिरोहित हो जाती है। इसीलिए परिपक्व बुद्धि समुत्पन्न वाणीके स्वर जगतमें सुभाषितके रूपमें अगीकार किये जाते है।

यहाँ श्री नाहटाजीकी कुछ सूक्तियाँ (सुभाषित) उद्धृत की जाती हैं जो उनके निवधोमें अनायास आ गयी है—

(१)

यह विश्व विविध प्रकारके प्राणियोका शम्भु मेला है। प्रत्येक मनुष्यकी आकृति, भाषा और प्रकृति अलग-अलग प्रकारकी पायी जाती है। (नवी शतीका एक महत्त्वपूर्ण अमूल्य ग्रन्थ—धूर्त्ताख्यान)।

(२)

स्त्री जाति भावुक और कोमल स्वभावशीला होते हुए भी जव वह अपने सत्त्व, तेज और कर्त्तव्यनिष्ठापर आती है तो बडे-बडे शूरवीरोके छक्के छुडा देती है। सहनशीलताकी तो वह साकार मूर्ति है, अत रण-क्षेत्रमें चण्डिकाका रूप धारण करती है तो अपनी शीलरक्षाके लिए, मर्यादारक्षाके लिए हँसती-हँसती जौहर (यमगृह) की जलती अग्निमें कूद पडती है। (कविवर धर्मवर्द्धनकृत गोलछोकी सती दादीका कवित्त)

(३)

मनुष्य विचारता कुछ है और होता कुछ है। प्रयत्न करनेपर भी वह भवितव्यताको टाल नही सकता और इच्छा न होनेपर भी कुछ ऐसे प्रसग घट जाते है जिन्हें वुद्धिपूर्वक कोई भी मनुष्य कभी नही कर सकता। (मथुराका एक विचित्र प्रसंग)

(४)

१. शक्तिका सदुपयोग और दुरुपयोग व्यक्तिपर निर्भर है।
२. केवल इस लोककी ही नही परलोककी भी सिद्धि मानवकी वुद्धिपर ही निर्भर है।
३ जीवन सही रूपमें एक कला है। इस कलाकी प्राप्ति करना प्रयत्नसाध्य है।

(मूरख-लक्षण, साधना, पृ० २७,२८)

(५)

प्राणिमात्रकी कुछ न कुछ इच्छा होती है और अपनी-अपनी कामना-पूर्ति हो यह सब प्राणी चाहते हैं। सारी प्रवृत्तियाँ किसी न किसी इच्छाकी पूर्तिके लिए होती है, चाहे वह अच्छी हो या बुरी।

(साधना, साधक और सिद्धि)

(६)

१. जीवनके प्रति प्राणिमात्रकी सहज ममता व आकर्पण होनेसे लगाकर वृद्ध तक सभी कथा-कहानी सुननेको उत्सुक दिखाई देते है।

२ व्यक्ति अकेला जन्म लेता है पर जन्म लेनेके साथ-साथ ही वह अपने चारो ओर कुछ व्यक्तियो-को अपने प्रति विशेष आर्कापित पाता है।

३ ससार प्रेममय है। इसीसे जीवनमें सरसता आती है और एक दूसरेके सम्बन्ध मीठे होते चले जाते है। प्रेमके बिना जीवन सूखा है, रूखा है वह प्रेम अनेक प्रकारका है।

४. प्राणियोमें स्त्री और पुरुपका सम्बन्ध एक विशिष्ट आकर्पणका परिणाम है और इस आकर्षणमें बहुत ही जबरदस्त खिंचाव होनेसे इस सम्बन्धको घनिष्ठ प्रेम कहा जाता है।

५. प्रेम करना सरल है व निभाना कठिन है। (मोगल और महेन्द्रकी प्रेमकथा)

(७)

कथा-कहानी मानवके लिए मनोरजन एव शिक्षा-प्राप्तिका उल्लेखनीय साधन रहा है।

(तीन सौ पाँच कथाओकी एक सूची)

(८)

संत और भक्तजनोके प्रति आदर और श्रद्धाका भाव भारतीय सस्कृतिका एक अभिन्न अग है।

(परसरामरचित बालणचरित)

(९)

१ वाक्-शक्ति मनुष्यको दी हुई प्रकृतिकी विशेप देन है।

२ देखनेके पीछे अनुभव करनेकी विशेष शक्ति आवश्यक है और वह केवल मानवको ही प्राप्त है।

३ वस्तुओका ज्ञान कर लेना एक बात है और अपने अनुभवको सुन्दर एव साकार रूपमें दूसरोके समक्ष वाणी द्वारा उपस्थित करना दूसरी बात है। (कतिपय वर्णनात्मक राजस्थानी गद्य-ग्रन्थ)

(१०)

१ जैन साहित्यमें नैतिकता और धर्मकी प्रधानता है और शान्त रसकी मुख्यता तो सर्वत्र पायी जाती है।

२ जैन विद्वानोका उद्देश्य जन-जीवनमे आध्यात्मिक जागृति फूँकना था। नैतिक और भक्तिपूर्ण जीवन ही उनका चरमलक्ष्य था।

३ तत्वज्ञान सूखा विपय है। साधारण जनताकी वहाँ तक पहुँच नही और न उसमें उनकी रुचि व रस हो सकता है। (राजस्थानी जैन साहित्य २)

१ पुत्र-मरण शोक असहनीय होता है।
२ मूर्ख ही अपने रहस्योको प्रकट करते रहते हैं।
३ अनावश्यक संग्रह अवाछनीय है।
४ अयोग्यको उपदेश नही देना चाहिए।
५ अत्यधिक लोभ नही करना चाहिए।
६ चिन्ता चिताके समान कही गयी है।
७ जो हो गया है—उसके लिए शोक करना निरर्थक है तथा भविष्यकी भी चिन्ता नही करनी चाहिए।

(चौवीस श्लोको पर चौवीस लोक-कथाएँ)

इस प्रकारकी हजारो सूक्तियाँ (सुभाषित) श्री नाहटाजीके निवधोमें गुम्फित हैं।

आत्माभिव्यक्ति निवन्धकलाकी एक विशिष्ट आधारभूमि है। ऐसी स्थितिमें श्री नाहटाके विचारात्मक एव आलोचनात्मक लेख विशेषरूपसे उल्लेखनीय हैं।

भाषा-विषयक उदारता

श्री नाहटाने तत्सम तद्भव-देशज शब्दोको उपयोग करते हुए अन्य भाषाओके भी प्रचलित शब्दोंको अपनी अभिव्यक्तिको सक्षम बनानेके लिए अपनाया है। साथ ही साथ कलाके लिए सिद्धान्तकी पूर्ण उपेक्षा करते हुए, मानवमात्रके हितको ध्यानमें रखा और तदनुकूल साहित्य-सर्जना की तथा इसी उद्देश्यकी पूर्तिके लिए वे अपनी साधनामें सलग्न हैं

पद-स्थापना, नामोल्लेख, परस्पर, विचित्र, श्रद्धा-विशेष, मोक्ष, प्रभावविभूति विभ्रम, आध्यात्मिक जागृति, ऐतिहासिक, विकसित, प्रफुल्लित, व्यक्ति, कौटुम्बिकता, सहानुभूति, शान्ति, क्लान्ति और गौरव-गाथा आदि शब्दोंके साथ श्री नाहटाजीने वतीसी, शामिल, जगह, हुक्म, सर करना, जरूरी, हाकिमो, लगभग, परवाने, रक्के, नकलें, इस्तेमाल, जवरदस्त, वात, असलियत, ख्याल, नामठाम, जहाज, कथा, खटोली, खखेरना, कोरे पन्ना, चौंरी माडना, असली रूप, पुन्य, सासू छानना, अटपटी वातो, कड्यो, हिवाली गूढा गर्ज, गुटको, हकीकत, ख्यात, फिट करना, पधारना गाडियाँ, सौत, लोरियाँ, वाह, वाह, खूब, खूब, वहार, घटिया, विचरना, चौमासा, आदि हजारो शब्दो-क्रियाओ आदिका पर्याप्त संख्यामें प्रयोग किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि श्री नाहटा गो० तुलसीदासजीके निम्नस्थ छदमें मुखरित भाषा विषयक मान्यताके अनुयायी हैं—

का भाषा का सस्कृत प्रेम चाहिए साँच। काम जो आवै कामरी, का ले करै कमाँच।

आदर्शवादी परम्पराके पोषक श्री नाहटाजीके आलोचनात्मक तथा शोध-परक निवंध वडे ही महत्व पूर्ण हैं। इनमें सर्वत्र ठोस चिन्तन तथा निष्पक्ष उद्भावना अकाल प्रमाणोंसे परिपुष्ट है। इस प्रकारके निवन्धोमें तार्किक शैली प्रधानरूपसे अगीकृत है।

आपकी शैलीके विविधरूप द्रष्टव्य हैं। इसमें कही भी कृत्रिमता नही है। यदि भावनाप्रधान निवंधोमें दार्शनिकता एवं मनोवैज्ञानिकताका अनोखा समन्वय है तो लोकसाहित्य विषयक लेखोमें (विशेषतः लोक-कथाओ एव गाथाओके विवेचनात्मक अनुशीलनमें) व्याख्यात्मक शैली ग्राह्य कही जा सकती है।

विषयानुसार कही वाक्य छोटे है तो कही लम्वे। कही तत्सम शब्दोका वाहुल्य है तो कही देशज शब्दोकी अधिकता है। यो तो सहजता सर्वत्र विद्यमान है, लेकिन कही-कहीपर गभीर निवंधोमें गहन चिन्तनके कारण, क्लिष्टता भी आ गयी हैं और दार्शनिकताके कारण साधारण जनमानसके लिए ऐसे निवंध दुरूह हो गये हैं।

समयाभावके कारण जैसा मैं लिखना चाहता था वैसा न लिख सका। फिर भी श्रद्धेय श्री नाहटाजीके प्रति जो एक लम्वे समयसे आदरकी भावना मेरे मानसमें समाविष्ट थी, उसे यहाँ व्यक्त करनेका प्रयास अवश्य किया है।

श्री भँवरलाल नाहटा : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

शास्त्री, शिवशंकर मिश्र, एम ए , साहित्यरत्न

जीवन स्वय एक साधना है और सिद्धिकी प्रतीति भी । जीना, जीनेकी कामना और जीनेको जीवनका लक्ष्य बनाये रखना, तीनो ही चेष्टायें साधारण मानवजीवनको अभीष्ट होती हैं । पर महापुरुषो, चिन्तको व मनीषियोके जीवनकी कलायें इनसे सर्वथा भिन्न होती हैं । वस्तुत अन्तर लक्ष्यमें है । जीनेके लिए जीना एक अलग चीज है और जीनेको शाश्वत बनाये रखनेकी साधना अलग है । इसी प्रवृत्तिगत भेदमे मानवजीवनकी साधना-विधाओमें भी अतर हो जाता है । भौतिक सुखकी खोजमें व्यस्त जीवनके क्रियाकलाप और आध्यात्मिक सुखकी सिद्धिकी साधना तथा सामाजिक सुखसमृद्धिकी कामनाको प्रतिफलित करनेकी रससाधनाओमें पर्याप्त अन्तराल होता है परन्तु कुछ एक कर्मयोगी ऐसे भी होते है, जो भौतिक, आध्यात्मिक व सामाजिक सभी सुखोके प्रयासमें सामजस्य बनाये रखनेमें सफल होते है । ऐसे महामानव प्राय विरले ही होते हैं । प्रारब्ध इनके लिए हस्तामलकवत् होता है । ये सचित कर्मके प्रातिभज्ञानके धनी होते है और इसीलिये इनके क्रियमाण कर्म इन्हें सशक्त बनाये रखनेमें समर्थ होते हैं । ऐसे विरल कर्मठ व्यक्तियोका जीवन प्राय आत्मोन्मुख ही होता है क्योकि आसक्तिमें इनकी आस्था नही होती, केवल कर्म ही अथ होता है और वही इति भी । सम्मान, यश और प्रतिष्ठा इनके भोग्य नही । श्रद्धा और आदर इनको देय है, ग्राह्य नही । सम्भवतया इसीलिये श्रेय और प्रेय दोनो ही इन्हें ढूँढते फिरते हैं । समाजकी सजग चेतनायें इनके समक्ष स्वयं श्रद्धावनत होती हैं और इन्हें अपनी कृतिका सुयश प्राप्त करनेका सहसा अवसर प्राप्त हो जाता है ।

अपनी स्वाभाविक अनुभूतिको अभिव्यक्त करनेका जो मुझे अवसर मिला है, उसकी प्रतीतिके आधार 'श्री नाहटा-बन्धु' हैं ।

डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदीने श्री अगरचन्द नाहटा और श्री भँवरलाल नाहटाको इसी नामसे पुकारा है और इनकी देनको विज्ञापनरहित साहित्य-साधनाकी अमर प्रवृत्तिकी सज्ञा दी है । मेरा अपना सपर्क दोनो ही चिन्तकोसे रहा है । आप दोनो चाचा और भतीजे हैं । एक साधना है तो दूसरा सिद्धि । इनके पूरक प्रयत्न इतने मिश्रित है कि "को बड छोट कहत अपराधू, गनि गुन दोष समुझिहहिं साधू", महात्मा तुलसीदासकी विनम्र प्रार्थना ही सहायक हो पाती है । वैसे एक कारण है तो दूसरा कार्य, एक प्रतीति है तो दूसरा प्रतिफलन, एक ज्ञान है तो दूसरा भक्ति, या महाप्राण निरालाके शब्दोमें एक विमल हृदय उच्छ्वास है तो दूसरा कान्तकामिनी कविताका प्रतीक । फलत जीवन, जीवनकी विधि, उसकी गति व जीवनकी समस्त सारभूत प्रक्रियाओमें अभेद समानता इन्हें पृथक् रूपमें नही देख सकती । वैसे सेव्य-सेवक भावनाओंमें जो एकरसता है, वह अनिवार्य रूपसे इनमें ओत-प्रोत है । मुझे प्रसन्नता है कि भारतीय विद्वत्-समाजकी सहज बोध्य सर्जनशील चेतनाने इन दोनो ही महानुभावोके अभिनदनमें भी एकरसता व तादात्म्य बनाये रखनेका प्रयास किया है । अभिनन्दन ग्रन्थके आयोजकोमें अग्रणी श्री हजारीमल बाँठियाके सदाग्रहने मुझे श्री भँवरलालजीके व्यक्तिगत, सामाजिक, साहित्यिक व आध्यात्मिक जीवनकी झाँकी देनेकी प्रेरणा दी है । प्रस्तुत आकलन अतरग साहचर्यको कहाँ तक सजीव बना सकेगा, सहृदय पाठकोकी प्रज्ञाचक्षु ही इसे विश्वास दे सकेगी । इस गम्भीर चेतना-पुज सरस्वतीके वरद-पुत्रके जीवनका जितना भी अग साकार हो सकेगा, उतनी अपनी समझ, शेष अपनी अल्पज्ञताकी विवशता ही होगी । शास्त्र कहता है—"क्वचित्-खल्वाट



श्री भँवरलाल जी नाहटा

निर्धनम्", यह धन, सम्पत्ति, अन्य भोगोपकरण भी हो सकते हैं और विद्या-बुद्धि, यशमान, ज्ञान और भक्ति भी। प्रशस्त ललाट, मासल-स्कंद, विस्तृत वक्षस्थल, घनी मूँछें, निर्मल दृष्टि तथा चिन्तन-शील भृकुटि-विलास, आपके प्रभावशाली व्यक्तित्वके प्रतीक हैं, रीति-नीति परम्पराके परिवेशमें अतीतके उज्ज्वल व तपस्यारत महर्षिके ओजसे आभासित भव्यरूप सहज आकर्षक बन जाता है। लक्ष्मी आपको प्यार देती है और सरस्वती प्रात कालीन समीरके समान दुलार तथा शक्ति स्वय अनवरत अध्यवसायकी सतत प्रेरणामें दत्तचित्त रहती है। भगवान् महावीरका अनुशासन आपको आत्मबोध देता है और सद्गुरु सहजानन्दघनकी दीक्षा आपको आत्मबल। सयम आपका आचरण है और अध्ययन आपकी आत्मनिष्ठा। निष्काम कर्म आपमें साकार हुआ है और ध्यान व धारणाओंकी सगतिने आपके भीतर और बाहरकी अनुभूति और कृतिको समन्वित कर रखा है। निर्मल चित्त, विमल मानस तथा तप पूत आचरण जिस दुर्लभ व्यक्तित्वका निर्माण कर सके है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। आश्चर्य यह है कि नितान्त आत्मोन्मुख होकर भी आपका सामाजिक जीवन इतना व्यस्त है कि अन्तर्विरोधके कारण भी कारणोका आधार चाहते हैं। सम्भवतया बोधकी स्थिति-में व्यक्ति व्यक्ति न रहकर समाज हो जाता है। समरसता शायद समदृष्टिकी अमरसाधनाका ही फल होती है। कहते हैं कि अनुभूतिकी तीव्रता ही अभिव्यक्तिकी आधारशिला होती है और इसीलिए सवेदन-शील प्रकृति साधारणीकरणके आवेगके प्रबल प्रवाहको रोक नही पाती, और इसीलिए आपमें अवरोध नही, अस्वीकार नही। जो कुछ है सहज है, सरल है, ग्राह्य है और अनुकरणीय है।

एक धनीमानी और समृद्ध परिवारने आपको जन्म दिया है। अभावके ससारसे दूर, भावनाओके ससारमें आत्मविश्वासके चरण सतत गतिशील रहे हैं। इसका प्रधान कारण एक बृहत् परिवारकी सयुक्त व समन्वित पवित्र प्रेरणा, परिचर्या तथा पावन परम्परा ही रही है। अर्थ, धर्म और कामके लिए जीवन कभी व्यग्र नही हुआ। पूर्वज कर्मठ थे। पिता श्री भैरूदानजी तथा पितृव्य श्री शुभराजजी, मेघराजजी, व अगर-चन्दजीकी छत्र-छायामें साधना और सिद्धिकी भौतिक सतुष्टि आपको तीनो ही पुरुषार्थोंको सुलभ बना रखी थी। आज भी वही वातावरण आपको आपके मध्यमायुकी ओर अग्रसर कर रही है। पितामह श्री शकर-दानजीकी व्यावहारिक एव व्यापारिक कुशलता आपको निर्द्वंद्व, निर्भीक एव निरापद बनानेमें सहायक हुई है, यह अस्वीकार नही किया जा सकता। इतने बडे कुटुम्बमें व्याप्त पूज्य-पूजक भावनाओकी धार्मिक सहि-ष्णुता आजके वैयक्तिक परिवारोकी दुनियांमें असम्भव नही तो दुर्लभ अवश्य है। अर्थोपार्जन व कर्मभोगकी स्वाभाविक गतिमें धर्म-साधनाका मणिकाचन सयोग भी आपके परिवारकी ही विशेषता रही है। साधु-समागम, तीर्थाटन, जप, तप, दान व मन्दिर-निर्माण, धार्मिक-उत्सवोंके अवसरपर सक्रिय धार्मिक कृत्य आदि, त्याग, सयम व अपरिग्रहकी मनोवृत्ति परिवारके प्रत्येक प्राणीके लिए अभीष्ट है। फलत कर्त्तव्य-निष्ठाके साथ-साथ आपकी प्रकृतिमें सौजन्य, कुलीनता तथा निरभिमान व्यावहारिक, सामाजिक व धार्मिक चेतनाका समन्वय मिलता है तो आश्चर्य नही वरन् सतोष ही होता है। आप कुलदीपक है, परिवारकी मर्यादा हैं, अपने समाजके प्रकाश स्तम्भ है और है अपने जीवनकी ज्योति, जो अनेक जन्म-ससिद्धिके रूपमें आपको अनायास सुलभ हुई है।

वस्तुत. मेरा अपना परिचय सर्वप्रथम श्री पारसकुमारसे हुआ था। ये पूर्णतया आपकी प्रतिकृति है। "आत्मा वै जायते पुत्र." की प्रतीति तो मुझे आपके सान्निध्यसे ही प्राप्त हुई है। परम सुशील, सयमी, सभ्य व पूर्ण व्यावहारिक पुत्र, जो सम्पत्तिशाली कहे व माने जाने वाले वर्गके परिवारोमें खोजनेसे ही प्राप्त हो सकते है, मुझे यह आभास दे दिया था कि धनकी परिधिमें भी धर्मके केन्द्रबिन्दु, मानवता, सज्जनता सहृदयताका अभाव नही है। ठीक यही भाव मुझे प्रिय अनुज श्री हरखचन्दके साहचर्य्यसे ज्ञात हुआ। मुझे

वे आपके पूरक प्रतीक हुए। भौतिक एवं आध्यात्मिक प्रकृतिके अद्वितीय समन्वय जहाँ आँसुओंकी कीमत है, विरागका राग है और है अनुरागमें विरागकी अद्भुत झलक। हरखचन्दजी सम्भवतया आँसू और मुसुकानके वीचकी कड़ी हैं। धर्म उनका सहायक है, अर्थ उनकी प्रेरणा है और काम उनकी सृष्टिका सस्थान। शील और सकोच जो आदर और सन्मानकी भूमिका अदा करते हैं, आप दोनो भाइयोको ईश्वर-प्रदत्त हैं। मेरा तात्पर्य मात्र इतना ही है कि श्री भँवरलालजीकी परिधि इतनी शान्त व मनोहर है, इतनी सर्जनशील व प्रभुताविहीन है कि ऐसी परिस्थितिमें ही उनके सम्पूर्ण गुणोकी परख हो सकती है।

सत्य, अहिंसा, अस्तेय व अपरिग्रह आदि जैनधर्मके मूल-भूत सिद्धान्तोकी विस्तृत व्याख्यायें हैं, विविध परिणतियाँ है। साधु व गृहस्थ-धर्मोके पृथक्-पृथक् आचरण भी हैं। विधि-निषेधकी विभिन्न मर्यादाओकी भी सीमायें नही हैं। लेकिन सतत जागरूक व्यक्ति मत-मतान्तरो, दार्शनिक विवादो एव विधि-निषेधोसे ऊपर होता है। सिद्धान्त वस्तुत आचरणकी मर्यादा निर्धारण करनेमें सहायक होते है। वे स्वय आचरण नहीं होते। फलत विश्वासोमें तर्क, सिद्धान्तके निर्णयके लिए गौण वन जाते हैं। कर्तव्य श्रद्धा चाहते हैं और आचरण सामाजिक विश्वास। या थोडा ऊपर उठने पर हम कहेगे कि आचरण आत्मविश्वास चाहते हैं जिसमें परका भी समान अस्तित्व होता है। वस्तुत परम्परा-निर्वाह अन्य वस्तु होती है और कर्तव्यनिष्ठा अलग। यदि कही दोनोका सम्मिश्रण उपलब्ध होता है तो वह अद्भुत होता है। इसीलिये साधारण व्यक्तित्वसे वह व्यक्तित्व विशेष हो जाता है और उसे हम महान् आत्मा कहनेको वाध्य होते हैं। श्री भँवरलालजीमें जैनधर्म साकार दृष्टिगोचर होता है। यहाँ जो कुछ है, मनसा वाचा कर्मणा है द्विधा नही और इसीलिये द्विधाके प्रति आवेश भी नही। आक्रोश नही और न ही शिकायत ही है क्योकि आचरणमें किफायत नजर नही आती। यहाँ परम्परा है। परम्पराकी आनुभूतिक धरोहर है। तर्क और सिद्धान्तोके मननकी चिन्तनधारा है। विश्वास और श्रद्धा है। तेरापंथ भी उनके लिए उतना ही सहज वोध्य है, जितना मन्दिर मार्ग। यहाँ धर्म वाह्याडम्वर नही जितना दिखावा है, वह लोकाचार है। फलत. आपकी साधना एकागी नही, सर्वांगीण है। मुनि जिनविजय तथा मुनि कातिसागर, कृपाचन्दसूरि और श्री सुखसागरजी, मुनि पुण्यविजय, श्री हरिसागरसूरि, मणिसागरसूरि, कवीन्द्रसागरसूरिके सत्संगने आपको धर्म चेतना दी है तो मुनि नगराज, मुनि महेन्द्रकुमार 'प्रथम', जैसे व्यक्तित्वने आपको अपना स्नेह दिया है। वुद्धिगम्य-ग्रहण आपकी मानसिक पुकार है, सस्कार-जन्य स्वीकार आपके हृदयकी। नयनकी भीख भँवरलालजीको अनुकूल है, पर अन्तश्चेतनाकी पावन धारा, जिसमें आपका मन अवभृथ स्नान करता है, वहाँ आपका एक अलग अस्तित्व भी है। उस मानसतीर्थमें सवके लिए समान स्थान है। अनेकान्तवादी विचारधारा ही आपके एकान्त व सार्वजनिक चिन्तनका मार्ग प्रशस्त कर सकी है। सद्गुरु श्री सहजानन्दजी, जिन्हें देखने व सुननेका एक वार मुझे अवसर मिला है और जो आपके दीक्षागुरु भी हैं, मुझे यह लिखनेका साहस देते है कि भंवरलालजी मन और वाणीमे अपने गुरुकी मुक्त अनुभूतिके कायल हैं। श्री सहजानन्दजी शुद्ध-बुद्ध अनुभूत योगके प्रतीक श्रमण रहे हैं। उनमें धर्मोकी, भारतीय दर्शनोकी, और भारतीय नैतिक जीवन मूल्योकी अद्भुत समन्विति रही है। भँवरलालजीमें जो गौरव है, वह गुरुका है, परिवारका है, पूर्वजोका है और है लोकाचारका मर्यादित व स्वीकृत सयोग। स्पष्टत यह मनीषी महा-मानव समुद्रकी तरह गुरु गम्भीर है। समस्त ससारकी विचार-सरिता इस महासागरमें निमज्जित होकर इसमें एकरस हो चुकी है। लगता है, भगवान् महावीर की वाणी "मित्ती मे सव्वभूएसु वैरं मज्झ न केणई" ने ही आपको आतिथ्यकी कामना दी है। आत्मकल्याण, लोक मगल तथा विश्वजन-हितायके जैनानुशासनका सार्वभौम उद्घोष आपका अभीष्ट है, इसीलिये आपकी धर्मदृष्टि उदार है। करुणा और दया

आपके उपजीव्य आधार है। धर्म यद्यपि शोध-विषय नही है, मात्र विश्वास ही उसका शोध है जिसे आत्म-निरीक्षण या आत्मविश्लेपण कहा जाता है, फिर भी आपकी सजग चेतना परम्परा और सत्यके बीच सामजस्य स्थापित करनेमें सतत सलग्न रही है। सत्य यह है **कि कालभेदसे मतभेद होता है और मतभेदसे मनभेद**। यही मनभेद विकल्पको जन्म देता है और विद्लप असमजसकी स्थितिमें मानवचेतनाको अस्थिर बना देता है जिसे हम क्रान्तिका धरातल कह लेते हैं। यही द्विधा उत्पन्न होती है। फलत विचारोमें संतुलन रह नही पाता और वाद-विवादकी स्थिति व्यक्ति, समाज, राष्ट्र व अन्तर्राष्ट्र-मनको विचलित कर देती है। यह सारी स्थिति कालभेदको लेकर चलती है। काल स्वय बँधता है क्षणोमें, घटो और दिनोमे, मास और वर्षोमे और फिर युगो और शताब्दियोमें। **शायद इसोलिये सामाजिक चेतनाके प्रतीक धर्मके अविरल विभाज्य-बिन्दुओंके प्रवाहको काल भी नहीं पचा पाता है** क्योकि महापुरुषो और कालपुरुषके इसी अन्तर्द्वन्द्वके शोधनकी आवश्यकता मनीषियो व चिन्तकोकी कालजयी मेधा, सदा अनुभव करती रही है। अतीतको वर्तमान और भविष्यको भी सजग वर्तमान बनानेकी साधना कितनी स्तुत्य है, यह मनीषी पाठक ही विचार करेंगे। मैंने तो इस व्यक्तित्वकी चेष्टाओकी प्रतीतिके लिए अपनी अनुभूति भर व्यक्त की है। भवर-लालजीकी अन्तर्दृष्टि इतनी सूक्ष्म रही हैं, जितनी कालकी गति। इसीलिये इस मौनचिन्तककी प्रज्ञा सदा वातावरण-सापेक्ष्य होते हुए भी बिखरी हुई धर्मकी कडियोमें व्यामोहरहित गाठ बाँधती चली आयी है। वे कहा करते हैं कि ·

"वेदा विभिन्ना स्मृतयो विभिन्ना· नैको मुनिर्यस्य मतिर्न भिन्ना।
धर्मस्य तत्त्व निहित गुहाया महाजनो येन गत स पन्था॥"

आप अडिग हैं, निश्चल है। सचमुच विज्ञापन-रहित हैं। अपने विश्वासोको ही जीवनके नैतिक मूल्योका आधार मानते आये है। यदा कदा ऐसे अवसरोपर जब वे आलोच्य बने है, इन्होने कहा है कि भर्तृहरि ठीक कहते हैं :

"निन्दतु नीति-निपुणा, यदि वा स्तुवन्तु लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा न्याय्यात् पथ· प्रविचलन्तिपद न धीरा॥"

अध्ययन, चिन्तन, मनन, अध्यवसाय व·निदिध्यासन, आपके जीवनके स्थिर-चित्र है। सद्गुरु साथ है, जैनानुशासन पासमें है, अविचल निष्ठा है, फलत इनमें विकल्प नही, द्विधा नही, एक बोध है। प्राण-वान् विश्वास है। क्योकि आपके लिए धर्म साधन और सिद्धि दोनो ही है। प्रमाणके लिए अभी-अभी एक जीवन्त प्रश्नपर आपके विचार देखनेको मिले हैं। भगवान् महावीरके दिव्य प्रयाणके पावन स्थल पावा-पुरीको लेकर एक विवाद उठ खड़ा हुआ है। कन्हैयालालजी सरावगीकी इस विषयमें एक पुस्तक मुझे भी पढनेको मिली थी। मैंने भँवरलालजीसे प्रश्न किया था कि आपकी इस विषयमें क्या सम्मति है? आपने स्पष्ट उत्तर दिया—"भाई भगवान् महावीरकी २५०० वीं जयंती मनानेका भारत सरकारने निश्चय किया है। युगपुरुष एकदेशीय नहीं होते, उनका आदेश समस्त संसारके लिए होता है। उनके जन्म और निर्वाणके स्थानके निर्णय, विशुद्ध ऐतिहासिक व पुरातात्त्विक प्रश्न हैं। इसपर एकान्तिक विचार करना किसी भी सम्प्रदायके लिए उचित नहीं। मेरा तो अपना ख्याल है कि हजारो वर्षोसे लोक-श्रद्धा मध्यमपावा, जो बिहार प्रान्तमें स्थित है, को ही प्रभुका प्रयाण-स्थल समझकर अपनी भक्ति प्रगट करती आ रही है। इसलिये राजनैतिक या निहित स्वार्थमें लिप्त कुछेक वर्ग या सम्प्रदायकी तात्त्विक व्याख्या सामयिक लाभके लिए ही है। विदेशी विद्वानोने प्राय· बौद्ध-त्रिपिटको ही को अपने इतिहास लेखनमें सहायक माना है। जैन-

सिद्धान्त व जैनागमोंमें व्यक्त विचार उन्हे एकांगी नजर आये हैं, फलत उनका निर्णय स्पष्ट नहीं हो सकता क्योंकि सम्प्रदायगत विद्वेष एक दूसरेको हेय समझनेको बाध्य हैं। मेरा अपना विचार हैं कि यद्यपि लोक-परम्परा लोकाचारके द्वारा विहारस्थित मध्यमपावाकी युगपुरुषकी निर्वाणभूमिको अपने विश्वासका केन्द्र मानती आयी है सो हम उस लोक मगलमयी लोकभावनाके समक्ष नत होनेको बाध्य हैं" हमारा इतिहास इसके विरुद्ध नहीं है। आपने 'जैन भारती'में एक निबध लिखकर इस भ्रमको असामयिक, अतात्त्विक तथा अनैतिहासिक प्रमाणित करनेका प्रयास किया हैं। तात्पर्य यह कि यह मनीषी सत्य और आचारमे सामजस्य का समर्थक है।

भँवरलालजी शिक्षित और दीक्षित दोनों ही हैं। पर शिक्षाको, जिस रूपमें आधुनिक युग द्वारा प्रमाणित किया जाता है, मात्र ५ वी क्लास तककी है। इसे हम प्रारभिक या प्राइमरी एजुकेशन कहा करते हैं। अंग्रेजी साहित्यमें एक मुहावरा है द थ्री आर्स् (The three R's) लिखना, पढना और हिसाब किताब (रीडिंग, राइटिंग तथा रियमेटिक) नितान्त अपर्याप्त। पर प्रतिभा स्कूल, कालेज व युनिवरसीटियो में निर्मित नही होती। वह जन्मजात होती है। इनके तो पेटमें ही दाढी थी। पूर्वजन्मके पूत सस्कारोने इस महान् व्यक्तित्वको देशकी समस्त भाषाएँ विस्तृत ससारकी मुक्त पाठशालामें सहजमें ही, समय और अभ्यास के अभ्यस्त अध्यापको द्वारा पढा दी है। वस्तुत प्रातिभज्ञान स्वयभू होते है। प्रारब्ध और क्रियमाण कर्म जिन सस्कारोको जन्म देते है वे सचित होते रहते हैं। उसी सचयकी सिद्धि एक 'जीनियस' के रूपमें प्रगट होती है। कुछ तो सस्कार, कुछ व्यक्तित्वकी अभिरुचि और कुछ वातावरण, सभीके पारस्परिक सहयोगकी परिणति एक ऐसे विवेकका सृजन करती है, जिसे हम मानसिक शक्ति कहते हैं। यही मानसिक शक्ति प्रतिभाके नामसे जानी जाती है। इसे प्रमाणपत्रको आवश्यकता नही होती। यह स्वयसिद्ध प्रमाणपत्र होती है। ससारकी शिक्षण सस्थाएँ इनकी कायल होती है। विद्वत् समाज इनका सम्मान करता है। इस-लिए कि प्रतिभा स्वय शुद्धबुद्धज्ञानकी अधिष्ठात्री होती है। वह सामाजिक स्वीकृतिकी अपेक्षा नही रखती, प्रत्युत स्वीकार ही स्वय उसकी योग्यता स्वीकार करनेको बाध्य होता है। संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश, अवधी, बगला, गुजराती, राजस्थानी तथा हिन्दी आदि समस्त भाषाओंमें पारगत, प्राचीन ब्राह्मी, कुटिल आदि युगकी भाषाओकी सतत परिवर्तित लिपियोकी वैज्ञानिक वर्णमालाके अद्भुत ज्ञानके अभ्यस्त श्री भँवर-लालजीकी प्रतिभाके कायल, प्राय इनके सभी अन्तरग विद्वान् मित्र है। मूर्तिकला, चित्रकला, वास्तुकला तथा ललित कलाओकी आपमें परख है। आपकी अभिरुचि प्राय भाषाशास्त्र, लिपि-विज्ञानमें है। फलत पुरातात्त्विक अनुसंधानकी ओर अग्रसर होनेमें आपका लिंग्विस्टिक एप्रोच पर्याप्त सहायक हुआ है। न जाने कितने ज्ञात अज्ञात ग्रन्थोकी प्रतिलिपियाँ जो विशिष्ट विद्वानोसे लौटकर आयी, बीकानेरके अपने सग्रहालयमें उपस्थित है। अनुसधान और शोध हेतु अनेकानेक दुर्लभ चित्रकलाओके नमूने, वस्तु व मूर्तिकलाकी प्रामाणिक प्रतिमाएं, अमूल्य प्राचीन ग्रन्थोकी प्रतिलिपियाँ आपने सग्रह की है, देखने मात्रसे इस नर-रत्नकी प्रकृतिका परिचय प्राप्त हो जाता है। पुरातत्त्व व नृतत्त्व-विज्ञानके अतिरिक्त इतिहास-शोधनकी प्रकृतिने भी आपका झुकाव शिलालेखोकी ओर उन्मुख किया है। प्राय सभी शिलालेखो की, चाहे प्राचीनतम ही क्यो न हो, लिपि पढने व उसका उचित अर्थ लगानेमें आपको किंचित् मात्र भी कठिनाई नही पडती। अतीतके गर्भमें मानव अर्जित ज्ञानकी सचित राशिको ढूंढ कर बाहर निकालनेमें आपने जो समय-समयपर सहायता की है, वह स्तुत्य है। प्राचीन सस्कृति व सभ्यताके विस्मृत तथ्योके सग्रह करनेकी इनकी प्रबल आकाक्षाने इन्हें गहन अध्ययनकी अभिरुचि प्रदान की है। राजनीतिज्ञ, सामाजिक व सास्कृतिक परिस्थितियोकी समाजशास्त्रीय विश्लेषणात्मक चिन्तन-धाराने ही आपके अतीत और वर्तमानके बीच सामजस्य सस्थापनमें योगदान किया है।

पाठक लोग जिज्ञासु अवश्य होंगे कि आखिर इस अपरिचित ज्ञानके उपजीव्य स्रोत क्या हैं ? आपकी बहुज्ञता व तथ्य-सग्रहकारिणी प्रवृत्तिके मूल स्रोत क्या हैं ? प्रश्न स्वाभाविक होगा । निश्चय ही व्यक्तित्व व्यक्तिगत और वातावरणकी शक्तिके सतुलनका परिणाम होता है । वस्तुत भँवरलालजी पितृव्य श्री अगरचन्दजीके आग्रहके परिणाम हैं । उनके आज्ञापालनकी उत्कट अभिलाषाके क्रियान्वयनमें अपनी शक्तिका उपयोग कर आपने अपना स्वत निर्माण किया है । जिज्ञासा उनकी, कार्य इनका । विचार उनके और लेखनी इनकी । भावना उनकी और प्रतीति इनकी । इस प्रकार भक्ति, श्रद्धा, विनय, आज्ञाकारिता तथा अपनी स्वाभाविक रुचिकी सम्मिलित-साधनाके परिणामस्वरूप श्री भँवरलालजी श्री अगरचन्दजीके ज्ञानकी अभीष्ट प्यासके सरोवर बनते गये हैं । विषयवस्तुके भावपक्षके जिज्ञासु काकाजीके कलापक्ष और कभी भावपक्षके रूपमें, आपने कलाकी साकार प्रतिमाका निर्माण अपनी अनवरत लेखनीसे किया है । कहते हैं वेदव्यासजीकी अभिव्यक्तिको लिपिबद्ध करनेकी शक्ति किसी देवशक्तिको नही हुई । केवल गणेशजीने यह भार ग्रहण किया । लेकिन गणेशजीने यह स्पष्ट कर दिया था कि यदि आप (वेदव्यासजी) कही रुकेंगे तो उनकी लेखनी भी वद हो जायगी । वेदव्यासजीने हाँ भर ली । उन्होंने कुछ श्लोकोंके पश्चात् एकआध श्लोक गूढ अर्थवाला वोलना प्रारम्भ किया और श्री गणेशजीसे मात्र इतना ही कहा कि आप अर्थ समझकर ही लिखेंगे । गणेशजी गूढार्थ-श्लोको पर रुक जाते और तब तक कृष्णद्वैपायन श्री वेदव्यासकी चिन्तनधारा नवीन श्लोकोका निर्माण कर लेती । यह क्रम चलता रहा और एक अद्भुत वाङ्मयका निर्माण होता रहा । कथाके अशमें कितनी सत्यता है, आजका वैज्ञानिक व्यक्ति शायद न समझ पाये पर फलितार्थ समझनेमें वह भी भूल नही करेगा कि दोनो महान् थे, दोनो ही दैवी शक्तियाँ थी । यहाँ भी **भावपक्ष जितना अभिव्यक्तिके लिये व्याकुल है तो कलापक्ष भी उतना ही आतुर । दोनोकी इन्टेन्शिटी** समान है और तभी सद्वाङ्मयकी सृष्टि सम्भव हो सकी है । राजस्थानके ये दो सजग प्रहरी कला, ज्ञान, विज्ञान, सभ्यता, संस्कृति, धर्म और नीति व्यक्तिगत व सामाजिक जीवनके मूल्योकी खोजमें सतत व्यस्त रहे हैं । यह तृष्णा बुरी नही है । ये अध्यवसायी, स्वाध्यायी कालक्षेपके प्रमादसे रहित हैं । इनके समक्ष

"भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ता', तपो न तप्त वयमेव तप्ता ।
कालो न यातो वयमेव याता , तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णा ॥"

एक वरदान हैं, निराशामय अभिशाप नही, क्योंकि ये स्रष्टा हैं, स्रष्टाके शोधक है तथा नवीन सर्जनके कारण और कार्य दोनो ही है । मध्यदेशीय सस्कृतिके सरक्षण, पोषणमें किसी प्रकारकी वाधा इन्हें प्रिय नही हुई है । **जव कभी किसी प्रकारका आक्षेप आया है, वीकानेरकी दृष्टि इस व्यस्त नगरीकी ओर उठी है और सकेतमात्रने भँवरलालजीके रोम-रोमको जागृत किया है । इतिहास जागृत हुआ है, लिपि नवीन हुई है, विचार व्यवस्थित हुए हैं । विद्वत्-समाज कृतार्थ हुआ है ।** तात्पर्य यह कि अगरचन्दके भँवर, अगरके सुगधका आभासमात्र पाकर भुनभुनाने लगे हैं । भँवरलालजी परागके प्रेमी हैं । इनका स्रोत वीकानेरके पुष्पराज श्री अगरचन्द हैं, इसमें दो मत नही हो सकते । काका और भतीजेकी यही दैवी-शक्ति इनके वाङ्मयकी सृष्टि करती रही है । ऐसा ही हुआ है और इसी वातावरणने इनके एक पृथक् व्यक्तित्वका निर्माण किया है । देश, काल, परिस्थिति और वातावरण प्राय अपना सभी अलग अस्तित्व रखते हैं पर जगत्की गतिमें वे सामूहिक योगदान देते है । **राजस्थान, वगाल, आसाम, मणिपुर आदि पूर्वसे लेकर** पश्चिमपर्यन्त तथा हम्पीसे लेकर आवू पर्वत तथा दक्षिणी व पश्चिमी प्रान्तोके धार्मिक व साहित्यिक सस्थान इनके विचार विन्दुओंके अविरल प्रवाहमें अपने पद चिह्न छोडते गये है । गणमान्य विद्वानोंके सामयिक सहयोग, सम्पर्क व साहचर्यने इन्हें समुत्सुक किया है, कर्तव्यकी प्रेरणा दी है, अध्ययनकी विधा दी है । जो विद्वान् आपके सम्पर्क व सान्निध्यमें

आये हैं पाठक स्वय विचार करेंगे कि इस मनीषीका अक्षर-ज्ञान कितना अ—क्षर होता गया होगा। जैनाचार्य, प्रसिद्ध पुरातत्त्ववेत्ता डॉ० मुनि जिनविजयके आप कृपापात्र हैं। मुनि कान्तिसागरजीका कर्मठ जीवन इन्हें दुलार दे सका है। त्रिपिटिकाचार्य महापडित राहुल साकृत्यायन इनके निकट सम्पर्कमे रहे हैं। ओरियन्टल लैंग्वेजेजके प्रसिद्ध विद्वान् डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी, डॉ० सुकुमार सेन, डॉ० गौरीशकर ओझा जैसे भाषा-शास्त्री लिपि-विशेषज्ञोका सान्निध्य आपको सम्बल देता रहा है। प्रिंस आफ वेल्स म्यूजियमके डायरेक्टर डॉ० मोतीचन्द आपके मित्रोमे है। प्रसिद्ध विद्वान् डॉ० वासुदेवशरण अग्रवालसे आपका सम्बन्ध एक अविदित कहानी बन गया है। प्रसंगवश उसका उल्लेख किया जायेगा। हिन्दी साहित्यके मूर्धन्य विद्वान् व आलोचक डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ० दशरथ शर्मा तथा अन्य समसामयिक मनीषी-वर्गका स्नेह व सौहार्द आपको अनायास उपलब्ध होता आया है। अब हम अनुमान कर सकते हैं कि प्राइमरी शिक्षा समाप्त करने वाला यह भारतीय चिन्तक कितना शिक्षित, दीक्षित व प्रामाणिक ज्ञानका स्वाध्यायी धनी है और इस धनकी धरोहरका उद्गम स्थान कहाँ है। प्रकाशित पुस्तकोकी भूमिकामें अकित विद्वानोकी सम्मतियाँ उक्त कथनकी साक्षी हैं। स्थान विशेषपर इनकी चर्चा पाठकोको इस विषयकी प्रतीति दे सकेगी। मुझे विश्वास है प्रसगात् आपके लिपिज्ञानके प्रति डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जीके उद्गार पर्याप्त होगे। महानुभावी सप्रदायका एक ग्रन्थ है "पावापाठ"। ग्रन्थ प्राचीन नही, प्रत्युत ३०० वर्ष पहलेकी कृति है। ग्रन्थ मराठीमें लिखा गया है पर लिपि उसकी साकेतिक है। अगरचदजीने उस पुस्तकको देशके जानेमाने विद्वानोके पास पढ़ने तथा उसका अर्थ करने सानुरोध भेजा था, पर पुस्तक वैरग वापस लौट आयी। अब बीकानेरकी प्रतिभाने कलकत्ता स्थित अपनी शक्तिका सस्मरण किया। भँवरलालजीने लिपिकी एक वर्णमाला तैयार की और ग्रन्थ आद्योपान्त पढ डाला। आवश्यकता हुई कि वैज्ञानिक पद्धति पर लिपि विज्ञानके मार्गदर्शक, भाषावैज्ञानिको द्वारा अपने पठनके औचित्यको विश्लेपित किया जाय। भँवरलालजीने सुनीति बाबूको वह ग्रन्थ दिखाया और पढकर सुनाया। सुनीति बाबूने आपकी भूरि-भूरि प्रशसा की और कहा—"आपनी चोमोत्कार काज्जे कोरेचेन।" सुनीति बाबूके हाथोपर शब्द खेलते है, भाषाएँ उनकी चेरी है, विश्रुत विद्वान् हैं। उनकी यह आश्चर्य भरी स्वीकृति इस मूक साधकके ज्ञानकी अविदित कथा है। ऐसे ही एक बार श्री जिनदत्तसूरिकृत "अपभ्रश-काव्यत्रयी" की व्याख्यामें आये एक प्रसगपर भँवरलालजीने आपत्ति की और महापण्डित राहुल साकृत्यायनने अपनी मन स्थिति ठीक की। प्रसग था "कज्जौ करइ बुहारी बुड्ढी" महापण्डितने अर्थ किया था "घरमे बुड्ढी औरतें झाड़ू देनेका काम करती है" आपने लिखा कि—पता नही भाषामर्मज्ञ और समाज-मनोवैज्ञानिक तथा प्रसिद्ध समाजशास्त्रीने ऐसा क्यो लिखा। पद्य तो कहता है कि कज्जो (कूडाकरकट) बुड्ढी (वद्ध, सगठित-बँधे हुए) बुहारी (झाडू) से ही सम्भव है। कुछ ऐसी ही पचासो आनुमानिक व्याख्याओका प्रत्याख्यान इस प्राचीन भाषा-मर्मज्ञने किया है। 'ढोलामारू दोहा' के कई स्थलो पर की गई उचित आपत्ति नागरी-प्रचारिणी पत्रिकामें अकित है। डॉ० माताप्रसाद गुप्त जो इलाहाबाद युनिवर्सिटीके एक इने-गिने प्राध्यापकोमें रहे हैं, उन्होने हिन्दीके आदि कालीन ग्रन्थो, जो विश्वविद्यालयीय उच्च कक्षाओमें पाठ्य थे, की व्याख्याएँ प्रस्तुत की, जैसे हम्मीरायण तथा वसंतविलास इनकी आलोचनाके केन्द्र बन गये हैं। वस्तुस्थिति यह है कि हिन्दी साहित्यका आदिकाल जैन व बौद्ध महात्माओ, साधको व सिद्धोकी पृष्ठभूमि पर खडा है। नाथपथकी साहित्यिक देन भी हिन्दीके लिए एक स्तम्भ है, जिसने मध्यकालीन साहित्यको पूर्ण रूपसे प्रभावित किया है। फलत' अपभ्रश साहित्यकी वैज्ञानिक विधाओकी जानकारीके अभावमें वस्तुस्थितिका ज्ञान असम्भव है। शौरसेनी प्राकृतमे उपलब्ध समस्त ज्ञान गरिमा अपभ्रश भाषामें लिपिबद्ध है और यह सारा वाङ्मय देशके पश्चिमोत्तर भागमें लिखा

गया है। फलत आचलिक भाषाओकी वास्तविक परख किये बिना हम तात्कालीन साहित्यके प्रति न्याय नही कर सकेंगे। राजस्थानकी समस्त आचलिक भाषा-लोक सस्कृति तथा लोक भावनाओके क्रमिक विकासके लिए यदि हम विज्ञानके घिसेपिटे नियमो व सिद्धान्तोकी कसौटीपर कसते रहे तो वह हमारे अज्ञानके प्रयासका विकल्प ही होगा। १००० से लेकर १३७५ तक सम्पूर्ण वाङ्मयसे सुचारु रूपसे अध्ययनके लिये तत्‌तद्‌देशीय प्रतिभाओको ही अधिकारी निर्देशक स्वीकार करना पडेगा, अन्यथा विश्वविद्यालयीय अध्यापन-शैली व शोध-प्रणाली केवल प्रिन्सिपुल बनकर रह जायेगी और हम अज्ञानान्धकारमें आँख मूँद कर टटोलने-की मान्य प्रणाली पर चलनेके अभ्यस्त हो जायेंगे। लोकभाषा, लोकाचारकी भावनाओसे ओत-प्रोत होती है, चारणोकी कृतियोको मात्र भाषा-वैज्ञानिक ही निर्णय कर पाये, यह तात्त्विक दृष्टिसे असम्भव है। यही बात सिद्धो व योगियोकी अभिव्यक्तियोके प्रति लागू है। मेरा आग्रह मात्र इतना ही है साहित्य ज़नमानसका सचित प्रतिबिम्ब होता है, फलतः जनमानसकी भावना जो सामयिक रससाधनाका वर्चस्व पाकर अभिव्यक्त होती है उसकी अभिव्यक्तिकी विधा उसके सम्पर्क व सान्निध्यमें रहनेवाले विद्वान् ही कर सकते है और वही मान्य भी होना चाहिये।

दशवी शताब्दी के पश्चात्का पश्चिमी भारत **विशेषतया राजस्थान** और उत्तरी भारत (पजाब, उत्तरप्रदेश, बिहार तथा बगाल) ऐतिहासिक दृष्टिकोणसे उतना भ्रामक नही होना चाहिये। तात्कालीन सामाजिक व सास्कृतिक परिवेश भी उतने धुधले नही है। फिर भाषाके प्रश्नको लेकर १०वी से १४वी शताब्दी तक साहित्य-सृजनके प्रति भ्रामक विचारोकी आवश्यकता ही क्या है? शौरसेनी, मागधी तथा अर्द्धमागधी प्राकृतमे नि सृत क्षेत्रीय भाषाओकी बदलती हुई व्यजनाशक्ति, ध्वनि, शब्द तथा वाक्याशोमें अतरकी स्थिति तत्‌तद्‌देशीय विद्वानो द्वारा निर्णीत होनी चाहिये। रासो ग्रन्थोके विषयमें रामचन्द्र शुक्ल, श्यामसुन्दर दास, राहुल साकृत्यायन, डॉ० रामकुमार वर्मा, डॉ० धीरेन्द्र वर्मा तथा डॉ० भोलानाथजीके विचार असमंजसकी स्थिति उत्पन्न कर सकते है पर डॉ० मोतीलाल मेनारिया, गौरीशंकर ओझा तथा अन्तत डॉ० दशरथ शर्मा आदि विद्वानोकी सम्मति क्यो न निर्णायक मानी जाय। नाहटा बन्धुओने इस दिशामें प्राचीनतम प्रतियोकी अनेकानेक प्रतिलिपियाँ तैयार करके जो स्तुत्य काम किया है, इनका यह प्रयास इस दिशामें विशेष सहायक हुआ है। अन्त और बाह्य-साक्ष्यकी प्रामाणिक स्थितिके लिए इनका अमूल्य सहयोग हिन्दी साहित्यके आदिकालके लेखको, आलोचको व मनोवैज्ञानिकोके लिए वरदान सिद्ध हुआ है और होता रहेगा। उक्त विचार श्री भँवरलालजीने अनेको बार व्यक्त किया है, मैंने तो प्रसगवश उनकी चर्चा की हैं। बगला और मागधीको लेकर भी यही विवाद विद्यापतिके विषयमें चर्चाका विषय बनता रहा है। मेरी समझमें दोष Methodist, Scholars के मानसकी विकल्प स्थितिका है। किसी भी विषयका प्रारम्भ ही वस्तुत विवादग्रस्त होता है, पर उसकी अक्षुण्ण परम्परा विवादोको वाग्जाल समझ कर त्यागती रही है। नाहटा-बन्धुओने आलोचनाकी भूमि दी है, आलोचनाएँ कम की हैं। साहित्यका उद्धार किया है, निर्णयकी पृष्ठ-भूमि दी है, यह निर्विवाद सत्य है।

साहित्य-साधना कर्म और ज्ञान-साधनासे पृथक् नही रखी जा सकती क्योकि साहित्य-साधनाके साथ कर्म और ज्ञानका पूरा सम्मिश्रण होता है। फलत अभिव्यक्ति चाहे स्वान्त सुखाय हो या बहुजन हिताय, दोनोमें अन्तर नही होता। इसलिये कि जो स्वान्त सुखाय है, वह बहुजनके परिवेशका ही परिणाम है। व्यक्ति और समाजकी आवश्यकताओसे सम्बन्धित भावनायें ही अभिव्यक्तिके माध्यमसे साहित्यकी सज्ञा पाती हैं। अत 'स्व' और 'पर'के ज्ञानकी प्रेरणाका फल कर्म यदि भावानुभूतिकी तीव्रताके प्रवाहको साहित्यकी

विधा देता है तो सृजनकी प्रकृति तीनो ही मन प्रवृत्तियो की प्रकृति स्वीकार की जानी चाहिये अन्यथा कर्मयोग व ज्ञानयोग दोनो ही भावयोगसे पृथक् केवल एक शास्त्रीय मर्यादा बन कर रह जायेंगे। यदि मनेन रागात्मिका वृत्ति ही काव्यके आधार माने जायेंगे तो विरागजन्य भावाभिव्यक्तियोको नोटिस मात्र समझ कर हम तिरस्कृत करते रहेंगे और भक्तिरससाधकोकी विशाल कृतियाँ साहित्यकी श्रेणीसे अलग पुस्तकालयोकी निधि बन कर ही रह जायेंगी। मेरा तात्पर्य यह है कि मनकी समस्त स्थितियो व प्रकृतियोको राग-विराग किसी भी स्थितिमें-यदि रसानुभूति होती है और वह अभिव्यक्ति पानेके आवेगसे व्याकुल होकर, विमल उच्छ्वास होकर, व्यक्त होती है तो आलोचकोकी रसव्यंजनाकी श्रेणीमें गिनी जानी चाहिये अन्यथा हम मानव मनके प्रति न्याय नही कर सकेंगे और अनेकानेक प्रतिभाएँ विलुप्त हो जायेंगी। नाहटा-बधुओंके सृजन स्वात सुखाय व बहुजनहिताय दोनो ही हैं। भँवरलालजीने प्रायः स्वान्त सुखाय रचनायें ही की हैं और जहाँ ज्ञान और कार्य दोनोका ही समवेत सृजन हुआ है वहाँ सामाजिक चेतनाका प्रतिफलन ही स्वीकार करना पडेगा। इनकी कृतियोको हम मौलिक, अनूदित तथा सम्पादित, इन तीन विभिन्न श्रेणियोमें रखेंगे। रचनाओके आकलन स्वय अपने महत्त्व प्रगट करेंगे। पाठक और विद्वद्वर्ग तथा अन्यान्य चिन्तक निर्णय करेंगे कि इन स्वतत्र प्रकृतिके साहित्य साधकोके सृजनकी भूमि क्या है ?, इनकी आकाक्षाये क्या हैं ? और इनका कथ्य क्या है ?

काल-क्रमानुसार निम्नाकित विरचित व सम्पादित ग्रथोके सम्पादन, अनुवाद, व्याख्या, चरित्रचित्रण, सस्मरण, शोध एव अनुसधानात्मक विषयोंके अतिरिक्त काव्य, स्तवन, प्रशस्ति विषयक पुस्तकोकी सूची प्रस्तुत है। पुरातत्वके प्रति इनके आकर्षणने, धर्मके प्रति आस्थाने और साहित्यके प्रति इनकी चित्तवृत्तिने इनकी बहुदर्शिनी-बहुस्पर्शिनी प्रतिभाको विविध विषयोकी ओर उन्मुख किया है। श्री अगरचन्द नाहटाके साथ सम्पादित ग्रन्थोकी सूचीके पूर्व इनके द्वारा स्वतत्ररूपसे सम्पादित व विरचित पुस्तकोकी तालिका इस प्रकार है—

प्रकाशित

१ सती मृगावती (स० १९८७)
२ राजगृह (स० २००५)
३ समयसुन्दर रास-पचक (स० २०१७)
४. हम्मीरायण (स० २०१७)
५ उदारता अपनाइये (स० २०१७)
६ पद्मिनीचरित चौपई (स० २०१८)
७ सीतारामचरित्र (स० २०१८)
८. विनयचन्द्रकृति कुसुमाजलि (स० २०१९)
९ जीवदया प्रकरण काव्यत्रयी (स० २०२१)
१० सहजानन्द सकीर्तन (स० २०२२)
११ बानगी (राजस्थानी भाषामें) (स० २०२२)
१२ पावापुरी (स० २०३०)
१३ श्री जैन श्वेताम्बर पचायती मन्दिरका सार्द्ध शताब्दी स्मृतिग्रथ
१४-१५ जिनदत्तसूरि सेवा सघ द्वारा प्रकाशित स्मारिका द्वय
प्रथम (स० २०२३) तथा द्वितीय (स० २०२९)

अप्रकाशित

१ काव्य—चन्द्रदूत (हिन्दीमें दोहोके रूपमें)

२ स्तवन—सहजानद गुरुदेवाष्टक (सस्कृतमें)

३. प्रशस्ति—नाहटा वंश प्रशस्ति (१०८ श्लोकोमें संस्कृत काव्य)

४. अनुवाद—कीर्तिलता (अवधीसे हिन्दीमें अनुवाद)

५ अनुवाद—द्रव्य-परीक्षा (प्राकृतसे हिन्दीमें)

६ अनुवाद—नगरकोटप्रशस्ति (प्राकृत मिश्रित अपभ्रशका सस्कृत छाया अनुवाद व हिन्दीकरण)

७ अनुवाद—अलकार दप्पणम् (प्राकृतका सस्कृत छायानुवाद तथा हिन्दी व्याख्या)

८ सागरसेठ चौपई—जिसका अनुवाद, अग्रेजी संस्कृत शब्दकोष सयुक्त संपादन।

अतिरिक्त

शताधिक कहानियाँ, सस्मरण तथा फुटकर आलोचनात्मक लेख। प्रतिलिपियोकी संख्या प्रायः सहस्राधिक है।

उपर्युक्त ग्रन्थ आपके लिंग्विस्टिक एस्थेटिक सेन्सकी तीव्र अनुभूतिकी बाह्याभिव्यक्त कृतियाँ है। आपके अतीत रसकी प्रीतिके प्रमाण है तथा है आपके प्राचीन ग्रन्थोके उद्धारकी साहसिक प्रक्रियायें; जो शोध व अन्वेषणकी प्रवृत्तिके परिचायक है। पितृव्य श्री अगरचन्दजीके साथ सम्पादित अमूल्य ग्रन्थोकी तालिका आप दोनोके प्रयासकी दिशाका स्पष्ट परिज्ञान देंगी।

१ युगप्रधान जिनचन्द्रसूरि (स० १९९२)

इस ग्रथका सस्कृत काव्यानुवाद कलकत्तासे एव गुजराती अनुवाद भी बम्बईसे प्रकाशित है। २०२९ में अभी-अभी तृतीय सस्करण प्रकाशित हुआ है।

२ ऐतिहासिक जैन काव्य-सग्रह (स० १९९४) डॉ० हीरालाल जैनकी भूमिकासे सम्वलित।

३ दादा जिनकुशलसूरि (स० १९९५) द्वितीयावृत्ति (स० २०१९)

४ मणिधारी जिनचन्द्रसूरि (स० १९९७) द्वितीयावृत्ति (स० २०२७) इस ग्रन्थका सस्कृत काव्यानुवाद भी सामने आया है।

५ युगप्रधान जिनदत्तसूरि (स० २००३)

६ बीकानेर जैन लेखसग्रह (स० २०१२)

७ समयसुन्दरकृति कुसुमाजलि (स० २०१३)

८. बम्बई पार्श्वनाथस्तवनसग्रह (स० २०१४)

९ ज्ञानसार-ग्रथावली (सं० २०१५)

१०. सीताराम चौपई (सं० २०१९)

११ रत्न-परीक्षादि (फेरु ग्रन्थावली) (सं० २०१७)

१२ रत्न-परीक्षा (सं० २०२०)

१३ क्यामखाँ रासो

१४. मणिधारी अष्टम शताब्दी स्मारक ग्रन्थ (स० २०२७)

युगल प्रयासकी महत्ता प्राय. विशिष्ट विद्वानोकी प्रज्ञाचक्षुसे परीक्षित है। महापडित राहुल साकृत्यायन, डॉ० हीरालाल जैन, डॉ० गौरीशकर ओझा, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ० मोतीचद, मुनि कान्तिसागर

तथा मुनि जिनविजयजी आदि जैनसाहित्यके मर्मज्ञ, पुरातत्त्ववेता, प्रकाण्ड आलोचक व इतिहास-विशेषज्ञोकी दृष्टिमें इनके कार्य स्तुत्य तथा महत्त्वपूर्ण हैं। फलत आलोचना भारसे मुक्त होकर भी अपनी लेखनी इस मनीषी-द्वयकी अमूल्य कृतियोकी सूची देनेसे विरत नही हो सकी है। कार्य या कृतित्व प्रयासकी कसौटी चाहते हैं और उनकी सफलता या असफलता पंडितोपर निर्भर करती है। व्यक्तित्वकी परखके लिए वस्तुत व्यक्तित्वकी अन्तर्दृष्टिके ज्ञानकी आवश्यकता होती है पर आज तक मानवमनीषा सतत अभ्यासके वावजूद भी किसी भी व्यक्तित्वकी सही परख करनेमें असमर्थ ही रही है। इसलिये कि समय, समाज, परिस्थिति और व्यक्तिकी चित्तवृत्तिके जितने अध्ययन हो सके हैं, सभी अध्ययनके प्रोसेसमें हैं। फलत प्रोमेससे सतुष्ट होकर अन्तिमेत्थमकी बातपर बल देना हास्यास्पद ही हुआ है। विज्ञानकी कसौटीके लिए तो स्थिर मानदड हैं। इसीलिये उनके सिद्धान्त कथनमें वहुधा एक्युरेसी देखी जाती है पर पदार्थके गुणात्मक परिवर्तनकी परिणति जिस चेतनाको जन्म देती है उसके गुणात्मक तथ्यके गुणात्मक अन्तर्द्वंद्वसे उनकी चेतना विधाओका आकलन आज भी अधरमें लटका हुआ है। अत मानव अन्तरात्माकी ग्रथि खोलनेके प्रयत्न मात्र वाग्विलास होकर निर्णयके लिए किसी स्वस्थ मानदडकी खोजमें अब भी व्यस्त हैं। किन्तु सामाजिक चेतनाका यह अस्थिर मानदड ही श्रेयस्कर है। इसलिये कि इसमें चेतनाकी स्वतंत्रताका आभास मिलता रहता है जिसे हम एंगिल आफ थाट्स् कहते हैं। नाहटा वन्धुओकी कृति भी एंगिल आफ् थाट्ससे द्रष्टव्य है क्योकि रुचि विशेषकी विभिन्नता ही एकताकी कडी होती है। अत समग्ररूपसे उद्देश्यके धरातलका मूल्याकन करनेवाले 'रस-साधको व रसज्ञ आलोचकोसे मेरा यही आत्मनिवेदन होगा, वैसे कोई जोर जवर्दस्ती नही है, मात्र सदाग्रह है जो अमान्य नही ही होगा'। ऐसा विश्वास पालनेमें मुझे रत्ती भर भी संदेह नही दृष्टिगोचर होता। अन्यथा ये महाकवि भवभूतिकी मार्मिक उक्तिको ही दुहरा कर सतोप रखेंगे, कि—

"उत्पत्स्यते च मम कोऽपि समानधर्मा, कालो ह्यय निरवधि विपुला च पृथ्वी"

इस "सादा जीवन उच्च विचार"के प्रतीक शान्त व गम्भीर व्यक्तित्वमें कितनी वाक्यपटुता है, प्रत्युत्पन्न मति है, आशुकाव्य-स्फुरणके वीज हैं। इनके कुछ संस्मरणोंके उद्धरण इसे प्रमाणित करेंगे—

वात वहुत पुरानी है। एक वार वीकानेरमें सर मनू भाई मेहताके भाई श्री वी० एम० मेहता जो महाराजाके प्रधानमन्त्री थे, की अध्यक्षतामें एक कवि सम्मेलनका आयोजन था। श्री भँवरलालजी वहाँ उपस्थित थे। अध्यक्षने आपसे भी कुछ सुनानेके लिए कहा। आप उठे और एक आशुकविकी भाँति आठ भाषाओमें, जिनमें संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, अंग्रेजी, वगला, हिन्दी भाषायें भी सम्मिलित थीं, एक कविता पढकर सुनायी। कवितामें भगवान् महावीरकी स्तुति की जिसका संक्षयण इस प्रकार हुआ है—

"अष्ट भाषा मयैषा वर्द्धमानप्रभुस्तुति। स्वभक्त्या सकौतुकेन विक्रमाख्यपुरे कृत॥"

एक वार आप श्री अगरचन्दजीके साथ, राजस्थान हिन्दी साहित्य सम्मेलनके अवसरपर (रतनगढमें) उपस्थित थे। वहाँ पुस्तकोकी प्रदर्शनीमें आप दोनो महानुभाव अपनी रुचिके अनुसार पुस्तकें उलटपलट रहे थे। अगरचन्दजीके हाथ नेवारी लिपिकी कई प्रतियाँ आयी। आपने देखा और समझनेकी भी चेष्टा की। किन्तु लिपिका कोई ओरछोर न मिला। आपने श्री भँवरलालजीसे उन्हे देखनेको कहा। आपने पुस्तकें ली और वर्णमाला वनानेमें व्यस्त हो गये। दूसरे दिन सारी प्रतिया पढकर चाचाजीको सुना दी तथा उसके सम्बन्धमें एक लेख भी प्रकाशित किया।

ऐसे ही एक वार आप वीकानेर जैनसंघकी ओरसे श्री हरिसागरजीके पास उन्हें वीकानेर ले आनेके उद्देश्यसे नागौर पधारे। आपके साथ वीकानेरके कुछ सम्भ्रान्त व्यक्ति भी थे। श्री हरिसागरजी नागौरमें ही चातुर्मास वितानेके लिये वचनवद्ध थे। अनुनय, विनयके पश्चात् भी कुछ हल नही निकला। अन्तमें श्री

भँवरलालजीकी काव्यचेतना प्रस्फुटित हुई और आपने श्रीगुरुके चरणोमें निवेदनार्थ अपनी विवशता व्यक्त की, जो द्रष्टव्य है—

"कृत्वानेक परिश्रमोऽपि गुरुव
न स्वीकृता वीनती
श्रीमन्नागपुरीयसघविदिता
हृदयेन कृपणा महा
गच्छोन्नति च शासनस्य शोभा
सम्मान सघस्य च
न श्रुत्वा न विमर्षिता कथचित्
कलयामि कथयामि किम्"

× × × × ×

श्री ताजमल वोथरा कलकत्तेके एक विशिष्ट समाजसेवी, धनी मानी व्यक्ति हैं। आपने एक दिन भँवरलालजीसे आग्रह किया कि वगालमें सराक जाति लाखोकी सख्यामें निवास करती है। ये जैन श्रावक जातिके वशज हैं। उनके लिए वगलामें श्रावककृत्यकी विशेष आवश्यकता है। यदि ऐसा ही कुछ हो जाय तो वडा उपकार होगा। भावुक श्री भँवरलालजीको यह वात मनको लग गई और वात ही वातमें इस कवि-मनीषीने वंगला भाषामें २७ एक पद्योमें श्रावक कृत्य लिख डाला—

श्रावक तुमि उठे पड़ो अत्यन्त सकाले
दुइ दण्डो रात्रि थाकिते उषार अन्तराले
अल्पो लाभे अल्पारम्भे हय जे व्यापार
शोषण-दूषण रहित नीति श्रम आधार
नदी-पुकुर वन ठीका हिंसामय व्यापार
लोहारस बीच-अस्थि आदि परिहार
जल-दुग्ध घृततेल छाकना दिया राखो
प्रमार्जन आदिकाज्जे जीवयल देखो "श्रावक-कृत्य"

× × × × ×

जैन भवनमें वैद्य जसवतरायके अनुरोधपर श्री विजयवल्लभसूरिजी जयन्तीके अवसरपर जव कुछ कहनेके लिए कहा तो तत्काल आपने प्राकृतमें गाथायें वनाकर सुनायी और सभी सम्भ्रान्त व्यक्तियोको आश्चर्यमें डाल दिया। गाथायें इस प्रकार थी—

सिरीवल्लह सुगुरुण तवगच्छगयण सूर चदाणं
वदामि भत्ति-भावेण सग्गारोहण दिणो अज्ज १
आसोय कण्ह पक्खे इक्कारसी राइय तइय पहरे
मुवाणामा णयरी वहु सड्ढ समाकुले दीवे २
सावय जण उवयारो किच्चा सठाविओऽणेगे
विज्जालयादि पवरा सव्वपिओ भूय कय अत्थो ३
पत्तो सुरालयम्मि इदादि पडिवोहणा कज्जे
भारहवासी भत्ताण पूरिज्जतु सयलमण इच्छा ४

इसी प्रसगमें आपकी आत्माभिव्यक्तिका एक नमूना उपस्थित करनेके लोभका संवरण नही कर पा रहा हूँ। आपके दीक्षागुरु श्री सहजानदजीके निधनका समाचार आपको अजमेरसे बीकानेर जाते समय ट्रेनमें मिला और आपने अपने पूज्य श्रीपादके प्रति अपनी भावनाओको प्राकृतका यह रूप दिया।

अज्झत तत्तस्स सुपारगामी, एगावयारी पूइय सुरिन्दो।
मुणीन्द मउडो सुजुगप्पहाणो, गुरूवरो सहजाणद णामो ॥१॥
निव्वाणवत्तो सुसमाहिजत्तो, कत्तीय धवले तइयातिहीए।
निच्छत्त जाओ इह भरहखित्तो धम्मस्स एगो सायार रूवो ॥२॥
खेयेण खिन्नो सुमुमुक्खु सघो जाओ निरालव समग्गलोओ।
विदेह खित्तट्ठिय ते महप्पा भत्ताण देहिं निव्वुइ सुसत्तो ॥३॥

प्राकृतके एक ग्रन्थ जीवदया प्रकरणकी प्राचीन प्रति उपलब्ध होनेपर जब आपने उसे श्री हरखचदजी बोथराको दिखायी थी, आपने आग्रह किया कि प्राकृत पद्योका हिन्दी पद्यानुवाद भी प्रस्तुत करनेका प्रयास करें तो ग्रन्थ अधिक मूल्यवान हो जायगा। आपने अनुरोध स्वीकार कर लिया और प्राय चार-पाँच दिनोमें ही गद्य-पद्यानुवाद हरिगीतिका छदमें अभिव्यक्त कर डाली। काव्य-प्रतिभाके धनी आपकी सहज अनुवादकी शैली मूलभावोकी कितनी अंतरंगिणी बन सकी है एक आध उदाहरण पाठकोके लिए पर्याप्त होगे।

ससय तिमिर पयग भवियायण कुमय पुन्निमा इद।
काम गइद मइद जग जीव हिय जिण नमिउ ॥१॥
सशय तिमिरहर तरणि सम जिनका परम विज्ञान है,
भविजन कुमुद सुविकासकारक चद्रसम छविमान है।
करिवर्य मकरध्वज विदारण सिंहसम उपमान है,
जगके हितकर तीर्थपतिको नमन मगल खान है ॥१॥
दियह करेह कम्म दारिद्द हएहिं पुट्ठ भरणत्थ।
रयणीसु गेय णिद्दा चिंताए धम्म रहियाण ॥३८॥
लाया नही है पूर्वके सत्कर्म अपने साथमे
तो पेट भरनेके लिए कैसे बचेगा हाथमे?
दिवस भर है कष्ट करता कठिन श्रम बिन धर्मके
रातमे निद्रा न पाता, फल मिले दुष्कर्मके ॥३८॥

और अन्तमें प्राकृत भाषाके एकमात्र अलकार-शास्त्र "अलकार दप्पण" नामक-ग्रन्थ जैसलमेरके भडारसे ताडपत्रीय प्रतिलिपिमें प्राप्त हुआ था। श्री अगरचन्दजीके अनुरोधपर इस प्रतिभाशाली शारदाके वरदपुत्रने हिन्दी अनुवादके साथ साथ सस्कृत छायानुवाद कर इस दुर्लभ ग्रन्थकी महत्तापर चार चाँद लगा दिया जो विद्वानोके लिए स्पर्द्धाकी वस्तु है। एक उदाहरण इस प्रकार है।

संखलोवमा जहा—शृखलोपमा यथा
सगस्स व कणअ-गिरी कचन-गिरिणु व महिअल होउ
महि वीढस्सवि भरधरणपच्चलो तह तुम चेअ
स्वर्गस्ववकनकगिरि कचनगिरिणीव इव महीतल भवतु।
महीपीठस्यापि भारधरणप्रत्यक्तस्तथा त्व चैव ॥

इस प्रकार अनेकानेक संस्मरण आपके सान्निध्यमें मुझे सुननेको मिले हैं जिन्हें अंकितकर अपने विषय को बढाना उचित नही समझता। गद्दीपर बैठकर क्षणमें पुस्तकावलोकन, प्रतिलिपिकरण, निबन्धलेखन, तथा क्षणमें व्यापारिक सम्बन्धोका रक्षण व पोषण न जाने कितनी बार देखा है। कोई आयाम नही, प्रयास नही, स्वाभाविक गतिसे लेखनी बहीखातोपर चलते-चलते साहित्यिक लेखनमें व्यस्त हो जाया करती है। धन भी है धर्म भी, ज्ञान भी है विवेक भी, राग भी है विराग भी, कितनी समरसता है एकरसतामें भी, आश्चर्य होता है। नामकी भूख नही, केवल कर्तव्यकी प्रेरणा है। सम्भवतया इसीलिये इनकी सज्जनताका फायदा उठाने वाले कितने ही मान्य विद्वानोने इनकी कितनी अज्ञात कृतियोको अपने सन्मानका विषय बनाया है। प्रसगवश एक उदाहरण देनेमें मुझे सकोच नही है। प्रसिद्ध प्राच्य विद्या विशारद पुरातत्त्ववेत्ता डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल, जो आप लोगोके लिए एक गर्वका विषय थे, इनके साहित्यके समर्थक व सहायक भी, श्री भँवरलालजी की दो कृतियाँ—"कीर्तिलता" तथा "द्रव्यपरीक्षा" के साथ न्याय नही कर सके। अवधी भाषाकी कृति, कीर्तिलताका अनुवादकर भँवरलालजीने डॉ० साहबको देखनेके लिए भेजा था, पर अग्रवाल साहबने इनके नामका सन्मान ही रहने दिया। यही बात पुरातत्त्वसम्बन्धी द्रव्यपरीक्षाके विषयमे भी कथ्य है। इस अमूल्य ग्रन्थके आधारपर उन्होने अग्रेजीमे लेखबद्धकर अपने नामसे छपा डाला। उनके दिवगत होनेपर शायद ये दोनो पुस्तके बीकानेर सग्रहालयमे सुरक्षित रखी गई हैं, जिसे उनके पुत्रने लौटाई है। शायद विज्ञापन ही व्यक्तित्वकी सच्ची परख है और इनके पास विज्ञापन नही। आप अगरचन्दजीके अनुरोधके वशवद है। इन्हें जो कुछ भी सामाजिक-साहित्यिक सम्मान मिला है, काकाजीकी ही कृपाका फल है ऐसी इनकी आत्मस्वीकृति है।

भँवरलालजीका जीवन सीधासादा है। आपका अन्तर जितना निर्मल व पवित्र है उतना ही व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन भी। धोती, कुर्ता तथा पगडी यही सामान्य परिधान है। व्यवहारकुशल, वाणी सुखद, जीवन कर्मठ और कृति सुन्दर। यही कारण है कि सामाजिक, धार्मिक व सास्कृतिक सभाओ, सभ्य व सस्कृत विचारगोष्ठियो व अन्यान्य सस्थाओसे आपका जीवन सम्बन्ध है। ऐसे ही पुरुषोके लिए शायद यह उक्ति चरितार्थ है—

"काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम्

विषम परिस्थितिमे धैर्य आपकी विशेपता है, धन है, यश है, पर अभिमान नही, अभिरुचि नही, कोई व्यसन नही, भाषणपटुता और लेखनसिद्धिका विचित्र समायोग है। अत भर्तृहरिजीके शब्दोमें आप महान् आत्माओकी उक्त सिद्ध प्रकृतिके प्रतीक हैं। लोकमगलकी लालसा है, पर-जन्मके कृतार्थकी कामना है। हृदयमें विश्वास है और परमशक्तिमानमें श्रद्धा तथा भक्ति है। व्यतीत आपकी स्मृतिमें है और सजग वर्तमान हाथोमें, फिर नियतिके लिए अधिक चिन्ता नही। जैनधर्म, जैनसाहित्य, जैनसभा, जैनसम्मेलन आपके विना अपूर्ण हैं। आपके सार्वजनिक जीवनके लिए इतना ही कहना पर्याप्त है। निम्नाकित सम्मानित पद कथनकी पुष्टि करेंगे।

अध्यक्ष—जैनभवन, कलकत्ता
मत्री—श्री जिनदत्तसूरि सेवासघ
मत्री—राजस्थानी साहित्य परिषद्
मत्री—श्री जैन श्वेताम्बर उपाश्रय कमेटी,
ट्रस्टी—श्री जैन श्वेताम्बर पचायती मदिर, कलकत्ता

ट्रस्टी—जैनभवन, कलकत्ता।
ट्रस्टी—जैनभवन, पालीताना,
सम्पादक—कुशल-निर्देश, (मासिक पत्रिका)

अपने आठ वर्षोके सम्पर्कके फलस्वरूप श्री भँवरलालजीके व्यक्तित्वकी जो छाया मुझपर पडी है, मैंने शब्दोकी परिधिमे बांधनेकी यथासम्भव चेष्टा की है, पर भिन्न रुचि, भिन्न चिन्तनप्रणाली, प्रमाद या अज्ञानवश यदि असमर्थ रहा हूँ तो वह क्षम्य मानी जानी चाहिये।

सक्षिप्त जीवन-परिचय

भँवरलालजीका जन्म सवत् १९६८के आश्विन महीनेके कृष्णपक्षकी द्वादशीको हुआ है। परम साध्वी, सुशीला, श्रीमती तीजाबाईकी गोदमें इनका लालन-पालन हुआ। पिता श्री भैरूदानजी एक कर्मठ व्यवसायी, लोकप्रिय तथा धार्मिक प्रकृतिके व्यक्ति थे। अध्यवसाय उनका लक्ष्य था और जीवन पवित्र। फलत पुत्रकी भावनाओमें कभी अन्तर नही आ पाया। वैसे पूरा-का-पूरा नाहटा परिवार एक अपनी पूज्य परम्परा रखता है। केवल उदरपूर्ति व भोगविलासकी कामनासे धनोपार्जन इस परिवारकी चेष्टा नही रही। तप पूत चरित्र, धार्मिक निष्ठा तथा सतत प्रयास जिनका विकास श्री भँवरलालजीमे क्रमश. हुआ इनके व्यक्तित्वकी समय-शिलापर चित्र बनता गया। जैन शिक्षालय बीकानेरमें ही आपका विद्यारम्भ मुहूर्त हुआ पर शिक्षा इन्हें मात्र ५वी कक्षा तक मिली। चाचा अभयराजजी, जिन्हें ससार प्रिय नही लगा, स्वर्ग सिधार गये, आपको सयम व व्रतकी शिक्षा दे गये। फलत होश सभालनेके साथ ही जैनशासनकी विभिन्न साधनाओमें आपका मन रमने लगा, जिसका क्रम हम आज भी यथावत् पाते है। अध्ययनकी रुचि आपको श्री अगरचन्दजी काकाजीसे मिली। दोनो ही महानुभाव प्राय हमउम्र रहे हैं लेकिन पूज्य-पूजककी भावना यथावत् है। मर्यादाने आँखकी शर्मका शान बनाये रक्खा है। व्यापारिक उत्थान-पतनकी चिन्तासे दूर, भावनाओके ससारमें खुले पंख उडनेकी अनन्त कामना इन शरद्पुत्रोको सशक्त बनाये रखे हैं। पूज्य माताजीका प्यार कुछ समय तक ही मिल पाया था क्योकि उनकी पुकार आ गयी थी। पिताश्रीने तीन विवाह किये थे आप द्वितीय पत्नीकी देन हैं। माताजी की मृत्युके पश्चात् १० वर्ष बाद आप श्री लक्ष्मीचन्दजी की गोद चले गये। आपको पूरे परिवारका स्नेह सुलभ रहा। १४ वर्षकी अवस्थामें आपका शुभ पाणिग्रहण सस्कार स० १९८३की मिती आसाढ वदी १२को श्री रावतमल सुराणाकी सौभाग्यवती कन्या श्रीमती जतन देवीके साथ सम्पन्न हुआ। आपके दो पुत्ररत्न श्री पारसकुमार और पदमचन्द तथा दो सुशीला पुत्रियाँ श्रीकान्ता तथा चन्दकान्ता है। पुत्रियाँ अपने सम्पन्न घरोमें पुत्र, धन-धान्य-पूर्ण सुखमय जीवन व्यतीत कर रही हैं और प्रथम पुत्र श्री पारसकुमार, जो मेरे एक घनिष्ठ मित्रोमें हैं, कुशल व्यवसायी, शुद्ध व्यावहारिक शान्त पर गम्भीर व्यक्तित्वसे समन्वित तथा वर्तमान युगकी उच्चतम शिक्षा, एम० काम०, एल० एल० बी०की उपाधिसे विभूषित योग्य नवयुवक है। इनमें सामाजिक व नैतिक मर्यादा है, व्यक्तित्वको परखनेकी अपनी दृष्टि है। समय, समाज व परिस्थितियोके साथ गतिशील होनेकी शक्ति है। साहस है और है एक आत्मबोध, जिसमे सतुष्टिके समापनकी विचित्र शक्ति सनिहित है। कर्तव्य इनका लक्ष्य है और सिद्धि इनकी प्रेरणा। वर्तमान इनसे सतुष्ट है और ये वर्तमानसे सतुष्ट। फलत. भविष्य इनका अपना है। इनकी आकाक्षाये इनके प्रयत्नकी सीमाओमें ही शरण पाती हैं। आप अपनी प्रिय पत्नी और अपने चार पुत्रो तथा एक पुत्रीके साथ सुखी है। प्रिय श्री पदमने बी० एस-सी० तक अध्ययन क्रम जारी रखा, आजकल पिताजीके साथ व्यवसायमें संलग्न हैं। नितान्त इन्ट्रोवर्टी, कर्मठ शान्त व सुशील परिवारकी मर्यादाके अनुकूल इनका

जीवन है। आपका भी विवाह एक सुशिक्षित व धर्मशीला महिलासे सम्पन्न हुआ है। एक सुन्दर-सा पुत्र आपकी गोदका शृंगार है। इसी छोटेसे परिवारके साथ भँवरलालजी पर्याप्त संतुष्ट रहते है। भाग्यकी विडम्बनाने कभी भी इन्हें निराश नही किया। जन्म लेने, परिवार सृजन करने व उसके पालन करनेकी विशेष चिन्ता आपको कभी नही हुई। एक छोटे सुन्दर सौम्य ढंगसे सजे हुए अपने शान्त कुटीरमें आपका ६२वाँ वर्ष व्यतीत हो रहा है। परिवार सजग है, धर्म सजग है और सजग है आपका कर्तव्य। रीति-नीति परम्परायें आपको अतीतसे जोड जाती हैं। साहित्यानुराग व सामाजिक पुकार आपको वर्तमानसे सलग्न कर रखे हैं और भविष्य मुक्तिके सदेशसे आपको विश्वस्त कर जाता है। अवकाशके आवश्यक क्षण लेखन अध्ययन आदिमें व्यतीत होते है। पचप्रतिक्रमण, जीव-विचार, नवतत्त्व, आगमसार, पैंतीस वोल थोकडा आपकी आस्थाके मनन चिन्तन तो बचपनमें पडे हुए हैं। इन्हें अपने भाइयोका भी आदर सम्मान व सहयोग प्राप्त है। श्री हरखचन्दजी तो व्यक्ति नही, मानवरूपमें एक दैवीशक्ति व शीलसे विभूषित दुर्लभ प्राणी हैं। जो भी व्यक्ति एक वार उनके सम्पर्कमें आया इस कथनको अत्युक्ति न समझेगा, ठीक ऐसे ही विमल बाबू भी हैं। सभी सुखी सम्पन्न व समृद्ध हैं।

अन्तमें जैसा मैंने लिखा है किसी भी व्यक्तित्वके मूल्याकनके लिए जितनी दृष्टि अपेक्षित है उसके मानदडकी जितनी विभिन्न विधायें हैं। मेरा अपना आकलन पूर्ण है, मैं स्वीकार नही कर सकता। वशिष्टजीकी बुद्धिमहासागरके समान भरतजीके व्यक्तित्वकी महिमाके तीरपर अवलाकी तरह खडी जैसे नौके व तटका चिन्ह नही पा सकी उसी प्रकार कोई भी चिन्तक इस महान् गम्भीर व्यक्तित्वकी थाह नही पा सकता। मैंने तो न्यूटनकी तरह इस ज्ञानगरिमाके सागर तटपर बच्चोकी तरह खेलते हुए कुछ ककडिया ही बटोरी है। हर तरगोंको पहचाननेकी शक्ति भला तटपर खडे रहनेवाले कायरको कैसे सुलभ हो सकती है ? मैं तो मात्र सीपीसे सन्तुष्ट हूँ, डूबनेकी शक्ति नही, फलत मोतीकी आवका दर्शन ही कैसे होगा ? यह भार तो मैंने सक्षम व साहसी व्यक्तियोपर ही छोड दिया है। पाठकोकी जिज्ञासायें और अधिक जाननेकी होगी पर उनसे मेरा विनम्र निवेदन होगा कि इनकी कृतियोके माध्यमसे इन्हें जाननेका प्रयास करेंगे। एक बात मैं अवश्य कहूँगा कि भँवरलालजीने वही किया है तो इनकी चेतनाने स्वीकृति दी है और वह करेंगे जिसे इनका अपना निर्मल मन स्वीकार करेगा। इनमें अब भी कुछ कर गुजरनेकी साध है और ६२ वर्षकी अवस्थामें भी इनमें Animal Spirit का अभाव नही है। अत कुछ नवीन, कुछ सुन्दर, कुछ सत्य तथा कुछ शिव देखने, समझने, व ग्रहण करनेकी हमारी कामनायें प्रतीति अवश्य चाहेंगी। परमात्मा आपको चिरायुप करें। जैन समाज कृतज्ञ होगा, सृजनको गति मिलेगी और साहित्य व समाज आपकी अमरतापर गर्व करेगा। शेप अचिन्त्य है, और शास्त्र कहता है "अचिन्त्या खलु ये भावा न तास्तर्केण योजयेत्। मुतराम्।

"ज्ञाने गतिर्मतिर्भावे बुद्धिर्लोकारंजने।
ससिद्धिस्तेन श्रीवृद्धिरायुर्विद्या यशो बलम्॥" इत्यलम्

श्रद्धेय श्री अगरचंदजी नाहटाक
बीकानेर जैन लेख संग्र

प्रो० श्रीचन्द्र जैन, एम० ए०, एल० एल० बी

श्री नाहटाका समस्त जीवन सरस्वतीकी आराधनाके लिए समर्पित है। कहा जाता है कि सरस्व और लक्ष्मीका सहज विरोध है, लेकिन नाहटाजीका व्यक्तित्व इस कथनका अवश्यमेव एक अपवाद है। आ पर जितनी सरस्वतीकी कृपा है उतनी ही लक्ष्मीकी अनुकम्पा है। व्यापार-निपुण होते हुए आप एक सश समालोचक, सपादक, लेखक तथा अन्वेपक है।

पाँच हजारसे भी अधिक आपके निवन्ध इस तथ्यको प्रमाणित करते हैं कि आप बहुज्ञ है और ऐ कोई साहित्यिक विषय नही है जिसके आप गम्भीर विचारक न हों। सम्पादकरूपमें आपने ऐसे कई ग्रन्थो सम्पादन किया है जिनके अध्ययनमें मनीषियोकी भी मनीषा कुठित हो जाती है। राजस्थानी साहित्य-संस्कृति तो आप अधिकारी विद्वान् हैं। राजस्थानका कोई भी ऐसा साहित्यिक पत्र नही है जिसमें आपके प्र विचारोत्पादक निवन्ध प्रकाशित न होते हो। विभिन्न अभिनन्दन ग्रन्थोके तो आप सम्पादक रहे है। क सस्थाओके आप संस्थापक है, अभिभाषक हैं एव सदस्य है। सुधी सम्पादकके रूपमें आपने राजस्थान भारत राजस्थानी, मरुभारती, शोध-पत्रिका, मरुभूमि, आदिकी जो सार्वभौमिक प्रतिष्ठा निर्मित की है वह आप अगाध-पाडित्य एव अथक श्रमका उदाहरण ही है।

जैन-अजैन समस्त पत्र-पत्रिकाओमें आपके जो लेख प्रकाशित होते रहते हैं वे इस सत्यको साक्ष बनाते है कि आपका अध्ययन कितना विस्तृत एव व्यापक है। आपकी विशेष रुचि जैनसाहित्य, इतिहास राजस्थानी संस्कृति एव हिन्दीके प्राचीन साहित्यके अनुशीलनमें अधिक हैं। परिणामस्वरूप आपके अवकाश क्षण भी निरन्तर चिन्तन-मननमें ही व्यतीत होते हैं। आपके साहचर्यका जिनको पुण्योदयसे अवसर मिला वे यही कहते है कि पूज्य नाहटाजी तो अजरामरवत् सरस्वतीकी आराधनामें ही लगे रहते हैं। आज वार्धक्यमें हैं, फिर भी एक युवकके समान उनमें उत्साह है, प्रेरणा है तथा कार्य करनेकी क्षमता है। और त और, आधुनिक युवक भी उन्हें सतत क्रियाशील देखकर चकित रह जाता है।

इस निवन्धमे मैं केवल उनके द्वारा सम्पादित बीकानेर जैनलेखसंग्रहके सम्बन्धमें कुछ लिखनेक साहस कर रहा हूँ। इस सग्रहका प्राक्कथन डॉ० वासुदेवशरण अग्रवालने लिखा है जो उनके गहन पाण्डित्यक अपूर्वरूप है।

यह तो स्पष्ट ही है कि लेखोका सग्रह कठिन साधनाकी अपेक्षा करता है। बहुभाषाविद्, तत्त्ववेत्त तथा धैर्यवान् महापडित ही ऐसे गूढ विषयकी ओर आकर्षित हो सकता है। सामान्य व्यक्तिको तो इ प्रकारकी रचनाओके प्रति न रुचि होती है और न अनुरक्ति उत्पन्न हो पाती है।

इस प्रकारके लेख बडे महत्त्वके होते हैं। इनमें युगीन संस्कृतिके साथ-साथ इतिहास, भूगोल, कर्म काण्ड, राजनीति, समाजविज्ञान आदि कई ऐसे विषय निहित रहते है, जिनका अनुशीलन प्रत्येक परिस्थितिमें आवश्यक माना गया है।

मूर्तिकला, स्थापत्यकला, चित्रकला, नृत्यकला, सगीतकला, लेखनकला आदिका प्रारंभिक स्वरू

क्या था और उसमें शनै.-शनैः किस प्रकार परिवर्तन आया, इसका क्रमिक इतिहास इन लेखोके अध्ययनसे भलीभाँति जाना जा सकता है।

मानवने किस प्रकार उन्नति की है तथा उसने अपने अवरोधोको किस प्रकार निर्मूल बनाया है यह एक ऐसा विषय है जिसका पूर्ण परिज्ञान इन प्राचीन लेखोके समीक्षात्मक अनुशीलनसे ही संभव है।

साधु-सन्तोने निरन्तर भ्रमण कर आत्मोद्धारके साथ किन रूपोमें जन-जागृतिको सबल बनाया है और जैनधर्मके सूक्ष्म तत्त्वोका प्रचार किस रूपमें किया है, यद्यपि यह विषय ऐतिहासिक अवश्य है लेकिन इन पुरातन लेखोमें भी इसपर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है।

धार्मिक श्रद्धासे वशीभूत होकर धनिकोने अपनी सपत्तिका उपयोग एक ओर राष्ट्रहितमें किया है तो दूसरी ओर सुरम्य देवालयोके निर्माणमें करके अपनी धर्मभावनाको मूर्त्तरूप दिया है।

इस लेख-सग्रहमें बीकानेर राज्यके २६१७, जेसलमेरके १७१ अप्रकाशित लेख हैं, जिनकी विस्तृत भूमिका भी प्रस्तुत की गयी है। इन लेखोके अध्ययनसे यह ज्ञात हो सकेगा कि जैनमदिरोका क्या इतिहास है, इस धरतीपर किस प्रकार जैन-साहित्यकी रचना हुई है, साधु-साध्वियोने कितनी गहन साधना करके स्व-पर रूपको निखारा है तथा सार्वजनिक कार्योंमें सलग्न रहकर नराधिपोने अपनी सेवा-वृत्तिको किस प्रकार जनताके हितार्थ अर्पित किया है। जैनोका एक ऐसा भी रूप है जो जन-जनके लिए आदर्श है। यह ठीक है कि ये लक्ष्मीपुत्र हैं, फिर भी इनकी दानशीलता अनुकरणीय है। देवमदिरोके साथ निर्मित उपासरे, धर्म-शालाएँ, ज्ञान-भण्डार, दान-भण्डार, सती स्मारक, उत्सव-गृह, भोजन शाला आदि इन अहिंसाप्रेमियोकी उदारता के अमर कीर्ति स्तभ हैं।

इन लेखोके सग्रहमें जो कठिनाइयाँ श्रद्धेय श्री नाहटाको आई हैं, उनका विवरण उनके ही मुखसे सुनिए

"इन लेखोके सग्रहमें अनेक कठिनाइयोका सामना करना पडा है, पर उसके फलस्वरूप हमें विविध प्राचीन लिपियोके अभ्यास व मूर्तिकला व जैन-इतिहास सम्बन्धी ज्ञानकी भी अभिवृद्धि हुई। अनेक शिला-लेख व मूर्ति-लेख ऐसे प्रकाशहीन अँधेरे में हैं, जिन्हें पढनेमें बहुत ही कठिनता हुई। मोमबत्तियाँ, टॉर्चलाइट, छाप लेनेके साधन जुटाने पडे, फिर भी कही-कही पूरी सफलता नही मिल सकी। इस प्रकार बहुत-सी मूर्तियोके लेख उन्हें पच्ची करते समय दब गए एव कई प्रतिमाओके लेख पृष्ठ भागमें उत्कीर्णित हैं, उनको लेनेमें बहुत ही श्रम उठाना पडा और बहुतसे लेख तो लिये भी न जा सके, क्योकि एक तो दीवार और मूर्तिके बीच में अन्तर नही था, दूसरे मूर्तियोकी पच्ची इतनी अधिक हो गई कि उनके लेखको, बिना मूर्तियो-को वहाँसे निकाले पढना सभव नही रहा। मूर्त्तियाँ हटाई नही जा सकी, अत उनको छोड देना पडा। कई शिलालेखोको बडी मेहनतमे साफ करना पडा, गुलाल आदि भरकर अस्पष्ट अक्षरोको पढनेका प्रयत्न किया गया। कभी-कभी एक लेखके लेनेमे घटो बीत गए। फिर भी सन्तोष न होनेसे कई बार उन्हे पढने-को, शुद्ध करनेको जाना पडा। इस प्रकार वर्षोके श्रमसे जो बन पडा, पाठकोके सन्मुख है। हम केवल ५ कक्षा तक पढे हुए हैं, न सस्कृत-प्राकृत भाषाका ज्ञान, व न पुरानी लिपियोका ज्ञान, इन सारी समस्याओ-को हमें अपने श्रम व अनुभवसे सुलझानेमें कितना श्रम उठाना पडा है, यह भुक्तभोगी ही जान सकता है। कार्य करनेकी सबल जिज्ञासा, सच्ची लगन और श्रमसे दुस्साध्य काम भी सुसाध्य बन जाते है, इसका थोडा परिचय देनेके लिए यहाँ कुछ लिखा गया है।" (बीकानेर जैन लेखसंग्रह, वक्तव्य, पृ० ७)

सत्य तो यह है कि "मनस्वी कार्यार्थी गणयति न दु ख न च सुखम्।"

श्री नाहटाजी जैसे कर्मठ निष्ठावान्, लगनशील एव कर्त्तव्यलीन व्यक्तिका ही यह साहस है कि इतना कठिन कार्य आपने सुगमतासे किया और एक आदर्श प्रस्तुत कर हिन्दी लेखकोको असुविधाओके बीच आगे बढनेके लिए प्रोत्साहित किया, विद्वान् ही विद्वान्के श्रमकी सस्तुति कर सकता है। इस सुभाषितके अनुसार डॉ० अग्रवालने अपने प्राक्कथनमें लिखा है कि "श्री अगरचद नाहटा व भँवरलाल नाहटा राजस्थानके अतिश्रेष्ठ कर्मठ साहित्यिक है । एक प्रतिष्ठित व्यापारी परिवारमें उनका जन्म हुआ। स्कूल-कालेजी शिक्षासे प्राय बचे रहे। किन्तु अपनी सहज प्रतिभाके बलपर उन्होने साहित्यके वास्तविक क्षेत्रमें प्रवेश किया और कुशाग्रबुद्धि एव श्रम दोनोकी भरपूर पूँजीसे उन्होने प्राचीन ग्रथोके उद्धार और इतिहासके अध्ययनमें अभूत-पूर्व सफलता प्राप्त की। पिछली सहस्राब्दी में जिस भव्य और बहुमुखी जैनधार्मिक सस्कृतिका राजस्थान और पश्चिमी भारतमें विकास हुआ, उसके अनेक सूत्र नाहटाजीके व्यक्तित्वमें मानो बीजरूपसे समाविष्ट हो गए। उन्हीके फलस्वरूप प्राचीन ग्रन्थ भण्डार सघ आचार्य मदिर, श्रावकोके गोत्र आदि अनेक विषयोके इतिहासमें नाहटाजीकी सहज रुचि है, और इस विविध सामग्रीके सकलन, अध्ययन और व्याख्यामें लगे हुए वे अपने समयका सदुपयोग कर रहे हैं।

जिस प्रकार नदी प्रवाहमें से बालुका धोकर एक-एक कणके रूपमें पौपीलिक सुवर्ण प्राप्त किया जाता था, उसी प्रकारका प्रयत्न 'बीकानेर जैन लेख सग्रह' नामक प्रस्तुत ग्रन्थमें नाहटाजीने किया है। समस्त राज-स्थानमें फैली हुई देव-प्रतिमाओके लगभग तीन सहस्र लेख एकत्र करके विद्वान् लेखकोने भारतीय इतिहासके स्वर्ण कणोका सुन्दर चयन किया है। यह देखकर आश्चर्य होता है कि मध्यकालीन परम्परामें विकसित भारतीय नगरोमें उस संस्कृतिका कितना अधिक उत्तराधिकार अभी तक सुरक्षित रह गया है। उस सामग्रीका उचित संग्रह और अध्ययन करनेवाले पारखी कार्य-कर्त्ताओकी आवश्यकता है। प्रस्तुत संग्रहके लेखोंसे जो ऐतिहासिक और सांस्कृतिक सामग्री प्राप्त होती है उसका अत्यन्त प्रामाणिक और विस्तृत विवेचन विद्वान् लेखकोने अपनी भूमिकामें किया है। श्री नाहटाजीने इस सुन्दर ग्रन्थमें ऐतिहासिक ज्ञानसवर्द्धनके साथ-साथ अत्यन्त सुरभित सास्कृतिक वातावरण प्रस्तुत किया है, जिसके आमोदसे सहृदय पाठकका मन कुछ कालके लिए प्रसन्नतासे भर जाता है। सचित्र विज्ञप्तिपत्रोका उल्लेख करते हुए १८९८के एक विशिष्ट विज्ञप्ति पत्रका वर्णन किया गया है, जो बीकानेरके जैन सघकी ओरसे अजीमगज बगालमें विराजित जैना-चार्यकी सेवामें भेजनेके लिए लिखा गया था। इसकी लबाई ९७ फुट है, जिसमें ५५ फुटमे बीकानेरके मुख्य बाजार और दर्शनीय स्थानोका वास्तविक और कलापूर्ण चित्रण है। लेखकोने इन सब स्थानोकी पहिचान दी है।

इस पुस्तकमें जिस धार्मिक और साहित्यिक सस्कृतिका उल्लेख हुआ है उसके निर्माणकर्त्ताओमें ओसवाल जातिका प्रमुख हाथ था। 'उन्होने ही अपने हृदयकी श्रद्धा और द्रव्यराशिसे इस सस्कृतिका समृद्ध रूप संपादित किया था। यह जाति राजस्थानकी बहुत ही धर्मपरायण और मितव्ययी जाति थी किन्तु सास्कृतिक और सार्वजनिक कार्योमें वह अपने धनका सदुपयोग मुक्तहस्त होकर करती थी।

ग्रन्थमें संग्रहीत लेखोको पढते हुए पाठकका ध्यान जैनसघकी ओर भी अवश्य जाता है। विशेषत खरतरगच्छके साधुओका अत्यन्त विस्तृत सगठन था। बीकानेरके राजाओंमे वे समानताका पद और सम्मान पाते थे। उनके साधु अत्यन्त विद्वान् और साहित्यमें निष्ठा रखनेवाले थे। इस कारण उस समय—यह उक्ति प्रसिद्ध हो गयी थी कि "आतम ध्यानी आगरै पडित बीकानेर।" प्रस्तुत संग्रहमें जो तीन सहस्रके लगभग लेख हैं उनमेंसे अधिकाश ११वीसे सोलहवी शतीके बीचके है। उस समय अपभ्रंश भाषाकी परम्परा-का साहित्य और जीवनपर अत्यधिक प्रभाव था। इसका प्रमाण इन लेखोंमें आये हुए व्यक्तिवाची नामोंमें

पाया जाता है। जैनाचार्योंके नाम प्राय सब संस्कृतमें हैं, किन्तु गृहस्थ स्त्री-पुरुषोंके नाम जिन्होंने जिनालय और मूर्तियोंको प्रतिष्ठापित कराया, अपभ्रंश भाषामें हैं। ऐसे नामोंकी सख्या इन लेखोंमें लगभग दस सहस्र होगी। यह अपभ्रंश भाषाके अध्ययनकी मूल्यवान् सामग्री है।

उदाहरणके रूपमें यहाँ कुछ जैनलेख प्रस्तुत है जो स्वय युगीन तथ्योंको प्रकट रहे है—

(१)

६०॥ स० १३३४ वर्षे वैशाख सुदी १० श्री वृहद् गच्छे श्री धर्कट वशे सा० देवचद्र भार्या वर्णासरी पुत्र सा० वानरेण भार्या लाडी पुत्र खेता तथा देदा पिथि मसीहु चागदेव प्रभृति कुटुंब सहितेन पूर्वज श्रेयसे श्री पार्श्वनाथ विंब कारिता प्रतिष्ठित च श्री जयदेवसूरि शिष्यैः श्री माणदेव···· (सूरिभि·) [१८५]

—वी० जै० ले० सं०, पृष्ठ २२

(२)

स० १५२५ वर्षे फागुण सुदी ७ शनौ नागर ज्ञातीय श्रे० रामा भा० राणी पुत्र नगाकेन भा० घनी पु० नाथा युतेन श्री अचल गच्छे श्री जयकेसरि सुरीणामुपदेशेन श्री श्रेयासनाथ विंब का० प्र० श्री सूरिभि (१०४५)

—वी० जै० ले० स०, पृष्ठ १२८

(३)

॥ स० १६६४ प्रमिते वैशाख सुदि ७ गुरु पुष्ये राजा श्री रायसिंह विजयराज्ये श्री विक्रमनगर वास्तव्य श्री ओसवाल ज्ञातीय गोलवच्छा गोत्रीय सा० रूपा भार्या रूपादे पुत्र मिन्ना भार्या माणिकदे पुत्ररत्न सा० वन्नाकेन भार्या वल्हादे पुत्र नथमल्ल कपूरचन्द्र प्रमुख परिवार सश्रीकेन श्री श्रेयास विंब कारित प्रतिष्ठित च। श्री वृहत्खरतर गच्छाधिराज श्री जिनमाणिक्यसूरि पट्टालकार (हार) श्री साहि प्रतिबोधक। युगप्रधान श्री जिनचद्रसूरिभि ॥ पूज्यमान चिर नदतु॥ श्रेय। (११५४)

—बी० जै० ले० स०, पृष्ठ १४४

(४)

अथ शुभाब्दे १९२४ शाके १७७९ चैतन्मिते ज्येष्ठ मासे शुक्ल पक्षे पचमी तिथौ गुरुवासरे। श्री मत्वृहत्खरतर गच्छे। ज यु। भ। प्र। श्री जिनसौभाग्यसूरीश्वराणामाज्ञया श्री। कीर्त्तिरत्नसूरिशाखाया उ। श्री अमृतसुन्दरगणिस्तच्छिष्य वा। श्री जयकीर्तिगणिस्तच्छिष्य प० प्र० प्रतापसौभाग्य मुनि स्वदतेवासिना प० प्र० सुमतिविशाल मुनिनाऽयं शुभोपाश्रयः कारित प० समुद्रसोमादि हेतवे। बीकानेर पुराधीशः राजेश्वर शिरोमणि श्री सरदार सिंहाख्यो नृपो विजयते तराम्? यावन्मेरुर्मही मध्ये चाम्बरे शशिभास्करौ। तावत्साव्त्रालयश्चेपरिचर तिष्ठतु शर्म्मद।२। कारीगर सूत्रधार। भीखाराम। श्री (२५४७)

—बी० जै० ले० स०, पृष्ठ ३५८

(५)

महोपाध्याय रामलालजीके उपाश्रयका लेख—

(२५५३)

॥ ॐ। ह्रीं। श्री। नम ॥

ब्रह्मा विष्णु शिव शक्ति आदि स्वरूप श्री ऋषभ वीतरागायनमः दादासाहिब श्री जिनकुशलसूरि सतानीय क्षेमधाड शाखाया श्री साधु महाराज प०। प्र। श्री युक्तिवारध रामलाल ऋद्धिसार मुनिना ओसवाल माहेश्वरी अग्रवाल ब्राह्मणादि समस्त बीकानेर वास्तव्य प्रजाके कुष्ट भगदरादि अनेक कष्ट मिटाय कर वे विद्याशाला तथा ज्ञानशाला स्थापना करी है, इसमें सर्व मतोंके पुस्तकका भण्डार स्थापन करा है, इसमें ऐसा नियम किया गया है कि पुस्तक तथा विद्याशाला कोई लेवेगा या वेचेगा सो सर्वशक्तिमान परमेश्वरसे गुनह-

गार होगा चेला सपूतोंकी मालकी एक गद्दीधर को रहेगी अगर कपूताई करेगा दीक्षा लजावेगा तदारक पंच तथा कमेटी करेगी स० । १९।५४ । वैं० शु० । ५ ॥ —वी० जै० ले० स०, पृ० ३६०

इन जैनलेखोसे कतिपय ये तथ्य मुखरित होते है

१ तत्सम शब्दोके साथ देशज शब्दोका प्रयोग ।

२ तत्कालीन शासकोका प्रशस्ति-गान ।

३ युगीन साधु-सन्तोके प्रति आभार-प्रदर्शन ।

४. सम्बन्धित धार्मिक महापुरुषोका उल्लेख ।

५ देवालयोमें मूर्ति-स्थापना करनेवालोके नाम आदिके साथ परिवारकी संक्षिप्त चर्चा ।

६. गोत्र-वशादिका उल्लेख ।

७. धार्मिक कृत्योकी प्रेरक प्रशंसा ।

८ धर्म कार्योको करानेवाले पडितो एव आचार्योकी नामावली ।

९ युग-परिवर्तनके साथ भाषा-शैली आदिमें परिवर्तन ।

१० तिथि सवत् आदिका उल्लेख ।

११ परमपूज्य उस तीर्थंकरका नामोल्लेख जिसका बिम्ब स्थापित किया गया है ।

१२. देवालय-भवन प्रणेता एव मूर्तिकार आदिके पूर्ण नाम पता आदिकी चर्चा ।

१३ विविध गच्छोकी चर्चा ।

१४. उपाश्रय, धर्मशाला, मदिर, ज्ञानशाला, औषधालय आदिसे सम्बद्ध लेखोमें सार्वजनिक उपयोगार्थ शर्तोका उल्लेख एव प्रबन्धकोकी नियुक्ति आदिकी नियमावली ।

१५. विश्वकल्याणकी भावनाका सर्वत्र उल्लेख आदि आदि ।

इस प्रकार श्री अगरचदजी नाहटाने इन लेखोका सग्रह करके एक ऐसे अभावकी पूर्ति की है, जो इतिहासके उन पृष्ठोको प्रामाणिक सिद्ध करेगा जिनके सम्बन्धमें समय-समयपर कई शकाएँ प्रदर्शित की गयी हैं तथा आज भी उठायी जाती हैं ।



श्री नाहटाजी द्वारा लिखित एवं सम्पादित कतिपय ग्रन्थ

शिखरचन्द्र कोचर
अवकाश-प्राप्त जिला एव सत्र न्यायाधीश, बीकानेर

●

श्री नाहटाजी द्वारा लिखित एव सम्पादित ग्रन्थोकी सख्या साठसे ऊपर है। उनमेसे कतिपय ग्रथोका सक्षिप्त परिचय निम्न-लिखित है—

१. युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरि

यह ग्रन्थ श्री नाहटाजीने अपने भतीजे श्री भँवरलालजीके सान्निध्यमें लिखा है, और विक्रमी सवत् १९९२मे प्रकाशित हुआ है। मध्य-कालीन भारतीय इतिहास-वेत्ताओको विदित है कि सम्राट् अकबरपर जैन-धर्मका प्रभाव पडा था। जिन जैनाचार्योंने उसे विशेषरूपसे प्रभावित किया था, उनके नाम है—श्री हीर-विजयसूरिजी एव श्री जिनचन्द्रसूरिजी। श्री हीरविजयसूरिजीका जीवन-चरित्र तो मुनि विद्याविजयजी द्वारा कई वर्ष पूर्व काफी खोज-शोधपूर्वक प्रकाशित किया जा चुका था, किन्तु श्री जिनचन्द्रसूरिजीका प्रामाणिक जीवन-चरित्र पर्याप्त ऐतिहासिक सामग्री उपलब्ध न होनेके कारण प्रकाशित नही किया जा सका था। इस अभावकी पूर्ति इस ग्रन्थके विद्वान् लेखकोने कई वर्षोके परिश्रम एव अनुसन्धानसे की है। इस ग्रन्थमे कई चित्रो, फरमान-पत्रो, उत्कीर्ण लेखो तथा अन्यान्य उपलब्ध प्राचीन सामग्रीका समावेश किया गया है, जिससे इसकी उपयोगिता एव प्रामाणिकता बहुत बढ गयी है। इस ग्रन्थके अनुवाद गुजराती एव सस्कृत भाषाओमें भी प्रकाशित हो चुके हैं। इस पुस्तककी प्रस्तावना प्रसिद्ध गुजराती लेखक स्व० श्री मोहनलाल दलीचन्द देसाईने लिखी है।

२ ऐतिहासिक जैनकाव्यसग्रह

इस ग्रन्थका सम्पादन श्री नाहटाजीने अपने भतीजे श्री भँवरलालजीके सान्निध्यमें किया है और विक्रमी सवत् १९९४ में प्रकाशित हुआ है। इस ग्रन्थकी प्रस्तावना प्रसिद्ध विद्वान् प्रोफेसर हीरालाल जैनने लिखी है। इस ग्रन्थमें बारहवी शताब्दीसे लेकर बीसवी शताब्दी तक, लगभग आठ सौ वर्षोके, ऐतिहासिक जैन-काव्य सग्रहीत है, जिनसे जैन-इतिहास तथा भाषाओके क्रमिक विकासपर पर्याप्त प्रकाश पडता है। ये काव्य, अपभ्रश, प्राकृत, सस्कृत, राजस्थानी, गुजराती आदि भाषाओमें है, जिनके अध्ययनसे इन भाषाओके विज्ञान तथा व्याकरण आदिको हृदयंगम करनेमे प्रचुर सहायता प्राप्त होती है। कई काव्य रस, अलकार, पद-विन्यास, भाषा-सौष्ठव, अर्थ-गाभीर्य आदि गुणोकी दृष्टिसे भी अनुपम है जिनके मनन एव अनुशीलनसे अनिर्वचनीय आनन्दकी प्राप्ति होती है। ग्रन्थके प्रारम्भमें "काव्योका ऐतिहासिक सार" नामसे विस्तृत भूमिका तथा "सक्षिप्त कवि-परिचय" भी दिये गये हैं, जिनसे इस ग्रन्थकी उपयोगितामे अभिवृद्धि हो गयी है।

३. दादा श्री जिनकुशलसूरि

यह पुस्तक श्री नाहटाजीने अपने भतीजे श्री भँवरलालजीके सान्निध्यमे लिखी है और इसका प्रथम सस्करण विक्रमी सवत् १९९६मे प्रकाशित हुआ है। खरतर-गच्छमें "दादाजी"के नामसे सुप्रसिद्ध चार महान् आचार्य हुए हैं—१ युगप्रधान श्री जिनदत्तसूरिजी, २. मणिधारी श्री जिनचन्द्रसूरिजी, ३. श्री जिनकुशल-

सूरिजी और ४ युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरिजी। इन चारो महान् आचार्योके अनेक स्मारक देशके कोने-कोनेमें विद्यमान है और उनमें धर्म-प्राण जनताकी अटूट श्रद्धा है। विद्वान् लेखकोने यह ग्रन्थ काफी परिश्रमपूर्वक लिखा है और इसकी प्रस्तावना प्रसिद्ध जैन-विद्वान् मुनि जिनविजयजीने लिखी है।

४ मणिधारी श्री जिनचन्द्रसूरि

यह पुस्तक भी श्री नाहटाजीने अपने भतीजे श्री भँवरलालजीके सान्निध्यमें लिखी है और इसका प्रथम संस्करण विक्रमी सवत् १९९७में प्रकाशित हुआ है। इस पुस्तकमे उपर्युक्त चार "दादाजी"मेंसे द्वितीय "दादाजी"का जीवनचरित्र, विद्वान् लेखको द्वारा उपलब्ध ऐतिहासिक सामग्रीके आधारपर वर्णित किया गया है। इसकी प्रस्तावना सुप्रसिद्ध विद्वान् डॉ० दशरथ शर्माने लिखी है।

५ युगप्रधान श्री जिनदत्तसूरि

यह पुस्तक भी श्री नाहटाजीने अपने भतीजे श्री भँवरलालजीके सान्निध्यमें लिखी है और इसका प्रथम सस्करण विक्रमी सवत् २००३मे प्रकाशित हुआ है। विद्वान् लेखको द्वारा उपर्युक्त चार "दादाजी"मेसे प्रथम "दादाजी"का चरित्र-चित्रण इस ग्रन्थमे विशेष खोज-शोध एव परिश्रम-पूर्वक किया गया है। इस गथकी प्रस्तावना सुप्रसिद्ध जैन लेखक मुनि कान्तिसागरजीने लिखी है।

६ ज्ञान-सार-ग्रन्थावली

इस ग्रन्थका सम्पादन श्री नाहटाजीने अपने भतीजे श्री भवरलालजीके सान्निध्यमे किया है, और इसकी प्रथमावृत्ति वीर-सवत् २४८५ में प्रकाशित हुई है। उन्नीसवी शताब्दीमें योगिराज ज्ञानसार नामक एक महान् सत हो गये है, जिनका साधारण जनतासे लेकर राजा-महाराजाओ तकपर बडा प्रभाव था और जिन्होने उस प्रभावका उपयोग अपनी व्यक्तिगत स्वार्थ-सिद्धिके लिए नही, किन्तु सर्व-साधारणके लाभके लिए किया था। विद्वान् सम्पादकोने इस ग्रन्थके द्वारा इन महान् संतकी जीवनी कई वर्षके परिश्रम और छान-बीनके पश्चात् प्रस्तुत की है और उनकी विशिष्ट आध्यात्मिक रचनाओको प्रकाशित किया है। इस ग्रन्थकी प्रस्तावना प्रसिद्ध विद्वान् स्व० राहुल साकृत्यायनने लिखी है। इस ग्रन्थके प्रारम्भमें योगिराज श्रीमद्ज्ञानसारजीके व्यक्तित्व एव कृतित्वका ११२ पृष्ठोमें विस्तृत परिचय, विद्वान् सम्पादको द्वारा दिया गया है।

७ बीकानेर जैन लेख सग्रह

श्री नाहटाजीने कई वर्षोंके अनवरत परिश्रमसे बीकानेर एव जैसलमेरके तीन सहस्रसे अधिक अप्रकाशित लेखोंका सग्रह किया और उन्हे अपने भतीजे भँवरलालजीके सान्निध्यमें वीराब्द २४८२ मे विस्तृत भूमिकादि सहित इस वृहदाकार ग्रथके रूपमें प्रकाशित किया। इस ग्रथमें नवमी-दशमी शताब्दीसे लेकर वर्तमान काल तकके लेखोका सग्रह किया गया है जिससे तत्कालीन इतिहास पर अपूर्व प्रकाश पडता है। इस ग्रथके रूपमें इस ग्रथके विद्वान् सम्पादकोने भारतीके भण्डारमें एक अनुपम रत्न प्रस्तुत किया है और एतद्विषयक अनुसधान-कर्ताओंका सुन्दर मार्ग-दर्शन किया है। इस ग्रथका प्राक्कथन प्रसिद्ध विद्वान् डॉ० वासुदेवशरण अग्रवालने लिखा है। इन लेखोसे बीकानेरके प्रामाणिक जैन इतिहासके अतिरिक्त तत्कालीन जैन स्थापत्य-कला, मूर्ति-कला तथा चित्र-कलापर भी पर्याप्त प्रकाश पडता है। इन लेखोके द्वारा हमें अनेक स्थानो, राजाओ, गच्छो, आचार्यों, मुनियो, श्रावक-श्राविकाओ, जातियो आदिका परिचय मिलता है और तत्कालीन रीति-रिवाजो, उपासना-पद्धतियो तथा धार्मिक, सामाजिक एवं राजकीय परिस्थितियोका विशद ज्ञान प्राप्त होता है। उदाहरणार्थ, भूमिकाके पृष्ठ ८७ से ९३ तकपर सचित्र विज्ञप्ति-पत्रोंका वर्णन किया गया है, जिनके अवलोकनसे तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक एव सास्कृतिक परिस्थितियोका भलीभाँति

परिचय प्राप्त होता है और उनमें दिये हुए चित्र तो हमारे समक्ष तत्कालीन जीवन-शैलीका चल-चित्र सा प्रस्तुत कर देते हैं। इस ग्रथकी विस्तृत भूमिकामें बीकानेरके जैन-इतिहास, बीकानेरके राज्य-स्थापन एवं जैनोका हाथ, बीकानेर नरेश तथा जैनाचार्य, बीकानेरमें ओसवाल जातिके गोत्र, बीकानेरमें रचित जैन-साहित्य, बीकानेरके जैन-मदिरोका इतिहास, जैन-उपाश्रयोका इतिहास, बीकानेरके जैन ज्ञान-भडार बीकानेरके जैन-श्रावकोका धर्म-प्रेम आदि विषयोका विशद विवेचन किया गया है।

८ समय-सुन्दर-कृति-कुसुमाजलि

सत्रहवी शताब्दीमें उपाध्याय समयसुन्दर नामक एक प्रकाड जैन विद्वान् और महान् कवि हो गये हैं, जिन्होने विपुल साहित्यका निर्माण किया और अनेक ग्रथोपर विद्वत्तापूर्ण टीकाएँ लिखी। जैन-शास्त्रोमें पारगत विद्वान् होनेके अतिरिक्त उनका व्याकरण, न्याय, अनेकार्थ कोष, छद, साहित्य, सगीत आदिपर भी पूर्ण अधिकार था, जिसके कारण उनकी रचनाओका विद्वत्समाज तथा जन-साधारणमें बडा भारी आदर था, और आज भी है। उनके प्रखर पाडित्यका परिचय इसी बातसे चल जाता है कि उन्होने सम्राट् अकबरकी विद्वत्सभामें दिये आठ अक्षरो "राजानो ददते सौख्य" पर आठ लाख अर्थोंकी रचना की। यह ग्रन्थ 'अर्थ-रत्नावली"के नामसे प्रसिद्ध है। इन महान् कविकी ५६३ लघु रचनाओका सग्रह श्री नाहटाजीने अपने भतीजे श्री भँवरलालजीके सान्निध्यमें विक्रम सवत् २०१३में उपर्युक्त नामसे प्रकाशित किया है। इस ग्रन्थके प्रारभमें विद्वान् सपादकों तथा महोपाध्याय विनयसागरजी द्वारा इन महान् कविके व्यक्तित्व एव कृतित्वका विस्तृत विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थकी भूमिका प्रसिद्ध विद्वान् डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदीने लिखी है।

९ रत्नपरीक्षा

इस ग्रंथका सपादन भी श्री नाहटाजीने अपने भतीजे श्री भँवरलालजीके सान्निध्यमें किया है। विद्वान् सपादकोंने ठक्करफेरूकी लगभग छ सौ वर्ष प्राचीन इस रचनाको विशद भूमिकाके साथ प्रकाशित किया है। ग्रन्थके प्रारभमें उसका परिचय ८० पृष्ठोंमे डॉ० मोतीचन्द्र द्वारा दिया गया है, जिससे इस विषयपर पर्याप्त प्रकाश पडता है।

१० सीताराम चौपाई

महोपाध्याय कविवर समयसुन्दरकृत इस ग्रन्थका सपादन नाहटाजीने अपने भतीजे श्री भँवरलालजीके सान्निध्यमें किया है और यह ग्रन्थ सवत् २०१९ में प्रकाशित हुआ है। इस ग्रन्थके प्रारंभमें सपादकीय भूमिका तथा प्रो० फूलसिंह "हिमाशु" द्वारा "राजस्थानीका एक रामचरितकाव्य"के शीर्षकसे इस ग्रन्थ तथा उसके लेखकका विस्तृत परिचय, सीतारामचरित्रसार तथा डॉ० कन्हैयालाल सहल द्वारा लिखित "सीताराम चौपाई"में प्रयुक्त राजस्थानी कहावतें नामक लेख दे दिये है, जिनसे इस ग्रन्थकी उपयोगितामें चार चाँद लग गये हैं।

११ श्रीमद् देवचन्द्र स्तवनावली

इस पुस्तकका सपादन श्री नाहटाजीने अपने भतीजे श्री भँवरलालजीके सान्निध्यमें किया है, और यह पुस्तक सवत् २०१७में प्रकाशित हुई है। अठारहवी शताब्दिमें श्रीमद् देवचन्द्रजी नामक एक प्रसिद्ध विद्वान् सन्त हुए हैं, जिन्होंने संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, गुजराती आदि भाषाओंमे अनेक ग्रन्थो, सज्झायो, स्तवनो आदिकी रचना की है, जिनका प्रचलन वर्तमान कालमें भी अत्यधिक है। पुस्तकके प्रारभमें श्री नाहटाजीने श्रीमद् देवचन्द्रजीके व्यक्तित्व तथा कृतित्वके सबधमें पर्याप्त प्रकाश डाला है।

१२ धर्मवर्द्धनग्रथावली

इस ग्रन्थका संपादन श्री नाहटाजीने किया है और यह ग्रन्थ संवत् २०१७में प्रकाशित हुआ है।

इम ग्रंथके प्रारंभमें श्री नाहटाजीने महोपाध्याय धर्मवर्द्धनके व्यक्तित्व एवं कृतित्वके सम्बन्धमें विस्तृत जानकारी दी है। ये अठारहवी शताब्दीके एक महान् विद्वान् सत थे और उन्होने संस्कृत तथा राजस्थानी भाषाओमें काव्य रचना की है। इनकी पाँच वडी रचनाओको छोडकर अवशिष्ट समस्त उपलब्ध रचनाओका समावेश इम ग्रन्थमें किया गया है, जो श्री नाहटाजीके अनेक वर्षोकी खोज-शोध तथा परिश्रमका फल है। इस ग्रन्थकी भूमिका राजस्थानीके सुप्रसिद्ध विद्वान् डॉ० मनोहर शर्माने लिखी है।

१३ जिनराजसूरि-कृति-कुसुमाजलि

सत्रहवी शताब्दिके उत्तरार्द्धमें खरतर-गच्छमें श्री जिनराजसूरि नामक प्रसिद्ध आचार्य हुए है, जिन्होने सस्कृत तथा राजस्थानी भाषाओमे अनेक ग्रन्थोकी रचना की है। उनमेंसे कतिपय उपलब्ध राजस्थानी काव्यो-का प्रकाशन श्री नाहटाजीने इस ग्रन्थके द्वारा किया है। यह ग्रन्थ विक्रम सवत् २०१० में प्रकाशित हुआ है। इस ग्रन्थके प्रारम्भमे श्री नाहटाजीने श्री जिनराजसूरिके व्यक्तित्व एव कृतित्वपर अच्छा प्रकाश डाला है। इस ग्रन्थके साहित्यिक अध्ययनके सम्बन्धमें प्रो० नरेन्द्र भानावतका एक लेख ग्रन्थके प्रारम्भमें प्रकाशित हुआ है।

१४ बीकानेरके दर्शनीय जैनमन्दिर

श्री नाहटाजीने बीकानेरके दर्शनीय जैनमन्दिरोके सम्बन्धमें सामान्य जानकारीके लिए यह पुस्तिका लिखी है, जो विक्रम सवत् २०१२ में प्रकाशित हुई है। यह पुस्तिका एतद्विषयक ज्ञानके लिए वडी उपयोगी सिद्ध हुई है।

१५ मणिधारी श्री जिनचन्द्रसूरि अष्टम शताब्दी स्मृति-ग्रन्थ

खरतर-गच्छमें "दादाजी"के नामसे सुप्रसिद्ध चार आचार्योमेंसे द्वितीय "दादाजी"का अष्टम शताब्दी समारोह गत वर्ष दिल्लीमें वडे पैमानेपर मनाया गया था। उस सुअवसरपर श्री नाहटाजी तथा उनके भतीजे श्री भवरलालजी द्वारा सम्पादित इस ग्रन्थका प्रकाशन समारोह-समिति द्वारा किया गया था। इस ग्रन्थके प्रथम खण्डमें विभिन्न विषयोपर ४३ महत्वपूर्ण निवन्ध प्रकाशित किये गये है, जिनमेंसे २० निवन्ध इस ग्रन्थके विद्वान् सम्पादको द्वारा लिखित है। इस ग्रन्थके द्वितीय खंडमें खरतर-गच्छ साहित्य-सूची दी गयी है, जिसे विद्वान् सम्पादकोने ४० वर्षोकी खोज-शोध और परिश्रमके उपरांत तैयार की है और जो खरतर-गच्छके सम्बन्धमे अनुसन्धान करनेवाले व्यक्तियोके लिए बहुत ही उपयोगी है। इस ग्रन्थमें अनेक प्राचीन एवं अर्वाचीन चित्र भी दिये गये है, जिनमे उसकी शोभामें अभिवृद्धि हुई है।

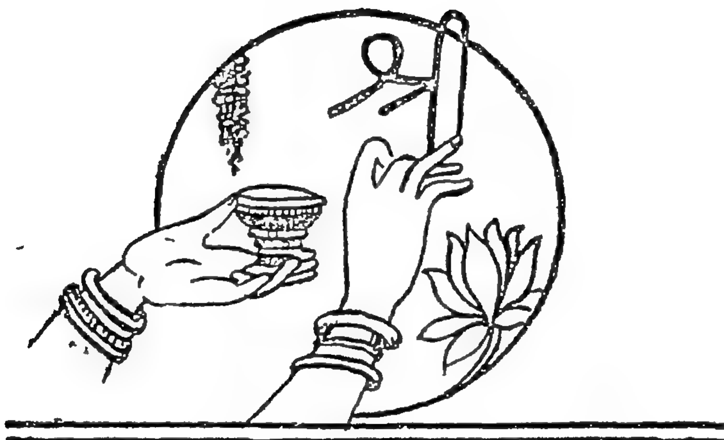


उपराष्ट्रपति जत्ती द्वारा अगरचन्द जी नाहटा पुरस्कृत (सन् १९७४ दिल्ली)।



द्वितीय खण्ड





श्रद्धा-सुमन





श्रद्धा-के-ये प्रसून

उपाध्याय प्रकाशविजय

मा सरस्वती के अथक पुजारी
अर्हनिश लेखनी के उपासक
कर्तव्य निष्ठ
धर्मोद्धारक
लाख लाख वन्दन तुझको
जो दीप ज्योति जागृत तुमसे ।
दीप से जलें सहस्र दीप
प्रकाशमान हो विश्व आगन
मुखरित हो नन्दन वन, कानन,
प्रज्वलित प्रकाश में
तिमिर भागे
मानव जागे
उज्ज्वल हो वसुधा का मस्तक
मा सरस्वती के अथक पुजारी ।
× × ×

अवरुद्ध न हो पाई तेरी
वह अथक आराधना
ये शुभ्र पत्र कागज के पृष्ठ
किंचित् किंचित् शब्दो के गोरखधधो से
लीपित हो लक्षित हो
गुंफित हो
बन गए
चित्रित हो
इन्द्र धनुष के सप्तरगो से रजित,
महाग्रन्थ !
महाप्राण !
काव्य-शोधित-चित्र
साहित्य आभारी है
समाज आभारी है
धन्य-धन्य यह महाप्रयास-तेरा
ए-सरस्वती के अथक उपासक !

●

घणमोला श्री नाहटाजी नै घणैमान

कन्हैयालाल सेठिया

कलम री नोक सू उठा'र
वगत रो पडदो
प्रगटायी ग्यान-दिवला री रतन-जोत
भूल्योडी वाता'र ख्याता नै
सरम रो संजीवण दे'र करी
पाछी हरी—
जक्याँ नै निगळ लीन्ही ही
सरव-भक्षी मौत,
इसी सुण्योडी है'क लिछमी'र सुरसती
रया करै है अेक-दूसरी सूं अपूठी

पण थे तो थारी जीवण रीकळा सू
ईं कैवत नै कर दीन्ही साव ही झूठी,
कणाँ ढळै रात कणाँ ऊगै दिन
था रो तो पळ-छिण
वीतै है साधना में
सवद री आराधना में
भेजू हूँ मैं म्हारै हिरदै री सरधा
चढाऊं हूँ चरणा में भावा रा फूल
थाँ नै जळम दे'र धिन हुई
ईं धरती री सोनळ धूळ ।

●

अभिनन्दनम्

डॉ० मनोहर शर्मा, एम० ए०, पी-एच० डी०

श्रेष्ठि-वंश-समुद्भूत , सरस्वत्या उपासक । राजस्थान-धरा-रत्न, विद्या-विनय-भूषित ।।१।।
सतत साधना-शील , पुण्याचार-परायण । मुनिरूपो गृही चैव, राग-द्वेष-विवर्जित ।।२।।
छात्र-वर्ग-हिते लीन , सुधी-वृंद-समादृत । ज्ञान-विज्ञान-योर्धाता, ग्रंथागार-विधायक ।।३।।
साहित्य-शोधको धीर , लुप्त-ग्रथ-प्रकाशक । सुकृतिस् तत्त्व-मर्मज्ञ , मातृभाषा-सुसेवक. ।।४।।
कर्मण्यो धर्म-चेताश्च, सदा सर्व-हिते रतः । दिव्यतेजाश् चिर जीव्याद्, अग्रचंद्रो महामति ।।५।।

●

अभिनन्दन

श्री उदयराज ऊजल

अगरचद सुकृत 'उदय', सम्पति गृह सरसात । रहै प्रेम सुखशाति जय, सदा धर्म के साथ ।।१।।
अगरचद सेवा 'उदय', उज्ज्वल राजस्थान । डूवत साहित्य देशको, करत उद्धार महान ।।२।।
भासा राजस्थानकी, राजसथानी नाम । को कुबुधी मेहण करै, रुख पाले श्री राम ।।३।।
मातर भासा मूल, जीवारी रजथानरी । तूटै- पत्रा तूल, धनपता दिस ही धरी ।।४।।
आपर जाय अनेक, धनवंता रजपट धरा । अगरचन्द तू अेक, तारकभासा मातरी ।।५।।
वागड सम व्रह लाह, धनवता आया धरा । इवे गता अहलाह, साहितरी सेवा विना ।।६।।
वीकाणी विदवान, अेकठ कीवा ईसवर । मातरभासा मान, इसा सपूता आसरे ।।७।।
आवे लहर अनेक, दाहण भासादेसरी । हरे सुमेर नहेक, नरा अगरचद नाहटी ।।८।।

●

अभिनन्दन

श्री प्यारेलाल श्रीमाल 'सरस'

श्री शारदा दोनो मिलकर करती जिसका अभिनन्दन ।
अमृत-सागर ज्ञान-सुधाकर . अगरचन्दजी को वन्दन ।।
गरिमा तुम साहित्य क्षेत्र की जैन-जगत के गौरव तुम ।
रत्न देश के विद्या-वारिधि, मानवता की सौरभ तुम ।।
चंद्र-किरण सा मृदु शीतल है मनमोहक व्यक्तित्व तुम्हारा ।
दया दान के परम उपासक वीर-वचन अस्तित्व तुम्हारा ।।
जीवन को है सफल वनाया जन्मभूमि को धन्य किया ।
नाम अमर कर दिया वश का मात पिता को धन्य किया ।।
हर्ष हमें शुभ अवसर पाकर करते आज 'सरस' अभिनदन ।
टाल सभी अवगुण को तुमने वना लिया निज जीवन चदन ।।

●

श्रद्धाञ्जलि

श्री व्रजनन्दन गुप्त 'व्रजेश'

अम्ब ! भारती समोद,
सहज सुभाय भरी-
चारु चन्द्र मुख ही सौं,
चन्द्र जस गा रही ।
ज्ञानकी अखण्ड ज्योति,
जग मग चहूँ ओर-
ललित निवन्धन में-
दिव्य छवि पा रही ।

कहत 'व्रजेश' वीका-
नेर की कनी हू धन्य,
देश औ विदेशन में-
कीरति कमा रही ।
हिन्दी राष्ट्र-भारती के
मजु मौन मन्दिर में,
अगर सुगन्ध नित्य-
नई-नई छा रही ।।



अगरचन्द नाहटाजी का शत शत अभिनन्दन

श्री 'काका'

जिनका अभिनन्दन करने को उत्सुक अभिनदन है । सरस्वती के पुत्र नाहटा जी का अभिनदन है ।।

(१)

वचपन से ही सरस्वती की सतत साधना करके । लिखे पचासो ग्रंथ आपने मनमें जन-हित धरके ।।
शोध पूर्ण कई लेख लिखे जग में जिनका वदन है । सरस्वती के पुत्र नाहटा जी का अभिनदन है ।।

(२)

श्री सिद्धान्ताचार्य और इतिहासरत्न जैसे पद । कई मिले पर नाम मात्रको आया नही जिन्हें मद ।।
अस्सी सहस पुराणो, ग्रथो का कीना मथन है । सरस्वती के पुत्र नाहटा जी का अभिनदन है ।।

(३)

प्राचीन इतिहास, आपको, सरस्वती का वर है । जैन अजैन सभी धर्मों की रहती जिन्हे खवर है ।।
भारत मा हो गई धन्य पाकर ऐसा नन्दन है । सरस्वती के पुत्र नाहटा जी का अभिनन्दन है ।।

(४)

लक्ष्मी, सरस्वती दोनो की कृपा जिनपर भारी । फिर भी सादा वेष और मन है जिनका अविकारी ।।
सरस्वती सेवा को 'काका' जिनका तन-मन-धन है । अगरचन्द नाहटा जी का शत शत अभिनन्दन है ।।



साहित्य-गगन के दीप्तिमान नक्षत्र, तुम्हें शत शत प्रणाम

श्री अनूपचन्द, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न

(१)

अभिनन्दनीय आदर्श पुरुष !
उद्भट विद्वत्ता-महा धाम ।
अमृत बरसाता रहे सदा
शुभ अगरचद यह अमर नाम ॥

(२)

सस्कृत हिन्दी औ प्राकृत का
अध्ययन तुम्हारा है विशाल ।
गुजराती राजस्थानी का
तुमही से उन्नत आज भाल ॥

(३)

साहित्य-शोध के कामो मे
तन मन धन अर्पण किया आज ।
नि.स्वार्थ भावना से प्रेरित
साहित्य मनीषी ! योगिराज ॥

(४)

तुम सफल समालोचक अद्भुत ।
निर्भीक प्रवक्ता पत्रकार ।
आगम ग्रथों के अभ्यासी
प्रतिभाशाली साहित्यकार ॥

(५)

कोई भी ऐसा पत्र नही
जिसमें न तुम्हारा छपा लेख ।
आश्चर्य चकित हैं महारथी
साहित्यिक गति विधि देखदेख ॥

(६)

साहित्य प्रणेता कोई भी
कैसा भी आवे किसी काल ।
सब कुछ सामग्री पाकर के
वह हो जाता तुमसे निहाल ॥

(७)

तुम प्रबल पारखी पुरातत्व !
इतिहास निपुण औ कर्मनिष्ठ ।
साहित्य शिरोमणि ! गुण-ग्राहक !
नित सत्यपरायण धर्म निष्ठ ॥

(८)

तुम परम सादगी के पुतले
भावुक, जिज्ञासु, अति उदार ।
हित-मित प्रिय भाषी विद्वत् प्रिय !
श्रद्धेय ! प्रचारक सद्विचार ॥

(९)

अज्ञात पुरानी रचनाएं
लाकर प्रकाश में किया काम ।
साहित्य जगत मे उस ही से
हो गया तुम्हारा अमर नाम ॥

(१०)

साहित्य क्षेत्र में है इतना
सम्मान तुम्हारा कर्म वीर
जिस ओर लेखिनी चली गयी
बन गई लोह की वह लकीर ॥

(११)

उद्घाटित नूतन तथ्य करो,
शतश: वर्षों तक रह ललाम ।
साहित्य-गगन के दीप्तिमान
नक्षत्र तुम्हें शत शत प्रणाम ॥



श्रद्धाञ्जलि

सूरजचन्द डाँगी

अगरचद सुरभिन सदा, साक्षी सूरजचद। आत्मा का निज भाव है, शुद्ध सच्चिदानद ।।
शुद्ध सच्चिदानन्द वीर्य ध्रुव शाति है। दर्शन ज्ञान सौख्य सदा विश्राति है ।।
जीवन सुन्दर मधुर मिटी विभ्राति है। अन्तर्दृष्टि सहज हित सम्यक क्राति है ।।



सरस्वतीके वरद पुत्र

श्री राधेश्याम शर्मा 'श्याम'

हे सरस्वती के वरद पुत्र, शत वार तुम्हारा अभिनन्दन !
इस घरती पर तुम 'चन्द्र' रूप,
शीतल किरणो को विखराकर।
दे रहे मनुज को ज्ञान अमित
साहित्य-सस्कृति को निखरा कर।
शोधक, साहित्यिक सजग रूप,
तुम एकनिष्ठ सेवारत हो।
हो धर्म ध्वजा के प्रवल प्राण,
कृतियो के पुनरुद्धारक हो।
क्षत-विक्षत ग्रथो को चुनकर,
तुमने उनको नव प्राण दिये।
साहित्य-सृजन के नायक वन,
भूले-भटको को त्राण दिये।
तुम हो निशिदिन साधनालीन,
संस्कृति को सव कुछ दान किया।
लिखकर तुम ने सद्ग्रथ अमित,
जन-जीवन का कल्याण किया।
साघना-पथ के अडिग पथिक,
तुम युग-युग तक अभियान करो।
निज ज्ञान-रश्मि को ज्योतित कर,
जन-मंगल का संधान करो।
साहित्य जगत् के अभियानी,
महको, महके जैसे चदन।
हे सरस्वती के वरद पुत्र,
शत वार तुम्हारा अभिनदन।

ऐसे ज्ञान ज्योति दिनकर का अभिनंदन शत वार है

श्री विमलकुमार जैन सोरया

'अगरचद नाहटा' सा जन बना हृदय का हार है,
ऐसे ज्ञानज्योति दिनकर का अभिनंदन शत वार है।

जिसने अपने मद विवेक मे जन-जन को आलोक दिया,
जिसने अपने पुण्य प्रयासो से मानव को योग दिया।
जिसने क्षमता समता से मानव मन को आह्लाद दिया,
जिसने अक्षय ज्ञान पुञ्ज से नव युग को निर्माण दिया॥

जो धरती पर बन आया माँ सरस्वती का प्यार है,
ऐसे ज्ञान ज्योति दिनकर का अभिनंदन शत वार है।

जिसने अपने पौरुषसे अपना इतिहास बनाया है।
जिसने अपने कर्त्तव्योमे जगमें निर्माण कराया है॥
जिसने अपनी सद्‌वाणीसे मानव को पथ दर्शाया है।
जिसने अपनी कृत करणीसे पावन तम गुरुपद पाया है॥

जो इस युगके बुधजन गण का बना एक आधार है।
ऐसे ज्ञान ज्योति दिनकर का अभिनदन शत वार है॥

जिसकी पावन पुण्य लेखनीसे आलोकित लोक है।
जिसकी ज्ञानमयी प्रतिभा को जग जन देता धोक है॥
जिसने अपने बुध विवेकसे मिटा दिया सब शोक है।
जिसने आगे आने वाले युग को दिया आलोक है॥

जो जन-जनके लिए बना अब अलब्ध ज्ञान का द्वार है,
ऐसे ज्ञान ज्योति दिनकर का अभिनंदन शत वार है॥

जिसके शंखनादसे पावन धर्म जगा इन्सानमें,
जो नरमे नारायण बनकर विचरा सम्यक् ज्ञानमें॥
भारत माँ की पावन वाणी का जिसमें सम्मान है।
अगणित जन जिसकी शिक्षासे दीक्षित हुए महान है॥

उस जन की यह आज अर्चना का गूथा शुभ हार है।
ऐसे ज्ञान ज्योति दिनकर का अभिनदन शत वार है॥

विश्व-कोषमें अमर रहेगा अगरचन्द का नाम

श्री कल्याणकुमार शशि

इतना दिया पुस्तकालय को साहित्यिक भण्डार
नित मुमुक्षु जग पायेगा, नव अन्वेषणके द्वार
शिक्षा-पट पर लिखे रहेंगे, यह समस्त उपकार
जो प्रशस्तियाँ लुप्त प्राय थी किया पुनर्उद्धार
पूरा जीवन निर्विकार, 'साहित्यिक सेवा ग्राम'
विश्वकोषमें अमर रहेगा, अगरचन्द का नाम

तुम्हें, समर्पित दिखा स्वयम् ही अन्वेषणी ज्ञान
एक लक्ष्य ही रहा निरन्तर, नूतन अनुसन्धान
जीवन की असारताओमें है कृतित्व महान
इस नश्वर जगमें ऐसे ही जीवन आयुष्मान
अन्तरङ्ग, बहिरङ्ग रहे, जिनके सदैव निष्काम
विश्वकोषमें अमर रहेगा, अगरचन्द का नाम

नई विधाएँ देनेवाला, किया सतत निर्माण
भरे अमरताके शरीरमें, नित आलोकित प्राण
मथनमें समदृष्टि रहे सब गीता, वेद, पुराण
लिखा वही, जिसका जैसा भी, मिला अकाट्य प्रमाण
ऐसी सफल लेखनी, जिसने लिया नही विश्राम
विश्वकोषमें अमर रहेगा अगरचन्द का नाम

कोई ऐसा क्षेत्र नही है जिसमें दिखे न आप
मुखरित दीखी दिशा दिशामें लेखन की पद-चाप
बाधाओमें रहा प्रगति मय कर्मठ कार्य-कलाप
युगो-युगो, तक अमर रहेगी, अमर, कलम की छाप
ऐसे कलम-कार मानव को, शत शत वार प्रणाम
विश्वकोषमें अमर रहेगा, अगरचन्द का नाम



श्री अगरचन्दजी नाहटाके प्रति

गौरी शकर गुप्त

मूर्त्ति हो सौजन्य की, तव साधना अभिराम ।
समर्पित जीवन तुम्हारा अमर-उज्ज्वल नाम ॥
सहज मूल्याकन न सभव है कि ऐसा काम ।
तुम्हे अर्पित सुमन श्रद्धाके असख्य प्रणाम ॥



अभिनन्दन

सर्वदेव तिवारी "राकेश"

अभिनन्दन, हे विद्या-वारिधि, बुद्धि-बृहस्पति, मुनिवर।
अक्षरजीवी, ऋषि-कुल-गौरव, स-हित-भावना-भास्वर।
अगरु-गन्धसे पूरित कण-कण श्री-शारदा-निकेतन,
गहन श्वेद-सरि वही, लुप्त या गुप्त बन गए चेतन।
रम्य लताएँ लक्ष-लक्ष साहित्य-कुजमें लहर भरी,
चचल रस-मारुत-विलाससे बढी भारती जीर्ण तरी।
दमकाया वाणी का दर्पण, अक्षर-अक्षर चमक उठे,
नाम गणेशी-मन्त्र बना है, नित नव गणपति दमक उठे।
हर्षित कला, धर्म या सस्कृति-गौतम-नारी रजसे,
टापे को उपवनमें बदला, अपर सृष्टि रच अज-से।
स्वय शीलमें पुस्तक-आलय, विश्वकोष जीवित पर,
धर्म, काव्य, सस्कृतिके सगम, शोध-तमिस्रा भास्कर।



अभिनन्दन

श्री सीथल, बीकानेर

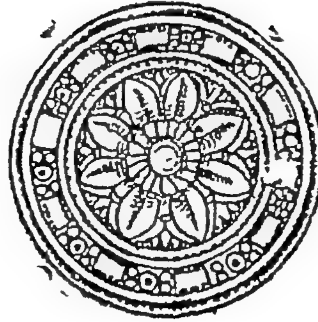
अभिनन्दन है आपका, भक्ति भावके साथ।
गर्व नही है मानका, गहत ज्ञान परमार्थ ॥
रक्षक रामको जो रहे, वन्दे नर अरु नार।
चंचल चित वशमें रहे, तब वेडा हो पार ॥
दया युक्त हो लघुन पे, दान ज्ञानका देह।
जीव सफल होवे तभी, सदा सज्जनसे नेह ॥
नाम नरोत्तमसे हुआ, महिमा बढी अपार।
हरदम लिखते लेख हैं, हस वंश पय सार ॥
टाले अविद्या भूतको, तत्त्व ग्रन्थका लेह।
तत्त्व सदा वा वाणीमें, कवि वानीको देह ॥



गीत डिंगल

श्री रावत सारस्वत

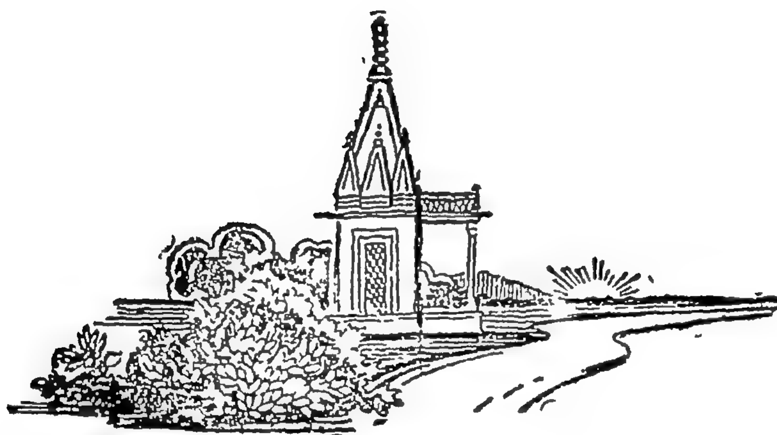
भल पाद्य रखी पूरी पिहलाई, माद्य रखी सिरिमाले जेम ।
करतव करे कमाई कीरत, नीकी भात निभाया नेम ॥१॥
माचै मोह न मिलिया माया, माथापच ही मोह मचै ।
राचै रग न रीझ रमा री, सारद री ही सीख जचै ॥२॥
रुलिया रतन न रच रुखाल्या, नूना पाना जतन किया ।
हुलसी पोथ्या हरख हियै में, पुखराजा मुख पीत थिया ॥३॥
गलियो गरब गरथ-भडारा, ग्रन्थ-भंडारा दरब थियो ।
मातम तोसाखाना मनियो, पोथीखाना परब कियो ॥४॥
सोधै सुव्रण ओखधा सोधै, सोधै लगन जूजुआ सोध ।
पुरखा रै जस करतव री पण, सारा सिरै थाहरी सोध ॥५॥
आखै देस कमाई कीरत, 'नाहटा' नाम सुनाम हियो ।
बीकानेर बसायो बीकै, तैं पण तीरथ धाम कियो ॥६॥





तृतीय खण्ड





व्यक्तित्व, कृतित्व और संस्मरण

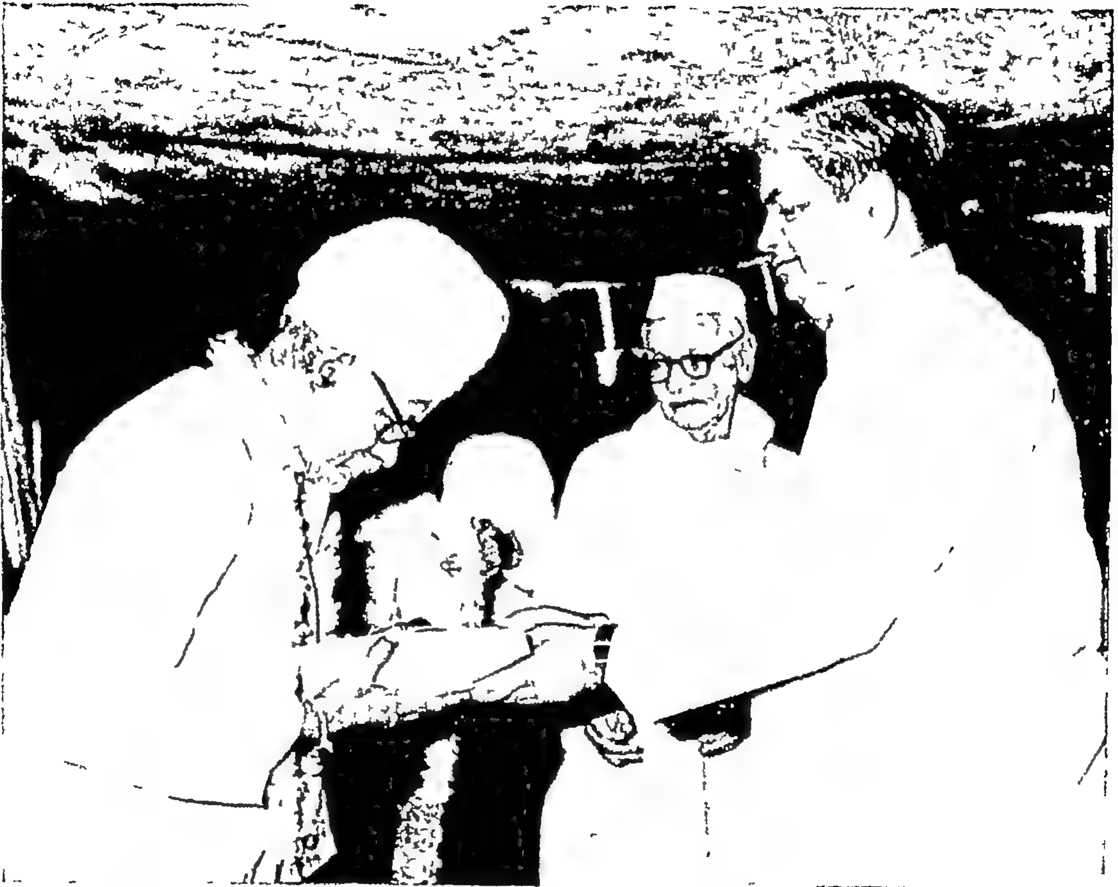




• सम्मानित तथा पुरस्कृत



राजस्थानी साहित्य अकादमी, उदयपुर में श्री मोहनलाल जी सुखाड़िया, नाहटा जी को पदक लगाते हुए।



राजस्थानी साहित्य अकादमी, उदयपुर में
श्री मोहनलाल जी सुखाडिया और हरिभाऊ उपाध्याय द्वारा सम्मान पत्र प्राप्त ।



विराट राजस्थानी भापा सम्मेलन वीकानेर द्वारा नाहटा जी का नागरिक अभिनन्दन
इसमें वड़े भ्राता शुभराज जी, मेघराज जी, भाणेज हजारीमल जी वाठिया, पुत्र धरमचन्द्र, विजयचन्द्र व पौत्र राजेन्द्रकुमार परिलक्षित हैं।
विद्वानों में मुरलीधर व्यास, मनोहर जी शर्मा, श्रीलाल, नथमल जोशी, मूलचन्द्र प्राणेश आदि उपस्थित हैं।



षष्टिपूर्ति अभिनन्दन समारोह में महाराजकुमार नरेन्द्र सिंह बीकानेर नाहटा जी को सम्मानित कर रहे हैं।
पीछे भाणेज हजारीमल जी बांठिया खड़े हैं।



षष्टी पूर्ति पर बीकानेर नागरिक अभिनन्दन में भाषण देते हुए नाहटा जी ।



षष्ठी पूर्ति पर नागरिक अभिनन्दन के समय श्री अगरचन्द जी नाहटा, डॉ० मनोहर शर्मा के साथ।



वम्बई मे ९ मार्च '७१ को मानतुगसूरि सारस्वत समारोह समिति द्वारा भक्तामर रहस्य भेंट कर सम्मानित होते नाहटा जी और समारोह सचालक ।



बीकानेर में विराट राजस्थानी भाषा सम्मेलन में श्री अगरचन्द नाहटा के षष्ठिपूर्ति के समय नागरिक अभिनन्दन।



श्री मानतुंगसूरि सारस्वत समारोह समिति द्वारा अभिनन्दन (९-३-७१)

सन्देश

आचार्य श्री तुलसी

श्री अगरचन्दजी नाहटा जैन-शासनके बहुश्रुत और साधनाशील उपासक हैं। आगम-साहित्यके अनुसार श्रुत और शील दोनोकी समन्विति ही जीवनकी पूर्णता है। श्रुतविहीन शील और शीलविहीन श्रुत ये दोनो साधनाको सिद्धिकी भूमिका तक नही ले जा सकते।

नाहटाजीने जैन-साहित्यको अनेक विद्वानो तक पहुँचाया है और उनका ध्यान आकृष्ट किया है। उन्होने व्यावसायिक जीवन जीते हुए भी साहित्य-साधनाकी है यह अन्य श्रावकोके लिए अनुकरणीय है।

तेरापंथ धर्मसघके अध्ययन और साहित्यको दूसरो तक पहुँचानेमें नाहटाजीकी लेखनी मुक्त रही है। इनके द्वारा दूसरोका परिचय हमें मिला है। इस प्रकार ये अनेक सघो और विद्वानोके बीच माध्यमका काम करते रहे हैं।

जैन-शासनकी वर्तमान स्थिति सतोपजनक नही है। वर्तमानके सदर्भमें उसमें अनेक नए उन्मेप और नए आयाम अपेक्षित है। भगवान महावीरकी पच्चीसवी निर्वाण शताब्दीमें जैनधर्मके विकासका सुन्दरतम अवसर है। सगठनको अधिक मजबूत करनेकी आवश्यकता है। यह समय सबके लिए समन्वय और सद्-भावनाकी वृद्धि का है। इस कार्यमें सब साधुओ और श्रावकोका समन्वित प्रयत्न आवश्यक है। इसकी पूर्तिमें साधुओकी भाँति श्रावक भी योग्य बनें और जैन शासनको प्रभावी बनाएँ।



यशस्वी पुत्र

श्री उपाध्याय अमरमुनि

श्री अगरचन्दजी नाहटा दो माताओके यशस्वी पुत्र हैं। यह नही कि एक के औरस पुत्र है, तो दूसरीके दत्तक हैं, गोद लिए हुए। दोनो ही माताओके वे एक समान साक्षात् अगजात पुत्र हैं। आप कहेंगे, यह असम्भव है। मैं कहूँगा, इस असम्भवमें ही तो श्री नाहटाजीकी गरिमा है। सम्भवतामें कही अद्भुतता-की चमत्कृति होती है? नही, असम्भवताकी सम्भवतामें ही वह विलक्षण चमत्कार है, जो श्री नाहटाजीने कर दिखाया है।

आप जैसे कि माँ लक्ष्मीके यशस्वी पुत्र है, वैसे ही मा सरस्वतीके भी लब्धप्रतिष्ठ पुत्र हैं। दोनोकी ही एक समान सहज कृपा है नाहटाजी पर। पुरानी उक्ति है सरस्वती और लक्ष्मीमें वैर है। किंतु श्री नाहटाजीके यहाँ तो दोनों ही लीलायित हैं। ऐसा सुयोग विरल ही कही मिल पाता है।

नाहटाजीने एक व्यापारी कुलमें जन्म लिया है। वह भी राजस्थानीय मरु प्रदेशके व्यापारी कुलमें, जहाँ इस प्रकारके शिक्षणकी, साहित्यिक अध्ययन एव सृजनकी कम ही सम्भावना रहती है यह भी नही कि नाहटाजीने व्यापार क्षेत्र छोड दिया हो और एकान्त साहित्य क्षेत्र ही अपना लिया हो। प्रारम्भसे ही वे

दोनो क्षेत्रोमें काम करते रहे है, अब भी कर रहे है। जहाँ वे एक कुशल एव सुदक्ष व्यापारी हैं, वहाँ एक गम्भीर विद्वान, सूक्ष्मदर्शी चिन्तक एव सफल साहित्यकार भी हैं। इसे कहते है, एक साथ दो घोडोंपर सवार होकर दौड लगाना। सन्तुलनकी इस अद्भुत क्षमतापर जनमन कैसे न चमत्कृत हो जाएगा।

नाहटाजीको देखें, तो लगता हैं, कोई मारवाडी सेठ है। वही सिर पर पगडी, पुरानी शैलीका साधारण कोट या कुर्ता और धोती। कौन कहेगा, इस मुद्रामें कोई साहित्यकार भी हो सकता है। साहित्यकार होनेकी सहसा कोई कल्पना ही नही हो सकती। श्री नाहटाजी आजके युगके धनी एव साहित्यकार होते हुए भी अपनी परम्परागत सादगीमे और वानुभूति रखते है। कोई अहकार नही, प्रदर्शन नही, दभ नही, दिखावा नही। जो है वह सहज है, निष्फल है, निर्मल है। इस प्रकार शिष्टता एव शालीनताकी साक्षात जीवित मूर्त्ति है नाहटाजी।

एक अध्यवसायशील व्यक्ति कितना महान् एवं विराट कार्य कर सकता है, नाहटाजी इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों का एक विशाल पुस्तकालय है नाहटाके पास, उनका अपना ही सग्रहीत एव नियोजित। मैंने अपनी बीकानेर यात्रामें जब वह गृह पुस्तकालय देखा तो, विस्मय-विमुग्ध हो गया मैं। जैसा मैंने सुना था, उससे कही अधिक ही देखा मैंने आँखोंसे। प्राकृत, सस्कृत, अपभ्रंश, राजस्थानी, गुजराती और हिन्दीके सहस्राधिक दुर्लभ ग्रन्थों का यह ज्ञान भण्डार है, काव्य, नीति आदिसे सम्बन्धित अनेकानेक अद्भुत रचनाएँ संग्रहीत हैं। नाहटाजी का यह गृह पुस्तकालय बीकानेर जैसी मरुभूमिमें वह सतत प्रवहमान ज्ञाननिर्झर है, जहाँ दूर-दूर तकके ज्ञानपिपासु अपनी प्यास बुझाने आते है। वस्तुत बीकानेर श्री नाहटाजीके यशस्वी कृतित्वके कारण साहित्यकारोंके किए आज एक पावन तीर्थधाम बन गया है।

शोध क्षेत्रमें काम करने वाले भारतीय विद्वान् या छात्र कहीके भी हो, नाहटाजीसे अवश्य कुछ परिबोध एवं परामर्श पाने की बात सोचते है। सोचते ही नही, पाने जैसा पाते भी हैं वे उनसे। नाहटाजीके निर्देशनमें अनेक पी-एच० डी० हो चुके है और हो रहे हैं। नाहटाजी का द्वार एतदर्थ सबके लिए खुला है। उनका निर्देशन इतना सक्षम, सबल एव प्रमाणभूत होता है कि शोधकर्ता का पथ प्रशस्त हो जाता है। वह शीघ्र ही गतिशील होकर अपने निर्धारित लक्ष्य पर पहुँच जाता है, उसकी रचना विद्वज्जगतमें प्रतिष्ठा प्राप्त कर लेती है। ऐसे अनेक विद्वान् और छात्र मेरे परिचयमें आए है। जिन्होने अपने शोधकार्यमे सहयोग पाने की चर्चा करते हुए नाहटाजी की मुक्त कण्ठमे प्रशसा की हैं। ठीक ही कहा है—

'नहि कृतमुपकारं साधवो विस्मरन्ति।'

श्री नाहटाजी की साहित्यिक विधा मुख्य रूपसे इतिहास है। अनेक प्राचीन विद्वानोंके महनीय व्यक्तित्व एवं कृतित्व को नाहटाजी की सधी हुई परिष्कृत प्रतिभाने कितना उजागर किया है, यह देख सकते है, उनके यत्र-तत्र प्रकाशित विस्तृत निबन्धोमें। नाहटाजी की इतिहास सम्बन्धी स्थापनाएँ यो ही नही होती है, उनकी पृष्ठभूमिमें होता है तलस्पर्शी गहन गम्भीर चिन्तन एवं मनन। इतिहाससे सम्बन्धित अब तक उन्होंने जो भी दिया है, वह इतना प्रमाणपुरस्सर दिया है, कि उसे कोई यो ही चुनौती नही दे सकता। इतिहासके अतिरिक्त धर्म, दर्शन, आख्यान, नीति आदिसे सम्बन्धित रचनाएँ भी उनकी इतनी है कि उनका एक विराटकाय संग्रह हो सकता है। मैं साहित्यिक सस्थाओके अधिकारी सज्जनोंसे अनुरोध करूँगा कि नाहटाजीके निबन्धो तथा अन्य रचनाओ को पुस्तक रूपमें प्रकाशित किया जाए, ताकि विभिन्न विषयोंके अध्येताओको उनकी विचार सामग्री सहज रूपमे एकत्र उपलब्ध हो सके।

श्री नाहटाजी का अभिनन्दन एक प्रचलित परम्परा का पालन मात्र नही है। वस्तुत वे अभिनन्दनीय हैं, अपने सृजन की चिरस्मरणीय गरिमासे। मौलिक अभिनन्दन वही है, जो व्यक्तिके अपने गौरवपूर्ण व्यक्तित्व एव कृतित्वसे प्रभावित होकर जनमानसमें उभरा करता है। यह वह आलोक है, जो विद्युत् की तरह चमक कर सहसा अन्धकारमें सदाके लिए विलीन नही हो जाता है। महाकालके पथपर आने वाले लम्बे पडावो को पार करता हुआ यह समुज्जवल यश. प्रकाश भविष्य की ओर बढता जाता है और इस पथ के अनेक भूले-भटके यात्रियो को प्रेरणा का परिबोध देता जाता है।

श्री नाहटा अपने 'अगरचन्द' नामके अनुरूप ही अगरवर्तिका की तरह दिनानुदिन महकते रहे तथा चन्द्र की तरह चमकते रहे। साहित्यिक जगत् को उनसे अभी और भी आशाएँ हैं। उन्हे अभी और भी बहुत कुछ देना है। मुझे आशा ही नही, दृढ विश्वास है कि अब तक उन्होने जो दिया है, उससे भी कही अधिक श्रेष्ठ एव श्लाघनीय वे देते रहेंगे, जिसपर अनागत की प्रवुद्ध प्रजा सात्विक गौरवानुभूति करती रहेगी।

●

संशोधक नाहटाजी

गणिवर्य-जनकविजयजी

श्री अगरचन्द नाहटा ग्रन्थ समितिकी पत्रिका मिली। आप लोगोका प्रयास स्तुत्य है। नाहटाजीने भगवान महावीरके आदर्श श्रमणोपासकके तुल्य जीवन व्यतीत किया है। साहित्यिक एव प्राचीन ग्रन्थोके सशोधन विषयमें तो एक अद्भुत कार्य करके अपनी साहित्यरुचिको चार चाद लगाए है।

●

श्री नाहटा-बन्धु

श्री मुनि कान्तिसागरजी

इतिहास शिरोमणि, पुरातत्वज्ञ श्री अगरचन्दजी, श्री भवरलाजी नाहटा भारतके नामाकित विद्वानोकी गणनामें अपना स्थान रखते है। इन्होने सैकडो अलभ्य ग्रन्थोका सम्पादन व प्रकाशनका कार्य किया है। जन्मजात-व्यावसायिक एव लक्ष्मी पुत्र होनेपर भी इतिहास व पुरातत्त्वके विषयमे जो शोध व खोजकी है, वह अनुमोदनीयके साथ-साथ अनुकरणीय भी है। इस प्रकार व्यापारिक जीवन होते हुए भी साहित्य-सेवामें इतना समय देनेवाले विरले ही व्यक्ति होगे।

जैसलमेरका साहित्य-भडार तो अपने आपमें अनूठा है ही, किन्तु नाहटा बन्धुओका साहित्य-सग्रह भी बीकानेरमें अद्वितीय है। युग प्रधान जिनचन्द्रसूरि आदि ग्रन्थोका लेखन, सम्पादन, इतिहासज्ञोको सतत नूतन ज्ञातव्यकी उपलब्धियाँ कराते है। नाहटा बन्धुओकी धर्मनिष्ठा, साहित्य प्रेम, सरलता, ज्ञानार्जनमे एकाग्रता आदि अनेक गुण ऐसे है जिनके कारण मानवका आकर्षित होना स्वाभाविक है।

इन सब विशिष्ट गुणोंके साथ ही इनमें एक सर्वोपरि विशेषता यह है कि जीवनमें कदाग्रह दृष्टिका अभाव है। जब कभी व जिस किसीने खरतरगच्छ-साहित्यपर प्रहार किया तो इन्होंने सदा उचित उत्तर दिया है, सत्यको सामने रखा है और उसमें सदा निष्पक्ष दृष्टिका ही परिचय दिया है। इसीका परिणाम है कि उन्होंने औचित्यका उल्लंघन कभी नही किया।

●

शासनके प्रतिभाशाली पुत्र श्री नाहटाजी

श्री उदय सागरजी

श्रेष्ठीवर श्री अगरचन्दजी नाहटा अभिनन्दन-समारोह समिति द्वारा यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि साहित्य मनीषी श्री नाहटाजीका अभिनन्दन किया जा रहा है। श्री नाहटाजीका मेरा सम्पर्क गत ४० वर्षोंसे रहा है। एक प्रतिष्ठित एवं सम्पन्न परिवारमें जन्म लेकर जैन समाजमे साहित्य सृजनकी जो सेवाएँ एक प्रतिभाशाली जैन शासनके पुत्रके रूपमें की हैं, वह सर्दैव ही जैन जगतमे स्मरणीय रहेगी। सच्चे अर्थोंमें वे सरस्वतीके वरद पुत्र हैं। साहित्यकारका जीवन गुलाबके पुष्पकी भाँति होता है। गुलाबका पुष्प काटोंके मध्य रहकर भी सबको सौरभ देता है। हवाका झोंका आया कि मिट्टीमें मिलता हुआ भी वह अपनी सौरभ मिट्टीके कणोंको दे देता है। उसी प्रकार साहित्यकार अपने साहित्य द्वारा सभीको लाभान्वित करता है।

श्री नाहटाजीने अपनी लेखनी द्वारा जैन-समाजकी जो सेवाएँकी हैं, वह शतमुख प्रशसनीय है और युग-युग तक भावी पीढियोको दिव्य प्रेरणा देती रहेगी। श्री नाहटाजीने साहित्यकार, लेखक, इतिहासकार एव तत्त्ववेत्ताके रूपमें कार्य करके अपनी साहित्य-साधनासे जैन समाज एवं खतरगच्छको जो अमूल्य रत्न प्रदान किये है उनको देखकर यही कहना उचित है कि आप सच्चे अर्थोंमें जैन समाज एव खतरगच्छके प्रतिभाशाली पुत्र हैं। मेरी हार्दिक कामना है कि इस अभिनन्दन समारोहसे समाजकी युवापीढी प्रेरणा लेकर भावी जीवनको सफल बनावे।

•

संदेश

विजयधर्मसूरि मुनि यशोविजयजी

सौजन्य स्वभावी, धर्मश्रद्धालु विद्वान् नाहटा भाइओंके लिए भव्य अभिनन्दन-समारोहका जो आयोजन किया गया है वह अत्युचित ही है। पत्रिका पढकर अति आनन्द हुआ। एक सुखी सद्गृहस्थ अपने गृहस्थोचित कार्यमें रत होते हुए भी समयका कितना कीमती सदुपयोग करके ज्ञान साधना-उपासना कर सकता है, उसका जीवन उदाहरण नाहटा भाइयोमे है। श्री अगरचन्दजीकी सेवा-ज्ञानसेवा इतनी विशाल हैं कि पढ़कर कोई व्यक्ति आश्चर्यका अनुभव किये बिना नही रह सकता।

हम आपकी सम्यग् ज्ञानोपासनाका भरि-भूरि अनुमोदना करते है और आप स्व-परकल्याणको साधनाके पथपर उत्तरोत्तर अधिक पदार्पण करते रहें, ऐसी शुभकामना करते हैं।

नाहटा अभिनन्दन समारोह भव्य बनें और कवि कालिदासकी 'तत्राऽपि श्लोकद्वय' शाकुन्तल नाटक-की उक्तिके अनुसार देशकी प्रजा, उसमें राजस्थानकी प्रजा, उसमे जैन प्रजा, अपना कर्त्तव्य पूरा करें, और समारोह सानन्द सम्पन्न हो, यही शासनदेवसे प्रार्थना है।

•

अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी

मुनिश्री महेन्द्रकुमारजी 'प्रथम'

संघकी वैयावृत्ति, प्रवचनकी प्रभावना, तीव्रतर तपस्या, कायोत्सर्ग आदि कर्म-निर्जराके महान् हेतु हैं। कर्म-निर्जराके अन्य माध्यमोमे अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी भी एक सबल माध्यम है, जिसका अवष्टम्भ सामान्य व्यक्तिके द्वारा नही हो सकता। ज्ञानावरणीय कर्मका क्षयोपशम उसमें विशेष निमित्त होता है। तत्व-चर्चा या दर्शन-मीमासाके साथ-साथ परम्पराओका ऐतिहासिक पर्यालोचन व साहित्यके विभिन्न स्रोतोके उद्गम और विकासका लेखा-जोखा भी आधुनिक स्वाध्याय-परम्परामें अनुबद्ध हो गया है। श्री अगरचन्दजी नाहटा उसी नवीन शृखलाकी एक बडी कडी हैं। जैन-शासनके इतिहासकी सूक्ष्मतम सूचनाओके आकलनमें उन्होने अपना जितना समय लगाया है, उतना ही उन्होने पाया भी है। वह प्राप्ति उनके कर्म-निर्जरणमें जहाँ सहयोगिनी है, वहाँ जैन-शासनके गौरवको वृद्धिगत करने तथा नवीन तथ्योकी ओर जैन व अजैन व्यक्तियोको आकर्षित करनेमें भी सफल हुई है। प्राचीन तथ्योकी प्रामाणिक जानकारीमें जिन मूर्धन्य व्यक्तियोका स्थान है, उनमें श्री नाहटाजी अग्रणी है।

आधुनिक शिक्षा-दीक्षा तथा वातावरणसे सर्वथा दूर होते हुए भी श्री नाहटाजीने जो साहित्य-सेवाकी है, वह उनकी जैनधर्मके प्रति गहरी निष्ठा की अभिव्यजना तो है ही, साथ-साथ उनकी सूक्ष्म तथा ग्राहक दृष्टिकी भी साक्षिका है। उनका अपना निजी वृहत् ग्रन्थागार ग्रन्थोकी महनीयता तथा सख्याकी विपुलताके कारण जहाँ 'विद्वानो' को आकर्षित करता है, वहाँ उनके व्यवस्था-कौशलसे भी प्रभावित किये बिना नही रह सकता।

वि० स० २०२१ की घटना है। युग-प्रधान आचार्य श्री तुलसीका चतुर्मास बीकानेरमें था। मैं उन दिनों 'कालू यशोविलास' का सम्पादन कर रहा था। उसी सन्दर्भमें एक प्रसंगपर मुझे भगवती-सूत्रकी प्राचीन तथा विभिन्न प्रतियोंके अवलोकनकी अपेक्षा हुई। मैं श्री नाहटाके ग्रन्थागारमें पहुँचा। नाहटाजीने कुल पाँच-सात मिनटमें ही मेरे सामने भगवती-सूत्रकी हस्तलिखित तथा मुद्रित बीसो प्रतियाँ रख दी। मुझे वे परिचय देने लगे कि, अमुक प्रतिका लेखन-सवत् अमुक है और अमुकका अमुक। मुझे अपेक्षित सन्दर्भको खोजनेमें बहुत सुगमता हुई। ग्रन्थागारमें पुस्तको तथा हस्तलिखित प्रतियोके रखनेका उनका तरीका अत्यन्त आधुनिक और सरल लगा।

श्री नाहटाजी अनेक प्रसगोपर मुझसे मिले है। जब-जब उनके साथ किसी भी पहलूपर चर्चा हुई है, वह बहुत सरस, बहुत गम्भीर तथा नवीन तथ्योसे परिपूर्ण हुई है। नई शोधका उनका अनवरत क्रम चलता रहता है, अत वे हर समय नई सूचना देनेके अधिकारी रहते हैं। जैनधर्म व राजस्थानी भाषाके विभिन्न पहलुओपर शोध-कर्त्ताओके लिए उन्होने जहाँ अपने ग्रन्थागरके द्वार उन्मुक्त कर रखे हैं, वहाँ अपनी ज्ञान-गरिमासे भी उनका मार्ग-दर्शन किया है।

भगवान श्री महावीरने चार प्रकारके व्यक्ति बतलाये हैं—१. श्रुत (ज्ञान) सम्पन्न, २. शील (चारित्र) सम्पन्न, ३ श्रुत व शील सम्पन्न तथा ४ श्रुत व शील रहित। श्री नाहटाजी श्रुताराधनामें अहर्निश क्रियाशील हैं। उनका अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग वस्तुत ही जैन-समाजके अन्य श्रद्धालुओके लिए भी महान् प्रेरक है। यदि इस प्रकारके अनेक विद्वान् हो जायें, तो सचमुच ही जैन-सस्कृतिके वे चलते-फिरते सूचना-केन्द्र हो सकते हैं। श्री नाहटाजीका सम्मान वस्तुत उनकी श्रुताराधनासे होनेवाली कर्म-निर्जराके प्रति आत्मीय भावका प्रकटीकरण है।

साहित्यिक सितारे नाहटाजी

श्री पुष्कर मुनिजी

श्री अगरचन्दजी नाहटा जैन समाजके एक चमकते दमकते साहित्यिक सितारे है। वे प्रकृष्ट प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति है। साहित्यिक क्षेत्रमें उनकी सर्वत्र ख्याति है। इतिहास और पुरातत्त्वके वे गम्भीर ज्ञाता है। किस आचार्यका जन्म कब हुआ, कहाँ हुआ और उनकी कौन-कौन सी कृतियाँ हैं? आप किसी भी समय उनसे पूछ सकते हैं। वे आपको उसका सम्पूर्ण विवरण सुना देगे। आप उनकी अजब-गजबकी स्मरण शक्ति देखकर चकित हो जायेंगे। श्री नाहटाजी वस्तुत विश्वकोश हैं।

नाहटाजीका जन्म वैश्यकुलमें हुआ है। वैश्योका मूलव्यवसाय व्यापार है। वे लक्ष्मी पुत्र होते हैं, प्राय सरस्वतीसे उनका वास्ता नही होता। नाहटाजी इसके अपवाद हैं। उन्होने अपनी लगनसे साहित्यिक क्षेत्रमें विकास किया है। उन्होने नोटोंसे तिजोरी नही भरी किन्तु महत्त्वपूर्ण ग्रन्थोसे पुस्तकालयको सजाया है। हजारो अनुपलब्ध और अप्राप्य ग्रन्थ उनके संग्रहालयमें हैं। वे ग्रन्थोको केवल इकट्ठा ही नही करते उन्हें पढकर उसपर अपने महत्त्वपूर्ण विचार भी व्यक्त करते हैं। उन्होने बहुत अधिक लेख अज्ञात कवि-लेखकोकी कृतियोंपर लिखे हैं, जो उनकी बहुश्रुतताके परिचायक है।

उनका अभिनन्दन समारोह मनाया जा रहा है, यह उचित है। मेरी हार्दिक मंगल कामना है कि वे चिरायु होकर अत्यधिक साहित्यिक और सास्कृतिक सेवा कर यशस्वी बनें।

•

भारतीय संस्कृतिका सम्मान

गणि श्री हेमेन्द्रसागरजी

श्रेष्ठिवर श्री अगरचन्दजी नाहटा अभिनन्दन-समारोहकी पत्रिका मिली। पढकर अत्यन्त आनन्द हुआ। इनके अभिनन्दन-ग्रन्थमें मेरा बयान होना—मन्तव्य प्रस्तुत करना—मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ।

श्री अगरचन्दजी नाहटा एवं श्री भँवरलाल नाहटा द्वारा धार्मिक, साहित्यिक एवं कलापूर्ण ग्रन्थो और रचनाओका पुनरुद्धार ही इनका जयन्ति (जीवित) कार्य है। सचमुच इनका यही उच्च श्रेणीका व्यापार है।

जैन-दर्शन, साहित्य और ऐतिहासिक क्षेत्रमें आपने अजोड़-जीवन प्राप्त किया है। इस प्रकारके साधु-स्वभावके और जैन-समाजके पुत्रका सम्मान करना, यह सभी लोगोका परम कर्त्तव्य है। राजस्थान भरमें आपकी साहित्य-सेवा और समाज-सेवाका कार्य सबसे बडा है। श्री अभय जैन ग्रन्थालयमें लगभग अगणित हस्तलिखित प्रतियाँ और मुद्रित ग्रन्थ विद्यमान हैं। श्री शंकरदान कलाभवनमें ३००० चित्र, सैकडो सिक्के और प्राचीन मूर्तियाँ एवं कलापूर्ण वस्तुयें विद्यमान है।

विद्यावारिधि, इतिहासरत्न, सिद्धान्ताचार्य और शोधमनीषी राजस्थानी साहित्य वाचस्पति श्री अगरचन्दजी नाहटाका यह सम्मान भारतीय सस्कृतिका सम्मान है।

ऐसे स्वर्णावसर पर मैं अपना परम कर्त्तव्य समझता हूँ कि स्वय उपस्थित रहूँ। किन्तु, यह मेरे लिये अशक्य है। फिर भी मेरे हृदयसे यही ध्वनि निकलती है कि ऐसे महान् कार्य हेतु सम्पूर्ण सहयोग और अपनी शुभेच्छा प्रेषित कर दूँ।

अभिनन्दन-समारोहमें समग्र भारतके खरतरगच्छीय जैन सघ हिलें-मिलें और नाहटा कुटुम्बकी ओरसे की गई साहित्य-सेवा रूपी यह सौरभ फूले-फले और समाजकी इस प्रकारसे शोध करनेवाले सुपुत्र बनें, यही प्रभुसे प्रार्थना है।

•

एक विशिष्ट संशोधक

श्री भोगीलालजी ज० सांडसरा

मारू-गुर्जर भाषा साहित्य एव जैन-इतिहास साहित्य और सस्कृतिके एक विशिष्ट संशोधक श्री अगरचन्दजी नाहटा मेरे मित्र-वर्गमेंसे है। मैं, लगभग पिछले ४० वर्षोंसे इनके नामसे परिचित रहा हूँ और अनुमानतया ३५ वर्षोंसे मेरा इनके साथ नियमित साहित्यिक पत्रव्यवहार चालू है।

आजसे लगभग २५ वर्ष पूर्व अहमदावादमें मुझे इनसे साक्षात्कार करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। तब ऐसा प्रतीत हुआ कि मैं किसी ऐसे व्यक्तिसे मिल रहा हूँ, जो अपनी ओरसे जिज्ञासु एव शोध-कार्य करनेवालोकी सहायता करनेवाला है। मुझे आपकी साहित्यिक प्रवृत्तिका अधिकाधिक परिचय मिलता गया।

सन् १९५० में सद्‌गत पू० मुनि श्री पुण्यविजयजी जब जैसलमेरके ग्रन्थ-भण्डारके उद्धार हेतु जैसलमेर पधारे तब मैं और मेरे मित्र डॉ० जितेन्द्र जेतली भी जैसलमेर गये थे। उन दिनोमें उन भण्डारोके कार्य हेतु अपने दो सहायक विद्वान् श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री बद्रीप्रसाद साकरियाको साथ लेकर श्री नाहटाजी भी वहाँ आये थे। वही पर हमारा परस्पर परिचय और विशिष्ट-मैत्री सम्बन्ध स्थापित हुआ। जब हम वहाँसे वापस लौटे तो श्री नाहटाजीके साथ ही बीकानेर आये और इन्हीके अतिथि बने।

बीकानेर आकर हमें नाहटाजीके ग्रन्थ-सग्रहका, बीकानेरके अन्य ग्रन्थ-भण्डारोका एव बीकानेरकी सुप्रसिद्ध अनूप सस्कृत लाइब्रेरीका अवलोकन करनेका लाभ मिला। मैंने इस भ्रमणका वर्णन 'एक साहित्यिक यात्रा' शीर्षकसे अपने गुजराती लेखमें किया है, जो "सशोधन नी कैडी" में पृ० २५१-२६२ पर प्रकाशित हुआ है।

व्यवसायसे व्यापारी होते हुए भी आप, अपनी प्रिय विद्या-प्रवृत्तिके लिये किसप्रकारसे सतत कार्यशील रहते है, यह हमें बीकानेर-प्रवासमें स्पष्ट प्रतीत हो गया। बादमें तो हम परस्पर अनेक बार मिलते रहे है। मैं जब अहमदावाद छोडकर वडोदा आ गया और यहाँ वडौदा के प्राच्य विद्यामन्दिरके अध्यक्ष पदपर नियुक्त हुआ तो इसके अनन्तर भी हमारा साहित्यिक-सहयोग सतत चलता ही रहा है और नाहटाजीको लेखन एवं संशोधनके प्रति सतत जागरूक होनेका मुझे लाभ मिलता रहा।

हमारी यह मैत्री साहित्यिक ही न होकर व्यक्तिगत भी है। मेरी गुजराती पुस्तक 'जैन आगम साहित्यमें गुजरात' को ई० सन् १९५५ में बम्बई सरकार द्वारा २००० रु० का पुरस्कार मिला, तब इस ग्रन्थका एव मेरे परिचयमें आपका एक विस्तृत लेख एक हिन्दी पत्रमें आपने प्रकाशित कराया। मेरी अंग्रेजी पुस्तक 'लाइब्रेरी सर्कल आफ महामात्य वास्तुपाल एण्ड इट्स कन्ट्रीब्यूशन टू सस्कृत लिटरेचर' आपको ऐतिहासिक एव सास्कृतिक-दृष्टिसे उत्तम प्रतीत हुआ। नाहटाजीकी सूचनासे सद्‌गत श्री कस्तूरमलजी बाठियाने इसका हिन्दी अनुवाद किया, जो बनारस विश्वविद्यालयमें विद्याश्रम द्वारा प्रकाशित किया गया है।

नाहटाजीने अब तक सशोधनात्मक हजारो लेख लिखे हैं। मेरे सम्पादनमें प्रसिद्ध होनेवाले त्रैमासिक 'स्वाध्याय' को भी आपके लेख मिलते रहे हैं। इनमेंसे चुने हुए मन-पसन्द लेख ग्रन्थके रूपमें प्रकाशित हो तो उत्तम रहे।

इन महानुभाव मित्र एव समर्थ संशोधकको मैं अपनी शुभकामनायें अर्पण करता हूँ। मेरी कामना है कि आप आरोग्यमय दीर्घायु प्राप्त करें और आपका यह जीवन-कार्य अत्यधिक वेगसे अग्रसर हो।

●

ज्ञानके अक्षय स्रोत नाहटाजी

श्री कृष्णदत्त वाजपेयी

१९४३में अपने व्यवसाय-कार्यसे कलकत्ता जाते समय नाहटाजी डॉ० वासुदेवशरण अग्रवालसे लखनऊ संग्रहालयमें मिलने गये। अग्रवालजीने मुझे उनसे मिलाया। नाहटाजीकी अतिसाधारण वेशभूषा तथा ज्ञान-गरिमाकी विशिष्टताने मुझे बहुत प्रभावित किया। जैन कलाके संबंधमें उनसे बातचीत करते समय मुझे बड़ा आनंद मिला। इसके बाद तो नाहटाजी मेरे पत्राचारके एक प्रमुख व्यक्ति बन गये।

१९४६में मैं मथुरा संग्रहालयका अध्यक्ष बना। उस समयसे हमारे पारस्परिक सम्पर्क बढ़े। नाहटाजी कई बार मथुरा पधारे। ब्रज साहित्य मंडल, मथुराकी ओरसे एक बार उनका अभिनंदन किया गया। हम सभी इससे गौरवान्वित हुए।

नाहटाजीकी व्यावसायिकी बुद्धि धनार्जनमें कितनी सफल रही, यह मैं नहीं जानता। परंतु साहित्य-के क्षेत्रमें तो उन्होंने निस्संदेह कमाल कर दिया है। उनके बहुसंख्यक ग्रंथ तथा लेख इसके प्रमाण हैं। वे शोधार्थियोंके लिए महान प्रेरणा-स्रोत हैं। उनका विपुल ग्रंथ-भंडार तथा आंतरिक ज्ञान भंडार—दोनों ही साहित्य-प्रेमियों और अनुसंधित्सुओंके लिए खुले हैं। हिंदी भाषा और साहित्यकी उन्होंने असाधारण सेवा की है। जैनधर्मके विभिन्न क्षेत्रों पर उनका कार्य स्वर्णाक्षरोंमें अंकित रहेगा।

नाहटाजीने जितना जोड़ा है उससे कहीं अधिक लुटाया है। यह साहित्यिक दानवीर चिरायु हो और बहुसंख्यक जनोंको दिशा तथा प्रेरणा प्रदान करता रहे, यही भगवान्से प्रार्थना है।

●

अभिवादन

डॉ० उमाकांत प्रेमानंद शाह

करीब उन्नीस सौ बावनमें जब अहमदाबादमें अखिल भारतीय ओरियन्टल कॉन्फ्रेन्स मिलने वाली थी, तब प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथोंका एक बड़ा आयोजन हुआ था और आगम प्रभाकर स्वर्गस्थ मुनि श्री पुण्य विजयजीने अनेक जैन भंडारोंसे करीब आठ हजार हस्तलिखित प्रतियाँ मंगवाकर स्वयं अपनी ओरसे छानबीन करके प्रत्येक प्रतिका सिलेक्शन करके प्रदर्शनकी रचना की थी। उस समय उनकी सहायताके लिए मेरेको और मेरे जैसे इनके अन्य शिष्योंको रातदिन कुछ दिनों तक अपने साथ उस कार्यमें लगाये हुए थे। जब यह कार्य रातदिन चलता था, तब एक दिन शामको श्री अगरचंदजी नाहटा वहाँ पधारे और उनके स्वभावके अनुसार तुरत ही प्रतियोंकी सूचियाँ पढ़नेमें और अपने लिए नोंध करनेमें लग गये। मैं उस समय हाजिर था। मुनि श्री पुण्यविजयजीने उनसे परिचय करवाया। यह मेरी उनसे प्रथम भेंट थी। मैं उनके विद्या प्रेमसे प्रभावित हो गया था। उनमें इतना प्रबल उत्साह और इतनी प्रबल कार्यशक्ति देखकर मैंने मनोमन इनको फिरसे प्रणाम किया।

उस समयसे आज तक हमारा परिचय बढ़ता रहा है। फिर तो प्रथम मुलाकातके बाद करीब छ सालके बाद मैं बीकानेर गया और उन्होंने अपने श्री अभयपुस्तकालयमें ही मुझे ठहराया और उनका पूरी तरहसे आतिथ्य का लाभ मैंने पाया। मेरे साथ वह जगह-जगह घूमें। वह एक दिनकी स्मृति आज तक

बनी हुई है। श्री नाहटाजी कुछ वर्ष पहले मेरे घर भी पधारे और हमारे प्राच्य-विद्यामंदिरको भी देखा। हमारा पत्र व्यवहार अब भी चालू है।

उस प्रथम भेंटको तो आज करीब वीस वरस हुए और फिर भी मैं देख रहा हूँ कि अभी भी इनका विद्या प्रेम, सशोधन और लेखन-कार्य चल रहा है। इनका कार्य क्षेत्र काफी बड़ा है और जैन साहित्य, प्राचीन मारुगुर्जर (ओल्ड वेस्टर्न राजस्थानी और गुजराती) भाषा साहित्य, वर्तमान हिंदी साहित्य और मरुभूमिकी प्राचीन लोक भाषा आदिकी इनकी ओरसे बहुत ही सेवा होती चली आई है।

इन सब क्षेत्रोमें कई संस्थायें कितने ही प्रकाशन और कितने ही प्राचीन हस्तलिखित ग्रथोंके सशोधन परीक्षण और सरक्षणमें इनका कई तरहका सहयोग हैं। ऐसे हमारे पूज्य श्री अगरचदजी नाहटाको मेरी ओरसे नम्रतापूर्वक अभिवादन है।



विद्वत्प्रवर श्री अगरचन्दजी नाहटा

श्री प० विद्याधर शास्त्री

वश परम्परासे एक सफल व्यापारी होकर भी श्रीयुत अगरचन्दजी नाहटाने ज्ञान विज्ञानके क्षेत्रमें जिस यशस्वी स्थानको प्राप्त किया है, उस स्थानके अधिकारी विद्वान् केवल राजस्थानमें ही नही अपितु समस्त भारतमें भी यदाकदाचित् ही उपलब्ध होते हैं।

जैन संस्कृतिके मौलिक तत्वो और उसके इतिहास पर तो आपका असामान्य अधिकार है ही परन्तु इसके साथ ही हिन्दी-संस्कृत अपभ्रंश और राजस्थानीके दुर्लभ प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थो और प्रावतन अभिलेखोके सग्रह तथा अनुशीलनमें आपकी जो अनुपम अभिरुचि है, उसके कारण आपका ज्ञान क्षेत्र इतना विस्तीर्ण हो चुका है कि उसके द्वारा आप निरन्तर विविध विषयोके शोधमें प्रवृत्त अनेक पी-एच डी और डी लिट् के शोध स्नातकोकी सदैव स्मरणीय सहायता करते रहते हैं।

स्नातकोकी इस सहायताके अतिरिक्त आप जैन साहित्य और राजस्थानीके साहित्य पर जिन विस्तीर्ण भाषण मालाओको प्रस्तुत करते रहे हैं उनसे भी समस्त भारतके विद्वान् प्रभावित होते हैं और सदैव उनको सुननेकी प्रतीक्षामें रहते हैं।

ज्ञान-विज्ञानके क्षेत्रकी इस निजी विशेषताके साथ ही आपने अभय जैन ग्रन्थ भण्डारकी स्थापना और अपने भ्रातृज श्रीयुत भवरलाल नाहटाके साथ अभिलेख सग्रह और नाना मुनिजनोकी वैदुष्यपूर्ण वाणियोंके सुसम्पादित प्रकाशनसे राजस्थानके शोध क्षेत्रको जो देन दी है, वह सर्वथा अद्वितीय है।

जैन मुनियोकी वाणियोके प्रकाशनके अतिरिक्त हिन्दी, सस्कृत और राजस्थानीमें यत्र तत्र विकीर्ण ज्योतिष, आयुर्वेदिक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थोका उद्धार भी आप सदैव करते रहते हैं।

भारतके प्राय. समस्त साहित्यिक और सास्कृतिक पत्रोमें हजारोंसे ऊपर आपके जो लेख छपे हैं, जिनसे आपके व्यापक ज्ञानका परिचय मिलता है।

आपके कारण बीकानेरका ज्ञान-गौरव समस्त भारतमें प्रतिष्ठित हुआ है। परमात्मा आपको दीर्घायु करें और आप निरतर वर्तमानके समान सदा साहित्यकी वृद्धि करते रहें।



अभिनन्दनीय नाहटाजी

श्री गोपालनारायण बहुरा

श्री अगरचन्दजी नाहटासे मेरी पहली भेंट सन् १९४८मे हुई थी। यद्यपि उनके विषयमें कई बार मेरे मम्मान्य मित्र श्री महतावचन्द्रजी खारैड प्रायः चर्चा करते रहते थे परन्तु साक्षात्कार उसी दिन हुआ जब वे एक दिन जयपुर महाराजाका पोथीखाना देखने आये थे। उस समय मैं पोथीखानाके अध्यक्षके पद पर कार्य करता था। श्री नाहटाजी अपनी बीकानेरी ऊँची पगडी, बन्द गलेका कोट, परन्तु बटन कुछ खुले हुए, धोती और देशी जूते पहने हुए सामान्य वेशभूषामें मेरे पास आए और बिना किसी भूमिका या औपचारिक परिचयके ही राजस्थानी भाषाके प्राचीन ग्रन्थोकी प्रतियोके विषयमें पूछताछ करने लगे। जब मैंने उनका नामधाम पूछा तब मुझे श्री खारैडजीके इस कथनका यथार्थ ज्ञान हो गया कि श्री नाहटाजी अनावश्यक औपचारिकतासे बहुत दूर रहते हैं और अपनी धुनमें कामकी बातोको ही अधिक महत्त्व देते हैं।

इसके बाद जब राजस्थान पुरातत्त्व मन्दिर (अब राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान) की सस्थापना सन् १९५०में जयपुरमें हुई और मुनि श्री जिनविजयजी उसके सम्मान्य सचालक बने तबसे तो श्री नाहटाजीके उनके पास व प्रतिष्ठानमें पधारनेके प्रसग बनते ही रहे और मेरा व उनका परिचय बढता गया। प्राचीन साहित्योद्धार और सशोधनके लिए उनकी लगन और श्रमशीलता देखकर सहज ही मम्मान भावना मेरे मनमें जागी। मैंने जब कभी किसी भी जानकारीके लिए इनको लिखा था इनसे पृच्छा व्यक्त की तो इन्होने अविलम्ब उसका उत्तर दिया। मैंने उनको चलता-फिरता ज्ञानकोष मान लिया। यही नही सशोधन क्षेत्रमें कार्य करने वाले एव अन्य सम्बन्धित लोगोसे सम्बन्ध बनाए रखना और उनको ज्ञानवर्धनके लिए प्रेरित करते रहने का अखण्ड व्रत-सा उन्होने ले रखा है। पत्राचारके स्रोतेको वे अपनी ओरसे कभी सूखने नही देते और सम्बन्धोको ताजा बनाए रखते हैं। उनकी स्मरण शक्ति भी बडी विलक्षण है। महीनो बाद भी जब पत्र लिखते हैं तो पूर्व पत्रके प्रसग ज्योंके त्यो दोहरा देते हैं और विषय फिर अपनी मूल अवस्थामें हरा हो जाता है। उत्तर न देने अथवा विलम्ब हो जाने पर वे कभी बुरा नही मानते और ऊपरी सभी बातोको एक ओर रखकर विशुद्ध शैक्षणिक पक्षको अपनाते हुए सम्बोधित व्यक्तिको सत्साहित्यिक कार्य अथवा सशोधनके लिए सजग और प्रेरित करते रहते हैं।

श्री नाहटाजी व्यापारी होते हुए भी साहित्यसेवी हैं, धनी होते हुए भी निरभिमान हैं, आधुनिक ढगसे शिक्षा प्राप्त न होते हुए भी विद्वान् है, परस्पर विरोधी बहुविध कार्य व्यापृत रहते हुए भी विलक्षण स्मृतिशाली हैं, मितव्ययी होते हुए भी उदार है, स्वधर्मनिष्ठ होते हुए भी सर्वधर्मानुरागी है, कला और विद्याके अनन्य उपासक है।

अभय जैन ग्रन्थ-सग्रह और ग्रन्थमालाके मूलमें जो भावना श्री नाहटाजीकी रही है, वह सर्व विदित है। इस ग्रन्थ सग्रहकी विशेपता यह है कि अन्यत्र अनुपलब्ध अथवा कष्टेन उपलब्ध सामग्री यहाँ पर सहज ही प्राप्त हो जाती है। जहाँ भी जो कुछ जैसे भी प्राप्त हो, उसको सगृहीत कर लेना श्री नाहटाजीका व्रत है। 'सर्व संग्रह कर्तव्य ' क कालो फलदायक ' यही उनका मूल मन्त्र है, और सच भी है इनके द्वारा सग्रहीत सामग्रीका उपयोग होता ही रहता है। साथ ही, श्री नाहटाजीका कला-सग्रह भी इनकी परिष्कृत रुचिका परिचायक है। इसमें आलतू-फालतू वस्तुओको स्थान नही मिल पाता। रुचि और ज्ञानवर्धक सद्वस्तुए ही इसमें यथेष्ट रूपमें एकत्रित की गई हैं।

श्री नाहटाजीकी लेखन शैली स्वाभाविक और आडम्बर शून्य है। इनका विशुद्ध ज्ञान और तथ्यात्मक सूचनाएँ ही इनके लेखोंमें अवतरित होती हैं। ज्ञान पर गलेफ लगाना इनको रुचिकर नही है। हजारो लेख और शत-सख्या-चुम्बिनी इनके द्वारा सकलित, सम्पादित तथा लिखित पुस्तकें सशोधक-वर्गमें ही नही, चिन्तनशील पाठकोको भी उपकृत कर रही है। इनके विकसित व्यक्तित्वका उद्घोष कर रही है।

राजस्थानी भाषा और राष्ट्रभाषा हिन्दीके उन्नायक, एव समुद्धारकर्ता मनीषी नाहटाजी राजस्थानकी गौरवमयी विभूति हैं। इनका अभिनन्दन राजस्थान प्रदेशकी साहित्यिक समृद्धिके एक सद्न्यासकर्ताका अभिनन्दन है।

विद्याव्यासंगी श्री नाहटाजी

श्री दलसुख मालवणिया

श्री अगरचन्दजी नाहटा एक व्यापारी होते हुए भी साहित्य-सशोधनमें पूरा रस रख सकते है—यह व्यापारियोके लिए एक आदर्श उपस्थित करता है। केवल व्यापार नही किन्तु अन्य भी अपनी रुचिके विषयमें भी रस लेनेसे जीवनमे एकरूपता नही रहती, वह वैविध्यपूर्ण वन जाता है—जीवनमें रस रहता है।

श्री नाहटाजीने सस्कृत-प्राकृतका व्यवस्थित अभ्यास ही नही किया किन्तु 'पढता पडित होय' इस न्यायसे उनकी गति सस्कृत-प्राकृतमें भी हो गई है। यह उनके दृढ और निरतर अध्यवसायका परिणाम है।

श्री नाहटाजी शायद हिन्दी स्कूलमें भी बहुत नही पढे है किन्तु अनेक हिन्दी लेखकोको लेखकी सामग्री तो देते ही हैं। इसके अलावा कई पी-एच डी के छात्रोका अपूर्ण विषयमें मार्ग दर्शन करते हैं—यह भी उनके निरतर विद्याव्यासगका ही परिणाम है।

हिन्दीके कविओ—खास कर आदिकाल और मध्यकालके कविओके इतिहासके विषयमें तो वे एक विशेषज्ञ हो गए है। एक नामके कई कवि हो तो उनका विवेक कर देना—यह उनकी विशेषता है। जैन लेखकोके विषयमें तो उनका ज्ञान किसी भी पडितसे अधिक है—यह कहा जा सकता है।

श्री नाहटाजीने अनेक ग्रन्थोकी खोज की है किन्तु अनेक अज्ञात लेखकोका भी उद्धार किया है। हिन्दीकी और जैनोकी कोई भी पत्रिका देखें तो उसमें श्री नाहटाजीका लेख किसी नये तथ्य को प्रकाश देता है। न मालूम उन्होने अपने साठ वर्षकी आयुमें कितने लेख लिखे। उसकी गिनती शायद पूरी तरहसे वे नही जानते होगे।

वे जहाँ भी जाते हैं किसी नई हस्तप्रतिकी तलाशमें रहते है या अपनी किसी शकाका समाधान करनेके लिए हस्तप्रतिके भडारकी खोजमें रहते हैं। उन्होने स्वय अपना हस्तप्रति-भडार भी उतना वडा वना लिया है, जो किसी वडी सस्थासे टक्कर ले सकता है। अतिशयोक्तिके विना कहा सकता है कि वे व्यापारी होकर भी चलती-फिरती एक सस्था ही नही, अच्छे प्राध्यापक भी है।

उनकी कमाई कितनी है, कहा नही जा सकता किन्तु अच्छे व्यापारीके नाते कमाई ठीक-ठाक अच्छी होगी। किन्तु जीवनमें अति सादगी है और कही-कही तो अनावश्यक कुसाई वे करते है। वह इसलिए

नही कि पैसे अधिक जमा हो जाय किन्तु इसलिए कि उस बचतसे आवश्यक हस्तप्रति खरीदनेमें सुविधा रहे।

उनकी सज्जनता और अतिथि सत्कार वे जानते है, जिन्होने बीकानेरमें उनका घर देखा है। सब कार्य छोडकर वे अतिथिसत्कार करते हैं और बडे प्रेमसे अपना संग्रह दिखाते है।

विद्यारसिक होकर भी वे अपने जैनधर्मके क्रियाकाण्डोका भी उचित रूपमें पालन करते है। व्यवसाय फैला हुआ है फिर भी धर्म-गृहस्थ धर्मके नियमोका पालन मैंने उनमें देखा है। तीर्थयात्रा, मुनिदर्शन, रात्रि भोजन त्याग आदि ऐसे नियम हैं, जिनका पालन उनके लिए सहज हो गया है। आमतौरपर देखा यह जाता है कि जो विद्यारसिक हो जाता है वह बाह्य क्रियाकाण्डमें रस नहीं लेता किन्तु नाहटाजी तो व्यवसाय, विद्यारस और धर्मरस इन तीनोमें समानरूपसे दत्तचित्त हैं। उन्हीसे सुना है वर्षमें १।२ मास ही व्यवसाय सभालनेमे जाते है। बाकी १० मास अध्ययन सशोधनमें रत रहते है। एसे व्यक्ति विरल ही होंगे जो इस प्रकार की अपनी जीवन व्यवस्था बनाकर जीता हो।

श्री नाहटाजी शतायु हो और धर्म और समाजकी सेवा करते रहे यह शुभेच्छा।

●

ख्याति प्राप्त विद्वान्

श्री नन्दकुमार सोमानी

श्री अगरचन्द नाहटा राजस्थानके ख्यातिप्राप्त विद्वान् हैं। राजस्थानी भाषाके उत्थानके लिए आप निरन्तर प्रयत्नशील रहे हैं। राजस्थानके कई अज्ञात ग्रथोको ढूँढ निकालनेका आपने सतत प्रयत्न किया है एव अब भी करते आ रहे हैं।

यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि ऐसे प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तिको अभिनन्दन ग्रथ समर्पित किया जा रहा है। इनकी निरन्तर साहित्यिक साधनाको देखते हुये इनका पूर्ण राष्ट्रीय स्तरपर सम्मान किया जाना चाहिये। मैं अपनी ओरसे शुभ कामनायें भेजता हूँ।

●

सरस्वतीका सुयोग

श्री शिवलाल जैसलपुरा

बहुत वर्ष पूर्व मैंने श्री अगरचन्दजी नाहटाका नाम सुना था। आप, वर्षके कुछ भाग कलकत्तेमें रहकर व्यापार और शेष भाग अपने जन्म-स्थान बीकानेरमें रहकर साहित्योपासनामे व्यतीत करते हैं। मुझे जब यह ज्ञात हुआ तो मेरे हृदयमें आपके प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो गई।

आपने अनेक दुर्लभ एवं अप्राप्य हस्तलिखित ग्रन्थोका सग्रह किया है। प्राचीन एव अप्रकाशित

राजस्थानी काव्योंका संशोधन-सम्पादन किया है और शोध सम्बन्धी तो आपने हजारो ही लेख लिखे है, आपके प्रत्येक लेखमें मौलिकता दृष्टिगत होती है।

आप, वर्षोंसे बीकानेरकी शोध-सस्था भारतीय विद्यामदिर और सार्दूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूटके साथ जुडे हुए हैं। आपकी प्रेरणा एवं आपके मार्ग-दर्शन द्वारा इन सस्थाओने अब तक अनेक शोध-ग्रन्थ प्रकाशित किये है। गुजरात के और उत्तर भारतके विश्वविद्यालयोमें शोध-कार्य करनेवाले अनेक छात्रोको आप द्वारा मार्ग-दर्शनका लाभ मिला है।

प्राचीन-मध्यकालीन गुजराती साहित्यकी बहुत-सी हस्तलिखित प्रतियाँ राजस्थानमें सुरक्षित पडी है। गुजरातके विद्वानोको जब-जब इनकी आवश्यकता हुई तब-तब श्री नाहटाजीने उन-उन मूल प्रतियोको अथवा उन-उन की प्रतिलिपियोको उदारतापूर्वक भेजा है। इस प्रकारसे प्राचीन-मध्यकालीन गुजराती साहित्यके शोध-कार्यमें श्री नाहटाजीका विशेष महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। स्वय मुझे प्राचीन-मध्यकालीन बारहमासा सग्रह तैयार करते समय जब इससे सम्बन्धित साहित्यकी आवश्यकता हुई तो श्री नाहटाजीने उदारतापूर्वक मुझे सहायता कर अपने औदार्यका परिचय दिया।

श्री नाहटाजी केवल राजस्थानके ही नही अपितु समग्त भारतके एक महामना विद्वान् है, जो भारतमें अन्यत्र क्वचित् ही दृष्टिगोचर होते हैं। लगभग ३० वर्षसे आप द्वाराकी गई सतत साहित्य-सेवा विद्वानोके लिए प्रेरणादायक है। प्रभु, आपको स्वस्थ एव दीर्घायु बनावें।

•

धन्य नाहटाजी !

विद्याभूषण शतावधानी श्री धीरजलाल टोकर शी शाह

जैन-साहित्यके गहन ज्ञाता, समर्थ लेखक और उच्च कोटिके तत्वचिन्तकके रूपमें श्रीमान् अगरचन्दजी नाहटाने मेरे हृदयमें अत्यन्त आदरणीय स्थान प्राप्त कर लिया है।

सन् १९३१में अहमदाबाद, साहित्य-प्रवृत्तिका केन्द्र-स्थल बना हुआ था। वहाँ मैंने बाल ग्रन्थावलीके प्रकाशनोपरान्त 'जैन ज्योति' नामक एक सचित्र मासिक-पत्रके प्रकाशनका कार्य अपने हाथमें लिया था। उन दिनोमें ही श्री अगरचन्दजी नाहटाकी एक विद्वान् लेखकके रूपमें ख्याति मैं सुन चुका था। अत मैंने अपने मासिक-पत्रके १–२ अक आपको भेंट करते हुए आपसे अपने लेखोकी प्रसादी इस पत्रमें प्रकाशित करने हेतु भेजनेका निवेदन किया। इसके उत्तरमें मुझे आपकी ओरसे प्रोत्साहन-पूर्ण पत्र मिला और साथ ही दो लेख भी प्राप्त हुए। इतनी सरलतासे और ऐसे सद्भावसे एक विद्वान् अपने लेख भेज दे, यह मेरी कल्पनाके बाहरकी बात थी। इसीलिये श्री नाहटाजीके सौजन्य पर मेरे हृदयमें आपके प्रति अत्यन्त आदर उत्पन्न हो गया।

आपके लेख अत्यन्त व्यवस्थित एव विविध विषयोको भली प्रकारसे स्पर्श करते हुए थे। उनमें कही किसी प्रकारके सशोधनकी आवश्यकता नही थी। इससे मेरे हृदयमें आपकी विद्वत्ताके प्रति आदर उत्पन्न हुआ और वह दिनोदिन वृद्धिगत होता गया।

वादमें तो आपसे सम्पर्क साधनेकी जिज्ञासा जागृत हुई, जो अल्प समयमें ही सफल हो गई। सन् १९३२के मई मासमें मैं अपने एक मित्रके साथ ब्रह्म-देश, शामदेश और वहाँसे चीनकी सीमा पर प्रवास करनेकी भावना लेकर रवाना हुआ और कलकत्ता पहुँचा। यहाँ सर्वप्रथम श्री पूर्णचन्द्र नाहरसे मेरी मुलकात हुई। ये भी 'जैन ज्योति' मासिकमें प्रकाशनार्थ समय-समय पर अपने लेख भेजा करते थे। आपका ग्रन्थ-सग्रह अपूर्व माना जाता था। अत इसे देखनेकी जिज्ञासा होना स्वाभाविक ही था। तत्पश्चात् वहाँकी ४, जगमोहन मल्लिक स्ट्रीटमें स्थित 'नाहटा ब्रदर्स'की दुकानमे गया। वही पर श्री अगरचन्दजी नाहटा और आपके भतीजे श्री भँवरलालजी नाहटासे परिचय हुआ। इन दोनोकी सादगी, सरलता और जैन-साहित्यके प्रति अप्रतिम भक्ति देखकर मैं मुग्ध हो गया। मुझे यह जानकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि ६-७ दूकानोका काम-काज सँभालते हुए भी आप इतना विद्या-व्यासग प्राप्त कर सके और इसीमे मस्त रहते है।

इसके कुछ वर्ष पश्चात् मैं आपसे बीकानेरमें भी मिला। आपने यहाँ मुझे अपना निजी अभय जैन पुस्तकालय दिखाया, जिसमें अगणित जैन-धर्म ग्रन्थोके अतिरिक्त हस्तलिखित पुस्तकोका एक अच्छा-सा सग्रह था। साथही पुरातत्वसे सम्बन्धित कुछ वस्तुएँ भी इसमें सग्रहीत थी। आप मुझे अपने साथ लेकर नगरमें स्थित अन्य ग्रन्थ-भण्डार एव राज्य द्वारा संचालित पुस्तकालय दिखाने हेतु रवाना हो गये।

आपके साथ बैठकर भोजन करते हुए मैं यह जान सका कि आप अत्यन्त सादा एव सात्विक आहार लिया करते हैं। आपके द्वारा प्रेमपूर्वक खिलाई गई बाजरीकी रोटी और घरकी गायका दही अभी भी मेरे स्मृतिपटलपर ज्योका त्यो विद्यमान है। मुझे आपके साथ समय-समयपर भोजन करनेके अन्य अवसर भी प्राप्त हुए है। इससे मैं यह जान सका कि आप पर्व-तिथियोके दिन हरे शाक आदिका त्याग करते है। इतना ही नही इसके उपरान्त अन्य भी कई नियमोका आप पालन करते रहते है।

आपने अद्यावधि कितने लेख लिखे होगे? यह बताना कठिन है। गुजराती, हिन्दी आदिके समाचार-पत्रोमें समय-समयपर आपके लेख प्रकाशित होते रहते है और उनमें विषयोकी विविधता भी दृष्टिगोचर होती रहती है। ग्रन्थ-निर्माणके क्षेत्रमें भी आपका योग बहुत सुन्दर है। इनमें खरतरगच्छके आचार्यवर्ग एवं इसके साहित्यके सम्बन्धमें आपने काफी लिखा है। इससे कुछ लोगोकी यह धारणा बन गई है कि आपका झुकाव खतरगच्छकी ओर विशेष है। किन्तु, ऐसी धारणा बना लेना एक गम्भीर भूल होगी। आपने कभी भी साम्प्रदायिक व्यामोह व्यक्त नही किया है। इतना ही नही अपितु प्रसग-प्रसंगपर आपने अपने उदार-विचार व्यक्त कर समस्त जैन-समाजमे सगठन एव ऐक्यका समर्थन किया है।

मेरे विचारसे वर्तमान जैन समाजमें ऐसा एक भी लेखक नही कि जो अपने लेखों द्वारा विविधिता एव सख्यामे आपकी समता कर सके।

कुछ वर्ष पूर्व मेरे विचारमे आया कि श्रीमान् नाहटाजी द्वारा की गई साहित्यिक-सेवाका सार्वजनिक रूपमे अभिनन्दन किया जाय और ऐसा हुआ भी। भारतके सुप्रसिद्ध बम्बई नगरमें इसी वर्ष श्रीमानतुगसूरि सारस्वत समारोहमें विश्वविद्यालय अनुदान कमीशनके चेयरमैन पद्मभूषण डॉ० दौलतसिंह कोठारीके द्वारा सम्मानित होनेवाले विद्वानोमें आपको अग्र स्थान दिया गया था।

तत्पश्चात् अल्प समयमें ही आपका सार्वजनिक सम्मान करनेका आयोजन किया गया। मुझे इससे अत्यन्त प्रसन्नता हुई है। जिस महापुरुषने अपने जीवनका इस प्रकारसे सदुपयोग कर भावी प्रजाके लिए एक उत्तम आदर्श प्रस्तुत किया है, उसके लिए मैं मात्र इतने ही शब्द कहूँगा कि 'धन्य नाहटाजी!'

●

विरल साहित्यिक श्री नाहटाजी

पिंगलशी मेघाणन्द गढवी

देश-विदेशके ऐतिहासिक पृष्ठो पर अनेक चित्र उभरे और नष्ट हो गये। अनेक प्रकारकी सस्कृतियोका सृजन हुआ और वे नष्ट हो गई। फिर भी भारतवर्षमे वैदिक-कालसे लेकर आज तक भारतीय जनताने देश-रक्षाके कार्यमें अपना अद्भुत पराक्रम दिखाते हुए सस्कृतिकी गौरव-वृद्धि की और उत्साहको बनाये रखकर विश्वमें यश प्राप्त किया। हमारे देशमें ऐतिहासिक विद्वान् एव साहित्य-सशोधकोंने इस कार्यमे जो सहयोग दिया, वह सामान्य नही है।

यदि हमारे देशके इतिहासविद् पण्डितोने इस प्रकारके साहित्यकी भेंट जनताको नही दी होती तो हमारे पास केवल उन यश पुज विद्वानोके नाममात्र ही शेष रहते।

प्राचीन भारतीय इतिहास और सस्कृति-सशोधन क्षेत्रमें अवर्णनीय सहयोग देनेवालोमें साहित्यिक-सशोधकके रूपमें बीकानेर निवासी श्री अगरचन्द नाहटाजीका नाम सुप्रसिद्ध है। आप सस्कृत-साहित्य, लोक-साहित्यके पूर्ण ज्ञाता होनेके साथ-साथ चारणी-साहित्यके भी उतने ही उपासक एव ज्ञाता है। आपने चारणी-साहित्यके कतिपय विवादास्पद प्रश्नोको हल करनेमें निर्णयात्मक प्रमाण प्रस्तुत कर अपनी प्रकाण्ड विद्वत्ताका परिचय दिया है।

आपसे मैं जितना दूर रहता हूँ, उतना ही आपकी प्रवृत्तिके समीप रह रहा हूँ। आपके साहित्य-व्यवसायका सौरभ राजस्थानकी सीमाओका उल्लघन कर कच्छ, सौराष्ट्र और गुजरातके साहित्योपासकोके घर-घर पहुँच गई है।

किसी भी साहित्यकारको किसी सन्त, कवि, भक्त, दाता, वीर-पुरुष किम्बा किसी साम्प्रदायिक जानकारीकी आवश्यकता होनेपर वह श्री नाहटाजीसे पत्र-व्यवहार प्रारम्भ करता है और पूछी गई जानकारी श्री नाहटाजी द्वारा पूर्ण हो जाती है। अत हम नि सकोच यह कह सकते है कि नाहटाजी अब व्यक्ति नही अपितु साहित्यकी एक जीवित-सस्था ही बन गये है।

नाहटाजीने इतिहासके साथ-साथ काव्य-शास्त्रमें विद्यमान ऐतिहासिक प्रमाण, उल्लेख, प्रकार, भाव, अनुभाव आदि विषयोपर समाचारपत्रोमें लेखो द्वारा एव ग्रन्थ-प्रकाशन द्वारा हमारी लूटी जा रही लोक-कथाओ, लोक-गीतो, चारणी-साहित्य और इसी प्रकारसे कण्ठस्थ साहित्यको, पुनर्जीवन प्रदान किया है।

आपने वाजिविनोद, कथारत्नाकर और जैन मुनिके प्रबन्ध-सग्रह ग्रन्थ एव कतिपय हस्तलिखित ग्रन्थोका अध्ययन तथा सशोधन कर नष्ट होते हुए साहित्यको बचा लेनेकी प्रशसनीय सेवा की है।

आपका कथन है कि साहित्य-क्षेत्रमें राजस्थान, कच्छ, गुजरात, सौराष्ट्र प्रदेशोके मध्य बहुत ही समानता और सास्कृतिक ऐक्य प्रवर्तित है। सौराष्ट्र और कच्छकी ऐतिहासिक वार्तायें एव लोक-कथायें और चारणी-साहित्य, राजस्थानमें प्रचुर मात्रामे उपलब्ध होता है।

आपके उपर्युक्त मन्तव्य परसे यह समझ सकते है कि नाहटाजीकी साहित्यिक सूझबूझ मात्र राजस्थान तक ही सीमित नही, अपितु कच्छ, सौराष्ट्र, गुजरात एव उत्तर भारत तक प्रसरित है।

ऐसे बहुश्रुत, इतिहास-रत्न, श्रेष्ठिवर, विद्यावारिधि श्री अगरचन्दजी नाहटाका सम्मान, भारतीय सस्कृतिको स्वस्थ, सुरक्षित बनाये रखनेके लिये जडी-बूटीके समान सिद्ध होगा।

नवोदित लेखकवर्ग और श्री नाहटाजी

श्री पार्श्व

श्री अगरचन्दजी नाहटाके व्यक्तित्वका सृजन मुख्यतया पांच प्रकारसे हुआ है। पडित, संशोधक, विवेचक, संग्राहक और व्यावहारिक रूपमें। किन्तु मैं इनमें एक अन्य प्रकारको भी सम्मिलित करना चाहता हूँ। वह है 'मार्ग-दर्शक'। आपके पाण्डित्य, पर्येपणा, बहुश्रुतत्त्व, सग्रहनिष्ठा एव व्यापारपटुताके सम्बन्धमें ज्ञातावर्ग अपनी-अपनी ओर से इस अभिनन्दन ग्रन्थमें प्रकाश डालेंगे और आपके अपरिमित विद्या-व्यासगकी यथास्थित प्रशस्ति करेंगे ही। मुझे तो मात्र एक नवोदित लेखकके रूपमें आपके व्यक्तित्वके छठे प्रकारका मूल्याकन करना उचित प्रतीत होता है।

आपके लेख एव पुस्तको द्वारा लगभग १८ वर्षकी आयुमें मैंने जब अपने विचार व्यक्त करने और अपने आपको 'लेखक' मान लिया, तभी से आपका अप्रत्यक्ष परिचय मुझे प्राप्त हो गया। किन्तु उस समय मेरे मस्तिष्कमें भाषाका भूत सवार था। उच्च अलकारयुक्त भाषा ही उत्तम पुस्तकें लिखने हेतु पर्याप्त है यह मेरी उन दिनोकी मान्यता थी। और इसी ही धुनमें 'श्री आर्यरक्षितसूरि' 'श्री जयसिहसूरि', 'श्री कल्याण सागरसूरि' आदिके जीवन चरित्र लिखता गया। किन्तु मात्र भाषाके प्रवाहसे ही साहित्य-सागरको पार कर लेना मुझे अशक्य प्रतीत हुआ। जैसे-जैसे इस दिशामें अग्रसर होता गया वैसे-वैसे मुझे अपनी मर्यादाओका ज्ञान होता गया। श्री नाहटाजीने भी खरतरगच्छके युगप्रधान आचार्योके जीवनचरित्र सम्बन्धी प्रमाणभूत पुस्तकें लिखी है। उनके साथ मेरी उपर्युक्त पुस्तकोकी तुलना करनेपर मुझे अपनेमे सशोधन-वृत्तिकी न्यूनता स्पष्ट अनुभवमें आई। प्रमाणोपेत ग्रन्थोके सृजनमें सुप्रयुक्त भाषाके उपरान्त अन्वेषण-शक्तिको भी क्रिया-शील करना चाहिये, तबसे मैं ऐसा मानने लगा।

अब मैं सक्रिय रूपसे इस दिशामें विचार करने लग गया। तिसपर भी मेरे बाल मानसमें एक नवीन रहस्यका प्रादुर्भाव हुआ कि ऐतिहासिक प्रमाणोकी अनुपस्थितिमें अपनी अन्वेषणात्मक शैलीकी योजना कैसे की जा सकती है? सशोधन-कला एव प्रमाणोकी उपलब्धि परस्परावलम्बी होती हैं। प्रमाणोको उद्धृत करना किम्वा निर्देश करना बिना सशोधन-कलाके प्राकट्यके प्राय अपूर्ण रह जाते हैं। इसी प्रकारसे सशोध-नात्मक प्रयास बिना प्रमाणोकी खोज अशक्यवत् ही प्रतीत होती है। श्री नाहटाजी तो प्रमाणोकी एक लम्बी सख्या सम्मुख रख कर अपने मन्तव्यका प्रतिपादन करते है। आपकी लेखन-शैलीमें विवरणात्मक विचारोका अतिरेक दृष्टिगत नही होता। मैं इस शैलीसे प्रभावित हुआ। किन्तु, आपने ऐतिहासिक प्रमाणोका खजाना कहाँसे हस्तगत कर लिया? मेरे मनमें यह प्रश्न स्वाभाविक रूपसे उत्पन्न हो गया। अत आपके साथ पत्र-व्यवहार करने हेतु प्रेरित हुआ।

आप जैसे लब्ध-प्रतिष्ठ लेखक, मुझ जैसे बने हुए लेखककी ओर ध्यान देंगे भी? यह प्रश्न मेरे सम्मुख हिचकिचाहट उत्पन्न कर रहा था। किन्तु, मेरी जिज्ञासाने इस द्विविधापर विजय प्राप्त कर ली और आपको भेजने हेतु एक पत्र लिख ही दिया। इस पत्रमे मैंने अपनी ओरसे मेरी लगन एव ध्येयका वर्णन कर उत्साह-जनक वर्णन करते हुए आपसे मार्ग-दर्शनकी प्रार्थना की। बादमें मुझे स्मरण हुआ कि राज-स्थान निवासी होनेके कारण आपको जो पत्र भेजा जाय वह हिन्दीमें लिखा हुआ हो तो उत्तम रहे। अत. मैंने अपने एक हिन्दी भाषी मित्रसे उसका हिन्दी अनुवाद करवा कर आपको भेजा, जिसके साथ उत्तर प्राप्त करने हेतु एक लिफाफा भी भेजा था। आपको उत्तर देनेका स्मरण बना रहे, इस आशयसे ही। मैं आपकी ओरसे उत्तरकी प्रतीक्षा करता रहा।

मुझे आपकी ओरसे लौटती डाकसे उत्तर मिल गया। उसमें आपने मेरी प्रवृत्तिकी सराहना की और अपनी ओरसे यथाशक्य सहायता देनेका भी विश्वास दिखाया। पत्र पढकर मेरे आनन्दका पारावार नही रहा। अतः आपकी ओरसे भेजे गये इस प्रेरणा-सदेशने मेरे उत्साहमें वृद्धि कर दी।

मैंने दो-तीन पत्र हिन्दी अनुवाद करवाकर आपको भेजे। बादमें आपने मेरी इस कठिनाईको जानकर मुझे गुजरातीमें ही पत्र लिखनेकी सूचना भेजी। तबसे मैं अपने पत्र गुजरातीमें लिखता रहा और आप हिन्दी में। आपके अक्षर सुवाच्य न होनेके कारण मैंने आपके सम्मुख अपनी कठिनाई निवेदन की। अर्थात् आप अपने पत्र किसी औरसे लिखवाकर या टाइप कराकर भेजते रहें। इस प्रकारसे हम दोनोके मध्य पत्रोका आदान-प्रदान चलता रहा।

मेरे हृदय पर आपके बहुश्रुतत्वकी छाप तो पहलेसे ही थी किन्तु, नवोदित लेखकोको प्रोत्साहित करनेकी आपकी वृत्तिने मेरे कोमल-मानस पर एक गहरी छाप अकित कर दी, वह भी ऐसी कि कदापि विस्मृत न हो सके। आपहीने मेरी लेखन-प्रवृत्तिको गतिशील बनाया। मुझे ऐसा प्रतीत होने लगा कि जैसे नवीन-युगमें मेरा यश प्रवेश हो रहा है।

आपके साथ सतत पत्र-सम्पर्कसे उत्कीर्ण लेख, ग्रन्थ-प्रशस्तियें, प्रति-पुष्पिकायें आदि आदि साहित्यके विशेष अध्ययनकी मुझे विशेप प्रेरणा मिली। इसीके कारण मुझमें ऐतिहासिक रासो, प्रबन्ध, पट्टावलियो आदि आदिकी प्रतिलिपियें सगृहीत करनेकी लगन उत्पन्न हुई। मुझे आपके पाससे अभिनव पाठ (पठन-सामग्री) प्राप्त होती रहती थी। अब मेरी लेखन-शैलीको नवीन मोड प्राप्त हुआ और 'अचलगच्छीय लेख-सग्रह' के नामसे उत्कीर्ण लेखोका मेरा प्रथम सग्रह प्रकाशित हुआ। इसमें आपने अपनी ओरसे 'किंचित् वक्तव्य' लिखकर मुझे प्रोत्साहित किया। आप, मेरी त्रुटियोकी ओर सकेत करनेसे भी नही चूके।

इस प्रकारसे आप सुप्रसिद्ध प्रखर विद्वानोकी भ्रान्तियें, त्रुटियें, स्खलन आदिका सशोधन करनेमें नही हिचकिचाते थे। कभी-कभी तो ऐसा भी प्रसग आ जाता कि कोई विद्वान् अपने लेख पर आपकी ओरसे आलोचना किये जानेपर क्षुब्ध होकर स्पष्टीकरण भी प्रकट करने हेतु बाध्य हो जाता था। तब श्री नाहटाजी अपनी ओरसे प्रमाण प्रस्तुत करते हुए अपने विचार व्यक्त करते। इस प्रकारसे पक्ष-विपक्षके मध्य अपनी अपनी विद्वत्ताके तीक्ष्ण तीर छूटते रहते। इतना होनेपर भी आपके मनमें किसी भी प्रकारकी कटुता दृष्टिगत नही होती। आप अनेको पत्रोमें लिखते ही रहते हैं। आप चाहें जिस विषय पर लेख लिखें, उनमें प्रसगोपान्त चल रही साहित्य-प्रवृत्तिका ध्यान भी आकर्पित करते रहते हैं, जिनमें आपकी ओरसे प्रोत्साहन-भाव भी व्यक्त होता रहता है। नवोदित लेखकोके लिए आपकी ओरसे इस प्रकारका उल्लेख कितना अधिक उत्साह-वर्द्धक होता है, इसका अनुभव स्वय मुझे भी हुआ है। मेरी साहित्य-प्रवृत्तिके सम्बन्धमें आपने 'बिहार राष्ट्र भाषा परिषद्' पटनाके अकमें ऐसा ही उल्लेख किया है। उसकी एक प्रति आपने मुझे भेजी। आपके समान बडे आदमी मेरे जैसे बालककी पीठको इस प्रकारसे थपथपा दें, तब किसका सीना गज-गज भर न फूलेगा? इस प्रकारसे आपने मुझमें आत्म-विश्वासका सचार कर दिया। ऐसे असख्य-दृष्टान्त बताये जा सकते हैं कि श्री नाहटाजीका नवोदित लेखकोके प्रति कितना वात्सल्यभाव है, जो ऐसे प्रसगोसे विदित हो जाता है।

'अचलगच्छदिग्दर्शन' के समान गूढ ग्रन्थ लिखनेका श्रेय सद्गत आचार्य श्री नेमसागरसूरिजीने मुझपर डाला, तब मुझे अत्यन्त कठिनाईका सामना करना पडा था। यद्यपि यह रचना मेरी महत्वाकाक्षाओकी पूर्ति करने योग्य थी तथापि उत्तरदायित्वका भार अत्यधिक ही था। श्री नाहटाके समर्थ मार्ग-दर्शनके अधीन मैंने स्थिरतापूर्वक लेखनी अपने हाथमें ली और विश्वासपूर्वक लिखता गया। इस अवधिमें मेरा और आप (श्री नाहटाजी) के मध्य पत्रोको आदान-प्रदान शृखलाबद्ध चलता रहा। जो-जो मेरे उपयुक्त था, उन-उनको

आपने नि स्पृह-भावसे मुझे प्रदान किया। यदि मुझे आपकी ओरसे मार्ग-दर्शन प्राप्त न होता तो यह कहना मेरे लिये अशक्य है कि तब क्या होता है ? प्रस्तुत ग्रन्थ द्वारा मेरी विद्वत्समाजमें ख्याति हो गई। इसका श्रेय श्री नाहटाजीको ही है, इसमें किसी भी प्रकारकी अतिशयोक्ति नही है। आप द्वारा प्रेषित साहित्य-सामग्रीके आधारपर ही तो मैं विद्वत्मण्डलीमें खडे रहने योग्य बन सका।

उक्त ग्रन्थके लेखनमें पूरे पाँच वर्ष व्यतीत हो गये। इसके प्रकाशक श्री मुलुण्ड अचलगच्छ जैनसघ, बम्बई द्वारा मुझे ताकीद करनेका प्रोत्साहन मिलता रहा। इस ग्रन्थके प्रेरक श्री सूरिजीका स्वास्थ्य बिगडने लग गया था। अत ताकीद (शीघ्रता) करनेका अर्थ मैं समझ चुका था। यदि मुझे कल्पनाके घोडे दौडाने ही होते तो मैं इसे कभीका पूर्ण कर देता और यह ग्रन्थ सम्पूर्ण हो जाता। किन्तु, यहाँ तो परिस्थिति ही दूसरी थी। दुर्भाग्यसे ग्रन्थ समाप्त होनेसे पूर्व ही वे दिवगत हो गये। अगले वर्ष उत्साहपूर्वक ग्रन्थका अनावरण हुआ जो मेरे जीवनकी धन्य-घडी थी। ग्रन्थ-प्रेरक आचार्यश्री अब नही रहे, यह शोक भी विस्मृत कर देने योग्य नही था। उनका वर्षों पुराना स्वप्न साकार हो, उससे पूर्व ही वे हममेंसे चले गये। इसमें मेरी निष्फलता का सकेत मिलता है। मुझे अपनी स्थितिको स्पष्ट करनेका प्रयास इस ग्रन्थकी प्रस्तावनामें करना पडेगा, अत इसे टालने हेतु अपनी ओरसे प्रस्तावना तक नही लिखी। इस अभावके साथ-साथ श्री नाहटाजी सहित अनेक विद्वानोंने मुझे कितनी और किस प्रकारकी साहित्य-सहायता दी है, इसका अपेक्षित वर्णन बिना लिखे ही रह गया।

तत्पश्चात् मुझे श्री नाहटाजीसे सर्वप्रथम साक्षात्कार करनेका अवसर पालीतानामें मिला। यह मेरे मार्ग-दर्शनके प्रति मुझे अपनी ओरसे पूज्य भाव व्यक्त करनेका स्वर्णावसर था। आपने इस अवसर पर मुझे विशेष जानकारी प्रदान की। परस्पर अनेको विषयोपर चर्चा हुई। रात्रिमें आपकी और सद्गत मुनि कान्तिसागरजीके मध्य हुई विद्वत्तापूर्ण चर्चा सुननेका आनन्द भी मुझे प्राप्त हुआ। इस प्रकारसे रात्रिके १२ बजे तक दोनों प्रकाण्ड विद्वानोके मध्य चल रही ज्ञान-गोष्ठियोको मैं एकाग्रचित्तसे सुनता रहा था, यह मुझे अद्यावधि स्मरण है। यह था मेरे और आपके मध्य हुए प्रथम साक्षात्कारका प्रसंग। तदनन्तर मुझे आपसे मिलनेका कोई अवसर ही नही मिला।

मुझपर आपकी इतनी गहरी छाप पडी कि मुझे विविध स्थानोकी यात्रा कर वहाँके ऐतिहासिक प्रमाणोको एकत्रित करनेकी मेरी इच्छा जागृत हुई। आपकी ओरसे इस दिशामें मुझे सूचित किया गया जो मुझे अत्यन्त पसन्द आया। तदनुसार मैंने प्रति वर्ष नवीन-नवीन प्रदेशोमें जा-जाकर खोज (शोध) हेतु प्रवास करनेकी योजना बनाई। मैंने जहाँ जहाँ से उपलब्ध हुई उस महत्वपूर्ण साहित्य-सामग्रीको एकत्रित की। उसके आधारपर मैंने 'ज्ञातिशिरोमणि' 'अचलगच्छीय प्रतिष्ठा-लेख' 'गुर्जरदेशाध्यक्ष सुन्दरदास राजा विक्रमादित्य कौन था ?' आदि आदि पुस्तकें लिखी जो प्रकाशित होती गयी। अल्प समयमें ही 'अचलगच्छीय रास संग्रह' नामक ऐतिहासिक रासोका एक बृहद् सग्रह भी प्रस्तुत किया जायगा। जिसमें श्री नाहटाजी द्वारा प्रेषित साहित्य-सामग्री भी होगी।

अचलगच्छ द्वारा जैन-शासनको दी गई अमूल्य भेंटकी विवरण-सूची सामान्यतया लम्बी है, जिसके लिए समस्त लोग गौरव-लाभ प्राप्त कर सकते हैं। किन्तु अचलगच्छका प्रभाव वर्तमानमें लुप्त-सा होते हुए, उसके साहित्यके प्रति भी हमारी उपेक्षावृत्तिका जागृत होना, मनपर प्रभाव डालता है। गच्छ अभिनिवेषने भी इसमें सहयोग दिया होगा। यहाँ एतद्विषयक चर्चा अप्रस्तुत है। श्री नाहटाजी इस प्रकारकी सकीर्ण-वृत्तियोके भोग कही भी नही बने, यह स्पष्ट है। इस प्रकारके साक्षात्कारका अपने अनुभव में मुझे कही भी अवसर नही मिला। जिस प्रकार वर्तमान लेखक 'वाडाबन्दी' (पक्षपात) से कभी मुक्त नही रह सकते, ऐसे

समयमें, श्री नाहटाजी मुक्त-मानससे सभीके साथ हिल-मिल जाते हैं और सर्वत्र अपने स्नेह एव सद्भावनाका प्रसार करते रहते हैं आपकी इस प्रकारकी सम-दर्शिता एव सहृदयताकी सौरभ आपके लेखो द्वारा सर्वत्र प्रसारित होती हैं। यही कारण है कि अपने समाजकी आप एक बहुमूल्य-निधि माने जा सकेंगे, ऐसी मेरी धारणा है।

श्री नाहटाजी अतिम दोनो पीढियोको (युवक-समाज एव भावी युवकोंको) अपनी ओरसे सतत ज्ञान-लाभ प्रदान करते रहते हैं, जो अद्यावधि चालू ही है। शोधकर्ता अपने द्वारा उपार्जित कष्ट-साध्य अन्वेषणके फलको अन्तमें अन्यको प्रदान कर स्वय कृतकृत्यताका अनुभव करे, इस प्रकारके विरले व्यक्तियोमें आगम प्रभाकर मुनि पुण्यविजयजीके कालधर्म प्राप्त कर लेनेके अनन्तर वर्तमानमें कदाचित् एक मात्र श्री नाहटाजी ही अग्रगण्य सशोधक होगे, यह सगौरव कहा जा सकता है। आपके बहुरगी व्यक्तित्वको आपकी ध्यानाकर्षक विशिष्टता ही मानी जा सकती है।

आपकी लेखनी न्याग्रा-प्रपातके समान गतिशील प्रवाह और कही भी समाप्त न होनेवाली स्याही मानो अक्षरोकी पक्तियो द्वारा अविश्रान्त रही हो और आपके ज्ञान-वर्द्धक पत्र, लेख, ग्रन्थ आदि वर्तमान पत्रोकी गतिसे समस्त देशमें प्रसारित हो रहे हैं। मेरे जैसे कई नवोदित लेखक, सशोधक एव ज्ञानार्थीवर्ग श्री नाहटाजीके कर्मठ ज्ञान-यज्ञके विश्वविद्यालयके द्वारा खटखटाते होगे। किन्तु, कुलपतिके रूपमें वयोवृद्ध—ज्ञानवृद्ध आप सभीका सस्मित स्वागत करते हैं और अपने ज्ञानकी अमूल्य झोलीको निस्पृहभावसे सभीके समक्ष उडेल देते है। मन ही मन यह कह कर "पुत्रात् शिष्यात् पराजयम्।" अपनी लेखनी को विश्राम देता हूँ।



आदरणीय नाहटाजी

श्री पुष्कर चन्दरवाकर

यह कहना कठिन है कि हम दोनोंके मध्य कब, किस प्रश्न या किस मुद्दे पर प्रथम पत्र-व्यवहार प्रारम्भ हुआ ? मेरे पास तो इस हेतु वर्तमानमें है केवल एक मात्र विस्मृति।

अलबत्ता इतना याद है कि जब मैं पढारमेंसे लोकगीत प्राप्त कर रहा था, उस समय नल सरोवर परके गाँवोमें विचरण कर रहा था। उनमें के शियाल गाँवमें गया तो वहाँ स्व० पढार भक्त छगन पढारसे मिला। वयोवृद्ध, अशक्त, अपग और अकिंचन। जिनकी आँखोका तेज नष्ट हो चुका हो, डाढी पर बाल उग आये हो, आँखकी पुतलियोके आस-पास मात्र लालिमाकी झलक हो, शिरपर चीर-चीर हुआ—फटा हुआ—और चीथियें निकल रहा एक वस्त्र हो, शरीरपर पहना हुआ वस्त्र ऐसा कि उसकी बाहें ही नदारद, कमरपरसे एक मैली-कुचैली धोती पहने हुए हो, नाकमेंसे स्राव बहता हो और आँखोंमेंसे अश्रु-धारा प्रवाहित होती हो, शरीरमें से दुर्गन्ध आती हो। ऐसे पढार भक्त और भजनीक, जिनकी कोई भी खबर लेनेवाला नही था। मैं, उनसे मिला तो उन्होने मुझे अनेक भजन लिखाये और साथ ही लिखाया रूपादेका रासडा।

मैंने इस रासको जब 'बुद्धिप्रकाश'में प्रकाशित कराया, तब मुझे श्री नाहटाजीका पत्र मिला और साथमें मिली एक प्रति 'रूपादे री वेल', ऐसा मुझे स्मरण है।

श्री नाहटाजीकी ओरसे उक्त लेख प्राप्त होनेके पश्चात् मैंने तुलनात्मक दृष्टिसे उस रासडेका सपादन किया और रूपादेकी गहराईमें उतरनेका अवसर भी श्री नाहटाजीने ही दिया। तत्पश्चात् गुजरातकी लोक-जिह्वा पर चढे हुए रूपादेके भजन एव पद हैं या नही, इसकी खोज अपने हाथमें लेनेका मुझे स्मरण है।

इसके वाद पडदा गिरा! वरसके वरस व्यतीत हो गये। मानो सम्पर्क ही टूट गया हो। पत्र-व्यवहार वन्द हो गया था। फिर भी विस्मृत नही हुए थे।

आदरणीय श्री नाहटाजीको जब कभी गुजरातका कोई मिलता तो आप उससे पूछते कि 'चन्दर-वाकरजी क्या करते हैं? लोक-गीत किम्वा लोक-वार्ताओका सम्पादन करते हैं?'

मेरे एक मित्रने श्री नाहटाजीको उत्तर दिया कि "इन दिनोमें तो उनकी कहानियाँ ही प्रसिद्ध हो रही है।"

"आप उन्हें मेरे नामसे कहें कि लोक-साहित्य एकत्रित करना चालू रखें। करने योग्य कार्य यही है।"

श्री नाहटाजीका मुझे उपर्युक्त सन्देश प्राप्त हुआ। किन्तु वास्तवमें तो मैं वहाँ कहानियाँ लिखने हेतु ही लोक-साहित्यका चयन करने गया था। वहाँ नमाज पढते हुए मुझसे मस्जिद ही चिपट गई। मेरे लेखनसे मुझे ऐसा प्रतीत होने लगा। एकाकी लिखना तो लगभग छूट ही गया था। लघु-वार्तायें लिखी जा रही है किन्तु, निरूपण स्वरूप ताजगी प्राप्त नही हुई। ऐसा मुझे क्षोभ एव असन्तोष रहता है। कहानियाँ लिखी जा रही है किन्तु, लोक-जीवनकी—लोक-साहित्यके सग्रह हेतु मैं भटक रहा हूँ। आवूसे दमण गगा तक! और द्वारिकासे दाहोद तक! अनेक मानवीयोसे मिलना होता है। उनमें व्यापारी, कारखानेवाले, कृपक लोग, खेतिहर लोग, शिक्षक, सरकारी तन्त्रके अधिकारीवर्ग, सम्पादक वर्ग, सम्वाददाता लोग, मजदूर लोग, चोर एव वावू लोग और स्त्री-समाजमेंसे भी अनेकानेक! ये लोग मुझमें सतत चेतना जागृत कर मुझे हैरान—परेशान करते रहते हैं। मुझसे यह राम-कहानी अपने स्नेही एव हितेच्छु श्री नाहटाजीसे नही कही जाती और न मुझसे सही भी जाती।

लोक-साहित्यके कार्यार्थ आज मैं सौराष्ट्र विश्वविद्यालयमें जा बैठा हूँ। किन्तु, फिर भी चारणी-साहित्यकी हस्तलिखित प्रतियोके मध्य स्थानीय ऐतिहासिक-सामग्रीके ढेरके मध्य पशु-पालकोंकी डाँणियोके इहवृत्तके मध्य अमेरिकी अध्यापकके साथ स्व० मेघाणीकी कर्म-भूमिमें भटकते-भटकते शिरपर Folklore of Gujarat की तलवार लटक रही है। तिसपर भी क्षेत्र सशोधनके कार्य हेतु भटकते समय मिल गये दरवारश्री सातामाई खाचर, सुरिंग मामा जैसे पात्र। ये न तो कही विश्राम लेने देते हैं और न ही 'अगद-विष्टि" का सम्पादन-कार्य पूर्ण करने देते हैं।

फिर भी माननीय श्री नाहटाजीकी ओरसे पेपित शुभेच्छा-पूर्ण वाणी मेरे कानोमें गूँजती ही रहती है कि, "लोक-साहित्यकी खोजमें अपना समय लगाओ।"

वयोवृद्ध परिजनवत् है, मतविचार—"सेवी है, गुणी-जन हैं, विद्वान है, सारशोधक सशोधक हैं साहित्यके—लोक साहित्यके और धर्मशास्त्रके।

तव आप मुझे मिले नही थे। फिर भी मैंने इन्हें पत्र लिखनेका साहस कर लिया कि, "चन्दर ऊगे-चालवू" नामक गीत कथायें Ballads सग्रह प्रकाशित हो रहा है। अत आप इसकी प्रस्तावना लिख भेजें।"

आपकी ओरसे मुझे तुरन्त ही उत्तर प्राप्त हुआ कि "अवश्य"।

उग उमंग, उस साहस और उस आकाक्षाको मनके गहवरमें ही रखना पडा क्योकि, प्रकाशन सस्था चाहती थी कि ग्रन्थ दस-वारह दिनोमें ही वाजारमें आ जाय। मै उन दिनोमें गाँधी जन्मभूमिमें था और

वहींसे दौडकर अहमदावाद पहुचा। दिनभर कार्यालयमें बैठकर छपे हुए पृष्ठोका प्रूफ देख-देखकर शीघ्र ही उन्हे छाप देने हेतु देता रहा। परिणामस्वरूप यह पुस्तक एक पारिवारिक समान वयोवृद्ध, सन्मित्र, ज्ञानवान, सशोधक एव पीठ पण्डितकी प्रस्तावनाके बिना ही मुद्रित हो गई।

श्री नाहटाजी उदार निकले और मैं कैसा? इसपर विचार करते ही कमकमाटी छूट पडती है। वे दानश्री निकले और मै नादान! वे बरस गये किन्तु मैं उस वर्षाको झेल नही सका! 'चन्दर उग्यू चालवु' उनकी विना प्रस्तावनाके ही प्रकाशित कर दिया गया। किन्तु मुझपर उन (श्री नाहटाजी)का एक बहुत बडा ऋण कि यह ग्रन्थ आपको अर्पण न करनेसे मुझे थकावट एव उत्साहहीनता प्रतीत होने लगी।

इस घटनाके बाद भी हमारे मध्य पत्र-व्यवहार चलता ही रहा। आपके हस्ताक्षर 'अति सुवाच्य' होनेके कारण एकाध बार मुझे स्पष्ट रूपसे लिख देना पडा कि आप तो दुस्तर नही किन्तु आपके अक्षर मुझे दुस्तर प्रतीत होते हैं। इसके बादसे ही श्री नाहटाजीके पत्र या तो टकित किये हुए या किसी अन्य द्वारा लिखाये गये रूपमें मिलने लग गये।

ई० सन् १९६८ का वर्ष, राजस्थान साहित्य एकादमीका एवार्ड मिला तव मेरे मनमें विचार उठा कि यह श्री नाहटाजीको मिलेगा। मै धागध्रासे उदयपुर गया। कार्यक्रमके दिन सध्या समय मैंने श्री नाहटा-जीके दर्शन किये। प्रौढ एव वृद्धजनकी कल्पना तो किये हुए था ही। गुणज्ञता एवं धैर्य तो आपके लेखोसे ज्ञात होता था किन्तु आपकी सादगीकी मुझे कल्पना ही नही थी। घुटनोके ऊपर तककी लाँग लगाई हुई धोती, मलमलका कुरता पहने हुए और ऊँची मारवाडी पागको धारण किये हुए एव कपालपर केशरका तिलक तथा पाँवोमें देशी जूते पहने हुए, श्यामवर्णी काया और भरावदार शरोर! इस तनमें लोक-साहित्या-लकारका प्रखर व्यक्तित्व दृष्टिगत हुआ। सशोधककी तीव्र एव तीक्ष्ण दृष्टि प्रतीत हुई। महामानवता, प्रेम, उत्साह और सरलता आपमें टपक रही थी। वाणीमें माधुर्य, वणिक् धर्मकी साक्षी पूर्ण करनेवाले नजर आये। ऐसे साधु, शाह-सौदागर और सशोधकके दर्शन कर मै पावन हुआ और कितनी ही बातें की।

हाँ, यह तो कहना भूल ही गया कि आपने बीचमें एक बार अपने सशोधन-लेखोकी एक पुस्तिका Monogra मुझे भेजी थी, स्मरण है। उसे आज भी सुरक्षित रखे हुए हूँ। वह मेरे लिये एक सन्दर्भ-सूचीके समान है।

सन् ६९ से सौराष्ट्र विश्वविद्यालयमें गुजराती लोक साहित्यके रीडर पदपर मैं आमन्त्रित किया गया, तभीसे हमारे मध्य इस कार्यार्थ पत्र-व्यवहारकी वृद्धि हुई है। 'अगदविष्टि'की हस्तलिखित प्रतिकी खोजमें श्री० नाहटाजी भी थे। इसकी एकसे अधिक हस्तलिखित प्रतियाँ हमे सौराष्ट्र विश्वविद्यालयके चारणी-साहित्यके हस्तलिखित ग्रन्थ-भण्डार हेतु मिली है। श्री नाहटाजी द्वारा प्रेरित किये जानेपर ही अब उसकी सूची आदिका भार उठा लिया है।

बीचमें यह कहना तो रह ही गया। सौराष्ट्रके चारण एव चारणी-साहित्यपर एक निवन्ध लिखकर उसे साइक्लोस्टाइल द्वारा मुद्रित कराकर मैंने सभी मित्रो एव स्नेहियोको सशोधन एव परिवर्द्धन हेतु भेजा था। उस समय सर्वप्रथम अपने विचार भेजनेवाले श्री नाहटाजी ही थे। तव मै समझ सका कि आप चारणी साहित्यके उपासक-प्रहरी हैं। आपने इस सम्बन्धमें मुझे कुछ रचनात्मक टिप्पणियाँ भी भेजी।

अन्तमें मैं जब धागधा था, तव मेरे एक विद्यार्थी जिन्हें अपने निजी कार्यार्थ बीकानेर जाना था, को मैंने वहाँ श्री नाहटाजीसे मिलनेको कहा। वे भाई, आपसे मिलकर आये। इनपर नाहटाजीका अच्छा प्रभाव पडा। इन्होंने जो कुछ मुझे बताया उसे मैं यहाँ व्यक्त कर रहा हूँ—"मै उनसे, उनके ग्रन्थभण्डारमें

मिला। आप शरीरपर धोती पहने हुए थे। वेश आपका बिल्कुल सादा था। हस्तलिखित पुस्तकोके आपके चारो ओर ढेर लगे हुए थे। आप नीचा शिर किये हुए उन हस्तलिखित पुस्तकोमें कुछ न कुछ पढते ही रहते है। कल्पना ही नही की जा सकती कि आप ही श्री नाहटाजी होगे। मैं जब आपसे मिला तो इन महापण्डितने प्रेम एव ममतापूर्ण मेरा सत्कार किया। मुझे आप एक प्रेमी, सज्जन एवं उद्यमशील वयोवृद्ध पण्डित प्रतीत हुए।"

इस प्रकारके उद्यमशील, प्रेमी, कार्यनिष्ठ, सात्विक एव धर्मशील सशोधकको धर्मशास्त्र, मध्यकालीन मारू-भाषा साहित्य और लोक-सस्कृतिके समुद्धारार्थ परम कृपालु प्रभु पूरे सौ शरदका आयुष्य प्रदान करें। यही मेरी ईश-प्रार्थना है।

मरु-भूमिमें विकसित यह पुष्प स्थायी रूपसे महकता रहे और तरोताजा बना रहे। यही शुभेच्छा है।

●

सरस्वती के अनन्य सेवक

सिद्धान्ताचार्य प० के० भुजबली शास्त्री

सरस्वतीके अनन्य सेवक श्री अगरचन्दजी नाहटाका और मेरा परिचय एव सम्बन्ध लगभग ३५ वर्षोंसे है। यह सम्बन्ध सर्वप्रथम शोध-सम्बन्धी श्रेष्ठ त्रैमासिक पत्र "जैनसिद्धान्तभास्कर" से हुआ। उन दिनो, मैं आरा (विहार) के सुप्रसिद्ध "जैनसिद्धान्तभवन"में पुस्तकालयाध्यक्ष पदपर काम करता रहा। इसी सस्थाकी ओरसे उपर्युक्त "जैनसिद्धान्तभास्कर" प्रकाशित होता रहा। इस त्रैमासिक पत्रका कुल कार्य मुझे ही देखना पडता था। "जैनसिद्धान्तभास्कर"में नाहटाजी भी लिखते रहे। अत. इस सम्बन्धमें आपके साथ मैं बराबर पत्र व्यवहार करता रहा।

सन् १९३६ में, एक आवश्यक कार्यवश मुझे जयपुर जाना पडा। वहांपर मैं एक मास तक ठहरा रहा। इसी बीचमें मैं उदयपुर, जोधपुर और बीकानेर आदि राजस्थानके प्रमुख नगरोको देखनेको गया। जोधपुरसे बीकानेर सुबह पहुँचा। उस समय मैं रेलवे स्टेशनसे सीधा राजकीय धर्मशालामें जाकर ठहरा। हाँ, बीकानेर मेरे पहुँचनेकी सूचना मैंने नाहटाजीको पहले ही दे दी थी। करीब सुबह ९ बजे, नाहटाजी मुझे देखने वास्ते धर्मशालामें पहुँचे। वहांपर थोडी देर इधर-उधरकी बातें हुई। फिर नाहटाजी साग्रह मुझे अपने घरपर लिवा ले गये। वहांपर उन्होने ३-४ रोज तक, सानन्द मुझे अपने आतिथ्यमें रखा और वहांके राजमहलसे लेकर राजकीय, शैक्षणिक, धार्मिक और सामाजिक सभा सस्थाओको दिखलाकर, उन संस्थाओका परिचय कराया। नाहटाजी मिलनसार व्यक्ति हैं। इस प्रवासमें मुझे कई बातोका अनुभव हुआ। उन अनुभवोमें राजस्थानमें पानीके अभावका अनुभव भी एक था। नाहटाजी से मेरा प्रत्यक्ष परिचय इसी बार हुआ।

यद्यपि नाहटाजी एक व्यापारी परिवारमें जन्म लिये है, परंतु आपका सारा समय सरस्वती-सेवामें ही व्यतीत होता है। प्राय प्रत्येक जैन पत्र-पत्रिकाओमें बराबर मैं आपका लेख देख रहा हूं। इसी प्रकार कतिपय जैनेतर पत्रोमें भी। मुझे आश्चर्य होता है कि नाहटाजी इतने लेख कैसे लिख लेते हैं।

लेख भी विविध विषयोंपर। नाहटाजी बडे परिश्रमी आदमी हैं। हर समय आप खोजमें ही लगे रहते हैं। विविध विषयोमें आपकी गति है। नाहटाजी को अन्वेषणमें बडा प्रेम है। साथ ही साथ आपकी स्मरणशक्ति बहुत मजबूत है। इसके बिना इतना काम नही हो सकता। १९३६ के बाद नाहटाजी आरा और कलकत्तामें दो-तीन बार मिले। मेरे साथ उनका पत्रव्यवहार तो बराबर चलता रहा है।

इस समय आपका सम्मान किया जाना सर्वदा समुचित है। विद्वानोका सम्मान होना ही चाहिए। मेरी हार्दिक शुभभावना है कि नाहटाजी दीर्घकाल तक नीरोग रहकर इसी प्रकार निरतर, निरतराल सरस्वतीकी पवित्र सेवा करते रहें।



अमितशोध-सामग्रीके भण्डार श्री अगरचन्द नाहटा

डॉ० कन्हैयालाल सहल

आजसे लगभग बीस वर्ष पहले राजस्थानी कहावतो-सवंधी अपने शोध-प्रवधके हेतु सामग्री एकत्र करनेके लिए मैं बीकानेर गया था। जव मैं पहले-पहल श्री नाहटाजीसे मिला तो मैं उनके व्यक्तित्वसे अत्यत प्रभावित हुआ। मैंने सुन रखा था कि वे शोध-सामग्रीके भण्डार हैं,बहुत ही सहृदय व्यक्ति है तथा शोधार्थियोकी सहायता करनेके लिए अनुक्षण तैयार रहते हैं। नागरी प्रचारिणी आदि सुप्रसिद्ध पत्रिकाओमें मैंने उनके अनेक शोधपूर्ण लेख भी पढ रखे थे। खुमाणरासो आदिके सबधमें उन्होने महत्त्वपूर्ण विचार प्रकट किए थे, जिससे हिंदी साहित्यके इतिहास-लेखको और शोध-विद्वानोका ध्यान उधर सहज ही आकृष्ट हुआ था। परिणामस्वरूप हिंदी साहित्यके आदिकालका पुन परीक्षण होने लगा और उसके पुर्नविवेचनकी आवश्यकता प्रतीत होने लगी।

मैंने देखा कि राजस्थानका ही नही, बल्कि देशका एक प्रसिद्ध शोधक विद्वान् अपने पुस्तकालयके कक्षमें बडे सादे लिबासमें बैठा हुआ है। बातचीतमें भी कही दर्प उनको छू तक नही गया है। आलस्य उनमें नाम मात्रका भी नही। उन्होने अपना एक भवन ही पुस्तकालय और वाचनालयको अर्पित कर दिया है, जहाँ शोधार्थी छात्र और विद्वान् आते रहते हैं और उनके विशाल पुस्तकालयसे लाभान्वित होते हैं। जहाँ अन्यत्र कोई ग्रथ उपलब्ध नही होता, वह श्री नाहटाजीके पुस्तकालयमें प्राप्त हो जाता है। किसी ग्रथका नाम बताते ही, वे अपना अन्य कार्य छोडकर भी शोधार्थीके लिए वह ग्रथ यथाशीघ्र उपलब्ध करनेमें जुट जाते हैं। असख्य महत्त्वपूर्ण पाडुलिपियाँ उनके पुस्तकालयको सुशोभित कर रही है। प्राय देखा जाता है कि जिन विद्वानोंके पास पाडुलिपियाँ होती हैं, वे शोधार्थियोके पास पाडुलिपियाँ भेजते नही किंतु श्री नाहटाजीकी इस सवंधमें उदारता वेमिसाल है क्योकि डाक द्वारा भी वे अनुसंधित्सुओको अपनी पाडुलिपियाँ भेजते रहते हैं जो शोधार्थी उनके यहाँ पहुँच जाता है, उसकी तो वे सभी प्रकार सहायता करते हैं। उसे तनिक भी कठिनाई हुई तो वे उसके निराकरणमें जुट जाते है।

राजस्थानी कहावतोके संवधमें सस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रश, हिंदी——सभी सवद्ध और आवश्यक पुस्तकें उन्होने मेरे लिए सुलभ कर दी। इतना ही नही, कहावतोके जो हस्तलिखित सग्रह उनके पास थे,

वे भी मेरे प्रयोगके लिए, विना किसी हिचकिचाहटके, प्रस्तुत कर दिए। शोध-प्रबधकी रूप-रेखा आदिके सबधमें भी उनसे पूरा विचार-विमर्श होता रहा और मैंने उससे पर्याप्त लाभ उठाया।

श्री नाहटाजीके अथक परिश्रमको देखकर मेरी आँखें खुल गईं। मैं अपने तईं यह समझा करता था कि पढने-लिखने मे मैं बहुत परिश्रम करता हूँ और मेरा जीवन बडा ही सुव्यवस्थित और नियमित है। किंतु श्री नाहटाके अनवरत स्वाध्याय और उनकी श्रमशीलताको देखकर मैं चकित रह गया। मैंने भोजनके बाद भी उन्हें कभी विश्राम करते हुए नही पाया। आजकल भी उनके यहाँ प्रात ४ बजेसे लेकर रातको १० बजे तक काम चलता रहता है। रोज कई घण्टे तो केवल पत्र लिखनेमें व्यतीत होते हैं। ६० पत्रिकाओमें लगभग १०० लेख सदा भेजे हुए रहते है और अनवरत नए तैयार होते रहते है।

'मरु-भारती' के संबधमें भी श्री नाहटाजीसे निरतर परामर्श मुझे मिलते रहते हैं। वे यह देखकर क्षुब्ध होते हैं कि जितना काम मुझे करना चाहिए, प्रशासनिक-व्यस्तताके कारण उतना काम मैं कर नही पाता। उनका सात्विक आक्रोश भी मेरे लिये बडा मधुर होता है और अतमें चलकर उपादेय ही सिद्ध होता है।

जब राजस्थानी लोक-कथाओके मूल अभिप्रायोका मैं अध्ययन करने लगा और इस संबधमें मेरी कुछ पुस्तकें भी प्रकाशित हुईं तो उन्हें बडी प्रसन्नता हुई। राजस्थानी लोक-कथाओके विशेष सदर्भमें जब कथानक रूढियो के व्यापक अध्ययनको ही मैंने अपने डी० लिट्० का विषय चुना और वह राजस्थान विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत भी हो गया तो श्री नाहटाजीकी प्रबल इच्छा हुई कि मैं उनके पास जाकर बीकानेर रहूँ और अपने शोध-प्रबधको पूरा कर लूं। इसमें कोई संदेह नही कि जब कभी यह सुयोग मुझे मिलेगा, श्री नाहटाजीके प्रोत्साहन और उनके द्वारा अमित शोध-सामग्रीकी सुलभताके कारण यह शोध-प्रबंध भी सुचारु रूपसे लिखा जा सकेगा।

श्री नाहटाजीके व्यक्तित्वका एक रूप वह भी है जब वह कुछ समय आसाम आदिकी ओर जाकर व्यापार-व्यवसायमें अर्थार्जन करते हैं। इस प्रकार उपार्जित अर्थका वे जो सदुपयोग करते हैं, वह उनके निकटस्थ मित्रोको भलीभाँति विदित है।

श्री अगरचन्दजी नाहटा बहुत ही सस्कार-सम्पन्न, सहृदय, सेवाभावी और स्वाध्यायी व्यक्ति हैं। कल्याण आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओमें उनके नैतिक मूल्य विषयक लेख छपते रहते हैं, जिनसे उनके अतरंगकी झाँकी मिलती रहती है।

न जाने कितने शोधक छात्रो और विद्वानोने उनके पुस्तकालयसे लाभ उठाया होगा, न जाने अपने हाथसे कितने प्रेरक पत्र श्री नाहटाजीने अन्य शोधार्थियोको लिखे होगे और न जाने राजस्थानी और हिंदीके साहित्य-भडारकी अभिवृद्धिके लिए उनके कितने लेख अब तक प्रकाशित हो चुके होगे। हाँ, उनके अक्षरोको पढना अवश्य एक टेढी खीर है। किसी पाडुलिपिको पढकर उसका अर्थ लगाना शायद सरल है किंतु उनके चीटीकी-सी टाँग वाले अक्षरोको पढना एक दुष्कर व्यापार है। ऐसा याद पडता है कि डॉ० दशरथ शर्माने एक बार मुझे लिखा था—श्री नाहटाका पत्र आता है तो पहले दिन दो एक वाक्य पढकर छोड देता हूँ, फिर दूसरे दिन कुछ वाक्य पढता हूँ—इस तरह उनके पत्रको पढनेमें दो-तीन दिन लग जाते हैं। निश्चित रूपसे श्री नाहटाजीके अक्षरोंमें बावत मैं अतिशयोक्ति कर रहा हूँ किंतु कभी-कभी अतिशयोक्ति बिना काम चलता नही। और फिर शेक्सपियरके जगत्प्रसिद्ध नाटक Hamlet मे कभी पढा था—बडे आदमियोके अक्षर ऐसे

ही होते हैं। गाधीजी कौनसे अच्छे अक्षर लिखते थे और प० महावीर प्रसादजी द्विवेदीकी हस्तलिपि भी क्या सुन्दर कही जा सकती है।

जो भी हो, श्री नाहटाजी अपने अनुपम गुणोके कारण अत्यंत अभिनंदनीय हैं और ऐसे व्यक्तित्वका जितना सम्मान किया जाय, थोडा है। भगवानसे मेरी यही हार्दिक प्रार्थना है कि श्री अगरचन्दजी नाहटा ताधिक वर्षों तक जीवित रहकर शोध-जगत्को समृद्ध करते रहें।

●

राजस्थानकी साहित्यिक विभूति

स्वामी श्री मगलदासजी

युग-युगान्तरोसे हमारा यह आर्य सस्कृतिका जन्मदाता महान् भारत देश भू-मण्डलमे अपना विशेष स्थान रखता आया है। यह पुण्यश्लोक पावनदेव अपने अनेक प्रदेशोको अपने अचलमें लिये हुए है। उन प्रदेशोमें अपनी विविध विशेषताओंके कारण हमारा यह राजस्थान प्रदेश भी हरण गौरवशाला व समाद रणाप प्रथम पक्तिमें अपना विशेष स्थान रखता है। राजस्थानकी वैसे तो ख्याति वीरप्रसवाके रूपमें है—पर इस पावन भूने जिस प्रकार अनेक शौर्यशाली वीरोको जन्म दिया—उसी तरह इस भूमिमें दानी-त्यागी, तपस्वी-भक्त, महात्मा, विद्वानो, कवि, रचनाकार, प्रभावी शासक, पतिव्रताओ व सतियोको अगणित सख्यामें जन्म दिया है। राजस्थानमें सस्कृत, प्राकृत, डिंगल, पिंगलमें रचित व अप्रकाशित इतना प्राचीन साहित्य है, जिसका कि अभी हमारे देशके साहित्यिकोको ही पूरा पता नही है। इस ओर अभी जिस प्रकारका ध्यान दिया जाना था वैसा ध्यान नही दिया गया है। खेद है कि इस उदासीनताके कारण दिन प्रतिदिन प्राचीन साहित्यका लोप होता जा रहा है। मूर्तियाँ, चित्र तथा अन्य कलाकृतियोकी चोरी तथा प्राचीन साहित्यका व्यापार जोरोपर है, जिससे इस अनुपम निधिको दिन-दिन क्षति पहुँच रही है। इनकी रक्षाके लिए सतत् जागरूक प्रहरी चाहिये, जैसे कि हमारे चरित-नायक नाहटाजी हैं। इन प्राचीन साहित्यके परमोपासक, विनीत, मृदुभाषी, निरभिमानी, सतत साहित्य साधकके मानी नाहटाजीको जन्म देनेका गौरव इसी राजस्थानकी भूमिको है। नाहटाजीकी जन्मस्थलीकी महत्ताका महत्त्व प्राप्त हुआ—राठौर कुलभूषण महाराज बीकाजी द्वारा स्थापित बीकानेर नगरको। नाहटाजीने अपनी उत्कृष्ट विविधताओमे जन्मदाता नगरके गौरवको गौरवशाली बनानेमें अपना अथक प्रयोग किया है व कर रहे है।

व्यक्तित्व

नाहटाजी बहुत ही सादगीप्रिय व्यक्ति है। उनकी वेषभूषा परम्परागत सामाजिक रीतिके अनुसार है। यदि कोई अपरिचित व्यक्ति पहली बार नाहटाजीसे साक्षात् करेगा तो शायद वह उनकी उस मारवाडी वेशभूषाको देखकर इस भ्रान्तिमें उलझेगा कि क्यो ? साहित्य का अनन्य उपासक तथा प्राचीन साहित्यकी खोजमें अनवरत अपनेको लगनेवाला यही व्यक्ति है ? उनकी पगडी-धोती-कुरता-साफा-कोट उन्हें सीफो रूपमें एक व्यावसायिक व्यक्ति प्रकट करता है न कि कोई उच्चकोटिका साहित्यप्रेमी। उनका बाल्यकाल व शिक्षा-दीक्षा बीकानेर नगरमें ही हुई। उनका परम्परागत व्यावसायिक धधा है। तदर्थ उनका आवागमन कलकत्ता आदि भारतके प्रमुख नगरोमें भी होता रहा है। आरभसे ही उनमें साहित्य अनुशीलनकी अभिरुचि

भी थी—वही अभिरुचिकाल पाकर वर्धित होती गई जिसने आगे चलकर उन्हें प्राचीन साहित्यकी सेवा कार्यमें तत्पर किया। आपका स्वभाव अत्यन्त सरल तथा कोमल है। नम्रता तो आपके कूट-कूटकर भरी हुई है। एक वार जो व्यक्ति आपसे मिल लेता है वह सब ही दिनके लिए आपका हो जाता है।' अहकारका तो आपमें लेश भी नही है—सीधी-सादी भाषामें आपसे वार्त्ता करते हुए व्यक्तिमें आपके प्रति आत्मीय भावना स्वत ही विना प्रयास घर कर लेती है। आपका द्वार सबके लिए समानसे खुला रहता है। साधारणसे साधारण जिज्ञासु तथा वडेसे बडे साहित्यिकके साथ मानवीय व्यवहारमें किसी प्रकारका भेद आपसे नही बनेगा। शोध-छात्रोंके लिए आपका सहयोग सर्वदा सुलभ रहता है। साहित्यप्रेमियो, साहित्यलेखको, सम्पादको, साहित्य-मर्मज्ञोंके लिए आपका घर उन्हीके घरके समान उपयोगमें आता है। समागत अतिथियोका सम्मान भारतीय परम्परानुसार अत्यन्त सौहार्दपूर्ण भावनासे किया जाता है। आपका शान्त विनीत मृदुल स्वभाव हर अपरि-चितको अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। आपके पूरे व्यक्तित्वके महत्त्वको शब्दो द्वारा व्यक्त कर सकना शक्य नही है। यही कहना अभीष्ट है कि आप महान् व्यक्तित्वके धनी है।

साहित्यसाधना

नाहटाजीका मुख्य विषय साहित्यसाधना है, वे पर्याप्त समयसे इसी कार्यमें लगे हुए हैं। अपने इस लक्ष्यपूर्तिके लिए न मालूम कैसे-कैसे प्रयास किये व कठिनाइयोसे सघर्ष किया है। जहाँ भी उन्हें ज्ञात हुआ कि अमुक जगह अमुक रचना प्राप्य है आप तभीसे उसके अवलोकन व पाण्डुलिपिके प्रयासमें लग जाते हैं उस रचनाका वहाँ जाकर अवलोकन करते हैं जिसके पास वह है उसकी प्रतिलिपिकी व्यवस्था करते है। आपके इस प्रयाससे अनेको रचनाग्रन्थ जो कि विना जानकारीके संसारसे ओझल थे, वे प्रकाशमें आये। वैसे आपने प्राचीन जैनसाहित्यकी रचनाओका अपने यहाँ अच्छा सग्रह किया है तथा उसके विषयनिर्में अब भी लगे हुए है। जैनसाहित्यकी अनेक रचनाओका सम्पादन कर उनको फिर जीवनप्रकाशका उत्कृष्ट प्रणाम है कि आपका साहित्यसाधनाका लक्ष्य कितना उच्चकोटिका है। आपके इस ग्रन्थागारमें न केवल जैन रचनाओ-का ही सग्रह है अपितु उसमें सन्त साहित्य-डिंगल कवियोकी रचनाओ प्रख्यात खाते तथा पिंगलकी रचनाओंका भी उपयुक्त सग्रह हैं। आपने जिस तरह जैन साहित्यका सम्पादन कर उनको सुरक्षित किया उसी तरह अन्य साहित्यकी रचनाओका सम्पादन कर उन्हे भी नवजीवन प्रदान किया है।

इस सम्पादन कार्यके साथ-साथ आपने साहित्यिक प्रामाणिक पत्रिकाओमे शोधमय लेख भी लिखकर साहित्यसेवियोको नई-नई जानकारी देनेका कार्य भी जारी रखा है। आपके अनेको लेख तो अनुपलब्ध साहित्य रचनाओके परिचयात्मक विवेचन है जिससे रचनाकार-रचना तथा रचनाकालका सम्यक् वोध प्राप्त होता है। आप वैसे राजस्थानके साहित्य गगनके उदीयमान नक्षत्र ही नही हैं अपितु आप तो अब हमारे अन्त भारतीय साहित्य जगत्के साहित्यकोकी उच्चश्रेणीमें समाविष्ट हैं। राजस्थानकी वे सर्वसस्थायें जो साहित्यके संरक्षणके प्रकाशन-सग्रह कार्यमें सलग्न है आपके अनुभव व विवेकका पूरा-पूरा लाभ उठानेमें सर्वदा तत्पर रहती हैं। आप राजस्थान प्राच्य विद्यामन्दिरकी समितिके सम्माननीय सदस्य हैं। वैसे ही आप साहित्य अकादमीके भी मान्य सदस्य है। इसी तरह जो-जो ऐसी अन्य सस्थाएँ हैं, जो कि साहित्यिक कार्यमें लगी हुई है आपका उनसे भी किसी न किसी रूपमें सम्बन्ध वना हुआ है—किसीके आप मान्य लेखक हैं तो किसी के आप सहायक हैं, किसीके ग्राहक हैं, किसीके सहयोगी हैं। आप सद्गृहस्थ तथा कुटुम्बीजन हैं अत आपको उन सव कर्त्तव्योंका वहन करना पडता है—साथ ही अपने प्रमुख लक्ष्य—साहित्य उपासनामें किसी प्रकार कमी या वाधा न आने देना आपका व्यावहारिक वैशिष्ट्य है।

प्राचीन साहित्यकी पाण्डुलिपियोका प्रदेश भेद तथा लेख कापी विभिन्नताके कारण अध्ययन मनन सहज साध्य नही है इसके लिए धैर्यके साथ तन्मयतासे अपनेको सूझ-बूझके साथ लगाना पडता है ? प्रत्येक शिक्षितज्ञ है तो भी इसमें सफल होना संभव नही है। विविध प्रवृत्तियोमें प्रवृत्त नाहटाजीकी इस क्षेत्रमें सफलताका श्रेय उनकी अत्यधिक लगन व तत्परताको है। वे समाजसेवक गृहस्थ भी है इन सबके साथ-साथ वे एक निष्ठावान् साहित्यसेवी भी है । अपर क्षेत्रोका भारवहन करते हुए उनने जिस प्रकारसे जितना कार्य प्राचीन साहित्यकी सेवाका किया है उसके उदाहरण बहुत ही कम देखनेमें आते है । वेधी तथा स्मार्तके धनी हैं जिससे उनका साहित्यिक ज्ञान सुस्थिर व स्थायी है । प्राचीन साहित्यकी पाण्डुलिपियोमें कभी-कभी कई तरहकी उलझनोका सामना करना पडता है। किसी पाडुलिपिमें रचनाकारका नाम नही है तो किसीमें रचनाकाल नही है। किसीमें रचनास्थानका उल्लेख नही है तो किसीमें पाण्डुलिपि करने वालेका नाम व कालके उल्लेखका अभाव होता है । ऐसी रचनाओको उक्त प्रकारकी उलझनोको सुलझानेके लिए कैसा और कितना प्रयास करना होता है इसकी जानकारी उन्हीको ज्ञात है जो स्वय प्राचीन साहित्यकी सेवामें सलग्न है ।

नाहटाजीमें उक्त कार्यके लिये अदम्य उत्साह है वे इस प्रसगमें किसी भी वाधा से न तो घबराते हैं न ही अनुत्साहित होते हैं—वे सिर्फ तथा अपनी ऊहनासे सब प्रकारकी बाधाओपर विजय पा लेते हैं। वे अपने आपमें एक सच्चे साहित्यसाधक हैं । वे चिरकाल तक इस साहित्यसाधनामें लगे रहें ताकि प्राचीन साहित्य-की सुरक्षा सेवा इनसे बराबर बनती रहे ।

सम्पादन व खोज पूर्णलेख

नाहटाजीने, जैसा कि मैंने ऊपर उपयुक्त किया है कि वे न केवल प्राचीन साहित्यके सग्रहप्रेमी हैं अपितु उनका लक्ष्य है उस साहित्यको प्रकाशमें लाकर उसे सुरक्षित कर देना, तदर्थ सम्पादन-प्रकाशनकी आवश्यकता होती है। अपने बलबूतेपर ही इन उभय कार्यों (सम्पादन-प्रकाशन)की पूर्तिका भी पूरा प्रयास करते है। आपने अनेक ग्रथोका सम्पादन भी किया है तथा प्रकाशन भी। प्राचीन साहित्यकी जैसे-जैसे नवीन पाडुलिपियो-की प्राप्ति होती है उनकी प्रतिलिपि करा कर सग्रहीत करना तथा समय-समयपर उन प्राप्त ग्रन्थोके परिचया-त्मक निबन्ध लेख उन शोध पत्रिकाओंमें प्रकाशित करना जिससे साहित्यप्रेमियो व साहित्यिको को नवीन ग्रन्थ व रचनाओका पता लगता रहे । प्रकाशनमें अर्थकी आवश्यकता होती है, सभी परिचयात्मक लेख लिखनेसे पहले गहराईसे अनुशीलनकी आवश्यकता रहती है। साथ ही रचनाके पूर्वापरका गहराईसे ग्रन्थन कर ग्रन्थगत रहस्यका पता लगाया जाता है.। नवीन रचनाओके परिचयात्मक लेखोमें कभी-कभी ऐसे मौके भी आ जाते हैं कि उसके सही निष्कर्ष तक पहुँचना काफी कठिनाईपूर्ण हो जाता है। उस स्थितिमें अपनी सूझ-बूझसे ही अपना दृष्टिकोण अभिव्यक्त करना पडता है—और तथ्य निर्णयके लिए अन्य प्रमाणोकी तलाश करनी पडती है। फिर भी कुछ बातें ऐसी रह जाती हैं जिनको सशयात्मक स्थितिमें ही रख देना पडता है। जिन सज्जनोने नाहटाजीके इस प्रकारके निबन्ध पढे हैं वे कह सकते है कि उनका इस विषयके प्रयास कितना महत्त्वपूर्ण है। अस्तु नाहटाजीकी कार्यपद्धति व उनका प्राचीन साहित्यके लिये कितना अगाध स्नेह है उसका पूरा विवरण शक्य नही है क्योकि हृदयगत भावोको उसी रूपमें व्यक्त कर सकना कठिन समस्या हैं। इन पक्तियोसे हम नाहटाजीके साहित्यक्षेत्रमें किये जाने वाले प्रयासोका सक्षेपमें दिग्दर्शन मात्र विशेष है विशेष अनुमानसे ज्ञातव्य है ।

कामना

नाहटाजीके अभिनन्दनका सकल्प करनेवाले सज्जन अत्यन्त धन्यवादके पात्र हैं । क्योकि उन्होंने एक

अतीव औचित्यपूर्ण आवश्यक कार्यकी ओर समुचित ध्यान दिया है। साहित्य क्षेत्रका कार्य एक कठिन साधना है—सर्वसाधारण उस काम व प्रयासकी जानकारीसे अपरिचित रहते हैं। साहित्यप्रेमी ही साहित्यसेवीका सच्चा मूल्याकन कर सकता है। आजका युग भौतिक व अर्थ प्रधानताका युग है। इसमें ज्ञानका महत्त्व आज तो यह आभाणक सर्वतोभावेन मान्य है।

सर्वे गुणा. काञ्चनमाश्रयन्ति

मनुष्यके सर्वगुण विधा तथा शालीनता अर्थके पर्याय है। गुण विधामें शालीनताकी वजाय अर्थके महत्व-को सर्वोपरि स्थान प्राप्त है। विद्वानोकी साहित्य-सेवियोकी-श्रेष्ठ व सज्जन पुरुषोकी समाजमें जैसी मान्यता होनी चाहिये वह नही है। अत ऐसे कालमें जो सज्जन इस ओर ध्यान देते है तथा प्रयास करते है वे स्तुत्य है। वे एक ऐसे आवश्यक कार्यकी पूर्ति करते है जिससे हमारे इतिहास, हमारी सभ्यताका पूरा-पूरा सम्बन्ध जुडा हुआ है। जो समाज अपने विद्वानो साहित्यसेवियोका समादर करता है। उनके महत्वको स्वीकार करता है वह समाज अपने अस्तित्व व महत्ताकी पूर्ति करता है, राजस्थानमें आज भी ऐसे अनेकानेक मौन साहित्यसाधक हैं जिनका हमें ठीकसे परिचय नही है। उनको भी प्रकाशमें लानेकी आवश्यकता है। हमारे समाजकी साहित्य सपत्तिके ये ही सच्चे प्रहरी हैं जो अनवरत अपने प्रयासोसे उस दुर्लभ महान सपत्तिका सरक्षण व विवेचन करते हैं, हमारी उनके लिये यही कामना है कि वे दीर्घकाल तक अपनी महती सेवा द्वारा साहित्यक सम्पत्ति-का विवेकन व सरक्षण करते रहे। नाहटाजी भी उन्ही साहित्य साधकोमें हैं अत वे स्वस्थ व दीर्घ-जीवी होकर अपने लक्ष्यमें तत्पर होकर प्राचीन साहित्यके अन्वेषण-सरक्षण, विवर्धनमें अपना चिर साहित्य प्रदान करते रहे।



विरोधाभासोंका समन्वय

श्री शोभाचन्द्र भारिल्ल

श्री और सम्पत्तिके विरोधका मथन करके जिसने अपने जीवन द्वारा अनेकान्तवादको समर्थन प्रदान किया और चिररूढ इस विरोधकी धारणाका निराकरण किया, उस महान् व्यक्तित्वका अभिनन्दन करना अपने आपमें कितना आनन्ददायक है। श्री नाहटाजी के अभिनन्दनका शुभ संकल्प सर्वप्रथम जिनके मनमें उत्पन्न हुआ, वे भी अभिनन्दनीय वन गए।

चार दशाब्दियोंसे भी अधिक समय वीत गया। वीकानेरमे उनसे मेरा प्रथम साक्षात्कार हुआ। शुद्ध स्वदेशी बीकानेरी वेप-भूषा, सिरपर पगडी, गलेमें दुपट्टा, वद गलेका कोट और दोनो लाघकी धोती! साहित्यिकका कोई लक्षण नजर नही आया। चित्तपर कोई विशेष प्रभाव नही पडा। उस समय कल्पना ही नही आई कि साधारण प्रतीत होने वाले इस व्यक्तिमें असाधारण व्यक्तित्व छिपा है, वीकानेरकी भोगभूमिमें रहते हुए भी इसका अन्तम् साहित्यके ससारमें रमण कर रहा है और सरस्वतीकी उपासनामें तन्मय है।

तव से अव तक लगातार नाहटाजी के सम्पर्क में हूँ। अनेको वार साक्षात्कार हुआ है। उनकी वहुमुखी और महत्त्वपूर्ण साहित्यिक कृतियोंसे परिचय रहा है। जैसा-जैसा परिचय प्रगाढ होता गया, उनकी सादगी, सरलता, अन्तरकी स्वच्छता, निष्कलुपता और सवेदनशीलताके साथ-साथ उनकी प्रगाढ विद्वत्ता,

व्यापक प्रतिभा और असीम साहित्यानुरागकी आह्लादक अनुभूतियाँ वृद्धिगत होती गयी। आज कौन नही जानता कि नाहटाजी विविध विद्याओके वारिधि है, जैनसिद्धान्तशास्त्रके आचार्य हैं, इतिहास और पुरातत्त्व संबधी शोधमें अग्रसर हैं।

सच तो यह है कि नाहटाजी का व्यक्तित्व इतना विराट् है कि शब्दोकी परिधिमें वह समा नही सकता। राजस्थानी और जैन-साहित्यके लिए उनकी देन बहुमूल्य है। वे व्यक्ति नही सस्था है, यह कहना भी उनके लिए हल्का पडता है। अभय जैन ग्रंथालय जैसी विशाल सस्थाके सस्थापक और सचालक तो वे हैं ही, इससे भी अधिक उन्होने उसका स्वय उपयोग किया है, उसमें अन्तर्निहित अमूल्य रत्नोको सर्वसाधारणके समक्ष प्रस्तुत किया है और शताधिक अन्वेषको एव जिज्ञासुओका प्रशस्त पथप्रदर्शन किया है।

साहित्यिक सस्थानोकी स्थापना करने वाले अनेक श्रीमन्त हो सकते है, साहित्यके मुद्रणमें भी अनेकोने आर्थिक योग दिया है, अनेक दे रहे हैं, परन्तु क्या नाहटाजी उनकी श्रेणीमें है? सरस्वतीकी श्रीवृद्धि करनेमें उन्होने सर्वतोभावेन समग्र जीवन समर्पित किया है। इस दृष्टिसे वे अपनी श्रेणीमें अकेले ही है। उनकी समता कही दृष्टिगोचर नही होती। 'सागर सागरोपम' यह उक्ति उनके जीवनपर पूर्णरूपसे चरितार्थ होती है।

कैसा अद्भुत व्यक्तित्व है नाहटाजी का! अनेक विरोधाभास उसमें किस खूबीके साथ समन्वित हो गये हैं! पुरातनता और नूतनताका समन्वय उनमें देखनेको मिलता है। श्रद्धा और विवेकपूर्ण तर्कका एकीभाव कम महत्त्वपूर्ण नही। उलूकवाहनी और हसवाहनीमें सख्यभाव स्थापित करनेमें उन्होने कमाल हासिल किया है।

नि सन्देह नाहटाजी न केवल जैनसमाजके गौरव हैं, न सिर्फ राजस्थानकी प्रतिभाके प्रतीक है, वरन् समग्र भारतके साहित्यसेवियोके लिए भी अभिमानकी वस्तु हैं। इस अनूठे व्यक्तित्वका अभिनन्दन करना एक पवित्र कर्त्तव्यका पालन करना है। हार्दिक कामना है कि नाहटाजी चिरजीवी हो और उनकी सेवाएँ चिरकाल तक देशको उपकृत करती रहें।

●

सरस्वतीके अनन्य उपासक

श्री दशरथ ओझा

सन् १९५० की एक सुखद घटना है। सस्कृत, प्राकृत और हिन्दी नाटकोपर शोधकार्य कर रहा था। कतिपय प्राचीन नाटक कही उपलब्ध नही हो रहे थे। अपने सुहृद विद्वद्वर डॉ० दशरथ शर्माके सामने मैंने अपनी समस्या रखी। उन्होने मुझे श्री अगरचन्द नाहटा बीकानेरका पता बताया और परिचयके लिए एक पत्र भी दिया। मैं वह पत्र लेकर बीकानेर पहुँचा। नाहटोके गुवाडमें ऊँची-ऊँची अट्टालिकायें दिखाई पडी। एक भव्य भवनके द्वारपर पहुँचा। द्वारपर एक व्यक्तिने मेरा स्वागत किया और मुझे दूसरी मजिलपर श्री नाहटाजी के पास पहुँचा दिया। नाहटाजी उस समय प्राकृतकी एक पाडुलिपिको पढनेमें मलग्न थे। मैंने अपना परिचय दिया। उन्होने जिस आत्मीयतासे मेरा स्वागत किया वह आज भी हृदयपर अकित है। सरस्वतीके इस उपासकके स्नेह-सौजन्यपर मैं मुग्ध हो गया। उन्होने मुझे साथ लेकर अपना विशाल पुस्तकालय दिखाया। एक बडे विस्तृत 'हाल' का कोना-कोना प्राचीन एव नवीन पुस्तकोंसे भरा पडा था। उससे

संलग्न अनेक कमरोमे चारो ओर पुस्तकोका विपुल भडार भरा था। कई कमरोमें प्राचीन हस्तलेख पाडु-लिपियां ताडपत्रोपर लिखी हुई दिखाई पडी। सभी आलमारियोको पुस्तकें एवं पाडुलिपियाँ सुशोभित कर रही थी। ऐसा प्रतीत होता था कि हम किसी विश्वविद्यालयके ग्रथागारमें पहुँच गए हो। मुझे उस समय और भी आश्चर्य होता था जब वह मेरी आवश्यकताके अनुसार सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और हिन्दीके नाटकोको अविलम्ब सामने लाकर रख देते थे। मेरी ऐसी दशा हो गई जैसी राजस्थानके प्यासे पथिककी जलाशय मिलनेपर होती है। वह यही चाहता है कि सारा सरोवर एक घूँटमें पी डालूँ।

नाहटाजी की सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, राजस्थानी आदिकी ज्ञान-राशि देखकर प्राचीन उद्भट आचार्य हेमचन्द्रकी स्मृति आ रही है। आचार्य हेमचन्द्रको उपर्युक्त सभी भाषाओपर पूरा अधिकार था। उन्होने जिस भाषाके साहित्यपर लेखनी उठाई उसी भाषाके साहित्यको पराकाष्ठा तक पहुँचा दिया। नाहटा जीने अपना जीवन उसी आचार्यकी परम्परामें ढाल लिया है। इनकी बहुज्ञताका प्रमाण देखना हो तो इनकी रचनाओ और विशेषकर विभिन्न पत्रिकाओमें प्रकाशित लेखोको देखना चाहिए। इनके लेखोका वैविध्य देखकर आश्चर्य होता है। भारतीय दर्शनोमें नाहटाजी की गहन पैठ है। ऐसा प्रतीत होता है कि इन्होने भारतीय दर्शनोका कोना-कोना छान डाला है। जैन, बौद्ध, शकर, अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, शुद्धाद्वैत दर्शनोका इन्होने अनेक बार स्पष्टीकरण किया है। भक्तोके वैष्णव-दर्शन, कबीरादि सन्तोकी निर्गुण उपासना, प्रेमाश्रयी कवियोकी सूफी साधना तथा अन्य विविध साधना-पद्धतियोका इन्होने गहराईमें पैठकर अध्ययन किया है। वह जिस दर्शनका सैद्धान्तिक विवेचन करने लगते हैं उसीमें अपने प्रातिभ ज्ञान और गहन अध्ययनके बलपर अन्य दार्शनिकोंसे आगे निकल जाते हैं। इसका एक कारण है। इन्हें ज्ञानोपार्जनकी ऐसी सच्ची लगन है जो इन्हें अहर्निश अध्ययनकी प्रेरणा देती रहती है। विभिन्न दार्शनिक सिद्धान्तोके तुलनात्मक अध्ययनसे इनकी बुद्धि इतनी प्रखर हो गई है कि दिव्य आलोकमें वह दर्शनशास्त्रके सूक्ष्मातिसूक्ष्म रहस्योको अनायास देख लेते है।

दार्शनिक सिद्धान्तोंके विश्लेषण और उनका साहित्यमें प्रयोग तो नाहटाजीकी अनेक विशेषताओमें एक है। हिन्दी जगत्को नाहटाजीका सबसे बडा योगदान यह है कि उन्होने अपभ्रंश, अवहट्ट और प्राचीन हिन्दीके ऐसे शताधिक ग्रन्थोको पाठकोके सम्मुख रखा जिनका किसीको ज्ञान भी नही था। विस्मृत रासो परम्पराका पुनरुद्धार नाहटाजीके ही प्रयासोका फल है। उन्होने ऐतिहासिक रासोका प्रकाशन कर रास साहित्यकी अमूल्य गुप्त निधिका उद्घाटन किया। उन्हींसे प्रेरणा प्राप्त कर रास एव रासान्वयी काव्योका विधिवत् परीक्षण एव विश्लेषण किया गया। सन् ५६-५७में इन्ही रास ग्रन्थोके सम्बन्धमें पुन. बीकानेर गया। वहाँ लगभग एक महीना ठहरा। नाहटाजीके पास अनेक प्राचीन रास ग्रन्थोकी पाडुलिपियां मिली। नाहटाजी-को प्राचीन पाडुलिपियोको पढनेका अद्भुत अभ्यास है। राजस्थानमें हस्तलिखित ग्रन्थोका अतुल भडार गांव-गांवमें छिपा पडा है। नाहटाजीको इस बिखरी ग्रन्थ राशिका पूरा ज्ञान है। अनुपलब्ध हस्तलिखित ग्रन्थो की प्राप्तिके उनके निजी स्रोत है, जिनके द्वारा वह प्राचीन पाडुलिपियोका प्रतिवर्ष सग्रह करते रहते है।

नाहटाजीका संग्रहालय भारतकी अमूल्य निधि है। किसी राज्य सरकारकी सहायताके बिना ही इतना विशाल संग्रहालय निर्मित करना नाहटाजी जैसे सरस्वतीके अनन्य उपासकके लिए ही सम्भव है। जो कार्य नागरी प्रचारिणी सभाने अनेक व्यक्तियोके सहयोग और राज्यकोशकी सहायतासे काशीमें सम्पन्न किया, उसी कार्यको राजस्थानमें एक व्यक्तिने एकमात्र अपनी साधनासे परिपूर्ण किया। काशी नागरी प्रचारिणी सभासे मेरा सम्बन्ध वर्षोंसे चला आ रहा है। पं० रामनारायण मिश्र, बाबू श्यामसुन्दर दास, ठा० शिवकुमार सिंह, रायकृष्ण दास प्रभृति समर्थ हिन्दी समर्थकोने जो कार्य राज्यसरकारकी सहायतासे किया उसे एकाकी

नाहटाजीने अपने ही साधनोंके द्वारा सम्पन्न किया। यदि उनको सरकारी साधन प्राप्त हो जाएँ तो सैकडो अलभ्य ग्रन्थ विस्मृतिके गर्त्तसे बाहर निकाले जा सकते हैं।

नाहटाजीने तपस्याकी अग्निमें अपनेको तपा डाला है। उनका जीवन जैन मुनियोकी तरह तपोमय बन गया है। धर्ममें उनकी दृढ निष्ठा हैं। सदाचारके नियमोकी अवहेलना उन्हें खलती है। साहित्य और दर्शनको वह जीवनके उन्नयनका साधन मानते हैं। वह जो कुछ लिखते हैं उसमें समाजके विकासकी ओर मूलत' दृष्टि रहती है। उनकी साहित्य साधना अन्य किसी फलको लक्ष्यमें रखकर नही होती। समाजके हितमें वह अपना हित समझते है। समाजके चरित्र-विकासमें वह अपना विकास मानते हैं। प्राचीन ऋषियो-की वाणीको सर्वजन सुलभ करना उनके जीवनका लक्ष्य है।

नाहटाजीने अपने पैतृक व्यवसाय व्यापारकी उपेक्षा की। सरस्वतीकी उपासनामें लक्ष्मीकी ओरसे तटस्थ हो गए। कलकत्ता एवं आसाममें इनका बहुत बडा व्यापार है पर इन्हे करेंसी नोट गिननेकी अपेक्षा प्राचीन पाडुलिपियोंके पन्नोकी गणनामें अधिक आनन्द आता है। जिस परिवारपर लक्ष्मीका सदा वरद-हस्त रहा हो, उसका एक साधक निर्लोभ और निर्लिप्त भावसे सोलह-सोलह घण्टे निरन्तर सरस्वतीकी उपासनामें लगा रहे, यह आश्चर्यका विषय नही तो क्या है? इसीका परिणाम है कि उनका जीवन तपोमय बन गया है। कहा जाता है कि "विद्या ददाति विनय विनयाद्याति पात्रताम्"—नाहटाजी विनम्रताकी मूर्ति हैं। गहन तत्त्वचिन्तकके समान वह बहुत ही मितभाषी हैं। विद्यासे विनीत बननेवाले तो अनेक मिलेंगे किन्तु विनयसे ऐसी पात्रताकी उपलब्धि विरलोमें होगी जो सभी सद्गुणोके आधार बन सके।

नाहटाजीकी स्मृति आते ही कार्य करनेकी प्रेरणा मनमें हिलोरें लेने लगती हैं। आपके सम्पर्कमें आकर अनेक व्यक्तियोंने परिश्रमका पाठ पढा। आपकी कर्मठताके अनेक प्रमाण हैं। प्राचीन साहित्य पर शोधकार्य करनेवाले प्रत्येक छात्रको किसी न किसी रूपमें आप सहायता पहुँचाते हैं। शोधसामग्रीका तो प्रचुर भण्डार आपके पास भरा पडा है। शोधार्थी उस ज्ञान सरोवरमें छककर पान करता है। सबकी जिज्ञासाओका समाधान आप प्रस्तुत करते हैं। सबके प्रश्नोका तुरन्त उत्तर देते हैं। अलभ्य पुस्तको एव पत्रिकाओंसे आवश्यक अश उद्धृत कर शोधार्थीके पास भेजनेको सदा तत्पर रहते हैं। इनके शोधसम्बन्धी लेख देशकी अनेक पत्रिकाओमें प्राय प्रतिमास प्रकाशित होते है। आश्चर्य होता है कि आप इतना कार्य एक साथ कैसे कर लेते हैं।

इन सब गुणोंके अतिरिक्त उनकी एक बडी विशेषता है निरभिमानता। वह जिज्ञासु एव शोधार्थीको यह भान नही होने देते कि वह किसी प्रकार अल्पज्ञ है। सबके स्वाभिमानका ध्यान रखते हुए वह ज्ञानार्जन-का सुगम मार्ग बताते है। प्राचीन महर्षियोकी पद्धतिका अनुसरण करनेवाला बीकानेरका यह सन्त ज्ञान-विज्ञानकी मूर्ति, विनयकी प्रतिमा, परहितचिन्तनमें सदा सलग्न, सरस्वतीका उपासक दीर्घजीवी रहे यही हार्दिक कामना है। देशका साहित्यिक सस्थाएँ सामूहिक रूपसे हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके वार्षिकोत्सव पर इनका अभिनन्दन करें यही मेरा प्रस्ताव है।

●

'स्वाध्यायान्मा प्रमद' के मूर्तस्वरूप नाहटाजी

श्री सौभाग्यसिंह शेखावत

राजस्थानके उच्चकोटिके वयोवृद्ध विद्वान् श्री अगरचन्दजी नाहटा बहुमुखी प्रतिभाके धनी है। प्राकृत, अपभ्रंश, राजस्थानी, गुजराती और हिन्दी भाषाओंपर आपका समान रूपसे अधिकार है। प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थोकी लिपियो, शिलाखण्डोंपर उत्कीर्ण लेखो, ताम्रपत्रो और पत्र-फरमानोको खोज निकालने तथा पढनेमे आप विचक्षण मतिके व्यक्ति है। राजस्थान, गुजरात, मालवा और हरियाणाके जन-सकुल नगरोकी संकीर्ण गलियोमें स्थित अंधेरे तलगृहोमें जीवनके अन्तिम श्वास गिनते तथा दूर-दूरके कस्बोमें पंसरियो की हाटोमें कौडीके मोल विकते ग्रथ-रत्नोंके उद्धारकके रूपमें नाहटाजी चिर-परिचित मनीषा है। अन्वेषण और लेखनमें अहोरात्र सलग्न रहनेकी नाहटाजीमें अद्वितीय लगन है।

मेरा उनसे साक्षात्कार सर्वप्रथम कलकत्तासे प्रकाशित 'राजस्थान' और 'राजस्थानीय' शोध पत्रिकाओके माध्यमसे हुआ। यद्यपि उनके दर्शनका अवसर तो 'राजस्थान साहित्य एकादमी' की स्थापनाके बाद एकादमीके उद्‌घाटन समारोहपर उदयपुरमें ही मिला। परन्तु उनकी साहित्य साधनासे इससे पूर्व ही परिचित हो चुका था।

तरुणाई, प्रौढता और वृद्धता तीनो अवस्थाओमें वे एकनिष्ठ लगनसे साहित्य-साधनामें रत रहते आ रहे है। समयका सदुपयोग करनेवाला ऐसा व्यक्ति मैंने अपने जीवनमें अन्य नही देखा। एकादमीके उद्‌घाटन-के बाद तो उनसे मेरा सम्पर्क घनिष्ठ होता गया। एकादमीकी सरस्वती सभाके सदस्यके नाते परस्पर मिलने और साथ-साथ बैठकोमें भाग लेने तथा साहित्यिक योजनाओ पर विचार-विमर्श करनेके कारण उनकी स्पष्ट और बेलाग विचारधारासे मैं प्रभावित हुआ। विवादास्पद प्रसंगोमें भी वे शान्त, धीर गम्भीर निर्णय लेते हैं। अपरिचितसे परिचय बढाकर उसका आत्मीय बनाना नाहटाजीकी प्रकृतिका सहज अग है। यही नही श्री नाहटाजी कभी किसीसे राग-द्वेष और दुराव-छिपाव नही रखते। उनके सग्रहालयमें जो पुस्तक-निधि हैं, उसका उपयोग कोई भी साहित्यकार चाहे जब कर सकता है—कोई बन्धन नही, कोई बाधा नही और कोई नियम नही।

मैं बीकानेरमें उनसे जब कभी भी मिला प्राचीन ग्रन्थोंके पत्रोको टटोलते, ग्रन्थ परिचय लिखते और शोध-विद्वानोंके पत्रोका उत्तर देते ही उनको पाया।

नाहटाजीमें अन्तरंग और बहिरंग दोनोमें सदैव एकरग और एकरस व्यक्तित्व है। अपने अभय जैन ग्रन्थागार पुस्तकालयमें और प्रवासकालीन साहित्यिक सभा-सम्मेलनोमें उनके आचारण और व्यवहारमें कभी कोई अन्तर मैंने नही देखा।

मुझे उनके साथके दो प्रसंगोका स्मरण आता है। महाराणा कुभा चतुर्थ शताब्दी समारोहका प्रथम त्रिदिवसीय अधिवेशन उदयपुरमें हो रहा था। महाराणा भगवतसिंहजीने उसका उद्‌घाटन किया था और नाहटाजीने उसकी अध्यक्षता की थी। उस अधिवेशनमें 'महाराणा कुभा और उनके डिंगल गीत' शीर्षक एक निबन्ध मैंने भी पढा था। सम्मेलनकी द्वितीय दिनकी कार्यवाहीके सम्पन्न होनेपर विद्वानोने नाहटाजी-को घेर लिया। मैं उनसे शोध पत्रिकाके लिए निबधके विषयमें बात करना चाहता था परन्तु वे अत्यधिक व्यस्त थे। तब मैंने उनसे दूसरे दिन मिलनेका समय चाहा। उन्होने अगले दिन प्रात. सात बजे मिलना तय किया। मैं डॉ० महेन्द्र भानावतको साथ लेकर सुबह उनके प्रवासकालीन आवास-स्थानपर पहुँचा तो पता चला कि वे सात बजकर पाँच मिनट तक हमारी प्रतीक्षा करते रहे और फिर एक स्थान पर हस्तलिखित

ग्रन्थ देखने चले गये हैं। डॉ० भानावत और मैं एक क्षण मौन मन ही मन उनकी समयकी पाबंदी पर विचार करते रहे और फिर आतिथेयको बिना कोई सूचना दिये लौट गए।

ग्यारह बजे महाराणा कुंभा शताब्दिक समारोह स्थल पर जब वे पहुँचे तो सर्वप्रथम हमारे पास आये और कहा—"आपकी प्रतीक्षा की।" आप जब नियत समय पर नही पहुँचे तो मैं हस्तलिखित ग्रन्थोका सग्रह देखने चला गया। चार घटेमें मैंने अज्ञात ७ ग्रन्थ खोज निकाले।" उसी समय मुझे सहसा 'स्वाध्या-यान्मा प्रमद' का मन्त्र याद हो आया और लगा कि स्वाध्यायसे कभी प्रमाद मत करो का रहस्य नाहटाजीने समझा है। सच तो यह कि नाहटाजी 'स्वाध्यायान्मा प्रमद' के स्वय मूर्त्तिमन्त रूप हैं।

दूसरा प्रसंग है बीकानेरका। मैं राजस्थान शोध सस्थान चौपासनीकी त्रैमासिक पत्रिका 'परम्परा' के 'राजस्थानी रूक्के परवाने' अककी सामग्रीका चयन करनेके लिए पुरालेखा विभाग, बीकानेर गया था। मैंने नाहटाजीको जोधपुरसे प्रस्थान करनेके दो दिन पूर्व मेरी बीकानेर यात्राकी सूचना भेजी थी। बीकानेरमें मैंने ग्रीन होटलमें अपना सामान रखा और पुरालेखा विभागकी राह पकडी।

पुरालेखा विभागमें तब स्व० नाथूरामजी खड्गावत निदेशक थे। वहाँ पहुँचते ही मैंने उनके कार्यालयमें प्रवेश किया और जोधपुरसे बीकानेर आनेका अपना मन्तव्य प्रकट किया। खड्गावतजीने मेरी ओर एक सरसरी नजरसे देखते हुए तपाकसे उत्तर दिया—"मैं आपको पहिचानता नही। राजस्थान पाकि-स्तानके सीमान्तका प्रान्त है। पाकिस्तानके एक गुप्तचरने राजस्थानके प्राचीन दस्तावेजोकी प्रतिलिपियाँ प्राप्त करनेकी कोशिश की थी तबसे हम किसी अपरिचितको ऐसी सुविधा प्रदान नही करते।" मैं एक क्षण स्तब्ध रहा। फिर उनसे कहा बीकानेरमें प्रो० विद्याधरजी शास्त्री, प्रो० नरोत्तमदासजी स्वामी और श्री अगरचन्दजी नाटहासे मेरा परिचय है। इनमेंसे जिसके लिए भी आप कहें, मैं अपना पहिचान पत्र ले आऊँ। नाहटाजीका नाम सुनकर उन्होंने फिर मेरी ओर देखा और कहा—"आप नाहटाजीको कैसे जानते हैं?" मैंने विनम्रतापूर्वक कहा—"मैं पिछले एक दशकसे कुछ लिखता-पढता रहा हूँ। इसलिए नाहटाजीसे मेरा परिचय है।" तब तक उन्होने मेरा नाम नही पूछा था। मैंने अपना नाम बताया तो वे झट पलगसे उठे और मुझसे हाथ मिलाते हुए बोले—"आपने मुझे पहिले अपना नाम क्यों नही बताया। मैंने आपका नाम खूब सुना है। कल रात्रिको ही आकाशवाणी जयपुरसे आपकी वार्ता-राजस्थानी' ख्यातोमें सास्कृतिक जीवनकी झलक' सुनी है। आपका आलेख मुझे पसन्द आया।"

पुरालेखा विभागके रियासती पत्रालयका अवलोकन कर मैं सायकाल होटलमें आया और भोजन करके अभय जैन ग्रन्थालय पहुँचा। नाहटाजीके पास ६०-७० पत्र-पत्रिकाएँ बिखरी पडी थी। मुझे देखते ही बोले, "अभी शामकी गाडीसे आए हैं?" मैंने कहा, "मैं तो सुबह ही आ गया था और आते ही पुरालेखा विभाग चला गया।" "आपने अपना सामना कहाँ रखा?" मैंने कहा, "होटल में।" होटलका नाम सुनते ही नाहटाजीने तत्काल मनमें कुछ पीडा-सी महसूस करते हुए कहा—"वहाँ क्यो रखा? क्या यहाँ आपका घर नही था? अभी चलो और सामान यहाँ ले आओ।" मैंने कई प्रकारके तर्क दिये परन्तु मेरी एक भी दलील उनको प्रभावित नही कर सकी। और सुबह मुझे होटल छोडकर उनके ग्रन्थागारमें ही बिस्तर लगाना पडा।

मैं चार दिन उनके यहाँ रहा और उनके साथ ही भोजन किया। वहाँ भी मैंने उनके प्रत्येक कार्यमें नियमितता देखी। नियत समय पर प्रात मन्दिर जाना, फिर आगत पत्रोंके उत्तर देना, आगन्तुक शोध विद्यार्थियोंसे उनके शोध-विषय पर वार्तालाप करना और उनके उपयोगकी सामग्रीकी सूचना देना उनका प्रतिदिनका कार्य था।

अज्ञात नये कवियो, लेखको तथा उनकी कृतियोको खोजना और उनपर निवन्ध लिखना नाहटाजीके जीवनका अनिवार्य अग और मनका व्यसन वन चुका है। वे जिस तन्मयतासे लिखते है उसी आत्मीयतासे दूसरे लोगोको लिखनेके लिए प्रोत्साहित भी करते रहते है। वे जव किसी विद्वानको पत्र लिखते हैं तो एक ही पत्रमें कितने ही कार्योकी जानकारी माँग लेते हैं। उत्तरदाताके प्रमादसे पूछे गए एक भी प्रश्नका उत्तर छूट गया तो वे तुरन्त पुन पत्र लिखकर पूछते हैं।

मैं राजस्थानी शोघ सस्थान, चौपासनीमें शाहपुर राज्यका ऐतिहासिक रेकर्ड लाया था। नाहटाजीको जव यह सूचना मिली तो वे वहुत प्रसन्न हुए और तत्काल मुझे पत्र लिखकर कहा—"शाहपुराकी तरह राजस्थानके दूसरे ठिकानोका सग्रह भी आपको चौपासनीमें ले आना चाहिए। हमारी यह निधि नष्ट हो जायेगी। आपका राजस्थानके जागीरदारो-सरदारोसे अच्छा परिचय है।"

उन वातोको चार साल वीत गए। अव भी वे महीनेमें एक वार मुझे वह वात लिख ही देते है। इस प्रकार ग्रन्थोको नष्ट होनेसे वचानेके लिए वे सतत प्रयत्नशील रहते हैं। पिछले ४५ वर्षोमें नाहटाजीने तीन-चार हजारके लगभग शोघ निवन्ध लिखे हैं और ३५ हजार हस्तलिखित ग्रन्थोका सग्रह किया है। अनेक महत्त्वपूर्ण पुस्तकोका सम्पादन किया है।

यद्यपि साहित्य-जगत्में नाहटाजीको जैन-साहित्यके अधिकारी विद्वान्के रूपमें अधिकतर पहचाना जाता रहा है, परन्तु वस्तुत वे प्राकृत, अपभ्र श, राजस्थानी और गुजरातीके भी अध्येता विद्वान् हैं। अज्ञात ग्रन्थो और साहित्यकारोके परिचयकी दृष्टिसे तो वे एक चलते-फिरते पुस्तकालय कहे जा सकते हैं। राजस्थानको अपने इस सरस्वतीपुत्र पर गर्व है और राजस्थान भारतीको उनसे वहुत आशाएँ हैं।



साहित्य तपस्वी श्री नाहटाजी

डा० मनोहर शर्मा

वैसे मेरा सम्पर्क तो सुप्रसिद्ध साहित्य-सशोधक श्री अगरचदजी नाहटाके साथ १९३७ से ही वना हुआ है परन्तु उनसे साक्षात्कार सर्वप्रथम सन् १९४७में ही हो सका और वह भी एक नाटकीय ढगसे। उन दिनो मैं जयपुरमें विसाऊ-हाउसमें रहता था और ठाकुर साहवके वालकोका 'गार्डियन-ट्यूटर' था।

एक दिन लगभग ग्यारह वजेका समय था और मैं किसी कार्यवश डेरे (विसाऊ-हाउस) के फाटकसे वाहर निकला। मैं दीवारके पास लघुशंका करनेके लिए वैठा कि एक लम्वा-चौडा व्यक्ति, धोती और लम्वा सफेद कोट धारण किए हुए तथा वीकानेरकी ओसवाली शैलीकी पगडी वाँधे हुए मेरे पास ही आकर खडा हो गया। वह व्यक्ति मेरे उठनेकी प्रतीक्षामें था और जव मैं खडा हुआ तो उसने डेरेमें रहनेवाले मेरे ही नामके व्यक्तिसे मिलनेकी इच्छा प्रकट की। मैंने आश्चर्यके साथ उसे ऊपरसे नीचे तक गहरी नजरसे देखा परन्तु सम्पूर्ण स्मृतिको समेटने पर भी उसे पहिचान न पाया। ऐसी स्थितिमें मैंने कुछ मुसकराकर उसका शुभ नाम पूछा तो तत्काल उसके मुखसे निकला—"म्हारो नाव अगरचद है।" इसी क्रममें मैंने भी तत्काल उत्तर दिया कि जिस व्यक्तिसे आप मिलना चाहते हैं, वह मैं स्वय ही हूँ। इतना कहना था कि श्री नाहटाजी-

ने मुझे दोनो हाथोसे छातीसे लगाकर ऊँचा उठा लिया । साहित्य-क्षेत्रमें इतने लम्बे समयसे कार्य करते रहने-पर भी ऐसा स्नेह-सम्मेलन प्राप्त करनेका मुझे दूसरा कोई अवसर प्राप्त नही हो सका है।

फिर मैं श्री नाहटाजी को लेकर अपने कमरेमें आ गया और बहुत देर तक साहित्यिक-विषयोपर वार्तालाप होता रहा । श्री नाहटाजी की यह विशेषता है कि जब कभी वे किसी नगरमें जाते हैं तो वहाके सभी साहित्य-सेवियोसे मिलना, उनकी प्रगतिका परिचय प्राप्त करना, उन्हें प्रेरणा देना वे अपना एक आवश्यक कर्तव्य समझते है ।

[२]

श्री नाहटाजीके साथ मेरी आत्मीयता बढती ही गई । मैं जब कभी किसी कार्यसे बीकानेर आता तो उन्हीके श्री अभयजैन ग्रथालयमें डेरा डालता और लगभग सारा ही समय विविध ग्रथोके अवलोकन या टिप्पणी-लेखनमें लगाता । एक दिन मैं अकेला पुस्तकालयमें बैठा कुछ लिख रहा था कि पोस्टमैनने श्री नाहटा-जीके नामकी ढेर-सी डाक लाकर वहाँ रख दी । यह सोचकर कि श्रीनाहटाजीकी डाक तो सम्पूर्ण रूपसे साहित्यिक ही होगी, मैं उसे देखने लगा ।

एक कार्ड बम्बईसे आया था । उसमें लिखा था—"आपका पत्र मिला परन्तु उसमेंसे कुछ भी नही पढा जा सका । बस, इससे अधिक आपको उत्तरमें क्या लिखा जावे ?"

दूसरे कार्डमें इस प्रकार लिखा था—"आपका पत्र प्राप्त हुआ । उसमेंसे जो कुछ पढा जा सका, उसका उत्तर नीचे लिखे अनुसार है ...।"

इसके बाद मैंने कोई पत्र नही देखा और डाकमें आए पत्र-पत्रिका आदि खोलकर पढने लगा । थोडी देर बाद श्री नाहटाजी अपनी हवेलीसे पुस्तकालयमें आए तो मैंने उनके सामने उपर्युक्त पत्रोकी चर्चा हँसते हुए की । वे सरल-भावसे बोले—"बात ठीक है । म्हारी लिखावट इसी ई है । पण पत्ररो जवाब देवणो जरूरी समझ'र हूं कई पत्र हाथ सूं ई लिख दूं । आज आप तकलीफ करो ।"

मैं बडे उत्साहके साथ उनके पत्र लिखनेके लिए तैयार हो गया । श्री नाहटाजी बोलते थे और मैं लिखता था । एकके बाद दूसरा, इस प्रकार लगभग २० पत्र उन्होने लिखवाए । उनमें कई कार्ड और कई लिफाफे थे । मेरी तो कमर दर्द करने लगी परन्तु फिर भी मैं पत्र-लेखनका यह कार्य बीचमें न छोड सका । जब सभी पत्रोंके उत्तर दिए जा चुके, तब चैन मिला । फिर उस दिन मैं कोई काम नही कर सका और भाई मोहनलालजी पुरोहितके घर जाकर, उनसे जैसलमेरी गीत सुनकर ही मैंने अपना दिमाग फिरसे ताजा किया ।

इससे प्रकट होता है कि श्री नाहटाजी कितने व्यस्त रहते हैं और पत्र-व्यवहारमें कितने सचेष्ट हैं । वे चाहते है कि साहित्यके लिए जितना श्रम वे स्वय करते हैं उतनी ही मेहनत अन्य साहित्यिक-बंधुओको भी करनी चाहिए ।

[३]

बीकानेरकी 'श्री सादुल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीच्यूट' राजस्थान भरमें सबसे पुरानी साहित्यिक संस्था है । इस सस्थाके द्वारा नवम्बर सन् १९५९में 'पृथ्वीराज जयन्ती'का आयोजन किया गया और समारोहकी अध्यक्षता करनेके लिए मुझे निमंत्रित किया गया । इसी अवसरपर सस्था द्वारा स्थापित 'पृथ्वीराज आसन'से विशेष भाषण भी देना था । इन्स्टीच्यूटके डायरेक्टर श्री नाहटाजी थे । मैं बीकानेर आया और अपनी आदत-के अनुसार इन्स्टीच्यूटका अतिथि न बनकर श्री नाहटाजी का ही मेहमान बना । समारोहका सब काम यथा-विधि सम्पन्न हुआ । एक रात मैं मित्रोंसे मिलकर लगभग ११ बजे श्री अभयजैन ग्रथालयमें पहुँचा । मैंने वहाँ

देखा कि चारो ओर ग्रथोका ढेर लगा था और उनके बीचमें बैठे श्री नाहटाजी अपने अध्ययनमें लीन थे। मैं उनकी निष्ठा और एकाग्रता देखकर दंग रह गया। सारा बीकानेर सुखसे सो रहा था परन्तु वह साहित्य-तपस्वी अपनी साधनामें लीन था। उसकी विरादरीके अन्य उद्योगपति भी ऐसे समयमें ऐसी ही साधनामें तल्लीन रहते होगे परन्तु उनके सामने उनके व्यापारिक वही-चोपडोका ढेर रहता होगा न कि हस्त-प्रतियोंका पहाड।

मैंने श्री नाहटाजीके कार्यमें कोई वाधा नही डाली और सोनेके लिए अपने कपड़े ठीक करने लगा। जब श्री नाहटाजीने ग्रन्थका प्रसग पूरा पढ लिया तो वे भी सोनेके लिए अपनी हवेली चले गए। उपर्युक्त प्रसगमें श्री नाहटाजीकी साहित्यिक-सिद्धिका रहस्य स्पष्ट समझा जा सकता है—जो चलता रहता है, वही अमृतको प्राप्त करता है।

[४]

काफी वर्षों पहिले मैंने पी-एच० डी० हेतु शोध-ग्रंथ लिखनेकी इच्छा की थी परन्तु वह कार्य यो ही छोड दिया। फिर भी विविध विषयोपर लिखनेका कार्य जारी रहा। जब मैं रामगढके रूइया कालेजमें आ गया तो डॉ० कन्हैयालालजी सहलने मुझे जगाया कि पी-एच० डी० विषयक कार्य पूरा कर डालना उचित ही है। मैं तैयार हो गया। यह चर्चा सन् १९६३ की है।

मैंने राजस्थानी कहानियोका विशेष अध्ययन किया था, अत 'वाल-साहित्य' पर शोधग्रन्थ तैयार करनेका निश्चय किया और सामग्री-संकलन हेतु मैं श्री नाहटाजीके पास बीकानेर आया। मुझे पता था कि राजस्थानी-वातोसे सम्वन्धित हस्तप्रतियोका संग्रह बीकानेरमे लगभग पूरा ही प्राप्त हो सकता है। श्री अभय जैन ग्रन्थालयमें अधिकाश वातें नकल करवाकर श्री नाहटाजी कभीसे सुरक्षित कर चुके थे। यह सम्पूर्ण सामग्री मेरे सामने थी परन्तु मै बीकानेर अधिक समय तक ठहरनेकी स्थितिमें नही था। काम लम्वा था और रामगढमें रहकर ही पूरा किया जा सकता था। मैंने श्री नाहटाजीसे सम्पूर्ण सामग्री अपने साथ ले जानेके लिए इजाजत माँगी तो वे असमजसमें पडेसे प्रतीत हुए क्योंकि वे स्वय अपने लेखोमें उसका प्रसगानुसार प्रयोग करते ही रहते थे। मैंने उनका असमजस दूर करते हुए कहा—"किसी भी साहित्य-सामग्रीपर उस व्यक्तिका सवसे ज्यादा हक है, जो उसका अध्ययन करना चाहता है। अब आप स्वयं निर्णय कर लीजिए कि आपके ग्रन्थागारमें सचित राजस्थानी वातों सम्वन्वी सम्पूर्ण सामग्री आपकी है या मेरी ?"

श्री नाहटाजी कुछ हँसे और तत्काल वोले—"सारी सामग्री आपकी है, आप इच्छानुसार साथ ले पधारो।" मैं अपने कामकी सम्पूर्ण सामग्री साथ ले आया।

इस प्रसगसे प्रकट है कि श्री नाहटाजी जिन हस्तप्रतियोको अपने प्राणोसे भी ज्यादा प्यार करते है, उन्हें वे उपयोगके लिए सुपात्रको देनेमें कभी सकोच नही करते परन्तु उन्हे यह विश्वास हो जाना चाहिए कि सामग्री लेनेवाला व्यक्ति वस्तुत. विद्यार्थी है। श्री नाहटाजीकी इस उदारतासे न जाने कितने शोधकर्ता-विद्वान् लाभान्वित हुए है और अब भी हो रहे हैं।

आगे जाकर उपर्युक्त प्रसंगने यहाँ तक विस्तार प्राप्त किया कि जब मैं सन् १९६७ में श्री शार्दूल संस्कृत विद्यापीठ, बीकानेरमें आ गया तो श्री नाहटाजीने अपने घरपर यहाँतक व्यवस्था कर दी कि उनकी अनुपस्थितिमे भी जब कभी मैं माँगूँ तो पुस्तकालयकी चावी तत्काल मुझे दे दी जावे और वहाँकी पुस्तकोका मैं इच्छानुसार उपयोग करता रहूँ।



यत् क्रियते तन्नाधिकम्

श्री नेमिचन्द पुगलिया

श्रुतमिदं च ज्ञातम्, श्रीमद् अगरचन्द नाहटा महोदयानामभिनन्दन भविष्यति वा करिष्यन्ति जना. । चिन्तित चेतसि समाजोऽयं जागृत । अविस्मृतिरेषा ये सुप्तास्त एव जागृता , न तु मृता जागृता. । यत् साहित्योपासकना, लेखकाना, सशोधकाना, प्रबोधकाना, पाठकाना, प्रचारकाणां, च सामूहिकोऽयं सत्कार समारंभ समायोजित सहर्ष ससुखम् ।

विचारयाम्यहं सशयात्मा कि व्यापारिणोऽपि साहित्यकारा भवन्ति ? भवन्त्येव नाऽत्र सदेह । भवता दर्शनाच्च परिचयात्प्राप्त प्रत्युत्तरोऽहं स्वयमेव ।

साहित्यसेविन स्वाध्यायरसिका- भवन्त्यत एव भवद्भि प्रतिदिन प्रत्यूषसि पंचवादनसमये समुत्थाय घंटात्रयपर्यन्त नियमितरूपेण क्रियते स्वाध्याय ।

साहित्यस्रष्टार सोद्यमा नत्वलसा लसन्त्यत एव श्रीमद्भि आबाल्यात् यत् कर्त्तव्य, यत् स्मर्त्तव्य, यल्लिखितव्यं, यत् प्रत्युत्तरितव्यं, यत् स्रष्टव्य, यत् प्रष्टव्य, यत् सग्रहणीय, यत् क्रयणीय, यत् सूचनीय, यत् विवेचनीयं, यत् सशोधनीय, यत् प्रबोधनीय, यत् विश्वसनीय, यत् निष्कासनीय, यत् देयं, यदुपादेय, यत् पठनीय, यत् पाठनीयं, यत् आचरणीयं, यत् विचारणीय, यत् वचनीयं, यत् निर्वचनीयं तत्सर्वं न विलम्वालम्वनमवलम्बितम् ।

साहित्याराधका स्वल्पाऽहारिण सयमित समया , परिमितहित खाद्य पेय वस्त्वोपभोक्तार एव ? उपशोभन्ते, अत एव श्रीमन्तो न निशाया दिवसेऽपि वार द्वयादधिक भुजते, भोजनमपि सात्त्विक, न च राजसिकम् ।

साहित्यशोधकर्त्तार सरलात्मान साधुवेषभूषाऽभिमण्डिता सश्रूयन्त अत एव भवता वेषोऽपि भारतीय. तस्मिन्नपि राजस्थानीय , तस्मिन्नपि वीकानेरीय , तस्मिन्नपि नाधुनिक , सर्वथा नाहटा परिवार परम्परा परिलक्षित' ।

साहित्यघना. अन्यस्मै प्रेरणा-प्रदातार एव भवन्ति अत एव भवता प्रेरणया स्थानीयास्तथा परस्थानीया अनेके छात्रा , अध्यापका , शोधकार्यकर्त्तार , लेखका , जिज्ञासव लाभान्विता. अभूवन्, भवन्ति भविष्यन्ति च नात्र सशयप्रवेश. ।

एतादृशाना वयोवृद्धानां अनेक पदाभिलंकृताना, विद्यावारिधीनाम् इतिहासरत्नाना, सिद्धान्ताचार्याणा, शोधमनीषिणा श्रीमद् अगरचन्द-नाहटा-महोदयाना यावदभिनन्दनं तावन्नाधिक, किन्त्वल्पमल्पतरमल्पतममेव मन्येऽहमत्र ।

अनवरत साहित्योपासक

डॉ० लालचन्द जैन

श्री नाहटाजी की साहित्य-साधनासे, उनकी सरल-सौम्य प्रकृतिसे, उनसे प्राप्त अतिशय स्नेह एवं शोध-क्षेत्रमें दिशा-निर्देशनसे मैं सदैव प्रेरणा लेता रहा हूँ। मुझे गर्व है कि उनका कृतिकार, उनका मानव, उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व एक अमित आभा और अनूठी गरिमासे सम्पुटित है, अगणित व्यक्तियोके लिए प्रेरणा-पुज है, आदर्श राजपथ है।

सन् १९६६ के ग्रीष्मावकाशने मुझे श्री नाहटाजीसे मिलनेका अवसर दिया। पत्र-व्यवहार सन् १९६४ से ही था क्योकि मैं "जैन कवियोके व्रजभाषा-प्रबन्धकाव्योका अध्ययन" विषयपर शोधकार्य कर रहा था। इससे पूर्व सन् १९५८-५९में जब मैं एम० ए० का विद्यार्थी था, तब महाराजा कॉलेज जयपुरमें नाहटाजीका एक व्याख्यान हुआ था। उस समय उनके सम्बन्धमें मेरे मानसमें जो चित्र बना, उसे कतिपय शब्दोमें प्रस्तुत करता हूँ—

एक साथीने मुझसे कहाकि 'आज नाहटाजीका भाषण होगा। बडे विद्वान् है वह। बहुत बडे आदमी हैं वह ···आदि-आदि'। मैंने सोचाकि नाहटाजी अंग्रेजी पोशाकमें होगे, अंग्रेजी बाल रखाए होगे, अंग्रेजियत के रंग-ढंगमें होगे। लेकिन जब उनके दर्शन हुए तो पाया कि उनके मुखपर घनी मूछें हैं, सिरपर भारी फेंटा है, लम्बा कुरता है, दुलांगी धोती है, पैरोमें जूतियाँ हैं। मैं उनको आश्चर्यके साथ देखता रहा—देखता रहा, उनके सम्बन्धमें सोचता रहा—सोचता रहा। जब उनका भाषण सुना तो मेरे आश्चर्यका ठिकाना न रहा। दुरूह विषयको सरल विधिसे स्पष्ट करना उनके बायें हाथका खेल था। गहराईमें डूबकर, प्रमाणोको चुन-चुनकर सामने रखनेमें उन्हें जैसे अलौकिक आनन्दकी अनुभूति हो रही थी। वह बोलते जा रहे थे और हम सुननेमें तल्लीन थे। उस दिन मैंने उनको सुना था। उनसे व्यक्तिगत रूपसे मिल नही पाया था। मुझे दुःख है कि संकोच और लज्जाने मुझे मिलने नही दिया। गांवका रहनेवाला, कठिनाइयोमें पलने और पढनेवाला मैं ऐसे मेधावीसे मिलते हुए लजाता था।

महाराजा कॉलिजमें उनके केवल दर्शन हुए, उनसे भेंट नही हुई। मैं इसे भेंट नही मानता क्योंकि भेंटमें परस्पर विचार-विनिमय होना चाहिए और वह था नही। असलमें भेंट हुई सन् १९६६के जूनमें। यह भेंट दो-चार घण्टेकी नही थी। मैं तो लगभग पन्द्रह दिन तक उनके संरक्षणमें रहा, उन्हींके ग्रन्थालयमें रहा, उन्हीके यहाँ खाता-पीता रहा। मुझे याद है कि उन्होंने बडी मुश्किलसे चार-पाँच दिन अन्यत्र खाने दिया, वह भी इसलिये कि मैं बालकोकी भाँति हठी बन गया था। मैं सोचता हूँ कि आज कितने हैं ऐसे, जो स्नेहके साथ ज्ञानका दान देते हो, सुपथ दर्शाते हों, अपने यहाँ रखते हो और अपनी गाँठसे खिलाते भी हो।

अब देखिये, उनका साधक रूप। उनका यह रूप तो और भी हृदयस्पर्शी है। सचमुच वे सरस्वतीके पुत्र हैं। मौन तपस्यामें उनका अखण्ड विश्वास है। उनका अपना कोई ससार है, तो वह है ग्रन्थोका संसार यही संसार उनके कर्मका, तपका, आनन्दका, जीवन और जागरणका ससार है। हस्तलिखित ग्रन्थो और पुस्तकोंके ढेरके मध्य आसन लगाकर बैठे हुए उनकी छवि अद्भुत लगती है। उस छविमें एक दिव्य आकर्षण होता है और उसके द्वारा एक अनूठे आदर्शकी प्रतिष्ठा होती है। लम्बी आयु पाकर, ढलती हुई अवस्थामें पहुँचकर कोई व्यक्ति कितने ही घण्टे कागजके पत्रोंसे अपनी आँखोको चिपटाये रखे, अपना दिल और दिमाग उन्हींके लिए समर्पित कर दे, उसे हम क्या कहेंगे? प्रश्न करनेपर कोई व्यक्ति एकके पश्चात् दूसरे-का यथोचित उत्तर देता चले, रुकनेका नाम न ले और इस प्रकार उसके वचनोंसे जिज्ञासुओकी जिज्ञासा शान्त होती चली जाये, उसे हम क्या कहेंगे? ऐसे व्यक्तिके सम्बन्धमें सामान्यत. दो धारणाएँ बनेंगी।

प्रथम यह कि वह पूरा और सच्चा साहित्यसेवी है, उसका जीवन साहित्यकी सेवाके लिए है। द्वितीय यह कि वह प्रतिभावान् मनीषी है, प्रत्युत्पन्नमति है और उसकी प्रतिभा एव क्षमता 'स्व' के उपयोगके लिए नही, 'पर' के उपयोगके लिए है।

नाहटाजीके समीप रहते हुए मैंने यह अनुभव किया कि साहित्यिक क्षेत्रमें उनकी दृष्टि विल्कुल अर्थपरक नही है। इस काममें अर्थसे उनका कोई सम्बन्ध नही। यह दूसरी वात है कि ईश्वरने उन्हें अर्थ-सम्पन्नता दे रखी है, फिर भी उनकी निर्लोभिता, उनका त्याग, उनकी उदारता स्पृहणीय है। नही तो इस अर्थयुगमें लोग अर्थके लिए न जाने क्या-क्या करते हैं, कहाँ-कहाँ दौडते है और इतना ही नही जान देने-लेनेको उतारू हो जाते हैं। इसके विपरीत नाहटाजी हैं, जो ग्रन्थोके संग्रहपर, शोधार्थियोंपर, ग्रन्थालय देखने जाने वालोपर उलटा खर्च करते हैं। इस प्रकार वह आर्थिक हानि और कष्ट सहकर भी अमित सतोषका अनुभव करते हैं, मानो साहित्यकी उपासना उनके जीवनका एक महत्त्वपूर्ण अग है, आत्माकी भूख-प्यासकी शान्तिका एक सवल साधन है। उनका ऐसा साधक-रूप न केवल लुभावना है, अपितु निराला भी है।

उपर्युक्त सदर्भ में एक वात और जोड देनी चाहिए। यह माना कि नाहटाजीके पास बी० ए०, एम० ए० की उपाधि नही है। यहाँ तक कि उनके पास मैट्रिक या मिडिल पासका प्रमाणपत्र भी नही है। स्वयं उन्हीके शब्दोमें—"मैं वहुत कम पढा-लिखा हूँ। मैंने छट्ठी कक्षा भी पास नही की। व्यवस्थित अध्ययन चला ही नही ।" इन शब्दोमें उनकी सरलता, स्पष्टता एवं निश्छलता छिपी हुई है। मेरी दृष्टिमें अभावोको खोलकर रख देनेसे व्यक्ति महान् वनता है। फिर मैं इसे अभावकी सज्ञा भी कैसे दूँ ? यह अभाव है कहाँ ? मात्र बडी-बडी उपाधियाँ धारण करनेसे व्यक्ति महान् नही बनता। वह महान् वनता है लगन और सकल्पके साथ निरन्तर कर्म करनेसे, आदर्श जीवन व्यतीत करनेसे, जीवनको जीवनकी तरह भोगनेसे। नाहटाजी इसके उदाहरण हैं। पूर्ण जिज्ञासा, रुचि एव तन्मयताके साथ लगातार ग्रन्थोका अध्ययन-अनुशीलन करनेसे उनके ज्ञानकी परिधि कहाँ तक बढ गई, यह कहना कठिन है। उनके प्राणोका कर्ममय स्पन्दन सवके लिए प्रेरणाका स्रोत है। निश्चय ही कर्ममें रत मनुष्यकी शक्ति निस्सीम हो जाती है। उसके लिए कठिनसे कठिन काम सरलसे सरल हो जाता है, पत्थर फूल वन जाता है। वस्तुतः सतत साधना ऐसी ही होती है। नाहटाजी अपनी अनवरत साधनासे ही विकासकी इस अवस्थाको प्राप्त हुए हैं।

कहना न होगा कि साधनाने उनको वहुत ऊँचा चढा दिया है। इस ऊँचाईसे मेरा अभिप्राय यह है कि अध्ययनकी गहराईने ज्ञानके क्षेत्रमें उनको गरिमामयी बना दिया है। मेरे लिए यह विस्मयकी वात है कि कितने ही जैन कथानक उनकी दृष्टिमें घूमते रहते हैं। उन कथानकोंके मर्मसे वह भली-भाँति परिचित हैं। मैंने जव अपने ऐतिहासिक नाटक 'अमर सुभाष'की प्रति उनको भेंटमें दी तो उसे देखकर वह वोले—

"जैन कथानकोको लेकर जव आपकी इच्छा नाटक लिखनेकी हो तो समय लेकर इधर आइये। मैं आपको एक-से-एक ऐसे अप्रतिम कथानक दूँगा, जिनके आधारपर अच्छे नाटकोका प्रणयन किया जा सकता है।"

मुझे खेद है कि तवसे अव तक मैं वीकानेर न जा सका, जवकि वहाँ जानेकी चाह अव भी ज्यों-की-त्यों वनी हुई है। सोचता हूँ कि जव मेरा लिखनेका काम वरावर चल रहा है तो वह सयोग भी आयेगा, जव नाहटाजीकी भावनाके अनुरूप इसी निमित्त मैं उनके पास पहुँचूँगा, उनको कष्ट देकर उनके साहचर्यसे लाभ उठाऊँगा।

नाहटाजीके धैर्य एव गाभीर्यकी चर्चा और करूँगा। इस सदर्भकी एक घटना मेरे सम्मुख चित्रवत् है। मेरे वीकानेरके प्रवासकालमें ही नाहटाजीके यहाँ दस-पन्द्रह हजार या इससे अधिक राशिके आभूषणादि-

की चोरी हो गई। निस्सन्देह यह एक आकस्मिक धक्का था, यह एक गहरी चोट थी। लेकिन उस समय भी वह पूर्ण शान्त एव गंभीर थे। देखता था कि उनकी दैनिक चर्यामें कोई अन्तर नही आया है। अध्ययन-अनुशीलनकी गति वही है, ग्रन्थोसे लगाव उतना ही है, उस कामके लिए समय उतना ही है। मैं यह नही मानता कि चोरी हो जानेका उनको दु:ख न था, वह तो होगा किन्तु वह होगा भीतर ही, बाहर वह अभिव्यक्त नही हो पा रहा था। ऐसे अवसरकी धीरता और गभीरता वास्तवमें वरेण्य थी। विपत्तिमें धैर्य न खोकर, अविकल रहकर गभीर बना रहने वाला मानव सामान्य मानवसे बहुत ऊँचा होता है।

वे क्षण भूलने योग्य नही है, जो नाहटाजीके पास रहकर बिताये। वे क्षण मेरी स्मृतियाँ है—मधुर आनन्ददायिनी और अमिट स्मृतियाँ—ऐसी स्मृतियाँ, जो मेरे जीवनमें ऐतिहासिक महत्त्व रखती हैं।

●

बीकानेर और नाहटाजी

डॉ० नारायणसिंह भाटी

पूरे बीकानेरमें मेरे लिए आकर्षणकी कोई वस्तु है तो वे है अगरचन्दजी नाहटा। संस्थानके कार्यसे कई बार बीकानेर जानेका अवसर आता ही रहता है। कई बार बडी व्यस्तता रहती है परन्तु ऐसा शायद ही कभी हुआ हो जब नाहटाजीसे मिले बिना लौट आनेके लिए मन राजी हो गया हो।

नाहटाजीके घर तक पहुँचनेमें किसी भी अपरिचित आदमीको कोई कठिनाई नही हो सकती। साहित्यकारकी तो बात छोड दीजिये, हर तागे वाले से पूछ लीजिये, किसी चलते फिरते डाकियेसे पूछ लीजिये, वह फौरन साहित्यकार नाहटाजी, लाइब्रेरी वाले नाहटाजी, मूँछो वाले नाहटाजीका पता बता देगा और बहुत बार तो मोहल्ले (नाहटोकी गवाड) तक पहुँचते-पहुँचते ही यह सूचना भी मिल ही जाती है कि नाहटाजी यहाँ है या कही बाहर गये हुए हैं।

मैं जब भी उनसे मिला, या तो वे लाइब्रेरीमें ग्रथ देखनेमें व्यस्त मिले या घरपर, न मदिरमें, न बाजारमें और न रिश्तेदारके घरपर। हाँ, एक-दो बार यह पता अवश्य लगा कि वे अनूप सस्कृत लाइब्रेरी गये हुए है और अभी-अभी लौट आएँगे। वे हर व्यक्तिसे बडी सरलतासे मिलते हैं और लाइब्रेरीमें पहुँचते-पहुँचते कामकी बात शुरू कर देते हैं।

मैंने उनमें सबसे बडी बात यह देखी कि आलस्य जैसी चीज उनको छू तक नही गई है। किसी भी शोध-विद्यार्थीके पहुँचनेपर वे अविलब उसकी सहायतार्थ तैयार हो जाते है। बस्तोमें से ग्रथ टटोलकर निकालना, पुरानी फाइलें ढूँढकर निकालना आदि उनके जीवनकी सामान्य गति-विधि बन गई है। मैं जब डिंगल गीतोपर शोधकार्य कर रहा था तो एक बार इस निमित्त ही वहाँ पहुँचा। सामग्रीकी बात करते-करते बोले, "जैनियोने डिगल गीत लिखे तो है पर उनका मिलना बडा कठिन है।" और फिर धीरेसे उठकर एक बस्ता निकाला तथा कचरदासके कुछ गीत निकाल कर दिये। मैं उनकी स्मरण-शक्ति देख कर दंग रह गया और साथ ही मुझे यह बात भी समझमे आ गई कि हजारो अज्ञात कृतियोको नाहटाजी किस प्रकार प्रकाशमें ले आये। नयी कृतियोको प्रकाशमें लानेकी उनकी सी आतुरता मैंने किसी साहित्यकारमें नही देखी। वे बिना किसी प्रकारकी विद्वत्ता बघारे फौरन साहित्य-जगतको नई कृतिसे अवगत करना जैसे अपना कर्तव्य समझते है।

प्राय· साहित्यकारोंमें देखा जाता है कि एक-दो महत्वपूर्ण कृति हाथ लगनेपर वरसो तक उसका अचार वनाते रहते हैं। उस कृतिसे किस प्रकार ख्याति अर्जित की जाय, कैसे कोई आर्थिक लाभ उठाया जाय या डिग्री प्राप्त कर ली जाय आदि विचार करते रहेंगे और उस कृतिको दिखायेंगे तक नही। परन्तु नाहटाजी इन वातोंसे ऊपर हैं। अपने पास ही नही अनूप सस्कृत लाइब्रेरी आदि अन्य स्थानोपर भी कोई कृति शोधकर्ताके कामकी होगी तो उसे उपयोगके लिए प्राप्त करवानेकी भी पूरी चेष्टा करेंगे। उनको इस प्रकार कार्यरत देखकर मुझे जो प्रसन्नता होती है वह शब्दातीत है।

मुझे हर वार यह ख्याल आये विना नही रहता कि राठौड पृथ्वीराजने जिस नगरमें रहकर वेलि जैसे डिंगलके सर्वश्रेष्ठ काव्यका सृजन किया और डॉ० टैसीटरी जैसे विद्वान्ने राजस्थानी साहित्यका उद्धार किया, वह नगर कितना भाग्यशाली है कि वहाँ नाहटाजी जैसे कर्मठ साहित्य-सेवी विद्यमान हैं।

नाहटाजीका अभय-जैन ग्रन्थालय राष्ट्रकी महत्त्वपूर्ण निधि है और वीकानेरके लिए गौरवकी वस्तु है। यदि उसे सार्वजनिक रूप देकर उसकी स्थायी व्यवस्था वहाँकी जनता नाहटाजी की देखरेखमें करे तो नाहटाजी और वीकानेरका नाम साहित्य-जगतमें कल्पान्तर तक अमर रहेगा।

जय राजस्थानी !

●

विद्याप्रेमका एक जीवन्त प्रतीक, एक संस्था

डॉ० हीरालाल माहेश्वरी, डी० फिल्०, डी० लिट्०

श्री अगरचन्दजी नाहटाका नाम विद्याप्रेमका जीवन्त प्रतीक और सस्थाका वोधक है।

उनकी स्कूली शिक्षा अधिक नही हो पाई। वातचीतके प्रसंगमें यदाकदा वे स्वयं ऐसा कहा भी करते है, किन्तु स्वाध्याय और निरन्तर अध्ययनशीलताके कारण आज वे देशके मूर्धन्य शोधकर्ता और विद्वान् माने जाते हैं। इस क्षेत्रमें दूसरोंके लिए वे प्रेरणा-स्रोत है। जिज्ञासुओं, शोधार्थियो और विद्यार्थियोकी सहायता तो वे निरन्तर करते ही रहते है—हर प्रकारसे उनकी सतत विद्यानिष्ठा और साहित्य-साधना देखकर कभी-कभी वहुत ही आश्चर्य होता है। कहाँसे मिलती है उनको यह प्रेरणा ? उनको कभी थकते नही देखा इस साधनामें। क्यो नही थकते वे ? लक्षाधिक रुपए लगाकर उन्होने दुर्लभ हस्तलिखित प्रतियोका सग्रह-सचयन किया है, जो उपलब्ध नही हो सकी—उनमेंसे अधिकाशकी प्रतिलिपियाँ करवाई हैं। क्यो और किसलिए ?

इन प्रश्नोके उत्तर विभिन्न लोग विभिन्न प्रकारसे देंगे। किन्तु मूल वातपर सभी एकमत होंगे—वह यह कि साहित्य-साधना उनकी आत्माका विशिष्ट संस्कार है, उनकी आत्मा और इस साधना का तादात्म्य है, दोनोकी तदाकार स्थिति है। इन सवकी प्रेरणा उनको स्वात्मासे ही मिलती है। मेरी समझमें इन सवका एक ही उत्तर है—आत्म प्रेरणा। पर क्या सभी यह कर पाते हैं ? नही, सवके लिए यह सम्भव नही है। युगोकी सतत साधना इसके लिए अपेक्षित है। मनकी एकाग्रता, दुनियादारी और दैनंदिन सैकडो वाधाओ, घटनाओं और अनेक भाँतिकी हलचलोको स्थितप्रज्ञको भाँति सहना, उनको निभाते भी चलना तथा साथ ही यह साधना करते जाना—वडे जीवट, असीम धैर्य और अद्भुत मनोशक्तिका कार्य है। नाहटाजीमें ये गुण है। उनके ये ही गुण उनको वैशिष्ट्य प्रदान करते है। निराला है उनका व्यक्तित्व !

नाहटाजीकी साहित्यिक-सास्कृतिक देनका मूल्याकन तो अभी किंचित् भी नही हुआ है। किसीने प्रयास भी नही किया प्रतीत होता। यह अब होना चाहिए। जिस दिन यह होगा, साहित्यके अनेक अधेरे, अनुन्मीलित, रचमात्र या अर्द्ध-प्रकाशित कोने उजागर होंगे, अनेक नवीन मान्यताओको आधारभूमि मिलेगी, साहित्य-चिन्तनका प्रवाह नया मोड लेता दृष्टिगत होगा और होगा गर्व हमारी सस्कृतिको समग्रतामें। भारतीके सैकडो अन्धकारपूर्ण पथोपर नाहटाजीने मागलिक, नवीन, चिर-स्मरणीय किन्तु ठोस दीप संजोए और जलाए हैं। क्या इसका लेखा-जोखा थोडेसे शब्दो द्वारा किया जा सकता है? जो काम सुगठित सस्थाएँ वर्षोंके प्रयाससे भी सम्यक्रूपेण नही कर पाती, उनको नाहटाजीने अकेले कर दिखाया है और सस्थाओंसे भी अच्छे रूपमें।

नाहटाजी एक व्यक्ति नही, एक संस्था हैं। ऐसी एक सस्था, जिसके अन्तर्गत अनेक उपसंस्थाएं निरन्तर कार्य करती हैं। सो सस्था है नाहटाजी। अपने क्षेत्रमें वे अप्रतिम विद्वान् हैं। करोडोमें एक हैं नाहटाजी।

मैं भारतीके ऐसे वरदपुत्रकी दीर्घायु-कामना करता हूँ और हृदयके श्रद्धा-सुमन भावरूपमें उन्हे अर्पित करता हूँ। इनका जितना भी स्वागत किया जाय, कम है।



नाहटाजी नाहटे

श्री भरत व्यास

करीव पच्चीस वर्ष वीते, मुझे हल्की सी याद है। मैं श्रीयुक्त नाहटाजीके वीकानेर वाले घरमें गया था। वहाँसे वे मुझे वडे स्नेहके साथ अपने पुस्तकालयमें ले गये और वहाँ उनका साधना सग्रह देखा, तो उनपर मेरी इतनी श्रद्धा हो गई कि उस दिनके वाद आज तक यह श्रद्धा प्रतिदिन वढती ही गई। अब उनके अभिनन्दनके समाचार सुनकर इसके सयोजको और सुयोग्य सम्पादकोको धन्यवाद देनेको जी चाहता है।

राजस्थानी साहित्यमें जो काम नाहटाजीने अनवरत परिश्रम, लगन और साधनासे किया है, वह साहित्यिक इतिहासमें युग-युगो तक अमर रहेगा।

एक व्यापारिक समाजमें उत्पन्न होकर उन्होने साहित्यसागरमें गोते लगाकर जो विविध मोतियोंका चयन किया है, उन्हें देखकर आश्चर्य, आनन्द, और श्रद्धासे हमारा हृदय भर जाता है। मन सोचने लगता है कि इतना सादा और साधारण जीवन व्यतीत करनेवाला व्यक्ति कितना महान् और असाधारण है।

लम्वा डील, घुटनो तककी धोती, जाँघ तक ढुलता हुआ लम्वा कोट, राजस्थानी शैलीकी मूँछें, शोधकार्यकी खोज करनेवाला पुराना चश्मा और चेहरेकी लम्वाईसे भी लम्वी वाँई तरफको झुकनेवाली केशरिया पगडी, निरन्तर चिन्तन करता हुआ चेहरा, तथा वोलनेमें मितव्ययता, इन सव गुणोका समन्वय करनेवाले, सादा जीवन और उच्च-विचारको व्यक्तित्वका रूप देनेवाले व्यक्तिका नाम श्री अगरचन्दजी नाहटा है। वे अगरकी तरह स्वय जल-जलकर सारे वातावरणको सुगन्धित करते रहते है। अपने अथक और अनवरत परिश्रमसे जीवनपर्यन्त न हटनेकी प्रतिज्ञा करके अपनी 'नाहटा' जातिको गौरवान्वित किया है।

इस दुरूह राहपर चलकर नाहटाजीने जो-जो मंजिलें तय की हैं, उसका स्वयं एक इतिहास है। कभी-कभी उन्हें देखता हूँ तो ऐसा लगता है, कि ये गुपचुप रहनेवाले वुद्धिमें कितने विराट है ? "न भूतो न भविष्यति"की कहावतको चरितार्थ करनेवाले ये राजस्थानके रत्न साहित्यके प्रागणमें सदा जगमगाते रहेंगे।

सीधे और दिनके प्रकाशमें सफर करनेवाले तो वहुतसे जीवनयात्री देखे है, किन्तु अमावस्याकी अँधेरी रातमें और ऊवड-खावड पगडडियोको पार करनेवाला ये महायात्री अनुपम हैं। उनके कृतित्वकी समीक्षा करना आलोचकोका काम है। कवि-हृदय तो उनके भव्य प्रकाशमय व्यक्तित्वके सामने केवल श्रद्धावनत ही सकता है।

श्रेष्ठिवर श्री अगरचन्दजी नाहटाके इस अभिनन्दन समारोहपर मेरा हृदय ईश्वरसे यही कामना करता है, कि राजस्थानके इस दृढ 'साहित्य-सिपाही'की उम्र जहाँ तक हो सके लम्बी करता जाये, ताकि राजस्थानका साहित्य सारे ससारकी साहित्य-वाटिकामें अलग ही निराले फूलकी तरह खिला लगे और इस साहित्य-तपस्वीके हीरक अभिनन्दन समारोहकी प्रतीक्षा करते रहें।

मधुमय सुगन्ध फैलानेको, 'साहित्य-अगर वत्ती' जलती—
जव तक यह कार्य न हो पूरा, तव तक ये साँस रहे चलती।



प्रेरणाप्रद व्यक्तित्वके धनी श्री नाहटाबन्धु

डॉ० रुद्रदेव त्रिपाठी

ससारमें कुछ विरले ही व्यक्ति होगे, जिनमें सरस्वती और श्रीका समीचीन समन्वय हो। श्री अगरचन्दजी नाहटा एव श्री भँवरलालजी नाहटा ये दोनो ही बन्धु इस समन्वयके प्रतीक है। जीवनकी विभिन्न क्रियाओसे ऊपर उठकर श्री नाहटावन्धुने वर्षोसे श्रीसाधनाके साथ-साथ सरस्वतीकी साधनामें भी उतना ही मनोयोग दिया और अपनी ओजस्विनी लेखनीसे प्रसूत वैदुष्यपूर्ण साहित्यसे जनजीवनको आन्दोलित किया।

आजसे लगभग २० वर्ष पूर्व मैं श्री धीरजलाला टोकरशी शाह शतावधानी, वम्वईके साथ जैन-साहित्यसे सम्वद्ध ग्रन्थोका अवलोकन करने कलकत्ता गया था। वही इन दोनो वन्धुओके दर्शन हुए। राजस्थानकी ठेठ परम्पराके मूर्तिमान् प्रतीकके रूपमें भव्य पगडी, ओजपूर्ण श्मश्रु और तेजोमय व्यक्तित्वने मेरे मनपर एक अमिट छाप अकित की। वहाँ रायल एशियाटिक सोसायटीके सग्रहालयसे नमस्कार महामन्त्र-पर रचित प्राचीन ग्रन्थोके शोधनमें तथा उन्हे उपलव्ध करवानेमें श्री भँवरलालजी नाहटाने अपना पर्याप्त समय हमारे साथ व्यय किया और वादमें निर्वाचित प्रतियोकी प्रतिलिपियाँ करवाने, उनके फोटो उतरवाने आदिमें उनका अनन्य सहयोग किसी साहित्यसेवीको यह नि सकोच प्रेरणा देता है कि सत्कार्योंकी सिद्धिके लिए 'सह वीर्यं करवावहै' मत्र अवश्य अपनाना चाहिये।

दूसरी वार 'श्री महावीर वचनामृत' (मेरे द्वारा अनूदित) ग्रन्थ झारग्राम (वंगाल) में पूज्य विनोवाजीको हम समर्पित करने गये तव कलकत्तासे लगभग ६० प्रतिष्ठित साहित्यकार एव सम्मानित उद्योगपतियोका एक शिष्टमण्डल स्वतन्त्र रूपसे एक रिजर्व डिव्वेमें साथ गया था। उसमें श्री भँवरलालजी नाहटाजी भी थे। इस यात्रामें अतिनिकट रहनेसे श्री नाहटाजीके व्यक्तित्वका निखार और भी अधिक उर्वर प्रतीत हुआ।

लौटते समय रात्रिमें स्टेशनपर जिस रसमय वातावरणकी सृष्टि हुई, उसमें राजस्थानी काव्यधाराका आनन्द विखेरनेका कार्य श्री नाहटाजीने ही किया था।

आपको किसी साहित्यिक ग्रन्थके बारेमें संशय हो अथवा निर्णयके लिए प्रामाणिक नाम-धामादि जानने हों तो एक पत्र बीकानेर भेजिये और सप्रमाण जानकारी प्राप्त कीजिये। यह कार्य श्री अगरचन्दजी नाहटा—जो कि एक 'जगमकोप' स्वरूप हैं—तत्काल बडी उदारतासे करते हैं।

उनके पास विशाल संग्रह है उन पुस्तको और पाण्डुलिपियोका, जिन्हें श्री नाहटाजी वर्षोंसे परिपुष्ट करते आये हैं। वास्तवमें उनके द्वारा उपार्जित धनका सदुपयोग वे माँ शारदाकी ऐसी ही सेवाओमें करते आये है। (सस्कृत विश्वविद्यालय में आमन्त्रित सम्मेलनमें भी, श्री नाहटाजीका साथ मिला)।

गत वर्ष बम्बईमें श्रीमानतुगसूरि सारस्वत समारोहके मचपर इन पक्तियोका लेखक और श्री अगर चन्दजी नाहटा एक साथ ही पद्मभूषण, श्री डी० एस० कोठारीके करकमलोसे सम्मानित हुए थे।

जब मैं उन्हेल-उज्जैनमे अध्यापक था, तब वे उन्हेल भी पधारे थे। उन सब क्षणोका सुखद स्मरण श्री नाहटाजीके प्रेरणाप्रद व्यक्तित्वका अनूठा उदाहरण प्रस्तुत करता है। इस अवसरपर मैं इन दोनोकी उत्तरोत्तर साहित्यश्रीकी अभिवृद्धिके साथ सुदीर्घ और सुखमय जीवनकी कामना करता हूँ।

●

जंगम तीर्थ : श्री अगरचन्द नाहटा

डॉ० आनन्दप्रकाश दीक्षित

'अगरचन्द नाहटा' लेखकोमें एक ऐसा नाम है, जिसे जाने बिना हिन्दी साहित्यका ज्ञान अधूरा रहता है। धोती, लम्बा कोट पहने और राजस्थानी पगडी धारण किये किसी व्यक्तिको अकस्मात् कही देखनेपर नही लगता कि हम किसी विशिष्ट व्यक्तिको देख रहे हैं, किसी विशिष्ट साहित्यकारके सामने है; किन्तु परिचय प्राप्त करनेपर सहसा सुखद आश्चर्यकी अनुभूति से नही बचा जा सकता। ओह! यह है नाहटाजी जिनकी लेखनी अविराम गतिसे अज्ञात, अल्पज्ञात अथवा सुज्ञात साहित्यका परिचय, विवेचन और विश्लेपण कराती हुई साहित्येतिहास और आलोचनाको समृद्ध बना रही है। सादे लिबासमें लिपटा हुआ यह व्यक्ति अपने स्वभावकी सादगी, सरलता और भद्रताका ही प्रभाव अकित नही करता, अपने विपुल ज्ञानसे आतकित भी करता है।

नाहटाजीके पास ग्रथ-राशिकी ऐसी विपुलता है, शोधके प्रति उनमें ऐसी लगन है और विभिन्न स्रोतोकी कुछ ऐसी जानकारी है कि सामान्यत उसके दर्शन अन्यत्र सभव नही हैं। हिन्दीके कितने पूर्वत. अज्ञात ग्रथो और उनके लेखकोंकी विस्तृत जानकारी नाहटाजीने साहित्य-ससारको दी है, इसका स्वय अपना अलग ही एक इतिहास है। कितने अलभ्य ग्रथोका सपादन उन्होने किया है, इसकी तालिका उनके ज्ञानकी विस्तृतिकी परिचायक है। कितनी पत्रिकाओंके वे सपादक हैं और कितनी शोधपरक एव सामान्य पत्रिकाओ में वे निरन्तर लिखते हैं, इसका ज्ञान अभिभूत किये बिना नही रहता। हिन्दीकी बहुत कम पत्रिकायें होगी, जिनमें श्री नाहटाने कुछ न लिखा हो और प्राचीन साहित्यका शायद ही कोई अनुसधाता हो जिसके लिए नाहटाजी एक सहारा न बन गये हो। और यह सब तब है जबकि वे अपने व्यवसायकी व्यवस्था भी स्वयं बनाये रहते हैं।

श्री अगरचंद नाहटाको विगत २०-२२ वर्षोसे जाननेका सौभाग्य मुझे भी प्राप्त है। इस बीच श्री नाहटाजीकी सजगताके अनेक प्रमाण और उनके अद्वेप-व्यवहारका परिचय अनेक वार मिलता रहा है। अपने प्रमाद और दीर्घसूत्री स्वभावके कारण मै भले ही अपने व्यवहारमें पिछड गया हूँ, नाहटाजी कभी नही चूके। खोये हुए को खोज निकालनेकी शक्ति जैसी ग्रथोके सम्वन्धमें उनमें है उससे कम व्यक्तिके सम्वन्धमें नही है। उनका सहज सद्गुण है सद्भावपूर्णता। उनकी निर्लेपताका परिचय भी अनेक वार मुझे मिला है।

नाहटाजीके सद्भावका ज्ञान मुझे पहली बार तव हुआ जव १९५३ में मेरे द्वारा सपादित 'वेलि क्रिसन रुकमणी री'का पहला सस्करण उनके हाथमें पहुँचा। राजस्थानके एक पण्डितम्मन्य लेखकने जहाँ संपादनसे पूर्व मेरी जिज्ञासाओका उत्तर न देकर मुझे विद्वानोकी ओरसे निराश किया था, वहाँ नाहटाजीने पुस्तक पाते ही उसकी पंक्ति-पक्तिको पढा, अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की और मेरे प्रयत्नको सराहा। जिन स्थलोसे उन्हें सन्तोष न हुआ उनपर भी वे साफ कहनेसे पीछे न रहे। साथ ही उन्होने लिखा कि दूसरे संस्करणके समय वे चाहेंगे कि सचित्र प्रति प्रकाशित हो और उसके लिए मुझे वे संपूर्ण सामग्री उपलब्ध करा देंगे। नाहटाजी-के इस पत्रने मुझे वल दिया और उनकी स्पष्टवादिताने उनसे मतभेद प्रकट करनेका साहस भी। मेरे और उनके वीच पत्र-व्यवहारका सूत्र जुड गया। तवसे 'वेलि'का तीसरा सस्करण निकलने तक वे वरावर उसके परिशोधन-परिवर्तनको लक्षित करते रहे और जवकि आलोचनाके क्षेत्रमें प्रवेश करनेवाले एकाध लेखकने 'वेलि'के प्रथम सस्करणसे आगे पढने और जाननेसे वैर ठान लिया और तीनो सस्करणोंके रहते पहलेसे ही जूझते रहे, श्री नाहटाजीने अपनी सजगताका परिचय सदैव नयेकी जानकारीसे दिया। मैं अपनी विवशताओ-के कारण सचित्र 'वेलि' तो प्रकाशित न कर सका, किन्तु नाहटाजीके सद्भावसे वंचित भी कभी नही रहा। ऐसे निर्मत्सर और सहज स्नेही आलोचक कम ही हैं।

नाहटाजो स्वय एक सस्था हैं, व्यक्ति नही। काम करनेकी धुनके पक्के नाहटाजी काम करा लेनेकी विधि भी जानते है। वर्षों पहले नाहटाजीने मेरे पास एकके वाद एक कई हस्तलिखित ग्रथोकी प्रतिलिपियाँ स्वत भेजी और मुझे उनपर लेख लिखनेको प्रेरित किया। आज भी वे मेरी गतिविधिका निरन्तर परिचय रख रहे है। नयी दिशाओका सकेत उनसे कई बार प्राप्त होता है।

नाहटाजी सच्चे अध्येता और गुणज्ञ हैं। हिन्दीमें ऐसे पाठको की कमी है, जो अध्ययनके उपरान्त अपनी प्रतिक्रियासे लेखकोको परिचित कराएँ—मैं भी उनमेंसे ही एक हूँ। किन्तु मजाल है कि नाहटाजी कोई रचना देखें और लेखक उनकी प्रतिक्रियाके लाभसे वचित रह जाय। कई वार उन्होने मित्रोंके लेखोको पढकर अपनी ओर से ही उन त्रुटियो या तथ्योपर नया प्रकाश डाला है जो लेखककी भूल वन गये है। सच, नाहटाजी साहित्यिक मशाल ले, जङ्गमतीर्थ है।



शोधयोगी श्री नाहटाजी

डॉ० देवेन्द्र कुमार जैन

१ आप हिन्दीकी कोई भी पत्र-पत्रिका उठाएँ, चाहे वह छोटी हो या वडी, साहित्यिक हो या सामाजिक, उसमें श्री अगरचन्दजी नाहटाका लेख जरूर होगा। श्री नाहटाने यह दावा कभी नही किया कि वे वहुत वडे विद्वान् या लिक्खाड है। परन्तु उन्होने जो साहित्यसेवा की है, वह कई विद्वान् भी मिलकर नही कर सकते।

२ मझोला कद, श्याम वर्ण, स्थूल गठा शरीर, आखोपर चश्मा और सिरपर बीकानेरी पगडी। उनके व्यक्तित्व और वेशभूषामें प्रान्तीय सस्कृति सुरक्षित है। यह है उनका रेखाचित्र। साठ वर्ष पूरे कर लेनेपर भी उनमें युवकोचित उत्साह और निष्ठा है? सादगी और नम्रताकी मूर्ति। यदि आपको यह न वताया जाय कि यह नाहटा हैं तो आप कल्पना भी नही कर सकते हैं कि इन्होने इतनी वडी साहित्यसेवा की होगी।

३ मुझे याद है कि १९५० के आसपाससे मैं उनके नामसे परिचित था। परन्तु प्रत्यक्ष भेंट ५-७ वर्ष पहले ही सभव हो सकी, वह भी लाडनूमें। वहाँ मैं पू० आचार्य श्री तुलसीके सान्निध्यमें हुई जैनसाहित्य गोष्ठीमें भाग लेने गया था। श्री नाहटा वहु उद्देश्यीय व्यक्ति हैं। वे खोजी, सग्राहक संपादक, लेखक और मार्गदर्शक सभी कुछ हैं। न जाने कितनी सस्थाओसे वे सम्बद्ध है। फिर भी लगता है कि वह सन्तुष्ट नही है। वे अपने आपमें एक वहुत वडी सस्था एव मिशन हैं। दूसरोके अनुसंधान कार्यमें इतनी सक्रिय दिलचस्पी, कि आप उन्हें लिख भर दीजिए, आप देखेंगे उनसे सारी सूचनाएँ खुद-व-खुद चली आ रही है, जैसे वह टेलीप्रिंटर हो। जो जानकारी उनके पास नही है, वे वता देंगे कि वह कहाँसे मिल सकती है?

४. मुझे यह कहने या लिखनेमें जरा भी संकोच नहीं कि श्री नाहटा ज्ञानके संग्रह और सूचनाओंके जीवित संदर्भ हैं। और हैं ज्ञानके सच्चे शोधयोगी और निस्पृह साधक! राजस्थानी भाषा, साहित्य और पुरातत्त्व तथा जैनसाहित्यके क्षेत्रमें पिछले तीन चार दशकोमें जो मौलिक कार्य हुआ है, इसका वहुत वडा श्रेय श्री नाहटाजीको है। अपने व्यावसायिक उत्तरदायित्वमें व्यस्त करते हुए भी इतना काम कर लेना उन्हींके वूतेकी वात है। श्री नाहटाके वारेमें यह कहना कठिन है कि वे क्या है? वे क्या नही है? वे शोधार्थी और मार्गदर्शक दोनो है। वे एक ऐसी सस्था हैं, जिसके भवनकी नींवकी पत्थरसे लेकर उसके कलशके कंगूरे वे स्वय हैं। वे सिद्धि और साधना दोनों हैं!

५ खोजमें भी उनका व्यावसायिक दृष्टिकोण वदस्तूर कायम है। शोधके क्षेत्रमें भी वे थोड़ी पूँजीसे अधिकसे अधिक मुनाफा कमानेकी ताक में रहते हैं। यह उनकी लोभवृत्तिका नहीं, अपितु सूझ-बूझका परिचायक है। वडे-वडे पुस्तक भडारोकी व्ययसाध्य (और श्रमसाध्य भी) छान-वीनके अतिरिक्त कभी-कभी वे गुदडीसे भी लाल ढूँढनेमे पीछे नही रहते। ववईकी वात है, हम लोग एक जैन गोष्ठीमे भाग लेनेके लिए सुखानन्द धर्मशालामें ठहरे थे। इतनेमें देखा, "श्री नाहटाजी 'पुस्तकों'के अटालेके साथ उपस्थित है।" पूछनेपर पता चलाकि फुटपाथसे ये वहुत सी पुस्तकोका लाटका लाट खरीदकर लाये है? कहना न होगा उसमें कई महत्त्वपूर्ण और उपयोगी पुस्तकें थी। उनका कहना था कि कभी-कभी गृहस्थ लोग पुरानी पोथियाँ कचरा समझकर कौडीके भाव वेंच देते है। परन्तु पुरानी पुस्तक छोटी हो या वड़ी, वह कभी-कभी इतिहास या परंपराकी टूटी हुई कड़ीको जोड़नेका महत्त्वपर्ण काम करती है।

उनकी वातोमे ऐसा लगता है कि उनकी इच्छा यह नही है कि उनका नाम यशस्वी शोधविद्वानोमें

लिखा जाय। वे उन शोध करनेवालोमेंसे हैं जो खोजकर महत्त्वपूर्ण सामग्रीको तथ्यात्मक ढगसे उपलब्ध करानेमें अपना श्रम सार्थक समझते हैं, जिससे कि वह कभी अध्येताके अध्ययन और विश्लेषणकी आधारभूत सामग्री बन सके ?

६ श्री नाहटाजी स्नेही इतने हैं कि एक बार परिचय होनेपर चुम्बककी तरह आपको खीच लेंगे। ज्ञानके क्षेत्रमें वे सम्प्रदायवादसे दूर। यदि आपसे उनका परिचय है और वे आपकी बस्तीमें आये हैं तो बिना पूर्व-सूचनाके आपके घर आ जायेंगे ? बात सम्भवत ६६-६७ की है (ठीक तिथि श्री नाहटाजीको याद होगी) वे म० प्र० शासन साहित्य परिषद् द्वारा आयोजित 'राजस्थानीमें कृष्णकाव्य'पर व्याख्यान देनेके लिए जब इन्दौर आये तो मेरे घर भी आ गये। मैंने कहा, "नाहटा साहब आप ?"

बोले, "हाँ आपसे मिलना था।"

मैंने कहा, "कुछ ग्रहण कीजिए।"

बोले, "नही आज व्रत है। मेरे यहाँ कई रिस्तेदार हैं चिंताकी बात नही।"

मैं चुप। श्री नाहटाकी शिक्षादीक्षा किसी विश्वविद्यालयमें नही हुई। **वे जो कुछ हैं वह स्वप्ररणा, शोधकी नि स्वार्थ निष्ठा और अपनी सतत् साधनासे हैं। वे व्यवसायी होकर भी मनीषी हैं, गृहस्थ होकर भी तपस्वी हैं।** कभी-कभी सोचता हूँ कि अगर, अगरचन्दजी नाहटा न होते तो शोधका क्या हुआ होता ?

मैं हृदयसे कामना करता हूँ कि नाहटा साहब स्वस्थ और दीर्घजीवी हो और वे शोधकी कई मजिलें पार करें। मैं यह उनकी नही हिन्दी शोधकार्यके दीर्घजीवनकी शुभकामना कर रहा हूँ क्योकि श्री नाहटाजी जो कार्य कर रहे हैं, वह वस्तुत शोधकी आधार-शिला रख रहे है। वे वह भूमि तैयार कर रहे हैं, जिसपर शोधका भावी भवन बनेगा। मुझे पूर्ण विश्वास है उसमें उनके व्यक्तित्वका निश्चित आभास होगा। मैं चाहता हूँ कि वे स्वयं भी इसे देख सकें। इसलिए वे दीर्घजीवी हों।



विश्वकोषके लिए मेरे कोटिशः प्रणाम

प्रो० डॉ० राजाराम जैन

सन् १९५४के दिसम्बरकी घटना है, तब मैं ज्ञानोदय (कलकत्ता)का सह-सम्पादक था। एक दिन एक लम्बे-चौडे कुछ साँवले रंगका, राजस्थानी पद्धतिकी ऊँची पीली एव कुछ अस्त-व्यस्त सी पगडी लगाये, घुटनेके करीब धोती बाँधे और व्यापारी टाइपका लम्बा, पीतलके बटनवाला कोट पहिने हुए एक सज्जन कार्यालयमें पधारे और मेरे विषयकी इक्वायरी मुझसे ही करने लगे। उस समय मैं कलकत्तेके लिए एक नया-नया प्राणी ही था, अत मुझे आश्चर्य लगा कि एक व्यापारी आखिर मुझे जानता कैसे है और क्यो मेरी खोज कर रहा है ? मैंने अपने विषयमें कुछ बताये बिना ही उनका नाम पूछ लिया और जब उन्होने अपना नाम बताया तो मैं दग रह गया, तत्काल ही आसन छोडकर खडा हो गया और उन्हें सविनय प्रणाम किया। वे थे स्वनामधन्य अगरचन्दजी नाहटा, सरस्वतीके एक महान् वरद पुत्र।

श्रद्धेय नाहटाजीके नामसे मैं १९४६-४७से ही सुपरिचित था। 'सम्मेलन-पत्रिका', 'काशी नागरी-प्रचारिणी सभा पत्रिका' प्रभृति पत्रिकाओमें प्रकाशित उनके शोध-निबन्ध बडे चावसे पढा करता था। 'बीसल-देवरासो', 'पृथिवीराजरासो' प्रभृति प्राचीन हिन्दी ग्रन्थोके प्रकाशनमें, उनके ऐतिहासिक कार्यो एव मूल्य-निर्धा-रणमें उनका कितना जबर्दस्त हाथ रहा है, इसका मूल्याकन एडी-चोटीके विद्वानोने किया है और मुझे उनकी जानकारी थी। उनकी इन्ही साधनाओके कारण मैं उन्हे परोक्षतः अपना श्रद्धेय तथा साहित्य-जगत्का गौरव-पुत्र मान चुका था। किन्तु साक्षात्कार हुआ मानव-समुद्रकी उस महान् वैभवशाली कलकत्ता-नगरीमें जहाँ मुझ

जैसे व्यक्तिको कोई पूछनेवाला भी न था। श्रद्धेय नाहटाजी मूक-साहित्यकारोको इस विवशताको अच्छी तरह समझते हैं तथा बडे-बडे नगरोमें दीपक लेकर उनकी बडी ही लगनके साथ खोज-बीन करते रहते हैं। वे हर प्रकारकी सहानुभूति, यथासम्भव सुविधाएँ एव आवश्यक पथ-निर्देशोंके साथ उन्हें आश्वस्त कर उत्साहित एव प्रेरित करना मानो अपना कर्त्तव्य समझते हैं। उनका मेरे साथ प्रत्यक्ष-परिचयका यही प्रारम्भिक इतिहास है। इसके बाद तो वे सदाके लिए मेरे अपने हितैषी, गुरुतुल्य पथ-निर्देशक हो गये। उनसे सदैव पत्र-व्यवहार बना रहा और हर प्रकारसे मुझे साहाय्य मिलता रहा। इस बीचमें मैं कलकत्ता छोडकर शहडोल, वैशाली एव उसके बाद आरा आ गया।

उन्हें यह ज्ञात था कि मैं मध्यकालीन महाकवि रइधूपर शोध-कार्य कर रहा हूँ। अपनी जानकारीमें मैं रइधूका समग्र-साहित्य खोजकर उपलब्ध कर चुका था कि एक दिन सहसा ही नाहटाजीका पत्र मिला। उन्होने पत्रमें अपने कलकत्ता प्रवासमें नाहर सग्रहालयके निरीक्षण एवं उसमें सुरक्षित रइधूके एक अलभ्य ग्रन्थ 'सावयचरिउ'के सुरक्षित रहनेकी चर्चा ही नही की बल्कि यह भी लिखा कि यदि यह ग्रन्थ मुझे न मिला हो तो सूचना पाते ही वे उसे सस्थाधिकारियोंसे नि शुल्क अध्ययनार्थ दिलवा देंगे। उनकी कृपासे वह ग्रन्थ मुझे शीघ्र ही मिल भी गया। अन्यथा, उस ग्रन्थरत्नका मिलना तो दूर रहा, मुझे उसकी गन्ध भी न मिल पाती।

सन् १९६८-६९में जब मैं श्रद्धेय डॉ० ए० एन० उपाध्येके आदेशसे रइधू-ग्रन्थावलीके सम्पादन एव अनुवादकी योजना तैयार कर रहा था, तब तक मुझे विश्वास था कि रइधूका समग्र-साहित्य एवं महत्त्वपूर्ण प्रतियोकी सूचनाएँ मैं एकत्र कर चुका हूँ। किन्तु अपनी अपूर्णताका ज्ञान मुझे पुन. उस समय हुआ जब श्री नाहटाजीने एक पत्र द्वारा मुझे सूचना दी कि 'पासणाहचरिउ' की एक सचित्र प्राचीनतम प्रति दिल्लीके श्वेताम्बर जैन शास्त्र भण्डारमें सुरक्षित है। उनकी कृपा एवं उसके मन्त्री आदरणीय श्री सुन्दरलाल जैनकी सज्जनता एवं कृपाके कारण मुझे उसकी एक फोटो काफी भी प्राप्त हो गई। आजकल मैं उसके बहुमुखी सदुपयोगके विषयमें विचार कर रहा हूँ।

श्रद्धेय नाहटाजी हमारे युगके महान् साहित्यकार, समीक्षक, प्राचीन जीर्ण-शीर्ण एव अप्रकाशित ग्रथोके उद्धारक, कलापूर्ण सामग्रियोके संरक्षक, साधनविहीन साहित्यकारो, शोधकर्त्ताओ एवं तत्त्व-जिज्ञासुओके अकारण ही कल्याणमित्र हैं। वे स्वभावत ही बिना किसी तर्कके विश्वास कर लेने वालोमेंसे हैं। उनकी इस प्रवृत्तिने उन्हें कितनी बार कई उलझनोमें फँसा दिया होगा, इसकी जानकारी तो नही मिल सकी, किन्तु उनकी इस निश्छल-उदारताके कारण कितने ही व्यक्ति लाभान्वित हुए होंगे, इसमें सन्देह नही।

श्रद्धेय नाहटाजीने किसी भी विश्वविद्यालयसे कोई उपाधि ग्रहण नही की किन्तु अपनी जन्मजात प्रतिभा, सस्कार एव स्वाध्यायके बलपर उन्होने विविध ज्ञान-विज्ञानका तुलनात्मक गहन अध्ययन किया है और आज उनके ज्ञानका धरातल इतना उच्च हो गया है कि पी-एच०, डी०, डी० लिट् जैसी उपाधियाँ उनके लिए तुच्छ हैं, वे उनका मापदण्ड नही बन सकती। यथार्थत वे विश्वकोष (Encyclopeadia) का रूप धारण कर चुके हैं। अत. उनके व्यक्तित्व एव कृतित्वके मूल्याकनके लिए उन जैसे ही साधक, तपस्वी, कर्मठ एवं प्रतिभाकी साक्षात् मूर्तिकी आवश्यकता है। मुझ जैसे नगण्य व्यक्तिके पास उनके विषयमें कुछ भी लिखने अथवा कहनेकी योग्यताका सर्वथा अभाव है। हाँ, अपनी श्रद्धाञ्जलियाँ मौन-भाषामें व्यक्त कर मैं देवाधिदेवसे उनके स्वस्थ दीर्घायुष्यकी कामना करता हूँ कि वे शतायु हो और निरन्तर हमें अपने अनुभवोसे लाभान्वित कराते हुए उत्साहित एव प्रेरित करते रहें।



वन्दनीय नाहटाजी

डॉ० व्रजलाल वर्मा, एम० ए०, पी-एच डी०

वारह तेरह वर्ष वीत गये—जव मैंने अपने 'सत कवि रज्जव' सम्वन्धी शोध प्रवन्धकी सामग्री-गवेपणा हेतु राजस्थानकी चार यात्राऐं लगातार दो वर्षकी अवधि में की थी। वहाँ चार विद्वान् राजस्थानी-हिन्दी-साहित्यमें निष्णात सुनाई पडे—पहले पुरोहित हरिनारायणजी शर्मा, दूसरे स्वामी मंगलदासजी महाराज जयपुर, स्वामी नारायणदासजी पुष्कर तथा श्री अगरचन्द नाहटा, बीकानेर। इनमें पुरोहितजी तो दिवगत हो चुके थे—उनकी कृतियोंसे मुझे शोधका प्रशस्त मार्ग मिला—शेष वृहत्त्रयीसे मुझे प्रत्यक्ष परामर्श, सम्मतियाँ, नाना समस्याओंका समाधान मिला।

मैं वीकानेरमें नाहटोंके गवाड जाकर श्री अगरचन्द नाहटा से मिला। उनका पुस्तकालय भी देखा। व्यापारके जटिल क्षीण तन्तुओंपर सरस्वती किस ओज एवं शक्तिके साथ प्रतिष्ठित रह सकती है, यह मुझे वही जाकर देखनेको मिला।

सन्त कवि रज्जवपर कुछ सूचनाओ तथा रज्जव-वानीके पाठालोचन तथा शब्दार्थ ज्ञान हेतु मैंने एक पत्र डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदीको कभी लिखा था किन्तु उन्होंने स्पष्ट लिखा कि मुझको रज्जवके सम्वन्धमें जितना प्रकाशित है, उससे अधिक ज्ञात नही है। सच्चे विद्वान कितनी सहजतासे अपनी—नाजानकारीको स्वीकारते हैं—यह इस प्रसगमें मुझे देखनेको मिला। प० परशुरामजी चतुर्वेदीका उत्तर भी इसी परम्परामें मिला। श्री स्वामी मगलदासजी तथा श्री अगरचन्द नाहटासे ही रज्जवजीके सम्वन्धमें कुछ जानकारी प्राप्त हुई—तथा पुष्करके महात्मा स्वामी नारायणदासजीका परिचय भी इन्ही महाभाग जनोंसे प्राप्त हुआ। नाहटा-जीने उदारतापूर्वक अपने पुस्तकालयकी पुस्तकें देखनेका सुअवसर एवं स्वीकृति मुझे दी।

नाहटाजीके विद्याव्यसन, विशेप रूपसे राजस्थानकी अज्ञात साहित्यिक सामग्रीकी जानकारीपर मैं विस्मित हुआ। प्रचुर अप्रकाशित सामग्रीका उन्होने सग्रह किया है।

श्री नाहटाके सरक्षणमें राजस्थानसे कई पत्र पत्रिकाओका त्राण और कल्याण हुआ है। पुरा-साहित्यकी आत्मासे परिचय राजस्थानके जिन मनीपियोका है, उनमें श्री नाहटाजी शीर्पस्थ लोगोमेंसे एक है।

नाहटाजीका अभिनदन हो रहा है। मैं आयाजकोको वधाई देता हुआ पुण्य चरण नाहटाजीको अपना प्रणाम अर्पित करता हूँ।

भवन्ति भव्येषु हि पक्षपाता।

•

'विद्या ददाति विनयम'

डॉ० ब्रह्मानन्द

श्री अगरचन्दजी नाहटाका नाम हिन्दीका कौन विद्यार्थी नही जानता है? मैं भी उनका नाम वहुत दिनोसे सुनता आ रहा था। सहसा, एक दिन कलकत्ताके श्रीरामचन्द्रजीके मन्दिरमें स्थित पुस्तकालयमें उनसे भेंट हो गई। यह लगभग १९५८ की वात है। वे कलकत्तामें आये थे और अपने व्यवसायके उद्देश्यसे आसाम जाने वाले थे। श्री नाहटाजी लायब्रेरीमें पुस्तक देखनेमें तल्लीन थे। वे एकाग्रचित्त हो किसी पुस्तकको वहुत देर तक देखते रहे। उनकी वह मुद्रा मुझे आजतक स्मरण है।

वे राजस्थानी वेशभूषासे सुसज्जित थे। उस समय बीकानेरी पगडी पहने हुए थे। वडे भव्य जान पड़े। लायब्रेरियनने उनसे मेरा परिचय कराया। उनके नेत्रोसे स्नेह टपकता था। रग कुछ सांवला था। मुद्रा वडी गभीर थी। साहित्यिक विषयो पर थोडी देरतक चर्चा चलती रही।

श्री नाहटाजीके प्रथम दर्शनसे मेरे मनपर यह प्रभाव पडा कि ये वडे सज्जन, मधुरभाषी और सारल्यकी साक्षात् प्रतिमा हैं। साहित्यकी अनेक विधाओंके विद्वान लेखक होते हुए भी वे वहुत विनयशील हैं। अहकार छू तक नही गया है।

नाहटाजीने हिन्दी साहित्य और भाषाको जो योगदान किया है, वह अनुपम है। उनका विद्या-व्यसन किसी डिग्री या पुरस्कार-प्राप्तिके लिए नही है। सरस्वतीकी साधना उनका स्वभाव बन गया है। यदि मैं यह कहूँ तो कोई अत्युक्ति नही होगी कि हिन्दीके विद्वानो और साहित्यकारोमें श्री अगरचन्दजी नाहटा सबसे अधिक स्वार्थहीन व्यक्ति हैं।

श्री नाहटाजीसे दूसरी बार मेरी भेंट नाहटोकी गवाड, बीकानेरमें स्थित उनके निवासस्थानपर हुई। उस समय मैं राजकीय महाविद्यालय (डूँगर कॉलेज) में प्राध्यापक था। कई दिनोंसे मनमें विचार उत्पन्न हुआ कि नाहटाजीसे मिलूँ। मेरे ही एक सहकर्मी बन्धु डॉ० श्यामसुन्दर दीक्षित उनके निर्देशनमें अनुसंधान कार्य कर रहे थे। उनसे नाहटाजीके बारेमें पता लगता रहता था। एक दिन मैं ढूँढता हुआ उनके घर पहुँच गया। नाहटाजी घरमें ही थे। उन्होने सहज मुस्कानसे ऊपर आनेके लिये कहा। मैं ऊपर गया था। वे पत्र आदि लिखनेमें लगे थे। उन्होने कहा, 'भोजन कर लिया है ? यदि नही किया हो तो कर लो।'

मैंने कहा, 'भोजन तो कर लिया हैं। प्यास लगी है।' उन्होने टीपीकल राजस्थानी बर्तनसे पानी पिलाया। नाहटाजी जैनधर्मावलम्बी होनेके कारण जल आदिको सँभालकर रखते हैं, मकान वहुत साफ-सुथरा था। हर एक वस्तु वहुत व्यवस्थित ढगसे रखी हुई थी।

मैंने उनसे जिज्ञासा प्रकट की, "आप इतना अध्ययन क्यो करते हो ? इससे आपको क्या लाभ है ?"

उन्होने सहज गभीरतासे कहा, "यह मेरा व्यसन है। किसीका व्यसन मदिरा-पान है, किसीका धूम्रपान है। मेरा तो यही व्यसन है। मुझे इसी व्यसनने जीवनमें वहुत आनंद और सन्तोष प्रदान किया हैं।"

मैंने दूसरा प्रश्न किया। बीकानेरमें अबतक कितने अप्रकाशित हस्तलिखित ग्रन्थ है ? उन्होने कहा "लगभग कई हजार हस्तलिखित ग्रन्थ लालगढ पैलेस स्थित महाराज बीकानेरके पुस्तकालय और संग्रहालयमें हैं। ज्ञान-भण्डार अनूपसस्कृत लायब्रेरीमें भी वहुत है। मेरे सग्रहालयमें भी पर्याप्त हैं।" उन्होने अपना संग्रहालय खोलकर दिखाया। वहुत देर तक बातचीत करनेके पश्चात् मैंने उनसे विदा ली। उन्होने फिर आनेके लिए कहा।

जब मैं उनके निवासस्थानसे निकला तो मनमें कई प्रकारके विचार उठने लगे। यह उसी परम्पराका व्यक्ति है, जो सन्तो, भक्तो और जैनमुनियोकी रही है। उन्होने केवल स्वान्त. सुखाय ही साहित्यकी सृष्टिकी थी। इसका यह अर्थ नही है कि उनका स्वान्तः सुखाय साहित्य-सृजन केवल स्वार्थके पकमें धँसा हुआ था। वस्तुत' इस प्रकारके साहित्यकारोका साहित्य सृजन 'वहुजन हिताय, वहुजन सुखाय' ही होता था। लोक मगलकी कामना उनके मनमें सर्वोपरि थी।

श्री अगरचन्दजीनाहटाका यह विद्या व्यसन केवल उनके लिए ही नही है। उनके इस व्यसनसे हिन्दी साहित्य और भाषाको वहुत लाभ हुआ है। भगवान्से प्रार्थना है कि इस प्रकारका व्यसन हिन्दीके अन्य साहित्यकारोंको भी लग जाये तो हिन्दी और भारतका वहुत कल्याण हो।

कई विद्वानोने उनकी तुलना महापण्डित राहुल साकृत्यायनसे की है। कई महानुभाव उनकी समता आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदीसे करते हैं। पर्वतमें किस शिखर की तुलना किस शिखरसे की जाये ? प्रत्येक शिखरका अपना महत्त्व है। अत विद्याके सागरमे अवगाहन करनेवाले विद्वानोकी तुलना करना उचित नही है। न मालूम कौन व्यक्ति क्या रत्न सरस्वती के मन्दिरमें समर्पित कर दे ? साहित्यके जो रत्न श्री अगरचन्द-जी नाहटा हिन्दी भाषा और साहित्यको प्रदान किये है, उनकी चमक हजारो वर्षो तक धूमिल नही होगी। आशा है, अपने भावी जीवन में उनके द्वारा और अधिक रत्न माँ भारतीके मंदिरमें समर्पित होगे।



एक विरल व्यक्तित्व

प्रोफेसर डॉ एल डी जोशी, एम ए., पी-एच. डी

मारवाडी पगडी, बन्दगलेका मारवाडी कोट, मोजडी और दोनो छोर कसी हुई धोती, घनी मूछो-वाले प्रभावशाली चेहरे पर चश्मोसे चमकती हुई आँखोवाले नाहटाजीको प्रथम वार अखिल भारतीय लोक साहित्य सम्मेलनके बबई अधिवेशनमें देखा तो मुझे हँसी आयी कि मारवाडी काकाको साहित्यका ठीक शौक चर्राया कि साहित्य गोष्ठीका आनद ले रहे है। परतु मेरा कथन समाप्त हो उसके पूर्व ही प्रोफेसर के. का शास्त्रीजीने कहा कि 'जानते नही, ये तो श्री अगरचदजी नाहटा हैं।'

नाहटाजीका नाम मैंने वर्षोसे सुना था। भला राजस्थान वासी ऐसा कौन साहित्य प्रेमी होगा जो नाहटाजीके नामसे अपरिचित हो।

हिन्दी साहित्यकी तथा हिन्दी की विभिन्न शोध पत्रिकाओमें नाहटाजीके गवेषणा पूर्व लेख पढकर मैं प्रभावित हो चुका था। संशोधन तथा मौलिक प्रतिभासे सपन्न नाहटाजीके लेखोको पढकर उनके एक विद्वान व्यक्तित्वकी कल्पना मेरे मनमें घरकर गई थी। राजस्थानकी अनेक महत्त्वपूर्ण परतु विस्मृत कडियोको नाहटा-जीकी तीक्ष्ण दृष्टिने ढूढ निकालनेमें अपूर्व कार्य किया है। खासकर जैन साहित्यकी अनेकानेक मणिमालाओको विस्मृतिके गर्भमेंसे बाहर निकालकर हमारी ज्ञान-सपदामें शामिल करनेका अद्वितीय कार्यकर नाहटाजीने प्रदेश तथा साहित्यकी अनन्य सेवा की है।

सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट बीकानेरके डायरेक्टर एवं राजस्थान भारतीके सपादकके रूपमें नाहटाजीकी सेवा बेजोड है यह कहनेकी कोई आवश्यकता नही है। मेरे जितने भी लेख राजस्थान भारतीमें छपे हैं, उनका श्रेय भी मैं नाहटाजीको ही देता हूँ क्योकि उनके सतत आग्रह एव प्रेम पूर्ण प्रेरणासे ही ऐसा सभव हो सका।

चाहे कलकत्ता हो या बीकानेर, प्रवासमें हो या घर पर नाहटाजीके नाम लिखे पत्रका प्रत्युत्तर अवि-लम्ब प्राप्त होगा ही यद्यपि उनकी लिखावट कुछ अजीब ढगकी है तथापि पढनेमे परिश्रमके पश्चात् भी भाव समझनेका आनद कम नही होता है।

राजस्थान संबधी प्रकाशनोके प्रचार की नाहटाजीको सदैव चिन्ता रही है और राजस्थानी साहित्यके प्रचार एवं प्रसारके लिये ये हमेशा ही प्रयत्नशील रहे हैं।

राजस्थानके किसी भी भागसे सबधित सशोधनके प्रति नाहटाजीको सदा ही प्रेम रहा है। इतना ही नही नयी शोध समाग्रीको प्रकाशित करानेका इन्होंने अपना भरसक प्रयत्न भी किया है। ऐसी छपी हुई

सामग्रीका संग्रह करनेकी विरल वृत्ति भी नाहटाजीमें रही है। यह सद्‌भाव नाहटाजीके अपनी मातृभूमिके प्रति प्रेमका परिचायक है।

साहित्य प्रेमी होनेके साथ ही विद्वान नाहटाजी उद्योग प्रेमी तथा राष्ट्रवादी देशभक्त भी है। मारवाडी वेशभूषा धारण करने पर भी कृपणता अथवा संकुचित प्रादेशिक भावनाओसे नाहटाजी सर्वथा ही मुक्त है। जहाँ राजस्थानी साहित्य-संस्कृतिके प्रति उनमें असीम अनुराग है, वही उनके विशाल हृदयमें समग्र देशके साहित्य संशोधनकी तीव्र उत्कण्ठा भी रही है। अखिल भारतीय लोक साहित्य तथा उसके सम्मेलनोमें भी नाहटाजीने सदैव सहयोग दिया है। राजस्थानी लोक साहित्य समितिमें भी श्री नाहटाजीका नाम तथा स्थान अपने कृतित्व तथा व्यक्तित्वके कारण प्रमुख रहा है।

सक्षेपमें मैं यही कहूँ कि नाहटाजी जैसी विरल व्यक्तित्व वाली विभूति साहित्य-सशोधनकी दृष्टिसे राजस्थानकी भूमिमें युगो वाद ही अवतरित होती है। नाहटाजीका अभिनन्दन हो रहा है, उसे मैं यो कहूँ कि 'राजस्थानकी जीती जागती रिसर्च लेवोरेटरीका अभिनन्दन हो रहा है' इस विरल व्यक्तिके लिये हमारी शुभ कामना है—शत जीव शरद ।



साहित्य-गगन के दैदीप्यमान

श्री चिम्मनलाल गोस्वामी

श्रीअगरचन्द नाहटाको मैं सन् १९२३ से जानता हूँ। उन दिनो मैं बीकानेरके जैन पाठशाला हाई-स्कूलका प्रधानाध्यापक था। मेरे आनेके पूर्व वह एक मिडिल स्कूल था। श्री अगरचन्द पाँचवी कक्षाकी परीक्षा पास करके स्कूल छोड चुके थे और पूर्व सम्वन्धके नाते स्कूलमें आया-जाया करते थे। उस समय किसको पता था कि श्री अगरचन्द आगे चलकर राजस्थानके साहित्य-गगनके एक दैदीप्यमान नक्षत्र होकर चमकेंगे।

भगवत्कृपासे दस ही वर्प वाद मैं गोरखपुर चला आया और भारतवर्पके सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक पत्र 'कल्याण' से मेरा सम्वन्व हो गया। कुछ ही वर्षो वाद श्रीअगरचन्दके लेख कई पत्र-पत्रिकाओमें निकलने लगे और धीरे-धीरे 'कल्याण' के भी ये एक सम्मान्य एव विशिष्ट लेखक वन गये।

राजस्थानी साहित्यके तो ये एक विशेषज्ञ माने जाने लगे और वीकानेरके 'सादूल राजस्थानी शोध-संस्थान'के निदेशकके रूपमें इन्होने राजस्थानी साहित्यके जाज्वल्यमान रत्नोको प्रकाशमें लाकर उक्त साहित्यकी अभूतपूर्व सेवा की। इनके लेख वडे ही विचारपूर्ण एव शिक्षाप्रद होते हैं तथा अत्यन्त सरल एव सुवोध भापामें लिखे रहनेके कारण वडे ही हृदयग्राही भी। जैनमतके अनुयायी होते हुए भी इनके सनातन हिन्दूधर्मके प्रति वडे उदार भाव हैं और इन्होने हिन्दूधर्मके सिद्धान्तोका वडी ही आदर-वुद्धिसे अनुशीलन भी किया है।

ये चरित्रके वड़े निर्मल है और धनी होते हुए भी वडा ही सादा जीवन व्यतीत करते हैं। एक व्यापारी होनेपर भी इनका विद्या-व्यसन एव साहित्यानुराग सराहनीय एवं प्रेरणाप्रद है।

राजस्थानी होनेके नाते मुझे इनके कृतित्वपर गर्व है। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि इनके जीवनके साठ वर्प व्यतीत हो जानेपर विद्वद्वर्ग इन्हें अभिनन्दन-ग्रन्थके द्वारा सम्मानित करना चाहता है। मैं उनके इस समयोचित प्रयास एव गुणग्राहकताका हृदयसे समर्थन करता हूँ। भगवान् करें श्रीअगरचन्द शतायु हो और भविष्यमें भी इनके द्वारा हिन्दी एव राजस्थानी साहित्यकी वहुमूल्य सेवा होती रहे।



जैसा मैंने जाना

डॉ पीताम्बर नारायण शर्मा

किसी परिहासप्रिय आलोचकने विधातापर आक्षेप करते हुए कहा है—

गन्ध सुवर्णे फलमिक्षुदण्डे
नाकारि पुष्प खलु चन्दनस्य ।
विद्वान् धनाढ्यो नृपतिश्चिरायुर
धातु.पुरा कोऽपि न बुद्धिदोऽभूत् ।।

ल्युडविक्र स्टर्नबाक सपादित चाणक्य नीति संप्रदाय, भाग २, खण्ड २, श्लोक ३३४, पृ २१२)

—विधाताको पहले कोई अकल देने वाला नही हुआ । कदाचित् इसीलिए उसने सोने में सुगन्ध, गन्नेमें फल और चन्दन के वृक्ष पर फूल नही लगाये । इतना ही नही, वह विद्वान को धनी और राजा को दीर्घजीवी नही वनाता ।

इसे हम विधाताका नियम कह सकते है । किन्तु, नियममें अपवाद भी होते हैं । श्री अगरचन्दजी नाहटा जैसे व्यक्ति विधाताके इसँ नियमके अपवाद माने जा सकते हैं । श्री नाहटाजी विद्वान् होते हुए भी श्रेष्ठी हैं । उनका निर्माण करते हुए कदाचित् विधाताको कोई बुद्धि देनेवाला मिल गया होगा ।

श्री अगरचन्दजी नाहटा व्यापारी-व्यवसायी होते हुए भी उत्कट विद्याव्यसनी हैं। यह उनके चरित्र-की विरल विशेषता ही कही जायेगी ।

सन् १९५७-५८ के बीच संस्थान संचालक आचार्य विश्ववन्धुजीके विशेष आमन्त्रणपर श्री नाहटा-जी विश्वेश्वरानन्द सस्थान, साधु आश्रम, होशियारपुरमें पधारे थे । उन दिनो संस्थानके लगभग दस हजार हस्तलेखोका 'हस्तलेख ग्रन्थ परितालिका'के लिए विवरण तैयार किया जा रहा था । श्री नाहटाजीको संस्थानमें संगृहीत कतिपय जैन हस्तलेखोके वर्गीकरण तथा विवरण तैयार करनेमें सहायतार्थ आमन्त्रित किया गया था ।

सस्थान पुस्तकालयाध्यक्ष श्री शिवप्रसाद शास्त्रीजीके शब्दोमें—श्री नाहटाजी सिरपर राजस्थानी निराली पगडी धारण किये, बड़ी-वडी मूँछो वाले, धोती-कुर्ता पहने, भरे-भरे वदनकी भव्य एव हँसमुख आकृतिके व्यक्ति है । उनकी सौम्य प्रकृति एव जैनसाहित्यका अगाध पाण्डित्य मनको मुग्ध करनेवाली हैं ।

श्री अगरचन्दजी नाहटा सस्थानमें चार-पाँच दिन ठहरे थे । इस अल्पकालमें ही वे अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्वकी एक अमिट छाप यहांके लोगोपर छोड गये, जिसे आज भी वडे आदरके साथ स्मरण किया जाता है ।

मुझे अभी तक श्री अगरचन्दजी नाहटासे साक्षात्कार करनेका सौभाग्य प्राप्त नही हुआ है । किन्तु, उनके कृतित्व द्वारा मैं उन्हें वहुत समयसे जानता हूँ । पत्र द्वारा मेरा परिचय अपने शोध-प्रवन्धको तैयारीके दौरान सन् १९६३ से है । श्री नाहटाजीके सपनावती कथा, छिताई वार्ता, प्रेमावती कथा आदि लेख नागरी प्रचारिणी पत्रिका, सम्मेलन पत्रिका आदिमें प्रकाशित मैंने देखे । कुछ अन्य लेखोकी सूचना भी मुझे मिली । किन्तु, वे पत्रिकाएँ तथा वे अक हमारे सस्थान-पुस्तकालयमें नही थे। मुझे अपनी शोध-प्रवंध (जायसी-पुराकया-मीमासा)के लिए इस सामग्री तथा अन्य सूचनाओकी आवश्यकता थी । मैंने पत्र द्वारा श्री नाहटा-जीसे प्रार्थना की और मुझे शीघ्र ही मेरी इच्छित सामग्रीकी प्रतिलिपि तथा सूचनाएँ मिल गयी । यह सब

पाकर मुझे प्रसन्नताके साथ-साथ कुछ विस्मय भी हुआ, कि वह कैसा व्यक्ति है। कितना सहृदय है, जिसे शोध-कर्ताओंसे इतनी गहरी सहानुभूति है। कुछ भी पूर्व-परिचय न होनेपर भी उसने मुझे निराश नही किया। नही तो विद्वानो द्वारा पत्रोत्तरमें आलस्य अथवा उपरामता वरतनेकी शिकायत प्राय' सर्वत्र सुनी जाती है। श्री अगरचन्दजी नाहटा इस वातमें भी अपवाद ही प्रमाणित होते हैं।

मेरी भाँति अनेक शोध-कर्ता श्री नाहटाजीसे उपकृत हुए है और हो रहे हैं। वे सभी मेरी ही भाँति सरस्वतीके साधक इन श्रेष्ठिवरके प्रति अपनी कृतज्ञता, श्रद्धा एव सम्मान प्रकट कर रहे हैं और करते रहेंगे।



विराट व्यक्तित्व एवं असीम कृतित्व

डॉ० शिवगोपाल मिश्र

मैं प्रारम्भसे ही जिन तीन महान विभूतियोंसे प्रभावित हुआ, वे थी—राहुलजी, वासुदेवशरण अग्रवाल एवं श्री अगरचन्दजी नाहटा। यदि इन तीनोको मैं हिन्दी साहित्यके तीन आधारस्तम्भ कहूँ तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। इनमेंसे प्रथम दो विभूतियाँ अब इहलोकको त्यागकर परलोकवासी हो चुकी हैं किन्तु सौभाग्यसे नाहटाजी अपने जीवनके ६० वर्ष पार करके भी हिन्दी साहित्यकी श्रीवृद्धिमें दत्त-चित्त हैं।

हिन्दी साहित्यके इतिहासमें नाहटाजीका अपूर्व योगदान रहा है। यदि मिश्रबन्धुओको हिन्दीके अनेक कवियोको उद्घाटित करने और आचार्य रामचन्द्र शुक्लजी को हिन्दी साहित्यका प्रामाणिक इतिहास लिखनेका श्रेय प्राप्त हैं तो श्री नाहटाजीको प्राचीनसे प्राचीन हिन्दी कृतियोको प्रकाशमें लानेका श्रेय प्राप्त है। इस दिशामें नाहटाजीका योगदान अद्वितीय है। वे हिन्दी साहित्यके महान् इतिहासज्ञ हैं।

यद्यपि राजस्थानके इतिहासमें कर्नल टाडका वहुत नाम है किन्तु मैं नाहटाजीको उनसे भी वढकर मानता हूँ। साहित्यकी सरस्वतीको मरुभूमिमें सतत प्रवह रखनेमें नाहटाजीके भगीरथ-प्रयासकी जितनी भी प्रशंसा की जाय थोडी है।

नाहटाजीके विराट व्यक्तित्वके अपरिहार्य अग हैं—उनकी सरलता, निश्छलता, उनका विद्या-व्यसन एवं उनकी संचयवृत्ति। वे इतने सरल हैं, उनकी वेपभूपा ऐसी है और वे अहंकारसे इतने परे है कि कोई भी उनसे मिलकर अपने अन्तरतमकी वात कह-सुन सकता है। वे सरलता की साक्षात् प्रतिमूर्ति हैं। धोती, कुर्ता और पगडी, यही है उनकी वेशभूपा।

उनमें छलकपट रंच भर भी नही है। आये दिन तमाम शोधछात्र उनसे पाण्डुलिपियो के सम्वन्धमें जानकारी माँगते रहते हैं, जिन्हें वे नूतनतम सूचनासे उपकृत करनेके साथ ही कभी-कभी मूल पाण्डुलिपि भी भेज देने तककी सदाशयता दिखाते हैं। यदि कोई अनुसंधित्सु किसी महत्त्वपूर्ण कृतिकी प्रतिलिपि चाहता है तो वे उसका भी प्रवन्ध कर देते है। वदलेमें वे उन व्यक्तियोंसे ऐसी ही जानकारी या सूचना प्राप्त करनेमें तनिक भी हिचकका अनुभव नही करते। मैंने उन्हें कई वार प्रतिलिपि कराकर सामग्री प्रेपित की है।

नाहटाजीको पढनेका व्यसन है। उन्होने स्वयं एक स्थानपर लिखा है कि स्कूली शिक्षा वहुत कम रही है किन्तु उन्होने स्वाध्यायके वलपर इतना ज्ञान अर्जित किया है। नाहटाजी मूलत व्यवसायी हैं। साहित्य तो उनका व्यसन है जो अव उनका जीवन-रक्त वन चुका है।

मुझे सर्वप्रथम १९५९में नाहटाजीके दर्शन करने तथा बीकानेर जाकर एक मास तक उनके सम्पर्कमें आनेका सुअवसर प्राप्त हुआ। उन्होंने न केवल मेरे ठहरने तथा सुख सुपासका प्रबन्ध किया था वरन अपने एक शिष्यको अनूप संस्कृत लाइब्रेरी तक मुझे ले जाने तथा बीकानेरके प्रसिद्ध स्थलोको दिखानेके लिए नियुक्त कर दिया था।

उनके विद्याव्यसनका प्रतीक अभय जैन ग्रंथालय है। यह दुमंजिला भवन है, जिसमें अगणित अमूल्य पाण्डुलिपियोके अतिरिक्त चित्र तथा पुरातत्व सामग्री सगृहीत है। एक व्यक्तिकी विलक्षण पठनरुचि तथा संग्रहप्रवृत्तिका इसीसे अनुमान लगता है। नाहटाजी इस ग्रन्थालयके निदेशक हैं। वे इसके उन्नयनके लिए पुस्तकोकी खरीदसे लेकर रजिस्टरमें उनको दर्ज करने तकका कार्य स्वयं करते हैं। वे वाहरसे एकत्र की गई पाण्डुलिपियोका स्वय अनुसधान करके उनका परिचय लिखते हैं। शायद ही कोई ऐसा साहित्यकार हो, जिसे इतनी पाण्डुलिपियोमें डूबने-उतरानेका सुख प्राप्त हुआ हो। ऐसे ही विरल मनस्वी श्री रायकृष्ण-दास हैं, जिन्होने अपने बूतेपर 'भारत कलाभवन'का निर्माण किया है। ऐसी विभूतियाँ कम ही हैं।

नाहटाजीके विद्याव्यसनका एक प्रमुख अंग है पत्राचार। वे पत्र लिखनेमें जितनी तत्परता दिखाते है उतनी तत्परता मैंने राहुलजी तथा डॉ० वासुदेवशरणजी अग्रवालमें पाई थी। आप कैसी भी सूचना क्यो न माँगें, सहज भावसे वे उसे विना किसी देरीके आप तक पहुँचा देंगे। यह मानवीयताका अत्यन्त पुष्ट पहलू है। एक बार पत्रव्यवहार स्थापित हो जानेपर वे स्वय भी पत्र लिखकर कुशल समाचारोसे लेकर गहन साहित्यिक चर्चाकी पूछताछ करते रहते हैं। मेरे पास उनके शताधिक पत्र होगे जिनमें उन्होने मेरी पुस्तको-की आलोचना, सम्मति आदिसे लेकर मेरे स्वास्थ्य एव मेरे परिवारके कुशल क्षेम का जिक्र किया है। वैसे मैं नाहटाजी की लिखावट पढ लेता हूँ किन्तु एक वार कुछ शब्द मैं नही पढ पाया तो प्रमोदवश मैने लिख भेजा कि कृपया अक्षर साफ लिखा करें। तबसे वे या तो टाइप करके या दूसरेसे पत्र लिखाकर और उसमें अपने हस्ताक्षर करके मुझे अनुगृहीत करते रहे हैं।

नाहटाजी अनन्य जिज्ञासु है। नवीन पुस्तकोकी सूची, नई पत्रिकाओके पते और नई पाण्डुलियोकी सूचनायें प्राप्त करते रहना मानो उनका कार्यक्रम बन चुका है। यही नही कि वे हिन्दी साहित्यकी पत्रिकाओ में ही अभिरुचि लेते हों, वे विज्ञानविपयक पत्रिकाओंके सम्बन्धमें भी रुचि लेते रहे हैं। मुझे स्मरण है, एक बार उन्होने मुझसे 'विज्ञान' के सम्बन्धमें जानकारी चाह थी और तदनन्तर मेरे अनुरोधपर एक लेख भी प्रकाशनार्थ भेजा था। जब-जब मैने नई पत्रिकायें निकाली—चाहें 'अन्तरवेद' रहा हो या 'अपरा'—नाहटा-जीने अपने शुभाशीर्वादसे मुझे प्रोत्साहित किया है।

नाहटाजीका कृतित्व असीम है। उनकी विद्या-मन्दाकिनी विनयसम्पन्न होनेके कारण ऐसे करारो-को स्पर्श करती हुई अग्रसर हुई है कि 'साठसहस्र' सगरके ही पुत्र नही, मनुके सभी पुत्र-मनुज—उससे तर गये है। नाहटाजीने अपने विचारोको, अपनी विद्वत्ताको लेखोके रूपमें प्रस्तुत किया है और इन लेखोको उन्होने मुक्तहस्तसे लुटाया है, विभिन्न पत्र-पत्रिकाओंने इन लेखोको प्रकाशित करनेमें गौरवका अनुभव किया है। फलस्वरूप नाहटाजी हर पढेलिखे घरमें प्रवेश पा सके है। मेरे विचारसे नाहटाजी अवढर दानी है। अपनी प्रतिभाको प्रकाशमें लानेके लिए उन्होने काफी श्रम किया है। उन्होने भारत भरके ग्रयागारोको छान डाला है तव उनकी लेखनी चली है। वे परम लिक्खाड है। 'कल्याण'से लेकर 'हिंदुस्तानी' तकमें उनके लेख पढे जा सकते है। एक वार उन्होने मुझे अपने लेखोकी एक सूची भेंट की थी, जिसमें कमसे कम एक सहस्र शीर्षकोका उल्लेख था। अब इनकी सख्या अवश्य ही दूनी-तिगुनी हो चुकी होगी।

नाहटाजीकी अभिरुचि प्राचीन साहित्यके प्रति रही है। उन्हें जैनसाहित्यपर एकाधिकार प्राप्त है।

उन्होने 'समयसुन्दरकृति कुसुमांजलि' नामक एक ग्रथका सम्पादन बहुत पहले किया था। इस सम्बन्धमें मेरा ज्ञान अल्प है, अतः मैं इस दिशामें किये गये नाहटाजीके कार्यका समुचित मूल्याकन करनेमें असमर्थ हूँ किन्तु राजस्थानी साहित्य तथा हिंदी साहित्यके सम्बन्धमें उन्होने जो संकलन-सम्पादन किया है, वह अवश्य ही अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

नाहटाजीके कार्यका स्मारक स्वरूप है "राजस्थानमें हिन्दी ग्रथोकी खोज"। इनके दो भागोंका संकलन-सम्पादन नाहटाजीने किया है। यह कई भागोमें छपा है। अकेले एक व्यक्तिने जितना कार्य कर दिखाया है, वह बडीसे बडी संस्थायें नही कर पाती। इसीलिये मै उन्हें जीती-जागती सस्था कहता हूँ। वे स्वयमें साहित्यिक तीर्थ बन चुके है। जिस किसीको हिन्दी पाठालोचन या प्राचीन साहित्यपर कार्य करना है, उसे नाहटाजीके दर्शन करने ही होगे।

नाहटाजी स्वयमें हिन्दी साहित्यके एक युग स्वरूप रहे हैं। उन्होने स्वय नवीनसे नवीनतम सामग्री प्रस्तुत की है और अन्योको नई दिशायें प्रदान की हैं। उनका उदार पथ-प्रदर्शन बहुतोको प्राप्त हुआ है। मेरे लिये तो वे सतत प्रेरणाके स्रोत रहे हैं। ऐसे युगपुरुषको मै श्रद्धावनत होकर प्रणाम करता हूँ।



श्रेष्ठि विद्वान् श्री नाहटाजी

डॉ० जितेन्द्र जेटली

विश्वमें लक्ष्मी और सरस्वतीका सुभग समन्वय अपने भारतवर्षमें विरल ही प्रतीत होता है। उसमें भी मरुभूमि या राजस्थान तथा गुजरात ये दोनो प्रदेश सरस्वतीकी अपेक्षा लक्ष्मीके प्रति अधिकतर आकृष्ट होनेकी वजहसे यह समन्वय और भी विरल हैं। अन्य प्रदेशो जैसे कि महाराष्ट्र, बगाल, मद्रास वगैरहमें विद्वानोका सम्मान जिस परिमाणमें किया जाता है और देखा जाता है उस परिणाममें राजस्थान और गुजरातमें नही है। इतना ही इस कटु सत्यका तात्पर्य है। कभी-कभी सामान्य बातोमें भी अपवाद हुआ करता है। वैसा अपवाद श्रेष्ठी श्री अगरचन्दजी नाहटा हैं। वे केवल अच्छे व्यापारी और अच्छे श्रेष्ठी ही नही है अपितु वे राजस्थानमें इने-गिने सारस्वतोमेंसे एक है।

मेरा और उनका परिचय जब महामना स्व० मुनिश्री पुण्यविजयजी जैसलमेरके ज्ञान भण्डारोके उद्धारके वास्ते गये थे, उस समय हुआ। मैं अपनी संस्थाकी ओरसे इस कार्यमें यत्किञ्चित्साहाय्य देनेके वास्ते भेजा गया था और अगरचन्दजी अपनी सशोधन विषयक रसिकता और लगनके कारण वहाँ आ गये। वे केवल तीर्थयात्राके उद्देश्यसे वहाँ नही आये थे परन्तु वे उन दिनोमें उस कार्यमें लगे हुए विद्वानोंके साथ चर्चाके अलावा अपने सशोधनको आगे बढाने आये थे।

वे यद्यपि एक अच्छे व्यापारी हैं परन्तु व्यापारका कार्य वे वर्षमें केवल २-३ महीना ही व्यवस्थित रूपसे करते है। उनकी व्यवस्थासे उनका कारोबार व्यवस्थित रूपसे चलता रहता है। आठ-दस मास तक वे बराबर संशोधन कार्यमें लगे रहते है। उनके आमन्त्रणसे मैं और डॉ० साडेसगजी बीकानेर गये थे। उन्होने परिश्रमके साथ बीकानेरके सभी ज्ञान भण्डार साथमें चलकर दिखलाये और कौन सी सामग्री हमें हमारे विषयके वास्ते कहाँसे मिल सकती है, इसका भी मार्गदर्शन दिया था। अनेक अप्राप्य हस्तलिखित ग्रन्थ उनकी सहायतासे देखनेके लिये प्राप्त हो सके। उनकी सहायतासे ही हम बीकानेर राज्यके हस्तलिखित पुस्तकोंके निजी संग्रहको देख सकें।

हमें मार्गदर्शन देनेके अलावा साथमें वे अपना संशोधन कार्य करते रहते थे । मेरी समझमें भारतीय भाषाओकी अनेक सशोधन पत्रिकाओंमें उनका कुछ न कुछ प्रदान अभी तक चालू हैं । विद्वानोंके साथ अपने वाणिज्यके व्यवसायको छोडकर संशोधन विषयक अनेक ज्ञानगोष्ठियोमें उन्हें इतना आनन्द आता है कि वे उस समय भूल जाते हैं कि वे एक व्यापारी हैं । विद्वानोको उनकी लगन और सारस्वतोपासना देखकर यह बात विस्मृत सी हो जाती है कि अगरचन्दजी नाहटा एक अच्छे व्यापारी हैं । इस गौरवके कारण उनका निजी हस्तलिखित पुस्तकोका सग्रह करीव चालीसहजारसे भी अधिक हैं । उसी तरह मुद्रित पुस्तकोका भी उतना ही विपुल सग्रह है । उनके निजी अभय जैन ग्रन्थालय में अनेक पत्र-पत्रिकाएँ तथा सशोधन सामयिक आते हैं ।

ऐसे श्रेष्ठिसारस्वतका जैन सवकी अनेक मेत्रा सस्थाओसे सम्वन्व हो उसमें आश्चर्य नही हैं परन्तु नागरी प्रचारिणी, भारतीय विद्याभवन जैसी सर्वसम्मान सस्थाओसे भी उनका गाढ सम्वन्व हैं ।

ऐसे सुयोग्य श्रेष्ठिसारस्वतको परमकृपालु भगवान दीर्घ आयुष्य प्रदान करें, यही शुभभावना है ।

●

संस्कृति और साहित्यके लिए नाहटाजीकी महान् देन

श्री प्रभुदयाल मीतल

श्री अगरचन्दजी नाहटा राजस्थानके होते हुए भी वस्तुत समस्त भारतवर्षके है, क्योकि उनकी महान् देनसे देशभरकी सस्कृति और साहित्यकी समृद्धिमें अनुपम योग मिला है । उनके दीर्घकालीन अनुसधानसे ऐसे महत्त्वपूर्ण तथ्य प्रकाशमें आये है कि वे भारतीय सस्कृति और साहित्यके इतिहासमें प्रचुर काल तक प्रमुख स्थान प्राप्त करते रहेंगे ।

नाहटाजी विगत ४० वर्षोसे अनुसधान-अध्ययन, शोध-समीक्षा और लेखन-सपादनके गुरुतर कार्योंमें लगे हुए हैं । उन्होने अकेले ही इन क्षेत्रोमें इतना विपुल कार्य किया है, जितना दस विद्वान् भी कठिनतासे कर सकेंगे । उनके कार्यक्षेत्रकी परिधि वडी व्यापक एव विशाल है और उनके मित्र, प्रशसक और पाठक देशभरमें विखरे हुए हैं ।

उन्होने जैन धर्म, दर्शन, साहित्य और इतिहास तथा राजस्थानकी भाषा, ऐतिहासिक परपरा और साहित्यिक समृद्धिका वडा गहन अध्ययन एव व्यापक अनुसधान किया है और फिर उन विषयोपर खूब जम कर लिखा है । उनके तत्संवंधी लेख प्राय. दो सौ पत्र-पत्रिकाओमें प्रकाशित हुए हैं । हिन्दीका शायद ही कोई ऐसा सामयिक पत्र हो, जिसमें उनके अनेक लेख प्रकाशित न हुए हो ।

मेरा उनसे ३० वर्ष पुराना परिचय है, जो उनके लेखोके माध्यमसे ही हुआ है । अव तो उक्त परिचयने घनिष्ठ,मित्रताका रूप धारण कर लिया है । वे 'व्रजभारती'में आरम्भसे अव तक वरावर लिखते रहे है । उनके लेखोंसे व्रजसस्कृति एव साहित्यके विविध अगोपर महत्त्वपूर्ण प्रकाश पड़ा है । मेरे आग्रहपर उन्होने व्रज साहित्य मडलके मथुरा अधिवेशनपर आयोजित 'व्रज साहित्य परिषद'की अध्यक्षता की थी और 'सूर-विचार-सगोष्ठी'में योग दिया था । उन अवसरोपर उनके विद्वत्तापूर्ण भाषणोंसे उपस्थित विद्वत् जन वडे प्रभावित हुए थे ।

उनके अनुसधानोका लाभ विद्वानो, प्राध्यापको, शोधार्थियो और लेखकोने समान रूपसे उठाया है । उनमे विविध भांतिकी सहायता लेकर सैकडो शोधार्थी 'डाक्टरेट'की उपाधियां प्राप्त करनेमें सफल हुए है ।

विश्वविद्यालय और शिक्षा क्षेत्रसे सीधा सम्बन्ध न होनेपर भी उन्होने इनके लिए जितना कार्य किया है, उतना न तो किसी प्राध्यापकने किया और न किसी दूसरे विद्वान् ने। कैसी विडवनाकी वात है, जिस विद्वत्-शिरोमणिसे ज्ञानके क्षेत्रका इतना विस्तार हुआ है, उसे किसी विश्वविद्यालयने 'डाक्टरेट'की 'आनरेरी' उपाधिसे सम्मानित करनेकी आवश्यकता नही समझी, यद्यपि उससे उक्त विश्वविद्यालयका ही सम्मान होता।

वडे हर्ष की वात है कि विद्वानोमें नाहटाजीके साहित्यिक ऋणसे किंचित उऋण होनेकी भावना जागृत हुई और उसके लिए उनका अभिनन्दन किया जा रहा है। मैं इस सुअवसरपर अपने मित्र नाहटाजीको हार्दिक वधाई देता हूँ। मेरी भगवान श्रीकृष्णसे प्रार्थना है कि वे उन्हें शतायु करें और जीवनपर्यन्त सस्कृति तथा साहित्यको समृद्ध करते रहनेकी शक्ति प्रदान करें।



शोधपुरुष श्री नाहटाजी

श्री श्रीरजन सूरिदेव

साहित्यके क्षेत्रमें, जव साहित्यकारके जीवनकी लम्वी साधनाके आकलनका क्षण आता है, तव साधक साध्य वन जाता है। कहना न होगा कि हस्तलिखित पोथियोके इतिहास-लेखक श्री अगरचन्दजी नाहटा स्वय इतिहास वन गये हैं। फलत., वे सम्पूर्ण साहित्य-जगत्के लिए जहाँ साध्य हो गये हैं, वही उल्लेख्य भी।

श्री नाहटाजीसे मेरा सर्वप्रथम पात्रिक परिचय पुण्यश्लोक आचार्य शिवपूजन सहाय तथा आचार्य नलिनविलोचन शर्मा जैसे पत्रकार-वरिष्ठद्वयके सयुक्त सम्पादकत्वमें प्रकाश्यमान विहार हिन्दी साहित्य-सम्मेलन (पटना)के शोव त्रैमासिक 'साहित्य'में प्रथम जैनागम 'आचारागसूत्र'के अध्ययन-विपयक लेखके सन्दर्भमें हुआ। श्री नाहटाजी, निसन्देह एक अधीती शोध-मनीषी हैं। उन्होने मेरे उक्त लेखमें समाविष्ट कतिपय परिमार्जनीय त्रुटियोकी ओर सकेत करते हुए मुझे एक पत्र लिखा था। यह वात वर्तमान शतीके छठे दशकके प्रारम्भकी है। उस समयसे अवतक श्री नाहटाजीके साथ मेरा अविच्छिन्न पत्र-सम्पर्क वना हुआ है। उन्होने अपने पत्रोके द्वारा न केवल मेरी जैनागम और जैन-परम्परा-विपयक जिज्ञासाओको ही शान्त किया, अपितु इस दिशामें अक्लान्त भावसे आगे वढते चलनेके सात्त्विक प्रोत्साहनसे भी मुझे परि-वृहित किया।

श्री नाहटाजीसे मेरा प्रथम साक्षात्कार, सन् १९६३ ई०के दिसम्वरमें, विहारके प्रमुख जैनकेन्द्र आरा शहरमें, प्रसिद्ध प्राकृत पडित डॉ० नेमिचन्द शास्त्रीके सारस्वत उद्यममे, यशोधन जैनाचार्य डॉ० ए० एन० उपाध्येकी अध्यक्षतामें आयोजित जैन सिद्धान्त-भवनके हीरक-जयन्ती-समारोहके अवसरपर हुआ। उक्त समारोहकी जैन विद्वद्गोष्ठीमें मुझे भी एक 'शोधपत्र' प्रस्तुत करनेका सौभाग्य उपलब्ध हुआ था इसी अवसरपर श्री नाहटाजीको 'सिद्धान्ताचार्य'की उपाधिसे अलकृत किया गया था। श्री नाहटाजीके प्रत्यक्ष दर्शनसे जैसे मुझे कृतार्थता मिल गई। शलाकापुरुप जैसी, विस्तृत आयामवाली उनकी आवर्जक आकृति धोती, मिरजई और उन्नत उष्णीपके परिधानमें वडी ही प्राणमयी एव प्रकाशवती प्रतीत हुई। 'विद्या ददाति विनय' जैसी शाश्वत मूल्यकी सूक्तिको सार्थक करनेवाली वरेण्यतासे विभूपित श्री नाहटाजीके तरल सौजन्य-से होनेवाली आत्मीयत्वकी अजस्र वर्पामें मैं सुधास्नात हो उठा और उनके यथाप्राप्त अल्पावधि-मात्र सम्पर्कसे ही ऐसा अनुभव हुआ कि जैसे मैं अपने किसी जननान्तर-परिचित विद्वान् अभिभावकके स्नेहलुप्त परिवेशसे पर्यावृत हो गया हूँ। उनकी शुचि-रुचिर भव्यता जैसे मेरे उत्सुक मानसमें सहजभावसे सक्रान्त हो गई।

श्री नाहटाजीकी स्मृतिसे मेरी व्यस्तता समयकी रिक्तता भरती चली गई। दूसरी वार उनका सत्संग वम्वईमें, सन् १९६८ ई०में, प्राप्त हुआ। कलकत्ताके 'श्री श्वेताम्वर जैन तेरापन्थी महासभा' द्वारा, आचार्य श्री तुलसीकी वाचनाप्रमुखतामें पुर स्कृत आगम-ग्रथोके विमोचनके निमित्त समारोह आयोजित विद्वद्गोष्ठीमें 'शोधपत्र' प्रस्तुत करनेके लिए पदार्पित पण्डितोकी मालामें श्री नाहटाजी सुमेरुकी भाँति सुशोभित हुए थे। उक्त गोष्ठीमें गुणग्राहक श्री नाहटाजीने जब मेरे शोधपत्रकी अनुशसा की, तव मैं पुन एक वार उनके सहज साहित्यिक वात्सल्य से भीग उठा।

श्री नाहटाजीको हस्तलिखित पोथियोका 'शोध-अवधूत' कहा जाय, तो कोई अत्युक्ति नही। अवधूत'की परिभाषा देते हुए प्रसिद्ध कोशकार प० वामन शिवराम आप्टेने कहा है कि 'अवधूत' उस सन्यासीको कहते है, जिसने सासारिक वन्धनो तथा विषय-वासनाओको त्याग दिया है। इसके अतिरिक्त, 'अवधूत' को 'आत्मन्येव स्थित' भी कहा गया है। तो, अवधूतकी यही 'आत्मस्थता' श्री नाहटाजीकी अपनी अद्वितीय विशिष्टता है। वे सग्रहालयोसे कवाडखानोतक, 'हस्तलिखित' या 'दुर्लभ मुद्रित' पोथियोकी खोजमें, तीर्थभावसे अटन करते है। वम्वईमें मैंने देखा कि प्राचीन पोथियो और पत्र-पत्रिकाओकी खोजमें वे अपनी सुध-वुध खोकर सग्रहालयोमें जितनी श्रद्धासे घूम रहे हैं, उतनी ही तल्लीनतासे कवाडखानोकी खाक छान रहे है। और, वहाँसे प्राप्त जीर्ण-शीर्ण पोथियो और पत्र-पत्रिकाओको इस गौरवके साथ प्रदर्शित कर रहे है, मानो अनमोल हीरे-मोतियोका खजाना ही उनके हाथ लग गया हो। उनके इस शोध-परिचक्रमण या अभियानमें एक दिन मैं भी आवेष्टित हो गया और घुणाक्षरन्यायसे वम्वईके विख्यात प्रिंस ऑव वेल्स म्यूजियमके तत्कालीन निदेशक प्रसिद्ध पुरातत्वज्ञ डॉ० मोतीचन्द्रके महिमामय सान्निध्यका प्रायोदुर्लभ सौभाग्य मुझे सहज ही सुलभ हो गया। कहना अपेक्षित न होगा कि श्री नाहटाजीके निजी विशाल पुस्तकालय (अभय जैन ग्रथालय)में अनेक कवाडखानोसे उपलब्ध विविध ग्रथरत्नोकी वहुत वडी सख्या सुरक्षित है। कालिदासने कहा भी है . 'न रत्नमन्विष्यति मृग्यते हि तत्।'

श्री नाहटाजी न केवल 'ग्रन्थी भवति पण्डित'को ही सार्थक करते हैं, अपितु वे ग्रथरत्नोकी परखमें निपुण जौहरीकी भी सफल भूमिका निवाहनेमें प्रख्यात है, हालाँकि, आजकलका फैशन तो यह है कि ग्रन्थोका विभ्राट् सकलन करके उनमें यत्र-तत्र लाल पेंसिलसे चिह्न लगाकर उन्हें केवल वैठकखानेकी आलमारियोकी शोभा वढानेके लिए ही छोड दिया जाता है। कथित सकलनकर्त्ता यथा सकलित पुस्तकोकी भूमिका तक पढनेका कष्ट नही कर पाते। फिर भी, उनका स्वयं सर्वस्वीकृत अधीती होनेका दावा करना सहज गर्वस्फीत धर्म हुआ करता है। किन्तु, इसके विपरीत, श्री नाहटाजी सही मानेमें एक ईमानदार अधीती है। सम्पूर्ण भारतकी शायद ही कोई पत्र-पत्रिका छूटी हो, जो श्री नाहटाजीके हस्तलिखित पुस्तकोके अध्ययन-विषयक लेख-सम्पदासे वचित हो। ख्याल ही नही, हकीकतकी वात तो यह है कि श्री नाहटाजीके सहस्राधिक ऐसे लेख प्रकाशमें आ चुके है, जिनसे हस्तलिखित पोथियोकी खोजकी दिशामें नई विचार-शिला स्थापित हुई है। श्री नाहटाजी न केवल स्वयंकृत शोधकी परिधि तक ही सीमित है, वरच वे अखिलभारतीय स्तरपर सम्पन्न साहित्यिक शोधकार्यकी व्यापकताके भी पूर्ण विज्ञाता हैं। आवश्यकता इस वातकी है कि यत्र-तत्र-विकीर्ण उनके हस्तलिखित ग्रन्थ-विषयक शोधपूर्ण लेखोका पुस्तकाकार प्रकाशन प्रस्तुत किया जाय, जिससे शोध-इतिहासमें अद्यावधि अनास्वादित अनेक दृष्टिकोणोंके उद्घाटनकी सम्भावना भी सुनिश्चित हो।

श्री नाहटाजी अविश्रान्त लेखनीके धनी है, तो अविराम अध्ययनके उत्तमर्ण भी। फलत, साहित्यिक शोध-जगत् निस्सन्देह उनका अधमर्ण है कि उसने उनके द्वारा प्रस्तुत अगण्य अछूते सन्दर्भोको समा-

कलित करके अपने शोध-विनियोगको साग और सनाथ किया है। मुझे विहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन तथा विहार-राष्ट्रभापा-परिषद्के शोव-त्रैमासिक 'साहित्य' और 'परिषद्-पत्रिका'की सम्पादन-सम्बद्धताका साग्रह मयोग सुलभ रहा है। उक्त दोनो शोध-पत्रिकाएँ श्री नाहटाजीके अनेक हस्तलिखित ग्रन्थोंके शोध-अध्ययन-विपयक लेखोंसे गौरवान्वित हुई है। और, इसी सारस्वत व्याजसे उनसे मेरी निरतिशय निकटताका सम्पर्क स्थापित हो पाया है। निश्चय ही, वे मेरे लिए न केवल योगक्षेमकी जिज्ञासा रखते हैं, अपितु जैनवाङ्-मयके अध्ययनके क्षेत्रमें मेरी प्रामाणिक प्रगतिका लेखा-जोखा भी लेते रहते हैं। सत्यत, ऐसी उदारता और आत्मीयताके वितरणकी अकृपणता बहुत कम विद्वानोंमें परिलक्षित होती है।

सरस्वतीके वरद पुत्र श्री नाहटाजी वीकानेरके प्रमुख व्यवसायियोंमें परिगणित होते है। असम-राज्यमें उनका वहुत वडा व्यवसाय फैला हुआ है। फिर भी, उनकी लक्ष्मीको उनकी सरस्वतीसे किसी प्रकारका भी सपत्नी-भाव नही है। वरंच उनके सारस्वत व्यवसायके समक्ष उनका आर्थिक व्यवसाय नितान्त गौण हो हो गया है। वे मुख्यत सारस्वत सामग्रीके ही अगुलिगण्य आध्यात्मिक व्यवसायी हैं। असलियत तो यह है कि श्री नाहटाजी 'वाणिज्ये वसति लक्ष्मी'के सिद्धान्तसे कही अधिक इस सिद्धान्तके निष्ठावान् समर्थक है कि 'विद्याधन सर्वधनप्रधानम्।'

श्री नाहटाजी पत्राचार-पुगव पुरुष हैं, पत्र लिखनेकी सहजात तत्परताकी दृष्टिसे भी उनकी द्विती-यता नही है। पात्रिक संस्कारसे सम्पन्न वे तो स्मृतिशक्तिके महानिधि ही हैं। अहोरात्र नवीन शोध-प्रकाशनोकी जिज्ञासामें सोने और जगनेवाले श्री नाहटाजी जैसा संयमी और धीर व्यक्तिकी सहज ही विर-लता हुआ करती है। कहते है, जो लाकातिग विद्वान् होते हैं, उनकी हस्तलिपि प्राय सुस्पष्ट नही होती। मुझे अनन्य प्रतिभापति महामहोपाध्याय प० रामावतार शर्मा एवं उनके 'आत्मा वै जायते पुत्र'के अक्षरशः अन्वर्थयिता आत्मज आचार्य नलिनविलोचन शर्माकी हस्तलिपियोके अध्ययन-मननका सघन सयोग उपलब्ध रहा है। श्री नाहटाजीकी हस्तलिपि भी उसी विद्वत्-परम्पराका पोषण करती है। श्री नाहटाजीके अनेक ऐसे पत्र मेरे पास सुरक्षित है। और, परिपद्में भी यदि उनके हाथका लिखा कोई पत्र आता है, तो अर्थसंगतिके लिए मुझे ही उनके अक्षरोको टटोलना पड़ता है। संस्कृति-वाङ्मयके धुरन्धर प० मथुराप्रसाद दीक्षित-लिखित सस्कृत-नाटक 'वीरप्रताप'में एक जगह उट्टंकित है 'पूज्याना चरितानि वाच्यपदवी नायान्ति लोके क्वचित्।' तो, महामनीपियो की अर्थगर्भ हस्तलिपि अवाच्य होनेपर भी वाच्यपदवी (निन्दा) को नही प्राप्त होती। क्योकि, उनके अक्षरोकी वक्ररेखाओमें निहित उनके सरल विचार ही महार्घ और अन्वेष्टव्य हुआ करते है। यही कारण है कि महात्मा गान्धी एव आचार्य विनोवा जैसे राष्ट्रनायक अपनी अस्पष्ट लिपिकी अपेक्षा अपने विशद विचारोसे ही महान् हुए।

शोध-साहित्यके इतिहासमें श्री नाहटाजी जैसा बहुभाषाभिज्ञ लेखक दूसरा नही मिलेगा वहुत सिर खुजलानेपर भी उनका ही नाम पहला रहेगा। श्री नाहटाजी सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश आदि प्राच्य भाषाओके मर्मज्ञ तो है ही, राजस्थानकी अनेक उपभापाओपर भी उनका प्रभुत्व है। उन्हें हस्तलिखित पोथियोंका 'जगम विश्वकोश' कहा जाना चाहिए उनके द्वारा हस्तलिखित पोथियोकी शोध-समस्याओको शाश्वत प्रश्न बनाकर उपस्थित करनेकी विधि सदा आकर्षक रही है, जिसका नूतन कल्प और विन्यास प्रस्तुत करनेमें उनकी ततोऽधिक प्रतिष्ठा है।

श्री नाहटाजी साहित्यिकोमें प्रमुखत. शोधकर्त्ता है और शोधकर्त्ताओमें विशेषत साहित्यिक। परि-णामत., उन्होंने शोधको साहित्य और साहित्यको शोधका विशिष्ट अग बनानेकी चिन्ता बराबर की है। ऐसी

स्थितियोमें उनके लिए साहित्यिक गम्भीरता शोधीकरण ही है, जिसमें शंकाएँ वैज्ञानिक पद्धतिसे उठाई गई है और उनका समाधान आधिकारिक वचोभगीमें उपस्थित किया गया है। अतएव, उनका शोधकार्य साहित्यके विभिन्न अज्ञात दृष्टिकोणोके ऐक्य-प्रतिपादनका रमणीय विन्यास ही माना जायगा। शोधका काव्य-सवलित विन्यास सर्वप्रथम श्री नाहटाजीके ही कार्योमें मिलता है। शोधकार्यको व्यापक विस्तार देनेका श्रेय उनको ही है। उन्होने शोधपरक कृतियोकी विपुल समीक्षा की है, जिसकी सख्या अपरिमेय है और जिनका महत्व स्वय उनके लिए जीवन-दर्शनके समान है। निस्सशय, उनका समग्र जीवन शोधका ही पर्याय बन गया है। इसलिए, उनके शोध-कार्योके मूल्यका सही-सही अकन-प्रत्यकन एव विश्लेषण-व्यालोचन जबतक नही होता, तबतक हम उनके प्रति सच्ची श्रद्धाजलि अर्पित करनेमें पश्चात्पद ही रहेंगे। क्योंकि, वे जीवन-भर जिन शोध-आकाछाओको पालते-सहलाते रहे है, उनसे हिन्दी-साहित्यके इतिहासके सरचनात्मक सघटन तथा उसके पुनर्विचारकी स्थिति उत्पन्न हो गई है।

प्रत्येक शोधकर्त्ता जहाँ समसामयिक इतिहासका प्रत्यक्षद्रष्टा होता है, वही अतीतके इतिहासका विश्लेषक भी। शोधकर्त्ताको अतीत और वर्तमानके सीमान्तोकी विषम भूमिपर चलना पडता है। इस प्रायोदुष्कर कार्यमें श्री नाहटाजीकी कसौटी अपनी है तथा तर्क है उनका साधन। फिर भी, अपनी उपपत्तियोको सिद्ध करनेके लिए उन्होने तथ्योके 'सुविधाजनक आकलन'को न तो निकष बनाया है और न ही प्रामाणिकताका ही सम्फेट या गर्वोद्घोष किया है। अपनी उपलब्धियोंको प्रतिमान माननेकी विवशता भी उनमें नही है।

शोधके क्षेत्रमें प्रश्न अनेक हैं, समस्याएँ विविध हैं। सभी प्रश्नोंके उत्तर नही दिये जा सकते और न प्रत्येक समस्याका समाधान ही अन्तिम समाधान हुआ करता है। फिर भी, श्री नाहटाजीके समाधान निरर्थक नही है और शोध-जगत्के अवबोधको उद्ग्रीव बनाये रखना भी अपने-आपमें बहुत बडा काम है। फलत, अपने जीवनके एकमात्र व्रत शोधानुष्ठानके प्रति एकनिष्ठताकी दृष्टिसे शोधपुरुष श्री नाहटाजी वरेण्य तो है ही, अभिनन्दनीय भी हैं।

•

जैन साहित्य के प्रकांड विद्वान नाहटाजी

श्री कस्तूरमल बाठिया

गेहुआ रग, लबा कद, छरहरा बदन, ऊँची किन्तु उलझी हुई गगाजमुनी मूँछें, कमरमें ढीली धोती और उसकी भी लाग आधी खुली, वही या तो बदनपर लिपटी हुई अथवा गजी पहने हुए, आँखोपर चश्मा लगाकर हेसियनके बोरे या चटाईपर बैठे हुए, जिसकी मुखमुद्रा गभीर और शान्त है, ऐसे साहित्य-साधकको आप श्री अभय जैन ग्रथालय बीकानेरमें दिनमें प्रायः सोलह घटे बैठे पायेंगे। वे घरसे बाहर बहुत कम जाते हैं। यदि कामसे कही जाना हुआ तो बदनपर बंगाली कुर्ता, सिरपर मारवाडी पगडी, जिसके पेच अस्त-व्यस्त है। कन्धेपर सफेद दुपट्टा, पैरोमें चर्मरहित जूते। यह है उनकी बाहरी वेशभूषा।

अपरिचित व्यक्ति उन्हे देखे तो सहसा विश्वास नही होता कि यह सीधा-सादा दीखनेवाला व्यक्ति विद्वान् भी है और धनवान भी। उनसे प्रत्यक्ष बात किये या सपर्कमें आये बिना पता नही चलेगा कि वह इतने विद्वान है कि उनकी ख्याति केवल राजस्थानी जगत्मे ही नही, भारतके हिन्दी साहित्य जगत्में भी है। हिन्दी शोध जगत्के तो वह चमकते हुए नक्षत्र हैं।

नाहटाजीकी शिक्षा नाममात्र याने हिन्दीके पाचवें दर्जे तक हुई। स्कूली शिक्षा उन्हें भले ही

इतनी कम मिली हो लेकिन उन्होने सतत अध्ययन और स्वाध्यायके द्वारा वहुमुखी प्रतिभा प्राप्त की है। उन्होंने प्राकृत, अपभ्रंश, गुजराती और सस्कृत तथा हिन्दीका अच्छा ज्ञान प्राप्त किया है और पांडित्य भी। लोगोंको यह सुनकर विस्मय होता है कि केवल पाँच दर्जे तक पढे नाहटाजी विद्वान अधिकारी लेखक कैसे वनें ? यह सव नाहटाजीकी लगन, स्वाध्याय और मनन-चिन्तनका परिणाम है। नाहटाजीको जन्मजात संस्कारी विद्वान् कहा जाय तो उसमे अतिशयोक्ति नही होगी।

आजकल विश्वविद्यालयोके छात्रो और कॉलेजोके प्रोफेसरोमें एम० ए० पास कर लेनेके वाद डाक्टरेट-की पदवी पानेकी घुडदौड-सी लगी रहती है। वे थीसिस लिखकर डॉक्टर वनना चाहते है, और हजारो व्यक्ति डॉक्टर वन भी गये है, पर मेडिकल डाक्टरोके लिए तो शिक्षाकी सुव्यवस्था है। जगह-जगह वडे-बडे कॉलेज है किन्तु साहित्यके डाक्टरोके लिये कोई सुविधा नही है। विश्वविद्यालयोमें भी इस दिशामें अध्ययनके लिये पुस्तकालयोमें पुस्तकें सीमित पाई जाती है।

वडे राजकीय पुस्तकालयोसे ग्रन्थ प्राप्तकर अध्ययन करना हरएकके लिए सुलभ एव सभव नही है। फिर भी सैकडोने परिश्रम कर विभिन्न विषयोंपर थीसिस लिखकर "डाक्टरेट"की पदवी प्राप्त की है। हिन्दीमें शोधकार्य करनेके लिए विद्यार्थियोको विषय मिलना कठिन हो रहा है। इसलिए साहित्यिकोका ध्यान राजस्थानी भाषा और जैनसाहित्यकी ओर आकर्षित हो रहा है। राजस्थानी भाषा और जैनसाहित्यमें विशाल भडार भरा पडा है, जिसकी ओर पिछले १०–१२ वर्षोमें साहित्य अन्वेषकोका ध्यान गया है।

नाहटाजी राजस्थानी भाषा और जैनसाहित्यके चोटीके विद्वानोमें माने जाते है। उनके पास अपना निजी अनुभव तो है ही परन्तु साथमें एक वडा पुस्तकालय भी है, जहाँ चालीस हजार हस्तलिखित ग्रन्थ और इतने ही मुद्रित ग्रंथोका विशाल सग्रहालय है। भारतके व्यक्तिगत सग्रहालयोमें यह सवसे वडा है। इसे देखकर डॉ० वासुदेवशरण अग्रवालके मुँहसे निकल गया—"यह साहित्य-तीर्थस्थान है"। अभय जैन ग्रन्थालयमें सैकडो अमूल्य ग्रथो एवं पुरातत्वकी पुस्तकोका सग्रह है। वहाँपर भारतके एक छोरसे दूसरे छोर तकके विद्वान् आते हैं या वहाँसे ग्रन्थ मँगाकर लाभ उठाते हैं। नाहटाजी मुक्तहस्तसे इस अमूल्य साहित्यनिधिको नि:स्वार्थ भावसे वितरित करते है। पुस्तकालयकी विपुल सामग्रीका जितना उपयोग हो सके, उतना ही उन्हें सतोष होता है।

आजकल कई साहित्यिक अन्वेषक ऐसे मिलेंगे जो नाहटाजीसे थीसिस लिखनेके लिए विषय पूछते हैं। उनके लिए उपलब्ध साहित्य सामग्री की जानकारी एव उनका मार्गदर्शन चाहते हैं। नाहटाजी कभी किसीको ना नही करते, सभीको यथासंभव सहयोग देते है, अपने अनुभवसे साहित्य अन्वेषकके मार्गको प्रशस्त कर देते है, अपने पास जो पुस्तकें नही होती, वे दूसरी जगहसे अपने नाम या कीमतसे भी मँगाकर सहायता करते है। शोधके कुछ विद्यार्थी इनके पास आकर निवास भी करते है, शिष्य-भावसे उनके पास वैठकर लाभ उठाते है। नाहटाजीकी यह विशेषता है कि अपना सव काम करते हुए भी ऐसे विद्यार्थियोको उचित मार्ग-दर्शन व सहायता करते है। राजस्थानी एवं जैनसाहित्यमें शोध करनेवाले विद्यार्थी भलीभाँति जानते है कि इन दोनो विषयोपर शोधकार्य करना हो और थीसिस लिखना हो तो नाहटाजीकी सहायता अनिवार्य है। केवल नवीन शोध अन्वेषक ही नही, डाक्टरेटकी पदवी प्राप्त विद्वान भी शकासमाधानके लिए नाहटाजीसे मार्ग-दर्शन चाहते है।

हाल ही की वात है कि अहमदावादसे "डाक्टरेट" प्राप्त विद्वानका पत्र आया था, जो भारतके एक प्राचीन ग्रन्थ विमलदेवसूरिके "पउमचरिय" पर शोध कर रहे है। यह ग्रन्थ प्राकृत भाषाका है और वीर-

निर्वाणके ५३० वर्षके बाद लिखा गया था। इस ग्रन्थके विषयमें उठी कई शकाओके बारेमें उन्होने कई विद्वानोसे बातचीत की थी, किन्तु किसीसे उन्हे सतोषजनक और निश्चित मत नही मिल सका। उनमेंसे किसीने शकाओके समाधानके लिए नाहटाजीसे पूछनेके लिये ही लिखा। तात्पर्य यह कि नाहटाजीके दृष्टिकोण एव विचारोको भारतके बडे-बडे विद्वान भी प्रमाणित और तथ्यपूर्ण मानते हैं।

नाहटाजीका प्रिय विषय है प्राचीन शोध। वे इस विषयके प्रकाड पडित माने जाते है। उनके करीब ३००० निबध और विभिन्न विषयोपर लिखे विद्वत्तापूर्ण लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओमें प्रकाशित हुए है। उनके लेख शोधपूर्णताके साथ-साथ नवीनतासे परिपूर्ण भी होते हैं। प्राचीन और नवीनका सतुलन उनमें होता है। वे हमेशा कहते है कि पिसे हुएको फिर दुबारा क्यो पिसना। इसीलिए उनके लेखोमें नवीनता और स्वतंत्र विचार होते है। उन्हें लिखने-पढनेका व्यसन-सा हो गया है। नाहटाजी द्वारा लिखित और संपादित करीब डेढ-दो दर्जन पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है।

हिन्दीमें वीरगाथाकाल, पृथ्वीराजरासो, विमलदेवरासो, खुमाणरासो, आदिकी जो नवीन शोध नाहटाजीने हिन्दी-ससारको दी है, इसके लिए हिन्दी साहित्य जगत् नाहटाजीका ऋणी रहेगा। शोधकार्यमें भी नाहटाजी गहरी दृष्टिसे काम लेते हैं। हिन्दीके महारथियोके शोधकार्यमें भी वे भूल निकालते है। वह कहा करते है कि आजकल लोग परिश्रम करना नही चाहते। पकी-पकायी ही सबको अच्छी लगती है। हिन्दीके विद्वान् नई शोधके लिये परिश्रम न करके इधर-उधरका देखकर अपनी शोधकी इतिश्री मान लेते है। हिन्दीके जितने भी इतिहास शुरू-शुरूमें निकले, वे सब एक दूसरेकी नकल मात्र हैं, नवीन सामग्री नगण्य-सी है। यह खटकने जैसी बात है। हिन्दीके साहित्यिकोको चाहिए कि वे हिन्दी भाषाको समृद्ध बनानेके लिए दिव्य तपस्या करें।

नाहटाजीका जीवन अत्यन्त सादगीपूर्ण एव धार्मिक है। अभिमान, झूठ, कपट आदिसे कोसो दूर रहते हैं। उन्होंने जैन सिद्धान्तोको अपने जीवन व्यवहारमें गहराईसे उतारा है। वे रात्रिमें भोजन तो क्या पानी भी नही पीते। कही १-२ मील चलना हो तो वह पैदल ही चलेंगे। प्रत्येक कार्यमें वे मितव्ययता करते हैं। ऐसे साहित्य-मनीषीका जरूर ही अभिनदन होना चाहिए। राजपूताना विश्वविद्यालय एव भारत सरकारको भी ऐसे विद्वानका उचित सम्मान करना चाहिए।

वाङ्मय पुरुष

प्रो० डॉ० नेमिचन्द्र शास्त्री

'पुरुषार्थी मनुष्यके सम्मुख लक्ष्मी हाथ जोडकर खड़ी रहती है।' यह एक प्राचीन उक्ति है। पर पुरुषार्थी व्यक्ति सरस्वतीके भी कृपाभाजन बन सकते है, इसे जिन विद्वानोने अपने कृतित्वमे चरितार्थ किया है, उनमें श्री अगरचन्द नाहटाका नाम विशेष उल्लेखनीय है। विद्यालयीय शिक्षाके न मिलनेपर भी अपने सतत स्वाध्याय और अनवरत श्रमके कारण मूर्धन्य सारस्वतोमें स्थान प्राप्त करनेका श्रेय नाहटाजीको है। नाहटाजीको मैं हरिभद्रका या पडितराज जगन्नाथका नवीन सस्करण मानता हूँ। ऐसा कोई विषय नही, जिसका स्पर्श नाहटाजीकी लेखनीने न किया हो। ज्योतिष, वैद्यक, तन्त्र, आगम, गणित, मन्त्र, अलकार शास्त्र, काव्य, दर्शन आदि सभी विषयोपर शोधात्मक और परिचयात्मक निबन्ध लिखकर माँ भारतीकी श्री-वृद्धि की है। इतिहास और शोध-खोज सम्बन्धी ऐसे अनेक प्रबन्ध इन्होने लिखे हैं, जिनसे भारतीय इतिहासके काल-निर्णय सम्बन्धी तिमिरका नाश हुआ है।

आजसे लगभग २५, ३० वर्ष पूर्व पृथ्वीराजरासोकी प्रामाणिकताके सम्बन्धमें विवाद उत्पन्न हुआ था। इतिहासकारोंके दो दल थे। प्रथम दल इस ग्रन्थको प्रामाणिक घोषित करता था और द्वितीय दल अप्रामाणिक। इसी समय नाहटाजीके कुछ निबन्ध प्रकाशित हुए, जिनमें उन्होंने प्राचीन प्रतियोंके आधारपर पृथ्वीराजरासोके इस विवादका निर्णय किया।

नाहटाजीका चिन्तन पक्ष भी अत्यन्त पुष्ट है। इन्होंने अनेक साहित्यिक कृतियोंका मूल्यांकन कर अप्रकाशित साहित्यको विद्वज्जगत्‌के समक्ष प्रस्तुत किया है। पुरुषार्थ और अध्यवसायसे मनुष्य अलौकिक अनुपम और मननीय वस्तुको भी प्राप्त कर लेता है। इस सदर्भमें हमें नाटककार भासकी एक उक्तिका स्मरण आता है, जिसमें उन्होंने अलभ्य वस्तुओं की प्राप्तिका साधन अध्यवसायको बताया है—

काष्ठादग्निर्जायते मथ्यमानाद्
भूमिस्तोय खन्यमाना ददाति।
सोत्साहाना नास्त्यसाध्य नराणा
मार्गारब्धा सर्वयात्राः फलन्ति॥

नाहटाजीने वाङ्मयपुरुषके रूपमें जन्म ग्रहण किया है। राजशेखरकी काव्यमीमासामें हमें काव्य पुरुषका अकन मिलता है। इस काव्यपुरुषकी समकक्षता हम नाहटा वाङ्मयपुरुषसे कर सकते हैं। हमें इस वाङ्मयपुरुषमें दर्शन और इतिहासकी पीठिकाएँ भी प्राप्त होती है। इतिहाससे वैज्ञानिक अन्वेषणकी सृष्टि और चिन्तनकी प्रक्रिया इस वाङ्मयपुरुषमें समाहित है। तथ्यानुसन्धान और सत्यान्वेषणकी प्रक्रिया पूर्वाग्रहोंसे मुक्त होनेके कारण नयी दिशा और नवीन चिन्तनको उत्पन्न करती है। पुरातत्त्वान्वेषणात्मक निबन्धोंने इस वाङ्मयपुरुषमें जीवन्त कलाका संचार किया है।

आश्चर्य तो यह है कि विश्वविद्यालयकी उपाधियोंसे मुक्त रहनेपर भी शताधिक शोधछात्रोंका मार्गदर्शन एव सहस्राधिक जिज्ञासुओंको आवश्यक अध्ययन सामग्री प्रदान करनेका श्रेय इस निष्काम साधकको है। मैंने आपके द्वारा सम्पादित 'ऐतिहासिक जैनकाव्यसग्रह' का अवलोकन कर आपकी प्रतिभा और क्षमताका परिचय प्राप्त किया था। जैन सिद्धान्त भास्करके नियमित लेखकके रूपमें मैं आपसे सन् १९४४ ई० से ही परिचित हूँ। मैंने पाया कि नाहटाजीको पत्र मिलनेमें डाककी गडबडीके कारण विलम्ब हो सकता है, पर निबन्ध भेजनेमें इन्हें विलम्ब नही होता। वीणापाणिका वरदहस्त आपको प्राप्त है। राजस्थानकी वीरभूमि ऐसे सारस्वतको प्राप्तकर कृतार्थ है। नि स्वार्थसाधकके रूपमें राजस्थानी भाषामें लिखित ३०-४० ग्रन्थोंका सम्पादन और प्रकाशन कर अपने वाङ्मयपुरुषत्वको चरितार्थ किया है। राजशेखरने काव्यपुरुषकी उत्पत्तिके प्रसगमें बताया है कि एक बार बृहस्पतिके शिष्योंने उनसे पूछा कि सरस्वतीके पुत्र काव्य-पुरुष कौन है? बृहस्पतिने काव्यपुरुषकी उत्पत्ति एव चरित्रका निरूपण करते हुए बताया कि पुत्र उत्पत्तिके पश्चात् पुत्रने माँ सरस्वतीके चरणोंका स्पर्श करते हुए छन्दोबद्ध भाषामें कहा—

यदेतद्वाङ्मय विश्वमर्थमूत्तर्या विवर्त्तते।
सोऽस्मि काव्यपुमानम्ब! पादौ वन्देय तावकौ॥

अर्थात् सारा वाङ्मय विश्व जिसके द्वारा अर्थरूपमें परिणत हो जाता है, वह काव्य-पुरुष मैं तुम्हारे चरणोंकी वन्दना करता हूँ।

इस रूपकको हम नाहटा वाङ्मयपुरुषपर भी घटित कर सकते है। इस वाङ्मयपुरुषका शब्द और

अर्थ शरीर है, संस्कृत भाषा मुख है, प्राकृत भाषाएँ भुजाएँ हैं। अपभ्रंश भाषा जंघा है, राजस्थानी, गुजराती आदि भाषाएँ वक्षस्थल हैं, विश्लेषण-क्षमता, चिन्तन-प्रक्रिया, प्रतिपादन-शैली वाणी है। इस प्रकार यह वाङ्मय पुरुष सरस्वती का ज्येष्ठ पुत्र है और इसे उनका पूरा प्यार और दुलार प्राप्त है।

इस वाङ्मय पुरुषकी कीर्त्ति अक्षुण्ण है। यह प्रतिभाका धनी है, स्वय वुद्ध गुरु है और है उच्चकोटिका साधन। कर्मठत , लगन, त्याग और नि स्वार्थ भावने इस वाङ्मय पुरुषको इतनी दिव्यता प्रदान की है, जिससे यह स्वय वुद्ध गुरुके रूपमें ख्यात है। इस २०वी शताब्दीमें जैन-साहित्यकी रक्षा, सेवा और प्रगतिमें दिया गया नाहटाजीका योगदान स्वर्णाक्षरोमें अकित रहेगा। हिन्दी-साहित्यका प्रत्येक शोधार्थी इनकी ज्ञान भागीरथीकी शीतलतासे परिचित है। श्री नाहटाजीके व्यक्तित्वकी दो प्रमुख दिशाएँ है—अध्ययन और साहित्य-सृजन। अध्ययन वलसे सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश आदि विभिन्न भापाओ और उनके साहित्योका अतलतलस्पर्शी पाडित्य प्राप्त किया है। अपूर्व क्षयोपशमके साथ निरन्तर श्रम-साधना द्वारा ज्ञानार्जन और ज्ञान वितरण दोनो ही कार्य व्यक्तिके रूपमें नही किन्तु संस्थाके रूपमें मान्य है। नाहटाजी न तो राजनीतिक नेता हैं और न धर्मनेता ही। वे ऐसे साहित्यके स्रष्टा है, जो तटस्थ दृष्टिसे नयी स्थापनाओ और उद्भावनाओ द्वारा नये प्रतिमान स्थापित कर रहे है। ये सर्वथा न प्राचीनताके समुत्थापक हैं और न सर्वथा अर्वाचीनता के सम्पोषक हैं। सत्य और औचित्य ही इनके लिये जीवनके सच्चे प्रतिमान हैं।

साहित्य स्रष्टाके रूपमें नाहटाजी युग-युगान्तर तक आलोकित रहेंगे। इनकी मौलिक प्रतिभा प्रत्येक निवन्धमें झांकती है। जिस विषयको ये ग्रहण करते है, उसके ऐतिहासिक और सास्कृतिक दोनो ही पक्षोको पूर्णतया उपस्थित करनेका प्रयास करते हैं।

ग्रंथ-निर्माण और सम्पादनके अतिरिक्त नाहटाजीने बीकानेरके ग्रन्थागारोंकी सूचियाँ तैयार करके शोधार्थियोके लिये महनीय प्रभूत सामग्री प्रस्तुत की है। आप सस्था होनेके साथ विश्वकोष भी हैं। किसी भी विषयकी जानकारी आपसे प्राप्त की जा सकती है। किस प्राचीन लेखककी कौनसी कृति किस ग्रन्थ-भण्डारमें है, इसका परिज्ञान नाहटाजीको निर्भ्रान्ति रूपसे है। राजस्थानमें हस्तलिखित ग्रन्थोकी खोज और शोध सम्वन्धी कार्य भी आपके द्वारा सम्पन्न हुए है। इन शोध खोजोका विवरण ग्रन्थ रूपमें प्रकाशित है।

नाहटाजीका व्यक्तित्व नारिकेल सम है। वे साहित्यिक दायित्वके निर्वाहके लिए कडीसे कडी आलोचना कर सकते हैं। साहित्यकारोकी कृतियांमें त्रुटियाँ निकालना उनका स्वभाव है, पर नये साहित्यकारोको उत्साहित करनेमें वे कभी पीछे नही रहते। उनके साहित्यिक व्यक्तित्वमें जो कठोरता है, वह स्वभावजन्य नही, सिद्धान्तजन्य है। स्वभाव तो उनका नवनीतसे भी अधिक कोमल है। सत्य तो यह है कि उनका व्यक्तित्व एक कर्मयोगी का है। सिद्धान्तकी रक्षाके लिए नाहटाजी कठोर भी वन सकते हैं, पर यथार्थत. वे सभीका उत्थान और मंगल चाहते है। जो भी उनके सम्पर्क में आया, वह उनका प्रशसक ही वन गया है। मेरी दृष्टिमें नाहटाजीके व्यक्तित्वमें हिमालय जैसी उत्तुङ्गता और विराटता समाहित है। हिमालयकी हिमधवल गगनस्पर्शी चोटियोका जव-जव स्मरण आता है, हृदय श्रद्धासे नगराजके प्रति नत हो उठता है। हिमालयकी करुणा जव अगणित निर्झरो और सरिताओके रूपमें विगलित होती है, तो देशकी वजरभूमि भी शस्त्रोकी उर्वर जननी वन वैठती है। हिमालय उत्तर दिशामें जाने कितनी दूर अपनी विराटताको लेकर खड़ा है।

नाहटाजीकी गणना भारतके उन मनीषियोमें सम्मिलित है, जिनके त्याग एवं सेवाओंके गारेसे किसी भी देश या समाजका गौरवपूर्ण इतिहास निर्मित होता है। नाहटाजी जैसा मेधावी विद्वान्, कर्मठ, सत्यशोधक,

सुलेखक, युगनिर्माता एव चिन्तक शताब्दियोंमें ही किसी देश, समाज या राष्ट्रको प्राप्त होते हैं। मैं इस अभिनन्दन समारोहके अवसरपर उनके दीर्घायुष्य, स्वास्थ्य एव यशके लिए मगल-कामना करता हूँ। वे अपने इस उत्तरार्ध जीवनमें अपनी साहित्य-साधना द्वारा वाङ्मयकी अभिवृद्धि करते रहे, यही हार्दिक अभिलाषा है। मैं इस साहित्य-तपस्वीको अपनी श्रद्धा-भक्ति समर्पित करता हूँ।

•

कर्मयोगी श्री नाहटाजी

श्री रिषभदास राँका

व्यक्तिका मूल्याकन प्रत्येक व्यक्ति अपनी-अपनी कसौटीके अनुसार करता है। सबके पास अपने-अपने गज हैं, जिनके द्वारा वे दूसरोके व्यक्तित्वको मापते और आँकते हैं। किन्तु कुछ ऐसे व्यक्तित्व भी होते हैं, जिनका मूल्याकन किसी निश्चित मापदण्ड या गजके द्वारा नही होता, वरन् उनका व्यक्तित्व एव कृतित्व स्वयं ही अपनी छाप दूसरोपर छोड देता है।

श्रीनाहटाजी ऐसे व्यक्तित्वके धनी हैं, जिनकी साहित्य-साधना एव निरन्तर कर्मशील जीवन ही उनका परिचय है। उनका जन्म राजस्थानके व्यवसायी परिवारमें हुआ। पैतृक-परम्पराके अनुसार व्यवसायके प्रति उनका दायित्व था और उस दायित्वको आज भी वे वर्षमें महीनोका समय लगाकर कुशलतासे निभाते हैं। लेकिन उनका मन एवं हृदय एक ऐसी जिज्ञासा एवं शोधवृत्तिसे ओत-प्रोत है कि वे उसे अपने ज़ीवनका मुख्य ध्येय मानकर उसमें रचे-पचे हुए हैं। साधारण स्कूली-शिक्षा प्राप्त एक व्यापारीके पास पी-एच० डी० की डिग्री पानेवाले विद्वान् व्यक्ति विद्यार्थीकी भाति ज्ञानार्जन करते हुए देखकर सहसा किसीको भी आश्चर्य हो सकता है लेकिन जिसने उनका सामीप्य प्राप्त किया है, वे जानते हैं कि भले ही उनके पास कोई डिग्री न हो किन्तु उनका ज्ञानभंडार विशाल है। प्राचीन हस्तलिखित हजारो ग्रथोका उद्धार एव नित्य नई-नई शोधके द्वारा श्री अगरचदजी नाहटाने अन्वेषणके इतिहासमें जो योगदान किया और कर रहे हैं, वह वस्तुत. आश्चर्यजनक एव स्तुत्य है। अपने विशाल पुस्तकालय एव संग्रहालय द्वारा देश-विदेशके विद्वानोंको नई रोशनी देनेवाले श्रीनाहटाजी अत्यन्त परिश्रमी, स्वाध्यायी एव कर्मयोगी हैं।

उनकी पत्नीका देहावसान हुए कुछ ही दिन बीते थे। मैं बीकानेर उनसे मिलने गया तो देखा-चारो तरफ पुस्तकोका ढेर लगाये अत्यन्त तन्मयतासे श्रीनाहटाजी कर्मयोगीकी तरह अपना अध्ययन कर रहे हैं। उनके कार्यमें कही भी गतिरोध नही था और न मनपर उस दु खद घटनाका कोई प्रभाव ही। ऐसी स्थिति एक सच्चे साधक की होती है भले ही उसका साधना क्षेत्र अध्यात्म हो या साहित्य।

श्री नाहटाजीके साथ वर्षोंके आत्मीय सम्बन्धमें मैंने उनकी एक बहुत बडी विशेषता यह भी पाई कि वे साम्प्रदायिकताके रोगसे ग्रसित नही है। जहाँ कही भी अच्छी बात नजर आती है, वे उसका हृदयसे समर्थन करते हैं और जो बात उनको उचित नही लगती उसके लिए स्पष्टता एवं निर्भयतापूर्वक अपने विचार व्यक्त करते है। इस प्रकारके कई प्रसंग उनके साथ आये लेकिन उनका सत्यके प्रति आग्रह कभी नही टूटा।

स्वयं साहित्यके क्षेत्रमें अथवा शोधकार्यमें संलग्न रहते हुए दूसरो को प्रेरित एवं उत्साहित करना उनकी विशेषता है। छोटी-छोटी पत्र-पत्रिकाओंमें भी वे अपने लेख और विचार भेजते रहते हैं और नये

उत्साही युवकोका अध्ययन एव लेखनकी प्रेरणा देते रहते है । राजस्थानी साहित्य, अपभ्रंश एवं प्राकृत ग्रंथोंके पुनरुद्धारका जो कार्य उनके द्वारा हुआ है, उसके लिए साहित्य-जगत् सदा उनका आभारी रहेगा ।

जैन समाजमें एकता, समन्वय एव प्रेमके लिए उनकी आन्तरिक तडप है । इसके लिए वे समय-समय पर लेख, भाषण और चर्चाओके माध्यमसे अपने विचार व्यक्त करते रहते है । केवल विचारो तक ही वे सीमित न रहकर क्रियात्मक रूपमें भी सदा आगे रहते हैं । यही कारण है कि चारो सम्प्रदायोके जैन आचार्यो साधु-साध्वियो एव श्रावक-समाजमें वे समान रूपसे प्रिय है ।

श्री नाहटाजी सामान्य शिक्षा प्राप्त उस वणिक् समाजके व्यक्ति हैं, जिसके लिए कहा जाता है कि उसके पास लक्ष्मी तो होती है किन्तु सरस्वती नही होती । नाहटाजीने इस उक्तिको वर्तमान समयमें भी गलत सिद्ध कर दिया है । हाँ, नाहटाजीकी लिखावटको पढनेके लिए प्रयत्न करना पडता है और साधारणत. उसे पढ पाना कठिन ही होता है, परन्तु उनके विचार बहुत ही मूल्यवान होते है ।

स्वभावसे सरल, मिलनसार और नम्र । व्यवहारमें कही भी अहकारका समावेश नही और न पाडित्य-का प्रदर्शन ही । धोती-कुर्तेका पहनावा, गलेमें चादर और सिर पर राजस्थानी बीकानेरी पगडी । एक सामान्य मनुष्यकी भाँति इस सहज और स्वाभाविक रूपमें छोटे-बडे समारोहोंसे लेकर दैनिक कार्यक्रममें वे उपस्थित रहते हैं । जीवनमें त्याग-वैराग्यका भी समावेश है । किसी प्रकारका कोई व्यसन नही और न प्रमाद ही । सतत ज्ञानकी पिपासा एव जिज्ञासुभाव दूसरोके लिए अत्यन्त प्रेरणाप्रद हैं ।

यह अभिनन्दन समारोह उनका नही बल्कि उनकी साधना, सेवा और सात्त्विक वृत्तियोका है । वे इसे पसन्द नही भी करें किन्तु उनके मित्रो, शुभेच्छुओ एव गुणग्राहकोका यह कर्तव्य हो जाता है कि वे अपनी भावना व्यक्त करें । आवश्यकता इस बातकी है कि ऐसे समारोह केवल परम्परागत या प्रदर्शन भावनाके लिए न करते हुए प्रेरक बनें, इसका प्रयास किया जाय ।

अभिनन्दन समारोहके अवसरपर मित्रवर श्री नाहटाजीके प्रति अपनी मगल कामना व्यक्त करता हुआ मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वे दीर्घायु होकर साहित्य, समाज एव राष्ट्रकी सेवामें अधिकसे अधिक योगदान करते रहें ।



मित्रवर अगरचन्द जी नाहटा

श्री वृन्दावनदासजी बी० ए०, एल० एल० बी०

मित्रवर अगरचन्दजी नाहटासे मेरा व्यक्तिगत और साहित्यिक परिचय है । व्यक्तिगत परिचय तो अभी कुछ ही वर्षो का है परन्तु साहित्यिक परिचय बडा पुराना है । मैं अपने बाल्यकालसे ही अनेक पत्र-पत्रिकाओमें नाहटाजी के लेख पढता रहता था । ऊँचेसे ऊँचे स्तरकी पत्रिका हो अथवा सामान्य स्तरकी छोटी-मोटी, नाहटाजी का शोधपूर्ण लेख उन सब में अवश्य ही दिखाई दे जाता था । इसलिये कुछ पहले तक मैं नाहटाजीको अपनेसे बडी उम्रका साहित्यिक समझता था परन्तु तीन-चार वर्ष पहले जब अनायास ही एक बार नाहटाजीने मेरे निवास-स्थानपर पधारकर दर्शन दिये, तब मेरे आश्चर्यका ठिकाना न रहा । मुझे उसी दिन ज्ञात हुआ कि नाहटाजी तो मुझसे ४, ५ वर्ष छोटे है । इस प्रसगसे यह सिद्ध है कि नाहटाजीने

अपनी साहित्य साधना बाल्यकाल से ही आरंभ कर दी थी और यही कारण है कि वे इतनी अधिक मात्रा-में लेखन, शोध और संग्रह कर पाये।

श्री अगरचन्दजी नाहटाके लेख प्रधानतया शोधात्मक ही होते हैं, इस कारण उनका साहित्यिक महत्त्व अत्यधिक है। नाहटाजीने स्वयं बड़ा विशाल संग्रह किया है परन्तु इसके साथ ही उन्होंने समस्त राजस्थानी-संग्रहको खूब छाना है। उनके लेखो से साहित्यकी नई कृतियाँ उभरकर आई हैं, बहुत सी गुत्थियाँ सुलझी है और अनेक नई स्थापनाएँ हुई है। अनेक कवियो, लेखकोके जीवन-वृत्तो के सम्बन्ध में साहित्यिक जगत्में अनेक भ्रान्तियाँ प्रचलित थी, जिन्हें नाहटाजीने अकाट्य प्रमाणोके माध्यमसे निवृत्त किया है। नाहटाजीने अनेक हस्तलिखित प्रतियोकी ओर अनुसन्धित्सुओका ध्यान आकर्षित किया है, जिनके अभावमें शोधार्थी छटपटा रहे थे और साहित्यिक बन्धु अन्धकारमें थे। हिन्दी साहित्यकी लगभग सभी शोध पत्रिकाएँ नाहटाजीकी बड़ी ऋणी हैं। लगभग तीन हजार शोधपूर्ण लेख लिखकर नाहटाजीने उनको और हिन्दी-संसारको उपकृत किया है।

जैन साहित्यपर नाहटाजीका अध्ययन बड़ा गहन है। उनका इस साहित्यपर लेखन भी पुष्कल है। मुझे इस पीढी में जैनसाहित्य से हिन्दीवालोका तादात्म्य करानेवाले किसी ऐसे साहित्यिकका नाम नही मालूम, जिसने इस दिशामें नाहटाजीसे अधिक काम किया हो।

नाहटाजीका व्रजभाषा से भी असीम प्रेम है। वे व्रजभाषा साहित्यके मर्मज्ञ हैं। व्रजसाहित्यमण्डल के वे जन्मदाताओमेंसे हैं। कई बार उससे सम्बद्ध साहित्य परिषद् और अनेक साहित्यिक समारोहो के वे अध्यक्ष रह चुके हैं। मण्डलकी मुखपत्रिका त्रैमासिक व्रजभारती के वे अनन्य लेखक है। उनके लेख पत्रिका की अधिकाश प्रतियोमें निकल चुके है।

अभिनन्दनके इस शुभ उत्सवपर मैं मित्रवर नाहटाजीको अपनी हार्दिक बधाई प्रस्तुत करता हूँ और सर्वशक्तिमान् से प्रार्थना करता हूँ कि वे शतायु हो और इसी प्रकार साहित्यिको को प्रेरणा देते रहें।

●

साहित्यिक-कल्पद्रुम नाहटाजी

पं० कमलकुमार जैन शास्त्री

राजस्थान अपने मध्यकालीन अतीतमें जहाँ स्वाभिमान, स्वतत्रता और शौर्यका एक उज्ज्वल और अनुपम आदर्श रहा है, वहाँ उसकी मरुभूमि में अनेक साहित्यिक हरित भूमियाँ भी दृष्टिगत होती रही हैं। मरु-उद्यानकी इन्ही अनेकानेक वृक्ष वल्लरियो के मध्य अभी बीकानेर के कुंज में एक ऐसा कल्पद्रुम भी है, जो बारहो मास साहित्यिक सुन्दर फल-फूलो से हरा-भरा और अवनत (विनम्र) रहा है। उस सदा बहार वृक्षको पाठकगण श्रीअगरचन्द नाहटाके नामसे जानते हैं। अगर-चन्दनकी शीतल सुवास और प्रकाश-मान वर्तिकासे माँ सरस्वतीका मन्दिर जितना आज महक रहा है, सभवत. उतना कभी और महका हो ... स्मरण नही :—

पुरातत्त्व, इतिहास और शोध सामग्रियोंसे भरा हुआ साहित्य स्वय आज श्री नाहटाजीके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन हेतु लालायित हो उठा है। हस्तलिखित ग्रन्थो का जितना उद्धार और मूल्याकन श्री नाहटा द्वारा

हुआ है, उतना कदाचित् अन्य साहित्य सेवियो द्वारा नही। संपादन, लेखन और शोधकार्योमें अविरल लगे रहनेपर भी आप सामाजिक और सार्वजनिक सेवाओ-में अग्रिम योग-दान देते रहते हैं।

सिद्धान्ताचार्य, विद्या-वारिधि, सघ-रत्न आदि अनेक लौकिक उपाधियाँ आपकी विद्वत्ताके चरणोमें लोटती है, परन्तु इनकी उपलब्धिके लिए आपने कभी महत्त्वाकाक्षी होकर तपस्यायें नही की प्रत्युत वे तो आपके सतत स्वाध्याय प्रेमके कारण ही ऋद्धि-सिद्धियोकी भाँति आपकी दासियाँ बनने चली आई।

लक्ष्मी और सरस्वतीको ३६ के अकोमें खेलते तो सर्वत्र ही सबने देखा-परखा है परन्तु ६३ के अकमें क्रीडा करती हुई ये युगल देवियाँ श्री अगरचन्दजी नाहटाके आँगनमें ही देखी जा सकती हैं।

आपकी सतत साहित्य-साधना, शोध-कार्य एवं अविरल स्वाध्याय प्रेमने जिनवाणीके मन्दिरमें श्रुत-देवता की ऐसी मनोरम मूर्ति विराजमान की है, जिसके दर्शन मात्रसे दिगम्बर और श्वेताम्बरका वैषम्य स्वयमेव काफूर हो जाता है। पथ व्यामोह को तो आप विषधर-दशित वेहोशी मानते हैं।

महाप्रभाविक वृहत् सचित्र अमर भक्तामर आदि पच स्तोत्रोंके सम्बन्धमें मेरा पत्र-व्यवहार बहुधा आपसे होता रहता है, उचित निर्देशनो, ऐतिह्य सुझावो, पुरातत्त्वीय प्रेषणो (सामग्रियो), हस्तलिखित ग्रन्थोके माध्यमसे आपके द्वारा जो साहाय्य व सहयोग मुझे मिलता रहता है, उसे कभी भी विस्मृत नही किया जा सकता। मैं क्या, वल्कि सभी शोधस्नातक रूपी एकलव्योके लिए तो आप परोक्ष द्रोणाचार्य ही हैं, देखें, मेरा सौभाग्य कब आपके साक्षात्कार पूर्ण अभिनन्दनके लिए जाग्रत् होता है।

अनोखी प्रतिभाके धनी

श्री अमृतलाल शास्त्री

श्रद्धेय नाहटाजीने अपनी ज्ञान पिपासाको शान्त करनेके लिए व अनुसन्धानको साधार बनानेके लिए अपने द्रव्यसे बीकानेरमें दो महत्त्वपूर्ण सस्थाओकी सस्थापना की है—(१) अपने बडे भाई स्व० अभयराजजी की स्मृतिमें **श्री अभय जैन ग्रन्थालय**, जिसमे ४० हजार हस्तलिखित दुर्लभ ग्रन्थोका और ४० हजार महत्त्व-पूर्ण प्रकाशित ग्रन्थोका अपूर्व संग्रह है, तथा (२) अपने पूज्य पिता स्व० सेठ शङ्करदानजीकी सस्मृतिमें **श्री शङ्करदान नाहटा कलाभवन**, जिसमें ३०० प्राचीन चित्र, सैकडो सिक्के, प्राचीन प्रतिमाएँ और विविध कला-कृतियाँ संगृहीत हैं।

इन दोनो संस्थाओके साथ **राजस्थानी साहित्य परिषद्**का भी संचालन नाहटाजी स्वय कर रहे हैं। सचालनके अतिरिक्त आपने अभयजैन ग्रन्थमालासे २५ एव राजस्थानी साहित्य परिषद्से ९ विशिष्ट ग्रन्थोका प्रकाशन भी किया है।

अन्य संस्थाओंको सक्रिय सहयोग—वृहत्खरतरगच्छ जैन ज्ञान भण्डारको जिसकी देख-रेख भी आप करते हैं, १० हजार हस्तलिखित प्राचीन प्रतियोकी विषयवार सूची अपने हाथसे तैयार की। इसी तरह बीकानेरके श्रीजिनदत्त सूरि ज्ञान भण्डार एव उपा० जयचन्द्र ज्ञान भण्डारके १० हजारसे भी अधिक प्राचीन ग्रन्थोकी सूची बनानेमे स्वय परिश्रम किया है। इस तरह तीनो सस्थाओंको नाहटाजीने सक्रिय सहयोग दिया है।

संस्मरणीय सेवाएँ—(१) श्री सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट बीकानेरमें लगातार कई वर्षोतक निदेशकका पद संभालना, (२) महानिवन्ध (थीसिस) लिखनेवाले सैकड़ो अनुसन्धाताओको मार्गदर्शन कराना,

(३) ७० ग्रन्थोंका सम्पादन, जिनमें ३५ प्रकाशित भी हो चुके हैं, (४) ३००० से अधिक विशिष्ट लेख लिखना, जो ३०० पत्र-पत्रिकाओंमें प्रकाशित हो चुके हैं, (५) 'राजस्थान भारती' आदि अनेक पत्रिकाओंका कुशल सम्पादन करना, (६) वैदुष्यपूर्ण प्रमाणोंके आधारपर राजस्थानी भाषाको साहित्यिक मान्यता दिलवाना, (७) ऐतिहासिक प्रबल प्रमाणोंको लेखबद्ध करके, जो 'लोकवाणी' पत्रिकामें प्रकाशित हुए थे, 'आबू' को राजस्थानमें ही पुन बनवाये रखना और (८) वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी और कलकत्ता विश्वविद्यालय, कलकत्ता आदिकी संगोष्ठियोंमें शोधपूर्ण विशिष्ट निबन्ध प्रस्तुत करना—आदि तथ्योंके आधारपर स्पष्ट है कि नाहटाजी अनोखी प्रतिभाके धनी हैं। यही कारण है कि आपकी गणना भारतवर्षके विशिष्टतम विद्वानोंमें की जाती है। आपकी सेवाएँ सदा सस्मरणीय रहेंगी।

सन् १९६५की बात है वाराणसेय सस्कृत विश्वविद्यालयमें उसके तत्कालीन कुलपति महामहिम श्री विश्वनाथदासजी, राज्यपाल उत्तर प्रदेशने एक विराट् तन्त्र सम्मेलन करवानेका सुझाव दिया था। फलत' उक्त विश्वविद्यालयके वरिष्ठ अधिकारियोंने एक मीटिंग की, जिसमें विश्वविद्यालयके सभी विभागोंके अध्यक्षोंके अतिरिक्त अनेक स्थानीय विद्वान् भी उपस्थित हुए थे। पर्याप्त विचार-विमर्शके पश्चात् तन्त्रसम्मेलनकी रूप रेखा बनायी गयी, विशिष्ट तान्त्रिक विद्वानोंको आमन्त्रित करनेके लिए उनके नाम और पते नोट किये गये, तथा सम्मेलनकी मिति निश्चित की गयी। इसी अवसरपर मैंने सोचा कि इस सम्मेलनमें जैन तन्त्र साहित्यके मर्मज्ञ विद्वानोंको भी आमन्त्रित किया जाना चाहिए। तुरन्त ही मैंने अपने इस विचारको अधिकारियोंके समक्ष रखा, जिसे उन्होंने बिना किसी आपत्तिके स्वीकार कर लिया। जब प्रस्तुत विषयके अधिकारी विद्वानोंके नाम पूछे गये तो मैंने श्री अगरचन्द्रजी नाहटा और डा० श्रीकस्तूरचन्द्रजी कासलीवालके नाम व पते नोट करा दिये।

मैंने नाहटाजी और कासलीवालजीको विश्वविद्यालयकी ओरसे पत्र लिखे। दोनोंने शीघ्र ही उत्तर दिया कि वे तन्त्र-शास्त्रके मर्मज्ञ नही है, फिर भी जैन तन्त्र-साहित्य-विषयक निबन्ध[१] तैयार करके ठीक समयपर उपस्थित हो जायँगे। दोनो विद्वान् ठीक समयपर सम्मेलनमें उपस्थित हुए और उन्होंने निबन्ध पाठके अतिरिक्त जैनतन्त्र विषयक शताधिक जैन ग्रन्थोंकी पाण्डलिपियों और चार्टोंको प्रदर्शित करके सभी श्रोताओंको प्रभावित किया।

मुझे विश्वास नही था कि नाहटाजी तन्त्र सम्मेलन में जैनतन्त्र-साहित्य पर ऐसा सुन्दर विस्तृत निबन्ध प्रस्तुत करके जैनेतर तान्त्रिक विद्वानोंको प्रभावित कर सकेंगे। पर प्रतिभाके धनी नाहटाजीने उस अवसरपर ऐसा चमत्कार दिखलाया कि स्थानीय तान्त्रिक विद्वान् अभी तक उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा किया करते हैं।



१. दोनो निबन्ध यथाशीघ्र विश्वविद्यालयकी ओरसे प्रकाशित होनेवाले हैं।

अद्भुत व्यक्तित्व

डॉ० दरबारीलाल कोठिया, एम. ए न्यायाचार्य

साहित्य, इतिहास और पुरातत्त्ववेत्ता स्वर्गीय पण्डित जुगलकिशोरजी 'युगवीर' मुख्तारके द्वारा संस्थापित एव संचालित वीरसेवामन्दिर सरसावा (सहारनपुर) में जब ग्रन्थ-सशोधन, सम्पादन और लेखनका कार्य करता था, तबसे बन्धुवर श्री अगरचन्दजी नाहटाको जानता हूँ। यह लगभग १९४३ ईस्वी की बात है। 'अनेकान्त' में आपके लेख छपते थे और उनका प्रूफ हम और बन्धुवर पण्डित परमानन्दजी शास्त्री देखते थे। नाहटाजीकी लिखावटको हरेक नही पढ़ सकता। उसे वही पढ सकता है, जो उनकी लिपिको पढनेका अभ्यस्त हो गया है। स्वर्गीय मुख्तार साहब उनकी लिपिको खूब अच्छी तरह पढ लेते थे। अत. जब नाहटाजीके लेखको पढ़नेमें कठिनाई होती तो मुख्तार साहबसे सहायता ले लेता था। फिर कुछ दिन बाद मैं भी अभ्यस्त हो गया।

नाहटाजीके लिए कोई विषय अविषय नही है। साहित्यपर वे लिखते हैं, इतिहासपर वे लिखते हैं और पुरातत्त्वपर भी उनकी लेखनी चलती है। मूर्तियों, मन्दिरो, गणो और गच्छोपर भी उनने लिखा है। लेखककी गलती पकडना और उसपर सशोधन-लेख लिखना, यह भी नाहटाजीसे छूटा नही है। एक पत्रिकामें वे लिखते हों, सो यह भी नही, जैनेतर, भाषा साहित्यिक, प्रान्तीय और राष्ट्रीय सभी पत्र-पत्रिकाओमें उनके लेख रहते हैं। एक शब्दमें कहा जाय तो उन्हें 'लिक्खाड' कहा जा सकता है। हमें आश्चर्य होता है कि नाहटाजी इतना कैसे लिख लेते हैं।

१९४४ में वीर शासन महोत्सवपर कलकत्तामें प्रथम बार उनसे साक्षात्कार हुआ। मैंने इससे पहले उन्हें नही देखा था। जब मुझे बताया गया कि ये श्रीनाहटाजी हैं तो मुझे विश्वास नही हुआ। उनकी राजस्थानी पगड़ी और वेश-भूषा मुझे श्रीमन्त सेठका परिचय दे रहे थे, विद्वान् लेखक या सरस्वती-उपासक का नही।

नाहटाजी लगनके पक्के, सयमित भाषी, कर्त्तव्य-पटु, नम्र, निरभिमानी किन्तु स्वाभिमानी और गुणग्राही विद्वान् है। सरस्वती और लक्ष्मी दोनोका उनपर वरदहस्त है। नि सन्देह नाहटाजी अद्भुत व्यक्तित्वके धनी हैं। उनकी साहित्यिक सेवाओं के उपलक्ष्यमें उन्हे जो अभिनन्दन-ग्रन्थ भेंट करनेका निश्चय हुआ, वह सराहनीय है। हम इस अवसरपर अपनी मङ्गल कामनाएँ करते हुए प्रमुदित हैं। यह उनका सत्कार नही, अपितु सरस्वती और सारस्वतका सम्मान है।—जय सरस्वती।

अभिनन्दनीय नाहटाजी

श्री गुलाबचन्द्र जैन

श्री नाहटाजीका नाम शोध-ससारमें कौन नही जानता? मेरे पूज्य गुरुवर स्व० पं० चैनसुखदासजी न्यायतीर्थ भूतपूर्व अध्यक्ष श्री दि० जैन संस्कृत कालेज, जयपुरके तो परम मित्रोंमें से है। गुरुजीने अनेकों बार श्री नाहटाजीके अथक परिश्रम की मुक्तकण्ठसे प्रशसा की है। और कहा है कि राजस्थानभरमें यह एक ही मनीषी है जो शोध की अपार सामग्री का भण्डार ही नही रखता, सैंकडो प्रकार के शोध-विद्यार्थियो को दिशा-निर्देश भी करता है।

यद्यपि मुझे मेरे गुरुवरके वचनोंपर पूर्ण विश्वास था किन्तु फिर भी मेरे हृदयमें ऐसे महामनीषीके दर्शनो की उत्कट अभिलाषा जागृत हुई और गत वर्ष उनकी शोधशालामें, बीकानेरमें जा दर्शन किये।

चारो ओर पुस्तकोका ढेर लगा है। पत्र-पत्रिकाओ की भीड मची है। एक ओर कोई टाइप-राइटर मशीन लिए बैठा है। कुछ छात्र अपने शोध प्रवन्धपर विचार-विमर्श करने हेतु बैठे है। और आप विराज रहे है मात्र दो वर्गफुट की साधारण छोटी-सी गद्दी पर। कोई पहचान भी नही सकता कि यही इस अपार सग्रहालय का सग्राहक है।

परिचय देते ही किस नम्रता और मिठाससे वार्तालाप किया और सग्रहालय को ऊपरसे नीचे तक वतलाया कुछ कहनेमें नही आता। मैं तो आपके संग्रह की लगन, खोज और अर्थ-व्ययको देखकर अवाक् रह गया। कितनी जाति की वस्तुओ का सग्रह है, कुछ कहा नही जा सकता। वह तो साक्षात्कारसे ही मालूम किया जा सकता है।

मैं नाहटाजीके अपार परिश्रम व उनकी साहित्य, इतिहास और सस्कृतिके प्रति सच्ची खोज की लगन तथा प्रकाशनकी अभिरुचि को देखकर भूरि-भूरि प्रशंसा करता हूँ और उनका हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ। मैं भगवान् महावीरसे प्रार्थना करता हूँ कि आपको स्वस्थ दीर्घ जीवन प्रदान करें और जिस कार्यमें आप जुटे हुए हैं, उसके लिए आपको शतगुणी क्षमता प्रदान करें।



बहुमुखी प्रतिभा के धनी

श्री राजरूपजी टोंक

रत्न-गर्भा, वीरप्रसूता माँ भारतीकी गौरवमयी गोदमें अनेक नर-पुगव प्रतिभा-सम्पन्न, ग्रन्थकार, शोधकार तथा सन्त-महात्मा अवतरित हुए हैं। उन्ही नररत्नोमें स्वनामधन्य श्री अगरचन्दजी नाहटा भी अपनी ज्योतिपुंज प्रतिभाकी एक महत्त्वपूर्ण कडी जोड रहे हैं।

आपको जन्म देकर भारतभूमि धन्य हुई। आप केवल प्रकाण्ड विद्वान् ही नही, अपितु हिन्दी, गुजराती, संस्कृत-प्राकृतके ज्ञाता भी हैं। आप अनेक जैन-ग्रन्थोके शोधक एव इतिहासकार भी हैं। आपने अनेक विषयोंकी शोध कर अपनी गहन प्रतिभा तथा विद्वत्ताका परिचय दे समाजको चमत्कृत कर दिया है। आपका केवल जैन-समाजमें ही नही, अपितु समस्त विद्वत्-समाजमें एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। आप बहुत ही सरल प्रकृतिके व्यक्ति तथा सादा जीवन उच्च विचारके प्रतीक है।

भारत की राजधानी दिल्ली में राष्ट्रीय स्तरके एक समारोहका आयोजन किया गया है, जिसमें आपको अभिनदन-ग्रंथ भेंट किया जायेगा। राष्ट्रीय स्तरका यह समारोह आपकी महानता तथा सम्पन्न प्रतिभा का प्रतीक है।

इस शुभ अवसरपर हम अपनी अनेकानेक शुभकामनायें तथा वधाइयाँ समर्पित करते है। जगन्नियन्ता प्रभु आपको युग-युग तक अमर रखे ताकि आप अपनी प्रतिभा तथा भावनाओको जन-समुदायमें विखेरकर मानव जातिको लाभान्वित करते रहें।



आदर्श मार्गदर्शक

पं० नाथूलालजी शास्त्री

श्रीसिद्धाताचार्य अगरचन्दजी नाहटा हिन्दी जगत्के प्रसिद्ध लेखक हैं। आपका अध्ययन विशाल और विचार उदार हैं। प्राय जैनाजैन पत्रिकाओंमें आपकी शोध-खोजपूर्ण रचनाएँ हमेशा प्रकाशित होती रहती हैं। जैन साहित्यकी आपकी सेवाएँ अपूर्व हैं। समाजके वातावरण को मधुर बनानेमें आपका बहुत बडा हाथ है। मैं आपको न्यायप्रिय एवं समाजका सच्चा हितैषी, साहित्यसेवी विद्वान् मानता हूँ और आपसे अत्यन्त प्रभावित हूँ। समाजमें ऐसे प्रबुद्ध समाजसेवापरायण व्यक्ति क्वचित् ही दृष्टिगोचर होंगे, जो अपना सारा समय साहित्यसेवा और साहित्यकारोको सहयोग देनेमे व्यतीत करते हुए नि.स्पृह होकर त्यागमय जीवन-यापन कर रहे हैं।

मानवताके जो सद्गुण अपेक्षित है, अपने मर्यादित जीवनमें उन्हें धारण किए हुए नाहटाजी हमारे आदर्श मार्गदर्शक हैं।

मैं नाहटाजीके चिरायु होनेकी मगल कामना करते हुए आशा करता हूँ कि वे जीवन के सभी सघर्षोंमें विजयी बनते हुए अपने स्वपरकल्याणके लक्ष्य पर सतत आगे वढते रहे।

•

शुभ कामना

प्रवीणचन्द्र जैन

अपने पुण्य-प्रतापसे ज्ञान सम्पत्ति और भौतिक सपत्तिके स्वामी है। भौतिक संपदाका वितरण आपने कितना और कैसा किया है यह तो मुझे विदित नही, पर गत पद्रह वर्षोसे तो मै बराबर देखता आया हूँ कि आप ज्ञानका वितरण खुले मनसे और सर्वात्मना निरंतर करते रहते है। मेरी कामना है, कि इसे आपका ज्ञानावरणीय कर्म एव अंतराय कर्म दोनों कर्मोंका नाश हो। आप भावी जीवनमें चाहे इस शरीरसे या अगले मानव शरीरसे या अशरीरी होकर कैवल्य प्राप्त करें और अज्ञानी जीवोको ज्ञान मार्गकी ओर चलते रहनेकी प्रेरणा दें। यही मेरी शुभ कामना है।

•

स्वनामधन्य—नाहटाजी

सीताराम लाळस

मैं 'नाहटा अभिनन्दन समारोह समिति'को धन्यवाद देता हूँ कि वह राजस्थानके स्वनामधन्य, विद्वज्जनके प्रति आभार प्रदर्शित करके उनके सम्मान हेतु ग्रन्थ प्रकाशित करनेका आयोजन करने जा रही है। इससे बडी प्रसन्नता हुई।

मेरी अस्वस्थताके कारण चिकित्सकोने मुझे पूर्ण विश्राम करनेकी सलाह दी है और निकट समयमे ही उपचार हेतु चिकित्सालयमें भर्ती करवाया जा रहा है। अत इस स्थिति में, आपकी सेवाओंके लिये अपने सुविचार प्रदर्शित करनेमें मैं असमर्थ हूँ।

•

इतिहासज्ञ नाहटाजी

विनयमोहन शर्मा

श्री नाहटाजीको अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया जा रहा है यह जानकर बडी प्रसन्नता हुई। नाहटाजीकी अनेक विषयोमें गति है। पर उनकी सबसे महान् साहित्य सेवा हिन्दीके प्राचीनतम साहित्यको प्रकाशमें लानेका कार्य है। राजस्थान और अन्य स्थानोके जैन ग्रंथागारोंसे उन्होंने अलभ्य ग्रन्थोको प्राप्त क़िया है। उनमेंसे अनेकोका सम्पादन किया और इस तरह हिन्दी-साहित्यके इतिहासको बहुमूल्य सामग्री प्रदान की है। हिन्दीके कई अज्ञात कवियोको प्रकाशमें लानेका उन्हें श्रेय है।

उनकी महत्त्वपूर्ण सेवाका सत्कार होना ही चाहिए। क्या ही अच्छा होता, यदि राजस्थान विश्वविद्यालय उनके शोधकार्यके लिए उन्हें आदर्श डी० लिट्० की उपाधि प्रदानकर अपनेको गौरवान्वित करता।

परमात्मा श्रीनाहटाजीको दीर्घायु प्रदान करें, जिससे वे साहित्यकी श्रीवृद्धि करते रहे, इस प्रार्थनाके साथ—

●

शोधानञ्जली नाहटाजी

बनारसीदास चतुर्वेदी

श्रेष्ठिवर श्रीअगरचन्दजी नाहटाके अभिनन्दन समारोहपर मैं अपनी विनम्रतापूर्ण श्रद्धाजलि अर्पित करता हूँ। बहुत वर्षोंसे मैं श्रद्धेय नाहटाजीके शोध-पूर्ण लेख पढता रहा हूँ और जिस लगनके साथ वे अपना काम करते रहते हैं, वह सर्वथा प्रशसनीय तथा अनुकरणीय है। मेरा उनका कुछ पत्र-व्यवहार भी हुआ था। वह फिजी द्वीपमें 'सारग्रा-सदावृक्ष'के प्रचारके बारेमें था। मुझे खेद है कि मैं उन्हे वह लेख विशाल भारतसे तलाश करके न भेज सका और तदर्थ मैं क्षमाप्रार्थी हूँ।

उनके लेखोकी सूची पढकर मुझे आश्चर्य होता है। उनके संग्रहालयकी प्रशसा भी मैंने सुन रखी है। ऐसे सुयोग्य वयोवृद्ध साहित्य-सेवी विद्वान्‌का सम्मान करके हम स्वयं अपनेको ही गौरवान्वित करेंगे। श्रद्धेय नाहटाजीको मेरा प्रणाम।

●

पाण्डित्यपूर्ण व्यक्तित्व

प० मक्खनलाल शास्त्री

विद्यावारिधि, इतिहासरत्न, सिद्धान्ताचार्य शोध-मनीषी श्रीमान् श्रेष्ठिवर्य प० अगरचन्द्रजी नाहटा महोदयका पाण्डित्यपूर्ण व्यक्तित्व महान् है। उनकी प्राप्त उपाधियोंसे ही उनका महत्त्व नही आँका जा सकता है। उनकी अनेक साहित्य-रचनाएँ एवं उनके ऐतिहासिक खोज आदि महत्त्वपूर्ण कार्य ऐसे हैं, जिनसे उनका पाण्डित्य प्रसिद्ध है। उनके परिचयकी सूचीसे उनके ग्रन्थ-लेखन, ग्रन्थ संग्रह एवं कलाभवन आदिसे उनकी सतत साधना तथा उनकी महती कृतियोका परिचय मिलता है। चालीस हजार हस्तलिखित प्रतियाँ और

चालीस हजार मुद्रित ग्रन्थोका सग्रह उन्होने अपने मनन और खोजके लिये किया है। यह एक असाधारण एव गौरवपूर्ण वात है।

जैन पत्रोमें उनके लेख निकलते रहते हैं, वे मेरे अवलोकनमें आते हैं। उन लेखोमें उनके विशाल एवं निष्पक्ष हृदयकी पूरी-पूरी झलक दीखती है। श्वेताम्वर धर्मावलंवी होनेपर भी उन्होने दिगम्वर जैन धर्मके विषयमें कभी कोई वात विरुद्ध नही लिखी है। वे समन्वयवादी विद्वान् है। इससे उनका व्यक्तित्व वस्तुतत्त्वका परिचायक एव धार्मिक मूल्याकनका प्रशसनीय प्रतीक है।

०

शोधकर्त्ताओंके हृदय-सम्राट्

नेमिचन्द्र जैन एम ए.

किसी कवि ने कहा है

यदि नित्यमनित्येन निर्मल मलवाहिना।
यश कायेन लभ्येत तन्न लब्ध भवेन्नु किम् ॥

सचमुच सिद्धान्ताचार्य श्री अगरचन्द्रजी नाहटा उक्त सिद्धान्तको अपने जीवनमें उतारनेवाले एक सर्वतोमुखी प्रतिभा-सम्पन्न विद्वान् हैं। मृदुभाषी, सौम्य तथा मिलनसार प्रकृतिके नाहटाजी अपने व्यवहारसे प्रत्येक मिलनेवालेको आकर्षित किये विना नही रहते। तत्त्व जिज्ञासु को तत्त्वज्ञान देनेवाले उदीयमान लेखको को लेखन-कलाका ज्ञान देनेवाले, आलोचनाके क्षेत्रमें प्रयत्नशील को आलोचनात्मक दृष्टि प्रदाता, स्वयं समर्थ लेखक एंव समालोचकके रूपमें भारतके नवरत्न श्री अगरचन्द्रजी नाहटाको कौन नही जानता है। देश का कोई ऐसा पत्र नही, जिसमें उनका निवध न छपता हो। धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक आलोचनात्मक सभी प्रकारके निबन्धो का एकमात्र लेखन-ज्ञान नाहटाजीके पास विद्यमान है। नाहटाजीको चलता-फिरता पुस्तकालय कहा जाय तो इसमें कोई अत्युक्ति नही होगी।

शोधार्थी छात्रोके लिये तो नाहटाजी कल्पवृक्ष है। किसी भी शोधार्थीका उन्हें आभासभर मिलना चाहिये, वे स्वयं पत्रव्यवहारसे उस शोधार्थीसे अपना सम्वन्ध जोड लेनेमें सिद्धहस्त है। शोधार्थी को शोध की दिशा तथा शोधकार्यके लिये सामग्री प्रदान करना नाहटा जी अपना परम कर्तव्य समझते हैं।

अगर नाहटाजीको नवयुवकोका सम्राट् कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी। नवयुवकोमें जो उत्साह एव तत्परता दृष्टिगोचर नही होती, वह नाहटाजीमें देखने को मिलती है।

नाहटाजीका अपना एक विशाल पुस्तकालय है जिसमें हजारो हस्तलिखित विविध विषयोके ग्रन्थ उपलब्ध है। जैन कवियो, लेखको पर कार्य करनेवाला ऐमा कोई शोधार्थी नही है, जो नाहटाजीसे उपकृत न हो। विविध सस्थाओके सस्थापक, कुशल पत्रकार एव पत्र-सम्पादक, कुशल कार्यकर्त्ता, समर्थ सलाहकार, जैन समाजके समृद्ध धनिकोमें एक, अपने प्रेरणास्पद कार्योसे नवयुवकोको प्रेरणा प्रदान करनेवाले श्री अगरचन्द्रजी नाहटाको अपनी श्रद्धापूर्ण अञ्जलि समर्पित करता हुआ उनके चिरायु होनेकी कामना करता हूँ।

●

अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति-प्राप्त विद्वान्

श्री माणिकचन्द्र नाहर एम० ए०

अतर्राष्ट्रीय ख्याति-प्राप्त भाषा एवं शिक्षा-शास्त्री, कुशल एव अधिकृत धार्मिक मनीषी, वरेण्य विद्वान् तथा मूर्धन्य निवंधकार श्री अगरचदजी नाहटाका आप अभिनंदन समारोह आयोजित कर रहे हैं, यह राष्ट्रीय महत्त्वका कार्य अत्यत ही गौरवका है। नाहटाजी दीर्घायु हो, समारोह सफल हो, ग्रथ उनका कीर्ति-स्तभ हो—इसी शुभकामनाके साथ—

●

अभीक्ष्णज्ञानोपयोगी के प्रति श्रद्धा-सुमनाञ्जलि

प० परमेष्ठीदास जैन

विद्वद्वर्य श्री अगरचन्द्रजी नाहटासे मेरा परिचय विगत ४० वर्ष से है। अपने सम्पादनकालमें मैंने जैनमित्र और वीरपत्रमें उनके दर्जनो लेख सगौरव प्रकाशित किये हैं। जिस अकमें श्री नाहटाजीका लेख छपता वह अक सहज ही महत्त्वपूर्ण बन जाता था। जहाँ तक मेरा ध्यान है, समूचे जैन-समाज में इतनी अधिक विपुल मात्रामें लिखनेवाला दूसरा कोई व्यक्ति नही है।

उन्होने जीवनभर निष्कामभावसे जो साहित्य-सेवा की है, वह सदैव स्मरणीय रहेगी। श्री नाहटाजी का मेरे प्रति विशेष स्नेहभाव रहा है। यही कारण है कि वे गत वर्ष हैदराबादसे देहली जाते हुए विना किसी पूर्व सूचनाके ही ललितपुर स्टेशनपर उतर गये और सीधे मेरे प्रेस पर आ पहुँचे। उनके इस आकस्मिक मिलन और स्नेहके कारण मुझे अवक्तव्य आनन्दानुभव हुआ। अपने विशिष्ट वेश-भूषादिमें वे केवल शुद्ध व्यापारी-सेठ मालूम होते है। किन्तु जब मैंने अपने मित्रोको बतलाया कि श्रीनाहटाजी कितने महान् साहित्य-कार विद्वान् हैं तो वे लोग आश्चर्यचकित रह गए। यद्यपि श्री नाहटाजी मेरे घर कुछ ही घटे ठहरे थे किन्तु वे किसी भी प्रकारका आराम किये विना मेरे घरमें सग्रहीत पुस्तकें पढते रहे। ऐसा अभीक्ष्णज्ञानोपयोगी गृहस्थ मैंने सर नही देखा।

उनके इस अभिनन्दन-समारोहके मगल-प्रसगपर मैं भी अपने हार्दिक श्रद्धा-सुमन समर्पित करता हूँ।

●

व्यक्तित्व महान्

पं० बालचन्द्र शास्त्री

श्री अगरचन्द्रजी नाहटाका अभिनन्दन किया जा रहा है, यह जानकर विशेष प्रसन्नता होती है। गुणी जनका यथोचित सम्मान होना ही चाहिये। यह सम्मान-कर्ताकी ज्ञानवृद्धिका भी कारण है। नाहटाजी का व्यक्तित्व महान् हैं। सम्पन्न होकर भी वे सरस्वतीकें उपासक है। उनकी साहित्यसेवा स्तुत्य है। शायद ही ऐसा कोई पत्र या पत्रिका होगी, जिसमें नाहटाजीका निवन्ध दृष्टिगोचर न हो। उनके निजी पुस्तका-लयमें अनेक विषयोके मुद्रित और हस्तलिखित ग्रन्थोका विशाल सग्रह हैं। इतना विशाल सग्रह तो अनेक सार्वजनिक पुस्तकालयोमें भी नही देखा जाता। सरस्वती और लक्ष्मीमें जो स्वाभाविक विरोध प्रसिद्ध है, उसके नाहटाजी अपवाद हैं। हमारी हार्दिक कामना है कि नाहटाजी चिरजीवी होकर इसी प्रकारसे धर्म व साहित्यकी पुनीत सेवा करते रहें।

●

चिरजीवी हों

प० परमानन्दजी शास्त्री

श्री अगरचन्द्रजी नाहटा अच्छे लेखक और सम्पादक हैं। उनका परिचय मुझे बहुत दिनोसे है। उनके लेख अनेक पत्र-पत्रिकाओमें छपते रहते हैं। उन्हे अप्रकाशित साहित्यको प्रकाशमें लानेकी बडी लगन है। उसीका परिणाम है कि वे स्वय साहित्यिक कार्योंमें प्रवृत्त रहे हैं और दूसरोको भी प्रेरणा देकर कार्य कराते रहते है। श्वेताम्बर समाजमें ऐसे व्यक्ति कम ही मिलेंगे जिन्हें साहित्य-सेवाकी उत्कट लगन हो।

अभी हालमें उन्हें अभिनदन-ग्रथ समर्पित किया जानेवाला है। ऐसे साहित्यकी की सेवाका समाजको मूल्याकन करना चाहिये। उन जैसी लगनका मैंने दूसरा व्यक्ति नही देखा। मैं कामना करता हूँ कि श्री अगरचन्द्रजी नाहटा चिरजीवी हो, जिससे वे अधिक साहित्य-सेवा कर सकें।

अभिनन्दन पर (मालार्पण के साथ) दो शब्द

बलवन्त सिह मेहता

श्री अगरचन्दजी नाहटा जैन ही नही वरन् राजस्थान के साहित्य-जगत् के एक अपूर्व विद्वान् होने के नाते राजस्थानके गौरव-स्तम्भ है। वे शोध विद्वानोमें श्रम और साधनाका ऐसा अपूर्व समन्वय लिये हुए हैं कि न केवल शोधकर्मियो वरन् विश्वविद्यालयोके स्नातकोत्तरो एव विद्वानोको भी आपके शोधकार्यके सहयोगकी सदैव अपेक्षा रहती है।

शोधके क्षेत्रमें आपकी मौलिक देनके प्रति जैन एव साहित्य जगत् आपका सदैव ऋणी रहेगा।

आपसे एक वार साक्षात्कार होने के बाद शायद ही कोई विरला होगा जो आपकी सादगी, संयमी जीवन और शोधकी निष्ठासे प्रभावित हुए विना रह सकेगा।

आपकी षष्टि पूर्तिके उपलक्ष्यमें आपका हृदयसे अभिनन्दन करता हुआ, शतायु होनेकी मगल कामना करता हूँ।

साहित्य महारथी

प० पन्नालाल साहित्याचार्य

विविध पत्रपत्रिकाओंमें प्रकाशित होनेवाले अनेक लेखोको देखकर मन अब भी आश्चर्यमें डूब जाता है कि अगरचन्दजी नाहटा कितना लिखते है? इनका अध्ययन कितना अगाध है? साहित्यिक, ऐतिहासिक, धार्मिक तथा पुरातत्त्व आदिसे सम्बद्ध आपके लेख, एक नई दिशा तथा नई चेतना प्रदान करते हैं। साहित्य संग्रहकी ओर ही आपकी अभिरुचि नही है किन्तु उसका सूक्ष्मतम अध्ययन करनेमें भी आपकी बडी अभिरुचि है। दिगम्बर और श्वेताम्बर-दोनो आम्नायोके ग्रन्थोका प्रगाढ अध्ययन आपने किया है।

श्री सम्मेद शिखरजी में सपन्न स्याद्वाद महाविद्यालयके स्वर्ण जयन्ती महोत्सवके समय सभामें बहुत ऊँची पगडी बाँधकर बैठे हुए चिन्ता निमग्न एक व्यक्तिको देखकर मैंने प० कैलाशचन्दजीसे पूछा कि इन महाशयकी पगडी तो सबसे निराली दिखती है ? कौन है यह ? पण्डितजो ने उत्तर दिया—आप नही जानते ? यह बीकानेरके अगरचन्दजी नाहटा हैं। पण्डितजीके द्वारा आपका परिचय प्राप्त कर मैं नाहटाजीके पास खिसक गया जिससे प्रत्यक्ष परिचयकी अभिलाषा हम दोनोकी पूर्ण हुई। पत्राचारका परिचय तो बहुत पहलेसे था, परन्तु प्रत्यक्ष परिचयका अवसर उसी समय प्राप्त हुआ था।

इस साहित्य महारथीके प्रति मेरे हृदयमें बहुत श्रद्धा है। अभिनन्दनकी वेलामें मैं आपके दीर्घायुष्य होनेकी मङ्गलकामना करता हूँ।

अभिनन्दनीय नाहटाजी

भँवरमल सिंघी

भाई अगरचन्दजी नाहटाने साहित्य और इतिहासके क्षेत्रमें जो शोधकार्य किया है, जो सामग्री अपने संपादन और लेखनके द्वारा दी है, वह बहुमूल्य है और बहुमूल्य रहेगी। जिस सकल्पसे, निष्ठासे और श्रम-साधनासे उन्होने आजीवन साहित्य-सेवा की है, वह अनुकरणीय है। परन्तु क्या सहज ही उनका अनुकरण किया जा सकता है? जिस समाजमें अर्थ ही अनुकरणीय है, वहाँ विद्या-साधनामें लगे रह जीवनको सफल बनाना बडा कठिन कार्य है। वह कठिन है, इसीलिए अभिनन्दनीय है।

भाई अगरचन्दजी को मैं २५-३० वर्षों से जानता हूँ और उनकी मूक साहित्य-साधनाका प्रशसक रहा हूँ। भाई भँवरलालजी नाहटाने भी इस कार्यमें अगरचन्दजीको जो सहयोग दिया है, वह भी अति मूल्यवान है। अत अभिनन्दन भी दोनोका साथ-साथ हो, यह उचित ही है। इन दोनोके सतत प्रयत्नोके बिना बहुत सी दुर्लभ ऐतिहासिक सामग्री अधेरेमें ही पडी रह जाती। दोनोके अनेक-अनेक अभिनन्दन सहित—

इतिहासके श्रेष्ठ पुजारी

फतहचन्द श्रीलालजी

जब मैं बालकथा और श्री आत्मानन्द जैन गुरुकुल गुजरानवालामें पढता था तबसे ही आपके प्रति मेरी श्रद्धा थी। अनेक पत्र-पत्रिकाओमें आपके लेख आते थे। आपका नाम तो मेरे मस्तिष्कमें अपना घर कर बैठा ही था परन्तु साक्षात्कार नही हुआ था।

जब आचार्य श्री विजयवल्लभसूरीश्वरजी महाराज साहबका चातुर्मास बीकानेरमें रामपुरिया भवनमें हुआ उस वक्त मैं आचार्यश्रीका इतिहास लिखता था, आपके प्रिय शिष्य श्रीसमुद्रविजयसूरीश्वरजी व विशुद्धविजय-जी महाराजकी उर्दूकी डायरियोका हिन्दीमें अनुवाद करता था तथा मुनिराजश्री विशारदविजयजी को पढाता भी था। नाहटा जीसे साक्षात्कार हुआ। आपका विस्तृत सरस्वती मदिर भी देखा। आपके भतीजे श्री भवँरलालजी भी उत्साहप्रद निकले। नाहटा साहबकी सरलता, ज्ञानपिपासा, शातचित्तता, सरलता मेरे मनपर

छा गई। पश्चात् जब मैं श्री केसरियाजी जैनगुरुकुल चित्तौडगढ में गृहपतिका कार्य करता था आप भी कार्य वशात् चेदेरिया गाँवमें श्री जिनविजयजीसे मिलने पधारे थे तब कुछ समय साथ रहनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इतिहासके उच्चकोटिके विद्वान् व अन्य विषयोंमें निष्णात पारंगत शिखर स्थानीय गणमान्य व्यक्तिकी निखालसता, अपनी भाषा व भूषापर गौरवने मेरे मनपर अनोखी छाप डाली। वही बीकानेरी पगडी, ऊँची-ऊँची दो लागी जाडी धोती, ठेठ मारवाडी वेशका आदर्श थी। बोलचालमें आत्मनिर्भरता, आत्मसम्मानके साथ निरभिमानता की वह सौम्यमूर्ति आज भी मेरे मनमें बसी हुई है।

पश्चात् तो मेरी प्रार्थनापर आपके कई पत्र मिलते रहे। मैं 'महात्मा संदेश' व 'महात्मा बधु' नामक मासिक-पत्र चित्तौड से निकालता था तब आपके लेख समयपर अवश्य मिल जाते थे। आपके लेखोंसे मुझे प्रेरणा, उत्साह व ज्ञानवर्द्धन प्राप्त होता रहा है।

अभी भी मैं सुमेरपुरसे 'वर्द्धमान-सदेश' पत्रिका निकाल रहा हूँ उसके लिए आपका लेख कभीसे प्राप्त है।

मुझे आश्चर्य है कि इस 'समय नही' के जमानेमें आप इतना समय कहाँसे निकाल लेते हैं। हर साहित्यिक सभा में उपस्थिति व हर ऐतिहासिक ग्रथमें आपका लेख देखकर प्रसन्नता होती है।

उम्रकी दृष्टिसे आपमें कोई थकावट प्रतीत नही होती जहाँ अन्य लेखक प्रमाद सेवन करते हैं वहाँ आप सतत जागृत मिलते हैं। आपकी शोध-बुद्धि व शोध-उत्कठा जैन-समाज व जैन-साहित्य को वरदान सिद्ध हुई है और आगे भी होगी। आपने ऐसे कई लेख-प्रशस्तियाँ व शास्त्रीय प्रमाणोपेक्षित तथ्य प्रगट किए है, जो कल्पनामें भी नही थे।

आप जैनसमाजके चमकते सितारे हैं, अमूल्य हीरे है एव इतिहासके श्रेष्ठ पुजारी हैं। एक व्यक्तिका विद्वान् होनेके साथ ही उदारधनी होना कही नही पाया जाता। लक्ष्मी व सरस्वती का एक ही साथ एक ही वरराजा को वरमाला पहनाना अनहोनी बात है, परन्तु दोनो देवियाँ आपपर प्रसन्न हैं। आपने अपने पुस्तकालयमें जिन अमूल्य ग्रंथोंका सग्रह किया है उसकी कद्र चाहे आजके समाजकी दृष्टिमें न हो परन्तु भावी समाज इसका मूल्याकन करेगा।

आपकी प्रेरणासे कई विद्यार्थी आगे बढे हैं, कितनोको चेतना मिली है। बीकानेरका ही नही, वरन पूरे भारतवर्षका जैन समाज आपके सुकृत्योका ऋणी है।

शासनदेव आपको चिरायु व सशक्त रखे ताकि आपके द्वारा देश, धर्म व समाजकी सेवा निरतर होती रहे। आपका व्यक्तिगत धर्मस्नेह मुझपर है उसमें वृद्धि होती रहे, यही अपेक्षा है।

●

नाहटाजी : स्व० डॉ० वासुदेवशरण अग्रवालकी दृष्टिमें

डॉ० सत्यनारायण स्वामी

स्व० डा० वासुदेवशरण अग्रवाल श्रद्धेय नाहटाजी के अभिन्न और आदरणीय मित्र थे। दोनों दूध और पानी की तरह परस्पर घुल-मिलकर एक थे। उनकी विद्यमानतामें यदि प्रस्तुत ग्रथ निकलता तो, कोई आश्चर्य नहीं, वे ही इसके प्रमुख सूत्रधार होते। दोनोंकी विद्वत्ता और महानता तो असदिग्ध है ही, यहाँ मात्र उनके अनवद्य स्नेह को अंकित करने का विनम्र प्रयास किया जा रहा है। सगृहीत उद्धरण नाहटाजीको लिखे डाक्टर साहबके पत्रोंसे और उन्हीकी लिखी नाहटाजीके ग्रंथोकी भूमिकाओंसे लिये गये हैं।

प्रोविंशियल म्यूजियम
लखनऊ, दि० २८-७-४३

विज्ञशिरोमणि श्री नाहटाजी,

नम । आपका १४ तारीखका कृपापत्र मिला। आपके विद्वत्तापूर्ण लेखोको पढकर मुझे पहले भी आपके नामका परिचय था, परन्तु इस पत्रकी प्राप्तिसे आपकी विद्यानुरागिता और सज्जनताका एक नया परिचय मिला और चित्तमें वहुत आनन्द प्राप्त हुआ। आप सचमुच अध्यवसायशील विद्वान् हैं और जैन-साहित्य तथा इतिहासकी खोजका जो वहुमूल्य कार्य आप कर रहे हैं वह अद्‌भुत है। 'श्रीजिनप्रभसूरि' पर आपका लेख अनेक मूल्यवान् सूचनाओसे अलकृत है। इसी प्रकार 'सत्यासीया दुष्काल छत्तीसी' लेख भी सामाजिक इतिहासके लिए अत्यत महत्त्वपूर्ण है। यदि आप कृपा करके अपने अन्य उपलब्ध लेखोकी प्रतियाँ भी भेज सकें तो मैं वहुत आभारी हूँगा।

× × ×

मैं अपने कुछ लेखोके रिप्रिंट भेजता हूँ। आशा है आपके साथ साहित्यिक परिचय उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त होकर विशेष उपयोगी सिद्ध होगा।

विनीत —वासुदेवशरण

[२]

आपकी प्राचीन शोधविषयक प्रवृत्तिसे इस प्रकार परिचित होकर अपरिचित आनन्द हुआ। आपका कार्य विशेषत हिन्दी भाषाका भंडार भर रहा है इस वातसे और भी अधिक परितोष है।

× × ×

'युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरि' पुस्तक वहुत ही छान-वीनके वाद सच्ची ऐतिहासिक पद्धतिसे लिखी गई है। भारतीय इतिहासके अनेक भूले स्रोतोंसे यह हमारा परिचय कराती है। इसमें सदेह नही कि अकवर-कालीन जिन महात्माओंने भारतीय धर्मके सम्मानार्थ प्रयत्न किया था, उनमें जैन समाजमें श्री हरिविजय, विजयसेन, सिद्धिचन्द्र, भानुचन्द्रके अतिरिक्त युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरिका भी प्रधान स्थान स्वीकृत करना पडेगा। अवश्य|ही इनकी गणना उस युगके उदात्त मस्तिष्कोमें की जानी चाहिए। जिस उच्च परिस्थितिमें जातीय और सप्रदायगत पक्षपाती पीछे छूट जाते हैं, विशुद्ध ऐतिहासिककी उस ऊँची आसदीसे जव अकवरीय युगका समग्र अध्ययन किया जायगा, तव जैनाचार्य सूरि महोदयो द्वारा की हुई सास्कृतिक सेवाका पूरा महत्त्व प्रकाशमें आएगा। मैं हृदयसे चाहता हूँ कि आपके द्वारा इसी प्रकार ऐतिहासिक शोधका कार्य जारी रहे।

(लखनऊ, १८-८-४३)

[३]

आश्विन शुक्ल ८ को एक पत्र सेवामें भेजा था जिसमें जैन-साहित्यमें प्राचीन रासोकी परपरापर निवंध लिखनेकी प्रार्थना की गई थी। आशा है आपने इसे स्वीकार कर लिया है। कुछ नवीन सामग्री आपके द्वारा विक्रमाकको मिलनी चाहिए। आपका अध्ययन विशाल है और आप जव लिखते हैं खूब सारगर्भित लिखते हैं। अतएव मेरा विशेष आग्रह आप से है क्योंकि विक्रमाकके द्वारा अधिक से अधिक हिंदी जनता तक आपकी सामग्री और सूचना पहुँचाई जा सकेगी।

(लखनऊ, ५।११ कार्तिक शुक्ल ८, स० २००० वि०)

[४]

मुझे विदित है कि आप विना दिखावेके ठोस साहित्य सेवा करनेके व्रती हैं और आपने अपनी अंत-रात्माकी लगनसे प्राचीन साहित्य शोध सवधी प्रचुर सामग्रीका सग्रह किया है। ईश्वर करें यह सब सामग्री सुरक्षित रूपमें एक सस्थामें रक्खी जा सके जो भविष्यमें साहित्य शोधके कार्यको और आगे वढावे।

(नई दिल्ली, १२-१०-४९)

[५]

आपका लेख 'कवि-समय-सुन्दर' पर मैंने अभी विशेष रीतिसे पढा। इसमें आपने वहुत परिश्रम और खोजसे समय सुन्दरके विषयकी जानकारीका संग्रह किया है। मध्यकालीन हिंदी साहित्यके सोलहवी शतीके इतिहासके लिए इस प्रकारकी सूचनाएँ किसी दिन अनमोल समझी जायँगी।

(नई दिल्ली, ३-१२-४९)

[६]

चौपई, वत्तीसी, छत्तीसी, वावनी, अष्टक, स्तवन, सज्झाय आदि-आदि साहित्य रचनाके जो अनेक प्रकार जैन कवियोने अपनाए उनपर विस्तृत लेख कभी अवश्य होना चाहिए। आप कृपया इस सवधकी सामग्रीका सकलन करते रहें और कभी पत्रिकाके लिए लिखें।

(नई दिल्ली, ३-१२-४९)

[७]

आपने जैन-साहित्य के अवलोकनके लिए जो प्रेरणा मुझे दी है, उसके लिए वहुत अनुग्रह मानता हूँ। मैं अवकाश मिलते ही इस साहित्यका पारायण करूँगा। आगम साहित्य तो मुझे वहुत ही प्रिय है। मैं भी समझता हूँ कि उससे परिचित हुए विना सस्कृतिविषयक मेरा ज्ञान अधूरा रहेगा।

(काशी विश्वविद्यालय, ९-९-५२)

[८]

मेरी दीर्घसूत्रताने आपका धैर्यवाव भी क्षुभित कर दिया। मुझे सचमुच लज्जा आती है क्योंकि मैं अपने आपको इससे अधिक उद्यमी नही वना पाता।

× × ×

'साल्व जनपद' लेख मैंने अधिक प्रचारकी दृष्टिसे सरल भावसे दोनो पत्रोको भेज दिया था। 'राज-स्थान भारती' और 'अवतिका' के पाठक विल्कुल अलग हैं। मैंने इसमें त्रुटि नही मानी। पर आप ठीक न समझें तो आगे ध्यान करूँगा। कभी-कभी लेखोके तगादोसे आकुल होकर भी एक लेख कई जगह देकर जान वचाता रहा हूँ। आपके जैसे लेख सिद्धि की स्पृहा करता हूँ।

(काशी विश्वविद्यालय, १६-१२-५२)

[९]

आपका १३-९-५३ का पत्र मुझे पूना-वडोदा यात्रासे लौटनेपर मिला। आपके स्नेहयुक्त प्रसन्न मानोभावसे मैं गद्गद् हो गया हूँ। यह आपकी सहिष्णुता उदारता है जो आपने क्षमापनपर्वके अवसर मुझे लिखा है। वस्तुत इस पुण्यपर्वके उपलक्ष्यमें आपसे क्षमापन चाहता हूँ कि मेरे दीर्घसूत्री स्वभावके कारण आपको असुविधा रही है।

(काशी विश्वविद्यालय, २५-९-५३)

[१०]

श्री अगरचन्दजी नाहटा विख्यात शोधकर्ता विद्वान् हैं। उनके द्वारा संपादित सभा-शृंगार ग्रन्थ सास्कृतिक शब्दावलीकी दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण है।

नाहटाजीने इस सग्रहमें विषयका विभाजन किया है। वह उनका अपना है। वर्णन सग्रहोको यथारूप न छापकर उनमेंसे एक जैसे विषयोंका सकलन कर दिया है।

हम श्री नाहटाजीके अनुगृहीत हैं कि उन्होने परिश्रमपूर्वक इस प्रकारके साहित्यकी रक्षा की।

(भूमिका, 'सभा शृगार' ६-४-५९)

[११]

श्री अगरचद नाहटा व भँवरलाल नाहटा राजस्थानके अतिश्रेष्ठ कर्मठ साहित्यिक है। एक प्रतिष्ठित व्यापारी परिवारमें उनका जन्म हुआ। स्कूल-कालेजी शिक्षासे प्राय बचे रहे। किन्तु अपनी सहज प्रतिभाके वलपर उन्होने साहित्यके वास्तविक क्षेत्रमें प्रवेश किया, और कुशाग्रबुद्धि एवं श्रम दोनोकी भरपूर पूँजीसे उन्होंने प्राचीन ग्रन्थोंके उद्धार और इतिहासके अध्ययनमें अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की। पिछली सहस्राब्दीमें जिस भव्य और बहुमुखी जैन धार्मिक संस्कृतिका राजस्थान और पश्चिमी भारतमें विकास हुआ, उसके अनेक सूत्र नाहटाजीके व्यक्तित्वमें मानो बीजरूपसे समाविष्ट हो गए हैं। उन्हीके फलस्वरूप प्राचीन ग्रन्थ भडार, सघ, आचार्य, मदिर, श्रावकोके गोत्र आदि अनेक विषयोके इतिहासमें नाहटाजी की सहज रुचि है और उस विविध सामग्रीके संकलन, अध्ययन और व्याख्यामें लगे हुए अपने समयका सदुपयोग कर रहे हैं। लगभग एक सहस्र सख्यक लेख और कितने ही ग्रन्थ इन विषयोंके सम्बन्धमें हिन्दीकी पत्र-पत्रिकाओमें प्रकाशित करा चुके हैं। अभी भी मध्याह्नके सूर्यकी भांति उनके प्रखर ज्ञानकी रश्मियाँ बराबर फैल रही हैं। जहाँ पहले कुछ नही था, वहाँ अपने परिश्रमसे कण-कण जोडकर अर्थका सुमेरु संगृहीत कर लेना, यही कुशल व्यापारिक बुद्धिका लक्षण है। इसका प्रमाण श्री अभय जैन पुस्तकालयके रूपमें प्राप्त है। नाहटाजीने पिछले तीस वर्षोंमें निरन्तर प्रयत्न करते हुए लगभग पन्द्रह सहस्र हस्तलिखित प्रतियाँ वहाँ एकत्र की हैं एव पांच सौ के लगभग गुटकाकार प्रतियोका संग्रह किया है। यह सामग्री राजस्थान एव देशके साहित्यिक एव सास्कृतिक इतिहासके लिए अतीव मौलिक और उपयोगी है।

जिस प्रकार नदी-प्रवाहमेंसे वालुका धोकर एक-एक कणके रूपमें पौपीलिक सुवर्ण प्राप्त किया जाता था, कुछ उसी प्रकारका प्रयत्न 'बीकानेर जैन लेख सग्रह' नामक प्रस्तुत ग्रन्थमें नाहटाजीने किया है।

प्रस्तुत संग्रहके लेखोंसे जो ऐतिहासिक और सास्कृतिक सामग्री प्राप्त होती है, उसका अत्यन्त प्रामाणिक और विस्तृत विवेचन विद्वान् लेखकोने अपनी भूमिकामें किया है।

बीकानेरकी यात्राका एक बडा आकर्षण श्री अगरचदजी नाहटाके प्राचीन ग्रन्थोंके संग्रह और कलात्मक वस्तुओके सग्रहको देखना था। वह अभिलाषा यहाँ आकर पूरी हुई। श्री नाहटाजीने जिस लगनसे इस संग्रहको वनाया है वह प्रशसनीय है। सग्रहमें लगभग १५ सहस्र हस्तलिखित ग्रन्थ हैं जिनमें हिन्दी भाषा और साहित्यके आठ सौ वर्षोंकी अनमोल सामग्री भरी हुई है। नाहटाजीने अकेले एक सस्थाका काम पूरा किया है। आगे आनेवाली पीढियाँ इसके लिए उनकी आभारी रहेंगी।

जिस तत्परतासे उन्होने सग्रहका कार्य किया है उससे भी अधिक उत्साह और परिश्रमसे आप इस सामग्रीके आधारपर लेखन और प्रकाशनका काम कर रहे हैं। अवतक वे लगभग पाँच सौ लेख लिख चुके हैं जो अधिकाश उनके अपने सग्रहकी साहित्यिक सामग्रीपर आश्रित हैं। एक सहस्र वर्षों तक जैनोंने हिन्दी भाषाके भडारको विविध कृतियोंसे सम्पन्न वनाया। वह ग्रन्थराशि गुजरात राजस्थान, संयुक्त प्रान्तके

जैन सरस्वती भण्डारोमें सौभाग्यसे सुरक्षित है। नाहटाजीका ग्रन्थ संग्रह इसी प्रकारका एक सरस्वती भण्डार है। शीघ्र ही हिन्दीकी शोध सस्थाओको इस सामग्रीके व्यवस्थित प्रकाशनका उत्तरदायित्व संभालना चाहिए। आशा है नाहटाजीके जीवनकालमें ही यह कार्य बहुत कुछ आगे बढेगा। यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप अभीतक अपने सग्रहको बढा रहे है और भविष्यमें एक पृथक् भवनमे उसको स्थापित करना चाहते है।इस कार्यमें उनके विद्याप्रेमी भतीजे श्री भँवरलाल नाहटा भी उनके सहयोगी है जिन्होंने अधिकाश कलाकी सामग्री एकत्र करनेमें सहायता दी है। नाहटाजी जिस मुक्त हृदयसे अपनी प्रिय सामग्रीको विद्वानोंके लिए सुलभ कर देते है इसका व्यक्तिगत अनुभव करके मेरा हृदय गद्गद् हो गया। निस्सन्देह नाहटा-सग्रह हिन्दी साहित्यकी एक अमूल्य निधि है। ईश्वर उसका सवर्धन करे।

वासुदेशरण अग्रवाल

सरस्वती एवं लक्ष्मीका विरल संगम

मुनि श्री कन्हैयालालजी 'कमल'

श्रीमान् अगरचन्दजी नाहटाका अभिनन्दन-समारोह मनाया जा रहा है, यह शुभ सवाद पाकर हृदयमें प्रमोद-भाव जग उठा। श्रीनाहटाजी उदार विचारोके समन्वय प्रेमी विद्वान् है। उनकी दृष्टि ऐतिहासिक है, साथ ही अनेकात प्रधान भी। एक संप्रदाय विशेषके अनुयायी होते हुए भी वे साप्रदायिक मानसके नही है, ऐसा मैंने उनके लेखो आदिसे जाना है और मुझे इसकी विशेष प्रसन्नता हुई है।

श्रीनाहटाजीने जैन-साहित्य और जैन-इतिहासके सम्वन्धमें बहुत ही खोज-बीन करके प्रचुर दुर्लभ सामग्री पाठकोंके समक्ष प्रस्तुत की है। वे अनुसधित्सु और अध्ययनशील वृत्तिके है। एक ही साथ लक्ष्मी और सरस्वतीका सगम उनमें देखा जा सकता है। विद्या, विनय और विवेककी त्रिपुटी उनका आदर्श है और मै इसे ही एक सच्चे विद्वान्की कसौटी मानता हूँ। ऐसे विद्वान्का अभिनन्दन वास्तवमें गुणानुरागका परिचायक है और यह सबके लिए अनुकरणीय है।

सेठ और साहित्य-सेवी

श्री मधुकर मुनि

श्रीयुत अगरचन्दजी नाहटा एक सरस्वती-समुपासक साहित्यसेवी श्रीमन्त सेठ है।

साहित्य-सेवा नाहटाजीके जीवनका लक्ष्य है। हमारी जानकारीमे जो भी समाचार-पत्र है, चाहे वे दैनिक हो अथवा साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक व त्रैमासिक हो, प्राय उन सबमें आपके निवध निकलते रहे है।

अनेक पुस्तकोका सम्पादन भी आपने किया है। मुनि श्री हजारीमल स्मृति प्रकाशनसे प्रकाशित 'ऐतिहासिक-काव्यसग्रह'का सपादन भी आपने ही किया है। मुनिश्री हजारीमल स्मृति ग्रथकी संयोजनामें भी आपका अच्छा सहयोग रहा है।

इतिहास अन्वेषणकी ओर आपकी अभिरुचि अधिक है। आपके निवधोमें ऐतिहासिक-अनुसधानके तथ्य अधिक मिलते है।

यद्यपि नाहटाजीके चरण अब वार्धक्यकी ओर बढते जा रहे है, फिर भी आपमे युवावस्था-सी मजबूती है और कर्मठता है। अत' आप अब भी अतीव उत्साहके साथ साहित्य-सेवा करते जा रहे है।

नाहटाजीके लिए जो अभिनंदन समारोह हो रहा है, उसके लिए शुभ कामना है। साहित्यसेवाके माध्यमसे नाहटाजी आध्यात्मिकताके चरम विकासकी ओर बढते चलें।

बहुमुखी प्रतिभाके धनी : नाहटाजी

श्री देवेन्द्रमुनि शास्त्री

महान् साहित्यकार श्री अगरचन्दजी नाहटाका व्यक्तित्व और कृतित्व अत्यधिक गरिमामय रहा है। वे बहुमुखी प्रतिभाके धनी हैं और वे विचारोकी दृष्टिसे हिमालयसे भी अधिक ऊँचे हैं और सागरसे भी अधिक गभीर हैं। वे विचारक हैं, चिन्तक है, लेखक हैं, समालोचक है, संशोधक हैं। इतिहास और पुरातत्त्व उनका प्रिय विषय है, उन्होंने अनेको अज्ञात लेखक कवियोकी कृतियोकी खोज की है। जहांसे भी कुछ भी प्राप्त हुआ उसे प्राप्त करनेका प्रयास किया है। जैन लेखको व कवियो पर ही नही, वैदिक परम्पराके लेखको व कवियोपर भी उन्होने अच्छी तरहसे लिखा है। सम्प्रदायवादके चिन्तनसे मुक्त होकर तटस्थ दृष्टिसे चिन्तन करना उनका स्वभाव रहा है। परन्तु नाहटाजी इस बातके अपवाद रहे हैं। आश्चर्य तो इस बात पर है कि ऐसा कोई विषय नही, जिसपर उन्होंने नही लिखा हो। भारतकी ऐसी कोई जैन-अजैन पत्रिका नही, जिसमें उनके लेख न छपे हो। तीन हजारसे भी अधिक निवन्ध लिखना कोई साधारण बात नही है, पर परिताप है कि उनके निबन्धोंके सग्रह आजतक प्रकाशित नही हो सके हैं। उनके कितने ही निबन्ध इतने महत्त्वपूर्ण व शोधप्रधान हैं कि विज्ञ पढकर झूमने लगते हैं। आवश्यकता है कि उनके निबन्धोका विषय की दृष्टिसे वर्गीकरण कर पृथक्-पृथक् जिल्दोमें प्रकाशन करवाया जाए, जिससे वे सभीके लिये उपयोगी हो सकें।

नाहटाजीसे सर्वप्रथम मेरा परिचय सन् १९५५ में जयपुरमें हुआ था, उस समय मैं 'जिनवाणी' पत्रिकाका सम्पादन करता था। उसके पश्चात् १९६२ में वे मुझे जोधपुरमें मिले थे, जहांपर मैं पूज्य गुरुदेव राजस्थान केशरी प्रसिद्ध वक्ता प० प्रवर श्री पुष्कर मुनिजीके नेतृत्वमें श्री अमरजैन ज्ञान भण्डारका सूचीपत्र तैयार कर रहा था। नाहटाजीने हस्तलिखित ग्रन्थोका सूचीपत्र देखकर प्रसन्नता व्यक्त की। उस समय मैंने अपनी सम्पादित 'जिन्दगी की मुस्कान', 'साधनाका राजमार्ग', आदि पुस्तकें उन्हें भेंट की। जैन इतिहासके सम्वन्धमें चर्चा चलनेपर उन्होने लोकाशाह आदिके सम्बन्धमें अनेक बातें बतलाई और कहा कि आप जिन ग्रन्थोका उपयोग करना चाहें मेरे सग्रहालयसे सहर्ष मँगा सकते हैं।

आचार्य भद्रवाहु रचित कल्पसूत्रका मैने सम्पादन किया और वह सन् १९६८ में 'श्री अमर जैन आगम शोध सस्थान गढसिवानासे प्रकाशित हुआ। ग्रथ अभिप्रायार्थ नाहटाजीको भेजा गया। नाहटाजीने ग्रंथको देखकर हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त की। उन्होने भावनगरसे प्रकाशित 'जैन' पत्रके पर्युषण विशेषाङ्कमें लिखा कि आजतकके प्रकाशित और सम्पादित कल्पसूत्रमें यह कल्पसूत्र सर्वश्रेष्ठ है। उन्होने मुझे अनेक सशोधन भी भेजे, जिसका उपयोग अभी प्रकाशित हुए कल्पसूत्रके गुजराती सस्करणमें मैने किया है।

'भगवान् पार्श्व : एक समीक्षात्मक अध्ययन', 'साहित्य और सस्कृति', 'ऋषभदेव . एक परिशीलन', ग्रन्थोपर भी उन्होने अपने सुझाव दिये हैं, जिनको देखकर मुझे अनुभव हुआ है कि नाहटाजीका कितना गभीर अध्ययन है। साथ ही उनमें कितनी सरलता व स्नेह है। उन्होने समय-समयपर अनुपलब्ध ग्रन्थ मुझे उपयोग करनेके लिए भी भेजे हैं।

'भगवान् अरिष्टनेमि और कर्मयोगी श्रीकृष्ण · एक अनुशीलन' ग्रन्थ मैंने लिखा। नाहटाजीने उसकी पाण्डुलिपि देखकर अनेक स्थलोपर सशोधनके लिए सूचना दी। साथ ही उसपर उन्होंने महत्त्वपूर्ण भूमिका भी लिख दी। वह ग्रन्थ 'श्रीतारक गुरु जैन ग्रन्थालय पदराडा, जि० उदयपुरसे प्रकाशित हुआ।

अभी नाहटाजी श्रीमानतुगसूरि सारस्वत समारोहमें वम्बई आये तो पुनः दीर्घकालके पश्चात् साक्षात् मिलनेका अवसर मिला। अनेको साहित्यिक विषयोपर उनसे खुलकर वार्तालाप हुआ। वार्तालापके प्रसगमें मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि नाहटाजी वस्तुत चलते-फिरते पुस्तकालय हैं। ये लक्ष्मी-पुत्र ही नही, सरस्वती पुत्र भी हैं। इनका अभिनन्दन किया जा रहा है। उनका अभिनन्दन वस्तुत उनके वहुविध गुणोका अभिनन्दन है, ये चिरायु होकर अत्यधिक साहित्यिक व धार्मिक सेवा करें, यही हार्दिक मगल कामना है।

o

साहित्यिक सेठ श्री अगरचंद नाहटा

श्री रामनिवास स्वामी

'विवेक विकास' का प्रकाशन जुलाई सन् १९६८में प्रारम्भ किया था। तव यह आवश्यकता अनुभव हुई कि राजस्थानके कतिपय साहित्यकारोसे सम्पर्क किया जाय। राजस्थानी भाषा व इतिहासके सुपरिचित लेखक श्री सवाई सिंह धमोराने जिनका 'विवेक विकास' के साथ आरम्भसे ही निकटका संवन्ध रहा है, इस संवन्धमें अगरचन्द नाहटाका भी नाम लिया। यह प्रारम्भिक परिचय है श्री नाहटाका विवेक-विकास परिवार से।

इसके उपरान्त तो उनसे पत्र-व्यवहार होता ही रहा है। परस्पर विचारो का आदान-प्रदान भी है। विवेक-विकास को इस बातकी प्रसन्नता है कि हमारे यहाँ कतिपय शोध-छात्र अध्ययन हेतु आते रहते हैं। राजस्थानी भाषा और साहित्यके अतिरिक्त इतिहास-सवन्धी अनेकानेक गुत्थियों पर चर्चायें ही होती रहती हैं। हमारे सम्पादक मण्डलके सदस्य सदर्भमें सदा ही नाहटाजीका नाम लिया करते हैं। कतिपय छात्रोको बीकानेर जाते समय नाहटाजीके पुस्तकालयमें अमुक-अमुक ग्रन्थ देखियेगा, इस प्रकारका परामर्श देते रहते हैं।

श्री नाहटाजी का पुस्तकालय वास्तवमें राजस्थानी व राजस्थान की दृष्टिसे अनुपम देन हैं। जिस प्रकार सेठ लोग धन अर्जित करते है, श्री नाहटाने उसी प्रकार साहित्यिक पाण्डुलिपियाँ एकत्रित कर अपने सेठ नाम को सार्थक किया है। इस दिशामें सेठोकी सी सचय-वृत्ति और और अभ्यास उनका वशानुगत हैं। इसीलिए हम उन्हें साहित्यिक सेठ कहते सकोच नही करते। समाज-वादके इस युगमे आर्थिक विशेषता को मिटाने हेतु संकल्प लिये हुए राजनीतिज्ञ सम्भवत पूँजी वटोरनेवाले सेठो की सम्पत्ति सीमित कर दें परन्तु इस साहित्यिक सेठ की सचित निधि पर उनका यह अस्त्र भी नही चलेगा। पूँजीवादी सेठ समाप्त हो सकते हैं परन्तु यह साहित्यकार सेठ तब भी उसी शान से डटा रहेगा जिस प्रकार आज डटा है। नाहटाजी सदैव अमर-सेठ रहेंगे।

ऐसे साहित्यकारका अभिनन्दन होना वास्तवमें एक शुभ सकेत है, जिससे भावी पीढी प्रेरणा लेगी।

'विवेक विकास' परिवार इस अवसर पर हार्दिक अभिनन्दन प्रस्तुत करता है और शुभकामना करता हैं कि श्री नाहटाजी साहित्य सेवार्थ दीर्घजीवी हो।

o

शुभकामना

श्री हीरालाल शास्त्री

मैं भाई श्री अगरचन्दजी नाहटाके साहित्यिक कार्यकी प्रशसा चिरकालसे सुनता आ रहा था। कुछ समय पहले मेरा हैदराबादमें उनसे साक्षात्कार हुआ। तब मैं उनकी मौलिक प्रतिभासे अत्यन्त प्रभावित हुआ।

अभी नाहटा अभिनन्दन स्मारिकाकी विवरणिकाको देखनेसे मुझे मालूम हुआ कि जितना मैंने सुन रखा था या जितनी मैंने कल्पना कर रखी थी, उससे कई गुना ज्यादा काम भाई नाहटाजीके हाथ से हो चुका है। इतने वडे काममें उनको अपने भतीजे श्री भँवरलालजी नाहटाका सहयोग भी मिला, यह अवश्य ही हर्ष का विषय है।

मैं श्री नाहटाजीकी प्रगल्भता और निष्ठाके लिए उनका सस्नेह अभिनन्दन करता हूँ और उनकी उत्तरोत्तर अधिकाधिक सफलताके लिए अपनी हार्दिक शुभकामना प्रकट करता हूँ।



साहित्यिक विभूति नाहटाजी

श्री मंगलदास स्वामी

युगयुगान्तरोसे हमारा यह आर्य सस्कृतिका जन्मदाता महान् भारत देश भूमण्डलमें अपना विशेष स्थान रखता आया है। यह पुण्यश्लोक पावन देश अपने अनेक प्रदेशोंको अपने अचलमें लिये हुए है। इन प्रदेशोमें अपनी विभिन्न विशेषताओके कारण हमारा वह राजस्थान प्रदेश भी महान् गौरवशाली व समादरणीय प्रथम पक्तिमें अपना विशिष्ट स्थान रखता है। राजस्थानकी वैसे तो ख्याति वीर-प्रसवाके रूपमें है पर इस पावन भू ने जिस प्रकार अनेक शौर्यशाली वीरोको जन्म दिया उसी तरह इस भूमिने दानी-त्यागी-तपस्वी, भक्त, महात्मा, विद्वान्, कवि, रचनाकार, प्रभावी शासक-यति, व्रतियो व सतियोको भी अगणित सख्यामें जन्म दिया है। राजस्थानमें सस्कृत-प्राकृत, डिंगल, पिंगलमें सचित व अप्रकाशित इतना प्राचीन साहित्य है जिसका कि अभी हमारे देशके साहित्यिको का ही पूरा पता नही है। इस ओर अभी जिस प्रकारका ध्यान दिया जाना था वैसा ध्यान नही दिया गया है। खेद है कि इस उदासीनताके कारण दिन-प्रतिदिन प्राचीन साहित्यका लोप होता जा रहा है। मूर्तियो, चित्र, तथा अन्य कलाकृतियोकी चोरी तथा प्राचीन साहित्यका व्यापार जोरो पर है जिससे इस अनुपम निधिको दिन-दिन क्षति पहुचाई जा रही है। जिसकी रक्षाके लिये सतत जागरूक प्रहरी चाहिये। जैसे कि हमारे चरित नायक नाहटाजी हैं। इन प्राचीन साहित्यके परमोपासक, विनीत, मृदुभाषी, निरभिमानी, सतत साहित्य साधना के धनी नाहटाजीको जन्म देनेका गौरव इसी राजस्थानकी भूमि को है। नाहटाजीकी जन्मस्थलीकी महत्ताका महत्त्व प्राप्त हुआ राठौर कुलभूषण महाराज बीकाजी द्वारा स्थापित बीकानेर नगरको नाहटाजीने अपनी उत्कृष्ट विविधताओंसे जन्मदातृनगरीके गौरवको गौरवशाली बनानेमें अपना अथक प्रयोग किया है व कर रहे हैं।

व्यक्तित्व

नाहटाजी बहुत ही सादगी-प्रिय व्यक्ति हैं। उनकी वेश-भूषा परम्परागत सामाजिक रीतिके अनुसार है। यदि कोई अपरिचित व्यक्ति पहिली बार नाहटाजी से साक्षात् करेगा तो शायद वह उनकी इस मारवाडी वेश-भूषाको देखकर इस भ्रान्ति में उलझेगा कि क्यो? साहित्यका अनन्य उपासक तथा प्राचीन साहित्यकी

खोजमें अनवरत अपनेको लगानेवाला यही व्यक्ति है। उनकी पगडी-धोती-कुरता-सादा कोट उन्हें सीधे रूपमें एक व्यावसायिक व्यक्ति प्रगट करेगा न कि कोई उच्चकोटिका साहित्य-प्रेमी। उनका बाल्यकाल व शिक्षा बीकानेर नगर में ही हुई। उनका परम्परागत व्यावसायिक धन्धा है। तदर्थ उनका आवागमन कलकत्ता आदि भारतके प्रमुख और औद्योगिक नगरोमे भी होता रहता है। आरम्भसे ही उनमें साहित्य अनुशीलनकी अभिरुचि थी—वही अभिरुचि काल पाकर विकसित होती गयी जिसने आगे चलकर उन्हे प्राचीन साहित्यकी सेवाके लिये तत्पर किया। आपका स्वभाव अत्यन्त सरल तथा कोमल है। नम्रता तो आपमें कूट-कूटकर भरी हुई है। एक बार जो व्यक्ति आपसे मिल लेता है वह सर्वदाके लिए आपका हो जाता है। अहकारका तो आपमें लेश भी नही है—सीधी-सादी भाषामें आपसे वार्ता करते हुए प्रत्येक व्यक्तिमें आपके प्रति आत्मीय भावना स्वत ही बिना प्रयास घर कर लेती है। आपका द्वार सबके लिए समान रूपसे खुला रहता है। साधारणसे साधारण जिज्ञासु तथा बडेसे बडे साहित्यिकके साथ मानवीय व्यवहारमें किसी प्रकारका भेद आपसे नही बनेगा। शोध छात्रोके लिए आपका सहयोग सर्वदा सुलभ रहता है। साहित्य-प्रेमियो, साहित्य-लेखको, सम्पादको, साहित्य मर्मज्ञोके लिए आपका घर उन्हीके घरके समान उपयोगमें आता है। समागत अतिथियो-का सम्मान भारतीय परम्परानुसार अत्यन्त सौहार्द्रपूर्ण भावनासे किया जाता है। आपका शान्त, विनीत, मृदुल स्वभाव हर अपरिचितको अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। आपके पूरे व्यक्तित्वका महत्त्व शब्दो द्वारा व्यक्त कर सकना शक्य नही है यही कहना पर्याप्त है कि आप महान् व्यक्तित्वके धनी है।

साहित्य-साधना

नाहटाजी का मुख्य विषय साहित्यसाधना है। वे पर्याप्त समयसे इसी कार्यमें लगे हुए हैं। उन्होने इस लक्ष्यपूर्ति के लिए न मालूम कैसे-कैसे प्रयास किये व कठिनाइयोंसे सघर्ष किया है। जहाँ भी उन्हें ज्ञात हुआ कि अमुक जगह अमुक रचना प्राप्त है आप तभीसे उसके अवलोकन व पाडुलिपियोके प्रयासमें लग जाते हैं। उस रचनाका वहाँ जाकर अवलोकन करते हैं। जिसके पास वह है उसकी प्रतिलिपिकी व्यवस्था करते हैं। आपके इस प्रयाससे अनेको रचना-ग्रन्थ जो कि बिना जानकारीके किसी बसतेमें लिपटे ससारसे ओझल थे वे प्रकाशमें आये। वैसे आपने प्राचीन जैन साहित्यकी रचनाओका अपने यहाँ अच्छा सग्रह किया है तथा उसके विवर्धनमें अब भी लगे हुए हैं। जैन साहित्यकी अनेक रचनाओ का सम्पादनकर उनको चिरजीवन प्रदान किया है। आपका "अभय-ग्रन्थागार" इसका उत्कृष्ट प्रमाण है कि आपकी साहित्य साधनाका लक्ष्य कितना उच्चकोटिका है। आपके इस ग्रन्थागारमें न केवल जैन रचनाओका ही सग्रह है अपितु इसमें सन्त-साहित्य-डिंगल-कवियों को रचनायें-प्राचीन ख्याति-तथा पिंगलकी रचनाओका भी उपयुक्त सग्रह है। आपने जिस तरह जैन-साहित्यका सम्पादन कर उनको सुरक्षित किया उसी तरह अन्य साहित्यकी रचनाओका सम्पादन कर उन्हें भी नवजीवन प्रदान किया है।

इस सम्पादन कार्यके साथ-साथ आपने साहित्यिक प्रामाणिक पत्रिकाओं में शोधमय लेख भी लिखकर साहित्य सेवियोको नई-नई जानकारी देनेका कार्य भी जारी रखा है। आपके अनेको लेख तो अनुपलब्ध साहित्य रचनाओके परिचयात्मक विवेचन है जिससे रचनाकार-रचना तथा रचना कालका सम्यक् बोध प्राप्त होता है। आप वैसे राजस्थानके साहित्य-गगनके उदीयमान नक्षत्र ही नही है अपितु आप तो अब हमारे अंत: भारतीय साहित्य जगतके साहित्यिकोको उच्च श्रेणीमें समाविष्ट है। राजस्थानकी वे सब संस्थाएँ जो साहित्यके सरक्षण, प्रकाशन व सग्रह कार्यमें संलग्न हैं आपके अनुभव व विवेकका पूरा-पूरा लाभ उठानेमें सर्वदा तत्पर रहती है। आप राजस्थान प्राच्य विद्यामन्दिरकी समितिके सम्माननीय सदस्य है। वैसे ही आप साहित्य एकाडेमीके भी मान्य सदस्य हैं। इसी तरह जो-जो ऐसी अन्य सस्थायें हैं जो कि साहित्यिक कार्यमें

लगी हुई हैं आपका उनसे भी किसी-न-किसीके रूपमें सम्बन्ध बना हुआ है—'किसीके आप मान्य लेखक हैं तो किसीके आप सहायक हैं, किसीके ग्राहक हैं, किसीके सहयोगी हैं। आप सद्गृहस्थ तथा कुटुम्बीजन हैं। अत आपको सब कर्त्तव्योका वहन करना पडता है। साथ ही अपने प्रमुख लक्ष्य साहित्य उपासनामें किसी प्रकार कमी या बाधा न आने देना आपके व्यावहारिक वैशिष्ट्य हैं। प्राचीन साहित्यकी पाडुलिपियोका प्रदेश भेद तथा लेखकोकी विभिन्नताके कारण अध्ययन मनन सहज साध्य नही है। इसके लिए धैर्यके साथ तन्मयतासे अपनेको सूझबूझके साथ लगाना पडता है ? प्रत्येक शिक्षित भी है तो भी इसमें सफल होना संभव नही है। विविध प्रवृत्तियोमें प्रवृत्त नाहटाजीकी इस क्षेत्रकी सफलता उनकी अत्यधिक लगन व तत्परताको है। वे समाज-सेवी भी हैं साथ-साथ व्यवसायी भी और वे कर्मी सुव्यवस्थित गृहस्थ भी हैं। इन सबके साथ-साथ वे एकनिष्ठा-वान् साहित्य सेवी भी हैं। आपके क्षेत्रोका भाव वहन करते हुए उनमें जिस प्रकारसे जितना कार्य प्राचीन साहित्यकी सेवाका किया है उसके उदाहरण बहुत ही कम देखनेमें आते हैं। धी वे तथा स्मृतिके धनी है। जिससे उनका साहित्यिक ज्ञान सुस्थिर व स्थायी है। प्राचीन साहित्यकी पाडुलिपियोमें कभी-कभी कई तरहकी उलझनोका सामना करना पडता है। किसी पाडुलिपिमें रचनाकारका नाम नही है तो किसीमें रचनाकाल नही है। किसीमें रचना स्थानका उल्लेख नही है तो किसीमें पाडुलिपि करनेवालेका नाम व कालके उल्लेखका होता है। ऐसी रचनाओ की उक्त प्रकारकी उलझनोको सुलझानेके लिए कैसा और कितना प्रयास करना होता है इसकी जानकारी उन्हीको ज्ञात है जो स्वयं प्राचीन साहित्यकी सेवामें सलग्न है।

नाहटाजी में उक्त कार्यके लिए अदम्य उत्साह है। वे इस प्रसंगमें किसीभी बाधासे न तो घबराते हैं न ही अनुत्साहित होते है। वे धैर्य तथा अपनी ऊहनासे सब प्रकारकी बाधाओपर विजय पा लेते हैं। वे अपने आपमें एक सच्चे साहित्य साधक हैं। वे चिरकालतक इस साहित्य-साधनामें लगे रहें ताकि प्राचीन साहित्यकी सुरक्षा सेवा बराबर बनती रहे।

सम्पादन व खोजपूर्ण लेख

नाहटाजी जैसा कि मैंने ऊपर व्यक्त किया है कि वे न केवल प्राचीन साहित्यके संग्रहप्रेमी है अपितु उनका लक्ष्य है—उस साहित्यको प्रकाशमें लाकर उसे सुरक्षित कर देना। तदर्थ सम्पादन-प्रकाशन की आवश्यकता होती हैं। नाहटाजी अपने बलबूते पर ही इन उभय कार्यों (सम्पादन-प्रकाशन) की पूर्तिका भी पूरा प्रयास करते हैं। आपने अनेक ग्रन्थोका सम्पादन भी किया है तथा प्रकाशन भी। प्राचीन साहित्यकी जैसे-जैसे नवीन पाडुलिपियोकी प्राप्ति होती है उनकी प्रतिलिपि कराकर संग्रहीत करना तथा समय-समय पर उन प्राप्त ग्रन्थोके परिचयात्मक निबध लेख उन शोध-पत्रिकाओमें प्रकाशित करना जिससे साहित्य-प्रेमियों व खोजमें लगे साहित्यिकोका नवीन ग्रन्थो व रचनाओ का पता लगता रहे। प्रकाशनमें अर्थकी आवश्यकता होती है तथा परिचयात्मक लेख लिखनेसे पहिले न गहराईसे अनुशीलनकी आवश्यकता रहती है। साथ ही रचनाके पूर्वापरका गहराईसे मन्थन कर ग्रन्थगत रहस्यका पता लगाया जाता है। नवीन रचनाओंके परिचयात्मक लेखो में कभी-कभी ऐसे मौके भी आ जाते हैं कि उसके सही निष्कर्ष तक पहुँचना काफी कठिनाई पूर्ण हो जाता है। उस स्थितिमें अपनी सूझ-बूझसे ही अपना दृष्टिकोण अभिव्यक्त करना पडता है। और तथ्य निर्णयके लिए अन्य प्रमाणोकी तलाश करनी पडती है। फिर भी कुछ बातें ऐसी रह जाती है जिनको सशयात्मक स्थितिमें ही रख देना पडता है। जिन सज्जनोमें नाहटाजीके इस प्रकारके निबन्ध पढे हैं वे कह सकते है कि उनका एतद् विषयक प्रयास कितना महत्त्वपूर्ण है। अस्तु, नाहटाजीकी कार्य पद्धति व उनका प्राचीन साहित्यके लिए कितना अगाध स्नेह है उसका पूरा विवरण शक्य नही है क्योकि हृदयगत भावोको उसी रूपमें व्यक्त कर

सकना कठिन समस्या है। इन पंक्तियोंसे हमें नाहटाजीके साहित्य क्षेत्रमें किये जानेवाले प्रयासोका सक्षेपमें दिग्दर्शन मात्र है, विशेष अनुमानसे ज्ञातव्य हैं।

कामना

नाहटाजीके अभिनंदनका सकल्प करनेवाले सज्जन अत्यन्त धन्यवादके मात्र हैं। क्योकि उन्होने एक अतीव औचित्यपूर्ण आवश्यक कार्यकी ओर समुचित ध्यान दिया है। साहित्य क्षेत्रका कार्य एक कठिन साधना है। सर्वसाधारण उस प्रयासकी जानकारीसे अपरिचित रहते हैं। साहित्य-प्रेमीही साहित्य सेवी का सकाम मूल्यांकन कर सकता है। आजका युग भौतिक अर्थ प्रधानताका युग है। इसमें ज्ञानका महत्त्व उस रूपमें मान्य नही है। जिस रूपमे वह होना चाहिए।

"सर्वे गुणा. काञ्चनमाश्रयन्ति"

मनुष्यके सब गुण विद्या तथा शालीनता अर्थके आयाम हैं। गुण-विद्या शालीनताकी वजाय अर्थके महत्त्वको सर्वोपरि स्थान प्राप्त है। विद्वानोकी-साहित्यसेवियोकी-श्रेष्ठ व सज्जनपुरुपोकी समाजमें जैसी मान्यता होनी चाहिए वह नही है। अत ऐसे कालमें जो सज्जन इस ओर ध्यानमें है तथा प्रयास करते हैं वे वस्तुतः एक ऐसे आवश्यक कार्यकी पूर्ति करते हैं जिससे हमारे इतिहास हमारी सभ्यताका पूरा-पूरा सबंध जुडा हुआ है। जो समाज अपने विद्वानो, साहित्यसेवियोका समादर करता है, उनके महत्त्वको स्वीकार करता है। वह समाज अपने अस्तित्व व महत्ताकी पूर्ति करता है। राजस्थानमें आज भी ऐसे अनेक मौन साहित्य साधक हैं जिनका हमें ठीकसे परिचय नही है। उनको भी प्रकाशमें लानेकी आवश्यकता है। हमारे समाज की साहित्यिक सपत्तिके ये ही सच्चे प्रहरी है जो अनवरत अपने प्रयासोमे उस दुर्लभ महान् सम्पत्तिका संरक्षण व विवर्धन करते है। हमारी उनके लिए यही कामना है कि वे दीर्घकालतक अपनी महती सेवा द्वारा साहित्यिक सम्पतिका विवर्धन व सरक्षण करते रहें। नाहटाजी भी उन्ही साहित्यिक साधकोमें हैं अत वे स्वस्थ व दीर्घजीवी होकर अपने लक्ष्यमें तत्पर होकर प्राचीन साहित्यके अन्वेपण-सरक्षण, विवर्धनमें अपना चिर सहयोग प्रदान करते रहें।

०

अभिनंदनीय श्री नाहटाजी

श्री सिद्धराज ढड्ढा

श्री अगरचंदजी नाहटाका अभिनन्दन किया जा रहा है, यह जानकर प्रसन्नता हुई। श्री नाहटाजीसे मेरा परिचय काफी पुराना है। हालाकि कार्यक्षेत्र थोडा भिन्न होनेसे अधिक संपर्कमें अवश्य नही आया। नाहटाजीके प्रति मेरे मनमें शुरूसे ही आदर रहा है, लगन, अध्यवसाय और एकनिष्ठ कार्यसे मनुष्य कितना वडा काम सम्पादित कर सकता है, उसका एक ज्वलन्त उदाहरण श्री नाहटाजी हैं। जिस जाति और वर्गमें नाहटाजी जन्में, उसमें सरस्वतीकी उपासनाकी परम्परा कम ही है। यह बात नाहटाजीकी उपलब्धियोको और भी विशिष्टता प्रदान करती है। वे अनेक वर्षों तक साहित्योपासना करते रहें, इस शुभ कामनाके साथ।

०

नाहटाजी : एक जीवन्त संग्रहालय

श्री जमनालाल जैन

अगरचन्दजी नाहटा ! यह एक ऐसा नाम है, जिसके बारेमें 'साहित्य जगत्'में प्रविष्ट मामूली-सा आदमी या नया-नया आदमी भी अपरिचित नही रह सकता, न रह सकेगा। ऐसी कोई पत्रिका नही, जिसमें नाहटाजी न लिखते हो।

लेखक प्राय' लावरवाह होते है। भूलना वे अपनी विशेषता समझते है। खोये-खोये रहनेमें वे अपनी प्रतिष्ठा मानते है। हिसाव किताव रखनेको वे वेकारका झझट समझते हैं। मस्तीमें जीना, नशे जैसी हालत वनाये रखना, अधिक जागरण करना साहित्यकारके आरोपित गुण समझे जाते हैं। मतलव यह कि विचार और आचारपर किसी भी तरहका वधन साहित्यकारको वोझ मालूम देता है और वह स्वय इसे दकियानूसी-पन समझता है।

लेकिन अगरचन्दजी नाहटा इन सब वातोमें भिन्न हैं। वे धार्मिक प्रकृतिके, सत्यनिष्ठ, हिसाव-किताव में पक्के, निर्व्यसनी और परिश्रमी व्यक्ति है। साहित्यकी सेवा करनेवाला ऐसा आदमी हो भी सकता है, यह शंका हर एकके मनमें उठती है और सचमुच इसमें दोष देखनेवालेका नही, नाहटाजीके व्यक्तित्वका ही ज्यादा है।

ऊँचा पूरा डील-डौल, मूछोंसे भरा चेहरा, श्याम वर्ण, सिरपर रंगीन ऊँची पगडी, लम्वा कोट—पूरी मारवाडी और सेठिया-पोशाक धारण करनेवाला कोई व्यक्ति भला कैसे साहित्य-साधक माना जाय ?

आचार्य कुंदकुंदने कहा है, 'जो कर्ममें शूर होता है, वह धर्ममें शूर होता है।' नाहटाजीपर यह कथन पूरी तरह लागू होता है। लेकिन उनपर यह उक्ति भी पूरी तरह लागू होती है 'कि जो हिसावमें पक्का, वह जीवनमें भी पक्का।' नाहटाजी व्यवसायमें पक्के हैं, हिसावमें पक्के है। जहाँ कार्डसे काम चलता है, वहाँ लिफाफा कभी नही खर्चेंगे। उनके हिसावमें पक्के होनेका असर साहित्यपर भी पडा है। गजवकी खाता-रोकड है, उनके पास साहित्य की। किस चरित्रको, कितने लेखकोने, कितनी भाषाओमें, कव-कव लिखा है, इसका पूरा विवरण उनके साहित्यिक वहीखातेमें मिल जायगा।

उनके घरपर जो संग्रहालय हैं, जो दर्शनीय सामग्री है, वह उन्होने कितनी तपस्या, लगन, मेहनतसे इकट्ठा की है, यह देखकर ही अदाज लगाया जा सकता है।

नाहटाजी एक व्यक्ति नही, एक व्यक्तितत्र नही, पूरे एक संस्था हैं और उनके कामका अगर लेखा-जोखा किया जाय तो पता चलेगा कि जो काम उन्होने स्वयं अपने अकेलेके वलपर किया है, वह वीसो वरसमें पचीसो विद्वान तथा लाखो रुपयोकी सहायतासे भी नही हो सकता था।

वे स्कूलमें वहुत कम पढे हैं। यह वात वे स्वय कहते है। दर्जा ६ तककी पढाई हुई उनकी। लेकिन ये दर्जे शुरू कवसे हुए ? क्या कवीर किसी स्कूलमें गये थे ? स्कूल-कालेजकी पढाई तो वे करते हैं, जिन्हें नौकरी करनी है, वावू वनना है। नाहटाजीकी पढाई ऐसे स्कूलमें हुई, जहाँसे निकलकर आदमी आत्माको पहचानने लगता है।

एक कवि हो गये है वनारसीदास। चार शतक पहलेकी वात है। वणिक् कुलमें पैदा हुए और रुचि वढी पढनेमें। वापने उपदेश दिया, "वहुत पढाई व्राह्मणभाट करते हैं, अपना काम तो वाणिज्य करना है।" किया भी उसने वाणिज्य पर आखिर असफल हो गया। छोडकर लग गया साहित्यकी उपासना में। लेकिन नाहटाजीने व्यवसाय नही छोडा और साहित्यकी सेवा भी करते रहे। उन्होने सिद्ध कर दिया कि लक्ष्मीका

निवास वही होता है, जहाँ सरस्वतीकी पूजा होती है। लक्ष्मी भी हंसवाहिनीके भक्तको मानती है। बनारसीदासजी जहाँ असफल हुए, वहाँ नाहटाजी सफल रहे।

नाहटाजी जीवंत संग्रहालय हैं। उन्होंने जैन साहित्य-जैनधर्म, जैन पुरातत्त्व आदिकी अनवरत सेवा की है। उनकी सेवाओंका सही मूल्यांकन होना कठिन है। लेकिन इतना तो होना ही चाहिए कि उनके कार्योंकी यह परंपरा बराबर चलती रहे। एक विश्व-विद्यालयका पूरा काम उन्होंने किया है।

मुझे उनका सहज स्नेह मिला है। यह मेरा सद्भाग्य है।

●

नाहटाजी समाजके भूषण

आर्या सुमति

हम बीकानेरमें थे। किसीने कहा—"आप नाहटाजीसे अवश्य मिलें और उनके ज्ञानभण्डारको भी देखें।" मेरे मनमें साहित्य और साहित्यकारोंके प्रति सम्मान है। मैं वहाँ गयी। नाहटाजीको देखा—वे पूर्ण राजस्थानी वेशमें थे और लगनके साथ पुस्तकोंके बीचमें शोध कार्य कर रहे थे। मेरे आश्चर्यका ठिकाना न रहा। यह लक्ष्मीपुत्र सरस्वती साधनामें इतनी नम्रतासे कैसे कार्य कर रहा है?

नाहटाजीने तीस हजार हस्तलिखित प्राचीन ग्रन्थ एवं प्रकाशित चालीस हजार पुस्तकें संगृहीत कर रखी हैं। हस्तलिखित पुस्तकोंका संकलन आसान नहीं है। बहुत ही कष्टसाध्य है। उत्साही नाहटाजीने उन ग्रन्थोंका संकलन किया है। उनकी इस अद्भुत कार्य-क्षमता पर गौरव होता है। केवल संकलन ही नहीं, वे स्वयं घंटों-घंटों पढते भी हैं, लिखते हैं और चिन्तन करते हैं। इनके इस साधनाकी फलश्रुति है। करीब तीन हजारसे अधिक ऐतिहासिक और शोधपूर्ण लेख भारतके विभिन्न पत्र-पत्रिकाओंमें प्रकाशित हो चुके हैं। साथ ही शोधछात्रोंको मार्गदर्शन भी करते रहे हैं।

मैंने अभी दिल्लीमें नाहटाजीसे कहा था—भगवान् महावीरके बाद साधु-परंपराका इतिहास सुरक्षित है किन्तु चन्दनबालाकी परंपराका इतिहास प्रायः विलुप्त है। कोई किसी साध्वीका कहीं-कहीं उल्लेख मिलता है किन्तु उसे इतिहास नहीं कहा जा सकता है। उन्होंने बडे विनोदमें कहा—लेखनी पुरुषोंके हाथमें थी। उन्होंने अपना इतिहास लिख दिया। अब आगेका इतिहास आपसे बनेगा, अतः आपलोग लेखनी पकड लीजिए।

उन्होंने आगे कहा—मुझसे जो बन सकता है, मैं करूँगा। साध्वियोंका जहाँ कोई उल्लेख मिलता है, उसका संकलन करके भेजूँगा। सुधर्मा पत्रिकामें उनके इसी विषयके लेख प्रकाशित भी हुए हैं और हो रहे हैं।

प्रायः देखा जाता है कि जो विद्वान् होते हैं, वे अपने आपको दूसरोंसे अलग और विशिष्ट समझते हैं। किन्तु नाहटाजी नम्र हैं, मिलनसार हैं। अध्यात्म और ध्यानके प्रति उनकी रुचि है। वे समाजके गौरव हैं, साहित्यकारोंमें मूर्धन्य हैं और प्रतिष्ठित लेखक हैं। वे राष्ट्रके सम्माननीय व्यक्ति हैं। हमें आशा है कि भविष्यमें उनकी ज्ञानसाधनासे नयी दिशाएँ मिलती रहेंगी। इस महान् सरस्वती-पुत्रको दीर्घायु करें, यही शासनदेवसे मेरी प्रार्थना है।

●

श्री नाहटाजीका विशिष्ट व्यक्तित्व

जैनार्या सज्जन श्री

वहुत-सा आगम साहित्य, देशकी विषम परिस्थितियो और अनुत्तरदायित्वपूर्ण अयोग्य व्यक्तियोंके हाथोमें रहनेसे कही तो दीमकोका भक्ष्य, कही जल-प्लावन और कही अग्निदाहमें नष्ट हो चुका है। आगम साहित्यके अतिरिक्त अन्य-वृत्तियाँ, टीकाएँ, निर्युक्तियाँ, चूर्णियाँ, प्रकीर्णक एव प्रकरणादि तथा विभिन्न विपयोपर रचित साहित्यका भी वहुत वडा भाग संघकी लापरवाही या उपर्युक्त कारणोसे नष्ट हो गया और हो रहा है। अभी तो यह पूरा पता तक नही चल सका है कि हमारे ज्ञान भण्डार कहाँ थे क्योकि अधिकाश यतिवर्ग जिसके पास यह अमूल्य निधि थी, गृहस्थ बन चुका है। यहाँ तक कि जैनधर्मी भी नही रहा है। सारे भारतमें इनके निवासार्थ समाज द्वारा निर्मित स्थान-उपाश्रय, पौषधशालाएँ आदि थे और उन्हीमें प्राय: ज्ञान भण्डार थे। इनके अयोग्य उत्तराधिकारियोने इस सम्पत्तिकी उचित देखभाल नही की, जिससे सुरक्षा नही हो सकी। जो सुरक्षित और वहुमूल्य स्वर्णाक्षरी शैंय्याक्षरी कलात्मक साहित्य सामग्री थी, उसमें से भी वहुत-सी प्राचीनता प्रेमी विदेशी या स्वदेशी व्यक्तियोके हाथोमें चली गयी अव भी कुछ देश व धर्म-द्रोही धनलोलुपो द्वारा पहुँच रही है। यह कटु सत्य हमें स्वीकार करना ही पडेगा कि कुछ व्यक्ति जो स्वयको संघका अग कहते है, वे भी इस पाप-व्यापार में सम्मिलित हैं। आये दिन होनेवाली मूर्तियोकी चोरियाँ, इसकी साक्षी है। सौभाग्यसे संघके कुछ मनीषिजनोका ध्यान जैन साहित्य और पुरातत्त्वकी ओर आकृष्ट हुआ और वे इसकी सुरक्षाके कार्यमें लग गये। कही सूचियाँ वनी, कही सुव्यवस्था की गयी और कही प्रकाशनका पुण्य कार्य तथा सशोधनका पुनीत प्रयत्न चालू है।

इस पवित्र अथ च अति आवश्यक कार्यमें सलग्न कई स्वनाम घन्य महानुभाव तो दिव्यलोकमें प्रस्थान कर चुके हैं और कई इस पावन कार्यमें अनवरत परिश्रम कर रहे हैं ? और सुरक्षामें लगे हुए हैं।

उन्हीमें-से दो हैं वीकानेरके सुप्रसिद्ध श्री अगरचन्दजी नाहटा महोदय, एव इन्हीके भ्रातृज श्री भँवरलालजी नाहटा। श्री भँवरलालजी, नाहटा महोदयके अनन्य सहयोगी हैं।

वीकानेरमें आपका वडा सग्रहालय है जिसके दो विभाग है .—१. "अभय जैन ग्रन्थालय" २ शंकरदान नाहटा कलाभवन। ग्रन्थालयमें ८०००० ग्रन्थोका संग्रह है, जिसमें आधे हस्तलिखित व आधे मुद्रित हैं।

कला-भवनमें प्राचीन मूर्त्तियाँ, ३००० चित्र, सैकडो सिक्के और कलापूर्ण कृतियोंका विशाल संग्रह है।

लक्षाधिक हस्तलिखित ग्रन्थ प्रतियोकी भी खोज करनेका श्रेय आपको है। चालीस वर्षसे आप इस पुनीत कार्यमें व्यस्त हैं। अधिकतर समय इसी कार्यमें व्यतीत होता है।

आपने वीकानेर स्थित ९ ज्ञान भण्डारोकी विवरणसहित सूची तैयार की है। अनेको ज्ञानभण्डारोमें प्राप्त व अन्यत्र अप्राप्य एवं अज्ञात छोटी-मोटी सैंकडो रचनाओकी प्रतिलिपियाँ की हैं व कारवाई है। संशोधन-सम्पादन-प्रकाशन भी किया व कराया है।

आपका अनवरत साहित्य-सेवा कार्य वास्तवमें अनुमोदनीय, प्रशसनीय और अनुकरणीय है।

व्यवसायी व्यक्तिका साहित्य-साधना करना कितना कठिन है। यह अनुमान सहज ही किया जा सकता है। आपका वडा व्यवसाय कई स्थानोपर चल रहा है। उसे भी सँभालते रहते हैं। विश्वके साहित्यकारोंसे आपमें एक वडी भारी विशेषता यह है कि आपका रहन-सहन, वेश-भूषा और आहार-विहार सादगी

और साहित्यिकतासे परिपूर्ण हैं। राजस्थानी संस्कृतिको आपके जीवनके सभी व्यवहारोंमें मूर्त्तिमान देखा जा सकता है।

जैनत्वकी झाँकी आपके प्रत्येक व्यवहारमें साकार हो उठती है। आप मात्र साहित्य सेवी ही नही, बल्कि श्रावक गुण भूषित सच्चे जैन हैं। प्रभु दर्शन, पूजन, सामायिक, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय, व्रत, नियम, तीर्थ-यात्रा आदि धार्मिक कार्य आपकी जीवन-चर्याके अभिन्न अग है। आपको सैकडो, स्तवन सज्झाय दोहे श्लोक आदि कण्ठस्थ हैं। आप जब तल्लीन और भाव-विभोर होकर पूजाएँ और स्तवन सज्झायादि गाते हैं, तो श्रोतृवर्ग तन्मय हो जाता है।

आप जैन साहित्यका ही मात्र कार्य नही कर रहे। भारतके विभिन्न धर्मोंके धार्मिक, सामाजिक, नैतिक और वीर रस पूर्ण आदि अनेक प्रकारके राजस्थानी साहित्य तथा पुरातत्त्वका अनुसधान, सशोधन, सम्पादन और प्रकाशन भी यथासमय सुविधानुसार करते कराते रहते हैं।

आपको जैनसघके उत्थानको लगन सदा लगी रहती है। विशाल जैनशासनमें खरतरगच्छकी परम्परा भी एक विशिष्ट स्थान रखती है। आप इसी परम्पराके अनुगामी है। इस पुनीत परम्पराके नाते खरतरगच्छीय साधु साध्वियोसे भी आपका सम्पर्क बना रहता है और जब दर्शनार्थ या विशेष अवसरोपर आते हैं, तब हमें भी आपसे हार्दिक प्रेरणाएँ मिलती रहती हैं, कि आप युगानुकूल अभिभाषिकाएँ और लेखिकाएँ बनें। आत्म-साधनामें आगे बढें।

आप केवल साहित्य साधक ही नही, आध्यात्मिक साधनामें भी अग्रसर है और जैन धर्मानुकूल यम, नियम, आसन प्राणयाम, ध्यान आदिकी प्रयोगात्मक साधना करते रहते है।

माननीय नाहटाजीके विषयमें जितना लिखा जाय वह थोडा ही है। आपका अभिनन्दन हो रहा हैं। यह जानकर मैं प्रसन्नता और गौरवका अनुभव कर रही हूँ।

श्री नाहटाका अभिनन्दन केवल उन्हीका ही अभिनन्दन नही, वह तो जैन सस्कृतिका जैन श्रावक समाजकी एक अद्भुत प्रतिभाशाली विभूतिका अभिनन्दन है। विश्ववन्द्य भगवान् महावीर द्वारा प्रज्ञापित अहिंसा सत्य आदि तत्त्वमयी उस सनातन ऐहिक-पारलौकिक सुखशान्तिप्रद वाणीका अभिनन्दन है, जिसकी श्री नाहटा विभिन्न प्रकारसे सदा सेवा करते रहते हैं और अपने अभिभाषणो, लेखो, सम्पादनो और प्रकाशनो द्वारा जन-जन तक पहुँचा देनेमें तत्पर रहते हैं।

●

गुणोंके प्रति सहज आकर्षण

मुनि कान्तिसागर

जब मैंने प्रथम वार यह सुना कि साहित्य-सेवी श्री अगरचन्दजी नाहटाका अभिनन्दन-समारोह आयोजित किया जा रहा है तो मनमें हर्ष एव प्रसन्नताकी लहर दौड गई। बड़ी खुशी हुई कि हमारी भारतीय-सस्कृति-में विद्वानोकी पूजाका जो क्रम अति प्राचीन कालसे चला आ रहा था, वह आज भी विद्यमान है। यह गौरवका विषय है।

श्री नाहटाजीका अधिकाश समय सरस्वतीकी उपासनामें ही व्यतीत होता है। जैन-समाजमें तो इनके जितना ज्ञानार्जनमें समय व्यतीत करनेवाला व्यक्ति दुर्लभ ही है। इस कल्पनाके लिए अवकाश ही नही कि

इन्होंने अपने जीवनका अधिकतर समय किस क्षेत्रमें लगाया ? 'प्रत्यक्षको क्या प्रमाण ? सादगी, सरलता, नम्रता आदि अनेक गुण इनके जीवनमें एक साथ उभरे हैं, जिनके कारण स्वत ही मन इनकी ओर आकर्षित हो जाता है ।

जीवनके क्षणोका सदुपयोग करनेके लिए अनेक मानवीय गुणोके विकासमें इनमें स्पष्ट परिलक्षित मानवको आकर्पित करता है । इन सब गुणोंके अतिरिक्त एक विशिष्ट गुण इनके जीवनमें और है, जिसका महत्त्व इन सव गुणोंसे भी कही अधिक है । वह है आत्मिक-साधनाकी वृत्ति । इसका अनुभव उन्ही व्यक्तियो-को होगा, जिन्होने इनके जीवनको निकटसे देखा है । अनेक प्रवृत्तियोमें प्रवृत्त रहते हुए भी हर समय आप इन भावोमें रमण करते रहते है कि मैं आत्मद्रव्य हूँ, अमूर्त हूँ, अखड हूँ एव शाश्वत रहनेवाला हू । सयोग-वियोग आदि नाना अवस्थाओका जो अनुभव होता है, यह स्वभावगत नही, ससर्गके कारण है । जब तक चेतन जडके ससर्गमें है तब तक ससार परिभ्रमण है । जब यह जडसे पृथक् होनेकी आत्मसाधनामें पूर्णरूपेण लग जायेगा, उसी क्षण आत्मा 'स्व' रूपमें लीन हो जायेगी । श्री नाहटाजी आत्म-उत्थानके लिए अंतरग साधना करनेमें सुपुप्त नही, वरन् जागृत है । प्रात काल तीन-चार घटेका समय ये चिंतन, मनन व स्वाध्यायमें ही व्यतीत करते हैं । इस कार्यमें कभी-कभी तो आप इतने लीन हो जाते हैं कि इन्हें यह ध्यान ही नही रहता कि कव तीन-चार घंटे व्यतीत हो गये ।

इस प्रकार श्री नाहटाजीके जीवनगत-गुणोका अवलोकन करते हुए हम यह निश्चित रूपसे कह सकते हैं कि आप जैन समाजके एक विशिष्ट व्यक्ति हैं । व्यावहारिक धार्मिक उपासना पद्धतिमें खरतरगच्छ संघमें आपका विशेष स्थान है ।

आपकी प्रतिभाका लाभ जैन समाज ही नही, अपितु समस्त साहित्य जगत् उठा रहा है, जिससे विद्वत् वर्ग परिचित है ।

हमारी शुभ कामना है कि आप दीर्घकाल तक साहित्य सेवा, शासनसेवा एवं आत्मसाधनामें सलग्न रहकर जीवनके क्षणोका सदुपयोग करते रहें ।



राजस्थानकी साहित्यिक विभूति

डा० स्वर्णलता अग्रवाल

विश्वविख्यात कवि गोस्वामी तुलसीदासने न किसी विश्व विद्यालयमें अध्ययन किया, न परीक्षायें पास की, वह अपनी प्रतिभा एव आन्तरिक स्फुरणाके वलसे हिंदी जगत्की अनुपम विभूति वन गये । उनका रामचरितमानस सैंकडो वर्ष पुराना होकर भी आज तक भारतीय इतिहासमें अपना अनुपम स्थान वनाए हुए हैं । न केवल रामचरितसानस वल्कि गोस्वामीजीकी अन्य रचनायें भी भाव एव कला दोनो ही दृष्टियोंसे अद्वितीय हैं—उनकी ये कृतियाँ साहित्यिक प्रतिभाके लिये प्रेरणाका स्रोत सिद्ध हुई है ।

इसी प्रकार वीकानेरकी मरुधरामें जन्म लेकर श्री अगरचन्द नाहटाने सुसस्कृत उर्वर मानस प्राप्त किया और विरोधी सामाजिक व पारिवारिक परिस्थितियोके कारण विना तथाकथित शिक्षा प्राप्त किये ही जन्मजात प्रतिभा और कलाप्रेमके फलस्वरूप राजस्थानकी अनुपम साहित्यिक विभूति वन गये ।

हिन्दीमें एक लोकोक्ति है 'बालकके पाँव पालनेमें ही देखे जाते हैं।' तदनुसार श्री नाहटाजी किशोरावस्थासे ही सत्संग लाभकर जैनधर्मका ज्ञानार्जन करते रहे और अपने पिता तथा निवृत्ती ज्ञानभंडारोंमें शोधात्मक वृत्तिसे लिपि व भाषाका ज्ञान बढाने लगे। आपके वंशमें परम्परागत व्यापारिक व्यवसाय होते हुए आपकी अभिरुचि साहित्य और कलामें रम गई, जिसके फलस्वरूप नाहटाजी निजी प्रयासोंसे ही दो ऐसे संस्थानोंको जन्म दे सके, जो राजस्थानमें महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त किये हुए हैं। ज्येष्ठ भाई श्री अभयराज नाहटाके असामयिक देहावसानपर आपने अभय ग्रन्थालय स्थापित किया, जिसमें राजस्थानी एवं अन्य भाषाओं-की विविध विषयक लगभग ८० हजार पुस्तकें हैं। एवं अपने पूज्य पिता श्रीशंकरदान नाहटाकी पुण्य स्मृतिमें उनके नामसे शंकरदान नाहटा कलाभवन स्थापित किया, जिसमें असंख्य अनुपम कला-कृतियाँ उपलब्ध हैं।

पी-एच० डी० के लिये शोध आरम्भ करनेपर विशेष रूपसे मुझे श्री नाहटाजीके निकट सम्पर्कमें आनेका अवसर मिला। मेरा शोध विषय था राजस्थानी लोकगीत और श्री नाहटाजी राजस्थानी साहित्यके धनी ठहरे। अतः मार्गदर्शक श्रद्धेय श्री नरोत्तमदास स्वामीने सर्व प्रथम मुझे आपका नाम बताया। मैं नाहटाजीके साहित्य प्रेम एवं विद्वत्ताके विषयमें पहलेसे ही बहुत कुछ सुन चुकी थी। कई बार समय समयपर होनेवाली गोष्ठियों तथा सभाओंमें आपके दर्शन करने एवं प्रवचन सुननेका भी सौभाग्य प्राप्त हो चुका था। किन्तु सन् १९५२ में आपके व्यक्तित्वकी जो छाप मेरे मस्तिष्कपर पडी, वह चिर स्मरणीय है।

अपने ग्रन्थागारमें मूर्तिमान सरस्वती पुत्रकी भाँति विराजमान नाहटाजीका वरद हस्त मेरे शोधकार्यके लिये प्राप्त होते ही मानो मुझे महान् सम्बल मिल गया। आपने अत्यन्त स्नेहपूर्वक मुझे सब प्रकारकी सहा-यता देना स्वीकार किया। ग्रन्थालयमें ऊपर-नीचे आगे-पीछे चारों ओर पुस्तकोंके अम्बार लगे थे—मेरे विषयसे संबंधित अनेकों पुस्तकें व पत्र-पत्रिकाएँ वह स्वयं खोजकर निकाल-निकालकर देते रहे। मैं देखकर स्तम्भित रह गई—इस अथाह साहित्य पयोधिमें कहाँ क्या-क्या होगा इसकी जानकारी उनके स्मृति पथमें भली प्रकार बनी हुई थी—यह था उनके गम्भीर एवं व्यापक ज्ञानका परिमाण। आज परीक्षाओंके बोझसे बोझिल नई पीढीका मानस निर्धारित पाठ्य क्रमके सीमित ज्ञानको भी भली प्रकार हृदयंगम नहीं कर पाता—जब कि जन्म जात कला प्रेमी मानसमें उस अनन्त ज्ञानकी चेतना पूर्ण रूपेण स्मृति पथमें जागृत है।

साहित्यमें पढा था—"कवि र्मनीषी परिभू स्वयभू"

ऐसे उस कवि रूपको साक्षात् नाहटाजीके व्यक्तित्वमें पाकर मैं कृतकृत्य हो गई। उनके सान्निध्यमें शोध कार्यको अग्रसर करना एक आनन्ददायी विषय था। समय-समयपर उनसे पुस्तकें लाने तथा उनके व्यक्तिगत ज्ञानसे लाभान्वित होने हेतु उनके पास जाना बना रहा, सम्पर्क बढता गया। साहित्यिक जगत्में बीकानेरमें होनेवाली संगोष्ठियोंमें भी नाहटाजीके विचारोंको सुननेसे उनके अध्ययन एवं ज्ञानका और भी व्यापक रूप प्रकट होता रहा—मुझे स्मरण है एकबार सादुल इन्स्टीच्यूटके तत्वावधानमें होनेवाली संगोष्ठीमें उन्होंने पत्र पढा था, जिससे लोककथा संबन्धी गम्भीर तथ्योंका उद्घाटन हुआ। राजस्थानी भाषा संबंधी हो या साहित्य सम्बन्धी, जैन धर्म सम्मेलन हो या गीता जयन्ती समारोह, दर्शनका कोई भी विषय हो अथवा साहित्य एवं कला सम्बन्धी नाहटाजी प्रत्येक विषयपर अधिकार पूर्वक बोलते हैं और लिखते हैं। आपकी चतुर्मुखी प्रतिभाको साधना द्वारा विकसित करके नाहटाजीसे अल्प कालमें साहित्य और कलाके क्षेत्रमें इतनी उपलब्धियाँ कर सके।

आपके व्यक्तित्वका आदर्श इस सत्यका ज्वलन्त प्रमाण है कि मानवमें प्रकृति जन्य अनन्त शक्ति और क्षमता है, शिक्षाके द्वारा इस शक्ति एवं क्षमताका विकास करके उद्घाटन मात्र किया जा सकता है।

श्री नाहटाजीके जीवनकी अनुपम उपलब्धियाँ छात्र-छात्राओं एवं प्रौढ नवयुवकोंके लिये प्रेरणाका

नाहटाजी से लाभान्वित होनेवाले शोध-छात्रो एवं साहित्य-प्रेमियोंकी [संख्या अनन्त है, जो उनके चिरऋणी रहेंगे। दूसरोंके प्रति उदारता एव प्रोत्साहन देनेकी भावना नाहटाजी की निजी विशेषताओ में से है।

नाहटाजी का जीवन शोध-प्रवन्धके खुले पृष्ठोके समान है। वहाँ से कोई भी व्यक्ति अपनी इच्छानुसार अपने हितकी सामग्री संचित अथवा उद्धृत कर सकता है। ऐसे सरल, स्नेही, विद्वान् एव साहित्य-मर्मज्ञके अभिनन्दन के अवसरपर अपनी श्रद्धाके पुष्प चढाकर मैं अपनेको धन्य मानती हूँ।



अनवरत साहित्य प्रेमी

रुक्मिणी वैश्य

श्रीयुत् नाहटाजीके बारेमें मैं काफी समयसे सुनती आ रही थी। विश्वविद्यालयमें आनेपर अपने अध्ययनके साथ राजस्थानकी प्रमुख पत्रिकाओंमें आपके लेख पढनेका अवसर मुझे मिला। लेख पढनेके साथ-साथ राजस्थानी-साहित्यके इस मूर्धन्य विद्वान्से मिलनेकी इच्छा दिन प्रतिदिन तीव्र होती गयी।

अपने अनुसधानके विषयमें चर्चा करते समय आदरणीय डा० सत्येन्द्रने आपके बारेमें कई नवीन बातें बताईं, जिनसे मैं अनभिज्ञ थी। आपने मुझे सुझाव दिया कि मैं अपने विषयसे सम्बन्धित सामग्री केवल नाहटाजीके यहाँसे ही प्राप्त कर सकती हूँ। हुआ भी यही, जो अप्राप्य सामग्री थी, सब मुझे आपके श्री अभय जैन ग्रन्थालयमें ही प्राप्त हुई।

मैंने अपने विषयसे सम्बन्धित साहित्यकी जानकारी हेतु प्रथम पत्र-नाहटाजीको लिखा। उस पत्रका उत्तर मुझे पूरी जानकारी सहित अविलम्ब मिला। इससे आपकी साहित्यिक रुचि एव नि स्वार्थ सहयोग-भावना का आभास मुझे हुआ। इसी पत्रके बाद दूसरा पत्र मिला कि आप राजस्थानी भाषा सम्मेलनमें जयपुर पहुच रहे हैं। समय तारीख एव मिलनेका स्थान आदि सभी महत्त्वपूर्ण बातें पत्रमें लिखी हुई थी। राजस्थानी भाषा सम्मेलन २१,२२,२३ मार्च १९६० को राजकीय प्रवास भवन जययुरमें हुआ था। तभी आपका प्रथम साक्षात्कार करनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ। जैसा अनुमान एवं कल्पना थी, उससे कही अधिक आपको पाया। समयाभाव एवं विद्वानोंसे घिरे हुए साहित्यिक चर्चा करते हुए भी आपने मुझे अपना अमूल्य समय देकर विषयसे सम्बन्धित अनेक कठिनाइयोको सहज एव सुगम किया। आपसे प्राप्त स्नेहको मैं कभी भुला नही सकती।

आपके द्वारा दर्शायी गई साहित्यिक पगडण्डियोपर चलनेका मैं प्रयास कर रही थी। परन्तु मार्गमें मुझे भाषा सम्बन्धी अनेक कठिनाइयोका सामना करना पड रहा था। इसके अलावा मुझे कुछ हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त करनी थी। अत मैंने अपने शोध कार्य हेतु बीकानेर आनेकी सूचना नाहटाजीको दी। प्रत्युत्तर में आपने शीघ्र ही आनेको लिखा।

मैं अपने अनुसंधान कार्यके लिए बीकानेर पन्द्रह दिन रही। बीकानेर आनेका यह मेरा प्रथम अवसर था। मार्गोंसे अनभिज्ञ होनेके कारण मैंने राह चलते एक युवकसे नाहटाजीके निवास स्थानके बारेमें पूछा। वह बडे आश्चर्यसे कहने लगा कि आप नाहटाजीको नही जानती ? उनकी ख्याति तो सर्वत्र है। मेरे कहनेपर कि मैं बीकानेर पहली बार आई हूँ उसने मुझे आपके निवास स्थान तक पहुँचा दिया।

जिस समय मैं आपके यहाँ पहुँची, आप भोजन कर रहे थे। आते ही आपने रहने आदिकी व्यवस्थाके बारेमें पूछा और सन्तुष्ट हो जानेपर ही विषयसे सम्बन्धित बात की। जब मैंने कुछ हस्तलिखित ग्रन्थ देखनेकी जिज्ञासा प्रकट की तो आप उसी समय, जब कि दोपहरके ठीक साढे बारह बजे थे, मेरे साथ पुस्तकालय गये और ग्रन्थोंके नाम, ग्रन्थाङ्क बिना रजिस्टरकी सहायताके मुझे नोट करवा दिये। मैं आपकी स्मरण-शक्ति देखकर दंग रह गयी। साथ ही मुझे लगा कि आप तो विश्वके महान् कोष स्वयं ही हैं। फिर सूची-पत्रकी आवश्यकता आपको क्या हो सकती है।

श्री अभय जैन ग्रन्थालयमें जो आपका निजी पुस्तकालय है मेरे विषयसे सम्बन्धित अधिकांश सामग्री मुझे मिली। आपके भण्डारके अतिरिक्त जो सामग्री जहाँ मिल सकती थी, उसके बारेमें भी केवल बताया ही नहीं, प्राप्त करनेमें भी पूर्ण सहयोग दिया। वे भण्डार ट्रस्टीजके आधीन हैं और इन्हें खुलवाना बडा मुश्किल है परन्तु श्रद्धेय नाहटाजीने इन सभी परेशानियोंके बावजूद भण्डार खुलवाये तथा जो ग्रन्थ भण्डारके बाहर नहीं दिये जा सकते हैं, अपनी जिम्मेदारीपर मुझे दिलवाये। जिन ग्रन्थोंकी मैं काफी समयसे प्रतीक्षा कर रही थी वे मुझे इस प्रकार सुलभ हुए। सहयोगकी यह भावना उनकी साहित्यके प्रति रुचि तो प्रदर्शित करती ही है, साथ ही यह भी सिद्ध होता है कि श्री नाहटाजी शोधछात्रोंकी परेशानियोंसे विज्ञ हैं और सहयोग देते रहते हैं। ऐसा महान् विद्वान् दुनियामें बिरला ही कोई होता है।

जो विद्यार्थी राजस्थानी साहित्यकी गहन बौद्धिकतामें न जाकर राजस्थानी साहित्यके अमूल्य अप्राप्य मोतियोंको कूलसे ही प्राप्त करना चाहते हैं, उनके लिये नाहटाजीके लेखोंसे बढकर अन्य कोई श्रेष्ठ माध्यम नहीं है। श्री नाहटाजी अपने विविध और विशाल अनुभव तथा विपुल अध्ययन एवं चिन्तनको समग्र मानसिक ताजगी और सजग दृष्टिके साथ राजस्थानी साहित्यको अर्पित कर रहे हैं। ईश्वर करे वे शतायु होकर निरन्तर सेवा करते रहें।

●

ज्ञान-प्रदीप श्री नाहटाजी

सुशीला गुप्ता

मान्य विद्वानोंके मुखसे श्री अगरचन्दजी नाहटाके सम्बन्धमें मैंने बहुत कुछ सुन रखा था। एम० ए० में 'हिन्दी साहित्य' विशेष डिंगल विषय होनेके कारण मुझे व्यक्तिशः श्री नाहटाजीसे सम्पर्क साधनेकी बात अनेक विद्वानोंने कही। समय-समयपर मैंने उनके लेख और विभिन्न शोधप्रबन्धोंमें उनके विद्वत्तापूर्ण विचारोंका पठन किया था। मैं मन ही मन हिचक रही थी कि इस प्रकारके सुप्रतिष्ठित विद्वान्से, जिनके पास सैंकडों शोध छात्र मार्गदर्शन हेतु प्रतिवर्ष आते हैं, मैं बिना कुछ सम्पर्कके कैसे बात करूँगी ?

एक लम्बे समय तक इसी उधेड-बुनमें रही कि एक दिन भारतीय विद्यामन्दिर शोधप्रतिष्ठानमें श्री नाहटाजीका पधारना हुआ। जहाँतक मुझे स्मरण है, उन दिनों प्रतिष्ठानके द्वारा श्री नाहटाजीकी पुस्तक 'प्राचीन काव्योंकी रूप परम्परा' का प्रकाशन हो रहा था और वे इस ग्रन्थमें नवीन जानकारी सम्मिलित करने हेतु आये थे। उस दिन संस्थाके भूतपूर्व संचालक श्री अक्षयचन्द्रजी शर्मा और वे सीधे ही पुस्तकालयमें आकर

कई पुस्तकें खडे-खडे ही माँगने लगे। मुझे यह पहिचानते देर न लगी कि वे ही श्री अगरचन्दजी नाहटा हैं। श्री नाहटाजीके निकटसे दर्शन करनेका वह मेरा प्रथम अवसर था।

मैंने श्री नाहटाजीसे बैठनेका निवेदन किया और जो पुस्तकें उन्होंने चाही, उनके समक्ष प्रस्तुत कर दी। पर्याप्त समय तक श्री नाहटाजी वे पुस्तके देखते मात्र ही नही रहे, अपितु उनमेंसे कई सन्दर्भोंको उन्होंने अपनी जेवसे कागज और पेन निकालकर लिख भी लिया। मुझे लगा कि प्रत्येक व्यक्ति इसी तत्परतासे ज्ञानार्जन करे तो उसके पास अक्षय ज्ञान भण्डार सहज रूपसे सचित हो सकता है। श्री नाहटाजी उस दिन चले गये और मैं उनके सम्मुख अपने विषयके सम्बन्धमें कुछ भी निवेदन न कर पाई। परीक्षा हेतु मुझे उनके यहाँसे जो जानकारी और सामग्री चाहिये थी, मै समय-समयपर अवश्य मँगाती रही। अभी तक मेरा सकोच दूर नही हुआ था।

एम० ए० परीक्षा उत्तीर्ण करनेके पश्चात् जब मैं 'राजस्थानी लोक महाभारत'पर शोधप्रबन्ध हेतु प्रारूप बना रही थी, उस समय मुझे श्री नाहटाजीके मार्गदर्शनकी अत्यन्त आवश्यकता थी। मैंने बीकानेरके विद्वानोसे अपने विषयके सम्बन्धमें जब भी चर्चा की, प्रत्येकने एक स्वरसे श्री नाहटाजीका नाम बताया। अब सिवाय सम्पर्क साधने के अन्य कोई मार्ग रह ही नही गया था। मैं साहस बटोर कर श्री नाहटजी के यहाँ पहुँची।

श्री नाहटाजी अपने निजी अभय जैन ग्रन्थालयमें शताधिक पुस्तकोके मध्य वनियान पहने हुए एक दिव्य साधककी भाँति बैठे पत्र-पत्रिकाओका अध्ययन कर रहे थे। प्रवेश द्वारकी ओर उनका मुख था, सामने सत्तर-अस्सी पत्र-पत्रिकाएँ विखरी पडी थी और वे अपने हाथमें नागरी प्रचारिणी पत्रिकाका अक लिये हुए उसका अध्ययन कर रहे थे। मुझे देखते ही उन्होंने पत्रिकाको उल्टा रख दिया और बडे ही वात्सल्य भावसे बैठनेको कहा।

श्री नाहटाजीकी स्नेह सिक्त वाणीमें मुझे पितृ तुल्य वात्सल्यकी झलक मिली और व्यवहारमें अत्यधिक नम्रता, सम्भवत जिसकी मैंने कल्पना भी नही की थी। मेरे मनमें विचार आया क्यो न मैं यहाँ पहले आ गई ? जब मैंने श्री नाहटाजीके समक्ष शोधप्रबन्धके प्रारूपकी समस्त कठिनाइयोके सम्बन्धमें निवेदन किया तो वे एक गुरुकी भाँति मेरे साहसको बढाते हुए बोले, "इसमें कठिनाईकी क्या बात है ? लो मैं तुम्हें अभी लिखाता हूँ, लिखो।" मैंने उनके निर्देशनके अनुसार समस्त प्रारूप थोडी सी देरमें ही लिख लिया और जहाँ मेरे लिखनेमें त्रुटि रही, वहाँ-वहाँ भी उन्होंने सशोधन करवा दिया।

जब मैंने पूरा प्रारूप तैयार कर लिया तो मेरे समक्ष निर्देशकका प्रश्न उत्पन्न हुआ। सौभाग्यसे उन्होंने पूछ ही लिया कि तुम्हारा निर्देशक कौन है ? यदि कोई तुम्हारा निर्देशक निश्चित न हुआ हो तो मैं डॉ० भानावतको पत्र लिख देता हूँ। मुझे अँधेरेमें भटकती हुई को जैसे प्रकाश मिल गया हो, ऐसा अनुभव हुआ। मैंने तो मात्र इतना हो कहा कि आपकी बहुत कृपा होगी। उत्तरमें उन्होंने कहा, "तुम चिन्ता न करना। किसी भी प्रकारकी कठिनाई हो तो पूछनेके लिए किसी भी समय आ जाना और इस पुस्तकालयको अपना ही समझकर इसका उपयोग करना। तुम न आ सको तो किसीको भी भेज देना, मैं समस्त उपयोगी सामग्री भिजवा दूंगा।"

इस भेंटके उपरान्त श्री नाहटाजी ने मुझे अनेक बार गुरुवत् ज्ञान दिया तो पथ प्रदर्शककी तरह अनेक बार मार्गदर्शन भी। जब-जब मुझे कठिनाई हुई, उन्होंने मेरी प्रत्येक समस्याको वात्सल्य भावसे सुलझाया और वाछित ग्रन्थोको सदैव उपलब्ध किया।

वस्तुत. आज राजस्थानके इस मनीषीके सदृश कितने ऐसे विद्वान् हैं, जो इस प्रकार सौजन्य और उदारताके साथ मार्गदर्शन देते हैं। सम्भवत इसी प्रकारकी सहायताके फलस्वरूप आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदीने श्री नाहटाजी को 'औढरदानी' के नामसे सम्बोधित किया है।

आज भी जब मैं श्री नाहटाजी के दर्शन करती हूँ मुझे उस भेंटका स्मरण हो आता है और मैं रह-रहकर सोचती हूँ कि श्री नाहटाजी जितने बडे विद्वान् हैं, उतने ही नम्र और उदारमना व्यक्ति भी। वे मेरे शोध-प्रबन्ध हेतु मेरे गुरू और मार्गदर्शक है और जो कुछ कर रही हूँ वह उन्हीकी सहज अनुकम्पाका परिणाम है। उन्होने मेरा साहस न बढाया होता और डा० भानावतको पत्र न लिखा होता तो मेरा यह कार्य कभी भी पूरा नही हो पाता।

मै राजस्थानके इस महनीय सरस्वती-पुत्रकी दीर्घायु हेतु ईश्वरसे मगल कामना करती हुई यही निवेदन करना चाहूँगी कि वे अपनी ज्ञान राशिसे छात्र-छात्राओको उद्बोधित करते रहें और सभी अनुसधित्सुओ से भी साग्रह कहना चाहूँगी कि वे इस ज्योति-पुरुषसे सदा-सर्वदा आलोक लेकर अपने अज्ञानको दूर करते रहें।

पागाँ पेचाँदार, बागयो बीकानेरको

श्री बालकवि बैरागी

सन् सम्वत् तो मुझे याद नही रहा पर बाकीको मैं भूल नही पाया हूँ। उज्जैनमें 'मालव लोक साहित्य परिषद्'की ओर से मेलेके विशाल मचपर मालवी कविसम्मेलन था। यह कवि-सम्मेलन हर साल आयोजित होता है और मालवीके नये पुराने कई कविगण इसमें कविता पाठ करते हैं। मेला लगता है क्षिप्राके किनारे और भीड उसमें इतनी रहती है कि सामान्यतया आप मान नही सकेंगे। मैं कहूँ कि कोई चालीस-पचास हजार नर-नारी इस कवि-सम्मेलनको रातभर सुनते हैं, तो आपको कैसा लगेगा? दूर-दूर देहातोंसे बैलगाडियाँ जोत कर कुटुम्ब सहित आये हुए किसान, उनके बच्चे, उनके परिजन आसपास लगे कस्बो और खेडोंके अधकचरे पढे लिखे नौजवान, माँ बहिनें, बाबूलोग और सरकारी नौकर चाकर तथा नेता-ऐता और न जाने कौन-कौन लोग, साहित्य मर्मज्ञ और आलोचक, सब इस कवि-सम्मेलनमें जुटते हैं और मैंने कहा न कि सारी रात सुनते हैं। सूरजकी पहली किरण कब आती है और कार्तिक महीनेका कोई दिन कब गरम हो जाता है, इसका अनुमान उस दिन लग नही पाता है। मालवीका मेह कभी रिमझिम तो कभी धाड मार बरसता रहता है, कवियो और जनताके बीच कोई औपचारिकताकी दीवाल नही रह पाती है। तब लगता है कि भाषाकी अपनी भी एक अनौपचारिकता होती है। भाषा वस्तुत दूरी और निकटताके लिए बहुत बडा नही, सबसे बडा तत्त्व है यह सिद्ध होता है। ऐसे कवि-सम्मेलनका अध्यक्ष कौन हो इसकी तलाश मालवी परिवारके लोग हरसाल करते हैं। पूरे साल यह खोज हम मालवीके कवि लोग सारे देशमें घूमते-फिरते करते रहते है और अपने-अपने प्रस्तावोपर विचार करते हैं। अपनी-अपनी पसन्दके व्यक्तियोके लिए लडते हैं, जिद करते हैं और जो व्यक्ति तय होता है उसको पूरा सम्मान देकर उसके चरणोमें बैठकर कविता पाठ करते हैं। नई, पुरानी, कच्ची, पक्की, फूहड, अधकचरी, परिपक्व, श्रेष्ठ और सब तरहकी रचनाएँ पूरी मस्तीसे पढते हैं। यह कवि-सम्मेलन वर्ष भर मालवीके लिए दिशा-निर्देश करता है। कवि सोचते है कि वे किधर जा रहे हैं और समाजके साथ उनकी सगत कैसी है।

बरसो पहिले इसी कवि-सम्मेलनके लिए मालवीके मनीषी दादा श्री चिन्तामणि उपाध्यायने हम सब कवियोको नोटिस दी कि 'इस बार तुम किसी अध्यक्षकी तलाश नही करोगे।' दादाका हुकुम। सब चुप हो गये।

मैंने साहस करके पूछ ही लिया कि 'हमारा यह अधिकार हमसे इस बार छीना क्यो जा रहा है। हम लोग कवि-सम्मेलनोमें साल भर घूमकर एक यही काम तो मनसे मालवीके लिए करते है कि हमारा आशीर्वाददाता विद्वान् हमको ठीक-ठीक मिल सके।' दादाने पूरे आत्म-विश्वाससे कहा कि 'इस बार अध्यक्ष मैंने तय कर लिया है और चाहे जो हो वही व्यक्ति आयेगा।' फिर उनसे पूछा 'दादा! आखिर उस तोप का नाम तो बताओ जो इस बार अभीसे हमारी छातीपर तन गई है, ऐसी कौनसी आकाशगगाका बेटा आपने बुलानेका सोचा है'। दादा मुस्कराये और मालवीके एक लोकगीतकी एक पक्ति उत्तरमें कह गये 'पागाँ पेचाँदार, वाण्यो बीकानेर को'। हम कविगण बैठे चाय-चुस्की कर रहे थे। दादाने हमारी जिज्ञासाको समझकर कहा 'यह तय किया है कि श्री अगरचन्द नाहटा इस बार हमारे अध्यक्ष होगे, और यह इच्छा तो मेरी है ही पर इस नाम का सुझाव मालवीके आदि-पुरुष पं० सूर्यनारायणजी व्यासकी तरफसे आया है और अब तुम सबको यह नाम स्वीकार करना ही होगा'। हम सब लोग सिटपिटा गये चुप हो गये, सूर्यनारायणजी व्यास और चिन्तामणिजी उपाध्याय जहाँ बीचमें आ जायें मालवीके कलमगर हर बात सिर झुककर स्वीकार कर लेते हैं। अपनी अच्छी से अच्छी कविताओको इन महानुभावके कहनेसे फाडकर फेंकनेमें भी हम लोग गौरवका अनुभव करते हैं। बस तबसे हम लोग अगरचन्दजी नाहटाके लिए प्रतीक्षातुर हो गये। नाम तो सुना हुआ था। यदा-कदा कई एक लेख पढ-पढा भी लिए थे परन्तु नाहटाजी को देखा नही था। न फोटो, न फ्रेम, उनके बारे में यहाँ-वहाँ पूछताछ करते रहे। कोई कहता था कि भयंकर पगडी धारी एक सेठ है। कोई कहता था कि मूँछोपर बल देना उनकी आदत है। कोई कहता था कि इतने पढ़े लिखे है और कोई कहता था कि उनका पढाई-लिखाईसे कोई रिश्ता ही नही है। किसीने लोकसाहित्यका उनको दिवाकर बताया तो किसीने यह फतवा दिया कि नाहटाजी भीषण रूपसे जैनी है। सिवाय जैनके वे कुछ नही है, उनकी हर अदासे जैनीपनकी गंध आती है, वर्णन सुनते रहे और उनके बारेमें हम लोग अनुमान लगाते रहे।

मेलेका दिन आया, नाहटाजी उज्जैन पधारे। मैं किसी दूसरे कविसम्मेलनसे घूमता फिरता उज्जैन आने वाला था। दूसरे कविगणभी अपने-अपने कार्यक्रम निपटाकर आनेवाले थे। इस सम्मेलनसे हमारा अपनापन और घरोपा इतना है कि कोई कवि रातको चार बजे भी मचपर पहुँचा तो भी चलेगा, पारिश्रमिक की किसीकी कोई जिद नही होती, जो जब भी आता है पूरी मस्तीसे आता है।

आठ बजेसे आयोजन शुरू हो गया। मैं कोई दस बजे मंचपर पहुँचा था। देखा टखनोंसे ऊपर तक चढी हुई धोती, लम्बा बन्द गलेका भूरा कोट, आँटे और पेचो वाली मोटी पगडी, गहरी खिंची हुई तनी मूँछे, चश्मा और पूरा रौबीला बडासा मुँह-माथा लिए एक आदमी अपने सेठो जैसे साहूकारी अन्दाजमें गादी पर रखे हुए लोटके ऊपर बैठा हुआ है। लोट चपटा होकर दब गया था। शरीरका वजन भी तो पड रहा था न। चुप चाप दादासे पूछा 'क्या यही आपका बीकानेरी बनिया है'। दादा मुस्कराये और बोले 'हाँ'। मैंने पूछा 'अध्यक्षीय भाषण हो गया क्या'। वे चिढे, बोले 'जब समयपर नही आया है तो कार्यवाहीपर पूछनेका कोई अधिकार तेरा नही है। जब अपना नम्बर आये तब कविता पढ देना। समझ लेना कि आजका अध्यक्ष सारी कविताको पानी पिला देगा'। नाहटाजी के व्यक्तित्वका आतक तो मुझपर पडही चुका था। दादाने उनकी मेधाका सिक्काभी मुझ पर बैठा दिया। कवि सम्मेलनमें कविता पाठ शुरू हो चुका था। जनतामें रसकी हिलोरे बराबर उठ रही थी। मैंने गौरसे और गहराईसे देखा तथा पाया कि अध्यक्ष महोदय पर किसी कविता का कोई असर नही है। और वे किसीभी कवितापर कोई प्रतिक्रिया या दाद व्यक्त नही कर रहे हैं। लगा कि कैसे अरसिक आदमीसे पाला पडा है। कोई बारह बजे तक मालवीके वे सब कविता पढगये जो कि प्रति वर्ष नये-नये लिखना शुरू करते है—अपनी प्रारभिक रचनाएँ। हमलोग इसको प्रोत्साहनका दौर कहते है।

यह नई फसलकी बुवाई होती है। धरतीको हम लोग इस प्रकार बीज देते हैं और अच्छी फसलकी आशा करते हैं। आधी रातके बाद मालवीके गभीर कवियोका कविता-पाठ शुरू हुआ। पहिले कविकी दूसरी या तीसरीही पक्तिपर नाहटाजी चश्मा उतारकर लोटसे नीचे उतर गये और गादीपर सरककर बैठ गये। लगा कि एक असुविधा उनको कही है। फिर उनके मुंहसे बोल फूटने लगे और वे चिन्तामणिजीसे कविके बारेमें जानकारी लेने लगे। कविता समाप्त होतें-होते वे अध्यक्ष नही रहकर श्रोता बन चुके थे और पूरे खुल गये थे। कोई दो बजे उन्होने कहा "मै फिर भाषण देना चाहता हूँ, मुझे कुछ बोलना है।" मुझे तो पता भी नही था कि पहिले वे क्या बोले थे। दादाने उनसे निवेदन किया कि वे शेष दो तीन कवियोंको और सुनलें और फिर आशीर्वाद दें। वे मान गये। हम सब कविता पाठका एक दौर पूरा कर चुके तो वे बरबस माइकपर आ गये। उनका अधिकार तो था ही माइकपर आकर उन्होने राजस्थानी और मालवी साहित्यके लिये बोलना शुरू किया। लगा सागरकी एक-एक लहर किनारेसे ठट्ठ मारकर टकरा रही है, किनारेका कण-कण भीग रहा है। वे बोले जा रहे थे। कुछ अनुमान नही लगा कि वे कितनी देर बोले पर वे अनथक बोले जा रहे थे। अमूमन कवि सम्मेलनोंमें जनता अध्यक्षको बडे प्रेमसे छूट कर दिया करती है। परन्तु उनका बोलना कविता से कम प्रभावशाली नही था। यहाँ तक कह गये कि 'में मालवीको राजस्थानीकी बेटी मानता हूँ और इस नाते इसके पितृवंशका परिजन होता हूँ। मुझे अपार प्रसन्नता है कि मेरी बेटीका कुल ठीक है और उसके बच्चे उसकी भली प्रकार सेवा कर रहे हैं। मेरी बधाई और आशीर्वाद। वास्तवमें आजका दिन मेरे जीवनका एक सार्थक दिन है और मैं इस बातको कभी नही भूल सकूंगा कि मैंने एक सही साहित्यिक समारोह को अध्यक्षता की थी। मेरा उज्जैन आना नही, लोक साहित्यकी सेवा करना आज फल रहा है, मुझे मेरी तपस्याका पहिला फल मिला है'। करीब-करीब वे विगलित हो उठे और उनकी बडी-बडी आँखोमें लोक साहित्यका प्राण-परनाला उछल आया, वे बह गये, हम सब बह गये, यहाँ से वहाँ तक सन्नाटा था। लोग समझ नही पारहे थे कि इस यारका उत्तर मालवासे उनको कैसा दिया जायेगा। यह काम तो हम लोगो पर था।

शायद दूसरे दिन सवेरें वे चले गये। मुझे पता नही कि वे कब और कैसे गये पर उस एक अध्यक्षता में वे हम लोगो पर इतना बोझ डाल गये है कि उस बोझको ढोते-ढोते हम कवि लोग निहाल हो रहे है। इस वजन ने कंधोको झुकाया है दुखाया नही। मन करता है वे एक बार फिर मिलें और उनके सामने इन दस पाँच सालोंका हिसाब फिर रख दें, कहें 'ले सेठ यह वह पूजी है जो तेरे गुरसे हमने कमाई है'। पता नही वह दिन कब मिलेगा।

भक्त कवि 'पदमजी'का महान कथा-ग्रन्थ। 'रुक्मणी मगल' मैंने पढा है। मेरे पिता कथा वाचक रहे हैं और उन कथाओमें यत्र-तत्र सेठका चित्र खीचा गया है। 'पदमजी' की रस-पगी लेखनी ने मेरे दिल दिमागपर भारतके एक बनियेकी मूर्ति बना रखी है। मुझे लगता है नाहटाजी वैसे ही सेठ हैं, वैसे ही बनिये हैं। मुझे क्या मतलब है कि वे कितने पढ़े-लिखे है और कैसा लिखते-पढते हैं। इससे मेरा क्या बनता बिगडता है कि वे जैनी है या वैष्णव। उनके माथे पर सेर सूत बधा है, उनकी मूछो पर बल है, चेहरे पर रौब है पर आँखोमें लोक साहित्यकी करुणा अँजी है।

वे एक बार मिले तो अपनी उम्र हम मालवी वालोको दे गये थे, अबकी बार कभी फिर मिले तो अपनी तपस्या भी दे देंगे। भगवान हमें इस योग्य बनाये। सुनते है बनिया देनेमें बडा कजूस होता है पर लोक-कथाओमें मैंने बनिये का जगह-जगह लुटता देखा है, नाहटाजी दे भी देते हैं और लुट भी जाते हैं।

●

सौजन्य मूर्ति नाहटाजी

श्री रामेश्वरदयाल दुबे

सस्ता साहित्य मंडलकी ओर से जब आचार्य विनोवाभावेको उन्हीपर आधारित एक ग्रन्थ उस दिन भेंट किया गया, तब उन्होने कहा था कि इस प्रकारके समारोहोको मैं इस रूपमें लेता हूँ कि किसी सेवककी सेवाओको जनताने स्वीकार किया है और उनका आदर किया है। यह लोक स्वीकृति उचित भी है और आवश्यक भी।

कभी-कभी सोचता हूँ कि क्या यह आवश्यक न होगा कि जीवनकालमें ही यह अल्प संतोष व्यक्तिको दिया जाय। मृत्युके बाद होने वाले शोक प्रस्तावो और स्मृति-समारोहोका मूल्य कितना भी हो व्यक्तिके लिए उनका कोई अर्थ नही रहता। इसलिए ऐसे समारोहोको मैं आदरकी दृष्टिसे देखता हूँ। श्रेष्ठिवर श्री अगरचन्दजी नाहटाजी के गहन अध्ययन और प्रकाण्ड विद्वत्ताके सबंधमें बहुतसे लोग प्रकाश डालेंगे। मैं तो यहाँ उनके मानवीय रूपपर एक दो संस्मरण देना चाहता हूँ।

जहाँ तक स्मरण है, मेरी उनसे प्रथम भेंट सिलचरमें हुई थी। लम्वा, ऊँचा कद, मारवाडी पगडीमें उनका व्यक्तित्व वडा ही प्रभावशाली लगा था। किन्तु उनके सरल, सौम्य स्वभावने उस प्रभावको आत्मीयतामें वदल दिया था। सुनता था जो जितना बडा होता है उतना ही वह विनम्र होता है। उस दिन श्री नाहटाजी इसका एक उदाहरण सिद्ध हुए थे। इस शोध-पडितके गवेषणापूर्ण निवधों को जब-जब पत्र-पत्रिकाओंमें पढता हूँ, तब सोचने लगता हूँ कि यह कैसा आदमी है कि जिसे पुरानी पोथियोमें डूबनेमें इतना आनन्द आता है। सिलचरकी वह शाम भूल नही सकता। जब मैं उनकी स्नेह वर्षामें खूब भीगा था।

अभी कुछ वर्ष पहले श्री नाहटाजी भारत जैन महामंडलके किसी समारोहमें सम्मिलित होनेके लिए वर्धा पधारे थे। तब राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके प्रागण में भी पधारनेकी कृपा की थी। कार्यकर्ताओकी एक सभा बुलाकर हमें उनका सम्मान करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। समितिके कार्य कल्याणको देखकर उन्हें वडी प्रसन्नता हुई थी और उन्होने अपना सन्तोष व्यक्त किया था।

आजका साहित्यकार डिगरियोके आधारपर विद्वान् माना जाता है। किन्तु श्री नाहटाजी इसके प्रत्यक्ष अपवाद हैं। उनके मार्ग-दर्शनसे लाभ उठाकर न जाने कितने छात्र डाक्टर (पी-एच० डी०) वन गए। श्री नाहटाजी को कुछ वननेकी फुरसत ही नही मिली। वे तो वनानेमें ही सुख पाते रहे।

ऐसे श्रेष्ठिवर नाहटाजी के प्रति मैं अपनी विनम्र श्रद्धा व्यक्त करता हूँ।



सच्चे साधक श्री अगरचन्दजी नाहटा

डॉ० इन्द्रचन्द्र शास्त्री

धर्म, राजनीति, कला, शिक्षा आदि प्रत्येक क्षेत्रमें दो प्रकारके व्यक्ति मिलते है। कुछ उसे आजीविकाके रूपमें अपनाते है और कुछ साधनके रूपमें। प्रथम मनोवृत्ति सम्बद्ध क्षेत्रको कलुषित कर डालती है। उस समय वह साधन बन जाता है और आजीविका अथवा अन्य स्वार्थ साध्य। फलस्वरूप तदनुसार परिवर्तन और सम्मिश्रण होने लगते हैं।

धर्मके क्षेत्रमें जीवन शुद्धिकी बात गौण हो गई और अनुयायियोके सग्रहकी मुख्य। धर्मजीवी वर्गने साधारण जनताको आकृष्ट करनेके लिए अपने महापुरुषोंके साथ चमत्कारपूर्ण घटनाएँ जोडनी शुरू की और मिथ्या आडम्बर उत्तरोत्तर बढने लगे। दर्शनशास्त्र सत्यका अन्वेषक न रहकर शास्त्रार्थोंसे घिर गया। प्रति पक्षीपर विजय उसका मुख्य तत्त्व बन गया और इसके लिए छल, जाति निग्रह, स्थान आदि अनुचित उपाय भी काममें लाए जाने लगे।

कला राजदरबारकी वस्तु बन गई। सुन्दरियाँ वहाँ जाकर नृत्य करने लगी। चित्रकार, सगीतज्ञ तथा कवि अपनी-अपनी प्रतिभाका प्रदर्शन करने लगे। सभीका ध्यान सत्तारुढ सामन्तको प्रसन्न करनेपर रहता था। जो ऐसा नही कर पाता था, उसे गरीबीमें दिन काटने पडते थे। राजनीतिमे कुर्सियोके लिए प्रतियोगिता प्रारम्भ हो गई और राष्ट्रहित खटाईमें पड गया।

दूसरी ओर वह युग भी सामने आता है जब ये बातें आजीविकाका साधन नही बनी थी। उपनिषद् कालमें ऋषि शिष्योको नही खोजते थे, प्रत्युत शिष्य उन्हें खोजते थे। जनक सरीखे राजा ब्रह्मज्ञानी थे और अपने हाथसे खेती करते थे। याज्ञवल्क्य ऋषिको आत्माका स्वरूप जाननेके लिए उनके पास आना पडा। वाचस्पति मिश्रने सभी दर्शनोपर टीकाएँ लिखी हैं और निष्पक्ष विवेचकके रूपमें उनका स्थान सर्वोपरि है। कहा जाता है कि एक बार उन्हें राजाने आमंत्रित किया। नदीतटपर पहुचे तो नाविक ने पार उतारनेके लिए पैसे मागे, किन्तु उनकी जेबमें कुछ नही था। नाविक ने कहा, बिना पैसे काम नही चलेगा। यह सुनकर वे वापिस लौट आए और राजा से मिलनेका इरादा ही छोड दिया।

नाहटा जी से मेरा परिचय तीस वर्ष से भी पुराना है। विद्याके प्रति उनका झुकाव आजीविका लेकर नही हुआ। प्रारम्भ से ही सम्पन्न परिवारमें पले। विद्याको आयका साधन बनानेकी आवश्यकता नही थी। फिर भी इस ओर झुकाव एक सात्त्विक निष्ठाको प्रकट करता है। भगवद्गीतामें दैवी सम्पद्के जो २६ गुण बताए गए हैं, उनमें तीसरा है "ज्ञानयोगव्यवस्थिति"। नाहटा जी इसके साकार रूप हैं।

इससे भी बडी बात उनकी सरलता एव गुणग्राहकता है। मैंने उन्हें अनेक समारोहोमे देखा है। उत्तेजनाके वातावरणमें भी वे शान्त रहे। पूछनेपर सच्ची बात प्रकट कर दी, किन्तु खण्डन-मण्डन मे नही उलझे। प्रत्येक व्यक्तिकी अच्छी बातको समर्थन देना तथा गुणोंका अभिनन्दन करना उनका स्वभाव है। इस बातकी वे परवाह नही करते कि वे कितने ऊँचे आसन पर हैं।

एक बात और है। प्राय विद्याजीवी वर्ग ऊँचे-ऊँचे आदर्शोंकी बातें करता है, स्वीकृत सिद्धान्तकी डीगें हाकता है। कहता है, इसमें विश्वकी समस्त समस्याओका समाधान है, किन्तु स्वय कुछ नही करता। उसकी धारणाएँ वाणी तक सीमित होती हैं। शास्त्रीय शब्दोमें कहा जाए तो उसमें दीपक सम्यक्त्व होता है। जहाँ दूसरोको रोशनी देने पर भी अपने तले अधेरा है। इसके विपरीत नाहटा जी में जो सम्यक्त्व है, उसे कारक कहा जाएगा, जहाँ विश्वास वाणी से आगे बढकर कुछ करनेकी प्रेरणा दे रहा है। वे सच्चे श्रावक

हैं। व्रतोंका पालन करते है। समय-समय पर त्याग एवं तपस्या में लगे रहते है। ज्ञानके सच्चे उपासक है। जैन परिभाषा में वे सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चारित्र्य तीनो के आराधक है।

मेरी हार्दिक कामना है कि वे चिरजीवी हो। धनिक वर्ग उनसे ज्ञानोपासनाकी प्रेरणा प्राप्त करे, विद्याजीवी वर्ग त्यागकी और साधक वर्ग सच्ची साधनाकी, जहाँ प्रत्येक क्षेत्र साधन न रहकर अपने-आप में साध्य बन जाता है।



सरस्वती और लक्ष्मीका अनोखा संयोग

डॉ० बी० पी० शर्मा

सन् १९५३ अक्टूबर मासमें स्व० डॉ० बनारसीदास जैन के निर्देशनमें मैंने पृथ्वीराज रासो (लघु संस्करण) का सम्पादन प्रारम्भ किया था। काम कठिन एव परिश्रम साध्य था। पाठसशोधनकी कार्य प्रणालीसे मैं सर्वथा अनभिज्ञ और प्राचीन पाण्डुलिपियोंके पढनेका अनभ्यासी। परन्तु स्व० डॉ० जैन की यह प्रबल इच्छा थी कि रासो की चारो वाचनाओ में से किसी एक वाचनाका भी पाठ सशोधनकी दृष्टि से सम्पादन हो जाए तो हिन्दी साहित्य के आदि ग्रन्थ—रासो के प्रकाशन से हिन्दी साहित्यकी एक विशेष क्षति-पूर्ति होगी और भाषा विकासकी दृष्टि से हिन्दी जगत् को एक विशेष लाभ पहुँचेगा। डॉ० जैन की इस प्रबल आकाक्षाके पीछे एक विशेष कारण था। उन्होने पजाब यूनिवर्सिटी लाहौरके अपने अध्यापन काल (१९२६-१९४७) में उक्त विश्वविद्यालयके तत्कालीन वाईस चान्सलर श्री ए० सी० वूलनरकी प्रेरणासे रासो का पाठ सशोधनकी दृष्टि से सम्पादन कार्य प्रारम्भ किया था। (डॉ० वूलनर सस्कृतके प्रसिद्ध जर्मनी विद्वान् थे) रासो साहित्यके विशिष्ट विद्वान् वयोवृद्ध प० मथुराप्रसाद दीक्षित (हिमाचलमें बघाट-नरेशके राजगुरु) इस कार्यमें उनके सहयोगी थे। इस सम्बन्धमें डॉ० जैनने उक्त विश्वविद्यालयके तत्त्वावधानमें साहित्य सदन अबोहर, काशी नागरी प्रचारिणी सभा एव बीकानेर आदि अनेक स्थानोपर जाकर रासोकी विभिन्न वाचनाओ की पाण्डुलिपियोका अध्ययन किया था और कुछ पाण्डुलिपियाँ लाहौर विश्वविद्यालयमें भी मगवाई गई थी। इस कार्य में डॉ० ए० सी० वूलनरकी, जो इस खोज-योजनाके प्रेरणा-स्रोत थे, १९३८ में अचानक मृत्यु हो गई और मासोपरान्त प० मथुराप्रसाद दीक्षित भी स्वर्ग सिधार गए। एकाकी रह जाने के कारण डॉ० जैन का जोश भी ठण्डा पड गया। अगस्त सन् १९४७ में देश विभाजन के समय डॉ० जैन द्वारा सभी एकत्रित रासो सम्बन्धी खोज-सामग्री लाहौर में डॉ० जैनके कृष्णनगर स्थित मकानके साथ ही अग्निमें जलकर स्वाहा हो गई। जैन जी जान बचाकर अपने मूल निवास स्थान लुधियाना आ गए। इन्ही दिनो मैं भी लाहौरसे फटेहाल लुधियाना पहुँचा और संयोगवश डॉ० साहबके मुहल्लेमें ही मुझे भी किराएका मकान मिला। भाग्यवश यहाँ आर्य कालेज लुधियानामें मुझे अध्यापन कार्य मिल गया था। पडौसी के नाते शनै-शनै डॉ० जैनसे परिचय बढता गया। जैसा कि स्वाभाविक था, हमारी वार्तालापका विषय साहित्य चर्चा ही रहता। वे मेरी साहित्यिक अन्तरुचि एव प्रवृत्तिको परखते एव टटोलते रहते। इनकी सगतिसे मुझे एक विशेष आनन्द मिलता। उनका मुझपर पुत्रवत् स्नेह था और मेरी उनपर पितृवत् श्रद्धा

थी। डॉ० जैन रासोके विधिवत् सम्पादनकी आवश्यकतापर बल देते रहते। उनके अन्तर्मनमें यह बात खटकती थी कि हिन्दी साहित्यका आदि ग्रन्थ रासो पाण्डुलिपियोमें ही बन्द पडा है। अन्तत १९५३ अक्टूबर में इस कार्यको मैंने अपने हाथ में लिया, यद्यपि पजाबके विश्वविद्यालयीय कुछ हिन्दी-विद्वानोने मुझे इस विषयमें निरुत्साहित किया कि इतना कठिन परिश्रम साध्य काम तुमसे अकेले नही हो सकेगा, जबकि काशी नागरी प्रचारिणी सभा जैसी उच्च सस्था द्वारा नियुक्त सम्पादक मण्डल भी इस कार्यको पूर्ण नही कर सका था। इधर जैन जीके अन्तर्मनको स्व० डा० ए० सी० वूलनरकी इच्छा (रासोका विधिवत् सम्पादन) कचोट रही थी। परिणामत रासो-लघुसंस्करणके विधिवत् सम्पादनका पूर्वरूप तैयार हो गया और पजाब विश्वविद्यालय-सोलनको स्वीकृति के लिए भेज दिया। १९५४ अप्रैल में इस स्वीकृतिके मिलनेके साथ ही अचानक हृदयगति रुक जाने से डॉ० जैन का निधन हो गया। मैं स्तब्ध रह गया। जीवनमें मैं कभी भी इतना व्यथित नही हुआ था जितना इस समय। मैं एक पिता के स्नेह एव सच्चे नि स्वार्थी निर्देशक से वचित हो गया था। सब कुछ खाली-खाली एवं शून्य दिखाई देने लगा। कारण–मैं बाल्य काल से ही माता पिता के दुलार प्यार से शून्य रहा। आश्रयहीन और बेसहारे, इधर-उधर भटकते सस्कृत पाठशालाओमें दूसरेके सहारेसे भाग्यवशात् मैं कुछ विद्याध्ययन कर सका था। निराश हो गया था। सोचता कि अब यह काम सिरे नही चढ सकेगा। क्योकि पजाबमें कोई ऐसा विद्वान् नही था जिससे इस विषय में मैं विचार विमर्श भी कर सकता। चार पाँच मास योही निठल्ले बैठे बीत गए।

डूबतेको कभी कभार विधिवशात् सहारा मिल जाया करता है। स्व० जैन साहित्यिक चर्चा करते समय प्राय श्री अगरचन्द जी नाहटा का जिक्र किया करते थे। कई दिनोके आत्मिक चिन्तनके पश्चात् श्री नाहटा जी को इस कार्य में सहायक होने के लिए मैंने पत्र लिखा। तत्काल इनका मुझे उत्साहवर्धक उत्तर मिला। जाम हुई गाडी फिर से चलने लगी। इसके पश्चात् पत्र व्यवहार द्वारा एक ऐसी आत्मीयता पैदा हुई कि नाहटाजी रासो सम्पादन सम्बन्धी प्रत्येक कठिनाईका समाधान करते। मुझे सबसे बडी कठिनाई अनूप सस्कृत लाइब्रेरी बीकानेर से अध्ययनार्थ मँगवाई गई तीन पाण्डुलिपियोके पढने में रही। जो पाठ मुझसे पढा नही जा सकता था उसे मैं मोमी कागजपर वास्तविक प्रतिलिपि (फोटोस्टेट) करके भेज देता था। नाहटा जी तत्काल उसे सही पढकर आधुनिक लिपिमें लिखकर मुझे भेज देते। इस प्रकार रासो सम्पादन सम्बन्धी प्रत्येक औघट घाटीको नाहटा जी के सहयोग से मैं पार कर सका। रासोका लघुसस्करण छपकर अब विद्वानो के हाथो में है। नाहटा जी की इस सामयिक एव नि स्वार्थ सहायताका मुझपर कितना भार है—मैं ही इसे अनुभव कर सकता हूँ।

जून १९७१ तक नाहटाजीके मैं साक्षात् दर्शन नही कर सका था। गत १८ वर्षों के अन्तराल में हिन्दी शोधपत्रिकाओमें छपनेवाले अनेक गवेषणा पूर्ण लेखो एव आलोचनात्मक निबधोके अध्ययन द्वारा ही मेरा इनसे सम्बन्ध रहा। इनके प्रति मेरी एक विशेष आस्था उत्तरोत्तर पनपती रही। इन्ही दिनो मुझे सत रविदास-वाणीकी खोजके लिए बीकानेर जानेका अवसर मिला।

नाहटाजीके साक्षात् दर्शनो से मैं गद्गद् हो उठा। ऐसा सौम्य एवं नम्र व्यक्तित्व बहुत ही कम व्यक्तियोमें मुझे देखनेको मिला है। व्यापारी वर्ग से सम्बन्धित रहते हुए भी इनकी साहित्य सेवा अद्वितीय एव अमूल्य है। हिन्दी साहित्यकी अनेक उलझनें इनके परिश्रमसे सुलझ पाई हैं, पाण्डुलिपियोमें पडे अनेक अमूल्य ग्रन्थोका इनके अथक परिश्रम एव प्रयत्नोसे प्रकाशन हो सका है। भारतके विभिन्न विश्वविद्यालयोके शोधार्थी छात्रोको इनका अमूल्य एवं नि स्वार्थ सहयोग मिलता है। साहित्य सेवा, समाज सेवा एवं परोपकार

है। व्रतोका पालन करते हैं। समय-समय पर त्याग एवं तपस्या में लगे रहते हैं। ज्ञानके सच्चे उपासक हैं। जैन परिभाषा में वे सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चारित्र्य तीनों के आराधक है।

मेरी हार्दिक कामना है कि वे चिरजीवी हो। धनिक वर्ग उनसे ज्ञानोपासनाकी प्रेरणा प्राप्त करे, विद्याजीवी वर्ग त्यागकी ओर साधक वर्ग सच्ची साधनाकी, जहाँ प्रत्येक क्षेत्र साधन न रहकर अपने-आप में साध्य बन जाता है।



सरस्वती और लक्ष्मीका अनोखा संयोग

डॉ० बी० पी० शर्मा

सन् १९५२ अक्टूबर मासमें स्व० डॉ० बनारसीदास जैन के निर्देशनमें मैंने पृथ्वीराज रासो (लघु संस्करण) का सम्पादन प्रारम्भ किया था। काम कठिन एव परिश्रम साध्य था। पाठसशोधनकी कार्य प्रणालीसे मैं सर्वथा अनभिज्ञ और प्राचीन पाण्डुलिपियोके पढनेका अनभ्यासी। परन्तु स्व० डॉ० जैन की यह प्रबल इच्छा थी कि रासो की चारो वाचनाओं में से किसी एक वाचनाका भी पाठ सशोधनकी दृष्टि से सम्पादन हो जाए तो हिन्दी साहित्य के आदि ग्रन्थ—रासो के प्रकाशन से हिन्दी साहित्यकी एक विशेष क्षति-पूर्ति होगी और भाषा विकासकी दृष्टि से हिन्दी जगत् को एक विशेष लाभ पहुँचेगा। डॉ० जैन की इस प्रबल आकाक्षाके पीछे एक विशेष कारण था। उन्होने पजाब यूनिवर्सिटी लाहौरके अपने अध्यापन काल (१९२६-१९४७) में उक्त विश्वविद्यालयके तत्कालीन वाईस चान्सलर श्री ए० सी० वूलनरकी प्रेरणासे रासो का पाठ सशोधनकी दृष्टि से सम्पादन कार्य प्रारम्भ किया था। (डॉ० वूलनर सस्कृतके प्रसिद्ध जर्मनी विद्वान् थे) रासो साहित्यके विशिष्ट विद्वान् वयोवृद्ध प० मथुराप्रसाद दीक्षित (हिमाचलमें बघाट-नरेशके राजगुरु) इस कार्यमें उनके सहयोगी थे। इस सम्बन्धमें डॉ० जैनने उक्त विश्वविद्यालयके तत्त्वावधानमें साहित्य सदन अबोहर, काशी नागरी प्रचारिणी सभा एवं बीकानेर आदि अनेक स्थानोपर जाकर रासोकी विभिन्न वाचनाओ की पाण्डुलिपियोका अध्ययन किया था और कुछ पाण्डुलिपियाँ लाहौर विश्वविद्यालयमें भी मगवाई गई थी। इस कार्य में डॉ० ए० सी० वूलनरकी, जो इस खोज-योजनाके प्रेरणा-स्रोत थे, १९३८ में अचानक मृत्यु हो गई और मासोपरान्त प० मथुराप्रसाद दीक्षित भी स्वर्ग सिधार गए। एकाकी रह जाने के कारण डॉ० जैन का जोश भी ठण्डा पड गया। अगस्त सन् १९४७ में देश विभाजन के समय डॉ० जैन द्वारा सभी एकत्रित रासो सम्बन्धी खोज-सामग्री लाहौर में डॉ० जैनके कृष्णनगर स्थित मकानके साथ ही अग्निमें जलकर स्वाहा हो गई। जैन जी जान बचाकर अपने मूल निवास स्थान लुधियाना आ गए। इन्ही दिनो मैं भी लाहौरसे फटेहाल लुधियाना पहुँचा और संयोगवश डॉ० साहबके मुहल्लेमें ही मुझे भी किराएका मकान मिला। भाग्यवश यहाँ आर्य कालेज लुधियानामें मुझे अध्यापन कार्य मिल गया था। पडोसी के नाते शनै-शनै डॉ० जैनसे परिचय बढता गया। जैसा कि स्वाभाविक था, हमारी वार्तालापका विषय साहित्य चर्चा ही रहता। वे मेरी साहित्यिक अन्तर्रुचि एव प्रवृत्तिको परखते एव टटोलते रहते। इनकी सगतिसे मुझे एक विशेष आनन्द मिलता। उनका मुझपर पुत्रवत् स्नेह था और मेरी उनपर पितृवत् श्रद्धा

थी। डॉ० जैन रासोके विधिवत् सम्पादनकी आवश्यकतापर बल देते रहते। उनके अन्तर्मनमें यह बात खटकती थी कि हिन्दी साहित्यका आदि ग्रन्थ रासो पाण्डुलिपियोंमें ही बन्द पडा है। अन्तत १९५३ अक्टूबर में इस कार्यको मैंने अपने हाथ में लिया, यद्यपि पजाबके विश्वविद्यालयीय कुछ हिन्दी-विद्वानोंने मुझे इस विषयमें निरुत्साहित किया कि इतना कठिन परिश्रम साध्य काम तुमसे अकेले नही हो सकेगा, जबकि काशी नागरी प्रचारिणी सभा जैसी उच्च सस्था द्वारा नियुक्त सम्पादक मण्डल भी इस कार्यको पूर्ण नही कर सका था। इधर जैन जीके अन्तर्मनको स्व० डा० ए० सी० वूलनरकी इच्छा (रासोका विधिवत् सम्पादन) कचोट रही थी। परिणामत रासो-लघुसस्करणके विधिवत् सम्पादनका पूर्वरूप तैयार हो गया और पजाव विश्वविद्यालय-सोलनको स्वीकृति के लिए भेज दिया। १९५४ अप्रैल में इस स्वीकृतिके मिलनेके साथ ही अचानक हृदयगति रुक जाने से डॉ० जैन का निधन हो गया। मैं स्तब्ध रह गया। जीवनमें मैं कभी भी इतना व्यथित नही हुआ था जितना इस समय। मैं एक पिता के स्नेह एव सच्चे नि स्वार्थी निर्देशक से वचित हो गया था। सब कुछ खाली-खाली एवं शून्य दिखाई देने लगा। कारण–मैं बाल्य काल से ही माता पिता के दुलार प्यार से शून्य रहा। आश्रयहीन और बेसहारे, इधर-उधर भटकते सस्कृत पाठशालाओंमें दूसरेके सहारेसे भाग्यवशात् मैं कुछ विद्याध्ययन कर सका था। निराश हो गया था। सोचता कि अब यह काम सिरे नही चढ सकेगा। क्योंकि पजावमें कोई ऐसा विद्वान् नही था जिससे इस विषय में मैं विचार विमर्श भी कर सकता। चार पाँच मास योंही निठल्ले बैठे बीत गए।

डूबतेको कभी कभार विधिवशात् सहारा मिल जाया करता है। स्व० जैन साहित्यिक चर्चा करते समय प्राय श्री अगरचन्द जी नाहटा का जिक्र किया करते थे। कई दिनोंके आत्मिक चिन्तनके पश्चात् श्री नाहटा जी को इस कार्य में सहायक होने के लिए मैंने पत्र लिखा। तत्काल इनका मुझे उत्साहवर्धक उत्तर मिला। जाम हुई गाडी फिर से चलने लगी। इसके पश्चात् पत्र व्यवहार द्वारा एक ऐसी आत्मीयता पैदा हुई कि नाहटाजी रासो सम्पादन सम्बन्धी प्रत्येक कठिनाईका समाधान करते। मुझे सबसे बडी कठिनाई अनूप सस्कृत लाइब्रेरी बीकानेर से अध्ययनार्थ मँगवाई गई तीन पाण्डुलिपियोंके पढने में रही। जो पाठ मुझसे पढा नहीं जा सकता था उसे मैं मोमी कागजपर वास्तविक प्रतिलिपि (फोटोस्टेट) करके भेज देता था। नाहटा जी तत्काल उसे सही पढकर आधुनिक लिपिमें लिखकर मुझे भेज देते। इस प्रकार रासो सम्पादन सम्बन्धी प्रत्येक औघट घाटीको नाहटा जी के सहयोग से मैं पार कर सका। रासोका लघुसस्करण छपकर अब विद्वानो के हाथो में है। नाहटा जी की इस सामयिक एव नि स्वार्थ सहायताका मुझपर कितना भार है— मैं ही इसे अनुभव कर सकता हूँ।

जून १९७१ तक नाहटाजीके मैं साक्षात् दर्शन नही कर सका था। गत १८ वर्षो के अन्तराल में हिन्दी शोधपत्रिकाओमें छपनेवाले अनेक गवेषणा पूर्ण लेखो एव आलोचनात्मक निबधोंके अध्ययन द्वारा ही मेरा इनसे सम्बन्ध रहा। इनके प्रति मेरी एक विशेष आस्था उत्तरोत्तर पनपती रही। इन्ही दिनो मुझे संत रविदास-वाणीकी खोजके लिए बीकानेर जानेका अवसर मिला।

नाहटाजीके साक्षात् दर्शनों से मैं गद्गद् हो उठा। ऐसा सौम्य एवं नम्र व्यक्तित्व वहुत ही कम व्यक्तियोंमें मुझे देखनेको मिला है। व्यापारी वर्ग से सम्बन्धित रहते हुए भी इनकी साहित्य सेवा अद्वितीय एव अमूल्य है। हिन्दी साहित्यकी अनेक उलझनें इनके परिश्रमसे सुलझ पाई हैं, पाण्डुलिपियोंमें पडे अनेक अमूल्य ग्रन्थोका इनके अथक परिश्रम एवं प्रयत्नोंसे प्रकाशन हो सका है। भारतके विभिन्न विश्वविद्यालयोके शोधार्थी छात्रोको इनका अमूल्य एवं नि.स्वार्थ सहयोग मिलता है। साहित्य सेवा, समाज सेवा एवं परोपकार

ही इनके जीवनके तीन लक्ष्य हैं। इनके 'नाहटा कलाभवन' में अनेक अनुपलब्ध पाण्डुलिपियो तथा अलभ्य कलावस्तुओका अद्भुत सग्रह है। लक्ष्मी एव सरस्वतीका अनोखा सयोग नाहटा जी के जीवनमें मुझे देखनेको मिला है। इस कला भवनमें सुरक्षित "सत वाणी सग्रह" से मुझे लगभग सौ नए पदोकी उपलब्धि हुई ऐसे नि.स्वार्थ साहित्य एव समाज सेवी महामानव शतायु हो ऐसी मेरी मगल कामनाएँ इनके प्रति हैं।

●

एक महान् व्यक्तित्व

डा० वी० पी० शर्मा

१ जुलाई को प्रातः स्नानादि से निवृत्त होकर आठ वजे के लगभग नाहटोकी गवाडमें श्री अगरचन्द जी नाहटाजीके द्वार पर आ पहुँचा। घर ढूढनेमें कोई विशेष कठिनाई नही हुई। दरवाजा खटखटाया, एक व्यक्ति धोती बांधे बाहर आया। उसका बाकी शरीर नंगा था, जिससे मालूम होता था कि अभी स्नान किया है और कपडे पहिनने हैं। मैंने नमस्कार करके पूछा, "मुझे नाहटाजीसे मिलना है। "मैं ही नाहटा हूँ।" यद्यपि नाहटाजीसे पुराना परिचय था पर पत्र व्यवहार द्वारा ही। आज से बारह वर्ष पूर्व इन्ही के सहयोगसे मैंने पृथ्वीराज रासोका सम्पादन किया था। श्रद्धा से प्रणाम किया।

नाहटाजी हिन्दी साहित्यके क्षेत्रमें जाने-माने विद्वान् हैं। व्यापारी रहते हुए भी साहित्यसे प्रेम है। सरस्वती और लक्ष्मीका अद्भुत संयोग है। भारतके प्रत्येक कोनेसे शोधार्थी विद्वान् नाहटाजीके कला-भवन में पहुँचते हैं। इनके कला-भवन में प्राचीन कला-कृतियो, प्राचीन पाण्डुलिपियो एव अलभ्य पुस्तकोका भण्डार है। पुस्तको के ढेर के मध्य बैठे नाहटाजी प्रसिद्ध फ्रैंच लेखक वाल्टेयर जैसे प्रतीत होते है।

आप स्वभाव से विनम्र, दानशील एव उदारचित्त विद्वान् हैं। आगन्तुक शोधार्थियो की उत्सुकता से एव प्रसन्नता से प्रसन्न होना, इनके स्वभावकी विशेषता है। मैंने तीन दिन प्रात आठ वजे से साय ६ वजे तक इनके अध्ययन-कक्ष में बैठ कर "सत वाणी संग्रह" पाण्डुलिपि से गुरु रविदासकी वाणी के लगभग १०० पदो प्रतिलिपि की।

दुपहरका भोजन नाहटाजीके घरपर ही चलता था। इन तीन दिनोमें अनेक व्यक्ति यहाँ आये। नाहटाजी यदि बाहर गये होते तो उनके पीछे, इन लोगोंसे मुझे निपटना पडता था। एक स्त्री अपने आठ-दस सालके बालक को लेकर वहाँ आई। उसने राजस्थानीमें कुछ कहा। उसकी बात मेरी समझमें बहुत कम आई। वह नाहटाजीसे अपने स्कूली बालकके लिए पाठ्य-पुस्तकें मागने आई थी। एक पीत वस्त्रधारी साधु आये, विना किसी झिझकके ऊपर आ गये। प्रश्न किया—"नाहटाजी कहा हैं?" "मैंने पूछा" क्यो? "कबूतरोके लिए बजरा खरीदना है—पैसे चाहिए।" तीसरे दिन जयपुरसे ३०० मीलकी यात्रा करके शोधार्थी छात्रा पहुची। नाहटाजी उसे सारे दिन पाण्डुलिपिया एवं अन्य पुस्तकें दिखाते रहे और सायं तक उसके प्रस्तावित शोध प्रवन्धका पूरा खरडा बनाकर उसे सौंप दिया।

मैं तो सोचता हू कि नाहटाजी भारतेन्दु हरिश्चन्द्रसे कम नही हैं। इनकी यह साहित्य-साधना गत चालीस वर्षोसे अनवरत चल रही है। ३७ ग्रन्थोका इन्होने सम्पादन किया है। भारतीय पत्र-पत्रिकाओमें इनके तीन हजार शोध लेख छप चुके हैं। इनकी इन्ही विशेषताओंसे प्रभावित होकर भारतके विद्वत्-समाजने इनके सम्मानमें अभिनन्दन समारोह किया है।

●

शोधमनीषी श्रेष्ठिवर श्रीअगरचन्दजी नाहटा

सा० महो० डॉ० श्यामसुन्दर बादल साहित्याचार्य

सम्मान्यबन्धु श्री अगरचन्द्रजी नाहटासे हमारा गत कई वर्षसे परिचय है, इधर कुछ वर्षोंसे स्नेहपूर्ण पत्रो द्वारा हमारा उनसे अर्द्ध मिलन होता ही रहता हैं, जैसा कि एक लोकोक्तिसे स्पष्ट हैं—

"पत्री आधा मिलन है ।"

सौभाग्यसे अभी कुछ दिन पूर्व हमें उनके चित्रके भी दर्शन हुए । 'विशाल-भालको दब सरलतासे सिरपर बँधा हुआ साफा (पगडी), चिन्तनशील लोचनोपर चढा हुआ चश्मा, घनी-घनी सात्त्विक वेश-भूषा से आच्छादित समोन्नत कलेवर एवं स्मितपूर्ण गम्भीर मुखाकृति ।' इन्ही कुछ स्थूल द्वारा बन्धुवर नाहटाजीके भौतिक पिण्डका शब्द-चित्रण किया जा सकता है ।

विगत चैत्रकृष्ण चतुर्थीको (वि० २०२८) श्री नाहटाजीने बासठवें वर्षमें प्रवेश किया है साहित्यके क्षेत्रमें आपकी गतिशील लेखनी उनपर 'साठा सो पाठा' की उक्तिको चरितार्थ कर रह बन्धुवर नाहटाजी माँ श्री और सरस्वतीके समान रूपेण परमाराधक साधक हैं। यद्यपि आप लगभग वर्षसे एक सफल लेखकके रूपमें निरन्तर राष्ट्र-भाषा हिन्दीकी सेवा करते चले आ रहे हैं, पर इस आपसे परिचय आज पच्चीस वर्ष पूर्व सन् १९४७ ई. में तब हुआ था—जब श्रद्धेय दादाजी (स वारिधि डा बनारसीदासजी चतुर्वेदी) द्वारा मुझे 'प्रेमी-अभिनन्दन-ग्रन्थ' उपहृत किया गया था, मुझे नाहटाजीका 'जैन साहित्यका भौगोलिक महत्त्व' शीर्षक लेख पढनेको मिला था । इसमें प्राची आगमोंकी चार विधाओ एव 'भगवती सूत्र', 'जीवाभिगम' 'प्रज्ञापना' 'जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति' आदि कई ग्रन्थोके उद्धरण देते हुए आपने जो भौगोलिक तथ्य खोज निकाले थे, वे भारतीय इतिहासकारोके लि महत्त्व के हैं । लेखके अन्तमें इन्होने जैन-तीर्थ विषयक प्रकाशित ग्रन्थो, विशिष्ट लेखों, जैन प्रतिमा लेख एव कलापूर्ण जैन-शिला स्थापत्यकी चित्रावलिकी एक ऐसी सूची भी दे दी है, जिसमें उनके लेखकोंके प्रकाशन-स्थान, तथा मूल्य भी दिये गये हैं,जिससे आवश्यकतानुसार उन्हें प्राप्त किया जा सके । स्व. व शरण अग्रवालने अपने 'भूमिको देवत्व प्रदान' शीर्षक एक लेखमें अथर्ववेदके निम्न वचनों द्वारा भूमिकं नीय माता बतलाया है—

"माता भूमि पुत्रोऽह पृथिव्या. ।"
"ॐ नमो मात्रे पृथिव्यै ।"

प्रस्तुत लेखमें नाहटाजीने श्री भद्रबाहु रचित आचाराग निर्युक्तिका निम्न उद्धरण देकर विशिष्ट अंगभूत तीर्थोंको नमस्करणीय माना है—

"अट्ठावय उज्जिते गयग्गपए य धम्मचक्के य ।
पासरहा वत्तणय चमरूप्पायं च वन्दामि ॥"

तदनन्तर सन् १९४९ ई में प्रकाशित 'वर्णी-अभिनन्दनग्रन्थ' में तो यह जन नाहटाजीके सा लेखकके रूपमें सम्बद्ध हुआ था । यह भी श्रद्धेय दादाजीकी कृपाका ही फल था । उक्त ग्रन्थमें सस्मर रेखाचित्र विधाका 'मेरे गुरुदेव' शीर्षक मेरा एक लेख प्रकाशित हुआ था, जिसे मैंने दादाजीकी प्रेर से लिखा था । बन्धुवर श्रीखुशालचन्द्रजी जैनने मुझे उस विशालग्रन्थकी प्रति भी प्रदान की थी । इस बन्धुवर नाहटाजीने "प्राचीन सिन्ध प्रान्तमें जैनधर्म" शीर्षक लेख लिखा था । इस लेखमें सिन्ध प्रा उसमें भी केवल 'खरतरगच्छ' को ही आपने अपनी लेखनीका लक्ष्य बनाया है । जैसा कि निम्न उ स्पष्ट है .—

"भारतकी प्रसिद्ध नदियाँ गंगा-सिन्धुको जैन शास्त्रोमें शाश्वत कहा है। इनकी इतनी प्रधानता थी कि सिन्धुके किनारे बसा प्रान्त ही सिन्धु हो गया था। तथा ग्रीक आक्रमणकारियोने तो पूरे भारतको ही इन नदीके नामानुसार पुकारना प्रारम्भ कर दिया था।"

"गणधर सार्द्धशतक (सं० १२९५) तथा वृहद् वृत्तिमें उल्लेख है कि 'खरतरगच्छ' के आचार्य वल्लभसूरि कामरुकोट तथा जिमदत्तसूरि उच्च नगर गए थे। इसके वाद इस गच्छके मुनियोंके सिन्ध आवागमनकी धारा अविरलरूपसे वहती रही।"

नाहटाजीने इस लेखमें कुछ ऐसे स्थानोंकी तालिका भी दी है जिससे स्पष्ट है कि ११वी शतीके मध्य से ही सिन्ध प्रान्त धर्मविहारमें रत जैनाचार्योंका कार्यक्षेत्र हो गया। लेखके अन्तमें निष्कर्ष देते हुए उन्होने निम्न रूपमें एक वडी मार्मिक वात कह डाली है—

"किन्तु भारतीय धर्मोंके लिए समय कैसा घातक होता जा रहा है, कि मुलतान आदि कतिपय स्थानोके सिवा सिन्ध (वर्तमान पजाब, सीमा-प्रान्त तथा सिन्ध) में जैनियोंके दर्शन भी दुर्लभ हो गये हैं और टोरी पार्टीके द्वारा प्रारब्ध भारत-कर्तनने तो इन प्रान्तोंसे समस्त भारतीय धर्मोंको ही अर्द्धचन्द्र दे दिया है।"

गर्दनपर धक्का देकर निकाल देनेके अर्थमें 'अर्द्धचन्द्र देना' संस्कृतका एक महावरा है। इस प्रकार नाहटाजीने अपने लेखोंमें सस्कृत वहुल शब्दावली और मुहावरोके प्रयोगसे राष्ट्र-भाषाको समृद्ध वनानेमें भी वडा योग दिया है। नाहटाजी किसी सम्प्रदाय-विशेषमें अपनेको केन्द्रित नही रखते। उनके लेख सार्वभौमिक उपयोगके हैं। 'कल्याण' मासिकके वर्ष ४१ के संख्या ६ के अकमें 'मानव कर्त्तव्य' एवं वर्ष ४२ के सख्या ३ के अकमें 'अभयकी उपासना' आदि लेख मानवमात्रको कल्याणका मार्ग दर्शन कराते हैं।

अभी लगभग एक वर्ष पूर्व ही 'व्रजभारती' में फाल्गुण सं० २०२७ वि० के अकमें वयोवृद्ध लेखक श्रद्धेय गौरीशकरजी द्विवेदीने "सूरतिमिश्र अमरेश कृत अमरचन्द्रिका" शीर्षक एक लेख लिखा था। 'अमरचन्द्रिका' विहारी सतसईकी एक प्रसिद्ध टीका है। इस लेखपर 'व्रजभारती' के ही भाद्रपद वि० २०२८ में श्रीनाहटाजीने कुछ सशोधन प्रस्तुत किये थे। टीकाकी प्रतिलिपिकी भिन्नताने ही यह मतभेद उपस्थित किया था। आपने "अमरचन्द्रिका टीका सम्वन्धी कतिपय सशोधन" शीर्षक अपने उक्त लेखमें द्विवेदीजीकी मान्यताओके विरुद्ध कुछ सशोधन प्रस्तुत किये थे। ये सशोधन उनकी अपनी प्रतिलिपियोंके अनुसार प्रामाणिक हैं। फलत विनम्रता की प्रतिमूर्ति द्विवेदीजीने सामान्य मत-भेदके साथ आपके सशोधनोंको अपने लेखके अन्तमें निम्न वचन द्वारा स्वीकृत कर लिया था—

"यह अकिंचन लेखक श्रीनाहटाजीका आभारी है कि उन्होने उचित सशोधन की ओर ध्यान आकर्पित किया।"

उक्त आलोचनात्मक एव प्रत्यालोचनात्मक लेखोमें दोनो मनीपियोकी विनम्रता दर्शनीय है। इन लेखोंसे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि ये दोनो विद्वान् लेखक कितने सग्रही भी हैं, जिनके सग्रहालयोंमें वि० सं० १७९४ में लिखी गई 'अमरचन्द्रिका' टीकाकी हस्तलिखित प्रतिलिपियाँ भी सग्रहीत है और एक नही दो-दो।

'व्रजभारती' के ही वर्ष २४ के अंक ३ में नाहटाजीका "नाइक गोविन्द प्रसाद विरचित गोविन्द वल्लभ काव्य" नामक एक अन्य लेख भी मेरे सामने है। यह काव्य-कृति वि० स० १७५६ के पूर्वकी सिद्ध की गयी है। पृष्ठ संख्या २२ है, अतः स्पष्ट है कि यह एक खण्ड-काव्य होना चाहिए। इस काव्य विषयक एक परिचयात्मक लेखमें भी नाहटाजीने भक्तिके विषयमें अपने मौलिक विचार व्यक्त किये है। जैसे '—

"भक्तिमें वास्तवमें वडी शक्ति है। ज्ञान और योगमार्गकी अपेक्षा वह सरल भी है। ज्ञानका

सम्बन्ध मस्तिष्कसे है और भक्तिका सम्बन्ध हृदयसे। भक्तके लिए भगवान् ही सर्वस्व है। उनके चरणोमें पूर्णरूपसे अर्पित हो जाना ही सच्ची भक्ति है। पर ऐसी शुद्ध और उच्च स्थिति विरल भक्त ही प्राप्त कर सकते हैं"।

इस समय उपलब्ध हुए इन्ही कुछ लेखोके आधारपर हम कह सकते है कि श्रीनाहटाजीके लेख शोध-पूर्ण होते हैं। ऐसे महत्त्वपूर्ण लेख जिस लेखकने तीन-चार हजारकी संख्यामें लिखें हो वह राष्ट्र-भाषा हिन्दी-का कितना बडा साधक होना चाहिए। उनके ग्रन्थोके पढनेका सौभाग्य मुझे नही मिल सका। उनकी सख्या भी कम नही है उनके द्वारा लिखित या सम्पादित ग्रन्थोकी सख्या सेंतीस है। इनके अतिरिक्त कुछ ग्रन्थ अप्रकाशित रूपमें पडे हुए हैं। इतना अधिक कार्य उनकी महती साधनाका परिणाम है।

बन्धुवर नाहटाजी लेखक ही नही एक सहृदय मानव है। अपने गुरुजनो, विद्वानो, कलाकारो एव महापुरुषोके प्रति आपका हृदय श्रद्धासे ओत-प्रोत रहता है। स्व० पिताजीकी स्मृतिमें उनके द्वारा सस्थापित "शकरदान नाहटा-कलाभवन" एव स्व० भ्राता श्री अभयराजजी नाहटाकी स्मृतिमें "श्री अभय जैन पुस्त-कालय" (बीकानेर) नामक सस्थाएँ इस बातका प्रबल प्रमाण हैं। आपके भतीजे श्री भँवरलालजी नाहटाकी उत्कृष्ट साहित्य साधनाएँ अपने पितृव्य चरणकी साहित्य-साधनाओंमें इसी प्रकार विलीन सी रहती है जैसे राष्ट्रकवि स्व० मैथिलीशरणजी गुप्तकी साहित्य-साधनाओमें स्व० श्री सियाराम शरण गुप्त की। फिर भी आज जिस प्रकार अपनी अमर कृतियो द्वारा वे गुप्त-बन्धु अमर हैं, उसी प्रकार हमारे नाहटा-बन्धु भी सदैव अपनी अमर कृतियोके द्वारा अमर रहेंगे।

नाहटाजीके अभय जैन ग्रथालयमें लगभग चालीस सहस्र प्रकाशित ग्रन्थ हैं और इतने ही हैं अप्रका-शित। आपकी महती सग्रह-शीलताका यह एक प्रत्यक्ष प्रमाण है। सक्षेपमें वे सर्वतोमुखी प्रतिभाके धनी हैं। आपने समीक्षक, ग्रन्थ लेखक, सम्पादक, सग्राहक एव निदेशक आदि विविध रूपोंमें हिन्दीके साहित्यको समृद्ध बनाकर राष्ट्र-भाषा का गौरव बढाया। इसी प्रकार कई सास्कृतिक और धार्मिक सस्थाओके जन्मदाता अध्यक्ष एव सदस्यके रूपमें उन्होंने राष्ट्रके नैतिक उत्थानमें सहयोग प्रदान किया। श्री नाहटाजीसे पथ प्रदर्शन पाकर अनेक शोध-कर्त्ताओंने अपने-अपने शोध-कार्योंमें सफलता प्राप्त की। ऐसे महान् साधकके प्रति निम्नरूपमें इस लेखकको कवि अपनी शुभ कामनाएँ अर्पित करता है और परम पितासे प्रार्थना करता है कि श्री नाहटजी शतजीवी हो और वे सदैव सानन्द एव सोत्साह अपने पथपर अग्रसर होते रहें।

साहित्य-साधक श्रीमान् राष्ट्र-भाषा-समृद्धिद.।
नाहटोऽयमगरचन्द्रो जीवेच्छरद शतम्॥

है साहित्य-साधना इन सी कहिए किसकी ?
नर्तन करती रहे लेखनी नित ही जिसकी।
पत्र-पत्रिकाओमें जिसके लेख भरे हैं।
जाने कितने ग्रन्थ इन्होंने रचे अरे है!

अगर सुरभि दे, चन्द्रसम-
सकल ताप हरते रहें।
पथ से पग ना हटा नित-
अगरचन्द्र बढते रहें॥



को पढना है। मैंने उनकी लिखावट के सम्बन्धमें उनसे जब शिकायत की तो वे मुस्कुराकर टाल गये। वैसे उनके पत्र पढते-पढते एवं जैनजगत्‌में प्रकाशित होनेवाले लेखोंको टाईप कराते-कराते उनकी लिखावट पढने में तो लगभग सफल हो गया हूँ किन्तु उनके व्यक्तित्व को पूरी तरह से समझना उतना सरल और सहज नही। अत अभिनन्दनके इस अवसर पर आडी तिरछी रेखाओ से उनके व्यक्तित्वका एक लघु रेखाचित्र प्रस्तुत करते हुए शुभ कामना करता हूँ कि वे सफल स्वास्थ्यपूर्ण शतायु बनकर साहित्य की सेवा करते रहें।

●

विशिष्ट योगदान

विश्वधर्म हरिराम के संचालक मुनि सुशीलकुमार जैन

समाजके विकसित एव विकासशील मुनिवरोको व उदीयमान विद्वानोको आप निरन्तर प्रेरणा देते रहे है। यह आनन्दका विपय है। आपके उदात्त एव विराट् अनुसधान परख विचारोने साहित्य एवं सस्कृतिके भण्डारोको अभिनव एव गौरवमय स्वरूप‌प्रदा किया है। इसके लिए हम सब आपके आभारी है।

साहित्यमें ऐसी कौनसी विधा होगी जिसके विकासमें आपका योगदान न रहा हो। इतिहासका कोई कोना हो, धर्मका कोई अनुसंधान हो, समाज विकासका कोई कार्यक्रम हो, सभीको आपने अपने ठोस सुझावों, अतिस्मरणीय सेवाओ एवं मूल्यवान सहयोग तथा सुझावोसे उसे आप्लावित किया है।

संस्कृति और साहित्यके स्रोत में आपको मैं सदासे सरस्वतीके वरद पुत्रके रूपमें मानता आया हूँ। आपके द्वारा सरस्वती-पुत्रोको साहित्यका एव सस्कृतिका सार्वभौम प्रकाश मिलता रहे और आप विश्वको आध्यात्मिक धरातलपर एकताकी कड़ीमें जोडते रहें, इसी मंगल कामनाके साथ।

●

नाहटाजी एक विरल व्यक्ति

डॉ० रमणलाल ची० शाह अध्यक्ष—गुजराती विभाग, बम्बई युनिवर्सिटी

नाहटाजीसे जितने लोग मिले होगे उनसे भी बहुत अधिक लोग उनके नामसे सुपरिचित होगे। जो नाहटाजीके निकट सम्पर्कमें आते हैं, वे उनके विरल व्यक्तित्व से प्रभावित हुए विना नही रहते।

नाहटाजीने अत्यल्प वयमें लेखन प्रवृत्ति चालू की। आज पांच दशकोंसे भी अधिक समयसे वे नियमित लिखते आये हैं। ई० सन् १९६० में नाहटाजीके साथ मेरा प्रथम वार पत्र व्यवहार हुआ था गुणविनयकृत 'नल दवदंती रास' की हस्तलिखित प्रतिके विपयमें। नाहटाजीका नाम वर्षोसे सुन रहा था अतः तब भी मैंने उनको लगभग सत्तर वर्षकी उम्रके समझ रखा था, परन्तु जब मैं अपनी पत्नी के साथ बीकानेर गया तब नाहटाजी को पहली वार देखा। नाहटाजीको देखते ही मैंने उन्हें अपनी धारणासे अत्यन्त अल्प उम्रके पाकर खूब आश्चर्य अनुभव किया।

नाहटाजी राजस्थानके अधिवासी है और इनकी वेशभूषा भी सीधी-सादी मारवाडी है। इन्हे राह चलते देखकर किसीको भी यह न लगेगा कि ये इतने बडे विद्वान् और सुप्रसिद्ध लेखक हैं। नाहटाजीकी वेशभूषा बिल्कुल सादी है। कपडोकी सजधजके पीछे वे समय बर्बाद नही करते। कभी-कभी तो मुसाफिरीमें कपडे मैले हो गये हो तो भी वे उनकी न तो पर्वाह करते और न सकोच ही रखते।

नाहटाजीकी जैसी सादी वेशभूषा है वैसे ही उनका स्वभाव भी अत्यन्त सरल है। खाने-पीने या रहन सहनके बाबत ये किसी खास वस्तु का शौक या आग्रह नही रखते। एक बार मेरे यहाँ बम्बईमें नाहटाजी पधारे। प्रात काल उठते ही एक कार्यक्रममें जाना था, वे नवकारसी या पौरसी करते थे इसलिए बिना खाये पिये ही हम चले गये। उस कार्यक्रममें विलम्बसे छुट्टी मिली, वहाँसे श्री महावीर जैन विद्यालयके कार्य-क्रममें और भोजनके लिए हमारे यहाँ जाना था। मैंने नाहटाजीसे कहा कि घरपर चाय-पानी करके फिर अपने विद्यालयके कार्यक्रममें जावें। परन्तु नाहटाजीने यह स्वीकार नही किया। उस दिन लगभग १॥ बजे मध्याह्नमें भोजन मिला फिर भी वे आकुल या अस्वस्थ हो ऐसी बात नही थी वे तो जैसे थे वैसे ही प्रसन्न थे।

नाहटाजी अपने कामोमें बहुत नियमित होते हैं और अति शीघ्रतापूर्वक कामको निपटाते है। प्रतिदिन प्रात.काल वे जल्दी उठकर सामयिक करने लगते हैं और सामयिकमे बहुत-सा अध्ययन मनन कर लेते हैं। अपने लेखन योग्य अध्ययन मनन भी सामायकके समय कर लेते हैं। एकबार मेरे यहाँ नाहटाजी पधारे तब पाँच बजे उठकर उन्होंने सामयिक ले ली। लाइटका स्विच कहाँ है यह इन्हें पता नही। अचानक मेरी आँख खुली तो देखा कि नाहटाजी सामयिक लेकर बैठे हैं और अन्धेरेमें ही पुस्तक पढ रहे थे। ग्रीष्मकाल था अत साधारण प्रकाश हो गया था। नाहटाजी बराबर आँखके पास पुस्तक रखकर पढ रहे थे। यह दृश्य देखकर लगा कि वास्तवमें नाहटाजी धन्यवादार्ह हैं।

नाहटाजीका अधिकाश लेखन कार्य इनकी सामायिकके बदौलत है। सामाजिक या साहित्यिक क्षेत्रमें उच्चतर स्थान प्राप्त व्यक्तिको लेखन कार्यमें बहुतसे विक्षेप पड जाते हैं, कुटुम्बके सदस्योको तो बाधा देनेका अधिकार हो सकता है पर मित्र, सम्बन्धी, मिलने-जुलनेवाले, सस्थाके कार्यकर्त्ता अपनी अनुकूलतानुसार चलते हैं जिससे भी लेखन कार्यमें विक्षेप पडना स्वाभाविक है परन्तु सामायिक एक इसका अच्छा उपाय है। स्वर्गीय मोतीचन्द कापडियाने अपना अधिकाश लेखन कार्य सामायिकमें ही किया था, इसी प्रकार नाहटाजीके लेखनकार्यमें भी इनकी सामायिककी बहुत बडी देन है।

नाहटाजी बम्बई आते हैं तब इनके बिस्तरमे कपडोकी अपेक्षा पुस्तकें ही अधिक होती हैं। कितनी ही पुस्तकें ये दूसरोको देनेके लिये ले आते हैं और बम्बईसे जाते समय कितनी पुस्तकें इनके खरीद की हुई और और कितनी ही इन्हें भेंट मिली हुई होती है, इससे विदित है कि इनका विद्या प्रेम कितना अधिक है।

नाहटाजी गृहस्थ हैं, परन्तु इनके हृदयमें वैराग्यका रग गहरा-गहरा लगा हुआ है। कदाचित् ऐसी अनुकूलता मिली होती तो नाहटाजीने लघुवयमें दीक्षा ले ली होती। वे पूज्य० स० भद्रमुनिके गाढ सम्पर्कमें आये थे और उनके उपदेशोका नाहटाजीपर बहुत बडा असर पडा था। पू० भद्रमुनि हम्पीमें स्थिर हुए उसके बाद नाहटाजी पू० भद्रमुनिको वन्दनार्थ बारम्बार हम्पी जाते थे।

नाहटाजी गृहस्थ है, फिर भी कमाने की इन्होने कोई खास पर्वाह नही की। पूर्व के पुण्योदय से इनका अच्छा व्यापार चलता है और इनके भाई व इनके पुत्र व्यापार समालते हैं। परन्तु जवानी में भी नाहटाजीने वर्षमें चार महीना व्यवसाय और आठ महीने स्वाध्याय व लेखन कार्य में व्यतीत करने की योजना बना ली। इसी योजना के कारण ही एक सस्था द्वारा कार्य हो सके जितना कार्य अकेले हाथो से लेखन कार्य किया है। नाहटाजी के रस का विषय तो ग्रंथ और सामायिक है। वे अपने (रुचिकर) विषय के ग्रन्थ कहाँ-कहाँ से

प्रकाशित हुए हैं इसकी जानकारी रखते है और उन्हें अयत्नपूर्वक प्राप्त कर पढ जाते है। नाहटा जी बहुत से सामयिक पत्रादि नियमित पढते हैं, इस प्रकार वे सर्वदा सुसज्ज और सुज्ञात रहते हैं। मेरे पास जब-जब उनके पत्र आते हैं तब-तब नवीन प्रकाशन और बम्बई यूनिवर्सिटी के नव्य महानिबन्धो की जानकारी के लिए एक पक्ति अवश्य ही लिखते है।

पत्र लेखन में नाहटा जी बहुत ही नियमित हैं। मेरे जैसे पत्र लेखन में मन्दशील व्यक्ति द्वारा नाहटा जी को एक पत्र लिखा जाय तब तक उनके तीन चार पत्र आ जाते है। वर्षों के त्वरित लेखन कार्य के कारण नाहटाजी के अक्षर सरलतासे पढे जाए जैसे नही रहे। प्रारम्भ मे जब इनके पत्र आते तो मेग्नीफाइग ग्लास लेकर मुझे बैठना पडता और जैसे तैसे आध घटा में पत्र पढ पाता, अब तो नाहटाजीके अक्षर व मरोडसे सुपरिचित हो गया अत उतना समय नही लगता। फिर भी पत्र टाइप करके भेजनेकी मेरी सूचनाके कारण जब टाइपिस्टकी सुविधा होती है तो वे वैसा ही करते हैं।

नाहटाजीको ग्रथ और सामयिकोकी जितनी स्पृहा रहती है उतनी स्थान या अधिकारकी नही रहती। मुझे एक प्रसग खूब याद है कि जब मैं बीकानेर में इनके यहाँ था तो कोई विद्वान् लेखक और प्राध्यापक इनसे मिलने आये। उन प्राध्यापकने नाहटाजीसे एक बात कही कि आप पी-एच० डी० के मार्ग दर्शक निर्देशक बननेके लिए अर्जी दें। किन्तु अत्यधिक आग्रहके बावजूद भी आपने कहा—यूनिवर्सिटीको गाइड रूपमें मुझे चुनना हो तो भले,चुने पर मेरी तरफसे गाइड बननेके लिए कोई भी प्रयत्न नही होगा। यह सुनकर नाहटाजीके प्रति मेरे हृदयमें बहुत सम्मान हुआ।

नाहटाजीने प्राचीन गुजराती और राजस्थानी भाषामें लिखे हुए रास, फागु इत्यादि प्रकारके जैन साहित्य तथा संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रशमें लिखे हुए साहित्यका खूब सशोधन किया है। इनके अभय-जैन ग्रन्थालय में पचास हजार से भी अधिक हस्तलिखित प्रतियाँ एकत्र है। इस दिशा में नहटाजीने जो भगीरथ कार्य दिया है वह अविस्मरणीय रहेगा। भविष्य के सशोधकोको बहुत सी टूटती कडियें नाहटाजीके लेखन संशोधन से जुडी हुई मिलेंगी।

नाहटाजी ने इतने वर्षोमें छोटे मोटे हजारो लेख लिखे हैं उनकी सम्पूर्ण सूची तैयार होनेकी आवश्यकता है और लेखोको ग्रन्थ रूपमें प्रकाशित करनेका कार्य किसी सस्थाको हाथमें लेना आवश्यक है।

नाहटाजी इस अवस्थामें भी बहुत कार्य करते है, और कर सकते हैं, परमात्मा इन्हें शतायु करे और हमें अब भी बहुत-सा साहित्य प्राप्त हो यही अभिलाषा है।



आदर्श व्यक्तित्व

श्री पृथ्वीराज जैन, एम. ए.

जैनधर्म, दर्शन, इतिहास साहित्य और सस्कृतिका शायद ही कोई ऐसा विद्यार्थी हो, जिसने श्रद्धेय नाहटाजी-का नाम न सुना हो अथवा उनके लेखोंसे अवगत न हो। इतना ही क्यो किसी भी राजस्थानी भाषा-का या हिन्दी पत्र-पत्रिकाका सामान्य पाठक भी भारतीय साहित्यके इस अद्भुत देदीप्यमान नक्षत्रके शुभनामसे एव उनकी ओजस्विनी विद्वत्ताप्रवाहिनी लेखनीसे सुपरिचित हैं। उनकी निष्ठापूर्ण साहित्य आराधना शोध प्रवृत्ति और सतत स्वाध्यायशीलता गत ४५ वर्षोंसे अनवरत अविच्छिन्न रूपमें साहित्य जगत्से तादात्म्य

सम्बन्ध बनाए हुए हैं । समाजके महान् पुण्योदयसे नाहटाजी अपनी आयुकी ६०शरद् ऋतुएँ पूर्णकर ६१वी में पदार्पण कर चुके हैं । इस शुभावसर पर उनका जो अभिनन्दन हो रहा है, वह साहित्यिक जगत्की उन हार्दिक पुनीत शुभ कामनाओका प्रतीक हैं, जो शासनदेवसे उनकी कार्यप्रवृत्त दीर्घायुकी याचना करती हैं ताकि उनके द्वारा की जानेवाली शासन सेवाका काम निर्बाध गतिसे प्रगति करता रहे ।

नाहटाजी से मेरा प्रत्यक्ष सम्पर्क एव परिचय आजसे लगभग २६ वर्ष पूर्व उस समय हुआ जब बीकानेरकी एक सस्थामें मुख्याध्यापकके पदपर मेरी नियुक्ति हुई । उससे पहले उनके अक्षरदेहका सामान्य परिचय था । प्रथम भेंट में ही उनकी सादगी, सज्जनता, विनम्रता, साहित्य सेवाकी भावना, परिश्रमशीलता एव धार्मिकताकी जो छाप मेरे हृदयपर पडी, वह आजतक अक्षुण्ण रहते हुए निखरती ही गयी है । वास्तविकता यह है कि मुझे अपने अन्त करणमें अनेक बार इस विषयमें लज्जा और सकोचका अनुभव होता है कि नाहटाजी जैसे व्यक्ति किसी विद्यालय, महाविद्यालय या विश्वविद्यालयके प्रागणमें शिक्षा प्राप्त करते हुए भी, किसी उपाधिको धारण न करते हुए भी, साहित्यकी इतनी महती सेवा कर सकते हैं, जब कि मेरे जैसे अनेक सुशिक्षित उनके कार्यका एकाश भी अपने जीवनमें अवतरित नही कर सके हैं ।

ओसवाल वैश्यकुलमें जन्म लेकर पैतृक व्यवसाय व्यापारमें प्रविष्ट होकर भी आजीवन विद्यासेवी रहनेवाले नाहटाजी किस सहृदयको प्रभावित एव आकृष्ट न करेंगे ? महाकवि बाणने कादम्बरीमें लक्ष्मीका वर्णन करते हुए लिखा है कि सरस्वतीके वरदपुत्रोसे वह ईर्ष्या करती है, उनसे दूर रहती है । नाहटाजीका भव्य आदर्श जीवन इस मान्यताका एक अपवाद है ।

नाहटाजीके अनुकरणीय व्यक्तित्वकी सबसे बडी विशेषता यह है कि ये स्वतः तो साक्षात् सारस्वत हैं ही, अपने सम्पर्कमें आनेवाले शिक्षितजनो बुद्धिजीवियोके लिए भी प्रेरणा और प्रोत्साहनके अक्षय स्रोत हैं । मैं तो समझता हूँ कि वे अब एक व्यक्ति नही रहे, साहित्यिक गतिविधियोके एक विशाल केन्द्र अथवा सस्थाका रूप धारण कर चुके हैं । उनकी ज्ञानोपासना आत्मसाधना और दूसरोको प्रेरणा मानो त्रिवेणीके रूपमें प्रवाहित है और इस दृष्टिसे पवित्र एव आदरणीय भी हैं । यह भी विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि दर्शन, ज्ञान तथा चरित्र, उनके व्यक्तित्वका अविभाज्य अग बन चुके हैं ।

ज्ञानाराधन उनके जीवनका एकमात्र व्रत है और धार्मिक सस्कार पूजा सामायिक आदि उनकी दैनिक जीवन चर्यामें स्थायी स्थान रखते है । विविध साहित्यिक प्रवृत्तियोमें निमग्न रहते हुए भी स्मित मुख है ।

वे स्मितमुख विनोदशील हैं, मिलनसार हैं, अतिथिभक्त हैं, अहकार रहित हैं, सदाचार एव सद्व्यवहारकी मूर्ति हैं ।

साहित्यके क्षेत्रमें उन्होने जो कुछ कार्य किए हैं वे स्तुत्य होनेके साथ-साथ स्वर्णाक्षरोमें अमररूपेण अकित किए जा सकते हैं । हमारा बहुमूल्य साहित्यिक वैभव अनेक शताब्दियोसे हस्तलिखित शास्त्रोके रूपमें ज्ञान भडारोके तालोमें तहखानोमें आबद्ध था । उसके महत्त्वसे, अपनी महान् सम्पत्तिसे हम अपरिचित थे । १९वी शताब्दीमें जैनाचार्य स्व० श्रीमद्विजयानन्द सूरीश्वरजी जैसे युगनिर्माताने भण्डारोके उद्धारकी ओर, समाज का ध्यान आकृष्ट किया । प्रवर्तक श्री कान्तिविजयजी उनके योग्य शिष्य श्री चतुरविजयजी तथा उनके सुयोग्य शिष्य आगमप्रभाकर मुनि पुङ्गव श्री पुण्यविजयजी जैनने युग द्रष्टा उस महान् आचार्यके इस कार्यका उत्तरदायित्व ग्रहण कर इस विषयमें प्रशसनीय कार्य किया । पूर्व और पश्चिमके विद्वान् भडारोमें अन्य दार्शनिक परम्पराओके साहित्यको भी सुरक्षित देखकर विस्मित हुए—जैन श्रावको एव गृहस्थों में जिन व्यक्तियोने ज्ञान भडारो व हस्तलिखित ग्रन्थोकी खोजका, शोधका सशोधनका सुरक्षाका प्रकाशनके

प्रयत्नोंका अनथक परिश्रम किया उनमें नाहटाजी का नाम सर्वोपरि है। आज तक लगभग एक लाख हस्त-लिखित ग्रन्थ उनकी दृष्टिमें आए हैं। उनके अपने अभय जैन ग्रन्थालयमें जहाँ ४० हजार मुद्रित ग्रन्थ व पुस्तकें है वहाँ ४० हजार हस्तलिखित प्रतियाँ भी। देशके किसी कोनेमें उन्हें ऐसे भडारकी या ग्रन्थकी सूचना मिलनी चाहिए, वे जेबसे खर्चकर अनेक कष्ट सहकर भी वायुगतिसे वहाँ पहुचेंगे और पूरा पता करेंगे।

उनका अपना सग्रहालय केवल पुस्तको शास्त्रो तक ही सीमित नही, अपितु उसमें अनेक कला मूर्तियाँ चित्र पुराने सिक्के व मूर्तियाँ आदि भी समाविष्ट हैं। उनका परिवार साहित्यिक एव सांस्कृतिक गतिविधियो के लिए हजारो रुपये प्रति वर्ष खर्च करता है। आजतक नाहटाजी के लगभग तीन सौ पत्र-पत्रिकाओंमें तीन हजारसे भी ऊपर लेख प्रकाशित हो चुके हैं। प्रकाशित ग्रन्थोकी संख्या भी तीस से ऊपर है। अनेक पुस्तकोकी आपने विद्वत्तापूर्ण प्रस्तावनाएँ लिखी है। वे सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रश हिन्दी गुजराती राजस्थानी भाषाओमें प्रवीण हैं। जैन समाजकी बहुत सी सस्थाओके वे पदाधिकारी और कर्मठ सदस्य हैं। अनेक शोध पत्र-पत्रिकाओके सम्पादक मण्डलमें उनका नाम है। उन्होने कोई परीक्षा नही दी किन्तु उनके प्रकाण्ड पाण्डित्य साहित्य सेवासे प्रभावित हो कुछ विश्वविद्यालयोंने उन्हें पी-एच डी के छात्रोका निर्देशक स्वीकृत किया है। उनके भाषणोके एक-एक शब्दसे गहन विद्वत्ता प्रकट होती है। उनके साहित्य सेवा परायण जीवन तथा अनुपम विद्यानुरागसे प्रभावित हो समाज एव साहित्यिक जगत् भिन्न-भिन्न अवसरोपर उन्हें इतिहास रत्न सिद्धान्ताचार्य तथा विद्यावारिधि आदि पदवियोसे विभूषित कर चुका है। गत मार्चमें बम्बईमें श्री मानतुङ्ग सूरि सारस्वत समारोहमें जिन आठ विद्वानो, समाज-सेवियों व शिक्षा-शास्त्रियोका सम्मान हुआ, उनमें नाहटाजी विशेष रूपेण उल्लेखनीय है। साहित्य सेवाके इस महारथीका कोटिश. हार्दिक अभिनन्दन एव दीर्घायुके लिए अन्त' प्रार्थना।



साहित्य उपवन का एक माली

डॉ० पवन कुमार जैन, एम ए., पी-एच डी.

यह लिखते हुए मुझे लेशमात्र भी संकोच नही हो रहा है कि नाहटाजीसे मेरा प्रत्यक्ष परिचय अधिक पुराना नही है। मुझे उनके दर्शनका सौभाग्य कभी प्राप्त नही हुआ। मैंने उन्हें कभी निकट से देखा नही। कभी बात नही की किन्तु पुस्तकालयोमें, उनके ग्रन्थोंमें, उनसे अनेको बार मिल चुका हूँ। दि० २६-९-७१ को उनके अभिनन्दन समारोहके विषयका पत्र प्राप्त हुआ था। उस पत्र पर नाहटाजीका चित्र छपा था। मैंने तो उनका एक काल्पनिक चित्र बना रखा था। किन्तु यह चित्र उससे विपरीत था—राजस्थानी पगडी, आँखो पर चश्मा, होटो पर भरी हुई मूँछोमें उनका व्यक्तित्व, इस प्रकार झलक रहा था, जैसे पके अगूरोमें उनका रस। बहुत देर तक टकटकी लगाये उनका चित्र देखता रहा।

मैं सोचने लगा, क्या यही वह व्यक्ति है जिसने १९६८ में जब मैं पी-एच० डी० उपाधिके लिए शोध प्रवन्ध लिख रहा था, मुझे 'सलोको काव्यो'की सूची भेज कर मेरा मार्गदर्शन किया था। साहित्यके क्षेत्रमें इतना उदार और सहृदय व्यक्ति मेरे जीवनमें दूसरा नही आया। हिन्दीके मठाधीश जहाँ नवयुवको की उपेक्षा की दृष्टिसे देखते हैं, दिशा ज्ञानके स्थान पर भटकाव उत्पन्न करते हैं, वहाँ नाहटाजी शोध एव

साहित्य-निर्माणके क्षेत्रमें नवयुवकोके मार्गमें शूलोको हटाकर फूल बिखेरते रहे हैं। 'वीर'के सम्पादक प० परमेष्ठीदास जैनने उनके सम्बन्धमें ठीक ही लिखा है—'नाहटाजीने शताधिक शोध-छात्रोका मार्ग-दर्शन किया और जीवन भर साहित्य-सेवामें रत रहे। उनके द्वारा निष्काम भावसे की जाने वाली महती साहित्य-सेवा सदैव स्मरणीय रहेगी।'

साहित्यका ऐसा कौन-सा अधेरा कोना है जिसमें नाहटाजी ज्ञान दीप लेकर न पहुँचे हो। आपने सब कुछ किया है—संपादन, मौलिक ग्रन्थ-लेखन, सूचि-निर्माण, सग्रह या शोध छात्रो का मार्ग दर्शन। एक ही व्यक्ति पर लक्ष्मी और सरस्वती दोनोकी कृपा हो, ऐसा बहुत कम देखनेमें आता है। नाहटाजी के जीवन में लक्ष्मी और सरस्वती का अनोखा संगम दर्शनीय है।

नाहटाजी ने साहित्य-मन्दिरकी वेदीपर अगणित ग्रन्थ पुष्पो को चढ़ाकर जो सेवा की है, क्या साहित्य-ससार उसे कभी भूल सकेगा? उनके नामके साथ विद्यावारिधि, इतिहासरत्न, सिद्धान्ताचार्य, शोधमनीषी जैसे विशेषण भी उनके महत्त्वपर प्रकाश डालनेमें असमर्थ हैं। स्वतन्त्रता-आन्दोलनमें जो स्थान गाधीजी का है, वही स्थान साहित्यके क्षेत्रमें नाहटाजी का है। ससारके किसी भी देशमें, जब भारतके स्वतन्त्रता आन्दोलन-की चर्चा की जायगी, तो गाधीजीका नाम अवश्य स्मरण किया जायेगा। इसी प्रकार राजस्थानी और हिन्दी साहित्यका नाम जहाँ भी आयेगा, नाहटाजी का नाम श्रद्धासे लिया जायेगा। यदि ताजमहलका सम्पूर्ण निर्माण शाहजहाँ आलकरिक शैलीमें करता, तो सम्भवत. ताजका इतना प्रभाव न होता। उसीकी सादगीमें जो बात है वह आलकरिकतामें न रहती। इसी प्रकार जो बात 'नाहटा' शब्द मे है वह विद्यावारिधि जैसे आलकारिक शब्दोमें कहाँ?



सर्वतोमुखी प्रतिभाके धनी नाहटाजी

श्री उदयचन्द्र जैन

श्रीमान् अगरचन्दजी नाहटा एक सुप्रसिद्ध लेखक, विचारक और मूर्धन्य विद्वान् है। जनवरी १९६३ में जैन सिद्धान्त भवन आराके हीरक जयन्ती महोत्सवके अवसरपर मुझे आपसे मिलनेका पहली बार सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उक्त अवसरपर बिहारके तत्कालीन राजपाल श्री अनन्तशयनम् आयगरके कर कमलो द्वारा आपको सिद्धान्ताचार्यकी उपाधिसे विभूपित किया गया था। इसके बाद दो तीन बार और भी आपसे मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मैं आपके व्यक्तित्व तथा विद्वत्तासे बहुत ही प्रभावित हूँ। नाहटाजी का जीवन हम लोगोके लिए अनुकरणीय है।

आपसे अपरिचित व्यक्ति आपकी वेशभूषा देखकर यही कल्पना करेगा कि आप कोई बड़े सेठ हैं। आप धनकी दृष्टिसे बड़े सेठ चाहे न भी हों किन्तु अध्ययन और लेखनकी दृष्टिसे महान् पुरुष अवश्य हैं। आपने विधिवत् विशेष शिक्षा प्राप्त नही की है और न डिग्रियोका सग्रह किया है। परन्तु आपने अपनी लगन और अध्यवसायसे जो ज्ञान प्राप्त किया है, वह अनुकरणीय और प्रशसनीय है।

आप व्यवसायके क्षेत्रमें रहते हुए भी अपना अधिकाश समय साहित्य सेवा और ज्ञानार्जनमें लगा रहे हैं, यह एक गौरव की बात है। आप लेखन कलामें सिद्धहस्त हैं। कैसा भी विषय क्यों न हो, उसपर आपकी

लेखनी निर्बाधगतिसे चलती है और उस विषयका प्रतिपादन इतनी अच्छी तरहसे कर दिया जाता है कि साधारण व्यक्ति भी उसे सरलतासे हृदयगम कर लेता है। आपकी लेखनीसे कोई भी विषय अछूता नही बचा है। जैन पत्रोमें ही नही किन्तु प्राय समस्त भारतीय प्रमुख पत्र पत्रिकाओमें आपके विद्वत्तापूर्ण और खोजपूर्ण लेख सदा ही प्रकाशित होते रहते हैं। इतने अधिक लेख शायद ही किसी दूसरे विद्वान्के प्रकाशित हुए हों। यदि आपके लेखोका सग्रह किया जाय तो उसे कई भागोंमें प्रकाशित किया जा सकता है। आप सदा ही साहित्य तथा समाजकी सेवामें संलग्न रहते हैं। आप विशेष रूपसे जैन साहित्य की और उसमें भी राजस्थानी जैनसाहित्यकी विशेष सेवा कर रहे हैं। आपने साहित्य सेवाकी दृष्टिसे एक पुस्तकालयकी भी स्थापना की है जिसमें प्रकाशित तथा अप्रकाशित ग्रन्थोका वडा भारी सग्रह है। आपका दृष्टिकोण उदार तथा व्यापक है। आपके हृदयमें साम्प्रदायिकताके लिये कोई स्थान नही है।

ऐसे महान् विद्वान्का अभिनन्दन बहुत पहले ही किया जाना चाहिए था। यह हर्षका विषय है कि कुछ लोगो का ध्यान इस ओर गया है और अब आदरणीय नाहटाजीका अभिनन्दन किया जा रहा है। इस अवसरपर नहटाजीको अभिनन्दन ग्रन्थका भेंट किया जाना एक महत्त्वपूर्ण बात है। मैं भी इस शुभ वेलामें नाहटाजीका हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ और कामना करता हूँ कि आप चिरायु होकर इसी प्रकार साहित्य तथा समाज की सेवा चिरकाल तक करते रहें।

●

साहित्यकी साकार मूर्ति

श्री विमल कुमार जैन सोरया

विद्यावारिधि श्री अगरचन्द्रजी नाहटा इस युगके युगप्रधान साहित्यकार, उच्चकोटि के लेखक, सफल आलोचक और समीक्षक एव प्रतिभा-सम्पन्न विद्वान् है। मुझे अपने स्नातकोत्तर विद्यार्थी जीवनमें श्री नाहटाजीके साहित्यको गम्भीरता से पढनेका सौभाग्य मिला। तभीसे श्रीनाहटाजीके साहित्यसे अपरिमित आकर्षण बढा।

मैं अपने स्वर्गीय पिता श्री गुलजारी लालजी सोरयाके सग्रहणीय पुस्तकालयमें आजसे ३०-४० वर्ष पुरानी अनेक प्रकार की पत्र-पत्रिकाओकी फाइलें उलटता हूँ तो पाता हूँ कि प्राय कोई ही ऐसी अभागी फाइल होगी जिसमें श्री नाहटाजीकी लेखनीका प्रेरणादायी शोधात्मक निबन्ध लिखा गया हो। जहाँ तक मैंने पाया श्री नाहटाजीने प्रत्येक विषय पर अपनी सशक्त लेखनी चलाई है।

श्री नाहटाजीने अपने इतनेसे जीवनमें अनन्त साहित्य धारा बहाकर अनेको विद्वानोको दिशादृष्टि दी है। हजारो शोधार्थी इनके साहित्यसे अनुप्राणित हुए हैं। ऐसे साहित्य-महारथीके सम्मानमें प्रकाशित हो रहे अभिनन्दन ग्रथके लिये मेरी अनेक शुभ कामनाए हैं।

●

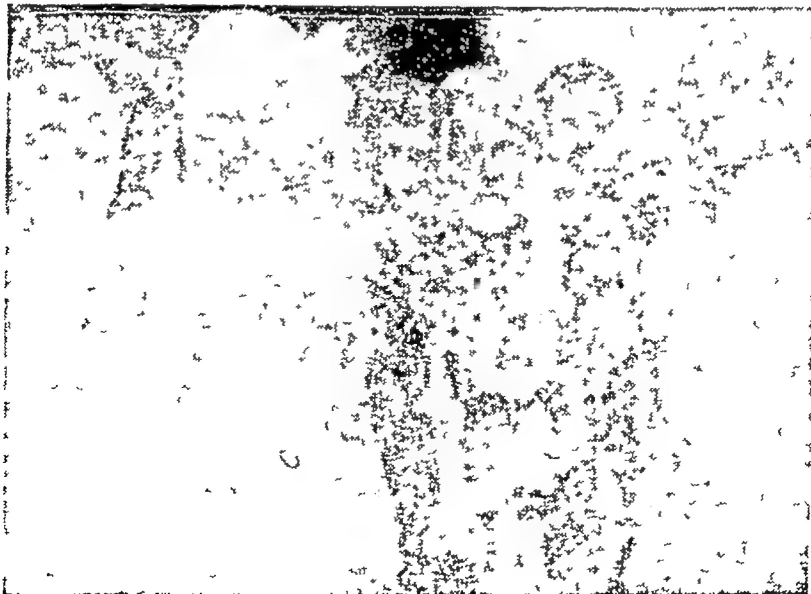


राजस्थान साहित्य अकादमी में विशिष्ट साहित्यकार सम्मेलन में भाषण देते हुए
श्री अगरचन्द जी नाहटा ।

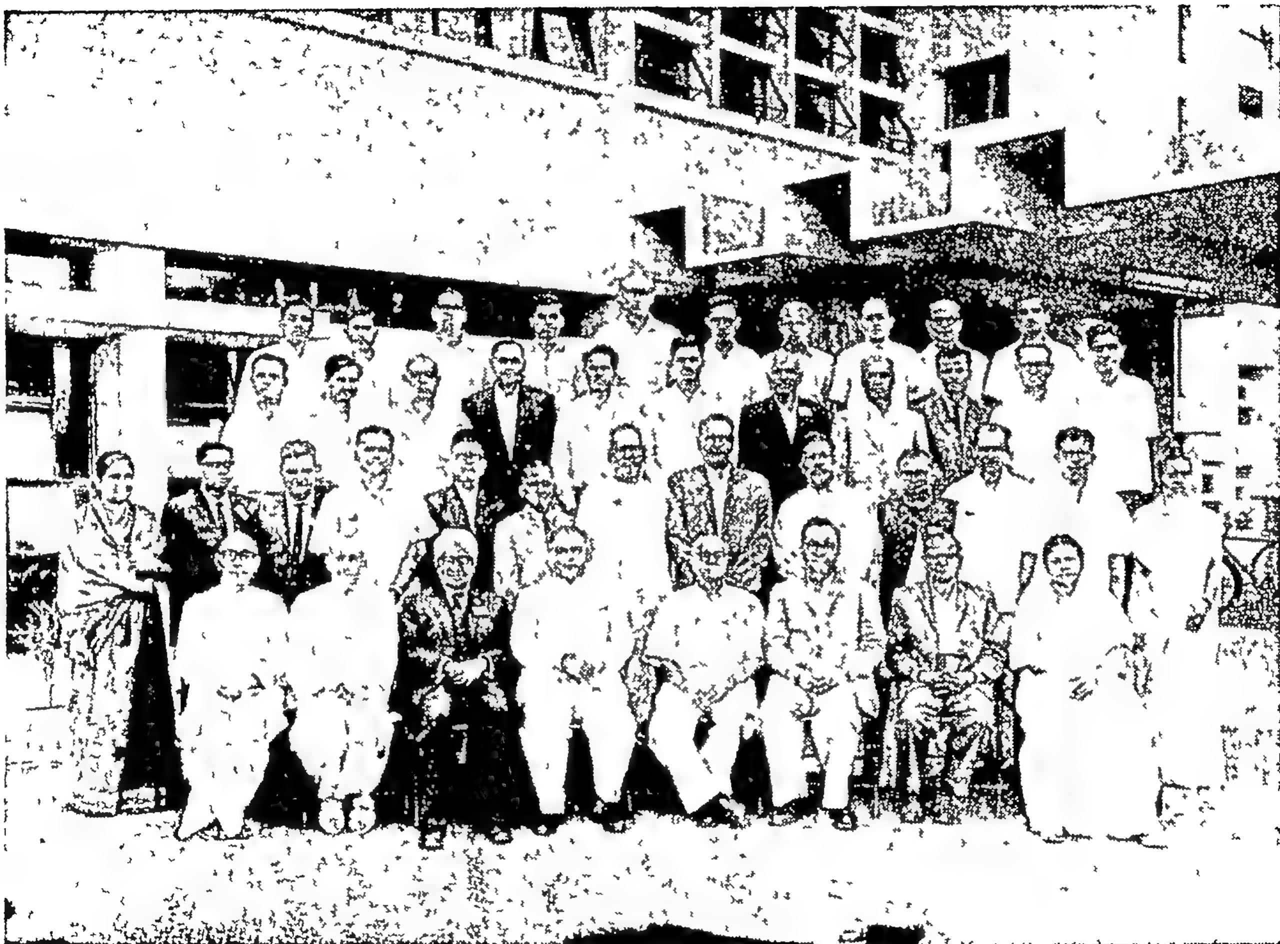


राजस्थानी भाषा सम्मेलन मे श्री अगरचन्द जी नाहटा का अभिनन्दन ।

राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर में विचार-विमर्श करते नाहटा जी



श्री गुलावचन्द जी ढड्ढा, श्री वहादुर सिंह सिंघी और
श्री विजय सिंह नाहर के साथ अगरचन्द नाहटा
कलकत्ता में ओसवाल महासम्मेलन में।



कोल्हापुर के प्राकृत•भाषा सम्मेलन में एकत्र विद्वत्मण्डली के साथ खडे हुए अगरचन्द जी नाहटा ।



वम्वई में सम्मानित विद्वत् मण्डली के वीच नाहटा जी।

साहित्य के पुण्यश्लोक भगीरथ

डॉ० भगवान सहाय पचौरी

फसलें कटकर खलिहानोमें पहुँचती हैं। खलिहानो से गोदामोमें और गोदामोसे सौ टंच स्वर्ण बनकर वे साहूकारोकी तिजोरियोकी शोभा बढाती हैं। देश सम्पन्न कहलाता है और देशवासी खुशहाल कहे जाते हैं। पीछे एक वर्ग रह जाता है, खेतोंके कूडोमें-से, गर्तोंमें से दबे-ढँके अन्नके दानोको एक-एक चुनकर उठाकर राशि बनानेके लिये। वे अन्नके दाने, जो किसानके लिये, साहूकारके लिये किसी अर्थके नही थे, अर्थ बनकर जगमगाते चमकते हैं। ये ही अन्नकण 'सिला' कहलाते हैं और उन मणियोको चुनने-खोजने बटोरने वाले 'सिलहार' कहे जाते है। वेदमें इस सिलेको 'पावनतम' कहा गया है और मैं ऐसे सिलहार को ऋषि कहता हूँ। इन तप पून 'ऋषियो'के शुभसीकरो पर वेद-ऋचाए बलिहार होती हैं। साहित्यकी फसल कटकर जब गोदामोमें और गोदामोसे तिजोरियो में पहुँच जाती है, तब साहित्यके खोजी सिलहार-की सवेदना जाग्रत होकर अन्धेरे-धूल-धुँआ-सीलन-सडन-दुर्गन्ध भरे गोलम्बरो-अलमारियों-ग्रन्थागारो और उन प्राचीन वस्तोंके अन्धेरे-अज्ञात कूँडोमें भटकती है, जहाँ सहस्रो ज्ञानराशिके कणो ग्रन्थरत्नो-को दीमक चूहे-कीट-पतग-सील-पानी और न जाने कौन-कौन अपना भोज्य बना रहे होते है। यह सिलसिला जितना पुराना होता है, उतनी ही उसके खोज-उद्धारकी सभावनाएँ भी क्षीण रहती हैं। हमारी उपेक्षा, हमारा प्रमाद, हमारी मौजी प्रवृत्तिके कारण न जाने कितने ऐसे रत्न अकाल ही नष्ट हो गए और हो रहे है तथा कितने ही प्रकाश की किरणोको तरस रहे हैं। साहित्यके खोजियोंसे यह तथ्य छिपा नही है। प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थोकी यह पूँजी जब प्रकाशमें आती है तो गोदामो और तिजोरियोके स्वामियोकी बाँहे खिल उठती है। इनसे इतिहास तो अपना प्रामाणिक मार्ग खोजनेमें समर्थ होता ही है, ज्ञान विज्ञानकी नई-नई दिशाएं भी खुल जाती हैं। श्रेष्ठवर श्री अगरचन्द नाहटा उक्त प्रकारके साहित्यके खोजी सिलहारो के सम्राट् निरपवाद रूपसे कहे जा सकते हैं। पत्थर बने सगरसुतोंका उद्धार करनेको भगीरथने तपोबलसे गंगाको भू पर उतारा था। कोटि-कोटि पत्थरोको नया जीवनदान दिया है साहित्यके इस भगीरथने—इसमें शायद ही किसी को वैमत्य हो। उनके जीवनको प्राय तीस वर्ष इसी खोज-साधना में व्यतीत हुए है।

नाहटाजीको साहित्य-भगीरथ कहनेकी सार्थकता है। उनके महनीय परिश्रम और उनकी समृद्धि सारस्वत-उपलब्धियोको देखकर सहसा आश्चर्यमें डूब जाना पडता है। अनेक साधन-सम्पन्न सस्थाए मिल-कर इतना महान् उद्योग नही कर सकती, ऐसा मेरा विश्वास है। मेरे समक्ष सवत् २०१० वि० में प्रका-शित श्री नरोत्तमदास स्वामी द्वारा संकलित रायल अठपेजी आकारकी श्री नाहटाजीके लेखोकी ६८ पृष्ठो-की सूची है। आज सवत् २०२८ है। १८ वर्ष और ऊपर हो गये। अब तक यह तालिका इससे प्राय दूनी तो हो ही गई होगी। किन्तु प्रस्तुत तालिकाको ही लें, तो भी यह कार्य साहित्यमें अमर बना देनेको पर्याप्त है। इसमें प्रकाशित लेखोकी सज्ञा ११६१ है। इस समय यह संख्या ३००० से कदापि कम नही हो सकती, ऐसा अनुमान है। स० २०१० तक नाहटाजी देशके उच्चकोटिकी १४१ पत्र-पत्रिकाओमें छप चुके थे। आज वे कितने और छपे हैं, इसका अनुमान उनकी कर्मठता, लगन, लेखन-गति और उनके परिश्रमसे सहज ही लगाया जा सकता है।

उन्होने कई लाख हस्तलिखित प्रतियोका निरीक्षण किया है। अगणित पाण्डुलिपियो और कई हजार चित्रादिका निजी संग्रह किया है। तीस हजार पाण्डुलिपियोंकी वैज्ञानिक विवरणात्मक सूची भी वे बहुत पहले तैयार कर चुके हैं। ऐसा शायद ही कोई विषय है जिसे उनकी लगनपूर्ण साधनाने अछूता छोडा हो।

सन्दर्भ, इतिहास, पुरातत्त्व, कला, साहित्य, अध्यात्म, धर्म, सम्प्रदाय, महापुरुष, साहित्यकार, संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, नगर, तीर्थ, मन्दिर, साहित्य संस्था, पुस्तकालय, आचार, शिक्षा, ज्योतिष, गणित, अर्थशास्त्र, व्याकरण, ज्ञान-विज्ञान आदि सभी पर उनकी खोजपूर्ण लेखनी समान गतिसे सक्रिय रही है, लगता है भारतवर्षका हिन्दीका शायद ही कोई साहित्यिक पत्र ऐसा बचा होगा जिसमें उनकी खोज न छपी हो। प्राचीन जैन पुस्तकालयों और ग्रन्थागारोंमें भी शायद ही कोई उनकी दृष्टिसे बचा हो। जैन साहित्यका खोजी तो शताब्दियों तक उनके समान शायद ही भारत उत्पन्न कर सकेगा। प्राचीन साहित्य के रूपों के नाहटाजी निर्विवाद एकमेव पारखी विशेषज्ञ हैं। उनको कई भाषाओंका चूडान्त ज्ञान प्राप्त है।

नाहटाजी ने स० १९८४में लेख आदि लिखना आरम्भ किया था। विधवा कर्तव्य उनका प्रथम प्रकाशित ग्रन्थ है। स० २०१० तक उनके प्रकाशित ग्रन्थोकी सख्या ६१ थी। वे अनेक ख्याति प्राप्त साहित्यिक-सास्कृतिक-धार्मिक-सामाजिक संस्थाओंके संस्थापक, अभिभाषक, ट्रस्टी, सदस्य हैं। वे राजस्थानी-भारती, (बीकानेर), राजस्थानी, (कलकत्ता), शोध-पत्रिका (उदयपुर), मरुभारती (पिलानी), वरदा, परम्परा आदि प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओंके सम्पादक तथा सपादक मंडलमें रहे हैं। नाहटाजीकी खोज और उनके लेखन के प्रमुख विषय हैं—जैन साहित्य, इतिहास, राजस्थानी साहित्य और प्राचीन हिन्दी साहित्य। नाहटा-जी ने साहित्यमें सर्वोच्च शोधकारका गौरव प्राप्त किया है। ऐसा कोई विद्वान् या विश्वविद्यालय देशके ओर-छोर तक नही जो प्रत्यक्षपरोक्ष नाहटाजी के शोध कार्यसे इस जीवनमें उपकृत न हुआ हो। वे एक आदर्श खोजी हैं, और युगके खोजियोके मार्गदर्शक प्रेरणा-स्तम्भ हैं। शताब्दियाँ उनकी ऋणी रहेंगी। अपने खोज के क्षेत्रमें वे कोई प्रतिद्वन्द्वी नही रखते। जैसी उनकी आकृति-प्रकृति है, वैसी ही विशाल-महान् उनकी सारस्वत-उपलब्धियाँ भी है। लक्ष्मी और सरस्वतीके सर्वतोभावेन समान रूप से लाडले साहित्यके इस भगीरथके दीर्घायुष्यकी हमारी हार्दिक कामना है।

●

श्रद्धेय श्री अगरचन्दजी नाहटा : प्रथम दर्शन

प्रो० नथुनी सिह

मैंने गुरुवर डॉ० चन्द्रकुंवरप्रकाशसिंह (अध्यक्ष, हिन्दी विभाग मगध विश्वविद्यालय बोधि गया) का आदेश-पाथेय लेकर अपने शोधके सन्दर्भमें राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुरकी यात्रा की। वहाँ ४-५ दिनके अध्ययन-अनुशीलनके पश्चात् मैंने अनुभव किया कि मेरी सामग्रीकी उपलब्धि यहाँ सम्पूर्णत सम्भव नही है। इसी सन्दर्भमें वहाँके वरिष्ठ शोध-सहायकोंसे मेरी बातें हुईं और डॉ० पुरुषोत्तमलाल मेनारिया (कार्यकारी निदेशक, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर) से भी शोधके सन्दर्भमें कुछ गम्भीर वार्ता हुई। डॉ० मेनारियाने मुझे बीकानेर की यात्रा करनेकी सलाह दी और कहा कि बीकानेरमें श्री अगरचन्दजी नाहटा आपकी अधिक सहायता कर सकेंगे। नाहटाजीसे प्रत्यक्ष परिचय नही रहनेके उपरान्त भी उनके विपुल साहित्यसे परिचय तो था ही, अतः मैंने आज्ञा शिरोधार्य कर ली।

ऐसे जब मैं राँची विश्वविद्यालयके अन्तर्गत एम० ए०का छात्र था, तब सर्वप्रथम डॉ० जयनारायण मंडल (अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, राँची कॉलेज, राँची) के श्रीमुखसे मैंने श्री अगरचन्दजी नाहटाका नाम सुना था। हिन्दी साहित्यके इतिहासके आदिकालके पठन-पाठनके सन्दर्भमें डा० मंडलने श्री नाहटा एव डा०

मोतीलाल मेनारियाकी खोज-पडतालकी बात चलायी थी। बादमें अपभ्रंश और हिन्दी साहित्यके इतिहासके आदिकालके अध्ययन-अनुशीलनके समय मैंने नाहटाजीका महत्त्व समझा। गुरुवर डॉ० नेमिचन्द शास्त्री (अध्यक्ष, सस्कृत एव प्राकृत विभाग, जैन कालेज, आरा) ने भी मेरी शोध-सन्दर्भमें श्रीनाहटाजी की बात चलायी थी और उनसे अपेक्षित सहायताकी आवश्यकता प्रकट की थी।

ऐसी मन स्थितिमें मैं जोधपुरसे बीकानेर चल पडा। रात भरकी असीम परेशानीके उपरान्त मैं सुबह बीकानेर पहुँचा। गाडीमें मेरे मानस-क्षितिज पर एक प्रश्न बार-बार कौंध रहा था कि मैं सर्वप्रथम श्री नाहटाजीसे क्या कहूँगा ? यदि दरवाजा बन्द हो तो कैसे खुलवाऊँगा ? परन्तु शीघ्र ही एक पक्ति समाधान बनकर आई—

'नाहटाजी तो बोलो, जरा दरवाजा तो खोलो।
मैं आया हू अकेला बीकानेर में।'

खैर, सौभाग्य था कि दरवाजा खुलवानेकी आवश्यकता नही हुई। ऐसे उदारमना नाहटाजीका दरवाजा मेरे जैसे पाठकके लिए सर्वदा एव सर्वथा खुला हुआ है।

एक बहुत बडा आलिशान मकान, चारों ओर पुस्तकोका ढेर। उन्ही ढेरोंके बीचमें दो वृद्ध मनुष्य गम्भीर अनुशीलनमें रत थे। मेरी बुद्धिको यह समझते देर नही लगी कि श्री नाहटा कौन है, तत्क्षण श्री देवकीनन्दनजी 'देशबन्धु' ने सकेत भी किया। मैंने जाकर चरण-स्पर्श किया और अपना परिचय दिया। मैंने बहुत थोडेमें अपना प्रयोजन बतलाया और डॉ० मेनारियाका संस्तुति-पत्र भी दिखलाया।

'नाहटा' शब्दने उनकी काल्पनिक प्रतिमूर्तिको मेरे मानस-क्षितिज पर दूसरा चित्र अकित किया था। भोजपुरी एव हिन्दीमें 'नाटा' कदका वाचक एक चलता एवं प्रसिद्ध शब्द है। मैं समझता था कि यशस्वी स्वर्गीय प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्रीकी भाँति यह भी नाटा आदमी अगूठीका नगीना है। साहित्य-क्षेत्रमें अगूठीका नगीना होनेके बावजूद आपका शरीर पूरे डीलडौलका है और कहना चाहें तो कह सकते हैं कि हिन्दी साहित्य ससारमें कविवर निराला, प० नलिनविलोचन शर्मा, डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी और डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदीकी परम्परामें नाहटाजो भी आयेंगे। विधाताने इन लोगोको प्रतिभा देनेमें तो उदारता दिखलायी ही, शारीरिक संरचना, गठन और डील-डौल देनेमें भी कोई कंजूसी नही की। इस मानीमें ये उन्ही लोगोके समान परम भाग्यशाली हैं।

मैं अपने शोधके सन्दर्भमें बातचीत करने लगा। मेरा विषय है, अपभ्रश और हिन्दीके काव्य रूपोका तुलनात्मक अध्ययन।' इस विषय पर उन्होंने स्वय काफी लिखा है। उन्होने उन पत्र-पत्रिकाओ की चर्चा की, जिनमें काव्यरूपोके सम्बन्धमें उनके निबन्ध निकल चुके हैं। उन पुस्तको एव विद्वानोकी ओर भी मेरा ध्यान आकर्षित किया, जिन लोगोने अपनी कृतियोमें इस विषयपर अनुसन्धान एव अनुशीलन किया है। उनके निर्देशनके अनुसार मैं पत्र-पत्रिकाओको उलटता रहा और मैंने पाया कि काव्यरूपो पर जितनी खोज इस व्यक्तिने की है, हिन्दी-जगत्में उसका जोडा नही है।

मैं तीन दिनो तक उनके सम्पर्कमें रहा और मैंने पाया कि इस उम्रमें भी इनपर बुढापाका तनिक भी प्रभाव नही है। साठ वर्षसे अधिक उम्र होने पर भी अभी यौवन उनपर थिरक रहा है, जवानी अगडाई ले रही है, किस मानीमें ? सरस्वतीकी असीम आराधनामें। चौबीस घटेमें अभी भी १६-१७ घटे वे अध्ययन पर लगा रहे है। एक बैठकमें ५-६ घटे तक न हिलना-न डुलना। बहुतोके धैर्य एव परिश्रमकी परीक्षा हो जाती है। देखा, बहुत देखा परन्तु सरस्वतीका ऐसा आराधक, साहित्य-साधनाका ऐसा अपूर्व पुजारी नही देखा। राजस्थानके बालू-काटोके बीच यह अपूर्व गुलाब खिला हुआ है।

नाहटाजीने साहित्य-साधनाको अपने जीवनका मुख्य प्रयोजन मान लिया है। घरमें एकमात्र महिला अपनी पुत्र वधूके अकाल दिवंगत हो जानेपर भी चेहरेपर शिकन नही, साहित्य-साधनामें व्यतिरेक नही। यह साहित्य-जगत्का सबसे बडा कर्मयोगी है।

इनकी काव्यरूपो एव साहित्यके इतिहासके धुँधले पृष्ठो पर जो महत्त्वपूर्ण खोज हुई है, उसपर हिन्दी साहित्यके अनेक विद्वान् शोध कर रहे हैं। यही नही, सैंकडो शोधछात्रोका ये मार्ग-दर्शन कर रहे हैं, हजारो जिज्ञासुओंको आवश्यक सूचनाएँ एव सामग्री प्रदान कर रहे है। ये ऐसे साहित्यिक दानी है कि इनके यहाँसे कोई खाली हाथ नही लौटता।

अत परमात्मासे मेरी प्रार्थना है कि इस विघावारिधि, इतिहासरत्न, सिद्धान्ताचार्य, शोध-मनीषीको उनके लिए नही, उनके परिवार वालोके लिए नही, उनके नगरके लिए नही बल्कि पूरे साहित्य-जगत्के लिए उनके यशकी भाँति उनके पार्थिव शरीरको कालजयी बनावें।



प्राचीन साहित्यके उद्धारक—नाहटाजी

डॉ० शिवगोपाल मिश्र

१९५६ ई० में नाहटाजी ने मेरे अनुरोधपर अपने लेखो और कृतियोकी एक सूची प्रेषित की थी जिसमें उनके १००० से अधिक लेख १५० से भी अधिक हिन्दीकी पत्र-पत्रिकाओंमें प्रकाशित होनेकी सूची थी। मैं उन दिनों कुतुबनकी *'मृगावती'* के सम्पादनका प्रयास कर रहा था और मुझे नाहटाजी के अमूल्य सहयोगकी आकाक्षा थी।

सहस्राधिक लेखोकी सूची देखकर मेरे मन में सहसा विचार उमडा कि आखिर नाहटाजी ने इतने लेख कैसे लिख लिये? क्या उनके पास कोई विशेष योग्यता है या केवल ज्ञान-पिपासाके वशीभूत होकर वे ऐसा कर रहे है? ज्यो-ज्यो मैं उनके सम्पर्कमें आता गया त्यो-त्यो इनका समाधान होता गया। मैंने देखा कि प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थोकी जानकारी रखने तथा लगातार नवीन ग्रन्थोकी खोज करते रहनेमें उनकी विशेष रुचि है। यद्यपि वे पाँचवी कक्षा तक ही शिक्षा प्राप्त कर सके किन्तु उनकी ज्ञान-पिपासाने उन्हें लगातार नये-नये ग्रन्थो से परिचित होने, उनकी विषय-वस्तु को हृदयगम करने तथा उस जानकारीको अनुसंधित्सुओतक सहज भावसे सम्प्रेषित करनेमें ऐसा उन्मुख किया है कि पिछले ४० वर्षों से वे इसी कार्य में लगे रहे हैं।

यदि हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थोंकी खोजका सही-सही मूल्याकन किया गया तो इसमें संदेह नही कि उसमें नाहटाजी का स्थान सर्वोपरि होगा। उन्होने हस्तलिपियोको एकत्र करने, उन्हें पढने तथा विवरण लिखकर पत्रिकाओमें प्रकाशित करते रहनेमें जो तत्परता दिखाई है, वह विरले ही व्यक्तियोके लिए सम्भव है।

नाहटाजी का एक अन्य विशेष गुण रहा है दूसरो पर शीघ्र ही विश्वास करके उनके समक्ष अपनी ज्ञान राशिको उपयोगके लिए प्रस्तुत कर देना। यही कारण है कि उन्हें उन महान् कृतियोंके सम्पादनका श्रेय नही मिल पाया जिन्हें उन्होने या तो पहले खोजा या खोजकर दूसरोंके उपयोगके लिए प्रस्तुत किया।

नाहटाजी के कृतित्वका यह प्रधान अंग है। इसके अतिरिक्त उन्होने भाषा तथा साहित्य, जैन धर्म, पुरातत्त्व आदि के क्षेत्र में भी उल्लेखनीय योगदान किया है। उनके द्वारा स्थापित 'अभय जैन ग्रंथालय' उनकी सुरुचि एव उनके कर्तृत्वका उद्घोषक है। किसी प्रकारकी ख्यातिकी परवाह किये बिना नाहटाजी एकान्त भावसे हिन्दीकी सेवा करते रहे हैं।

अपने हिन्दी साहित्यके इतिहास सम्बन्धी ज्ञानके आधार पर उन्होने इतिहासकी भद्दी से भद्दी भूलो-की ओर सकेत किया है। वे प्राचीन परम्परा के होते हुए भी चिर नवीन हैं। वे परम जिज्ञासु हैं और अपने से छोटो से भी सीखनेमें सकोच नही करते।

प्रेरणा के स्रोत

नाहटाजी ने स्वीकार किया है[1] कि पुस्तकोंके विवरण लेनेकी पद्धतिमें जैन साहित्यके महारथी स्व० मोहनलाल देशाईसे उन्होने प्रेरणा प्राप्त की। अन्यत्र वे लिखते हैं[2] कि अनुभवी विद्वान्का सहयोग प्राप्त न होने पर हमने अपनी अत्यधिक साहित्य रुचि और अदम्य उत्साहसे प्रेरित होकर यथासाध्य सम्पादन किया है ···हम विद्वान् नही हैं, अभ्यासी हैं ····।

नाहटाजी का विशेष झुकाव जैन साहित्यकी ओर रहा है। वे स्वय जैनी हैं किन्तु वे लिखते हैं[3] कि ज्ञानसारजी के साहित्यसे हमारा सम्बन्ध विद्यार्थी कालसे है। हमने अपनी माँ के लिए पहले पाठ नकल किया और जब कृपाचन्द्रसूरि बीकानेर पधारे और चातुर्मास किया तो उनके सम्पर्कसे जैन तत्त्व ज्ञान और साहित्यकी ओर रुचि विकसित हुई।

साहित्यान्वेषणके साथ-साथ उन्होने[4] अपना ध्यान कूडे-कचरेमें डाले जाने वाले प्राचीन साहित्यकी अमूल्य निधिकी ओर फेरा जो विनष्ट हो रहा था।

ऐसे कर्मठ तपस्वी, साहित्यकार एव प्राचीन साहित्यके उद्धारककी सेवामें शतशत अभिनन्दन एव विनीत प्रणाम है।

●

मधुर स्मृति

प्रो० अखिलेश, एम० ए०

सन् १९५८ में एम० ए० परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त अनुसन्धान कार्य करने की और मेरी सहज प्रवृत्ति हुई और मैं अपने मनोनुकूल विषय चयन-करने हेतु प्रयत्नशील हुआ। आगरे से स्व० बाबू गुलाबराय एम० ए० एव आदरणीय डा० सत्येन्द्र जी (जयपुर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष) के कुशल सम्पादन में 'साहित्य सन्देश' नियमित रूप से प्रकाशित होता था। उसमें 'अज्ञात कविपरिचय' नामक लेखमाला के लेखकके रूप में प्राय आदरणीय श्री अगरचन्दजी नाहटाके लेख प्रकाशित होते थे। सयोगवश

---

१. राजस्थानमें हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थोंकी खोज, भाग २, प्रस्तावना।

२ ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह की भूमिका।

३. ज्ञानसार ग्रथावलीकी भूमिका।

४. वही।

एक दिन आदरणीय डॉ० व्रजलालजी वर्मा (डी० ए० वी० कॉलेज कानपुर) से नाहटाजी की विद्वत्ता और एकान्त साहित्यसाधनाकी चर्चा सुनकर मेरा भावुक मन नाहटाजीकी ओर आकर्षित हुआ और मैंने अपने विषय-चयन हेतु किंचित् सकोच-वश पत्र व्यवहार प्रारम्भ किया। तीसरे दिन नाहटाजीका स्नेहिल पत्र मुझे प्राप्त हुआ, जिसमें उन्होने अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक मेरा मार्ग-दर्शन करना स्वीकार करते हुए सूचित किया कि राजस्थान में अनुसधान कार्य हेतु सैंकडो विषय हैं, कठिनाई यह है कि कोई काम करने वाला ही नही मिलता।' लम्बे परामर्श के उपरान्त "जैन कवि वाचक मालदेव और उनका साहित्य" नामक विषय पर कार्य करना तय किया क्योकि मैं चाहता था कि अनुसन्धान कार्य की सारस्वत गरिमा और पवित्रता को सुरक्षित रखने हेतु ऐसे विषय का चयन किया जाना चाहिये, जो सर्वथा नवीन और साहित्यिक दृष्टि से उपयोगी हो। सागर विश्वविद्यालय की अनुसन्धान समिति ने डॉ० व्रजलाल के निर्देशन में शोध कार्य करने की स्वीकृति प्रदान की। बस यह मेरा नाहटा जी से प्रथम परिचय था।

अब विषय तो स्वीकृत हो चुका था परन्तु अन्यान्य समस्यायो के कारण लगभग दो वर्ष तक इधर-उधर की सूचनाएँ एकत्र करने के अतिरिक्त शोध कार्य में विशेष प्रगति न हो सकी। विषय राजस्थान से सम्बन्धित था। अधिकाश सामग्री वही थी परन्तु जाना न हो पाया। इस बीच मेरे प्रमाद को भग करने हेतु नाहटाजी के पचीसो पत्र मुझे झकझोरते रहे और उस दिन तो मैं आश्चर्य चकित अवाक् रह गया जब शोध में प्रकाशित कविवर मालदेव की रचनाओ का विस्तृत परिचय मेरी जानकारी हेतु उन्होने भेजा और प्रेम भरी फटकार सुनाते हुए शीघ्र ही बीकानेर आने के लिये आमन्त्रित किया। मरता क्या न करता! एक दिन कानपुर सेन्ट्रल स्टेशन से महीनो की शोध यात्रा की तैयारी कर राजस्थान के लिये रवाना हुआ और अपने आने की अग्रिम सूचना तार द्वारा नाहटाजी को भेज दी।

कानपुर से बीकानेर का लम्बा सफर! चौबीस घटे से भी अधिक का समय! गाडी सुबह सात बजे बीकानेर पहुँची। बीकानेर में पानी की कमी का मैंने मन ही मन अनुमान कर लिया था। अत: स्टेशन पर ही नहा धोकर नाहटों की गवाड (नाहटाजीका निवास स्थान) के लिये प्रस्थान करना उचित जान पडा। स्टेशन से बाहर आते ही मुझे सुखद आश्चर्य की अनुभूति यह जानकर हुई कि श्री नाहटाजीसे अधिकाश ताँगेवाले परिचित से हैं। तागे द्वारा नाहटाजीके यहाँ पहुँचा। नाहटाजी श्री अभय जैन ग्रथालय से घर की ओर भोजन हेतु आ रहे थे। तागा रुका! मुझे देखते ही बोले "मैं आज प्रतीक्षा ही कर रहा था और मुझे निश्चय था कि तुम इसी गाडी से आओगे। अच्छा हुआ आ गये। मार्ग में कोई विशेष कठिनाई तो नही हुई। लम्बा सफर था न! मेरी विचित्र स्थिति हो गयी जैसे मेरे मानस में काल्पनिक नाहटाजी की आकृति भाद्रपद की घनघोर घटा यामिनी में तीक्ष्ण दामिनी की भाति कौंधकर अकस्मात् विलुप्त हो गयी। अब मेरे सामने ढलती वय का एक ऐसा व्यक्ति खडा था जिसके सिर पर लम्बी ऊँची पगडी, बडी-बडी सघन किन्तु अधिकाश श्वेत मूँछें और उनके नीचे दमकती हुई ओष्ठ दीप्ति, आँखो पर मोटे फ्रेम का चश्मा, प्रशस्त ललाट, लम्बी सुघड नासिका, गेहुँवावर्ण—जो अब अपेक्षाकृत श्यामल हो चला है। श्वेत कुर्त्ता और धोती का सुन्दर आकर्षक राजस्थानी परिधान! स्नेहस्निग्ध व्यक्तित्व! किसी राजस्थानी चारण का गाया हुआ निम्नाकित दोहा मैं सस्वर गुनगुना उठा—

तन चोरवा मन ऊजला, भीतर राखै भावा।
किनकावुरान चीतवैं, ताकूँ रग चढावा॥

नाहटाजीने मुझे हृदय से लगा लिया और घूरते ही बोले—जल्दी से नहा धो लो फिर भोजन किया जाय। मैं प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

जिसे आदमी मन में बडा मान लेता है उसके बारे में सार्वजनिक रूपसे कुछ कहते हुए संकोच करता है। इसे मेरा सौभाग्य समझिये चाहे स्वभाव, जीवन के सभी क्षेत्रों में मुझे ऐसे व्यक्ति रत्नो का सानिध्य प्राप्त होता रहा है, जिन्होने अनायास ही मुझे अभिभूत कर दिया है परन्तु मैंने यथासम्भव अपनी यह भावना शीलवश कभी उनपर प्रकट नही की क्योकि कई बार आदर को व्यक्त कर देना, सो भी आदरणीय के सामने, एक प्रकार की वाचालता सी प्रतीत होती है। नाहटाजीके प्रथम साक्षात्कार के समय मानस में आन्दोलित विपुलभावोर्मिया तो शात हो गई परन्तु उनकी अयाचित कृपा दृष्टि से मेरे नेत्र सजल हो उठे।

नाहटाजीके सानिध्य में रहकर मैंने कविवर मालदेवकी दशाधिक रचनाओ की दुर्लभ प्राचीन पाडु-लिपियो से प्रतिलिपियाँ और काव्यमें व्यक्त विचारो को भलीभाँति समझता रहा। बीकानेर नरेश के अनूप सस्कृत पुस्तकालय और अन्यान्य स्थानो से सामग्री-सचयनका कार्य उन्ही की देख-रेख में सम्पादित हुआ। उनकी निस्पृह निरुपाधिक एकान्त साधना प्रात से सायतक श्री अभय जैन ग्र थालय में विगत चालीस वर्षोंसे अव्याहत गति से सतत प्रवाहमान है।

अभी तक नाहटाजीके सुयोग्य मार्ग-दर्शनमें सैकडो शोध-छात्रोंने प्राचीन इतिहास और साहित्यकी विभिन्न विधाओंमें शोध-कार्य द्वारा विश्वविद्यालयोंसे डाक्टरेटकी उपलब्धियाँ प्राप्त कर चुके है। राजस्थानकी विशिष्ट साहित्यिक पत्रिकाओंका उन्होंने वर्षों योग्यता पूर्वक सम्पादन किया है और भारतकी प्रसिद्ध पत्रि-काओंमें उनके तीन हजारसे भी अधिक विचार पूर्ण लेख प्रकाशित हो चुके है।

नाहटाजीके सम्पर्कमें बीते वे दिन आज बलात् स्मरण हो रहे हैं। राजस्थान, उत्तर प्रदेश, बिहार-उडीसा, बगाल, आसाम आदि प्रान्तोंमें फैले हुए व्यापारिक सम्बन्धोकी चिन्ताओसे तटस्थ वीतरागी नाहटा-जी भी भारतीके भाडारको नितनूतन रत्नोसे आपूरित करनेके लिए कृतसकल्प है। अनवरत अध्ययनके कारण उनकी नेत्र-ज्योति क्षीण हो रही है परन्तु उनको इसकी चिन्ता कहाँ। मनस्वी शरीरकी सीमाओंमें कब बँध सके हैं ? उन्हें तो जीवनके एक-एक क्षणको परहित हेतु अविकल भावसे उत्सर्ग करना है—

काछ हठा, कर बरसणा, मन चंगा मुख मिट्ठ,
रण सूरा जग वल्लभा, सो मैं विरला दिट्ठ,

नाहटाजी इस उक्तिके साकार स्वरूप है। परमचरित्रवान्, मोहवासना और भौतिक एषणाओंने उन्हें कभी पराभूत नही किया। विवेक ही उनका पथ-प्रदर्शन है और मधुर-भाषण सहज प्रकृति। 'रणशूर' तो वे है ही। अनेक साहित्यिक विधाओंमें उनकी एक साथ सहज गति और गहरी पैठ देखकर 'जगवल्लभ' की उक्ति भी सही चरितार्थ होती है। श्री नाहटाजी की मानस-सीपी अभी और कृतियोंके साबदार मोती देगी—उनके भावोके और सरसिज फूलेंगे विचारोका अभी और मकरन्द निर्पारित होगा, ज्ञानकणोका अभी और पराग विकीर्ण होगा—यह हमारा विश्वास है।

मैं नाहटाजीके अभिनन्दनको मा भारतीका अभिनन्दन मानता हूँ और उनके दीर्घ जीवनकी कामना करता हुआ अपने विनम्र प्रणाम अर्पित करता हूँ—

वन्दनाके उन स्वरोंमें एक स्वर मेरा मिला लो।



साहित्य-तपस्वी नाहटाजी

डॉ० ज्योतिप्रसाद जैन, लखनऊ

बन्धुवर श्री अगरचन्द नाहटा एक सद्गृहस्थ और सफल व्यापारी हैं। प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा उनकी विशेष नही हुई—शायद हाईस्कूल पास भी नही हैं और न किसी सस्कृत विद्यालय या परीक्षालयकी ही कोई उल्लेखनीय परीक्षा उत्तीर्ण हैं। एक सामान्य वणिक्पुत्रको जो कामचलाऊ स्वभाषामें पढने लिखने व हिसाब आदिकी चटसाली शिक्षा होती है उसीको लेकर वह चले।

वेपभूषा, आहार-विहार एव आदतें अत्यन्त सादा, तडक भडकसे कोसो दूर हैं।

वास्तवमें, उपरोक्त पृष्ठभूमि वाले व्यक्तिसे जिस बातकी आशा प्राय नही की जाती, उसे नाहटाजीने आश्चर्यजनक रूपमें करके दिखा दिया। साहित्यके क्षेत्रमें जिस चाव, उत्साह, लगन और अध्यवसायके साथ गत लगभग चालीस वर्षोंसे वह उत्कट एवं निरन्तर साधना करते चले आये हैं और फलस्वरूप जैसी और जो-जो उपलब्धियाँ उन्होंने प्राप्त की हैं, उसके अन्य उदाहरण अति विरल हैं।

पुरानी हस्तलिखित प्रतियोंकी खोज-तपास, अपने निजी पुस्तकालयमें उनका अथवा उनकी प्रतियो का सग्रह-सरक्षण, उनपर शोध और उक्त शोध खोजके परिणामोसे विद्वद्जगत्को तत्परताके साथ परिचित कराते रहना नाहटाजीकी प्रमुख साहित्यिक प्रवृत्तियाँ रही हैं।

उनकी दृष्टि मूलत. ऐतिहासिक है। तुलनात्मक अध्ययनकी ओर विशेष झुकाव है। उनका कार्य-क्षेत्र प्रमुखतया जैन साहित्य रहा है, उसमें भी विशेष रूपसे देशभाषाओ—हिन्दी, राजस्थानी, आदिमें रचित श्वेताम्बर साहित्य, किन्तु वह वहीतक सीमित नही है। दिगम्बर अथवा स्थानकवासी आदि साहित्य को जब जहाँ उनके दृष्टिपथमें आया बिना साम्प्रदायिक पक्षपातके उसी प्रकार उनकी दिलचस्पीका विषय बना। इतना ही नही, जैनेतर हिन्दी एव राजस्थानी साहित्य की शोध खोजमें भी नाहटाजीका योगदान पर्याप्त महत्त्वपूर्ण रहा है। विभिन्न विश्वविद्यालयोंके अनेक शोधार्थियोंको भी उनसे अमूल्य सहायता मिलती रहती है।

कई साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओंके तथा अभिनन्दनग्रन्थ, स्मृतिग्रन्थ, स्मारिकाओं आदिके सम्पादनमें सक्रिय भाग लेनेके अतिरिक्त दर्जनो छोटी-बडी पुस्तको की रचना नाहटाजीने की है। विभिन्न जैनाजैन पत्र-पत्रिकाओंमें प्रकाशित उनके लेखो की सख्या तो तीन सहस्रसे अधिक हो तो आश्चर्य नही।

आप दूसरे लेखको को कृतियो की समीक्षा भी खरी करते हैं। त्रुटियो या गलतियो को दो-टूक सीधे शब्दोमें, बिना किसी तकल्लुफके, गिना डालते हैं। साथ ही यदि स्वयं उनके किसी कथन या कृति की समालोचना कोई दूसरा करता है तो उसे भी अन्यथा नही लेते और अपनी भूल सुधार करनेमें सकोच नही करते।

श्री नाहटाजी की भाषा और शैली पडिताऊपनसे अछूती, सीधी, सरल, तथ्यपरक होती है। किन्तु लिखते ऐसा शिकस्त हैं कि उनके लेखो और पत्रो को, जब-जब वे स्वय अपने हाथसे लिखा ही भेज देते हैं, पढना एक अच्छी खासी कसरत हो जाती है। अपनी तो हम जानते हैं कि तीस वर्षसे कुछ अधिक समयसे उनके साथ पत्राचार है और उनके हाथके लिखे सैकडो पत्र प्राप्त हुए, पढे भी—पढने पडे, किन्तु अब भी यह दावा नही कर सकते कि उनका पत्र पाया और खटाखट पढकर सुना दिया। वैसे नाहटाजी बहुधा यह कृपा करते हैं कि अपने किसी सहायक आदिसे अपने लेखों की, और कभी-कभी पत्रो को भी नकल करवा कर अथवा बोलकर उनसे लिखाकर भेजते हैं।

छः-सात वर्ष पूर्व आरामें जैन सिद्धान्त भवनकी हीरक जयन्तीके अवसर पर मिलना हुआ था, उसके वाद अभी तक सुयोग नही मिला। किन्तु पत्रोके आदान-प्रदानमें कोई व्यवधान नही पडा। कई बार उनके साथ मतभेद भी हुए किन्तु शुद्ध साहित्यिक (एकेडेमिक) स्तर पर ही रहे, पारस्परिक सम्बन्धोंमें कभी भी रचमात्र कटुता नही आई, वरंच सौहार्दमें वृद्धि ही हुई। जितने जवरदस्त लिक्खाड वह हैं, कम ही देखनेमें आते है। मित्रोको लिखनेकी निरन्तर प्रेरणा देने वालोमें भी हमारे अपने अनुभवमें तो अद्वितीय सिद्ध हुए हैं। यह वात दूसरी है कि उनकी प्रेरणाएँ हमारी अपनी व्यस्तताओ, अस्वास्थ्य और सवसे अधिक प्रमादके कारण विशेष फलवती नही हो पाती और चाहकर तथा चेष्टा करके भी लिखनेकी होडमें हमने स्वय को उनसे सदैव कोसो पीछे पाया।

भाई अगरचन्द नाहटा अवश्य ही न शकल सूरतसे तपस्वी हैं, न रहन-सहनमें तपस्वी हैं, किंतु साहित्य की साधनामें उनका जो सतत एकनिष्ठ अध्यवसाय है, वह किसी तपस्वीसे कम नही है।

हिन्दी साहित्य जगत् पर सामान्यत और जैनसाहित्य जगत्पर विशेषत उनका जो उत्तरोत्तर वृद्धिगत ऋण है, उससे उऋण नही हुआ जा सकता। ऐसे मनस्वी, मनीषी ज्ञानाराधक बन्धु एव सहयोगीके सुयोगसे कौन गौरवान्वित अनुभव न करेगा। हमारी हार्दिक शुभ-कामना है कि बन्धुवर नाहटाजी शतायु हों और स्वस्थ सानन्द रहते हुए भारतीके भंडारको उत्तरोत्तर अधिकाधिक भरते रहें।



शोध वारिधि, नररत्न नाहटाजी

श्री रवीन्द्र कुमार जैन

सन् १९५७ की वात है, मैंने कविवर बनारसीदास पर, कुछ महत्त्वपूर्ण हस्तलिखित प्रतियाँ, जो श्री अगरचन्दजी नाहटाके निजी पुस्तकालयमें थी, देखनेकी इच्छा नाहटाजी के समाने प्रकट की थी। नाहटाजी ने तत्काल जो उत्तर दिया वह आज भी मुझे अक्षरश याद है। "मेरे निजी पुस्तकालयमें लगभग ३०,००० हस्तलिखित ग्रन्थ हैं। उनमें अनेक आपके काम के हैं। आप कभी भी आकर उनका यथेच्छ उपयोग कर सकते हैं। मैंने यह सग्रह आप जैसे शोधकोके लिए ही तो किया है। आप आइए और मेरे घरमें मेरे भाई की भाँति रहिए। आशा है, आप शीघ्र बीकानेर आएँगे।"

मैं नाहटाजीका पत्र प्राप्त करते ही बीकानेर गया। उन्होने मुझे वहाँ अपना पूरा पुस्तकालय सौंप दिया और स्वय मेरे लिए अनेक उपयोगी हस्तलिखित एव मुद्रित प्रतियाँ जुटायी। मेरा शोधका विषय उनका भी प्रिय-विषय था। अत उन्होने उसमें सहज ही आशातीत रुचि ली। कविवर बनारसीदासकी रचनाओपर समीक्षात्मक एवं गवेषणात्मक उनके कई लेख प्रकाशित हो चुके थे। केवल ग्रन्थोका सुझाव देना और विषयपर अपना महत्त्वपूर्ण मन्तव्य प्रकट करना ही उनके महान् एव शोधानुरागी व्यक्तित्वके लिए पर्याप्त न था, अत स्वयं बडी तन्मयता एव सतर्कतासे उन्होंने मेरी उस समय तक तैयार की गयी पाडुलिपिको सुना और कई महत्त्वपूर्ण सुझाव भी दिये। मैं नाहटाजी के घर लगभग आठ दिन रहा। प्रतिदिन वे मुझे तीन-चार घटे का समय देते रहे। मुझपर उनके इस दिव्य व्यक्तित्त्वकी अमिट छाप उसी समय पड गयी। वे अत्यन्त सरल स्वभावी, सादगीमय, विद्याप्रेमी एव विद्वत्प्रेमी हैं। वे मूलत· महान् नैतिक एव सास्कृतिक मूल्योंमें

आस्था रखनेवाले व्यक्ति हैं। प्राय लोग स्वय विद्वान् होते हैं, स्वयके उन्नयनके लिए ग्रन्थ लिखते है और स्वयके लिए ही धन व्यय आदि भी करते हैं। श्री नाहटाजीमें स्वयकी अपेक्षा दूसरोको विद्वान् देखनेका देवोपम गुण है। वे एक क्षणके लिए भी सम्पर्कमें आये व्यक्तिको भूलते नही। प्रत्येक को बारीकीके साथ याद रखते है। मैं उनके प्रति जितनी भी कृतज्ञता व्यक्त करूँ थोडी होगी, फिर उन्हें यह पसन्द भी नही है।

उनके परिवारने भी मुझे ऐसा अपनाया कि मैंने एक क्षणके लिए भी यह अनुभव नही किया कि मैं अपने घरसे दूर हूँ। प्राय· लोगोको अपने निजी रिश्तेदार भी एक ही दिनमें भार लगने लगते हैं फिर गैरोको तो कौन पूछता है? परन्तु नाहटाजीके घरमें यह भेदक-रेखा मैंने नही देखी। एक दो दिनके बाद तो मैं स्वय ही सहजतासे अपनी आवश्यकताकी सभी वस्तुएँ प्राप्त कर लेता था। स्नान, भोजन, चाय-पान आदिके लिए मुझे कोई बुलाये तभी जाऊँ, ऐसी बात न थी। नाहटाजी ने स्वयं ही कहा था 'आपका घर है, सकोच मत कीजिए।"

आज मैं शुद्ध हृदयसे यह अनुभव करता हूँ कि नररत्न श्री अगरचन्दजी नाहटाके गुणोका स्मरण करना, सचमुच स्वयमें कुछ बृहत्तर पा लेनेका ही एक भव्य प्रयास है। उनका अभिनन्दन कर उनको अभिनन्दन ग्रन्थ समर्पित करनेका भव्य आयोजन शतश प्रशसनीय एवं औचित्यपूर्ण है।

भारतकी शायद ही कोई साहित्यिक, सास्कृतिक एव शोधपरक पत्रिका हो, जिसमें श्री नाहटाजीके महत्त्वपूर्ण एव शोध परक लेख प्रकाशित न होते रहे हो।

अन्तमें मैं यही कहूँगा कि वे साधारण होते हुए भी असाधारण हैं, विद्वान् एव परम शोधक होते हुए भी विनयी हैं और वयोवृद्ध होते हुए भी विचारो, भावनाओ तथा शोधवृत्तिके स्तरपर चिर युवा हैं। वे व्यक्ति होते हुए भी एक संस्था हैं, एक युग हैं।



मेरे प्रेरणास्रोत

श्री प्यारेलाल श्रीमाल 'सरस'
एम० ए०, सगीत प्रवीण, वाद्य-विशारद,

२६ नवम्बर १९६१की सुबहका समय। उज्जैनमें आयोजित अखिल भारतीय लोक सस्कृति सम्मेलनमें मैं सेमिनारमें अपना निवन्ध 'शास्त्रीय एव लोक सगीत—एक तुलनात्मक विवेचन' पढ रहा था। मुझे नही मालूम कि उपस्थित विद्वानोमें स्वनामधन्य श्री अगरचन्दजी नाहटा भी हैं। मैं जब एम० ए० का छात्र था, तभीसे उनके नामसे भलीभाँति परिचित हो चुका था व उनके प्रति श्रद्धावनत था। उनकी विद्वत्ताके प्रभावने मेरे मनपर उनकी कुछ ऐसी तस्वीर बना दी थी कि सूटबूटमें कोई रोबदार चेहरेवाला व्यक्ति होगा अथवा धोती कुर्ते वाला होगा तो भी गुरू गम्भीर भावमुद्राधारी चेहरे वाला होगा। इस कारण भी उस समय उन्हें अपनी सादी परम्परागत बीकानेरी पोशाकमें पहचानना मेरे लिये सम्भव नही था। निवन्धवाचन के तत्काल पश्चात् मैं शाजापुर चला गया।

कुछ दिनोंके वाद साप्ताहिक पत्र 'श्वेताम्बर जैन' की प्रति मेरे पास आई। 'व्यक्ति दर्शन' स्तम्भके अन्तर्गत मैं अपना परिचय पढकर अवाक् रह गया और अधिक आश्चर्य तो यह देखकर हुआ कि उसके लेखक थे श्री अगरचन्दजी नाहटा। अखिल भारतीय क्या, अन्तर्राष्ट्रीय स्तरका विद्वान् कहूँ तो अतिशयोक्ति न होगी। ऐसा महान् व्यक्ति मुझ अकिंचनके सम्बन्धमें समय निकालकर दो शब्द लिखे, यह मेरे लिये कम गौरवकी वात नही थी। उन्होंने 'श्वेताम्वर जैन' में लिखा—'उज्जैनके श्री प्यारेलाल श्रीमालके नाम एव लेखोसे तो मैं परिचित था पर एक वार अखिल भारतीय लोक सस्कृति सम्मेलनके अधिवेशनमें मुझे उज्जैन जाना पडा तो वहाँ श्री प्यारेलाल श्रीमालका एक निवन्ध 'लोक सगीत एव शास्त्रीय सगीत'के सम्वन्धमें सुननेको मिला। उससे उनके सगीत प्रेम व जानकारीसे मैं विशेप प्रभावित हुआ। यद्यपि उनसे वातचीत करनेका मौका वहाँ नही मिल सका पर उनकी आकृति और व्यवहारसे उनके व्यक्तित्वका कुछ आभास मिल गया। 'आवश्यकता है ऐसे छिपे हुए रत्नोका समाजकी ओरसे उचित सम्मान किया जाये, उनसे लाभ उठाये और उन्हें आगे बढनेमें प्रोत्साहित करे।'

मेरे सम्वन्धमें इतने विस्तारसे जानकारी श्री नाहटा साहवको किसने दी होगी, जव मैंने यह विचार किया तो मुझे लगा कि फरवरी १९६२ के 'सगीत'में श्री शीतलकुमार माथुर 'संगीत प्रभाकर' द्वारा लिखित मेरी जीवनीसे उन्होने सहायता ली होगी। वडी देर तक फिर मैं यह सोचता रहा कि जो व्यक्ति सैकडो दुर्लभ ग्रन्थोके मनन चिन्तनमें व्यस्त है, जिसका मस्तिष्क सैकडो कठिन विपयोकी सामग्रीका कोष वन चुका है, उसकी स्मरण शक्ति यह भी वतानेके लिए समर्थ है कि किस मासके किस पत्रमें संगीतके एक अदनेसे उपासक प्यारेलाल श्रीमालकी जीवनी छपी हुई है। श्री नाहटा साहवकी इस तीव्र स्मरण शक्तिका लोहा मानते हुए मुझे अपने उन सहपाठियोपर तरस आया, जिनकी स्मृतिसे मेरी शक्ल कुछ ही अरसा गुजरनेके वाद ओझल हो चुकी है।

'श्वेताम्बर जैन' को पढकर मेरे अभिभावक श्री सौभाग्यमलजी जैन वकीलने मुझे वताया कि मेरे निवन्धपठन वाले दिन शामको श्री नाहटा साहवसे उनकी भेंट हुई थी। श्री नाहटा साहवने प्राचीन ग्रन्थोको देखनेकी तथा जैन समाजके प्रमुख लोगोसे मिलनेकी इच्छा प्रकट की। प्रमुख लोगोमें किसीने स्थानीय मिल मालिकका नाम वताया। तव वे तुरन्त वोले—'मुझे ऐसे व्यक्तियोसे मिलना है जो कलाकार हो, साहित्यकार हो, समाजसेवी हो।' तब श्री सौभाग्यमलजीने मेरा नाम सुझाते हुए कहा कि वे आज निवन्धपठनके वाद शाजापुर चले गये हैं।

समाजमें कलाकार, साहित्यकार, समाजसेवीकी इस प्रकार खोज करने वाले तथा उदीयमान प्रतिभाओको प्रोत्साहन देने वाले श्री नाहटा साहवके समान जैन समाजमें कितने लोग मिलेंगे? आज भारतवर्षमें दूर-दूर से अनेक पण्डित और शोध-छात्र उनसे मार्ग दर्शन प्राप्त कर रहे हैं। श्री नाहटा साहव सच्चे अर्थोमें एक जौहरी है। वे यत्रतत्र विखरे रत्नोकी परख जानते हैं। उनके अन्तरमें इस वातकी तडप है कि इन रत्नोका सही मूल्याकन हो, सही उपयोग हो ताकि समाज और राष्ट्रका भला हो। यही कारण है कि उन्होने विना मेरे साक्षात्कारके, विना किसी प्रकारके विशेष परिचयके मुझे पहचान लिया व मुझे प्रोत्साहन प्रदान किया।

वे केवल 'श्वेताम्वर जैन' में मेरा परिचय भेजकर ही चुप नही रहे, अपितु एक पत्र भी मुझे भेजा जिसमें उन्होने लिखा कि आप जैन सगीत पर शोध कार्य कीजिए व तत्सम्वन्धी पार्श्वनाथ जैन सगीतसार, सगीतोपनिषद् सारोद्धार आदि ग्रन्थोके नाम भी सुझाये। इस अमूल्य प्रेरणाने मेरे जीवनको एक नई दिशा

प्रदान की है और उनके आशीर्वाद से इस कार्यमें जुट गया हूँ। जैन संगीतके प्रति उत्पन्न मेरी इस रूझानने अब मुझे 'आनन्दघनजी महाराज' पर भी लेखनी उठानेको विवश किया है।

देशके प्रकाण्ड विद्वान्का इतना मुझपर अनुग्रह ! मैं व्यग्र था उनके दर्शनोके लिए। सहसा एक दिन एक मित्र बोला—"श्री नाहटाजी उज्जैन आये हुए है और आपको याद किया है" मेरे हर्षकी सीमा नही थी। पहली बार दर्शन किये। बीकानेरी पगडी, लम्बाकोट, दोलगी धोती। बातचीतसे यह पता नही लग रहा था कि किसी महापण्डितसे बात कर रहा हूँ या किसी एक सामान्य व्यापारीसे जो संकोच, शिष्टाचार और बातचीतका व्यवस्थित तारतम्य मैं मनमें जुटा कर ले गया था, वह उनके मिलते ही न जाने कहाँ काफूर हो गया। सादगी और सरलताको मैं मूर्तरूपमें देख रहा था। अपना वेश, अपनी भाषा, अपनी सस्कृतिकी बात करने वाले तो बहुत देखे किन्तु श्री नाहटाजीको देखकर मुझे लग रहा था कि बात करना कुछ अलग होता है और आचरण करना कुछ अलग। उसी दिन शामको आपके सम्मानमें जैन समाजकी ओर से एक समारोह आयोजित किया गया। इस आयोजनमें जो विचार आपने प्रकट किये, उनसे मुझे आपकी उत्कट लगन, कठिन परिश्रम, अनन्य विद्यानुरागके बारेमें विस्तारसे प्रेरणास्पद जानकारी मिली।

श्री नाहटाजी से मेरी दूसरी भेंट हम्पी (मैसूर राज्य) में श्रीमद्राजचद्रजी शताब्दी महोत्सव के अवसर पर हुई। स्व० श्री सहजानदजी महाराजजीने दोपहर ३ से ४ का समय श्री नाहटा साहब के विचारो को सुननेके लिये नियत करा दिया था। उपस्थित विशाल समुदाय ने कई विकाश योजनाएँ बनायी व झुकाव आमन्त्रित किये। श्री नाहटाजी एकमात्र व्यक्ति थे जिन्होने सुझाव रखा कि श्रीमद् राज-चन्द्रजीके साहित्यका विभिन्न भाषाओ में अनुवाद कराया जावे व उनका अधिकसे अधिक प्रचार किया जावे। मेरी समझमें यह सबसे महत्त्वका सुझाव था। जिस जैन महापुरुषने विश्ववन्द्य बापू का निर्माण किया उस महापुरुषका नाम विश्वके जन-जन के मुँहपर जहा होना चाहिये वहा जैन समाज के ही अधि-काश लोग नही जानते। यह कितने बडे दुर्भाग्य की बात है। यह स्थिति प्रमाणित करती है कि हम लोग प्रचार कार्यमे कितने उदासीन हैं। मुझे खेद है कि श्री नाहटाजी के इतने महत्त्वपूर्ण सुझाव पर पूरी तरह अमल नही किया गया। हा, एकत्रित चन्देसे धर्मशाला बनवानेमें अवश्य सयोजकों ने विशेष रुचि ली।

श्री नाहटाजी साहब के विचारोमें पूर्वाग्रह नही है। वे बदलते युगके साथ दौड लगाते हैं और जब तक उनकी वैचारिक दौड युगानुकूल चलती रहेगी, वे कभी बूढे नही हो सकते, सदैव युवा हैं ऐसा मानता हूँ। कहावत है—बडे मे बडा व्यक्ति वह है जो छोटी से छोटी बातका ध्यान रखता हो। सरस जैन भज-नावली भाग ३ की प्रति मैंने भेजी तो तुरन्त मुझे सम्मति प्राप्त हुई, जिसमें श्री नाहटाजी ने लिखा—"वास्तवमें फिल्मी विकार वर्द्धक गीतोकी जगह ऐसे गीतोका प्रचार होना ही चाहिए। फिल्मी तर्जोंके गीत बनाते रहिए। पत्र-पत्रिकाओमें भी छपवाते रहें, इससे प्रचार बढेगा। आपका प्रयास सराहनीय है।" यह भजना-वली फिल्मी गीतोकी धुनपर आधारित है। कई विद्वान् पण्डित और आचार्य भी फिल्मी धुनोको आधार बनाना हेय समझते हैं किन्तु वे ये नही जानते कि भजनो को सर्वाधिक लोकप्रिय बनाने तथा उनका प्रचार करनेके लिए फिल्मी धुनसे बढकर अन्य माध्यम नही हो सकता है। स्वनुभावके आधार पर मैं कह सकता हूँ कि फिल्मी धुनो के आधार पर भी उत्तम काव्य रचना हो सकती है। धर्म प्रचारके लिए मेरे इस लघु कार्य को उपयोगी जानकर उन्होने तुरन्त सम्मति भेज दी। अब बताइए, इस छोटेसे कार्य पर ध्यान देने वाला व्यक्ति क्यो नही महान् होना चाहिए।

एक दो पुस्तकें लिख लेने पर जो लोग समझते हैं कि जीवनमें बहुत बडा काम कर लिया और

उसके बाद अपने आपको कार्य निवृत मान लेते है। उनके लिए श्री नाहटाजी साहेब का जीवन ज्वलत आदर्श है। श्री नाहटाजीके लेखोंके केवल शीर्षककी सूची ही पुस्तिका बन जायेगी । इतना पठन-पाठन और लेखन करने वालेमें आज इस आयुमें भी वही स्फूर्ति एव कार्यक्षपता विद्यमान है, जो एक युवकमें पाई जाती है। उनके स्वास्थ्य कार्य क्षमताका कारण जहा तक मैं समझता हू सामायिक, प्रतिक्रमण व्रतादिका यथेष्ट परिपापालन हैं। जिस व्यक्तिसे आपको यथासमय उत्तर प्राप्त नही होता और मिलने पर वह कह सकता है कि "मुझे खेद है कि उत्तर भेजनेका ध्यान ही नही रहा अथवा अमुक अमुक कारणसे विलम्ब हुआ।" वह मात्र अपनी लापरवाहीके दोषको छिपाता हैं। यह दोष भी आदमीको बड़ा आदमी नही बनने देता क्योंकि जो पत्रका उत्तर देनेमें आलसी है, वह जीवनके अन्य कार्योंमें भी आलस करता ही है। अनावश्यक पत्रोका उत्तर न देना एक अलग बात है। जिन लोगोका 'पत्रव्यवहार श्री नाहटा जैसे है वे यह स्वीकार करेंगे कि उनका उत्तर अपेक्षित समयसे पूर्व ही प्राप्त होता है ।

जीवनमें कई बार कई लोग सहसा बिना बनाये गुरु बन जाते है। मेरे जीवनमें श्री नाहटा जी का यही स्थान है। उनसे मैंने जीनेकी कला सीखी है। मैं मानता हू कि मेरे अतिरिक्त अनेकोने सीखी होगी क्योंकि दीपक जब जलता है तो रोशनी किसी एक पतगे तक सीमित नही करता, जहा जहा तक उसकी पहुँच होती है उसमें आने वाले हर प्राणीको वह प्रकाशित कर देता है ।

परमपितासे यही विनय है कि वह लक्ष्मी और सरस्वती के वरद पुत्र श्री अगरचन्दजी नाहटाको दीर्घायु करें।



श्री शोध के अजस्र प्रेरणा स्रोत

डॉ० भागचन्द्र जैन भास्कर

श्रद्धेय श्री अगरचन्दजी नाहटा प्रतिभाके धनी साहित्यकार हैं। उनकी पैनी दृष्टि और प्रभावी लेखनी से एक ओर जहाँ विविध साहित्यकी सर्जना हुई है, वही दूसरी ओर साहित्यकारो, शोधको और अध्येताओंका जन्म भी हुआ है। नाहटाजीकी शोधप्रियता, सरलता और स्नेहिल सहानुभूतिने उन्हें ज्ञानके क्षेत्र में अत्यन्त लोकप्रिय बना दिया है उन्हें चलता-फिरता एक विश्वकोश भी कहा जाय तो अत्युक्ति नही होगी। यही कारण है कि शोधको को जिस किसी भी सूचना की आवश्यकता होती है। वे नाहटाजी को पत्र लिखते रहते हैं और नाहटाजी भी उपलब्ध सूचनाओंसे तत्काल अवगत कराने का प्रयत्न करते हैं।

मैंने सन् १९६० में जब संस्कृतका एम. ए पूरा किया तो पी-एच.डी. करने की बात मनमें आयी और तुरन्त नाहटाजी को विषय पानेकी इच्छासे पत्र लिख दिया। लगभग एक सप्ताह बाद ही उनका उत्तर मुझे प्राप्त हो गया जिसमें शोध विषयो की एक अच्छी खासी तालिका दी हुई थी। मुझे बडा आश्चर्य हुआ कि इतना व्यस्त व्यक्ति उत्तर देनेमें इतना तत्पर कैसे है।

अभी सन् १९६८ में कोल्हापुरमें प्राकृत संगोष्ठी हुई थी। वहा आपसे प्रथम भेंट करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ बडे स्नेह और प्रेमसे वे गले मिले। काफी देर तक साहित्य के सन्दर्भमें विचार विमर्श हुआ। वे नि सन्देह शोधके अजस्र प्रेरणा-स्रोत है। हम उनके स्वास्थ्य और दीर्घायु होनेकी कामना करते है।



मैंने पत्र लिखनेसे पूर्व न जाने कितना साहस सजोया था। सोचता था कि पत्र लिखूँ। न जाने, उत्तर देंगे या नही। सुन रखा था कि वे बड़े व्यस्त रहते हैं। अत्यधिक अध्ययनशील है। इस वृद्धावस्थामें भी पुस्तक आँखोसे ही लगाये ही रहते है। कभी एक क्षण भी व्यर्थ नही गँवाते। अध्ययन, मनन, अनुशीलन, चिन्तन और लेख उनके दैनिक जीवनके अमिट अग हैं। साहित्य-सेवाकी अजीव धुन है उनमें। लगभग दस-पन्द्रह दिन उधेड-बुनमें पडे रहनेके बाद ही साहस जुटाकर मैं वह पत्र लिख पाया था।

पीरियड प्रारभ होनेमें मुश्किलसे एक मिनट शेप था। पत्र प्राप्त होनेपर उसे पढनेका लोभ सवरण-कर सकना हरएकके वशकी बात नही। किसी अनासक्त पुरुषकी बात मैं कहता नही। पत्र हाथमें आते ही उसे पढनेकी जो सहज स्वाभाविक उत्सुकता जगती है, उससे अपनेको पृथक् रखना मेरे हाथमें नही। फिर, श्री नाहटाजीका पत्र। उसने तो मेरी उत्सुकताको आतुरतामें ही परिणत कर दिया।

सुख मिश्रित आश्चर्य एव उत्सुकतापूर्ण आतुरतासे स्पन्दित हो, मैंने पत्र खोला। जैसे-जैसे मैंने पढा, मैं प्रसन्नतामें डूबता गया। मैंने जितनी सूचनाएँ चाही थी, उनसे कही अधिक उनके पत्रमें थी। मैंने पी-एच डी के लिए अपने स्वीकृत विषय: 'राजस्थानीके शृगार रस परक दोहा साहित्यका अध्ययन' से सम्बन्वित सामग्रीके सकलनमें सहायता प्रदान करनेकी याचना उनसे की थी। श्री नाहटाजीने कई प्रकाशित-अप्रकाशित मूल एवं सन्दर्भ ग्रन्थोके प्राप्ति-स्थान ही नही बताए, प्रत्युत उनमें कई ग्रन्थ डाक द्वारा भेज देनेके लिए भी कहा और कई ग्रन्थ नकल करवाकर भेजनेका वचन दिया। उन्होने एक ऐसे ग्रन्थसे भी अवगत कराया, जिससे मैं बिल्कुल अपरिचित था। उन्होने कई-एक ऐसे विद्वानोंका नामोल्लेख कर, उनसे सम्पर्क स्थापित करनेके लिए भी लिखा, जिन्होने राजस्थानी दोहोपर शोधकार्य किया था।

एक-दो बार ही नही, मैंने उस पत्रको कई बार पढा। मुझे लगा, जैसे मैं कोई 'साहित्य कोश' पढ रहा हू। मैं श्रद्धाभिभूत हो गया। एक क्षणके लिए मैं न जाने किन-किन भावोमें और कहाँ-कहाँ डूबने-उतराने लगा। मेरे मनमें श्री नाहटाजीका जो चित्र अकित था, उसमें श्रद्धादेवी भाव-तूलिकासे विविध रग भरने लगी। कितने विद्वान् हैं वे? जिस समय मेरा पत्र पहुंचा, तत्क्षण उन्होने पत्रोत्तर टाइप कराकर भिजवा दिया। एक दिनकी भी टाल-मटोल न की। उनके सत्यनिष्ठ मनने किसी बहानेका भी आश्रय न लिया। कितने निरालस्य और कर्मठ हैं वे! साहित्यका कितना ज्ञान है उन्हें? वे निस्सन्देह एक साहित्यकोश ही हैं, अन्यथा इतनी अधिक जानकारी तुरंत ही कैसे दे देते हैं? किसी पत्र-लेखकके पत्रोत्तर चाहने की प्रतीक्षा-कुलतासे कितने परिचित है वे? स्यात्, इसीलिए मेरे पत्रका उत्तर उन्होने शीघ्र ही दे दिया। एक अपरिचितके प्रति भी वे कितना सहज-स्वाभाविक स्नेह रखते हैं और उनके निश्छल एव निस्पृह हृदयमें आत्मीयता एव उदारता का अगाध उदधि ही उमड रहा है, यह मुझे उसी दिन ज्ञात हुआ। अब वह चित्र मेरे श्रद्धा मनमें सजीव हो चुका था और मैं उसे एक सप्राण 'साहित्य कोश' के रूपमें देखकर, अपने लघु हृदयका श्रद्धार्घ्य चढाता हुआ, भाव-विह्वल हो रहा था।

एक-एक करके उनके कई पत्र आए और डाक द्वारा दो ग्रंथ भी दो प्रत्येक पत्रमें शोध-सम्बन्धी किसी-न-किसी ग्रथकी सूचना और प्रेरक सदेश रहता है। श्री नाहटाजीका साहित्यकार अत्यन्त निस्पृह, सरल सजग, शोध-पटु, प्रेरक और ईमानदार है। उनकी शोध परक दृष्टि अत्यन्त सूक्ष्म एवं व्यापक है और शोधकार्यके प्रति उनमें उत्साह तथा अनुराग अपार हैं। पवन और प्रकाश-रहित स्थानो पर अज्ञात-वासका दण्ड भोगते हुए प्राचीन हस्तलिखित ग्रथोका उद्धार कराना और उन साहित्य-सर्जको को पुनर्जीवन दिलाना उनके जीवनकी प्रमुख साध है। शोधार्थीकी सहर्ष सहायता करना ही जैसे उनका स्वाभाविक धर्म ही है। मानो, उन्होने अपना समस्त जीवन साहित्य-साधना और शोध कार्यके निमित्त ही समर्पित कर

रेखा हो। सैकड़ों अनुसंधाता उनकी कृपादृष्टिसे कृतकार्य हो सकते हैं। वे अनुसधायकोके लिए अजस्र प्रेरणास्रोत हैं। एक बार भी यदि कोई किसी तरह उनके सम्पर्कमें आ गया, तो समझो कि उनके कृपामृतसे सराबोर हो गया।

'मति अति नीच ऊँचि रुचि आछी।
चहिअ अमिअ जग जुरइ न छाछी॥'

इस उक्तिको चरितार्थ करनेवाला मुझ जैसा व्यक्ति भी इस महान् साहित्यिक सतके स्नेहामृतका भाजन बन गया, इसे मैं अपना सौभाग्य समझूँ या उस संतकी प्रकृत उदारता और कृपा ?

वस्तुत., वन्दनीय है वह साहित्यिक सत और अभिनदनीय है उसका महान् साहित्यकार तथा साहित्य कोश, जिसके कृपाभावने मुझे भी सौभाग्यशाली बना दिया।

प्रभुसे प्रार्थना है कि समादरणीय श्री नाहटाजीके साहित्यिक कल्पवृक्षकी सुखद एव स्निग्ध छाया शताधिक वर्षों तक शोधार्थियो एव साहित्यकारो को आश्रय प्रदान करती रहे और युग-युग तक साहित्य-साधकोको शक्ति प्रदान कर राष्ट्रभाषा की अभिवृद्धि करती रहे।

आज सोचता हूँ कि कितना महान् था वह शुभ क्षण, जब मैंने उन्हें वह पत्र लिखा था—

शरद्-चन्द्र शत वर्ष हर्षयुत 'अगरचद' के गाये गान,
शत बसंत फूलों को भरकर भेंट करें सादर मुस्कान।
हिन्दी हुई समृद्ध प्राप्तकर जिनका साहित्यिक अनुदान,
उनसे राजस्थान न केवल उपकृत हिन्दी-हिन्दुस्तान॥



राजस्थानी रा राजदूत

श्री रतन साह, कलकत्ता

श्री अगरचन्दजी नाहटा राजस्थानी भाषा-प्रेमियो खातिर एक व्यक्ति विसेस नी रैया है—वै भासा-इतिहासका एक अध्याय है। उण रै अभिनन्दन ग्रंथमें लिखता टेम कलम थोडी कापै कै उण सरीखै विसाल अर महान् भासा-ऋषि खातिर मेरे द्वारा प्रयोगमें लायै जाणै हाला सबद उण रै जोग होगा कै नई ? भाषा-इतिहास माय कोई एक मिनख ओयारो नजर नी आवै है कै जिणसू अणरी तुलना करी जा सकै। नाहटाजी रो व्यक्तित्व सूरज री किरण रो रग है जीरो सानी मिले नी—प्रिज्म (Prism) नै सामी रख, र ओ किरण नै रगपट पर साहूँ रगामें तोडा तो एक-एक रग री जोड़ भला ओ इतिहास रै पानामें नीगै आवै। नाहटाजीमें चौदहवी सदी रै इटली-पुनर्जागरण रै विद्वान् पोगियो ब्रसिओलिनि (Poggio-Bracciolini) री झलक दीखै, जिको इटली रै पुरातन नै देख'र बोनल्यो, 'इब भारी भरकम लास री तरिया उपेक्षित रूपमें पडी है, जघा-जघासे खज्योडी, खायोडी, ओ नै झाडो-संवारो', राजस्थानी खातिर ए ही सबद नाहटाजी जघा-जघा बोलता कि रैवै है। दूजा लोग सुण'र चेत्या हो या ना हो, खुद नाहटाजी अरबिना रोड्यूक (Duke of urbino) वणैगा जिको कै पुरातन काल सै लगा'र वी टेम तक रो वृहत्तम लाइब्रेरी री निर्माण ४० बरसा ताधी १४ लिपिका नै लगा'र कर्‌यो।

नाहटाजी रो पुस्तकालय राजस्थानी रो तीरथ है। ओर सब बाता नै बाद देय'र खाली ओ संग्रहालय ही उण नै अभिनदन रो अधिकारी वणा देवै है। तीन चार वरस पैली मैं जद बीकानेर गयो तो टैस्टिरोरी री समाधि रा दरसण करणै रै बाद नाहटाजी रै सग्रहालय नै देखणै री इच्छा राखी—नाहटाजी वी टेम बीकानेरमें नी हा पण श्री श्रीलालजी नथमलजी जोशी म्हानै पूरो सग्रहालय दाखायो—अर मैं अनुभव करूँ कै वो पुस्तकालय नाहटाजी री राजस्थानी री सेवा रो इतिहासिक नमूनो है।

मेरो नाहटाजी सैं मिलणै रो सौभाग्य पैली पोत १९६५ में हुयो। ओर मैं अपणै आप नै सौभाग्यसाली समझूँ कै इण ६ वरसामें नाहटाजी रो मनैं ओस जोग स्नेह, मार्ग दर्शन व सहयोग मिल्यो।—राजस्थानी खातिर नाहटाजी हर रूपमें, हर रगमें, तय्यार है। मैं लाडेसर रो प्रकासन वद कर दियो पण आज भी ओजू प्रकासन री पूरी-पूरी सम्भावना बणी पडी है—ओरो श्रेय नाहटाजी अर ओकार पारीक नै है—जिणारी चिढिया कम वेसी दिना रै पछै तै सूम्हारी दफ्तर री मेज पर आ धमकै अर मनै कर्तव्य रो बोध करावै। नाहटाजी रै बाबत ओर कुछ नी लिख'र मैं कुछेक घटनावा रो जिकर कर्‌यो चावू हू, जिकी कै उण रै व्यक्तित्व री मुहबोलती परता है।

प्रेरणा रा स्रोत

सन् १९६५ री बात है—कलकत्ता विश्वविद्यालय की ओर सू आयोजित एक भाषण मालामें श्री नाहटाजी राजस्थानी साहित्य पर भाषण देणै खातिर आमन्त्रित हा। घणो दुख है कै वी भासणा माय मुस्किल सैं ४०-५० लोगों री उपस्थिति ही। उण दिना मैं कानून अर कामर्सरी पढाई खत्म ही करी ही—सो विश्वविद्यालय सैं सम्बन्ध वणयोडो हो। मैं भी भासण सुण्या। राजस्थानी (मारवाडी) लोगा नै, प्रवासमें खाली पीसो कमाणै हाकी कोम री दृष्टि सैं जाण्यो जावै है। हीन-दृष्टि सै देख्यो जावै है। बाहरी लोगा नै आ ही वात नजर आवै-पण साच तो कुछा ओर ही है। मेरो ओ निश्चित मत हो कै आवा आपणी भासा नै उजालैमें नई ल्यावा जद तक आपणै समाज रो ऊजलो रूप भी चौडै नईं आ सकै। पण मेरो ज्ञान आपणी भासा रै सम्बंधमें बिल्कुल थोडो हो, ओ बोल'र पुराणा एनसाइक्लोपिडियाज अर दूजा ग्रथ बाचणा पड्या—मनमें ढाढस वधो कै राजस्थानी अेक सुतत्र व समरथ भासा रैई है। कलकत्तैमें राजस्थानी रो कोई उत्साहवर्द्धक वातावरण नई हो। श्री अम्बू शर्मा सैं थोडी भोत चरचा होती अर म्हे दोनू बिना पाख रै पक्षिया री तरै कोसीसा करता, उडान नी भर पाता। नाहटाजी सैं ओ भासण माला री टेम भेंट हुई। मारवाडी छात्र संघमें मैं उण रो भासण आयोजित करवाणो चावै हा—मैं नाहटाजी नै पूछ्यो कै आप राजस्थानी भासा री सवैधानिक मान्यता रै सन्दर्भमें बोलणैरी कृपा करोगा के ? नाहटाजी जो सवद म्हानै कैया, वै आज भी मेरै याद है।" ओ दिसामें सोचणिया अर सुणणिया लोग अठे है के ?" अर म्हानै वै कैयो कै आपणी भासा हर कसौटी पर, हर टेस्ट पर पूर्ण भासा है—कोई भी इसो प्रश्न उठै जी रो उत्तर थे नईं दे सको तो मनैं लिख दियो—पूरी खातिरी सैं आपा पेटो भर देवागा। थे कोई तरै सैं भी मता घबरायो।

मैं आज आ वात लिखतो नी हिचकिचाऊँ कै उण री ओ तरै री वाता रै कारण ओ म्हें कलकत्तैमें राजस्थानी रो सुवाल वुलन्द कर्‌यो अर लाडेसर रै रूपमें विरोधियारी चुनौतिया रो उत्तर दे सक्या। लाडेसर रै सुरूरा अक देखकर कुछ साहित्यकार जिणा नै म्हे म्हारी कमिया वता दी ही, वी रै बावजूद भी आ राय दी ही कै म्हे लाडेसर वन्द कर देवा ओर कुछ दिना उणरै द्वारा वतायै गयै साहित्यकारा सैं राय मसविरो करा, दिग्दर्शनमें काम करु। वी टेम डा० मनोहर शर्मा अर रावत सारस्वत रै अलावा श्री

नाहटाजी ही हा, जि का कमर थेपेडी-अर आगँ बढण री राय दी। ओ तरँ सै नाहटाजी अटूट प्रेरणा रा स्रोत नजर आवँ ।

नाहटाजी अर सेठ गोविन्ददास—कलकत्तेमें आयोजित अेक समारोहमें सेठजी अर नाहटाजी दोनू आमन्त्रित हा। सेठजी हिन्दी री तारीफमें बोलता बोलता राजस्थानी रैं बारैं में कुछ ओ तरँ की बात कैयी जी सै रौ अरथ हो कै राजस्थानी रो अलग अस्तित्व नई है, क्यूकै इण रो कोई व्याकरण, सबस कोस नई है। नाहटाजी मेंच पर ही ओ बात रो विरोध करणै री कैई, जणा सेठजी आपरी गलती मानी अर कैयी कै म्हारो मतलब अरे नई हो। नाहटाजी री ओ तरैंरी दबंगता कई जवा देखणैमें आई है। (ओ घटना री टेम मैं खुद उपस्थित नई हो—सुण्योडी बात लिखी है)।

नाहटाजी अर डा० सुनीति कुमार चटर्जी—केन्द्रीय साहित्य अकादमी री विसेसग्य समिति री ओर सू राजस्थानी भासा नैं साहित्यिक-मानता दियै जाणै री सिफारिस कर दी गई है—ओ बात री सूचना राजस्थान सरकार अर राजस्थानी साहित्य अकादमी कोई नैं भी नई वी। श्री नाहटाजी जघा जघा पोस्टकार्ड गेर'र सूचना दी। कार्यकर्तावा रा सुपना साचा हुया—ओ मोटी जीत पर घणो हरख होयो। म्हैं कलकत्तेमें ओ वेला एक महत्त्वपूर्ण गोष्ठि करणै री सोची। कुछेक दिना बाद श्री नाहटाजी रो भी कलकत्तै आणो हुयो। सभा रो आयोजन कर्‌यो गयो। मैं चावै हो कै डा० सुनीतिकुमार चटर्जी ओ सभा री अध्यक्षता करैं। उणसैं मिलणै गयो। वैं कुछ टेकनीकल दिक्कता प्रकट करता हुया कैयो कै मैं अध्यक्षता तो नई करतो पण श्री नाहटाजी भी आयोड़ा है तो उणरी बात सुणनेरी इच्छा जरूर ही—लेकिन बी टेम ओ एशियाटिक सोसाइटी री कोई सभा ही, सो वैं बोल्या कै मैं आ नी पाऊ गा। डा० चटर्जी कैयो कै राजस्थानी रैं अलावा अेक दो अन्य भासावाँ नैं भी साहित्यिक-मानता दे णै खातिर विचार-विमर्श हो पण उणरा विद्वान् दिल्ली आणैंमें डर्‌या। आपरा नाहटाजी दबगता सैं अकादमीमें, आया, अर उणरी भेस-भूसा, बात रैं ढग नैं देख'र ओ लोगा नैं विस्वास हो गयो कै राजस्थानी सुतंत्र भासा है। राजस्थानी री सुतन्त्रता रैं बाबत कोई नैं भी सन्देह होणै री चीज ही नइ ही—सो विसेसग्य समिति आपरी सिफारिस भेज दी है। मैं नाहटाजी मैं भोत प्रभावित होयो हूँ। दूसरे दिन मैं नाहटाजी नै डा० सा'ब रैं घरा ले गयो। दोनू व्यक्तियो री मुलाकातमें मनैं भी सामिल होणै रो सोभाग्य मिल्यो अर मनैं लिखता खुसी है कै नाहटाजी बी पूरी मुलाकातमें मायड भासा री उन्नति खातिर भविस्यमें के कदम उठाणा चायै, ओ बात पर ही चरचा करता रैया।

राजस्थानी नैं प्रान्तीय भासा रो हक दियावो—अब अन्तमें बी सभा री अेक घटना ओर याद आवै, जिकी कै मानता रैं उपलक्षमें राजस्थानी प्रचारिणी सभा करी ही। सभा भाप श्री लोढाजी रैं प्रस्ताव नैं कै राजस्थानी नैं प्रान्तीय भासा रो दरजो देवणो चाये—पूरो समर्थन मिल्यो। ओ सभामें ओ, श्री भवरमलजी सिंघी भी उपस्थित हा। अर वैं ओ सन्देह प्रकट कर्‌यो कै राजस्थानी शिक्षा रो माध्यम नई रैयी है—अर अब ओ तरैं री भाग सैं सायद कुछ दिक्कता खडी हो ज्यावै। श्री नाहटाजी आपरैं भासण माय सिंघीजी रैं ओ सदेह नैं आधारहीन बतायो अरैं कैयो कै राजस्थानी भोत दिना तक राजस्थानमें प्राथमिक शिक्षा री माध्यम रैयी है अर ओ नैं शिक्षा रो माध्यम बणाया ई प्रात री चूँतरफा प्रगति हो सकैगी।

किरणी ही घटनावा है, जिकी श्री नाहटाजी रैं बारैंमें लिखी जा सकै है। मैं राजस्थानी प्रणारिणी

सभा, लाडेसर अर कलकत्तै रै दूजै राजस्थानी साहित्य-प्रेमियो री ओर सू श्री नाहटाजी रो अभिनंदन कुरू हूं अर कामना करु कै उणरो सहयोग राजस्थानी नै भोक बरसा ताणी मिलै।

●

नाहटाजी : एक संस्था

श्री उदय नागौरी

गत चालीस वर्षोंसे हजारो अज्ञात ग्रंथों को प्रकाशमें लाकर नाहटाजीने हिन्दी साहित्य की जो सेवा की है उसे कौन नही जानता ? सीलन भरे अधेरे वन्द कमरोंमें प्राचीन लिपियों एवं ग्रंथों को घ्यानसे देखते हुए जिसने उन्हें देखा है, वही जान सकता है इनके अथक परिश्रम एवं अटूट धैर्य को, जब भी, जैसी सामग्री इन्हें मिले, ये किसी पत्रिकामें उसे प्रकाशित कर देते हैं जिससे सबको उसका परिचय मिले। चार हजारसे अधिक लेख प्रकाशित करनेके बाद भी इनका ध्येय यही रहा कि साहित्य अन्वेषण, पठन, सृजन, संरक्षणमें अधिकाधिक समय लगे। युवक-सा जीवट, सतों का चितन एव सादगी का मिश्रण देखकर सहसा हमें कहना पडता है कि नाहटाजो का व्यक्तित्व किसी संस्थासे कम नही।

सन् १९५६ में नाहटाजीसे प्रथम परिचय हुआ था। तदनन्तर तो क्रमश. आपसे सम्पर्क बढता ही गया और ज्ञात हुआ कि सादगी इनका स्वभाव है, कोई दिखावटी बात नही। बीकानेरी पगडी, ऊँची धोती, साधारण कमीज और चश्मेके मध्य इनका व्यक्तित्व कुल मिलाकर स्थानीय व्यापारी जैसा ही प्रतीत होता है परंतु वार्तालाप और सम्पर्क द्वारा ज्ञानके अथाह समुद्रसे प्राप्त अनुभव रूपी मणिया हमें प्राप्त होती हैं। सैंकड़ो पत्र-पत्रिकाओंमें प्रकाशित हुए आपके लेखो का अम्बार अनेक पुस्तकोंमें संगृहीत किया जा सकता हैं। आप अहकारसे कोसों दूर हैं। कोई भी समस्या हो, सदर्भ ग्रंथोके बारेमें आपसे पूछिए और देखिए कि असंख्य पृष्ठ खुल रहे हैं आपके लिए। जो व्यक्ति किसी को बाह्य वेश भूपासे देखते-नापते हो उनको अपनी धारणा बदलनी होगी इस सादगी की प्रतिमूर्ति को देख कर।

नाहटाजीके सम्पर्कमे आने पर कोई व्यक्ति शिथिल नही रह सकता। यदि किसीमें साहित्य-सृजनके लक्षण दृष्टिगोचर हुए तो नाहटाजी उसे समय-समय पर तीक्ष्ण करनेके लिए प्रेरणा देंगे।

आर्थिक कठिनाईमें फँसे छात्रो को आशिक कार्य देकर आप सहायता देते हैं और साथ ही कठोर परिश्रम की प्रेरणा। जब कोई कहता है कि—'समय नही मिलता' तो नाहटाजी पूरा समय विश्लेपण कर स्पष्ट कर देते हैं कि समय नही मिलना एक बहाना मात्र है, वास्तविकता नही।

संक्षेपमें कहा जा सकता है कि आपका विराट् व्यक्तित्व पूरी एक संस्था है। ७०-८० हजार ग्रन्थो के निजी संग्रहमें जाकर अभीष्ट विपय की पुस्तकके बारेमें पूछिए तो रजिस्टर व सूचियो का सिर दर्द दूर। जैसे सारे रजिस्टर इन्हें कठस्थ हैं। कैसी विचक्षण स्मरण शक्ति है! ईश्वरसे प्रार्थना है कि आप शतायु हो।

●

जैन साहित्यके शुभोदयका कणाद ऋषि

श्री ऋषि जैमिनी कौशिक 'बरुआ'

बीकानेर भारतके राजनीतिक नक्शे पर महाराजा गंगासिंहजीके कारण विख्यात हुआ, विश्वके शूटिंग मानचित्र पर महाराजा करणी सिंहजीके कारण और राष्ट्रभारतीके मानचित्रपर अगरचंदजी नाहटाके कारण—यह मेरी निश्चित मान्यता है।

उन भारतीय लेखकोंमें, जिन्होने भारतकी प्राचीनताको आधुनिक वाङ्मयमें प्रतिष्ठित और समुद्रित किया है, उनकी सख्या कई हजार है। ये सम्पूर्ण भारतमें फैले हुए हैं। लेकिन जैन साहित्य और इतिहासके जिन अपठनीय पृष्ठों को, जिन्होंने पठनीय बनाया है और उनका पूर्वापर सम्बध सार्वदेशीय इतिहाससे सूत्रबद्ध कर दिया है, उनमें अगरचदजी नाहटाका नाम सबसे अग्रणी पक्तिमें प्रतिष्ठित हो चुका है। मैं सकोचवश अग्रणी पक्तिमें कह रहा हूँ, अन्यथा मेरा विचार यह है कि अग्रणी पक्तिमें भी वे ज्येष्ठ भावके अधिकारी है।

काशी नागरी प्रचारिणी सभा काशीमें एक बार सन् १९५५-५६ की बात है, हम कुछ लेखक-मित्र चाय-चक्रमका रसास्वादन ले रहे थे। सहसा ही उन भारतीय लेखको की चर्चा चल पडी, जिन्होने २०वी सदीके प्रारंभमें ब्रिटिश हिस्टोरियनोसे कसकर लोहा लेते हुए, भारतीय सत्यकी प्रतिष्ठा भारतके हितमें अत्यधिक की और अपनी शक्ति भर भारतीय इतिहासको भारतीयकरणकी रीति-नीतिसे परिशुद्ध किया। बात काशीसे चली, पजाबको दायरेमें लेती हुई, गुजरात और दक्षिण भारतके स्वनामधन्य लेखको पर होती हुई, बंगालके लेखको पर जाकर बात टिक गई। उसी समय मैंने बात को राजस्थानकी ओर अभिमुखी बनाते हुए डा० गौरीचंद हीराचंद ओझा पर सबकी विचारधारा केन्द्रित कर दी, जिनके सम्मानमें काशी नागरी प्रचारिणी सभाने एक आयु-सवर्द्धन ग्रथ भी प्रकाशित किया था। मैंने कहा, "यदि जेम्स टाड राजस्थानके इतिहासका १९वी सदीमें एक विदेशी सूत्रधार है तो भारतीय सूत्रधार ओझाजी हुए। टाडमें किवदन्तियोका प्रमाद अधिक है, ओझाजीमें तथ्यपूर्ण विवेक अधिक केशरका स्वाद देता है।" इस मतव्य पर कुछ मतामत चला ही था, कि मुझे एक विनोद सूझा और मैंने कहा, "जबकि अन्य भारतीय लेखक यूरोपीय वेशभूषाके व्यामोहमें अपनेको सज-सवरनेका लोभ रोक नही पा रहे थे, उस समय ओझाजीने और हमारे अगरचदजी नाहटाने अपनी पगडियोका चमत्कार धूमधामसे बकरार रखा। एक ब्राह्मण और एक वैश्य, लेकिन दोनोने राजस्थानकी पगडियोको सारे भारतमें पूजित करवाया।" इस बात पर सभी मित्र हँस पडे और ओझाजीसे बात हटकर अगरचंदजी नाहटा पर आकर स्थिर हो गई।

मैंने कहा कि यदि नाहटाजीकी लिखी हुई सामग्रीको एक सिलसिलेसे काशीकी गलियोंमें बिछाया-जाये, तो शायद काशीकी कोई गली ही अछूती रह सके। सभी मित्रोको इसपर आश्चर्य हुआ। मुझे बातके दौरान कहना पडा कि नाहटाजी अपने जैन धर्मके प्रति इतने सत्यनिष्ठ हैं कि वे उसकी मर्यादाओंके प्राचीर को दृढ हुआ देखा चाहते है। कर्मसे व्यापारी, धर्मसे लेखक, और मुझसे विनोद किये बिना नही रहा गया, मैंने एक कहानी सुनाई, जिसे काशीके मित्रोको यह एहसास हो सके कि अगरचदजीका यथार्थ परिचय वास्तव में क्या है?

मैंने कहा कि राजस्थानके एक गावमें एक उजाड खडहर गढ (किला) एकात जंगलमें पडा हुआ था। एक दिन संयोगसे, पहले रेतीला तूफान चला और फिर घनघोर बारिस होने लगी। दो दिशाओंसे दो

ऊंटोंपर तीन सवार आ गये। एक ऊंटपर सिर्फ एक राजपूत था, जो किसी छोटे ठिकाणे का शासक था, और दूसरे ऊटपर कोई नवयुवक वाणिया ससुरालसे अपनी सेठाणीको विदा करवा कर ला रहा था। फूटे गढमें दोनोने शरण ली और जमीनपर वैठ गये। लेकिन अकलमद वाणिये युवकने ऊटकी काठीपरसे गलीचा निकालकर राजपूतके नीचे विछाकर कहा, "ठाकुर साहव, यहा विराजिये। राजपूतके अहंको जरा तस्कीन हुई और उसने अपने सम्मानको गर्वीला वनानेके लिए मूछोपर ताव देते हुए गलीचेपर आसन ग्रहण कर लिया। थोडी देर वाद उसने वोरेमें से ससुरालकी मिठाई निकालकर राजपूतको और खिला दी। इधर रात सिरपर उतरती रही, वारिशका समा तेज होता गया। आखिर जब सोनेकी तैयारी हुई, तो वाणियेका वेटा अपने रजाई गद्दे विछाकर एक अलग कोनेमें अपनी सेठाणीके साथ सो गया लेकिन राजपूतजी गलीचे-पर विना ओढना विछौना सिर्फ वैठे रहे। अव वे अंधेरेमें किसे दिखाने अपनी मूंछो पर दें? सुवह तक उन्होंने गलीचे पर वैठकर कष्ट पाते रात निकाली। जव भोर हुआ तो वाणियेका बेटा सेठाणी को लेकर ऊंटपर वैठा और ऊंघते राजपूतके नीचे अपना गलीचा विछा रहने दिया। राजपूतको वहुत क्रोध था कि मुझे रातको सोनेको विछौना नही मिला। लेकिन जव वाणियेका वेटा ऊटपर राम-राम कहकर चलने लगा तो राजपूतने इसे भी अपना अपमान समझा कि यह गलीचा मुझपर दया दिखाकर छोडकर जा रहा है। उसने आवाज देकर वाणियेका ऊंट वापस वुलवाया और हवामें गलीचा फेंकते हुए कहा, "वाणियेका छोरा, गलीचा यहाँ छोडकर जा रहा है? कही आगे सेठाणी मत छोड जाना।" वाणियेके वेटेने कहा, "ठाकुर साहव, मैं तो छोड भी दूं, पर या सेठाणी मूने पूरी जिंदगी ताईं छोडै तो थानै खवर देस्यू।"

मित्रोंने जोरका कहकहा लगाया, तव मैंने अगरचदजी नाहटाके जीवन दर्शनका सरलीकरण करते हुए कहा, "अगरचदजीके पास सारे भारतके इतिहासकी सामग्री वहुत है, लेकिन जैनधर्मकी सामग्री उनका पतिव्रता पत्नीकी तरह पीछा ही नही छोडती!!"

यह वात काशीकी है।

अगरचदजीका जीवन अभीतक अनेक दृष्टियोंसे रहस्यमय वना हुआ है। उनका कितना समय साहित्य-सृजनमें जाता है, कितना समय वे अपने व्यापारमें देते हैं, यह अभी तक अलिखित रहा है। परिवारमें उनका वरद हस्त किस तरह सक्रिय है और अपने समाजमें उनका हस्त किस तरह वरद वना हुआ है, इस पर भी किसीने अध्ययन और शोध-अनुसंधान नही किया है। लेकिन जितना हमने उन्हें निकटसे देखा है, हम उसके वलपर एक अद्‌भुत रहस्योद्‌घाटन अवश्य कर देना चाहते हैं कि अगरचदजीके पास अभी इतनी सामग्री अलिखित पडी है कि यदि कोई शोध-अनुसधानका विद्यार्थी उनके पास केवल मौखिक डिक्टेशन लेनेका तप-साधन कर सके तो कमसे कम हजार-हजार पृष्ठो के पाच ग्रंथ तो आगामी पाच वर्षोमें सहज भावसे तैयार किये जा सकते हैं।

मेरा विनय भावसे साहित्यके ऐसे मनीषीको श्रद्धा-निवेदन।

एक व्यक्ति : एक युग

श्री ज्ञान भारिल्ल

जैन समाजकी कुछ विशिष्ट परम्पराएँ है । उनमेंसे एक है साहित्यका निर्माण । जैन मुनियो ने तो शताब्दीसे हमारे साहित्यका भंडार भरा ही है, अनेक जैन श्रेष्ठि भी प्रत्येक युगमें साहित्यनुरागी रहे हैं। उन्होने कवि-लेखकोको आश्रय दिया तथा स्वय भी साहित्य सृजन किया । यह धारा आज भी अटूट चली आ रही है ।

श्रद्धेय श्री अगरचन्दजी नाहटा एक ऐसे ही विद्वान् श्रेष्ठि हैं, जिन्हें न केवल एक साहित्यकार बल्कि राजस्थानमें साहित्य सृजनका एक युग कहा जा सकता है । प्रात से सन्ध्या तक कतिपय दैनिक कार्यों की अवधिको छोडकर एक ही आसनमें वे साहित्यकी शोध-खोज तथा लेखनमें दत्तचित्त रहते हैं । उनकी यह एकान्त, अचल साधना हम अपेक्षाकृत युवक कहलाने वाले लोगोके लिये एक व्यावहारिक पाठ ही है । साधना के बिना कोई सिद्धि कभी मिलती नही, यह तथ्य पूरी तरहसे हृदयंगम करके यदि आजके अनेक साहित्यकार अपने साहित्य कर्ममें प्रवृत्त हो सकें तो निश्चय ही वह अपना भी कल्याण करें तथा मा सरस्वतीके भंडारकी भी श्रीवृद्धि हो ।

नाहटाजीके विषयमें क्या कुछ लिखा जाय ? मेरा तो जन्म बीकानेरमें ही हुआ, तब अवश्य ही उन्होने मुझे अपनी गोदमे खिलाया होगा, क्योकि मेरे पिताजीकी जो कि एक जाने-माने जैन विद्वान् हैं, नाहटाजीसे आरम्भसे ही घनिष्ठ आत्मीयता रही है । फिर मैं जब दो ही वर्षका था तब पिताजी बीकानेर छोडकर जैन गुरुकुल ब्यावरमें प्रधानाचार्य होकर आ गये । बीकानेर तो छूटा किन्तु बीकानेरके व्यक्तियोंसे सम्बन्ध बराबर बना रहा । विभिन्न समारोहोमें नाहटाजी बराबर उपस्थित होते रहे । खैर, तब तक तो मैं बालक ही था, यदि उस समयकी कोई स्मृति मेरे मनमें शेष है तो वह है नाहटाजी तथा श्री श्रेष्ठि चम्पालाल जी बांठियाकी ऊँची लहरदार बीकानेरी पगडियाँ ।

जब मै बडा हो गया, पढ लिख गया, कुछ लिखने भी लग गया तो एक समय ऐसा भी आया जब मैं राजस्थान साहित्य अकादमीका प्रथम सचिव बनकर उदयपुर गया । नाहटाजी अकादमीके सदस्य थे । अकादमी के विभिन्न कार्यक्रमो तथा समारोहमें वे अवश्य सम्मिलित होते थे और मुझे उनका स्नेह सदैव प्राप्त होता रहता था ।

वह युग भी बीता । कुछ वर्ष इधर-उधर रहने के पश्चात् मैं शिक्षा विभाग के प्रकाशन अनुभागका अधिकारी बनकर बीकानेर ही जा पहुँचा । तब तो नाहटाजीसे समय-समय पर मिलना जुलना होता ही रहा, यद्यपि उतना नही जितना होना चाहिए था । और इस बातकी शिकायत नाहटाजीको मुझसे बराबर बनी भी रही जो कि जायज भी थी, क्योकि वे मुझसे पुत्रवत् स्नेह करते है । कुछ तो कार्य व्यस्तताके कारण तथा कुछ अपने स्वभावजन्य आलस्यके कारण मैं अपनी और उनकी बीकानेरमें उपस्थितिका पूरा लाभ नही उठा पाया । किन्तु लाभ तो मैंने उठाया ही । प्राचीन जैन साहित्यमें एकसे एक अद्भुत कथाएँ भरी पडी हैं । मैं आजकल उन कथाओकी खोजबीन कर आधुनिक शैलीमें उपन्यासके रूपमें लिखनेमें रुचि रखता हूँ । मन रमता है । नाहटाजीने मुझे, जब भी मैंने चाहा, कोई न कोई सुन्दर कथा खोज कर दी । पूरी सामग्री जुटा दी । इस तरह मैंने कुछ लिखा ।

मै अब बीकानेर नही हूँ । किन्तु श्रद्धेय नाहटाजीसे दूर भी नही हूँ । आँखें बन्द करके सोचता

हूँ तो अपने विशाल ग्रन्थागारमें आसन पर जमे हुए किसी प्राचीन ग्रन्थके जीर्ण पत्र उलटते-पलटते नाहटाजी मुझे दिखाई देते हैं ।

प्रभुसे मैं तो यही विनय कर सकता हूँ कि ऐसे तपस्वी विद्वान्को वे चिरकाल तक हमारे बीच रखें और उनकी आशीर्वाद रूप छाँह हम पर बनी रहे ।

●

नाहटा-बन्धु : मेरी दृष्टि में

महोपाध्याय श्री विनयसागर

खरतरगच्छके अनन्य उपासक, धर्मप्रेमी, राजस्थानी-हिन्दी और जैन-साहित्यके कोशके समान भाण्डागारिक, व्यापारी होनेपर भी सहस्राधिक लेखो के लेखक, प्राचीन लिपियोके विशेषज्ञ, अनुसन्धित्सुओंके प्रेरक एव शिक्षक, श्रेष्ठिवर्य श्री अगरचन्दजी नाहटा और श्री भँवरलालजी नाहटाका मेरे जीवनसे बहुत ही निकटतम और घनिष्ठतम सम्बन्ध रहा है। वि० स० २००० से आज तक अर्थात् २०२८ तक यह सम्पर्क अविच्छिन्न रूपसे वर्द्धित रहा है । हालांकि, इस मध्यमें नामलिप्सा, अर्थ आदि कतिपय प्रसंगोंको लेकर कई बार हमारे आपसी मतभेद भी हुए हैं, ऐसा होनेपर भी आज तक हमारे बीचमें आन्तरिक-प्रेम, साहित्य-साधना और गच्छ सेवामें तनिक भी अन्तर नही आने पाया है ।

२९ वर्षोंके इस दीर्घ-सम्पर्कपर विचार करता हूँ तो, मेरे हृदय-पटल पर मुनि जीवन और गार्हस्थ्य-जीवनके संस्मरण उभर आते हैं। मैंने बाल्यावस्थामें, वि० स० १९९६ में खरतरगच्छालङ्कार आचार्यदेव श्रीजिनमणिसागर सूरिजी महाराजके पास भागवती दीक्षा ग्रहण की थी । दीक्षाके चौथे वर्ष मैं अपने पूज्य गुरुजीके साथ बीकानेर आया था । सम्भवत वही सर्वप्रथम नाहटा-बन्धुओसे मेरा परिचय हुआ था । बीकानेरमें रहते हुए नाहटा-बन्धुओने मेरे जीवनको किस प्रकार मोड दिया—इस बातका परिचय मैंने प्रतिष्ठा-लेख-सग्रह प्रथम भागमें 'अपनी बात' लिखते हुए लिखा था—

"वि० स० २००० का चातुर्मास मेरे शिरच्छत्र पूज्येश्वर आचार्यदेव श्री जिनमणिसागर सूरिजी महाराजका बीकानेरमें श्री नाहटाजीके शुभ प्रासाद 'शुभविलास' में हुआ। उस समय मेरी अवस्था १३ वर्षकी थी । पूज्येश्वर गुरुदेवने अध्ययनके लिये व्यवस्था कर रखी थी । शिक्षक व्याकरण-काव्य आदिका अभ्यास करवाता था । उस समय मैं सिद्धान्त कौमुदीका दूसरा खण्ड पढ रहा था, पर बाल्यावस्थाके कारण अध्ययनमें तनिक भी रुचि नही थी और व्याकरण जैसा शुष्क विषय होनेके कारण मैं अध्ययनसे घबडाता था तथा बहाने किया करता था । ऐसी मेरी मानसिक स्थिति और पढ़ाईचोर भावनाको देखकर श्री अगरचन्दजी नाहटाने (जो पूज्येश्वर गुरुदेवके भक्त होनेके साथ-साथ मुझे विद्वान् और क्रियापात्र साधु देखना चाहते थे) गुरु महाराजकी आज्ञा प्राप्तकर साहित्यकी तरफ मेरी रुचिको बढ़ाना प्रारम्भ किया। उन्होने सर्वप्रथम हस्तलिखित ग्रन्थोकी लिपिके अभ्यासकी ओर मुझे प्रवृत्त किया। मैं भी उस समय 'पढाई' से विरक्तमना सा था । अत मुझे भी यह मार्ग रुचिकर प्रतीत हुआ और मैं इस प्रयत्नमें अग्रसर हुआ । बडोके आशीर्वाद से इसमें मैं सफल भी हुआ । उन्ही दिनों मैंने नाहटाजीके संग्रहके लगभग ३००० हस्तलिखित ग्रन्थोकी सूची भी तैयार की ।

इन्ही दिनो चातुर्मासमें ही गुरुदेव भक्तवर्गको 'उपधान तप' की तपश्चर्या करवा रहे थे। इसी समय वीकानेरके प्रमुख मन्दिर (चिन्तामणिजी) के भण्डारस्थ लगभग १२०० प्रतिमाएँ, जो विशिष्ट समयपर भण्डारसे वाहर निकाली जाती थी और अष्टाह्निका महोत्सव, शान्तिस्नान, रथयात्रादि महोत्सवके साथ पुन· भूमिगृहमें विराजमान कर दी जाती थी, इस 'उपधान तप' महोत्सवके उपलक्षमें वाहर निकाली गई। वहाँके दूसरे प्रधान मन्दिर महावीर स्वामीजीके भण्डारस्थ प्रतिमाएँ भी इस समय प्रयत्न पूर्वक निकाली गई थी।

श्री नाहटाजीका कई वर्षोंसे विचार और प्रयत्न था कि 'वीकानेर जैन लेख सग्रह' निकाला जाय। वे वीकानेर नगर और उस राज्यमें स्थित समस्त मन्दिरोके लेख ले चुके थे। पर चिन्तामणिजीके भण्डारस्थ मूर्तियोके लेख जो उन्होने पूर्व लिये थे, वे गुम हो गये थे। अत उनकी पुन. आवश्यकता थी। इस प्रसग को लेकर लेखोंकी लिपि-वाचनके उद्देश्यसे उन्होने मुझे भी इस कार्यमें लगाया। मैं तैयार था ही, उत्साह पूर्वक जुट गया। श्री अगरचन्दजी एवं श्री भँवरलालजी नाहटाके सहयोगसे उस समय लगभग २००-२५० लेख मैंने लिये थे। उस समयसे मेरा लिपि वाचने का भी अभ्यास हो गया।"

स्पष्ट है कि नाहटा-वन्धुओका सहयोग और सतत प्रेरणाका ही फल था कि मेरी रुचि साहित्य साधना की ओर अग्रसर हुई और परिणाम स्वरूप मैं प्रवास करता हुआ जहाँ भी जाता, मन्दिरस्थ मूर्तियोंके लेख लिया करता था एवं तत्रस्थ ज्ञान-भण्डारोका अवलोकन तथा निजी सग्रहका सवर्द्धन करता रहता था। इस प्रकार मैंने २००० दो हजार मूर्ति-लेखोंका सग्रह किया। नाहटाजीकी प्रेरणासे ही १२०० वारह सौ लेखोका प्रथम भाग 'प्रतिष्ठा लेख सग्रह' के नामसे प्रकाशित भी किया।

× × ×

खरतरगच्छीय विद्वानो द्वारा निर्मित साहित्य समुद्रके समान विशाल है। उस विशाल सागरमें से बूद सदृश लघुतम कृतियोके प्रकाशन एवं सम्पादनके लिए भी नाहटा-बन्धु प्रेरित करते रहे। "मै भी" 'सम्पादक हूँ' इस नामलिप्साके वशीभूत होकर, अपरिपक्व ज्ञान तथा बुद्धि होते हुए भी मैंने ४-५ लघुकृतियाँ सम्पादित कर दी। भूमिकायें नाहटाजी लिखते रहे। सम्पादन-क्षेत्रमें मेरे प्रेरक नाहटा-वन्धु रहे तो, इस क्षेत्र को मेरे लिए प्रशस्त करने वाले ये पूजनोय स्वयं श्री जिनमणि सागर सूरिजी, स्वय अनुयोगाचार्य श्री बुद्धिमुनिजी गणि, स्व० आगमप्रभाकर मुनिराज श्री पुण्यविजयजी और डा० फतहसिहजी। वस्तुत इन्ही विभूतियो की कृपासे इस क्षेत्रमें मैं कुछ योग्यता अर्जित कर सका हूँ।

× × ×

वि० स० २००४ में मेरी मानसिक वृत्तियाँ वदली। अव मुझे अपनी अपूर्णताका अनुभव हुआ। इस समय पढाई-चोर जीवन पर हृदयमें पश्चात्ताप भी हुआ। अत अन्य समग्र प्रवृत्तियोका त्याग कर मैं विद्याभ्यास करने लगा। स० २००८ तक साहित्याचार्य आदि अनेक उपाधियाँ प्राप्त की।

नाहटा-वन्धुओके आग्रहसे स २००८ का चातुर्मास करनेके लिए मैं वीकानेर आया। यही पर मुनिराज श्री पुण्यविजयजीसे मेरा सर्व प्रथम परिचय हुआ। नाहटाजीका मुझे वीकानेर वुलानेका आशय भी यही था कि, मैं श्री पुण्यविजयजीके सम्पर्कमें रहकर कुछ योग्यता अर्जित कर सकूँ, उनकी इस आशाको कुछ अंशों में मैंने पूर्ण भी की।

मुझे स्मरण है कि स० २००८ में जिस दिन मैं वीकानेर पहुँचा था, उसी दिवस मैंने श्री अगरचन्दजी नाहटासे कहा था कि, "आप मुझे विधिवत् वन्दन न किया करें, क्योकि साधुताके अनुरूप गुण मेरे में हैं नही और आपके ही सम्पर्क, प्रेरणा और सहयोगसे मैं योग्य हुआ हूँ, अत आप मेरे लिए गुरु-तुल्य हैं।

इस पर श्री नाहटाजीने कहा था, 'यह असम्भव है। आप हमारे गुरु है और हम आपके भक्त। लघु दीक्षित भी वन्द्य होता है जबकि आपकी दीक्षा-पर्याय ११-१२ वर्षकी है और आप योग्य विद्वान् भी है। प्रेरणा और सहयोग देना हमारा कर्त्तव्य है। परम्परानुसार वन्दन-व्यवहारका मार्ग प्रशस्त एवं आवश्यक भी है। अत: इसमें परिवर्तनकी कल्पना भी नही की जा सकती।

× × ×

विचारभेद होनेके कारण सन् १९५६ में, युगप्रधान दादा जिनदत्तसूरि अष्टम शताब्दी समारोहके अवसरपर अजमेरमें मैंने मुनि-वेषका त्याग कर, गृहस्थ-जीवन अगीकार किया था। वेषका त्याग कर देने पर भी नाहटा-बन्धुओने मेरे से मुख नही मोडा। बल्कि, गच्छ का एक योग्य विद्वान् मानते हुए मुझे हर-तरहसे सहयोग देते रहे है और आदरकी दृष्टिसे देखते रहे हैं। उनके गुणानुरागकी यह एक झलक है।

× × ×

सयोगवश सन् १९६६ अक्टूबरसे १९६७ दिसम्बरके प्रथम सप्ताह तक बीकानेरमें नाहटाजीके मकानमें ही मुझे सपरिवार रहनेका सौभाग्य मिला। निकटसे मैंने अगरचन्दजीकी दिनचर्याका अध्ययन किया जो वस्तुत' अनुपम सी प्रतीत होती है।

प्रात. उठते ही "क्या सोवे उठ जाग वाऊरे" आनन्दघनजी आदि के पद गाते हुए नीचे उतरते हैं। शौचादिसे निवृत्त होकर सामायिक करते हैं। सामायिकमें परम्परानुसार माला आदि नही फेरते है, बल्कि नवीन प्रकाशित साहित्यका अध्ययन करते है। अर्थात् श्रुत-सामायिक प्रतिदिन नियमित रूपसे दो या तीन घंटे करते हैं। पश्चात् स्नानादिसे निवृत्त होकर मन्दिर जाते हैं और भगवान्‌की पूजा करते हैं। पूजनोपरान्त कभी-कभी अल्पाहार लेते हैं। इसके बाद यदि साधु-साध्वियोके व्याख्यान होते हो तो व्याख्यान सुननेके लिए उपाश्रय चले जाते हैं। पश्चात् भोजन कर अभय जैन पुस्तकालयमें बैठकर लेखन-मनन आदि साहित्यक कार्यों में व्यस्त हो जाते हैं। पत्राचार आदि भी इसी समय करते हैं। मध्याह्नको चाय आदि नही पीते हैं। सायं-काल सूर्यास्तसे पूर्व भोजन कर पुन. ग्रन्थालयमें आ जाते हैं और श्रुत-सामायिक ग्रहण कर लेखन-मननमें संलग्न हो जाते हैं। कभी-कभी मस्तीकी दशामें 'अपूर्व अवसर एवो क्यारे आवशे, क्यारे थइशु वाह्यान्तर निर्ग्रन्थ जो।' श्री मद्रायचन्द्र, आनन्दघन, चिदानन्द, जिनराजसूरि आदि महापुरुषोके पद स्वरलहरीके साथ गुनगुनाने लगते हैं। १०-११ बजे सोनेके लिए घर पर जाते हैं।

× × ×

निकटसे देखने पर नाहटा-बधुओके जीवनकी जो विशेषतायें मेरे देखनेमें आई हैं, वे इस प्रकार हैं—

१. लक्षाधिपति एव व्यापारी होने पर भी श्री अगरचन्दजीके जीवनमें साहित्य-साधन प्रधान होनेसे वर्षमें ९-१० महीने बीकानेर रहते हुए साहित्य-सेवा करते हैं और २-३ महीने व्यापार एव हिसाब-किताब देखने हेतु बाहर रहकर, साहित्य और अर्थका सन्तुलन बनाए रखते हैं। श्री भँवरलालजी कुछेक वर्षोसे अधिकतर कलकत्ता रहते हैं। वहाँ रहते हुए भी वे ग्रन्थोकी प्रतिलिपियाँ, लेख, कहानी आदि लिखते हुए श्री अगरचन्दजीके साहित्य-क्षेत्रको प्रत्येक दृष्टिसे अभिवर्द्धित करनेमें सलग्न रहते हैं।

२. साहित्यिक-जगत्‌में प्रसिद्ध एवं आर्थिक दृष्टिसे सम्पन्न होने पर भी इन दोनोकी वेशभूषामें तनिक भी परिवर्तन नही हुआ हैं। वही धोती, कुर्ता, लम्बा कोट, मारवाडी पगडी और राठौडी मूँछ। सामान्य वेष और सामान्य भोजन इनको पहचाननेमें भी कभी-कभी कठिनाई पैदा कर देती है।

३. सामान्य शिक्षा अर्थात् ४-५ कक्षा तक शिक्षा होते हुए भी निरन्तर लगन और परिश्रमसे आज दोनोकी प्रतिभायें अपने-अपने क्षेत्रमें विशिष्ट स्थान रखती हैं। राजस्थानी, हिन्दी, गुजराती भाषाओ एव

प्राचीन लिपियों पर दोनोका समान अधिकार है। जहाँ, अगरचन्दजी परिचयात्मक लेख लिखनेमें और शोध-छात्रोको निर्देश एव सहयोग देनेमें अग्रसर हैं, वहाँ भँवरलालजी राजस्थानी कहानियाँ, लेख और प्रति-लिपियाँ करनेमें प्रवृत्त हैं। अगरचन्दजीकी अपेक्षा भी भँवरलालजी गुप्तकालीन आदि प्राचीन-लिपियाँ पढनेमें एवं प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषामें सिद्धहस्त हैं और प्राकृत-भाषामें स्फुट-रचनायें भी करते हैं। साथ ही चित्र कलाके विशेषज्ञ भी हैं।

४ श्री अगरचन्दजीकी यह विशेषता है कि कोई भी विद्वान् अथवा शोध प्रेमी उनका सहयोग प्राप्त करनेको उत्सुक होकर आता है तो, उसे अपने संग्रहालयमें ठहरानेकी मुफ्त व्यवस्था ही नही करते अपितु अपने घर पर भोजन करानेको भी प्रयत्नशील रहते हैं, ताकि शोधार्थीका समय नष्ट न हो। स्वयंका सग्रह तो उसके उपयोगके लिए पूर्णतया विश्वासके साथ खोल ही देते हैं और अन्य सग्रहालयोके ग्रन्थ भी भाग-दौड-कर अपने नामसे 'ईस्यू' कराकर, शोधार्थीको लाकर दे देते है। अन्य सस्थानोकी तरह इनके यहाँ समयका प्रतिवन्ध नही है। चौवीसो घण्टे शोधार्थी वहाँ वैठकर साहित्यका उपयोग कर सकता है। रात्रिको भी यदि कोई वहाँ वैठकर काम करना चाहे तो, उसके लिए सग्रहालयमें यह व्यवस्था भी कर देते हैं। न केवल ग्रथों-का सहयोग ही अपितु नये-नये परामर्श एव दिशा-निर्देश देनेमें भी सर्वदा तत्पर रहते हैं। इसी प्रकारके विद्वानोंका भी अभीष्ट-ग्रथ प्राप्त करवानेमें सदा प्रयत्नशील नजर आते हैं।

५. श्री अगरचन्दजी नाहटाजीकी स्मरण-शक्तिको प्रज्ञाका अनुपम चमत्कार कहें या ग्रथागार कहें! चिन्त्य है। नाहटाजीके जीवनका यह नियम रहा है कि वे जहाँ कही भी जाते है वहाँके सग्रहालयोंका निरी-क्षण अवश्य करते है। नवीन कृतियोके नाम, कर्ता, रचना संवत् और लेखनकालका स्फुट कागजो पर या मस्तिष्क-डायरीमें नोट कर लेते हैं। वर्षों क्या, युगोके वाद भी वे यह वतलानेमें समर्थ हैं कि इस कवि की अमुक रचना, उस समयकी लिखी हुई या इससे प्राचीन प्रति अमुक भण्डारमें प्राप्त है और उस भण्डारके अमुक व्यवस्थापक हैं आदि। इस विलक्षण स्मरण-शक्तिके श्री अगरचन्दजी धनी हैं।

६. आठ-दस घण्टो तक नियमित रूपसे एक स्थान पर, एक आसनसे वैठकर कार्य करनेकी क्षमता आज, इस अवस्थामें भी विद्यमान है।

७ पत्रका उत्तर देनेमें कभी उपेक्षा नही करते। इधर पत्र पढा और उत्तर लिखवा दिया या लिख दिया।

८. साहित्यके क्षेत्रमें धर्म, जाति या ऊँच-नीचका भेद इन दोनोके जीवनमें नही है। गरीव और योग्य शोधार्थीको ये आर्थिक सहयोग भी प्रदान करते हैं।

९ अगरचन्दजी आज भी मीलो पैदल चल लेते हैं। १५-२० किलो ग्राम तकका वोझ वगलमें दवा-कर चलते हुए सडको पर नजर आ सकते है। छोटी-मोटी दूरीको ये पैदल ही तय करना पसन्द करते है। जहाँ इस प्रकार व्यावहारिक जीवनमें ये स्वावलम्वी प्रतीत होते हैं, वहाँ कतिपय प्रसगोमें इनकी कृपणता भी प्रकट होती है।

१०. समयका अधिक से अधिक उपयोग करनेकी अगरचन्दजीकी अभिलाषा वनी रहती है।

× × ×

नाहटा द्वय जैन-धर्मके अनुयायी है। खरतरगच्छके प्रति असीम अनुराग है। देवार्चन, व्याख्यान श्रवण, सामायिक आदि तो इनकी दिनचर्याके अग है ही। पर्व-दिवसोमें उपवासादि तपस्या भी करते है और प्रतिक्रमण भी करते हैं। धार्मिक कार्योमें हजारो रुपये व्यय भी करते हैं। ये प्रवासमें हो या घर पर,

नियमित रूप से सूर्यास्तके वाद चतुर्विधाहारका त्याग करते हैं। अर्थात् सूर्यास्तके पश्चात् रात्रिमें किसी भी अवस्थामें भोजन-पानी ग्रहण नही करते हैं। प्राय सूर्योदयके ४८ मिनट पश्चात् ही मुख धावन आदि करते हैं। इन दोनोके जीवनमें चाय-पान, सिगरेट आदि किसी भी प्रकारके व्यसन को स्थान नही है। कतिपय प्रसगोमें इनमें रूढिवादिताके सस्कार भी प्रकट होते हैं।

× × ×

वि० स० १९८४ में आचार्यश्रेष्ठ स्व० श्री जिनकृपाचन्द्रसूरिजी महाराज और स्व० उपाध्याय श्री सुखसागरजी महाराजके साँनिध्यमें इन चाचा-भतीजो (अगरचन्दजी काका हैं और भँवरलालजी भतीजे) के हृदयोमें जो साहित्य-सेवाका अकुर प्रस्फुटित हुआ था वह ४४ वर्षोंके निरन्तर सिञ्चन और रखवालीसे कितना अभिवृद्धिको प्राप्त हुआ है, साहित्य-जगत्के सन्मुख है। अभय जैन ग्रथालय, जिसमें ५ हजार हस्तलिखित ग्रन्थ, हजार मुद्रित ग्रन्थ, हजारोकी सख्यामें प्रेसकापियाँ, प्राचीनतम चित्रपट, सहस्रो चित्र, सिक्के, मूर्तियाँ आदिका अनुपम एव विशाल सग्रह है, वह इन बन्धुओके अथाह परिश्रम एव लगनका द्योतक है।

व्यक्तिगत रूपसे लाखो रूपये खर्चकर इस संग्रहालयका निर्माण करनेमें स्व० श्री दानमलजी और स्वयं श्री शकरदानजी नाहटाके परिवारोके सदस्य, स्वय श्री भैरोदानजी, श्री शुभराजजी और श्री मेघराजजीने जो सहयोग इन चाचा-भतीजेको दिया है, इसके लिये वे अभिनन्दनीय हैं।

युगप्रधान जिनचन्द्रसूरि, मणिधारी जिनचन्द्रसूरि, जिनकुशलसूरि, युगप्रधान जिनदत्तसूरि, बीकानेर जैन लेख सग्रह आदि ऐतिहासिक पुस्तकें, जिनराजसूरि, समयसुन्दर, धर्मवर्द्धन, विनयचन्द्र, ज्ञानसागर आदि ग्रथावलियाँ, ४ चार हजारके लगभग पत्र-पत्रिकाओमें प्रकाशित लेख लिखकर, इन दोनोने श्रेष्ठि पुत्र होते हुए भी माँ भारतीके भण्डारकी अभिवृद्धि करते हुए, राजस्थानी-हिन्दी और जैन साहित्यकी जो सेवा की है, वह अनुपम, प्रशस्य और चिरस्मरणीय है।

× × ×

श्री अगरचन्दजी एव भँवरलालजीका आज भी मेरे प्रति जो सौजन्यपूर्ण असीम प्रेम है, मेरे प्रति इनकी जो अभिलाषायें है उसके लिये मैं इन दोनोका पूर्णरूपसे आभारी हूँ। अस्तु,

अन्तमें 'जीवेम शरद. शतम्' शुभकामनाके साथ आशा करता हूँ, कि भविष्यमें भी नाहटा-बन्धु इसी प्रकार साहित्य-सर्जन एवं सेवा करते हुए वागीश्वरीके कोषागारको समृद्ध करते रहें।



अद्वितीय साहित्य मनीषी

श्री अनूपचन्द न्यायतीर्थ 'साहित्यरत्न'

सन् १९४४ की वात होगी—गुरुवर्य्य प० चैनसुखदासजी न्यायतीर्थके साँनिध्यमें न्याय मध्यमा, की परीक्षा हेतु आप्त मीमासा, प्रमेयरत्नमाला एव परीक्षामुख आदि न्याय ग्रथो का अध्ययन चल रहा था। जाडेके दिन थे—हम लोग (लेखक, प० सुरज्ञानीचदजी न्यायतीर्थ एव वा० मुन्नालालजी) रात्रिके समय सस्कृत कालेज भवनमें वैठे पाठ लगा रहे थे। पूज्य पडित साहव पास वाले वडे दीवानजीके मदिरमें शास्त्र-प्रवचन करनेके पश्चात् करीव ९ वजे हमको आकर पढाते थे। रात्रिके करीव पौने ९ वजे होंगे-कालेज की सीढियोसे चढकर महलमें प्रवेश करते हुए सावले वर्ण, गठवा वदन, लम्वी मूछें, सरपर ऊँची पगडी लगाये,

तीन लाग की धोतीपर लम्बा कोट और उसपर भी एक शाल ओढे-एक व्यक्तिने आकर पूछा—क्या पडितजी शास्त्र प्रवचन करके नही आये।' मैंने कहा 'आने ही वाले हैं विराजिये।' कहते ही ये महापुरुष बिलकुल हमारे पास ही बैठ गये। हम लोग क्या पढ रहे थे इस सम्बन्ध में पूछताछ करने लग गये। प्राचीन जैनाचार्यों एव विद्वानोके सम्बन्धमे नई जानकारी उनके मुँहसे सुनकर हमें आश्चर्य होने लगा और सोचने लगे कि यह आदमी कोई बडा दूकानदार होगा अथवा सेठ होगा इनको जैन साहित्य एवं इतिहास की बातोसे क्या प्रयोजन। ये महाशय अधिक पढे लिखे भी नजर नही आते किन्तु बातें विद्वानोकी सी करते हैं। हम लोग यह सोच ही रहे थे कि सामनेसे लकडी की सीढियोसे चढकर खिडकीसे पंडित साहब भी प्रवचनसे लौटकर आ गये। नाहटाजीने खडे होकर पंडितजी का अभिवादन किया। पंडितजी बडी प्रसन्न मुद्रामें कहने लगे 'अरे नाहटाजी आप कब पधारे ? आपको कितनी देर आये हो गयी ? आपने अब तक कहलाया भी नही। आपको कितनी देर प्रतीक्षा करनी पडी।' कुशलक्षेम के पश्चात् दोनों मनीषी पडितजीके बिस्तर पर ही विराज गये। "पडितसे पडित मिले करे ज्ञान की बात" वाली कहावतके अनुसार आपसमें वार्तालाप चलता रहा। हमने यह सब देखकर दाँतो तले अंगुली दबा ली। जैन साहित्य, इतिहास एव पुरातत्त्वके धुरन्धर विद्वान् को जिसका कि केवल अब तक नाम ही सुनते थे सामने देखकर, दग रह गये। ऐसे सीधे सादे सादगीके पुतले सरस्वतीके वरद पुत्रके दर्शनोसे हम अपने आपको भाग्यशाली, मानने लगे। हमारी कल्पनामें तो 'धोता बडा, पोथा बडा पण्डिता पगडा बडा' वाले नाहटाजी समाये हुए, थे। सीधे सादे सेठजी जैसे नाहटाजी नही। जैनधर्मके इन दोनो महान् धुरधर विद्वानो की जैन साहित्यके उद्धार तथा प्रचार एव प्रसार की बातें करीब डेढ घण्टे तक चलती रही। तत्पश्चात् जाते-जाते नाहटाजीने पण्डित साहब को इस बात की बहुत-बहुत बधाई दी कि वे कितनी लगनके साथ शिष्यों को तैयार कर रहे हैं। नाहटाजीसे यह मेरा पहिला परिचय था। न्यायतीर्थ एव 'साहित्य रत्न' की परीक्षा पास करनेके पश्चात् मेरा झुकाव पूज्य पण्डित साहब की प्रेरणा एव डा० कासलीवाल जैसे साहित्य महारथीके सहयोगसे जैन साहित्य शोध एव खोज की ओर हो गया। इस क्षेत्रमें आनेके पश्चात् तो नाहटाजी का पूर्ण स्नेह प्राप्त होने लगा। श्रीमहावीर क्षेत्र द्वारा सचालित साहित्य शोध विभागके माध्यमसे तो उनसे और भी गहरा सम्बन्ध हो गया। जब कभी आते बिना मिले जाने का काम नही।

राजस्थानके जैन ग्रथ भण्डारो की सूचियो का तृतीय एव चतुर्थ भाग डा० कासलीवाल तथा मेरे सम्पादकत्वमें प्रकाशित हुआ तबसे तो नाहटाजीसे और भी अधिक सम्पर्क स्थापित हो गया। सूचियोमें कही-कही त्रुटियो का होना भी स्वाभाविक था किंतु ग्रन्थ सूचियोके सम्बन्धमें उनका अभिमत सदा ही रचनात्मक रहा।

नाहटाजी जैसे खरे एव सच्चे समालोचक बहुत कम देखनेमें आते है। उन जैसा साहित्य-खोजी पुरातत्त्व प्रेमी एव साहित्य का मूल्याकन करने वाला साहित्यके क्षेत्रमें विरला ही मिलेगा। नाहटाजी को हिन्दीके जैन ग्रन्थ एवं ग्रन्थके सम्बन्धमे ही नही अपितु राजस्थानी, एव गुजराती भाषाके ग्रन्थ एवं ग्रन्थकारोके सम्बन्धमें भी पूर्ण जानकारी है। कही भी कोई त्रुटि हो इनकी सूक्ष्म दृष्टिसे बच नही पाती।

जैसा कि मैंने प्रारम्भमें सोचा था नाहटाजी कोई सेठ ही नही हैं। वे लक्ष्मी पुत्र एव सरस्वती पुत्र दोनो हैं। उनके व्यापारिक सस्थान हैं—वर्षमें २-३ महीने वे उनकी देख भाल करते हैं—शेष आठ दस महीनोमें साहित्य सेवा करना ही उनका कार्य है। जब देखो तब साहित्य-साधनामें ही रत दिखाई देते हैं। यह इनकी सतत साहित्य साधना ही का फल है कि हिन्दी साहित्यके किसी भी विषय पर शोध करने वाले

का शोध प्रवन्ध विना नाहटाजीके देखे अधूरा ही रहेगा। नाहटाजी का अपना निजी पुस्तकालय है जिसमें हजारो की संख्यामें ग्रन्थ हैं। स्मरण शक्ति इतनी प्रवल है कि जो भी ग्रन्थ चाहते हैं तत्काल निकाल लेते हैं। पत्र पत्रिकाएँ इतनी आती हैं और सग्रहीत है कि जिनकी कोई सख्या नही है। कोई सी पत्रिका बची होगी जिसमें उनका शोध पूर्ण लेख न हो।

मैं एक वार राज्य कार्यसे बीकानेर गया और दूसरे दिन नाहटाजीसे मिला तो नाराज होकर बोले क्या तुम्हारे लिये यहाँ स्थान नही था जो धर्मशालामें ठहरे? तुम्हे सीधे यहाँ आना चाहिये था। अब जव तक ठहरो भोजन मेरे यहाँ ही करना—"मैंने उन्हे समझाया कि मेरे साथ और भी लोग है और वे मुझे भोजनके लिये क्षमा करें।" यह था उनका विद्वानोंके साथ स्नेह। उनने मुझे अपना पुस्तकालय, सग्रहालय आदि वताये। कोई भी विद्वान् उनके पास जाकर एकाकीपन नही पाता। शोधार्थियोके लिये उनके यहाँ नि शुल्क भोजन तथा आवास व्यवस्था पूरे समय तक रहती है।

नाहटाजी अपने धुनके पक्के हैं। एक वार वे जयपुर आये, महावीर भवन पहुँचे। वहाँ कोई नही मिला तो वहाँसे आदमी को साथ ले सीधे घर पर चले आये। खुद ही ने आवाज लगाई—नीचे लिवाने पहुँचते ही देखने योग्य ग्रन्थो की सूची हाथमे पकडा दी। मैंने कहा यह सब काम हो जावेगा पहिले भोजन कर लीजिये। उनका उत्तर था—भोजनसे अधिक यह काम आवश्यक है, पहिले मेरे साथ चलकर ग्रन्थ देखने की व्यवस्था कर दो वादमें भोजन तो होता रहेगा। आज्ञा-पालन करना पडा और भोजन पीछे ही किया। भोजन भी विलकुल सादा। कोई आडम्वर नही। भोजनके तुरन्त वाद में ही काममें लग गये। यह है उनकी साहित्य सेवामें लगन एवं अन्य कार्योंके प्रति निस्पृहता।

नाहटाजी कभी-कभी हमसे नाराज भी रहते है और वह भी इस वात पर कि उनके पत्रो का उत्तर शीघ्र ही नही दिया जाता। एक वार मैंने उनसे कह दिया कि उत्तर क्या दें, आप लिखते ही ऐसा है कि उसे कोई लिपि विशेषज्ञ ही समझ पावे। वे हँसने लगे और इसके वाद उनके पत्र या तो टाइप किये हुए या अन्य किसी द्वारा लिखे हुए आने लगे। वे पत्रोत्तर देनेमें स्वय तेज हैं और उससे भी तेज हैं वे लेख भेजनेमें। पत्र डालते ही पत्रोत्तरके साथ लेख भी मिल जायगा जैसे कि हर विषयके लेख उनके पास तैयार ही रखे हो।

वास्तवमें नाहटाजी एक अद्वितीय साहित्य मनीषी है। जैन साहित्य एवं इतिहासके अधिकारी विद्वान् हैं। विद्वत् समाज में उनकी प्रतिभा चहुँमुखी है। नाहटाजी जैसे शोधक विद्वान् पर जैन समाज को ही नही सम्पूर्ण राष्ट्र को गर्व है। उनकी यश पताका सदैव साहित्य जगत्में फहराती रहे और वे साहित्य सेवामें लगे ही रहे ऐसी हमारी मगल कामना है। वे सैंकडो वर्षो तक जीवित रहकर भारतीय वाङ्मय का उद्धार कर गौरव वढाते रहें ऐसी भगवान्से प्रार्थना है।



प्रतिभा, कर्मठता एवं धर्मनिष्ठाके असाधारण धनी : श्रीनाहटाजी

(श्रीनाहटाजीसे प्रथम साक्षात्कार : एक सस्मरण)

डॉ० छगनलाल शास्त्री, एम० ए० (त्रय), पी-एच० डी०

लगभग तैतीस-चौंतीस वर्ष पूर्वकी घटना है। मैं सरदारशहर (जो मेरा जन्म स्थान है) में श्रीमान्

सेठ श्रीचन्द्रजी गणेशदासजी गधैयाके यहाँ श्रीयुत नेमचन्दजीके सुपुत्र आयुष्मान् सम्पतकुमारको पढाता था। गधैया परिवार सरदारशहरका एक अत्यन्त सम्भ्रान्त समृद्ध और शालीन परिवार है। जैन श्वेताम्बर तेरापन्थका यह अत्यन्त सेवी रहा है और आज भी है। तेरापन्थके श्रावक-समुदायमें इस परिवारकी बडी प्रतिष्ठा तथा आदर है। इस परिवारके श्रेष्ठी जन धार्मिक सेवाकी भावनासे सदा ओत-प्रोत रहे हैं। सात्त्विक विचार तथा साहित्यिक अभिरुचिके अन्यान्य सम्पन्न परिवारोकी तरह इस परिवारको भी प्राचीन ग्रन्थोंके संग्रहका शौक रहा हैं। फलत' स्वर्गीय सेठ श्रीचन्दजी, गणेशदासजी तथा वृद्धिचन्दजी अनेक ग्रन्थ-भण्डारोंसे हस्तलिखित ग्रन्थ खरीदते रहते थे। जहाँ प्राप्त हुए, वहाँ उन्होने पूरेके पूरे भण्डार भी खरीद लिये। फलत आज भी उनके यहाँ सहस्रोकी सख्यामें हस्तलिखित ग्रन्थोका सग्रह है। श्रीमान् अगरचन्दजी नाहटा, जिनसे मेरा तब तक बहुत साधारण परिचय था, अपने भ्रातृ-पुत्र श्री भँवरलालजीके साथ गधैयाजीके यहाँ सरदारशहर आये। सेठ साहबसे मुझे मालूम हुआ कि ये जैन साहित्यके अनुसंधित्सु हैं, पारिवारिक परपरासे उनका उनसे कुछ संबध भी है। ये अपने यहाँके ग्रन्थ-सग्रहको देखेंगे, मैं भी उनके साथ रहूँ, और जैसा अपेक्षित हो, सहयोग भी करूँ।

यों श्री नाहटाजीका नैकट्य पानेका मुझे अवसर मिला। मैं तब तक संस्कृत आदिका एक दृष्टिसे अच्छा अध्ययन कर चुका था। युवा था, मनमें पाण्डित्यका मान भी था, जो अब काफी कम हो गया है। अस्तु-मुझे सहसा लगा—यह पगडी वाला सेठ संस्कृत, प्राकृत भाषाओके ग्रन्थोकी खोज करेगा? हाँ इतना तो तब तक सुन रखा था कि श्री नाहटाजी राजस्थानीके अच्छे जानकार हैं, गवेषक है परन्तु सस्कृत, प्राकृत जैसी भाषाओको भी समझनेकी उनमें क्षमता है, यह नही जनता था। परन्तु जब उनके गवेषणा-कार्यके क्रमको देखा, ग्रन्थोकी प्रशस्तियोको पढते सुना, कई ग्रन्थोके नोट्स लेते देखा, बहुत सूक्ष्म और गहरी बातो पर चर्चा करते पाया, तब अनुभव हुआ कि नि:सन्देह इस व्यक्तिको विद्या संस्कारसे लब्ध हैं, और सूझ बहुत पैनी है, भले ही तथाकथित विद्याध्ययनका अवसर इन्हें न मिला हो, विश्वविद्यालयकी उपाधिया इन्होने प्राप्त न की हो। इसमें कोई सशय नही कि इनका ज्ञान बहुत प्राजल एवं गभीर है, मेधा बहुत उर्वर है।

यह हुआ गभीर चिन्तन, तलस्पर्शी विवेक और सूक्ष्मभाव-गाहिनी बुद्धिका पक्ष। श्री नाहटाजीके जीवनका दूसरा एक और पक्ष हैं, जो इससे कम महत्त्व नही रखता। वह है उनका अनवरत, अथक एवं श्रमशील जीवन। मैं यह देखकर आश्चर्यचकित रह जाता था कि वे किस प्रकार अपने कार्यमें तन्मय होकर बिना रुके उसे करते जाते थे। अनिवार्य दैनिक कार्यो के अतिरिक्त उनका समग्र समय अपने गवेपणा-कार्यमें ही लगता। जहाँ फल नही, कर्म ही आनन्दमय हो जाता है, वहाँ आत्मस्थ या स्थितप्रज्ञकी दशा आती है, कर्म योग सध जाता है आसक्ति स्वय छूट जाती है। नाहटाजी एक कर्मयोगी हैं। प्रसादने कामायनीमें एक बडी मार्मिक बात कही है'—

कर्म का भोग, भोगका कर्म।
यही जड़का चेतन आनन्द॥

इन दो पक्तियोमें कर्मयोगके विराट-दर्शन का नवनीत छिपा है। प्रसादका यहा आशय है कि साधारणतया वैपयिक भोगमें आनन्द लेता है, कर्ममें नही। वहा वह उदासीन बना रहता है। जैसा आनन्द वह भोगमें लेता है, वैसा यदि कर्ममें लेने लगे और जो उदासीनता कर्ममें बरतता है, वैसी भोगमें बरतने लगे अर्थात् उधर लोलुप न बन केवल (गृहस्थ की दृष्टिसे) अनिवार्य कर्तव्य भावना लिये प्रवृत्ति रहे तो उसके जीवनमें सच्चे आनन्द का स्रोत कही रुकता नही, उत्तरोत्तर बहता ही जाता है जिस मानव को वैसा

आनन्द लेने की वृत्ति वह जाती है, वह अनवरत कर्मरत रहते हुए भी कभी परिश्रान्त नही होता, आकुल नही बनता । न उसे फलासक्ति आ घेरती है और न उदासीनता ही । श्री नाहटाजी ऐसे असाधारण व्यक्तित्व के धनी हैं, जिनके उदग्र कर्मठतामय जीवनमें साधन साध्यका द्वैत एक हो जाता है ।

जब मैं उन दिनो उन्हे एक अनूठी, तीव्र और उत्सुकता भरी लगनके साथ काममें जुटे हुए देखता तो मनमें ऐसा अनुभव होता कि इस मनीषीसे साहित्य जगत्का एक बहुत बडा हित सधने वाला है और कहना नही होगा कि वैसा हुआ भी ।

श्री नाहटाजीके जीवन का एक पहलू है, जो उक्त दोनो पहलुओंसे कम महत्वपूर्ण नही लगता । सरदारशहरके उस त्रिदिवसीय प्रवासमें जहा मैंने नाहटाजीमें प्रतिभा और कर्मनिष्ठता का चमत्कार देखा, वहा मुझसे यह भी छिपा नही रहा कि वे कितनी अडिग धर्मनिष्ठासे ओतप्रोत है । अत्यधिक व्यस्तताके बावजूद वे सामायिक (जैन साधना का एक सावधिक अभ्यास-क्रम) करना भी नही छोडते । शायद मन्दिरों में दर्शन भी करते । व्यस्तता का अर्थ उनके विचारमें यह नही लगा कि कार्य कर रहे है, सायंकाल हो गया, भोजन नही हो सका तो न सही, विलम्बसे हो जाएगा । यह अव्यवस्था का रूप है, जिसे नाहटाजी पसन्द नही करते ।

यो तो चौंतीस वर्ष पूर्वके प्रथम परिचयमें मैंने नाहटाजीके जीवनमें कर्म, धर्म और ज्ञान, त्रिवेणीकी जो झलक देखी, उनके सतत पुरुषार्थ उद्यम और अध्यवसायका सम्बल पाकर वह उत्तरोत्तर बढती ही गयी । नाहटाजी आज एक साहित्यिक स्तभके रूपमें हमारे बीच विद्यमान हैं, जिस पर हमें गर्व है । वे शतायु, स्वस्थ, सबल एव सदैव कार्यक्षम रहें, हमारी यही हार्दिक कामना है ।

●

कुतूहल, श्रद्धा और अपनेपनसे भरा वह नाम

डॉ० नरेन्द्र भानावत, एम० ए०, पी-एच० डी०

सन् १९५०-१९५१ की बात है । मैं उन दिनों हाईस्कूलका छात्र था और श्री गोदावत जैन गुरुकुल, छोटीसादडीके छात्रावासमें रहता था । उस समय प्रकाशित होनेवाली अधिकाश हिन्दी पत्र-पत्रिकाएँ वहाँ आती थी, जैन पत्रिकाएँ भी । मैं उन्हें रुचिपूर्वक पढा करता था । प्राय प्रतिदिनका मेरा संध्या-समय उन्हीं-में गुजरता था । मेरे सामने कई लेखकों और कवियोंकी रचनाएँ आती थी । मैं स्वय उन दिनो कविता करना और लेख लिखना सीख-सा रहा था । 'वीरपुत्र', 'बालसखा' 'जैनप्रकाश' आदि में मेरी कविताएं छपने भी लगी थी । उस समय रह-रहकर जो नाम मुझे अधिकाश पत्र-पत्रिकाओंमें बार-बार देखनेको मिलता था वह था 'श्री अगरचन्द नाहटा' । तभीसे इस नामके प्रति मेरे मनमें एक विशेष कुतूहल, श्रद्धा और अपने-पनका भाव भर गया था । मैं सोचा करता था—कैसा होगा यह व्यक्ति, जो छोटे से छोटे पत्रसे लेकर बडे से बडे पत्रमें लगातार अपने लेख भेजता रहता है, कितना वैविध्यपूर्ण और विस्तृत होगा उसका ज्ञान, दिनमें कितने समय वह पढता-लिखता होगा और कितना समृद्ध होगा उसका अपना पुस्तकालय !

संयोगकी बात कि जुलाई १९५२में मैं बीकानेर पहुँचा और स्व० दानवीर सेठ श्री भैरोदानजी सेठियाकी असीम कृपासे मुझे सेठिया जैन छात्रावासमें रहनेका अवसर मिला । सेठियाजीका मुझपर विशेष

स्नेह था। उन्हीकी प्रेरणासे मैं कॉलेज शिक्षाके साथ-साथ 'साहित्यरत्न' की तैयारी भी करने लगा। अधिकाश पुस्तकें मुझे 'सेठिया लायब्रेरी' से मिल गई थी। शेष पुस्तकोके लिए वावूजी [स्व० भैरोदानजी सेठियाको सभी इसी नामसे पुकारा करते थे] ने मुझसे कहा कि नाहटोकी गुवाडमें 'अभय जैन ग्रन्थालयमें भी देख लेना, वहाँ श्री अगरचन्दजी होगे।

मेरी प्रसन्नताकी सीमा न रही। मैं उसी समय नाहटोंकी गुवाडके लिए रवाना हो गया। शायद अगस्तका महीना था। जोरोकी गरमी पड रही थी। दोपहरका समय था। मैं पूछता-पूछता सीधा अभय जैन ग्रथालय पहुँचा। एक तिमजिला मकान। प्रवेशके लिए छोटा था दरवाजा, जो खुला होनेपर भी बन्द सा रहता है। कोई भी थोडा धक्का देकर, उसे खोलकर, फिर होलेसे वन्दकर, ऊपरकी मजिलमें जा सकता है। यही स्थल नाहटाजीकी साहित्य-साधनाका केन्द्र है।

मैंने ऊपर जाकर देखा, मुख्य कमरा चारों ओर कितावोसे आवृत है। बीचमें एक ओर पत्र-पत्रिकाओंका ढेर लगा है, दूसरी ओर कई पुस्तकें खुली-अधखुली पडी है। दरी विछी हुई है, उसपर गादी तकिया लगा है। कमरेमें पखा है पर वह इस समय वन्द है। मुझे पुस्तको और पत्र-पत्रिकाओके ढेरमें किसी व्यक्तिको खोजने में कुछ क्षण लगे। वह व्यक्ति, बाहरसे आया हुआ कोई शोधछात्र-सा लगा। उसने पासके कमरेकी ओर इशारा भर कर दिया।

इस कमरेमें टेवल, कुर्सी, वेंच आदि थी। कमरा इतना छोटा कि वह इन्ही सबसे भरा था। अलमारियोमें कितावें थी। टेवल, कुर्सी, वेंच आदि पर भी कितावें जमी हुई थी। इन सबके बीच बेंच के वीचोवीच एक व्यक्ति, किसी साधक सा समाधि लिये अध्ययन में लीन था। वदन पर धोती के अलावा कोई कपडा नही था। गरमीके कारण कुरता, वनिआइन आदि उतार दिये गये थे। मैंने नमस्कार कर, नाम पता आदि बतानेके बाद किताबोंके लिए कहा। उस व्यक्तिने बिना विलम्ब किये एक रजिस्टर मेरी ओर बढा दिया। मैंने अपने कामकी आवश्यक कितावें नाम व नम्बर बताये, तुरन्त कितावें निकाल दी गई और और एक दूसरा रजिस्टर मेरी ओर वढा दिया गया। मैंने उसमें कितावो की एन्ट्री कर दी और कितावें लेकर अपने घर आ गया। इस प्रसगसे नाहटाजीके व्यक्तित्वकी कई विशेषताएँ एक एक कर प्रकट हुई। निरभिमानता, कार्यतल्लीनता, मितभाषिता, आत्मनिर्भरता, उदारता, नियमित अध्ययनशीलता, सतत जागरूकता और वात्सल्य भाव।

इस प्रसगके बाद नाहटाजीसे मेरा सम्पर्क उत्तरोत्तर बढता गया। उनके व्यक्तित्व और वातावरण से मुझे कई अनूठी प्रेरणाएँ मिली।

नाहटाजीके सम्पर्कसे मुझे ऐसा लगा कि उनकी सफलताका रहस्य दो विन्दुओ में निहित है—अप्रमाद भाव और जिज्ञासावृत्ति। उन्होने भगवान् महावीरकी इस वाणीको 'समयं गोयम मा पमायए'— अपने जीवनमें चरितार्थ कर लिया है। आज साठ वर्ष की अवस्थामें भी विना सहारे आठ दस घटेकी लगातार वैठक लगा लेना, उन जैसे धुनी गवेषकका ही कार्य है। युवा छात्रोका हाल तो यह है कि वे एक घटा भी तल्लीन होकर क्लासोंमें नही वैठ सकते, जवकि उनके लिए कुर्सी है, टेवल है, सव सुविधा और सहारा है। मैंने तपती दोपहरीमें नाहटाजीको एकरस होकर कार्य करते देखा है। वह भी विना पंखेका सहारा लिए। मैंने एक दिन अनायास यो ही पूछ लिया-क्या आपको पखेसे 'एलर्जी' है। वे जरा मुस्कराये और बोले—पंखेकी हवा व्यक्तिको थोडी देर वाद काहिल वना देती है, उससे नीद आने लगती है, वह जागरूक होकर काम नही कर सकता, यह गर्मी, जो तुम महसूस करते हो, थोडे समयकी है, पालथी मारकर वैठ जाओ और काममें लग जाओ तो गर्मी-वर्मी सव भूल जाओगे।" यह है कामके प्रति निष्ठा और सच्ची साहित्य-साधनाका रूप।

पत्र-व्यवहारमें नाहटाजी बडे जागरूक रहते हैं। प्रतिदिन पत्र लिखने-लिखानेके लिए उन्होंने अपना कुछ समय २-३ घटे नियत कर रखा है। सामान्यत वे दूसरोसे बोलकर ही पत्र लिखाते हैं, क्योकि नाहटा-जीकी लिपि स्पष्ट व सुन्दर नही है। उसे पढ लेना सहज नही है। जो पूर्वापर प्रसगको थोडा बहुत जानता हो, वह तो फिर भी उन टेढे-मेढे अक्षरोमें अपने कामका अर्थ ढूँढ लेगा। पर वे इतने जागरूक रहते हैं कि सयोगसे किसी दिन दूसरेका मिलान न हो तो वे स्वय ही पत्र लिखना आरभ कर देते हैं, उन्हें इस वातकी चिन्ता उस समय नही रहती कि इस पत्रको कोई पढ सकेगा या नही। किसी पत्रके उत्तरकी प्रतीक्षामें वे अधिक दिन नही निकाल सकते। इसीलिए उनके यहाँ स्मरण-पत्र भेजनेकी लम्बी शृखला लगी रहती है। एक-एक कार्यके लिए मुझे लगातार दो-तीन वर्षों तक प्रति माह स्मरण-पत्र मिलते रहे है और उनकी शृखला तब कही जाकर टूटी जब वह कार्य पूरा हो गया। दिनरात व्यस्त रहने वाले वणिक् परिवारके साहित्य-मनीषीकी यह पत्राचारगत उदारता आजके तथाकथित 'वडे' कहलाने वाले लोगोके लिए प्रेरणा-दायी वन सकती है।

गहन ज्ञानके धनी होकर भी नाहटाजी नये ज्ञान और तथ्यकी प्राप्तिके लिए सदा जिज्ञासु रहते हैं। यह जिज्ञासावृत्ति उन्हें सदा जागरूक और नियमित बनाये रखती है। किसी नये ग्रंथ, कलात्मक वस्तु, या नये तथ्यकी जानकारीके लिए वे सदैव प्रयत्नशील रहते है। अपनी व्यावसायिक यात्राओमें भी उनकी यह साहित्य-जिज्ञासा वृत्ति मन्द नही होती। जब किसी ग्रन्थागारमें उन्हें कोई नया ग्रन्थ या नया ज्ञातव्य प्राप्त होता है तो वे उसे पूरे पढे बिना और आवश्यक नोट लिये बिना नही छोडते। इसके लिए वे अपने अन्य आवश्यक कार्यक्रम, यहाँ तक कि खाना भी, रद्द करते देखे गये हैं। आचार्य श्री विनयचन्द्र ज्ञान भण्डार, जयपुरकी कुछ प्रतियोको देखते हुए, मैंने स्वय उनके इस जिज्ञासा-भावको देखा-परखा है।

नाहटाजीने अबतक जितने निवन्ध लिखे हैं, कदाचित् संख्यामें, विश्वमें और किसी विद्वान्ने नही। औसतन वे प्रतिदिन एक निवन्ध पिछले वर्षोमें लिखते रहे हैं। इसका अर्थ यह नही कि वे नया पढते न हों। नित्य कुछ न कुछ नया पढते रहनेकी भावनासे उन्होने अपना बडा सुन्दर कार्य क्रम बना रखा है। वे प्रतिदिन दो चार सामायिक करते हैं। 'सामायिक' के लगभग इन दो घटोमें वे प्रतिदिन नया साहित्य पत्र-पत्रिकाएँ आदि पढते ही रहते है। नित्यका यह क्रम होनेसे वे एक वर्षमें हजारो नये पृष्ठ पढ लेते हैं।

अप्रमाद भाव और जिज्ञासा-वृत्तिके परिणाम स्वरूप नाहटाजी दूसरोके लिए सदैव उदार, सहयोगी और प्रेरक बने रहते हैं। वार-वार पत्र लिखकर किसी साहित्य-शोध कार्यमें लगे रहनेकी प्रेरणा देना, किये जा रहे साहित्यिक कार्यकी प्रगतिके सम्बन्धमें वार-वार पूछताछ करते हुए आवश्यक निर्देश देते रहता, नये शोध-विषय सुझाते रहता, नाहटाजीका स्वभाव-सा बन गया है। उनका पुस्तकालय एव ग्रन्थागार सबके लिए सदैव खुला रहता है। कोई किसी भी समय, यहाँ तक कि उनकी अनुपस्थितिमें भी, जाकर उसका उपयोग कर सकता है।

मुझे अपने शोधकार्य और अन्य साहित्यिक प्रवृत्तियोमें नाहटाजीसे वडी प्रेरणा और सम्बल मिला है। इस अवस्थामें भी वे मनोयोगपूर्वक गवेषणाके नये-नये क्षितिज उद्घाटन करनेमें लगे हुए है।

प्राचीन भाषा और साहित्यका यह गवेषक विद्वान् शताधिक वर्षो तक हमारा मार्ग-दर्शन करता रहे यही शुभेच्छा।



श्री अगरचन्द नाहटा : प्राचीन साहित्य शोधक

प्रो० रामचरण महेन्द्र

हिन्दी साहित्य तथा उसकी गतिविधिसे हो सकता है ? अथवा ये किसी निकट सम्बन्धी व्यापारके लिए जयपुर पधारे है।

मैं देख रहा हूँ ट्रक इनके पास नही हैं। केवल दो बिस्तरे है। छोटी बडी पोटलियां हैं, एक छोटी पीपी है। कुछ और फुटकर सामान। हो न हो पश्चात् कमरेके बाहर दरवाजे पर तीन नाम दर्ज कर दिये गये। प्रो० रामचरण महेन्द्र, श्री अगरचन्द्र नाहटा, श्री भँवरलाल नाहटा।

श्री अगरचन्द्रजी नाहटा, मेरे मनमें नाहटाजीकी जो कल्पना थी, चूर चूर हो गयी। मैं सोचने लगा -हैं श्री अगरचन्द्रजी नाहटा—प्राचीन हिन्दी अपभ्रश, राजस्थानी भाषाओके शोधकर्ता सदा जीवनमें साहित्यको प्रधानता देनेवाले साधक, प्राचीन चित्रकला, हस्तलिपियोके सग्राहक, प्राचीन ज्ञानके बिखरे पन्नो को एक स्थान पर एकत्र करनेवाले सैंकडो लेख प्राचीन पुस्तको व जैन साहित्य पर प्रकाश डालने व सम्पादन करनेवाले राजस्थानी लेखक तथा विचारक, बीकानेरमें सास्कृतिक सग्रहालयके स्थापक।

धीरे-धीरे हम परस्पर खुले। नाहटाजीसे एक हिन्दी लेखकके नाते पुरानी जान पहिचान निकल आई। प्राय दोनो एक प्रकारकी विचारधारा और उद्देश्योके साहित्य सेवी होने के कारण जल्दी ही घुलमिल गये। तीन दिन साथ रहनेका सौभाग्य मिला।

नाहटाजीका जीवन सरल और आडम्बर शून्य है। बाहरसे देखनेपर आपको विदित होगा मानो किसी सरल हृदय ग्रामीण मारवाड़ीसे बातें कर रहे हैं। उन्हें किसी प्रकारका घमण्ड छू तक नही गया है। प्राचीन शोध, पुराने ग्रथो विशेषत. जैन ग्रन्थोंकी खोज, आध्यात्म चिंतन, पठन-पाठन यही उनका जीवन है।

वे प्रात साढे चार बजे या पाँच बजे जागकर भजन पूजा जाप इत्यादिके अभ्यस्त हैं। मैं प्राय' उन के भजन रजनकी मधुर ध्वनि सुनकर ही जागता रहा। वे आध्यात्म चिंतन तथा भजनोच्चारण करते समय आत्मविभोर हो उठते हैं। उन्हें यह ज्ञान नही रहता कि वे कहाँ है।

स्थिति यह है कि जब कभी समय मिलता है, मैं उनके पीछे और मेरी लेखनी साथ ही साथ रहती हुई। टहलने, भोजन करने, मीटिंग तथा अन्य स्थानोमें हम साथ रहे। नाना साहित्यिक चर्चाएँ चली। उनकी साहित्य साधनाके सम्बन्धमें अनेक प्रश्न पूछे, टीकाओका समाधान किया, भावी योजनाओका कार्यक्रम मालूम किया।

नाहटाजीसे बातें करके प्रत्येक व्यक्ति ऐसा अनुभव करता है जैसे एक हृदय दूसरेसे मिल रहा हो, मध्यमें कृत्रिम दिखावे की कोई दीवार नही।

मैं प्रश्न कर रहा हूँ। नाहटाजी अपने जीवनके रहस्योको खोलते जा रहे हैं।

मेरा प्रथम प्रश्न यह है कि आपकी साहित्य साधना कब, कैसे और किन परिस्थितियोमें प्रारम्भ हुई।''

नाहटाजी कह रहे हैं अबसे २७ साल पूर्व संवत् १९८४ में हमारे गुरुजी श्री जिन कृपाचन्द्रसूरिका चातुर्मास बीकानेरमें हमारे भवन कोटरीमें हुआ था। उनकी शिष्ट मण्डली प्रधानत श्री सुखसागरजीके सम्पर्कमें, गुरुजी तथा इनके शिष्यके व्याख्यानादि सुनकर जैनधर्म सम्बन्धी मेरी धार्मिक भावनाएँ बढी। एक दिन ''जैनआणंद काव्य महोदधि'' के सातवें भौतिकमें ''कविवर समयसुन्दर'' नामक मोहनलाल दलिचन्द

देमाई लिखित लेख पढनेमें आया। राजस्थानमें ये कवि अत्यन्त लोकप्रिय थे। इनकी कई रचनाएँ मुझे भी नित्य पढनेमें आती थी। इसलिए विचार हुआ कि राजस्थानके इस कविके सम्बन्धमें गुजरातके एक विद्वान्ने इतनी अधिक शोधकर प्रकाश डाला है, तो राजस्थानमें शोध करने पर और भी नई जानकारी मिलनी चाहिये। उसी उद्देश्यको समझ कर बीकानेरके भण्डारोकी हस्तलिखित प्रतियाँ देखना प्रारम्भ कर दिया। और उनमें जो जो रचनाएँ उनकी तथा अन्य कवियोकी अच्छी लगी, उनकी प्रतिलिपियाँ तैयार करना प्रारभ कर दिया। यही शोध कार्य करते-करते मैं साहित्य क्षेत्रमें प्रविष्ट हुआ। गुरुमहाराजके गुणानुवादके रूपमे कुछ हिन्दी कविताएँ करनेका शौक लगा, कई वर्ष पश्चात् लेख इत्यादि लिखने प्रारम्भ किये।

मैंने आगे प्रश्न पूछा—

"आपकी कौन-कौन कृतियाँ कब कब प्रकाशित हुई ? इनका अनुभव सुनाइये।"

वे बोले "जैन धर्म प्रकाश" नामक पत्र में "विधवाकुलक" नामक प्राचीन लघु रचना लगभग सवत् १९८५ गुजराती अनुवादसे प्रकाशित हुई थी, उसे पढकर मैंने हिन्दीमें विवेचन लिखना प्रारम्भ किया था, "विधवा कर्तव्य" शीर्षकसे मैंने स्वतत्र पुस्तकके रूपमें प्रकाशित किया। तदनतर कविवर समयसुन्दरके दादा गुरु नितचंद सूरिका सक्षिप्त परिचय लिखा, जो पहले ३० वर्षमें किया था, फिर जैसे सामग्री उपलब्ध होती गई, बढता गया, चौथीबार में वह ग्रन्थ ४०० पृष्ठोके आकार का हो गया, यह स० १९९० में "युगप्रधान जिनचन्द्रसूरि" के नामसे अभय जैन ग्रथमाला बीकानेरसे प्रकाशित किया, इसमें सवासौ ग्रथो का निचोड था। यह ग्रथ अत्यन्त लोक-प्रिय हुआ, इसीके आधार पर सस्कृतमें दो हजार अनुष्टुप् छदोंमें एक काव्य जैनमुनि लब्धमुनिने किया। गुजरातीमें भी अनुवाद हुआ, श्री मोहनलाल दलिचद देसाईने ४२पृष्ठोमें इसकी प्रस्तावना तथा स्व० ओझाजीने इसकी सम्मति लिखकर प्रोतसाहित किया।

उसी समयसे जैन भण्डारोमें जो प्राचीन अपभ्रश और प्राचीन राजस्थानी रचनायें है, उनमेंसे ऐतिहासिक रचनाओका सग्रह तथा सपादन कर "ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह" के नामसे प्रकाशित किया, यह ग्रथ साढे छै सौ पृष्ठोका है। इसमें १२ वी शताब्दीसे २० वी शताब्दीके प्रारभ तककी अप्रकाशित ऐतिहासिक रचनायें प्रत्येक शताब्दी और पूर्वार्द्ध और उतरार्द्धमें रचित हैं, का सग्रह है। भाषा विज्ञानके अध्ययनकी दृष्टिसे यह ग्रन्थ मूल्यवान समझा गया है, डा० हीरालाल जैनने इसकी प्रस्तावना लिखी थी।

खरतरगच्छमें चार आचार्य दादासाहबके नामसे प्रसिद्ध हैं।।उनकी मूर्तियाँ, पादुकायें और मन्दिर सैकडो स्थानो में हैं युगप्रधान जिनचन्द्रसूरि उन्ही चारोमें चौथे है। इनकी जीवनी प्रकाशित करनेके पश्चात् अन्य तीन आचार्योंकी जीवनिया भी जैन भण्डारोकी हस्तलिखित प्रतियोसे एकत्रित कर क्रमश दादा जिनकुशल-सूरी, मणिधारी जिनचन्द्रसूरी तथा युग प्रधान जिनदत्तसूरी नामक तीन ग्रन्थ प्रकाशित किये। इनकी प्रस्ता-वना मुनि० जिनविजयजी, डा० दशरथ शर्मा, तथा मुनि कान्तिसागरजीने लिखी। इन तीनोके भी सस्कृत और गुजरातीमें अनुवाद प्रकाशित हुए।

इसी समय जैन प्रतिमाओके लेख सग्रहीत किये और समस्त बीकानेर राज्यके श्वेतावर मन्दिरके ढाई हजार सग्रह करके "बीकानेर जैन लेखसग्रहके नामसे ग्रंथ लिखा है, जो शीघ्र ही लेखो प्रकाशित होने वाला है। इसकी प्रस्तावना ११२ पृष्ठोकी है। इसमें बीकानेर राज्यके मन्दिर, उपाश्रय, ज्ञान-भण्डार, जैनोसे राजकीय सम्बन्धो पर विस्तारसे प्रकाशन डाला गया है। यह ग्रथ १५ वर्षोंके परिश्रम का परिणाम है। मैंने आगे नाहटाजीसे पूछा—

आपके शोध सम्बन्धी लेखोका प्रिय विषय क्या है ?

वे बोले" मैं सदासे हिन्दी, राजस्थानी, जैनसाहित्योमें दिलचस्पी लेता रहा हूँ। इतिहासकी सामग्री तथा लुप्त होते हुए प्राचीन साहित्यको प्रकाशमें लानेमें सदा प्रयत्नशील रहा हूँ मेरे पचासो लेख जो विचार-प्रधान हैं, पिछले २८ वर्षसे हिन्दी और गुजराती १४० पत्र पत्रिकाओमें लगभग १२००० फुटकर लेख प्रकाशित हुए है। इनमें बहुमूल्य इतिहास और साहित्यकी सामग्री है। यह लगभग ६००० पृष्ठोका मैटर है। यदि कोई साहसी प्रकाशन इन्हे प्रकाशित करें तो पाच पाचसौ पृष्ठोके लगभग १२ सकलन प्रकाशित हो सकते है।"

नाहटाजी आजकल "पृथ्वीराज रासो" की हस्तलिखित प्रतियोसे एक प्रमाणित सस्करण तैयार कर रहे हैं अत मैंने इसी खोजके संबन्धमें नाहटाजीसे पूछे—

वे "बोले २० वर्ष पूर्व आत्मानन्द पत्रमें डा० बनारसीदास जैनने एक विज्ञप्ति प्रकाशित की थी। कि "पृथ्वीराज रासोकी हस्तलिखित प्रतियोके सवन्धमें जिनकी जानकारी हो वे मुझे सूचित करें, मेरे सग्रह में भी इसकी एक महत्वपूर्ण प्रति प्राप्त हो चुकी थी। उसीकी सूचना मैंने इन्हे दी। वे उस प्रति तथा अनूप-सस्कृत लाइब्रेरी बीकानेरकी अन्य प्रतियोको देखनेके लिये बीकानेर पधारे। हमारी प्रति तो वे साथ ले गये, क्योकि उन्हें जो ओरिएन्टल लाइब्रेरी लाहौरमें अपूर्ण प्रति मिली थी। उस सस्करणकी पूर्ण प्रति थी। अनूप सस्कृत लाइब्रेरी की "रासो" की प्रतिया मुझे विदित हुआ, कि हमारे सस्करणकी प्रतियोंसेभी लग-भग आधे परिमाणका लघु सस्करण थी। तभीसे मेरा ध्यान "रासो" की हस्तलिखित प्रतियोके शोधकी ओर गया, क्योकि काशीनागरीप्रचारणी सभासे प्रकाशित वृहत् सस्करण लगभग ६६ हजार श्लोक परिमाण का है। हमारे सग्रहकी प्रति इससे चतुर्थांश परिमाणकी है। इस लिए समस्या यह हुई कि "रासो" में इन तीन सस्करणोके परिमाणमें बहुत अन्तर हैं, उसकी प्रामाणिकताकी खोजकी जाय। प्राप्त प्रतियो की शोध कर "पृथ्वीराज रासोकी हस्तलिखित प्रतियाँ" के नामसे एक लेख १५ वर्ष पूर्व राजस्थानी पत्रिकामें प्रकाशित किया गया है अबतक "रासो" की प्रतियोकी शोध ही करता रहा हूँ।"

नाहटाजीके आध्यात्मिक लेख जीवनके अनुभवोसे परिपूर्ण हैं। उनमें हमें एक ऐसे अनुभवी विशाल हृदयके अनुभव होते हैं, जिसने जीवनके हर पहलूको गहराईसे देखा है। अत मैंने नाहटाजीसे उनके जीवन मनोविज्ञान तथा अध्यात्मिक विषयक भावोकी मूल भावनाके विषयमें पूछा—

वे बोले" जैन मुनियोमें कृपाचन्दसूरीके सम्पर्क तथा सत्सगके समय आध्यात्मज्ञान प्रसार मण्डल आगरासे प्रकाशित श्रीमद् देवचद और बुद्धिसागर सूरीके आध्यात्मिक ग्रथ मेरे देखनेको आये, उनमेंसे कुछ ग्रन्थ मगवाये गये और सिलहट (आसाम) - अब पूर्वी पाकिस्तानमें अपने निजी व्यापारके सम्बन्धमे जाने पर साथ ले गया। वहा उनका अध्ययन करनेसे मेरा आध्यात्मिक प्रेम जागरूक हुआ। श्रीमद् राजचद्र, चिदानद, आनन्दघन, देवचद और बुद्धिसागर सूरीके ग्रन्थोके परायणसे आध्यात्मिक भावनाको बहुत बल प्राप्त हुआ। जैन एव अन्य दर्शकोके ग्रन्थो को पढनेकी रुचि प्रारम्भमे रही है। इस लिए दर्शन और आध्यात्मका ज्ञान बढता गया इस विषय को लेकर मैंने अनेक लेख धार्मिक पत्र पत्रिकाओमें लिखे है।"

हम बातचीत करते करते एक दूसरेके निकट आ गये हैं। अत अब मैंने उसकी भावी योजनाओ तथा रुचिके विषयो की बाबत जानकारी चाही। नाहटाजी अथक परिश्रमी है—पकी हुई अवस्थामें उनका हिन्दी प्रेम और शोध सम्बन्धी जोश देखकर चकित रह गया।

वे बोले "मेरा विशेष कार्य हस्तलिपियो, चित्रो तथा मुद्राओ आदिका सग्रह है। इनका एक विशाल सग्रहालय अपने निवास स्थान बीकानेरमें एक स्वतन्त्र भवनमें किया है। इसमें मेरे द्वारा इकट्ठा की हुई

हस्तलिपियों ग्रन्थोकी सख्या २० हजार है। इतने ही लगभग प्रकाशित ग्रन्थ पत्र पत्रिकायें है । "अभय जैन ग्रथालय" के नामसे इसका सग्रह हुआ है। अपने पूज्य ज्येष्ठ वन्धु अभयराजजी की स्मृतिमें इस ग्रन्थालय की स्थापना की है। अपने पूज्य पिता स्व० शकरदानजी की स्मृतिमें नाहटा कलाभवन स्थापित किया है। जिसमें सहस्राविक प्राचीन चित्र, मुद्रायें और कलापूर्ण प्राचीन विविध सामग्रीका सचय किया गया है ।

आपने अनेक ग्रन्थोमे सस्कृत अपभ्रश, प्राकृत, डिंगल इत्यादि भाषाओ का शास्त्रीय अध्ययन किया होगा । जब मैंने उनसे उनकी शिक्षाके सवधमें प्रश्न किया तो वे बोले—

"मेरी शिक्षा अधिक न हो सकी । केवल ५वी कक्षा पास की थी, छठी तक आते जाते शिक्षा वद सी हो गई थी । केवल अध्ययन स्वाध्याय और श्रमसे ही मैंने अपने आपको आगे बढाया है। एक मात्र व्यवसायमें लगे रहकर अपनी लगनमें तमाम झझटो के रहते भी मैं सदासे विद्यार्थी रहा हूँ । मेरा तो विचार है कि हमारी लगन, श्रम तथा उद्योग वे ताव है, जो ज्ञान क्षेत्रमें हमारे लिए पूर्ण लाभदायक सिद्ध हो सकते हैं।

नाहटाजी दृढता पूर्वक अपनो दिशामें आगे वढते जा रहे है। वर्पमें ३ महीने व्यापारमें लगाकर शेष सारा समय आप शोध कार्यमें देते है। व्यर्थके आडम्बर से दूर रहते है । उनका जीवन साहित्यमें भरपूर है। उनके निम्नलिखित पद मैं भूल नही पाता हूँ ।

"मेरा भावी प्रोग्राम अपने सग्रहालय को पूर्ण कर, उसका उपयोग कर उसे प्रकाशमें लाकर आध्यात्म की ओर वढने का है। मैं सदा अन्य अन्वेषकों, अनुसन्धान कर्ताओ, हिन्दी प्रेमियो को शोध कार्यमें सहयोग देने, आगे वढाने, सहायता करनेमें प्रयत्नशील रहा हू ।"

धन्य रे साहित्य साधक ।



नाहटाजी : एक शिलालेखी व्यक्तित्व

डॉ० महेन्द्र भानावत

[एक]

सन् १९५५ में जब कॉलेज में दाखिला लिया ही था, बीकानेरमें हम लोग अगरचन्द भैरोदान सेठिया जैन ग्रन्थालयमें रहते थे । अधिकतर मेवाडके और उसमें भी एक ही गावके हमलोगो की सख्या ज्यादा थी । मेरे वडे भाई डॉ० नरेन्द्र भानावत पहलेसे ही वहाँ अध्ययन रत थे । प्रारम्भसे ही लेखन-पाठन में उनकी उग्र गति थी और पत्र-पत्रिकाओमें खूब लिखते छपते भी थे। सुवह होते-होते एक दिन उनके पास एक व्यक्ति आया । घुटनो ढकी किसी तरह कमरमें ठसोली हुई दोलगी धोती, जिसकी एक लांग चलते-चलते भी खुल जानेको मुकर हो उठती है, सफेद जव्वा जिसकी दोनो तरफ की जेवें कागजी कटपीसोंसे वैलेंस्ड, अकुराई दाढी, मोटे पेचोंकी ऊँची उठी हुई मैल खाई मारवाडी पगडी, ममत्वहीन मूँछें, एक तरफ घिसे तलेके रिजेक्टेड जूते और इन सवके वीच कोठारमे पडे गेहुएँ रग-सा भरापूरा सेठ-व्यक्तित्व । मुझे नही मालूम कि यही व्यक्तित्व नाहटाजीका है । नाम सुन रखा था पर साहित्यका चूल्हा परिंडा मैंने तव तक नही सभाला था । पता नहीं क्यो केवल कविताएँ पढता था, यदा कदा उन्हें पत्र-पत्रिकाओमें भी भेज देता था । मेरे सतोपके लिए यह पर्याप्त था । अत नाहटाजीके आने और चले जानेपर भी मेरा मन सामान्य ही वना रहा ।

[दो]

भाई साहव और मैं दोनो एक ही परिवारके वच्चोंको ट्यूशन पढाने जाया करते थे। एक दिन भाई साहवने नाहटाजीके उधर होकर निकलनेकी वात कही। उस दिन पहली वार मैंने अभय जैन ग्रन्थालय की सडक नापी। भाईसाहव नाहटाजीसे मिलने ऊपर चले गये मगर मैं नीचे ही खडा रहा। भाई साहवके वहुत कहनेपर भी ऊपर जानेकी मुझमें कोई दिलचस्पी पैदा नही हुई। नाहटाजीको जव पता चला तो उन्होने भी मुझे खिडकीसे आवाज दी,'महेन्द्रजी, ऊपर आजाइयेगा।' उनकी हृष्ट पुष्ट आवाज चार व्यक्तियोका सयुक्त घोल लिये थी। उसमें ठेठ मारवाडीपन था। मैं ऊपर नही गया और सीधा अपने गन्थालय पहुँचा।

[तीन]

दीवालीके कुछ दिन पूर्व एक दिन नाहटाजी ग्रन्थालय आये और मुझसे कहने लगे कि 'इन दिनों मेरे पास लिखनेवाला कोई नही है और दीवाली पर दो एक लेख प्रकाशनार्थ वाहर भेजने आवश्यक हैं, अतः आप कल सुवह आकर यह काम कर दें तो ठीक रहेगा।' मेरे कुछ कहने नही कहने की उन्होने कोई वाट नही देखी और वे एक दृढ विश्वासी की तरह अपनी धुनमें वहाँसे प्रस्थान कर गये। मैं दूसरे दिन प्रात. आठ वजे करीव उनके वहाँ पहुँच गया। देखता हूँ नाहटाजी सामायिक वेशमें वैठे हुए पन्ने उलट रहे हैं। उनके पूरे कमरेमें जेटकी जेट कितावें पडी हुई है जैसे कोई खेत गाडरोसे भरा हो और उनके वीच कोई गाडरी अपने मनमें कोई निश्चिन्त लगन लिये अपने साफेका पलेवण कर रहा हो। मैंने उन्हे प्रणाम किया। उन्होने कहा, 'आइये, मैं आपही का इन्तजार कर रहा था' और वे पालथी मारकर महावीरस्थ हो गये। थोडी देर वाद उन्होने मुझे पेन और पाठेका दस्ता पकडाते हुए लिखाना प्रारम्भ कर दिया। दीवालीके दो लेख। एक लघु-लघु तथा दूसरा गुरु-गुरु। उनके लिखानेका ढंग ठीक वैसा ही था जैसे कोई होनहार शिक्षक अपने होशियार छात्र को पाठ लिखा रहा हो।

उनकी निगाह मेरी लेखनीपर और मैं विश्रामकी विभूति लिये विना फ्रटियर मेल लिखता ही जा रहा हूँ। उन्हें दो लेख पूर्ण करने हैं और मुझे दो घन्टे। वीच लेखमें नाहटाजीको एक जगह कही कोटेशन देना था। वे तपाकसे उठे, दीवालके सहारे लगे पुस्तकोके थम्वारमें से एक पुस्तक लाये, तत्काल सम्वन्धित कोटेशन निकाला, मुझे लिखाया और पुन उसे अपने डेरे पहुचा आये। फिर वही उनकी पालथी और मेरी कलम।

उनके ग्रन्थालयमें सैकडो कितावें, पत्र-पत्रिकाए, हस्तलिखित ग्रथ, पट्टे परवाने, रुक्के, ताम्रपत्र, सिक्के, चित्र तथा पाडुलिपियाँ हैं मगर नाहटाजीको उनके केटेलाग और इन्डेक्सकी आवश्यकता नही। उन्हें सव ज्ञात है। कोई चीज ऐसी नहो है, जिसकी नीव सीवसे वे परिचित न हों। एक सच्चे पहरियेकी भाँति वे प्रत्येकके रोयें-रोयें से परिचित हैं। जैसा उनका अद्भुतालय, वैसी ही अद्भुत उनकी स्मरण शक्ति। मैं चकित हूँ उनकी याददाश्ती कितनी अवधानमूलक, व्यवस्थित, विचित्र, टीपटाप और अपटूडेट है।

[चार]

नाहटाजी एक प्रखर खोजक हैं। इस क्षेत्रमें उनका कोई मुकावला नही। शोध खोजके लिए मनसा वाचा, कर्मणा उन्होने अपने आपको समर्पित कर दिया है। अज्ञातको ज्ञात करने, अधूरे ज्ञानको पूर्ण ज्ञात करने तथा ज्ञात को उत्तम ढंगसे ज्ञात करने में उनकी गहरी पैठ, धुन, धैर्य, कर्मठ कुशलता और कार्य क्षिप्रताकी कोई सानी नही। राजस्थानका शायद ही कोई हस्तलिखित ग्रन्थागार हो, जहाँ उनकी पहुँच नही हुई हो।

कहनेको नाहटाजीके पास कोई डिग्री नही है मगर वे डिग्रियोके सम्राट् हैं। वे विश्वविद्यालयके ठप्पे-वाले गाइड भी नही है मगर वे गाइडोके भी गाइड है। उनका ग्रथागार अनुसधित्सुओंके लिए एक ऐसा तीर्थ है, जहाँका चन्दन-तिलक लिये विना शोध की कोई सिद्धि होती नही, कर्मका भँवरा ठिकाने लगता नही और प्रामाणिक परिपक्वताकी मणि हाथ लगती नही।

[पाँच]

सन् ५८ तक मैं बीकानेर रहा। यदा-कदा उनके वहाँ आना-जाना हो जाया करता। हमारे वहाँके कुछ साथी तो नियमित रूपसे वहाँ लेखन तथा लिपि-नकलका काम भी पाते थे। नाहटाजी जहाँ भी मिलते, कुशल क्षेमके रूपमें सबसे पहले यही पूछते—'आजकल क्या कर रहे हैं? इन दिनोमें क्या लिखा? फलाने विपय पर लिखिये। फला पत्रमे रचना भेज दीजिए। फला विशेषाक निकल रहा है। फला अभिनन्दन ग्रथ निकल रहा है। ये-ये विपय है आपके लिखनेके लिए। सामग्री मेरे पास बहुत है, आइयेगा और लेख जल्दी तैयार कर दीजियेगा।' ऐसे लोगोकी संख्या बहुत है, जो उनसे प्रेरणा प्राप्तकर लेखनकी ओर, नियमित लेखनकी ओर प्रवृत्त हुए हैं। वे कोरी प्रेरणा ही नही देते हैं, उसे फलित रूपमे देखनेके लिए कोई कसर बाकी नही रखते। वे पीछे पड जाते है और जब तक कार्य पूरा नही होता वे पिंड नही छोडते। ठीक उसी प्रकार जैसे कोई मागनेवाला अपनी उगाई-पुताई पटानेके लिए लगातार पीछे पडा रहता है और जब तक उसका लेन-देन क्लीयर नही कर देता, सुखपूर्वक नही रह सकता। अन्तर केवल इतना ही है कि नाहटाजीमें किसी प्रकारकी कोई स्वार्थ लिप्सा या गैर-भावना नही है न कोई पूजा-प्रतिष्ठा या उनके भक्तोकी-पूजनोंकी सख्या वृद्धिका दृष्टिकोण ही निहित रहा है। वे तो चाहते है कि यह क्षेत्र इतना विशाल और समृद्धिपूर्ण है कि एक दो व्यक्तियोसे यह काम पूरा नही हो सकता अत अधिक से अधिक लोग इस ओर प्रवृत्त हो।

नाहटाजीका प्रत्येक काम नियमित रूपसे सम्पन्न होता है। प्रात सामायिक और उसमें स्वाध्याय। सामायिकमें नियमित रूपसे ग्रन्थोका पठन। एक सामायिकमें बीस-तीस पृष्ठ पढनेसे महीनेमें लगभग छ सौ-सात सौ पृष्ठ और वर्पमें करीब साढे आठ हजार पृष्ठोका पठन। यदि दो सामायिक प्रतिदिन हुई तो सत्रह हजार पृष्ठोका वाचन, फिर हिसाब लगाया जाय उनके ३५-४० वर्पोंके अध्ययन स्वाध्यायको तो यह सख्या लाखो तक पहुँचेगी। हजारो ग्रन्थ और लाखों पृष्ठ। नाहटाजीका यह क्रम, वे जहाँ कही भी हो, अनवरत चलता ही रहता है।

उनकी सबसे बडी विशेपता यह भी है कि वे प्रत्येक व्यक्तिको अन्दरकी दृष्टिसे देखते हैं। चाहे वह छोटा हो अथवा बडा। प्रत्येकके कार्डका यथोचित उत्तर देते है। पोस्टकार्ड स्वयं लिखते हैं। उनकी राईटिंगको प्रत्येक पढनेका साहस नही कर सकता। यह लिपि सभी लिपियोमे भिन्न, सभी भापाओका सम्मिलित मोर्चा लिये होती है। यह सुविधाके लिए '**नाहटा लिपि**' कही जा सकती है। उदयपुरमें मुझे ज्ञात है, नाहटाजी कइयोको चिट्ठियाँ लिखते हैं, नये व्यक्तियोकी अधिकाश चिट्ठियाँ मैंने उलथाई है। मैं एक दृष्टिसे उनकी लिपि पढनेका एक्सपर्ट स्वीकारा जाने लग गया हूँ। नाहटाजीने सैकडो व्यक्तियोको हजारो चिट्ठियाँ लिखी हैं। यदि उनका सग्रह कर लिया जाय तो भी एक बहुत बडी खोज-राशि एकत्र हो सकती है।

[छ]

नाहटाजी पूर्णरूपेण साहित्यिक सेठ है। सरस्वती और लक्ष्मी उनके यहाँ युगल रूपमें प्रतिष्ठित हैं। वे वणिक् सेठ हैं, अत अपना पैसा फालतू खर्च नही करते। लक्ष्मीके लिए सरस्वतीका उपयोग करते मैंने

उनको कभी नही देखा पर सरस्वतीके लिए लक्ष्मीका चलन करते मैंने उन्हें कई वार देखा है। लक्ष्मी उनके पास वरसती हैं पर वे सरस्वतीको अधिक सरसब्ज करते है। वर्षमें सरस्वतीको यदि ग्यारह कपडे देते हैं तो लक्ष्मीको केवल एक। मगर उनकी सरस्वतीकी क्या कोई लक्ष्मी आकेगा ? उनकी सरस्वती कई लक्ष्मियों से भारी और अधिक जडाऊ पडती है।

नाहटाजी प्रतिदिन जितना पढते हैं, उतना लिख भी लेते हैं। जहाँ उनके पढे हुए ग्रन्थोकी सख्या हजारो तक पहुँची है, वहाँ उनके लिखे लेखोकी सख्या भी उतनी ही है। छोटा-से-छोटा और वडा-से-वडा कोई पत्र उठा कर देख लीजिये उसमें नाहटाजी अवश्य मिल जायेंगे। किसने इतना लिखा है और कौन इतना छपा है ? मुझे कोई नाम याद नही आ रहा है। अद्‌भुत है इनका लेखन। मशीन भी अनबैलेंस्ड हो जाती है काम करते-करते। मगर यह व्यक्ति यत्र-तत्र और मत्र सभीको पीछे धकेलता हुआ अनवरत अपनी साधना-निष्ठा और धुनमें लगा हुआ है।

[सात]

नाहटाजी बहुत समयी और वहुत नियमी हैं। रहन-सहन, खान-पान, बोल-चाल सवमें वे बहुत सीधे और सादे हैं। उनपर आडवरकी जू तक नही रेंगती, लीक तक नही फटकती। वे पक्के जैनी हैं। उनके अपने कई व्रत, नियम और उपवास हैं। रात्रिको वे भोजन नही लेते हैं। पानीका भी आगार रखते हैं। वंधी वधाई तिथियोमें बधीवधाई सब्जियोके अतिरिक्त वे आहार भी मर्यादित ही लेते हैं।

नाहटाजी एक ऐसा व्यक्तित्व हैं, जिसपर लिखनेके लिए दो-दो कलमें साथ-साथ जोती जा सकती हैं। मेरा मन उनके ढेरो सस्मरणोसे उपजीवित है। उनका एक-एक सस्मरण एक-एक माला वन सकता है। मगर आज उन मालाओको फिरानेवाले कितने मिलेंगे ?

चैतन्यका उद्धार तो सभी करते हैं मगर जडका उद्धार करने वाले विरले ही होते हैं। नाहटाजीने यह बीडा उठाया। उन्होने कूडा करकट तथा रद्दी समझे जानेवाले हस्तलिखित ग्रथो आदि का उद्धार कर कई अज्ञात कवियोको प्रतिष्ठित किया। हमारी प्राचीन सास्कृतिक एव ऐतिहासिक सपदाको श्रीहीन होनेसे वचाया और इस धरोहरको व्यवस्थित रूपसे सगृहीत करनेका राजकीय और सार्वजनिक रूपसे सभीका ध्यान आकृष्ट किया। वस्तुत उनका व्यक्तित्व एक शिलालेखी व्यक्तित्व है, जो आज हमारी समझमें उतना उभरकर नही आ रहा और शिलालेखोका महत्त्व तात्कालिक समझमें आता भी कम ही है, मगर समय वतायेगा कि वस्तुत. समयकी वह शिला भी धन्य हो गई जिसपर नाहटाजी जैसा व्यक्तित्व अकित होकर सदाके लिए एक स्मृति छोड गया। उनकी षष्टिपूर्ति पर मेरा एक मन नही, मेरे जैसे अनेको मन स्वतः ही उन्हें वन्दन करनेके लिए उमड पडते हैं।



श्री अगरचन्द नाहटा : एक प्रोफाइल

डॉ० हरिशकर शर्मा 'हरीश'

प्रात कालकी वेला। पूजाका समय। स्थान ढूंढता-ढूंढता मैं कला-भवन आया। नीचेके वाचनालयमें सशकित होकर प्रवेश किया और हिन्दी साहित्यकी लगभग समस्त पत्र पत्रिकाओको देख कर मन आश्चर्यसे भर गया। लगता था, किसी भी भूखे मस्तिष्कका यहाँ सरलतामे वर्षो तक निर्वाह हो सकता है।

किसी भी साहित्यिककी, धार्मिक जिज्ञासुकी और शोध प्रेमीकी प्यास यहाँ तृप्त हो सकती है। खडा-खडा मैं पन्ने पलटने लगा। बहुत समय निकल गया। पुन बाहर निकलनेको उद्यत हुआ ही था कि एक सम्भ्रात सज्जनने भीतर प्रवेश किया। नमस्तेके पश्चात् मैंने कहा ''' जी मैं नाहटाजीके दर्शन करने आया हूँ ' ' आप बता सकते हैं, वे कहाँ है ?

कहो भाई, मैं ही हूँ।

ऊँची-ऊँची धोती, विशाल मस्तिक, अधपके बाल, खिलती मूँछें, मझला कद, सुगठित शरीर, अनुकरणीय स्फूर्ति और स्मितिमें डूबा उनका प्रकाशमय आनन, वृषभ स्कध और ऊर्जस्वित उत्साहको मैं स्नेह भरे एक बोलमें समझ गया। मैंने श्रद्धासे उन्हे प्रणाम किया, उन्होने आशीर्वाद दिया। उन्होने विश्वास भरे स्वरमें पूछा—कब आये ?

जी मैं रातको आगया था।

अच्छा बैठो, मैं अभी आता हूँ कहते हुए वे बाहर चले गये।

अर्द्धनग्न शरीर पर धोती लिपटी हुई, हाथ में चदनका थाल लेकर वे घरकी ओर बढ गये। कला-भवनके सामने ही जैन मन्दिरको देखकर मेरे लिए उनको उस वेशमें उस समय समझना अधिक कठिन नही हुआ।

यो तो राजस्थान तपोभूमि रहा है। वीर प्रभूके कणमें जाने अनजाने विदित नही, कितने असाधारण साधक हो गये हैं। पर जीवनकी इन २५ रेखाओको पार करते मुझे अबतक देशमें साहित्यका ऐसा सरल साधक दिखाई नही पडा। विश्वास नही हुआ कि मरुभूमिमें जीवनका यह मधुर स्रोत! साधनाकी यह उत्ताल शैवालिनी। प्रगति और परपराका यह विचित्र समन्वय! यह व्यक्तित्व!

जैन साहित्यका शोध-स्नातक होनेके कारण प्रयागसे मैं बीकानेर आया था। नाहटाजीके दर्शन पहले किए नही। यो पत्र व्यवहार पहले हो गया था। कई दिनोसे आशीर्वाद पाता रहता था। विचारों और व्यक्तित्वके मननमें डूबा ही था कि वे कला-भवन आये और मुझे भोजन करनेके लिए कहा। मैं चुपचाप चला गया। वे सामने बैठ गये, पद्मासन लगाये, तपस्वीकी भाँति मेरे कार्यका विवरण पूछते रहे। मैंने कहा—नाहटा-जी, मैं तो मिट्टीका एक लोथ हूँ, आप जैसा चाहें, ढालें। कुशल शिल्पीके हाथोसे तो मिट्टीके कुरूप खिलौने भी सुन्दर हो जाते हैं, हिली हुई नीव भी मजबूत बन जाती है। मेरा विषय भी अत्यन्त कठिन है, अध्ययन नहीके बराबर है और अस्वस्थ भी रहता हूँ। आदि कालीन जैन-अजैन रचनाओके आप मर्मज्ञ आचार्य हैं। मैं बोल गया। वे ध्यानसे सुनते गये, जैसे मैं कोई सार पूर्ण बात कह रहा हूँ। पर अभिव्यक्तिमें तो विनम्र निवेदन और अपनी अध्ययनगत असमर्थता मात्र थी।

भोजन करते-करते मैंने देखा, उनका वरदहस्त मेरी ओर उठ गया। अब चिन्ता मत करो, यहाँ तुम्हें सब ग्रन्थ मिलेंगे। अच्छे कार्योंमें बाधाएँ तो आती है, निराशामें आशाकी किरण सदैव छिपी रहती है। अध्ययन एक तप है। निरंतर अध्ययन और अभ्यास ही सिद्धिकी कुंजी है, लक्ष्यकी प्राप्ति है।" यह कहकर वे चुप हो गये।

मैंने देखा, कैसा अपूर्व साधक है, निश्छल, सरल, गभीर और हँसमुख।

हिन्दी साहित्यका यह महाविद्वान् दूसरा रामचन्द्र शुक्ल है! जिसमें गाधीसी कार्यनिष्ठा है, प्रार्थना और ईश्वरीय विश्वासके प्रति प्रबल धारणा है। टैगोर-सी सौजन्यता, सौम्यता और अध्ययनके प्रति अदम्य उत्साह है। शुक्लजीकी भाँति जिसमें गभीर चिन्तनकी प्यास है और नेपोलियनकी भाँति लक्ष्य प्राप्तिकी धुन है। अव्याहत जुटे रहनेका उसमें महान् गुण है।

नाहटाजीकी भाषामें एक ओज है, राजस्थानी सिंहकी गरज है, पर्याप्त गभीरता है और अनुभूति तथा अभिव्यक्तिका अनूठा समन्वय है।

इसके पूर्व मैं सोचता था कि नाहटाजी कोई बहुत ही शुष्क और नीरस व्यक्ति होगे क्योकि उनके विविध लेखो और गभीर तथा कठिन साहित्यके विवेचनमें डूबे रहनेसे कोई भी व्यक्ति यह कल्पना कर सकता था। पर कल्पना और यथार्थ सत्यका अनावरण साक्षात् दर्शन पर ही हुआ। धारणा निर्मूल सिद्ध हुई।

मैं उनके पास अध्ययनमें रत हो गया। रोज-रोज उनके जीवनके मूलतत्त्वो और उनकी साधनाके रहस्योको समझनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ।

उनकी दिनचर्या देखकर मैं हतप्रभ हो गया। सुबह ५ से ६ भजन, ६ से ९ तक लेखन, ९ से ११ तक भजन और १ से ५ तक मनन, परिशीलन, निर्देशन और आये हुए पत्रोका प्रत्युत्तर देना। फिर ६ से १० तक प्रतियोका वही अध्ययन।

मैंने पूछा, नाहटाजी आपका कितने शुष्क और गभीर विषयोमें मन लगता है। क्या यौवनमें ही आपकी यही दिनचर्या थी? स्फुलिंगके थोडा-सा छेडनेकी ही आवश्यकता थी। अनुभवोका गभीर मेघ बरस पडा।

"जवानीमें मैं भी बहुत ही गभीर था", वे बोलते गये, "लोग कहते थे मैं बूढोकी सी बातें किया करता हूँ, नाच-रग, सिनेमा, खेल-कूद कुछ भी पसद नही आता था। सिर्फ गभीर अध्ययनमें ही मेरी रुचि थी।"

"आजकलके कॉलेजके विद्यार्थियोकी भाँति अनेक भाषाओका ज्ञान तो मुझे नही है। क्रमबद्ध अध्ययन भी मैं नही कर सका। अपने शोध और पुरातत्त्व जन्य दृष्टिकोणको ही तल्लीनतासे पोषित करता रहा। निरतर अध्ययन और एकात साधना ही मुझे प्रिय थी। किसीसे अधिक बोलना, अकारण विवाद करना, मेरी रुचिसे परेकी वस्तु थी। मैं विद्वान् नही हूँ पर अभ्यासी हूँ, राहोका अन्वेषी हूँ।" कहते-कहते वे उठ गये "करत-करत अभ्यासके जडमति होत सुजान"

मैंने पूछा कार्यभार आप पर बढता नही? उठते-उठते उन्होंने कहा, "बढे क्यो? आलस्यसे मेरी बिल्कुल मित्रता नही। स्वावलंबन और "काल करे सो आज कर" ही मेरे जीवनके सूत्र है।"

विशाल अध्ययनका यह समुद्र इसी तरह मरुभूमिमें हिलोरें ले रहा है। ४५ वर्षकी वयमें भी शरीर स्वस्थ है और मन तो ज्ञानके ज्योतिकणोंकी इन्द्रधनुषी रेखाओमें गुँथा हुआ है। किसी भी प्रकाश-किरणके लिए व्याकुल जिज्ञासुको यहाँसे निराश नही लौटना पडेगा।

पत्रोका यथा समय प्रत्युत्तर देना, यह साधक अपना कर्त्तव्य समझा है जबकि हिन्दीके दो प्रतिशत विद्वानोमें भी यह बात नही है। नाहटाजीको तो यह एक क्रम-सा बन गया है।

सच तो यह है कि विद्वत्ता सच्चे और आडबर शून्य जीवनमें ही पलती है। और नाहटाजी इसके साकार प्रतिरूप है। अपभ्रंश, सस्कृत, हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती आदि भाषाओका यह साधक एक प्रत्यक्ष कोष है। इन भाषाओकी शोधमें यह तपस्वी डूब-डूबकर खेला है और खेल-खेलकर डूबा है।

एक सम्मेलनमें जाते हुए मैंने पूछा—"नाहटाजी, आपकी शिक्षा कहाँ तक हुई?" सिर्फ ५वी कक्षा तक वे तीव्र स्वरमें बोले' मुझे विश्वास नही हुआ, पर यथार्थ यही है। मैंने सोचा, साधकके लिये अव्यावहारिक शिक्षा व कृत्रिम डिग्रियोकी क्या आवश्यकता है। तुलसीदास कहाँ पढे थे? मीराने कौनसे विद्यालयमें शिक्षा पाई थी? और अपूर्व साधक प्रसाद एवं विद्वान् शुक्लजीने कितनी डिग्रियाँ ली है?

रिक्त भारतीय सस्कृतिके भी दर्शन होते हैं। इन्होने फुटकर लेखोके अतिरिक्त कुछ ऐसे ग्रन्थोका संपादन भी किया है, जो लोक-साहित्यकी अमूल्य निधि हैं। श्रीनाहटाजीने किसी कॉलेजमें जाकर शिक्षाकी कोई डिग्री प्राप्त नही की है। साधारण काम चलाऊ शिक्षा प्राप्त करके आपने साहित्य क्षेत्रमें पदार्पण किया और अपनी सच्ची लगन और परिश्रमके वल पर साहित्यजगत्को वडी महत्त्वपूर्ण एव अमूल्य कृतियाँ प्रदान की, जो अन्य लोगोके लिए आदर्श कही जा सकती है।

जैन-धर्म, दर्शन तथा साहित्य और इतिहासके आप प्रकाड विद्वान् है, इसलिए इनको जैन इतिहास रत्नका पद मिला, जो इनकी योग्यता और साहित्य सेवाको देखते हुए सर्वथा उचित है।

आप स्वभावसे वडे सरल, मिलनसार और दयालु हैं। एक बार भी इनसे जो मिल जाता है, वह इनके व्यक्तित्वसे प्रभावित हुए बिना नही रह सकता। मेरे एक पडोसी अपने कार्य वश एक बार बीकानेर गए तव आदरणीय नाहटाजीके यहाँ भी इनके दर्शनार्थ मेरा एक पत्र लेकर इनकी सेवामें पहुँचे। उनके हृदयमें आजतक नाहटाजी वसे हुए हैं।

मैं नाहटाजीके प्रति अपनी हार्दिक शुभ कामना प्रकट करता हूँ और इनकी दीर्घायुके लिए ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ।



ज्ञान-सूर्य नाहटा

श्री गजासिंह राठोर

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो, न मेधया वा बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनु स्वाम्॥

कठोपनिषद्की यह पारम्परिक आध्यात्मिक अनुश्रुति नाहटाजी पर शत प्रतिशत घटित होती है। नाहटाजी न तो किसी विश्वविद्यालयके उपाधि प्राप्त स्नातक हैं, न किसी गुरुकुलसे उच्चशिक्षा प्राप्त शिक्षा शास्त्री। इन्होने अपने अगाध अन्तरमें अहर्निश गहरी डुवकियाँ लगाकर प्रचण्ड ज्ञान मार्तण्डका देदीप्यमान आत्म-स्वरूप प्राप्त किया है।

नाहटाजीका नाम मैं बहुत वर्षोसे सुनता आ रहा हूँ। भिन्न रुचिके साहित्यिको, समालोचकों और अपने मित्रोंसे सुनी वातो और विभिन्न कर्णपरम्पराओके माध्यमसे फैली किंवदन्तियोंने मेरे हृत्पटल पर नाहटाजीका कुल मिला कर एक वडा ही विचित्र रेखाचित्र अंकित कर दिया था। मेरा अन्तर इस अद्भुत प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तिसे कुछ क्षण वात करनेके लिये वर्षोसे व्यग्र हो रहा था। अनेक वार इनसे संपर्ककी चाह मनमें जगी पर मैंने उस चाहको पूरा करनेका कभी प्रयास नही किया, क्योकि मेरी धारणाके अनुसार मैं उन परमाणुओंसे वना हुआ हूँ जो न स्वयंको अन्यमें घुलने देते है और न अन्यको ही स्वयमें, परतु प्रकृतिका यह अटल नियम है कि जो इच्छा एक वार अन्तरमें उद्‌भूत हो जाती है वह देर-अवेरसे कभी न कभी अवश्य साकार होती है।

प्रकृतिके इस अपरिहार्य क्रमके अनुसार गतवर्ष भाद्रपद शुक्ला सप्तमीको मुझे महान् इतिहासकार जैनाचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज साहव द्वारा रचित "जैनधर्मका मौलिक इतिहास—प्रथम खण्ड" नामक

ग्रन्थकी पाण्डुलिपिके सम्बन्धमें परामर्श हेतु ख्यातनामा विद्वान् नाहटाजीके पास बीकानेर जानेका सुअवसर प्राप्त हुआ।

जैनधर्मके आद्य तीर्थ प्रवर्तक भगवान् ऋषभदेवके समयसे अन्तिम तीर्थंकर भगवान् महावीरके निर्वाण काल तककी जैनधर्मके इतिहासकी मुख्य-मुख्य घटनाओका विवरण नाहटाजीको सुना कर उनके सम्बन्धमें नाहटाजीके सुझाव मुझे आशुलिपिमें लिखने थे। आगमो, दुरूह प्राकृत, अपभ्रश और सस्कृतमें लिखे अगणित धर्म ग्रथो, प्राचीन आचार्योंकी हस्तलिखित निर्युक्तियो, चूर्णियो, अवचूर्णियो, टीकाओ और टब्बोमें इतस्तत उल्लिखित इतने सुदीर्घ अतीतके ऐतिहासिक एव धार्मिक तथ्योको महामनीषी आचार्य श्रीहस्तीमल-जी महाराजने अपने भगीरथ प्रयाससे सहज, सरल-सरस भाषामें क्रमबद्ध किया था। उन सबके सम्बन्धमें प्रामाणिक परामर्श देना अपने आपमें कितना बडा गुरुतर कार्य था, इसका सही अनुमान लगानेमें कल्पना की उडान भी थक जाती है। इस गुरुतर कार्यके लिए सबकी आँखें नाहटाजी पर आकर रुकी थी यही नाहटाजी के विराट् व्यक्तित्वका दिग्दर्शन करानेके लिए पर्याप्त है।

मैं पाण्डुलिपिके दो बडे पुलिन्दे लिए नाहटाजीके विशाल ज्ञान भण्डारमें पहुँचा। जब मैंने छरहरी बुनावटकी केसरिया रगकी बडी बीकानेरी पगडी सिर पर रखे नाहटाजीको पुस्तकोके बडे-बडे ढेरोंके बीच अलमस्तीसे बैठे देखा तो मुझे सहसा उर्दूके एक शायरका यह शेर याद आ गया—

हमें दुनियाँ से क्या मतलब के मकतब है वतन अपना।
मरेंगे हम किताबो पर, वरक होंगे कफन अपना॥

केवल रात्रिमें शमा पर दीवाना रहने वाला परवाना रात-दिन अपनी पुस्तको पर फिदा होने वाले इस आध्यात्मिक दीवानेसे हार मान कर अपना मुँह छुपाये अदृश्य हो चुका था।

सरस्वतीके इस अनन्य उपासककी तन्मय साधना देख कर मैं हर्ष विभोर हो उठा। उस समय मेरे मानसमें एक साथ उठे अनेक विचारोने जो तूफान खडा कर दिया उसका हूबहू चित्रण करना मेरी लेखनी की शक्तिसे बाहरकी बात है। जहाँ तक मुझे याद पडता है, पहला विचार मेरे मनमें यह आया कि अथाह शास्त्र सागरके आलोडन-विलोडनसे बडे श्रमके पश्चात् निकाले गये इस मक्खनके सम्बन्धमें क्या इस व्यक्तिसे उचित परामर्श मिल सकेगा, जो देखनेमें सैंकडो बरस पहलेके मारवाडी सेठका हूबोहूब प्रतिरूप प्रतीत होता है। दूसरे ही क्षण मेरी निगाह नाहटाजीकी, भ्रूभगीको भेद कर निकलती हुई तीक्ष्ण और कुछ तिर्छी दृष्टि पर पडी। मुझे वह चिरपरिचित-सी लगी। मैंने पहचान लिया कि यह तो वही लोहलेखनी के धनी आचार्य चतुरसेन शास्त्रीकी अन्तर्वेधी दृष्टि है। मैं इस दृष्टिके अद्भुत चमत्कारसे अच्छी तरह परिचित था। मेरे समस्त ऊहापोह शान्त हो गये और मैं अपने कार्यकी सिद्धिकी आशासे आश्वस्त हो गया।

नाम और कार्यका परिचय पाते ही नाहटाजीने सहज स्वरमें कहा, "मैं आपका इन्तजार कर रहा था। मेरे पास पहले सूचना आ गई थी। आप जितना समय चाहे लें। प्रात.काल सामायिक करता हूँ, उस समय भी धार्मिक कार्य होनेके कारण इस कार्यको किया जा सकेगा। दिनके अतिरिक्त रात्रिको भी हम लोग बडी देर तक बैठ सकते है। आप बाहरसे आये हैं, अत आपके कार्यको प्राथमिकता दी जायगी।"

उसी दिन कार्य आरम्भ किया गया। आवश्यक कार्योंके लिए थोडेसे अवकाशको छोडकर प्रात.काल-से रात्रिके ग्यारह बजे तक नाहटाजीने पूर्ण मनोयोगसे पाण्डुलिपिको सुना, अनेक स्थलो पर अमूल्य सुझाव दिये, अनेक ऐतिहासिक तथ्योके मूलाधार ग्रन्थोके उद्धरण बताए और अनेक स्थलोकी औचित्यता अथवा अनौचित्यता पर चर्चा की और ९० हजार पुस्तकोके अपने विशाल पुस्तक भण्डारमें से पलक झापते-झापते

आवश्यक पुस्तकोको निकाल ईप्सित स्थल तत्काल वता कर मेरी दिल जमई की । मैं भौंचक्का-सा रह गया इस अद्भुत स्मरणशक्तिको देख कर । चार दिन तक निरन्तर यह क्रम चलता रहा । प्रत्येक तथ्यका असदिग्ध ज्ञान, प्रत्येक विषय पर पूर्ण प्रभुत्व, प्रत्येक गुत्थीको अनायास ही सुलझानेकी आदि अद्भुत व्युत्पन्नमति आदि गुणोसे ओत-प्रोत ज्ञान और गुणोके भण्डार इस महामानवको अपनी आँखोके सामने, साक्षात् देख कर मेरे अन्तरका अपने विद्यार्थी जीवनमें जमा यह विश्वास सदा सर्वदाके लिए सुदृढ, सशक्त, अमिट और अमर वन गया कि हेमचन्द्राचार्यको जो कलिकाल सर्वज्ञकी उपाधि विद्वानोंने दी है, उसमे कोई अतिशयोक्ति नही । प्राचीन कालमें इस आर्यधरा पर केवल ज्ञानी, ब्रह्मज्ञानी विद्यमान थे । इस प्रकारके विवरण जो आज हमें हमारे धर्म ग्रन्थोमें देखनेको मिलते है उनपर सदेह करना केवल मूर्खता और हठधर्मिता मात्र है ।

कार्य समाप्ति पर ऐतिहासिक एव सैद्धान्तिक विषयो पर मैंने नाहटाजीके सम्मुख अपनी अनेक जिज्ञासाएँ रखी और उन्होने वडी सरल सीधी और स्पष्ट भाषामें मेरी सभी जिज्ञासाओका समाधान किया । मुझे अतिशय आह्लादके साथ ही साथ आश्चर्य भी हुआ और मैं विस्फारित नेत्रोसे उनकी ओर देखते ही रह गया । हठात् मेरे मुँहसे एक ऐसा प्रश्न निकल गया, जिसके लिए तत्क्षण ही स्वयं मुझे अपनी अक्ल पर तरस आया कि तुझे आम खानेसे मतलव है या आमके पत्ते गिनने से ?

प्रश्न था— 'आपने सस्कृत और प्राकृतकी कौन-कौन सी उपाधि परीक्षाएँ पास की हैं ?"

नाहटाजी मुस्कराए और मेरा अतर हिल उठा ।

नाहटाजीने तत्क्षण सहज स्वरमें कहा—"पाचवी कक्षातक ।"

मैंने अविश्वासके स्वरमें पूछा—"कहाँ ?"

"मेरे अपने नगरके स्कूल में ।"

"फिर इस अगाध ज्ञानके पीछे राज क्या है ?" मैंने प्रश्न किया ।

नाहटाजीका छोटा सा उत्तर था—"स्वाध्याय ।"

अव नाहटाजीको कुतूहल सूझा । उन्होने कहा अव मेरी पारी है—"आप राठोर राजपूत हैं फिर यह संस्कृत, प्राकृत और जैन धर्मके प्रति रुचि कैसे ?"

मेरे जीवनमें मुझे यदा कदा यही प्रश्न सुननेको मिला है अत. मैंने अपना वही चालीस साल पुराना उत्तर दोहरा दिया—"श्रीमन् ! मुझे अपने विद्यार्थी जीवनमें मुख्यत शिक्षा इन्ही तीन विषयोकी मिली है ।"

नाहटाजीने मार्गदर्शन करते हुए कहा, "आप जैन-दर्शन और हिन्दू-दर्शनपर तुलनात्मक लेख लिखिये और मुझे सूचना कीजिये, मैं पत्रपत्रिकाओंको कहकर उन्हें प्रकाशित करवा दूगा ।

मैंने केवल उनका जी रखनेके लिये कहनेको तो कह दिया कि प्रयास करूगा पर मेरे अन्तरमें तो उथल-पुथल मची हुई थी कि एक ओर तो एक प्राइमरी शिक्षा प्राप्त कर्मठ व्यक्तिने दृढ अध्यवसायके साथ अनवरत अध्ययनसे भारतके चोटीके विद्वानो, शोधको, इतिहासवेत्ताओ, साहित्यिको और लेखकोमें सर्वोच्च स्थान प्राप्त कर लिया है और दूसरी ओर महान् अकर्मण्य मैं हूँ जिसने ४० साल पहले 'न्यायतीर्थ' और 'व्याकरणतीर्थ' की उपाधियाँ प्राप्त करके भी जीवन भर भाड ही झोका । उसी समय अदृश्य ब्रह्माण्डमें छुपे हितोपदेशकार विष्णुशर्माके स्वर मेरे कर्णरन्ध्रोमें गूज उठे—

हा हा पुत्रक नाधीत, सुगतैतापु रात्रिपु ।
तेन त्व विदुपा मध्ये, पके गौरिव सीदसि ।।

हृदयमें गहरी अभिलापा जगी कि महाभारतकार वेदव्यास और श्री कृष्ण भगवान् द्वारा वनाये गये ज्ञानसूर्य सरशय्याशायी पितामह भीष्मके चरणोमें वैठकर धर्मराज युधिष्ठिरने अपने हृदयमें ज्ञानगंगाको

प्रवाहित किया था, उसी प्रकार इस कलिकालमें ज्ञानसूर्य नाहटाजीके चरणोमें बैठकर अपने मरु हृदयमें ज्ञानगगाको प्रवाहित करूँ। अपने जीवनकी यह चाह कभी पूरी होगी भी कि नही, इस आशकामें मैंने उस समय मन ही मन दृढ निश्चय किया कि अपने जीवनके इस सध्याकालको अनवरत अध्ययनमें विताऊँगा।

नाहटाजीने मुझे अपना संग्रहालय भी दिखाया जिसमें करीनेसे रखी गई अमूल्य कलाकृतियो विभिन्न शैलियोके चित्रो, पुराने सिक्को और दस्तकारीकी तरह-तरहकी अगणित वस्तुओंके अणु-अणुमें हमारी प्राचीन आर्य सस्कृति मुखरित हो रही थी। इस सग्रहालयको देखकर मेरे हृत्पटलपर नाहटाजीका कलाप्रेमीके रूपमें दूसरा विराट् स्वरूप अकित हो गया।

आज देखा यह जाता है कि विद्वान् साहित्यिको और कलाकारोको औरोके मुँहकी ओर ताकना पडता है, श्रीमन्तोकी कृपापर निर्भर रहना पडता है। परतु अनुपम दूरदर्शी नाहटाजी तन, मन और धनसे सम्पूर्णत. स्वावलम्वी हैं। जिसे चाह हो वह उनके मुँहकी ओर देखे परतु उन्हे किसी और के मुँहकी ओर ताकनेकी आवश्यकता नही।

कुल मिलाकर मैं नाहटाजीके अगाध ज्ञान और अद्भुत कलाप्रेमको देखकर वडा प्रभावित हुआ। उनसे विदा होते समय मुझे ऐसा खला मानो मैं अपने अतिसन्निकटके कुटुम्बीसे बिछुड रहा हूँ।

मैंने निश्चय किया कि यदि मुझे कभी अवसर मिला तो मैं डिमडिमघोपसे भारतके निवासियोको सूचित करूँगा कि बीकानेरकी मरुभूमिमें साक्षात् ज्ञानसूर्य देदीप्यमान हो रहा है। जिस किसीको अपने अंतरमें ज्ञानका आलोक उद्भाषित करना हो, शोध करना हो, सैद्धान्तिक वोध करना हो, कलाको परखनेकी कला या धन कमानेकी कला सीखना हो वह अगाध ज्ञानके भण्डार, कलाके अद्भुत पारखी और व्यवसाय-वेत्ताओमें विशेषज्ञ श्रीमान् अगरचन्दजी नाहटाकी सेवामें पहुँचकर उनसे यथेप्सित वस्तु प्राप्त करें।

मेरी सर्वशक्तिमान् परमपिता परमेश्वरसे प्रार्थना है कि वह नाहटाजीको 'जीवेद्वै शरदा शतम्' का वर प्रदान कर इन्हे भारतीय वाङ्मय और सस्कृतिकी ओर अधिकाधिक सेवा करते रहनेका सुअवसर प्रदान करे और श्री नाहटाजीने जो भारतीय वाङ्मयकी अमूल्य सेवाका मानदण्ड प्रस्तुत किया है वह युगयुगान्तर तक अनन्त आकाशमें सूर्यकी तरह चमकता रहे।



श्री अगरचन्दजी नाहटा : एक परिचय

डॉ० आज्ञाचन्द भडारी, जोधपुर

कलाका उद्भव आनन्दसे और परिणति रसमें होती है। शोधकार्य भी साहित्यके अन्तर्गत एक प्रकारकी कलात्मक विधा है। सौभाग्यसे राजस्थानी साहित्य और भाषाके क्षेत्रमें श्री अगरचंदजी नाहटाके रूपमें राजस्थानको एक उच्चकोटिके शोध कलाकार प्राप्त हुए हैं। राजस्थानी भाषा एव जैनसाहित्यके प्रेमियो, साहित्यकारो एव शोधार्थियोके लिए नाहटाजी माँ सरस्वतीके वरदानस्वरूप है।

कलाकारका जीवन समाजके लिए प्रेरणाका स्रोत होता है। साधनाके क्षेत्रमें वह स्वयं अपने ही व्यक्तित्वसे रस ग्रहण करता है। उसी रसकी शाश्वत धाराका स्रोत समाजके मध्य प्रवाहित होता रहता है। ऐसे मेधावी एव कर्मठ कलाकार हजारोमें ही नही, लाखोमें एक-दो ही होते हैं। श्री नाहटाजी उनमेंसे एक हैं।

श्री नाहटाजी माँ शारदाके वरद हस्तका शुभ आशीर्वाद एवं वरदान प्राप्त किए हुए हैं। एक लंबे समयसे आप राजस्थानी भाषा एव साहित्यके साथ ही साथ जैनसाहित्यके सबंधमें गवेषणात्मक कार्य करते हुए तथा अतलकी गहराइयोंसे जो अमूल्य निधियाँ साहित्यिक जगत्को प्रस्तुत करते रहे है, वे उनकी प्रखर मेधाशक्ति, दूरदर्शिता एवं उनके साहसिक परिश्रमकी परिचायक हैं। श्री नाहटाजीका सम्पूर्ण जीवन शोध-कार्यके क्षेत्रमें उस विशाल वृक्षकी भाँति है, जो अपने सम्पर्कमें आनेवाले प्रत्येक शोधार्थीको शीतल छाया एव मधुर फल तो प्रदान करता ही है, किन्तु साथ ही साथ उस वृक्षका प्रत्येक तत्त्व वैधिक दृष्टिसे समाजके लिए लाभदायक सिद्ध होता है।

श्री नाहटाजी जैसे उच्चकोटिके अध्यवसायी, धुनके धनी, लगनशील एव कर्तव्यपरायण व्यक्तिके सवंधमें अधिक कुछ कहनेसे उनके मेधावी व्यक्तित्वपर शब्दजालका आवरण आ सकता है, फिर भी साहित्य-के क्षेत्रमें मौन भी नही रहा जा सकता।

साहित्यिक जगत्में शोधकार्यके अतिरिक्त व्यावहारिकताकी दृष्टिसे भी नाहटाजीका सामाजिक वैशिष्ट्य अनुकरणीय है। कोई भी शोधार्थी जो एक वार आपके सम्पर्कमें आ जाता है वह आपका संसर्ग छोडनेको कभी तैयार नही होता। नाहटाजी भी मुक्तहस्तसे उसे कुछ न कुछ तथ्य प्रदान करते ही रहते है। यह आपकी व्यावहारिकता एव मिलनसारीको ही प्रतिफलन है।

श्री नाहटाजीका शोध कक्ष ही वर्षोंसे की हुई उनकी साहित्यिक तपश्चर्या तथा शोधकार्यका एक ऐसा दर्पण है जिसमें झांकनेपर नाहटाजीके सम्पूर्ण व्यक्तित्वकी झलक प्राप्त हो सकती है। साधारणत दर्पणमें झांकनेपर व्यक्ति अपना ही प्रतिविंव देखता है, किन्तु नाहटाजीके सग्रहालय रूपी दर्पणमें झांकनेपर दर्शक अपने व्यक्तित्वको खो देता है और नाहटाजीके व्यक्तित्वकी झलक पाने लगता है, यही उनके कला-त्मक व्यक्तित्वका विरोधाभास है।

शोधकार्यके क्षेत्रमें, शोधकर्ताके लिए एक-एक पल अमूल्य होता है। श्री नाहटाजी जब कभी भी शोधके संवंधमें किसीके लिए समय निर्धारित करते हैं तो वे पूर्व निर्धारित समयके भीतर ही विषय सवधी सम्पूर्ण सामग्रीसे शोधकर्ताको अवगत करानेको तैयार रहते हैं। यही कारण है कि नाहटाजीका शोधात्मक निर्णय एव तथ्य संबंधी ज्ञान कसौटीपर पूर्ण तथा खरा उतरता है।

सामान्यत' वाणिज्य और साहित्यमें विरोध दिखाई देता है। समाजकी औसत धारणा रहती आई है कि वाणिज्य और उद्योगमें तत्परशील व्यक्ति एक अच्छा साहित्यकार नही हो सकता, किन्तु मेरी ऐसी मान्यता है कि वाणिज्य अपनी चरमावस्थामें साहित्यके अन्तर्गत आ सकता है, परन्तु साहित्य वाणिज्य नही हो सकता। यदि साहित्यको वाणिज्यमें लानेका प्रयास किया गया तो साहित्य नामकी कोई वस्तु शेष नही रह जायगी। श्री नाहटाजी वाणिज्यमें कुशल हैं, किन्तु उनका वाणिज्य उनके साहित्य एव शोधकार्यके समुद्रमें स्वयमेव लीन हो रहा है। दूसरे शब्दोमें नाहटाजीका गवेषणात्मक व्यक्तित्व उनके वाणिज्यपर पूर्णरूपसे हावी हो चुका है। नाहटाजी सेठ है अवश्य, किन्तु नाहटाजीका सेठ उनके शोधकर्ताका सहायक वन चुका है।

राजस्थानके आधुनिक कालके विद्वानोमें नाहटाजी अग्रणी है। आपने अपनी मातृभाषा और साहित्य-से उदासीन राजस्थानवासियोका अपनी मातृभाषाकी ओर ध्यान आकृष्ट किया और उसकी साहित्यिक समृद्धि एवं विशेषताओको उनके सामने रखा। एक नही, अनेक तमाच्छन्न तथा सदिग्ध ग्रथोपर समुचित प्रकाश डालकर साहित्य प्रेमियोका मार्गदर्शन करते रहते हैं। उसके अतिरिक्त नाहटाजी सिद्धहस्त लेखक

हैं। आपका ध्यान सदा विषयके स्पष्टीकरणकी ओर रहता है, अतएव एक ही बातको प्रकारांतरसे इस तरह समझाते हैं कि पाठक हृदय पटलपर स्थायी रूपसे अंकित हो जाती है। शब्दाडंबर, पांडित्यप्रदर्शन और विषयवस्तुका अनावश्यक विस्तार आपमें नहीं मिलता। जो कुछ भी कहना होता है उससे संक्षेपमें, शालीनता एवं हृदयग्राही ढंगसे बिना किसी झिझकके कहते हैं।

अंतमें हम ईश्वरसे प्रार्थना करते हैं कि माँ सरस्वतीके मंदिरमें श्री नाहटाजी राजस्थानी भाषा और साहित्यके विविध भाव भरे सुमन राजस्थानी भारतीके चरणोंमें अर्पित करते रहें तथा अच्छे स्वास्थ्यको धारण करते हुए दीर्घायु हों।



नाहटाजीकी राजस्थानीके प्रति ममता

श्रीमंतकुमार व्यास

बात उस समय की है जब स्व० अद्भुतजी शास्त्री एवं सूर्यशंकर पारीकने रतनगढमें साहित्य सम्मेलनका आयोजन किया था। सम्मेलनमें भाग लेनेके लिए राजस्थानके सभी इलाकों से साहित्यकार एकत्रित हुए थे। मैं भी सम्मिलित हुआ था। समारोह के विभिन्न कार्यक्रमोंमें राजस्थानीके लिए विचार-विमर्श चला और राजस्थानी साहित्य सम्मेलन गठित करनेका निश्चय किया गया। संयोजक बना दिया मुझे और बनानेवालोंको निर्देश था श्री अगरचन्दजी नाहटा का।

श्री नाहटाजीने मुझे संयोजक बनाकर बीकानेरके भारतीय विद्या मन्दिरमें अध्यापकके स्थान पर मेरी नियुक्ति भी करा दी और राजस्थानीका प्रचार-प्रसार करने हेतु कार्यालय भी कायम करा दिया। उनका परामर्श था कि राजस्थानीमें एकांकी लिखकर उनका यत्र-तत्र प्रदर्शन किया जावे किन्तु मैं ऐसा कुछ भी नहीं कर सका। लेकिन यह तो मेरी ही कमी थी उनकी प्रेरणामें तो कभी कोई कमी आई नहीं।

वैसे नाहटाजी भारत प्रसिद्ध साहित्य-संशोधक हैं। उन्होंने अपनी विशाल लाइब्रेरी बहुत ही लगनके साथ सजायी है, जहाँ बैठकर अनेक व्यक्ति डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त कर चुके हैं। इनकी जितनी स्मरण शक्ति है, उतनी ही कार्यशक्ति और उतनी ही तीव्र लेखन शक्ति भी है।

भारतके इतने बडे विद्वान् की राजस्थानीके प्रति ममता एक बडी बात है। राजस्थानी साहित्यमें कौन-कौन लिख रहे हैं? कैसा लिख रहे हैं? उनका प्रकाशन हो रहा है या नहीं? किसीकी प्रेरणाके अभावमें लिखनेकी शक्ति तो खतम नहीं हो रही है आदि बातोंके प्रति ये हमेशा जागरूक रहते हैं। मैं समझता हूँ राजस्थानी भाषाका प्रौढ या नवागत कोई भी ऐसा साहित्यकार नहीं होगा, जिसके पास इनका प्रेरक-पत्र न पहुँचा हो। ये सबका ध्यान रखते हैं और पत्रके जरिए बराबर लिखनेका प्रोत्साहन देते रहते हैं। इतना ही नहीं इनकी यह भी प्रेरणा रहती है कि नये आदमीको कलम थमाकर लिखना सिखावो। आलस्यका इनके पास काम नहीं। एक, दो, दस, बीस तब तक ये पत्र लिखते रहेंगे जब तक कि उनका प्रत्युत्तर न दे दिया जावे या सम्बन्धित कार्य पूरा न हो जावे।

एक बार नाहटाजीने कहा, "मैं दैनिक अखबार नहीं पढता।" पूछनेपर उन्होंने बताया कि इससे दिमाग अनावश्यक रूपसे बोझल रहता है। फिर भी वे ज्ञानके अक्षय भंडार हैं। साधारण धोती, कमीज,

और पगडीकी पोशाकमें नाहटाजी सादगीकी सौम्य मूर्ति प्रतीत होते हैं। नाहटाजीने अन्वेषण कर जितना लिखा है, राजस्थानमें उतना शायद ही किसीने लिखा हो तथा लोगोको ज्ञानज्योति दी हो।

राजस्थान सरकारको चाहिए कि वह प्रान्तके इतने सीधे-सादे व महान् विद्वान्की तरफ भारत सरकारका ध्यान आकृष्ट कर सम्मानित करावें। नाहटाजीकी साहित्यिक सेवायें प्रान्त द्वारा भुलाई जाने योग्य कदापि नही है क्योकि इन्होंने सदा ही नवागत साहित्यकारोका स्वागत किया और प्रेरणा प्रकाशन दिया है।

•

साहित्य साधक श्री नाहटाजी

श्री भूरसिंह, राठौड़

श्री नाहटाजीने जैन और राजस्थानी साहित्यकी जो सेवा की है और कर रहे हैं, वह अक्षय रहेगी। मैं आपसे काफी समयसे परिचित हूँ। जब-जब भी मैंने आपसे भेंट की है, आपको मैंने अपने साहित्य संग्रहालयमें ढेरो पुस्तकोंसे घिरे हुए, साहित्यके अध्ययन व मननमें रत और साहित्योद्धार जैसे पुनीत कार्यमें तल्लीन देखा है।

आपके लेखों और लिखित तथा सम्पादित ग्रंथोंने जैन और राजस्थानी साहित्यके असंख्य रत्नोकी सुरक्षा ही नही की, उसे पठित जगत्के सम्मुख रखकर उसके मूल्याकनके लिए विद्वानोकी आँखें खोल देने एवं मार्ग प्रशस्त करने जैसा महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

ऐसे कर्मठ साहित्यिकका यदि हम अभिनन्दन करते हैं तो एक बडी भारी भूलसे बचते है।

•

अनथक साहित्य खोजी : श्री नाहटाजी

डॉ० दयाकृष्ण विजयवर्गीय 'विजय'

उदयपुर राजस्थान साहित्य अकादमीकी सरस्वती सभाकी बैठक, जहाँ अनेक परिचितोंके बीच बैठे श्री नाहटाजीको मैंने आकृतिसे ही अनुमान लिया था। भारी सुघड देह, आँखो पर भारी-सा चश्मा, सिर पर ओसवाली पगडी, लम्बा कोट, साहित्यकारकी कम, किसी श्रेष्ठिकी अधिक छवि दे रहे थे तो भी मेरा श्रद्धा-भाव इस रूप विशेषसे विचलित होनेवाला नही था; बल्कि उसकी पुष्टि ही तब हुई, जब उन्होने किसी प्रसंग पर खडे होकर अपने विचार प्रकट किये। उनकी वाणीमें विषयके ज्ञानकी गम्भीरता तथा प्रौढता बोल रही थी। उदयपुरमें ऐसे ही प्रसगो पर फिर १-२ बार और आपके दर्शनोका मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ।

श्री नाहटाजीके व्यक्तित्वके उपरान्त मुझे कृतित्वके निकट आनेका भी अवसर मिला, जब मैं राजस्थान विश्वविद्यालयसे 'राजस्थानी काव्यमें शृंगार-भावना' शीर्षकसे शोध प्रबन्ध लिखनेमें लगा हुआ था। राजस्थानीमें लौकिक एवं चारणी काव्योंके अतिरिक्त प्रचुर मात्रामें जैन काव्य भी विद्यमान हैं, जिनमें

शृंगारके दर्शन होते हैं। इस तथ्यको प्रकटानेवाले कितने ही लेख पढनेको मिले, जिनमें मुझे जैन-काव्यके अनथक खोजी एवं संग्राहकके रूपमें श्री अगरचन्दजी नाहटाके दर्शन हुए और उनके अथक परिश्रम एव साहित्य प्रेमके प्रति मेरी श्रद्धा सहज ही प्रगाढ हो उठी।

शोध-प्रवन्ध लेखनके समय ७ दिन तक जोधपुरमें रहना पडा था। प्राच्य विद्या प्रतिष्ठानमें कई पाण्डुलिपियाँ उस समय देखी थी। उसी समय बीकानेर जाकर आपका 'अभय जैन ग्रन्थालय' देखनेकी भी उत्कट लालसा थी, किन्तु समयाभावके कारण मेरे मनकी वह साध पूरी नही हो सकी। उस अभावकी पूर्ति विभिन्न पत्र-पत्रिकाओंमें प्रकाशित आपके लेखोने ही की। लक्ष्मीके वेशमें पल रही देवी सरस्वतीके उनमें मुझे दर्शन हुए, यदि यह कहूँ तो अत्युक्ति न होगी।

श्री नाहटाजीको मिले इतिहास रत्न, सिद्धान्ताचार्य, विद्यावारिधि जैसे सम्मानीय अलकरण श्री नाहटाजीको भेंटकर स्वय अलकृत हो गये हैं। श्री नाहटाजी हिन्दी राजस्थानी साहित्य भवन के शिल्पी हैं, जिन्होने वडी योग्यता एव परिश्रमसे, दूर-दूर से ला-लाकर एक-एक ईट रूपी पुस्तक चुन-चुनकर रखी है। भारतकी कौन-सी पत्रिका है, जिसे श्री नाहटाजीके लेखोने स्पर्श नही किया हो। श्री नाहटाजी साहित्य अन्वेपक, संग्राहक एवं सम्पादकके रूपमें वर्षों पूर्व ही प्रतिष्ठित हो चुके हैं—यह निर्विवाद है। 'अभय जैन ग्रन्थालय' 'श्री शार्दूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट' आपकी साहित्यिक सेवाओ एवं साहित्य प्रेमके जीवन्त निदर्शन हैं। 'राजस्थान भारती' का कुशल सम्पादन कर आपने अपनी साहित्यिक योग्यताकी छाप सबके मनो पर छोडी है।

राजस्थानमें राजस्थानी भापाके अभ्युदयमें श्री नाहटाजीका योगदान सर्वदा प्रशसनीय रहेगा। श्री नाहटाजीने अपनी शोध वृत्तिके माध्यमसे प्राचीन राजस्थानीकी दुर्लभ पाण्डुलिपियोकी खोज राजस्थानी के साहित्य भंडारको भरा है। जैन मुनियो द्वारा लिखित राजस्थानी भाषा साहित्यको प्रकाशमें लानेका श्रेय यदि किसीको दिया जा सकता है तो वह श्री नाहटाजीको ही। आपने राजस्थानी-विद्वानोकी अनेक मान्यताओ एव धारणाओको मूल-प्रतियोंके साक्ष्यमें सशोधित किया है। आपने जन-मानसमें वैठी इस धारणाको भी निर्मूल सिद्ध किया है कि राजस्थानीमें मात्र चारणी डिंगल साहित्य है और वह भी वीर रसपूर्ण, आपने शान्त रसात्मक जैन साहित्यको प्रकाशमें लाकर न केवल रसानुभूतिकी विविधता ही प्रस्तुत की है, अपितु भाषा एवं व्याकरणका विभेद भी दर्शाया है। चारण कवियोकी भाषा जहाँ डिंगल है, वहाँ जैन कवियोकी भाषा वोलचालकी मूल राजस्थानी। राजस्थानीका यह स्वरूप हिन्दी भाषाके अधिक निकट है। इस खोजके लिये श्री अगरचन्दजी नाहटा साहित्य जगत्में सदैव स्मरण किये जाते रहेंगे।

श्री नाहटाजी यद्यपि लक्ष्मी एव सरस्वतीका वरदान एक साथ वरण किये हैं; तदपि वे प्रकृतिसे अतीव सरल एव विनम्र हैं। उन्हें अभिमान जैसी वस्तु तो छू कर भी नही गई है। आपकी वाणी एवं व्यवहारमें कही भी दर्प एव अहकार वोलता नही दीखता। सादा जीवन उच्च विचारवाली कहावत आप पर पूर्णत चरितार्थ होती है।

श्री नाहटाजीने अपने कृतित्वका कीर्तिमान स्थापित किया है।



नाहटाजी का कर्तव्य और व्यक्तित्व

पण्डित हीरालाल सिद्धान्तशास्त्री

जिन लोगोंको श्री अगरचन्दजी नाहटासे प्रत्यक्ष भेंट करने का अवसर मिला है, वे यह देखकर आश्चर्य से चकित होते हैं कि मारवाडी वेप-भूषाका यह व्यक्ति इतने विशाल ज्ञान-भण्डारका धनी कैसे बन गया ? खासकर उस दशामें जबकि उन्होने किसी संस्कृत महाविद्यालय या अंग्रेजीके किसी कालेजमें कुछ भी शिक्षण प्राप्त नही किया है। किन्तु जिन्होंने उनके समीप कुछ दिन विताये हैं, वे जानते हैं कि श्री नाहटाजी विना किसी नागाके प्रतिदिन नियमित नये-नये ग्रन्थोका स्वाध्याय करते रहते हैं। उनका यह दैनिक स्वाध्याय प्रवासमें भी बरावर चालू रहता है। उन्होने अपने इस दैनिक स्वाध्याय के बल पर विशाल ज्ञान ही नही प्राप्त किया है, अपितु भारतके प्राय. सभी प्रसिद्ध ज्ञान-भण्डारोका अवलोकन करके अनेक नवीन ग्रन्थोका भी अन्वेषण किया है और आज भी उन्हें जहाँ कही भी नवीन शास्त्र-भण्डारका पता लगता है, वे तुरन्त ही वहाँसे सम्पर्क स्थापित करते हैं, वहाँके ग्रन्थोकी सूची मगाते हैं और किसी नवीन ग्रन्थके दृष्टिगोचर होते ही तुरन्त उसे मगाकर उसका स्वाध्याय कर अपने ज्ञानभण्डारकी वृद्धि करते रहते हैं। उनकी इस ज्ञान-पिपासाका ही यह सुफल है कि उनके निजी भण्डारमे हजारो हस्तलिखित एवं मुद्रित ग्रन्थ विद्यमान हैं और उनकी सख्या दिन पर दिन बढ़ती ही जा रही है।

उनकी नित्य स्वाध्यायशीलताके अतिरिक्त यह भी एक उत्तम प्रवृत्ति है कि जहाँ कही भी कोई नवीन वात मिली, या नवीन ग्रन्थका पारायण किया, तो उसे तुरन्त नोट किया और लेख-वद्ध करके तुरन्त उसके योग्य पत्र-पत्रिकाओमें प्रकाशनार्थ भेज दिया। उनकी इस शुभ प्रवृत्तिका ही यह सुफल है कि प्राय. सभी पत्र-पत्रिकाओमें उनके लेख प्रकाशित होते रहते हैं।

मेरा नाहटाजीसे काफी पुराना परिचय है। जब मैं वीरसेवा मन्दिर दिल्लीमें था, तब भी वे आसाम या मद्रासमे आते-जाते मिलनेको आते और नवीन ग्रन्थोकी जानकारी लेते रहते। यहाँ व्यावरके सरस्वती भवन में मेरे आते ही उन्होने समस्त हस्तलिखित ग्रन्थोकी मयपूर्ण विवरणके साथ सूची मगाई और उसमें जो-जो नवीन ग्रन्थ उन्हें द्रष्टव्य प्रतीत हुए, उन्हे मगा करके देखा और उनका परिचय भी लेखो द्वारा जैन-पत्रो में प्रकाशित किया।

अभी पिछले वर्प वे व्यावर आये और मेरे अनुसन्धान कार्यकी बात पूछी, तो मैंने अपनी संचित सामग्री उन्हें दिखाई। देखते ही वोले, "इतनी अधिक नवीन सामग्री के पास होते हुए भी आप इसे पत्र-पत्रिकाओंमें क्यो नही देते ? आप तो प्रतिमास अनेको लेखोके द्वारा समाजके जिज्ञासु वर्गको बहुत कुछ नवीन ज्ञान प्रदान कर सकते हैं।" यह है उनका ज्ञान-पिपासुओंकी पिपासा शान्त करने-करानेका एक उदाहरण।

श्री नाहटाजीकी सशोधक दृष्टि एवं स्मरण शक्ति अद्भुत है। जहाँ कही भी जिस किसीके निवन्ध-में कुछ भी अशुद्धियाँ त्रुटि दृष्टिगोचर होती है, ये उसे तुरन्त सप्रमाण लेखोंके द्वारा उनके लेखकोका ध्यान उस ओर आकर्षित करते हैं और उनकी भूलका परिमार्जन करते हैं।

अपने व्यवसायको करते हुए भी उनका ज्ञानाध्यवसाय सचमुच विद्वज्जनोके लिए स्पृहणीय एवं अनुकरणीय है। मैं श्री नाहटाजीके दीर्घायुकी कामना करता हूँ कि उनके द्वारा जिज्ञासुवर्गको एक लम्बे समय तक नवीन ज्ञान प्राप्त होता रहे।





श्री अगरचन्द नाहटा, पुरातत्त्वाचार्य श्री जिनविजय जी के अध्यक्षता में
महाराणा कुभा आसन, उदयपुर में भाषण देते हुए।



हाथरस में भाषण देते हुए श्री अगरचन्द जी नाहटा।



भारतीय सस्कृति ससद कलकत्ता मे राजस्थानी लोक साहित्य की रसधार पर
श्री सीताराम जी सेक्सरिया की अध्यक्षता में भाषण करते हुए।

साहित्य और कलाके सच्चे उपासक

श्री प्रेम सुमन

आदरणीय श्री अगरचन्दजी नाहटाके अन्त एव वाह्य दोनो व्यक्तित्वोको मुझे निकटसे जाननेका अवसर मिला है और हर व्यक्ति, जो उनके सानिध्यमें थोडा भी रहा हो, उनके इन व्यक्तित्वोसे प्रभावित हुए बिना नही रह सकता। किसी भी साहित्यकार व शोधवेत्ताके दुहरे व्यक्तित्व की टोह पाना वडा कठिन हैं, विशेषकर तव, जव वह न किसी पद पर कार्य कर रहा हो और न ही उसके अधीन कार्य करनेकी मजबूरी हो। नाहटाजी ऐसे ही असम्पृक्त व्यक्ति हैं, विभिन्न पदोसे और अनेक मातहतो से। शायद यही कारण है कि उन्हें जिन पदोपर भी खीचा गया, उनके आदर्शोंके अनुसार वहाँ कार्य नही हो सका। नाहटाजी पुनः अपनी साहित्य साधनामें लीन हो गये। ऐसी कई सस्थाओं और साहित्य सृजनके अथाह सागरमें मैंने उन्हे डुवकियाँ लगाते देखा है। मेरी नजरमें ऐसी हिम्मत और जीवटके वे पहले व्यक्ति है, जिन्होने सव कुछ झेलते हुए भी अध्ययन-अनुसन्धानके कार्यको नही छोडा। स्वयं किया तथा अपने सम्पर्कमें आनेवाले प्रत्येक जिज्ञासुसे भी कराया।

२-३ सितम्बर '६७ तक मैं केवल शोध सम्राट् एव प्रसिद्ध साहित्यकार अगरचन्द नाहटाको ही जानता था। बीकानेर जाकर जव उनके दरवाजे पर खडा हुआ तो एक महाश्रेष्ठिके दर्शन हुए। सायकाल उनके पुस्तकालय मे पहुँचा तो श्रद्धेय स्व० डॉ० वासुदेवशरण अग्रवालका अध्ययन कक्ष स्मरण हो आया। दो दिन वाद जव जैन साहित्य व सस्कृतिके विभिन्न पक्षोपर विचार-विमर्श हुआ तो प्रतीत हुआ कि विश्व-कोश भी सजीव होते है। कुछ निजी कार्योंमें उनके सहयोग और तत्परताको देखकर सहधर्मी और सहकर्मीके प्रति सम्यक्त्वका वात्सल्य गुण साकार होता प्रतीत हुआ। धार्मिक-आयोजनोमें उनकी सक्रियता और पुस्तकालयमे १८ घन्टे अध्ययनशीलताके सयोगपर विचार करनेसे लगा कि जीवन और धर्म दो अलग वातें नही है। इस प्रकार कुल मिलाकर एक आदर्श साहित्यसेवी एव धर्मपरायणके रूपमें श्री नाहटाजी मेरे प्रथम परिचयमें अवतरित हुए। जैन समाजका गौरव निश्चित रूपसे उनके इस व्यक्तित्वसे वढा है।

श्री नाहटाजीके पाण्डित्यने एक वहुप्रचलित भ्रमको तोडा है। आधुनिक शिक्षा और ज्ञानके सवधमें अधिक कहनेकी आवश्यकता नही। यदि नाहटाजी उच्च शिक्षा प्राप्त करते तो आज अनेक विषयोकी सूचनाएँ उनके पास होती, ज्ञान नही, जो अनवरत अभ्यास और स्वाध्यायसे उन्होने अर्जित किया है। मैं शोध-सम्वन्धी ज्ञानकी वात नही कर रहा अपितु जैन तत्त्वज्ञानकी ओर मेरा सकेत है, जिसको नाहटाजीने अपने चरित्रमें भी उतारा है। सादगी एव अल्पव्ययता उनके जीवनमें व्याप्त है।

व्यक्ति परिग्रही एव अपरिग्रही दोनो एक साथ कैसे हो सकता है? यह नाहटाजीको देखकर जाना जा सकता है। वे अपरिग्रही हैं, भोग-विलासकी सामग्रियोके प्रति तथा आधुनिक तडक-भडकके प्रति, पद-सम्मानके प्रति। किन्तु वे परिग्रही हैं, हस्तलिखित ग्रन्थोके, अच्छे साहित्यके एव कलात्मक प्राचीन वस्तुओ के। अभय जैनग्रन्थालय एव कला भवन इसका परिणाम है। प्राचीन सस्कृतिके इन वाहनोकी सुरक्षाके प्रति श्री नाहटाजी कितने प्रयत्नशील रहते है, यह इसीसे जाना जा सकता है कि वे अपनी सासारिक सम्पदाकी देखभाल करने वर्षमें दो माह आसाम जाते है, और शेष दस माह ग्रन्थालयकी सुरक्षा और समृद्धिमें व्यतीत करते हैं।

मैंने नाहटाजीको कलात्मक वस्तुओका मोलभाव करते हुए भी देखा है और साहित्यको खरीदते हुए भी। जव भी मैंने उनसे कहा, 'वस्तुएँ कीमती है, महत्त्वपूर्ण हैं, फिर क्यो आप इसका मोलभाव करते है ?'

उनका हमेशा यही जवाब रहा, "पहली बात तो यह कि जो वस्तु या ग्रन्थ जितने कम दाममें मिल जायेगा, उसकी बचतसे दूसरा खरीदा जा सकता है और कम पैसोमें अधिक वस्तुओकी सुरक्षा हो सकती है। दूसरी बात यह कि वस्तुओको बेचनेवाले भी जानते है कि मोलभाव करता हूँ, अत. वे उनकी कीमत बढाकर ही बताते है। उतनेमें कैसे खरीद लिया जाय ?" यहाँपर मैं उनकी व्यापारिक कुशलताका परिचय पाता रहा हूँ।

अन्तमें एक बात और कहना चाहूँगा। श्री नाहटाजीने अनेकोको शोध-कार्यमें प्रेरित किया है। अब उनके कार्योपर भी शोधकार्य आवश्यक हो गया है। मैंने उन्हें प्रतिदिन सुबह नयी-नयी पुस्तकोका स्वाध्याय करते देखा है। पुस्तक पढनेके बाद वे उसकी समीक्षा पुस्तकके अन्तिम कोरे पृष्ठपर लिख दिया करते हैं। ऐसी हजारो पुस्तकें प्राप्त की जा सकती है। शायद ही उनकी समीक्षा प्रकाशमें आई हो। यदि सबपर विधिवत् अध्ययन किया जाय तो अनेक ग्रन्थोकी भूलें परिमार्जित हो सकती है। साथ ही श्री नाहटाजीका समीक्षक व्यक्तित्व भी उभरकर सामने आयेगा। आदरणीय नाहटाजी आज भी जिस लगन और परिश्रमसे स्वाध्याय-रत हैं, उससे भारत भारतीकी समृद्धि सुनिश्चित है, साहित्य और कलाके ऐसे एकनिष्ठ उपासकको मेरे अनन्त प्रणाम।



व्यक्तित्व एवं संस्मरण

श्री जोधसिंह मेहता

श्री अगरचन्दजी नाहटासे प्रथम बार आजसे लगभग २५ वर्ष पूर्व, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुरमें मिलनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। तदनन्तर फिर एक बार उदयपुर में ही व्यक्तिगत भेंट हुई। आपके लेख कतिपय पत्र-पत्रिकाओमें पढनेका भी मुझे अवसर मिला। आपको सादे मारवाडी वेशमें परिभूषित देख कर, किसीको यह भान नही हो सकता कि नाहटाजीके व्यक्तित्वमें, सार्वभौम विद्वत्ता, साहित्यिक रुचि और शोध-प्रियता छिपी हुई है। आपके गहन अध्ययनका प्रकाश, विविध विषयोपर आपके खोज-पूर्ण व्याख्यानो लेखो और पुस्तकोसे प्रत्यक्ष सामने आता है। आपके पास जैन साहित्यकी प्राचीन और अर्वाचीन-सामग्री भी प्रचुर मात्रामें संग्रहीत है और इस विषयपर आपका ज्ञान भी विस्तृत और विद्वत्तापूर्ण है। कई शोध विद्यार्थी, मार्गदर्शनके लिये आपके पास आते रहते हैं। एव कई विषयोपर शोध सामग्री पाकर अचम्भित हो जाते हैं। व्यक्तिगत पुस्तकालय जो आपका है, वह राजस्थानमें ही नही, शायद भारतमें भी सबसे बडा है।

गत ३-४ माह पूर्व, जबकि उदयपुरमें, भगवान् महावीरके २५००वें निर्वाण-कल्याणक महोत्सवके लिये, राजस्थान जैन संस्कृति परिषद्की स्थापना हुई, तबसे मैं आपके नजदीक सम्पर्कमे आया तो मुझे आश्चर्य हुआ कि एक मामूली पढे लिखे व्यक्तिका साहित्यिक क्षेत्रमें इतना अपूर्व विकास कैसे हुआ। इसका उत्तर आपसे ही मिला कि अभ्यास और परिश्रमसे ही इसमें सफलता हुई है। आपके बौद्धिक विकासको देखकर, प्रसिद्ध कहावत "करत करत अभ्यास ते जडमति होत सुजान" चरितार्थ होती है। यही एक मात्र कारण है कि आपने साहित्यके और सांस्कृतिक क्षेत्रमें, राजस्थानमे ही नही अपितु भारतमें प्रमुख स्थान प्राप्त किया है।

राजस्थान जैन संस्कृति परिषद्की १३-१४ और १५ सितम्बर १९७१ की कार्यकारिणी तथा विद्वद्-मडलकी विशेष बैठक आपकी अध्यक्षतामें सफलता पूर्वक सम्पन्न हुई। जैन सस्कृति और राजस्थानी ग्रथकी रूप-रेखा तैयार करनेमें, आपसे बडी सहायता मिली। इस अवसरपर सर्वानुमतिसे आप अध्यक्ष निर्वाचित हुए। हमें आशा है कि आपकी अध्यक्षतामें, जैन सस्कृतिके विकासमें राजस्थानका योगदानपर विशाल और विस्तृत ग्रंथ सपादन करनेमें, आपसे पूर्ण सहायता, सहयोग और सफलता मिलेगी।



एक प्रेरक व्यक्तित्व

श्री नृसिंह राजपुरोहित, खांडप

मैंने जीवनमें सर्वप्रथम श्री अगरचन्दजी नाहटाका नाम कब सुना, कुछ याद नही। आज जीवनके ढूहेपर खडे होकर पृष्ठभूमिकी ओर दृष्टिपात करता हूँ तो अनेक धुधले चित्र दृष्टिगत होते हैं, अनेक बिसरे प्रसंग स्मरण हो आते हैं।

मैं पढने हेतु गाँव छोडकर बाहर रहता था। छुट्टी-छपाटीमें जब कभी गाँव लौटता तो 'जीसा' को सुनाने हेतु कुछ मसाला साथ लेकर अवश्य आता। एक बार कल्याण मासिकका कोई अक हाथ लग गया। उसे उन्हें पूरा पढकर सुनाया। उन्हें खूब पसन्द आया। उसी अकमें एक लेख था, जिसका नाम आज याद नही, परतु इतना बखूबी याद है कि उसके लेखक श्री अगरचन्दजी नाहटा थे। श्री नाहटाजीका एक लेखक-के रूपमें मेरा यह प्रथम परिचय था।

बादमें बडे होनेपर साहित्य-जगत्से परिचित हुआ तो मैं लेखक नाहटाजीसे अधिकाधिक प्रभावित होता गया। मुझे इस बातका गर्व था कि वे राजस्थानके निवासी हैं।

सन पचास-इक्यावनके करीब मैंने राजस्थानी भाषामें कहानियाँ लिखनी शुरू की। आगे चलकर संकलन निकालनेकी इच्छा हुई। प्रथम सकलनका नामकरण 'रातवासो' किया गया। सकलन हेतु कुछ विद्वानोकी सम्मतियाँ मगवानेकी आवश्यकता महसूस हुई। मुझे सर्वप्रथम श्री नाहटाजीका स्मरण हो आया। मुखपृष्ठ छपनेके पूर्व सकलन उनको भेजा गया और सर्वप्रथम आपहीका आशीर्वाद मुझे प्राप्त हुआ।

इसके पश्चात् तो पत्रव्यवहार द्वारा सपर्क स्थायी-सा बन गया। परन्तु आपके दर्शनका अवसर प्राप्त नही हुआ। काफी समय निकल गया और मैं मन ही मन चाहने लगा कि कभी बीकानेर चलकर आपसे मिलना चाहिए। लेकिन कुछ काम काजके झंझटोसे और कुछ गाव छोडकर बाहर जानेकी कम आदतके कारण उक्त प्रसग टलता ही गया।

आखिर एक बार किसी कार्यवश बीकानेर जाना हुआ। रेलवेस्टेशनके पास ही किसी होटलमें ठहरा था। दो एक दिन अन्य झझटोमें फँसा रहा परन्तु मनमें श्रीनाहटाजीसे मिलनेकी इच्छा बराबर बनी रही। तीसरे दिन पूछता-पाछता नाहटोके गवाडमें जा पहुँचा। एक सज्जन मुझे ठेठ आपके पुस्तकालयके द्वार तक पहुँचाने आए। मैं चुपचाप सीढियोपर चढता हुआ ऊपर जा पहुँचा। सामने जो दृश्य दिखाई दिया वह बड़ा प्रेरणादायी था। फर्शसे लगाकर छत तक कमरा व्यवस्थित रूपसे पुस्तकोंसे भरा पडा था। फर्शपर भी पुस्तकोका अम्बार सा लगा था और उनके बीचमें एक आदमी बैठा था—निस्संग, नि शब्द, दीन दुनियासे

बेखबर साहित्यके सागरमें लीन। धोती बडीसे आवेष्ठित थुलथुल शरीर, घनी खिचडी मूँछे, सफाचट खोपडी और चश्मेसे झाकते ज्योतिपूर्ण सजग नेत्र। मैं स्तब्ध रह गया। क्षण भरके लिए असमजसमें पड गया कि समाधिमें लीन इस साहित्यिक सतको डिस्टर्व करूँ या नही। पर इस प्रकार अधिक समयतक खडे रहना भी सभव नही था अत. अभिवादन द्वारा मैंने उनका ध्यान आकृष्ट किया। स्नेहपूर्ण दृष्टिसे अभिवादनका उत्तर देते हुए उन्होने मेरा परिचय पूछा तो गद्गद हो गए। प्रश्नोकी झडी सी लग गई—कैसे आया हूँ? कार्य वना या नही? कहाँ ठहरा हूँ? कोई असुविधा तो नही, लेखनकी क्या प्रगति है, शोधके लिए कौन-सा विषय ठीक रहेगा। इत्यादि। वार्तालाप द्वारा आपके मानवीय गुणोका आभास पाकर मैं अभिभूत हो उठा।

इसके पश्चात् मुझे आपका पुस्तकालय एव सग्रहालय देखनेका शुभ अवसर प्राप्त हुआ। निचले कक्षसे लगाकर ऊपरी खडतककी विपुल ज्ञान राशि एक अमूल्य खजाना है। दुर्लभ पाडुलिपियाँ आपके जीवनभरकी अक्षय निधि हैं।

यही मेरी श्री नाहटाजीके साथ प्रथम मुलाकात थी। यह काफी वर्षों पहिलेकी बात है। परन्तु इन वर्षोमें आप निरतर मेरी खोज खबर लेते रहे हैं। मेरे लेखनकी क्या प्रगति है, इस सम्बन्धमें हर तीसरे-चौथे महीने तो आप ज्ञात कर ही लेते हैं। मेरा तो अपना निजी अनुभव है (दूसरोंकी बात मैं नही कहता) कि राजस्थानी लेखनके क्षेत्रमें खोज-खबर लेनेवाला और प्रेरणा देनेवाला यदि कोई व्यक्तित्व आज राजस्थानमें मौजूद है तो वह श्री नाहटाजी ही हैं।

न मालूम कितने ज्ञान-पिपासु आपकी क्रोडमें अपनी तृषा शात कर चुके होंगे, कितने शोध स्नातक आपसे मार्गदर्शन प्राप्त कर 'डॉक्टर' बन चुके होंगे और बन रहे होंगे।

मेरे मनमें समय-समयपर अनेक बार यह प्रश्न उठता है कि इस साहित्यिक सतसे हमने बहुत कुछ प्राप्त किया मगर बदलेमे उन्हें दिया क्या? क्या राजस्थानी-समाजने इस प्रतिभाको उचित सम्मान देनेकी दिशामें कभी सोचा भी है! मैं समझता हूँ इस मामलेमें हमने अत्यन्त कृपणतासे काम लिया है। समय रहते हमें इस ओर शीघ्र ध्यान देना चाहिए। राजस्थानके विश्वविद्यालयोको भी एक योग्य विद्वान्का उचित सम्मान कर अपनी निष्पक्ष परम्परा कायम करनी चाहिए।

मैं आपके शतायु होनेकी शुभ कामना करता हुआ आशा करता हूँ कि माँ राजस्थानीको आपकी सेवाका अधिकसे अधिक अवसर प्राप्त होगा।

●

अग्रणी अध्येता-नाहटाजी

डॉ० पुरुषोत्तम लाल मेनारिया एम० ए०, पी-एच० डी०, साहित्यरत्न

सुदूर आसाम और कलकत्तामें चलनेवाले अपने परम्परागत व्यवसायकी अपेक्षा राजस्थानमें रहते हुए विद्या-व्यसनको महत्त्व देनेवाले तथा कठोर परिश्रम और पवित्र जीवनके पक्षधर श्री अगरचन्द नाहटा देशके अग्रणी अध्येताओंमें हैं। अध्येता भी ऐसे कि प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थोंके क्षेत्रमें राजस्थानी, हिंदी, संस्कृत और गुजराती आदि भाषा-साहित्य सम्बन्धी कोई अनुसन्धान-कार्य इनके मार्ग-दर्शन तथा सहयोगके

बिना, सामान्यत पूर्ण नही हो सकता। विपुल हस्तलिखित ग्रन्थ-सम्पदाके सग्राहक और अध्येता होनेके नाते सम्बन्धित क्षेत्रमें आपकी जानकारी विश्वसनीय मानी जाती हैं।

श्रीमान् नाहटाजीसे मैं १९४० के लगभग परिचित हो चुका था। राजस्थान साहित्य सम्मेलनकी उदयपुरमें स्थापनाके साथ ही 'राजस्थान साहित्य' नामक मासिक पत्रका प्रकाशन प्रारम्भ हुआ तो इसमें धारावाहिक रूपसे सगीत, अलकार, छन्द, रत्नपरीक्षादि विभिन्न विषयोपर लिखित हस्तलिखित ग्रन्थोके सम्बन्धमें श्री नाहटाजीके अध्ययन और अनुसन्धानपरक लेख प्रकाशित होने लगे। एक निबन्धके प्रकाशनके साथ ही कई नये निबन्ध अग्रिम प्राप्त होते जाते। कालान्तरमें प्रचारिणी पत्रिका, हिन्दुस्तानी, शोध-पत्रिका आदि देशकी प्रसिद्ध पत्रिकाओके साथ ही प्रान्तके अन्य पत्र भी आपकी उदारताके पात्र रहने लगे। सभी चमत्कृत-से थे कि बीकानेरका एक सेठ अपने उद्योग-व्यवसायको गौण मानता हुआ किस प्रकार साहित्यमें इतनी रुचि प्रकट कर रहा है?

श्रीमान् नाहटाजीसे साक्षात्कारका अवसर १९४५ में प्राप्त हुआ। यह घटना इस प्रकार है। प्राचीन साहित्य शोध संस्थानके संचालकके नाते राजस्थानमें हस्तलिखित ग्रन्थोकी खोजका राजस्थान व्यापी कार्यक्रम प्रारम्भ किया तो सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और सक्रिय सहयोग श्रीमान् नाहटाजीसे प्राप्त हुआ। बीकानेर-क्षेत्रके हस्तलिखित ग्रन्थोका विवरणात्मक सूचीपत्र बनानेका कार्य श्री नाहटाजीने स्वीकार किया। कार्य निश्चित समयमें यथाविधि पूरा हो जावे, तदर्थ सहयोगके लिये मेरे बीकानेर पहुँचनेका निश्चय हुआ। महाकवि 'सूर्यमल्ल आसन' से श्रीमान् प० नरोत्तदासजी स्वामीके राजस्थानी भाषा-साहित्य विषयक तीन सुविस्तृत व्याख्यानोके आयोजन-सयोजनके उपरान्त मैं भी बीकानेरके लिये रेलमें बैठ गया था। वह स्वाधीनता-पूर्वका समय था और मैं सम्पूर्ण खादी पहनता था। गुप्तचर विभाग वालोने मुझे काग्रेस या प्रजामण्डलका व्यक्ति माना। तब भारतसे अग्रेजोका जाना और भारतीय स्वाधीनता लगभग निश्चित समझे जाने लगे थे एव खादी-धारी सम्मानकी दृष्टिसे देखे जाते थे। बीकानेर राज्यकी सीमामें पहुँचते ही स्टेशनो पर मुझसे ससम्मान किन्तु अनेक प्रकारकी पूछताछ होने लगी। किन्तु बीकानेर रेलवे स्टेशन पर गाडीके रुकते ही श्रीमान् भँवरलालजी नाहटा मुझे लेने पहुँच गये। श्रीमान् स्वामीजी उदयपुरसे एक दिन पूर्व ही पहुँचे थे और मेरी बीकानेर-यात्राकी सूचना उन्होने दे दी थी। गुप्तचर विभाग वाले श्री भँवरलालजीसे बातचीत करते ही निश्चिन्त हो गये। मुझे स्टेशनसे सीधा ही श्रीमान् भँवरलालजी निवासस्थान पर ले गये।

तब अभय जैन-ग्रन्थालयका अलग भवन नही था। श्री नाहटाजी अपनी व्यावसायिक गद्दी पर ही साहित्य-साधनामें सलग्न मिले। गद्दीके एक ओर कक्षमें हस्तलिखित ग्रन्थोका भण्डार था। आवश्यकतानुसार सूची-रजिस्टरमें देखकर वे ग्रन्थ निकालते रहते। पहुचा तब भी नाहटाजी एक प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थका विवरण लिख रहे थे। मैं भी इसी कार्यमें लग गया। दो-तीन दिनोमें ही अभय जैन ग्रन्थालयके महत्त्वपूर्ण ग्रन्थोके विवरण हमने लिख लिये। फिर दोनो ही अनूप सस्कृत पुस्तकालयमें पहुँचे। तब यह पुस्तकालय गढमें था। वहां जाने हेतु सर पर पगडी बाँधना अनिवार्य था। मैंने पहले ही श्रीमान् नाहटाजीसे पगडी लेकर अपने थैलेमें बांध ली थी। अनूप संस्कृत पुस्तकालयका कार्य पूरा कर बीकानेरके ग्रन्थ भण्डारोमेंसे विवरण लिये गये। थोडे ही समयमें एक भागके स्थान पर दो भाग तैयार हो गये। वही विवरणोका विषय विभाजन किया गया। इस विषयमें श्रीमान् नाहटाजीने लिखा है, "मैं अपना कार्य शीघ्रतासे सम्पन्न कर सकूं इसके लिये सहायतार्थ श्री पुरुषोत्तमजी मेनारिया साहित्यरत्न भी कुछ समय बाद बीकानेर आ गये। बहुतसे ग्रन्थोके नोट्स मैंने पहले ही ले रक्खे थे। उनके आनेसे यह कार्य पूरे वेगसे चलाया गया और दग-

बारह दिनोंमें ही कुल मिलाकर एक भागकी जगह दो भागोंमें योग्य विवरण संगृहीत हो गये—(राजस्थानमें हिन्दीके हस्तलिखित ग्रन्थोकी खोज, भाग–२, ११४७ ई० प्रस्तावना पृष्ठ, ६)।

बीकानेर तब भी राजस्थानमें साहित्यिक-सास्कृतिक अनुसन्धान कार्यका विशेष केन्द्र था। श्री शार्दूल राजस्थानी रिसर्च सोसाइटी की स्थापना हो चुकी थी और लगभग सभी अध्येता इसी सस्थाके सक्रिय सहयोगी थे। पूरी मण्डली बीकानेरमें काम पर जमी थी और एक विशेष प्रेरक केन्द्र बनी हुई थी। बीकानेर पहुचते ही स्व० नाथूरामजी खड्गावतने मेरे सम्मानमें एक आयोजन किया। सबसे प्रत्यक्ष परिचयके साथ ही राजस्थानीमें नई रचनाओका आस्वादन प्राप्त हुआ। बादमें स्व० खड्गावतजी आजीवन मेरे लिये प्रेरक ही नही, मार्गदर्शन भी बने रहे।

इस बीकानेर-प्रवासके पश्चात् श्रीमान् नाहटाजीसे मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो गया। हस्तलिखित ग्रन्थोकी खोजके सम्बन्धमें कई बार मै बीकानेर गया और श्रीमान् नाहटाजी भी उदयपुर, जयपुर तथा जोधपुर स्वय पधारकर सहयोगका आदान-प्रदान करते रहे। मेरे प्रत्येक पत्रको समुचित महत्त्व देते हुए उन्होने तुरन्त ही आवश्यक कार्य पूर्ण करनेका प्रयत्न किया है। सन् १९४० से अब तक विद्यापीठ शोध संस्थान अथवा प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जहाँ भी मैंने कार्यभार ग्रहण किया श्रीमान् नाहटाजीने पूर्ण क्रियात्मक सहयोग दिया है।

श्रीमान् नाहटाजी अपने आपमें एक क्रियाशील सस्थाके रूपमें है। चारो ओरसे अध्येता इनके पास बीकानेर पहुँचते है और यथाशक्य सबका आप मार्गदर्शन करते हैं। बडी सख्यामें चारो ओरसे इनके पास पत्र भी पहुँचते है। प्रत्येक पत्रका उत्तर देते हुए अध्येताकी जिज्ञासा पूरी करनेका और उन्हें मार्गदर्शनका भरसक प्रयत्न करते है। श्रीमान् नाहटाजीका कार्य जितना ही त्वरित और विस्तृत हुआ है, इनका लेखन उनका उतना ही अस्पष्ट रहा है। प्राच्यविद्या प्रतिष्ठानके जयपुरमें स्थापित होनेपर इनके सम्बन्ध अनेक अध्येताओ से स्थापित हुए तथा इनके पत्र भी बडी सख्यामें पहुँचने लगे। तब मेरा एक कार्य अध्येताओके लिये इनके पत्रोको पढना भी हो गया।

हमारे देशके सामने सास्कृतिक अनुसन्धान-सम्बन्धी क्षेत्रमें एक लम्बा मार्ग है। इस क्षेत्रमें हम अनेक विकासशील देशोसे पीछे है। सम्पूर्ण भारत मुख्यत राजस्थान प्रदेश साहित्यिक-सास्कृतिक सामग्रीसे बहुत सम्पन्न है। इस सामग्रीके व्यापक सर्वेक्षण, सग्रह, सरक्षण, सम्पादन, प्रकाशन और उपयोगसे देशके अभ्युत्थान तथा सर्वांगीण विकासमें महत्त्वपूर्ण योग मिलता है। अतएव श्रीमान् नाहटाजी जैसे सरस्वती-पुत्रो एव इनकी सेवाओका विशेष महत्त्व है।

यही कामना है कि श्रीमान् नाहटाजी सुदीर्घ, स्वस्थ और शान्तिमय जीवन प्राप्त करें।



नाहटाजीसे प्रथम साक्षात्कार

श्री किरण नाहटा

जब मैं नाहटाजीके अध्ययन-कक्ष (जोकि उनका पुस्तकालय भी है)में पहुँचा, तब वहाँ जो कुछ देखा वह सब कल्पनातीत था। सेठ-लोगोकी पुरानी स्टाइलकी 'गद्दी'की भान्ति उस कक्षमें एक ओर दीवारसे सटकर एक बडा गद्दा लगा हुआ था और उस पर 'गद्दी'में ही काम ली जानेवाली काष्ठकी छोटी-

सी मुनीमी टेबल रखी हुई थी । चारो ओर पुस्तको, पत्र-पत्रिकाओ एव बिखरे हुए कागजोका अम्बार और उनके मध्य नाहटाजी बिल्कुल सादी वेशभूषामें, अपने पारम्परिक लिवासमें बैठे हुए थे । उन्होने अपनी पगडी एक ओर रख छोडी थी और गर्मीके दिन होनेके कारण अपना कुर्ता भी उतार रखा था । पास ही ५-४ व्यक्ति बैठे हुए थे । एक तो कोई शोध-छात्र थे, जो कि अपने नोट्स लेनेमें व्यस्त थे, दूसरी ओर बैठे हुए व्यक्तिको नाहटाजी अपने नाम आये हुए पत्रोके उत्तर लिखवा रहे थे । तीसरे सज्जन कतिपय प्राचीन वस्तुएँ विक्रयार्थ लेकर आये हुए थे और चौथे सज्जन पठनार्थ कोई धार्मिक पुस्तक लेने आये थे । उन सबसे घिरे नाहटाजी शान्त चित्त, स्थिर मुद्रामें अपने कार्यमें सलग्न मैंने नमस्कार किया और उन्होने मेरा परिचय जानकर पास-ही बैठनेको कहा ।

मैं बैठकर अपने कार्यके बारेमें कुछ कहनेको हुआ कि उससे पूर्व ही वे शोधार्थी महोदय किसी हस्तलिखित ग्रथके बारेमें पूछने लगे । प्रत्युत्तरमें नाहटाजीने क्षण भरके लिए सोचा और बैठे-बैठे ही सामने पट्टरियोपर लदे लाल बस्तोकी ओर इशारा करते हुए उन्हें बताया कि वहाँसे अमुक नम्बरका बस्ता उतार लाओ और उसमें अमुक नम्बरकी प्रतिका अमुक पृष्ठ निकाल कर देखो ।

पाँच मिनट बाद ही जब मैंने उन सज्जनको सही सन्दर्भको पाकर उसकी नकल उतारते हुए देखा तो मैं स्तम्भित हुए बिना नही रहा । भला जिनके वैयक्तिक सग्रहमें ३५ हजारके आस-पास हस्तलिखित ग्रथ (या उनकी प्रतियाँ) सुरक्षित हो, वह बिना किसी कटलॉग और पुस्तकाध्यक्षकी सहायतासे इस फूर्तिसे अपेक्षित पुस्तक निकालकर माँगनेवालेके हाथोमें थमा दे, इससे अधिक तीव्र स्मरण शक्तिका परिचय और क्या हो सकता है ?

हस्तलिखित प्रति माँगनेवाले सज्जनको उचित निर्देश देकर उन्होने तत्काल पत्र-लेखकको लिखवाना (डिक्टेशन) शुरू कर दिया । अभी वे कठिनाईसे दो पक्ति भी नही बोल पाये कि पुरानी वस्तुओका वह विक्रेता बोल उठा, 'क्यो सेठ साहब, माल जचा ? देखिये क्या कलात्मक वस्तु है ! सा'ब, निश्चित रूपसे ५०० वर्ष पुराना है । मैंने यहाँके एक अति प्रसिद्ध और प्राचीन घराने से प्राप्त किया है ।

उसकी बातें सुनकर नाहटाजी क्षणभरके लिए हँसे । यह वही हँसी थी, जो किसी अनुभवी बुजुर्गके नौसिखियेसे उपदेशात्मक बातें सुनकर बरबस होठोपर उभर आती है ।

मुझे निर्देश देनेके साथ ही उन्होने एक अन्य पगडीधारी सज्जनसे पूछा, "आपको शान्तिनाथ चरित्र चाहिए ? तो देखिये इसके बारे में ऐसा है कि अभी हिन्दी की पुस्तकें तो मेरे पास हैं नही । आप चाहें तो गुजरातीकी पुस्तक अवश्य ही, मैं आपको दे सकता हूँ ।'

वे सज्जन तपाकसे बोल उठे—'नाहटाजी गुजराती तो हू जाणू कोनी ।'

उनकी बात पूरी होनेसे पूर्व ही नाहटाजीका उत्तर तैयार था । उन्होने कहा, 'जानते नही तो क्या है ? सीखिये ! आप योही पाटेपर बैठे दिनभर गप्प-शप्प लगाते रहते हैं, ताश खेलते रहते हैं; अब कुछ समय तो ज्ञानार्जनके लिए भी देना चाहिए । क्या है आप तीन दिनोमें गुजराती सीख जायेंगे । मारवाडीके लिए गुजराती सीखना क्या कठिन बात है ?' और बिना कोई दूसरी बात सुने एक पुस्तक निकालकर उन सज्जनके हाथो थमा दी ।

तभी पोस्टमैन चिट्ठियो एव पत्र-पत्रिकाओ आदिका एक बडा पुलिन्दा नाहटाजीके हाथोमें थमा गया (जो कि उनकी दैनन्दिन डाक थी) । दूसरे ही क्षण वे उस डाकको देखनेमें व्यस्त हो गये साथ-ही-साथ पत्र लेखकको बिना एक बार भी यह पूछे कि इससे पूर्व मैंने क्या लिखवाया था, पत्र भी लिखवाते रहे । अब मैं भी एक कागज लेकर पुस्तकोकी सूची बनानेमें सलग्न हो गया ।

यह था मेरा नाहटाजीसे प्रथम साक्षात्कार । उसके पश्चात् तो मैं उनके चरणोमें महीनो बैठकर कार्य कर चुका हूँ और उस अवधिमें उन्हें अति निकटसे देखकर कितने क्या अनुभव किये है, कितनी क्या प्रेरणा प्राप्त की है—उन सबका लेखा-जोखा एक लम्बी कहानी बन जायेगा । अत. मैं विस्तार भयसे यही अपनी बातको समाप्त कर रहा हूँ ।

●

न तस्य प्रतिमास्ति यस्य नाम महद् यशः

श्री सत्यव्रत 'तृषित'

श्रीयुत अगरचन्दजी नाहटासे मेरा परिचय बहुत पुराना नही है । बात सन् १९६२ की है । तब मैं डी ए वी कॉलेज, अमृतसरमें प्राध्यापक था । मैंने सरस्वतीमें 'पजाब और सस्कृत साहित्य' जैसे गहन विषय पर एक लेख लिखनेकी चपलता की । पाँच हजार वर्षोंके विशाल अन्तरालमें निर्मित साहित्यकी विपुल राशिके साथ न्याय करना मेरे लिये कहाँ सम्भव था ? नाहटाजीने तुरन्त निबन्धकी कमियोका प्रतिवाद किया । यही मेरा नाहटाजीसे प्रथम परिचय था । सन् १९६४ से राजस्थान मेरा कर्मक्षेत्र बना । इसके पश्चात् तो मुझे नाहटाजीको बहुत निकटसे देखने तथा समझने और अनेक बार उनका आतिथ्य ग्रहण करनेका सौभाग्य मिला । गत दो-तीन वर्षसे तो 'अभय जैन ग्रन्थालय' मेरा घर ही बना हुआ है ।

नाहटाजीके व्यक्तित्वमें भारतीय सस्कृतिकी गौरवशाली परम्परा साकार हो उठी है । वे सौजन्य तथा औदार्यकी साक्षात् प्रतिमा हैं । विनम्रता उनकी स्पर्द्धनीय थाती है । धनाढ्य व्यापारी कुलमें जन्म लेकर एक यशस्वी साहित्यकार बन जाना स्वयंमें एक विस्मयकारी घटना है । नाहटाजी इसे अपने पूर्वजन्मोके सस्कारोका सुफल कहते है । अवश्यही नियतिने उन्हें व्यापारके जालमें फाँसनेकी दुश्चेष्टा की थी, किन्तु प्रतिभा को बन्दी बनाना किसी भी सत्ताके बूतेकी बात नही है । उनकी साहित्यिक प्रतिभाके विकासमें उनके दिवगत पिताजीका अमूल्य सहयोग रहा है, जिन्होने अपनी तत्त्व भेदी दृष्टिसे उनकी प्रतिभाको आक कर उन्हें प्रारम्भमें ही व्यापारके भारसे मुक्त कर दिया । नाहटाजीने अपने पिताजीके विश्वास और अभिलाषाके अंकुरको प्रतिभाके पीयूषसे सीच कर अश्वत्थ का रूप दे दिया है ।

श्रीयुत नाहटाजी साहित्यके सजग प्रहरी हैं । साहित्यका जितना उद्धार उन्होने अकेले किया है, वह अनेक सस्थाओके सामूहिक प्रयत्नोसे भी सम्भव नही था । देशका शायद ही कोई ऐसा भण्डार हो, जिसका मन्थन नाहटाजीने न किया हो । अज्ञात तथा दुर्लभ ग्रन्थोका सग्रह करनेमें वे सदैव तत्पर हैं । उनकी इस सशोधक वृत्तिका मूर्तरूप उनका 'अभय जैन ग्रन्थालय' है, जिसमें सस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, अंग्रेजी आदिके लगभग एक लाख ग्रन्थ संगृहीत है । इनमें आधी तो हस्त प्रतियाँ हैं । नाहटाजीके सग्रहमें ऐसे अनेक ग्रन्थ विद्यमान है, जिनकी पाण्डुलिपियाँ अन्यत्र कही भी प्राप्य नही हैं । अपनी उदारताके कारण उन्होने निजी ग्रन्थालयको सार्वजनिक-सा रूप दे दिया है । कोई भी शोधक, किसी भी समय वहाँ जाकर सकलित सामग्रीका उपयोग कर सकता है । शायदही हिन्दीका कोई ऐसा शोधछात्र अथवा विद्वान् हो, जिसने उनके पुस्तकालयका उपयोग न किया हो । वस्तुत , 'अभय जैन ग्रन्थालय' अब एक प्रख्यात शोधसस्थान बन चुका है, जहाँ सदैव, देशके विभिन्न भागोसे आए हुए शोध-विद्वान् कार्यरत

रहते हैं। स्वय नाहटाजी ही नवप्राप्त साहित्य तथा तत्सम्बन्धी जानकारीको 'रायटर' की भाँति, तत्काल प्रकाशित करते रहते हैं।

नाहटाजीका जीवन एक श्रावक तथा साहित्यकारका सात्त्विक जीवन है। उनकी धर्मनिष्ठा उनके साहित्य-निर्माणका सम्बल है। इसीलिये हिन्दीके ख्याति-प्राप्त लेखक तथा विद्वान् होते हुए भी वे जैन साहित्यके विशेषज्ञ हैं। जैन साहित्यकी सामग्री, चाहे वह किसी भी भाषामें हो तथा प्रकाशित-अप्रकाशित किसी भी रूपमें हो, उन्हें राई-रत्ती ज्ञात है। वे जैन साहित्यके साक्षात् सन्दर्भग्रन्थ अथवा गतिशील पुस्तकालय है।

अब तक देशकी विभिन्न पत्र-पत्रिकाओंमें उनके करीब पाँच हजार लेख प्रकाशित हो चुके हैं। उनकी लिखी अथवा सम्पादित ३०-३५ पुस्तकें अलग हैं। उनके बहुतसे निबन्ध तो शोध-प्रबन्धोंके आधार बने हैं, जो उनकी प्रखर विद्वत्ता तथा शोध-दृष्टिके सारस्वत-स्मारक है। वास्तविकता तो यह है कि नाहटाजी देशकी शोधप्रतिभा तथा साहित्यनिष्ठाके प्रतीक बन चुके है।

महापण्डित राहुल साकृत्यायन तथा प्रज्ञाके अमर-शिल्पी ऋषितुल्य डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल जैसे उद्भट विद्वान् भी उनकी प्रतिभा तथा कर्मठताका सिक्का मानते थे। इतना होते हुए भी नाहटाजी अपनी विद्वत्ताको इस सहजतासे ओढते है कि उन्हें आभास भी नही होता कि वे वाग्देवीके मानसपुत्र हैं। उनकी मारवाडी भूषा, बच्चोंकी-सी मधुर मुस्कान तथा हृदयकी सरलताको देखकर कोई अपरिचित व्यक्ति यह अनुमान भी नही कर सकता कि वे देशके प्रकाण्ड साहित्यकार हैं। आजके विज्ञापनके युगमें भी उन्हें न प्रचारकी आवश्यकता है, न यश अथवा औपचारिक प्रतिष्ठाकी आकाक्षा। फिर भी जितना सम्मान तथा यश उन्हें मिला है, वह किसी विरले को ही प्राप्त होता है। किन्तु जहाँ देशकी कुछ सस्थाओने विभिन्न रूपोमें, उनकी साहित्यिक सेवाओके प्रति अपनी श्रद्धाजलि अर्पित की है, वहाँ राजस्थान-के विश्वविद्यालय कुम्भकर्णी नीदमें सोये पडे हैं। वे देश-विदेशके पेशेवर विद्वानोको सम्मानित करके तो स्वयको गौरवान्वित समझते हैं, किन्तु नाहटाजी जैसे निस्स्पृह साहित्यकारकी सुध उन्हें अभी नही आई है, वैसे नाहटाजी इन विश्वविद्यालययोकी सभी उपाधियोसे ऊपर हैं, महान् हैं। इस मूक तपस्वीको औपचारिक उपाधियोकी आवश्यकता ही क्या ?

मैं नाहटाजीके चरणोमें प्रणामाजलि अर्पित करता हूँ। वीतराग प्रभुसे प्रार्थना है कि वे इस परोपकारी विद्वान्को शतायु करें, जिससे समाजको उनके ज्ञानालोकसे मार्गदर्शन प्राप्त होता रहे।

●

महामनस्वी श्रीनाहटाजी

श्रीलाल मिश्र

सर्वप्रथम सन् १९३७ में मैंने बम्बईके मारवाडी पुस्तकालयमें उ० प्र० की हिदुस्तानी पत्रिकामें श्रीनाहटाजीका लेख देखा। उस समय राजस्थानसे कोई साहित्यिक पत्रिका नही निकलती थी। कुछ समयके लिए श्रीहरिभाऊजी उपाध्यायके सम्पादनमें एक सुन्दर पत्रिका 'त्यागभूमि' मासिक निकली थी, जो कुछ

वर्षों तक चली । राजस्थानके साहित्याकाशमें एक नए नक्षत्रके उदयपर स्वाभाविक था कि उससे परिचित होनेकी जिज्ञासा हो। उस समय स्वामीजी तथा पारीकजी प्रकाशमें आ चुके थे और इनकी रचनाएँ साहित्यिक पत्रिकाओमें निकल चुकी थी । उ० प्र० से ना० प्र० पत्रिका तथा सम्मेलन-पत्रिका उच्चस्तरकी पत्रिकाएँ ममझी जाती थी । उपर्युक्त तीनो पत्रिकाओमें किसी लेखककी रचनाका प्रकाशित होना, उसको लेखकके रूपमें मान्यता मिलना समझा जाता था । वादमें इन पत्रिकाओ तथा अन्यान्य पत्रिकाओमें भी श्री नाहटाजीके लेख देखनेको मिले । जिज्ञासा वढती ही गई ।

सन् १९५४ में स्कूलके कामसे वीकानेर जाना हुआ तो सर्वप्रथम मैं आपसे आपके पुस्तकालयमें मिला । तवतक आप काफी ख्याति प्राप्त कर चुके थे । आप अधवँया कुर्ता पहने हुए हस्तलिखित ग्रंथोंके पन्ने उलट रहे थे और चारो ओर फर्शपर विछी हुई दरीपर हस्तलिखित ग्रंथोंके ढेर लगे थे । घनी मूछोवाले गभीर मुखने मुझे प्रभावित किया । प्रथम साक्षात्में ही मैंने इन्हें मितभाषी और कार्यमें विश्वास करनेवालेके रूपमें देखा । कुछ समय साहित्यचर्चा हुई और मैं चला आया ।

दूसरी वार गया तो वे वही मिले और उसी तरह कार्य सलग्न । मैं भीखजनपर एक लेख लिखना चाहता था । उसके विपयमें चर्चा की तो तत्काल ही उन्होंने एक पत्रिका निकाल कर दी, जिसमें भीखजनके वारेमें लिखा हुआ था । इस कविकी अन्यत्र कही चर्चा नही हुई थी । मुझे आश्चर्य हुआ उनकी स्मृतिपर कि इतनी पत्रिकाओके ढेरमेंसे वह कामकी पत्रिका तुरत निकालकर दे दी मानो पहलेसे ही वे उसे ढूँढकर तैयार वैठे हो ।

इस प्रसगसे दो वातोकी मेरे मस्तिष्कपर छाप पडी। एक तो किसी भी जिज्ञासु समानधर्मीको तत्काल सक्रिय सहयोग देने की, दूसरी उनकी स्मरण-शक्ति की कि हजारो पुस्तकोके ढेरमें उन्हें याद है कि क्या चीज, किस जगह है ।

उस समयतक तथा उसके वाद तो उनके पास कितने ही शोध-छात्र आए और उन्होने इनकी वृत्तियोका भरपूर लाभ उठाया । ये मूर्तिमान सदर्भ है । ये उस समय 'राजस्थान-भारती' निकालनेवाली संस्था श्रीसार्दूल राजस्थान रिसर्च इंस्टीट्यूट, वीकानेरके अध्यक्ष थे और उसके सपादक-मंडलमें तो ये इसके प्रथम अंकसे ही थे । ये इस सस्थाके सस्थापक सदस्य भी हैं ।

मैं इस्टीट्यूट गया । वहाँ 'राजस्थान-भारती'के सपादक श्रीवद्रीप्रसादजी साकरिया तथा कार्यालय मत्री श्रीमुरलीधरजी व्याससे मिला । इन दोनो ही वयोवृद्ध मज्जनोसे परिचय प्राप्त कर वडी प्रसन्नता हुई । वादमें यह परिचय स्थायी स्नेहमें परिवर्तित हो गया । मैंने वहांसे पत्रिकाके पिछले सारे अक लिए और लौट आया । घर आकर मैंने सभी अंकोको आद्योपान्त पढा। इस पत्रिकाके भाग ४, अक २-३ जुलाई-अक्टूबर ५४ के अन्तमें श्री नाहटाजीके लेखोकी सूची तथा मक्षिप्त परिचय देखा । परिचयमें सवसे महान् आश्चर्य इनकी शिक्षाके विपयमें पढकर हुआ, केवल ५वी कक्षा तक और लेखोकी सख्या ११६१ । ये लेख प्रातकी और देशकी सभी मुख्य पत्रिकाओमें फैले हुए है ।

आपने लक्षाधिक हस्तलिखित प्रतियोका अवलोकन किया है तथा श्री अभय जैन ग्रथालयमें और शंकरदान नाहटा कला भवनमें उस समयतक आप वीम हजार हस्तलिखित ग्रथो एव हजारो चित्रोका संग्रह कर चुके थे । इस कार्यको देखते हुए ऐसा लगता है कि यह एक आदमीके वशकी वात नही है परन्तु यह एक ठोस वास्तविकता है जिससे इन्कार नही किया जा सकता । इनका जीवन नए साहित्यिको तथा अल्पशिक्षित व्यक्तियोके लिए आदर्श तथा प्रेरणाप्रद है । इन्होने अपने जीवनके प्रतिक्षणका सदुपयोग किया है । इसके पीछे इनकी लगन और अध्यवसाय है जिसने इनको आज साहित्य-जगत्में ख्यातिके शिखरपर पहुँचा दिया है ।

मैं प्रात , दोपहर, रात्रिको जब भी इनके पास गया हूँ ये पुस्तकालयमें ही मिले हैं और मैंने इन्हें हस्तलिखित या मुद्रित पुस्तकोके अध्ययनमें व्यस्त ही पाया है।

एक बार मैं इनसे सन् ६० में मिलने गया तो इन्होने मेरे सामने पृथ्वीराज जयतीकी अध्यक्षता करने और पृथ्वीराज आसनसे अभिभाषण तैयार करनेका प्रस्ताव रखा। मुझे ठीक याद है, उस दिन जयन्तीके बीचमें केवल दस दिन रहे थे। मैंने कहा—इतने समयमें दो भाषण कैसे तैयार होंगे ? मुझे शामको ही डूड-लोर लौटना था। इन्होंने आग्रह किया और आसनके लिए विषय भी सुझा दिया। इस स्नेहमय, निश्छल तथा नि स्वार्थ आग्रहको मैं टाल नही सका और समयपर मैंने दोनो ही कार्य सम्पन्न किए। यह है इनका प्रेरित करने और मुझ जैसे आलसी आदमीसे काम लेनेका ढंग। ये जब बाहर निकलते है तो दोलागकी नीची धोती, कमीज, बन्द गलेका कोट और सरपर ओसवालोकी पगडी लगाकर पूरी पोशाकमें निकलते हैं। उस वेषमें देखकर कौन जान सकता है कि यह मूर्तिमान ज्ञान-भडार इस वेषमें परिवेष्टित हैं।

ऐसे मनस्वी व्यक्तिका, जिसने अपना सारा जीवन साहित्य-सेवामें खपा दिया, जिसका सिद्धान्त वाक्य यही रहा 'मनस्वी कार्यार्थी न च गणयति दु ख न च सुखम्' और जिसने रत्नदीप बनकर नए साहित्यकारोको आलोक दिखाया, अभिनन्दनकर साहित्य-जगत् अपनी कर्तव्यपूर्ति ही करता है और स्वय गौरवान्वित होता है। इस रूपमें हम उनके प्रति अपनी श्रद्धा व कृतज्ञता प्रकट करते हैं तथा उनके दीर्घजीवनकी कामना करते हैं, जिससे कि साहित्यालोक वृद्धिगत होता रहे।



विद्याव्यासंग शोधमनीषी

डॉ० ओमानन्द रु० सारस्वत

राजस्थानकी सीमाको पार करके, अखिल भारतीय स्तरपर जिन कतिपय राजस्थानी साहित्यकारो-की ख्याति पहुँची है, उनमें श्रीअगररचन्द नाहटा एक मूर्धन्य व्यक्ति हैं। टैसीटरी, ग्रियर्सन और टॉड आदि विदेशी विद्वानोने जिस प्रकार राजस्थानी भाषा, साहित्य, सस्कृति एव इतिहासको प्रकाशमें लानेका ऐति-हासिक कार्य किया है, उसी प्रकार आधुनिक विद्वानोमें श्रीनाहटाजीका कार्य भी अतिशय श्लाघनीय है।

वर्षों पहले, अपने शोध-कार्यके सिलसिलेमें जब मैं राजस्थानके विभिन्न भूभागोमें घूमता-घूमता बीकानेर पहुचा, तो कितने ही व्यक्तियो, सस्थाओ और स्थितियोके बीच मुझे सर्वाधिक आकर्षित दो व्यक्तियोने किया—श्रीअगरचन्द नाहटा और श्रीबदरीप्रसाद साकरिया। अनुसधित्सुके प्रति आपकी सहानुभूति, सह-कारिता एव विचारावलि एक सच्चे शोधमनीषीकी सज्ञासे अभिभूत है। आनन्द (गुजरात)के समशीतोष्ण वातावरणसे बीकानेरकी भयकर लू और टाटफाड धूपमें जब मैं पहुँचा तो शोधकार्यकी गहनताकी अपेक्षा अपने स्वास्थ्यकी गभीरतापर विचार करना अधिक जरूरी समझ बैठा। लेकिन श्रीनाहटाजीके सान्निध्यमें लू और गर्मीकी भीषणता भी शोध-प्रक्रियाकी प्रेरक ही बनकर रह गई।

होटलसे तांगेवाला मुझे टेढी-घुमावदार सडको-गलियोमेंसे नाहटोकी गवाडमें ले आया—

'नमस्कार ! मैं श्रीनाहटाजीसे मिलना चाहता हूँ।'

'नमस्ते। आइये, विराजिये। मैं ही अगरचन्द हूँ ...'

वाक्य पूर्ण होनेके पूर्व ही मेरी कल्पनाएँ खण्डित होती जा रही थी। मैं किसी 'स्कालर' या 'रिसर्चर' का 'इमेज' बांधे था—अपटूडेट आफिस, एयरकंडिसड वातावरण, गोदरेजके बहुमूल्य सोफे, सजावटसे पूर्ण राजसी कमरा, चपरासियोकी स्टार्चड ड्रेस, फोन की कई वेरायटीज, अतिशय व्यवस्थित पुस्तकालय, कीमती आलमारियोंमें संगृहीत पाण्डुलिपियाँ आदि-आदि न जाने कितनी ही कल्पनाएँ मेरे प्रोफेसरी मानस-पटलपर अंकित थी। किन्तु नाहटाजीको सादे गद्देपर तकियेके सहारे किताबों, कागजो, पत्रिकाओ, पाण्डुलिपियो आदिके मध्य खोया हुआ एक साधारण बीकानेरी पोशाकमें 'सीदा-सादा' बैठा देखकर सारी कल्पनाएँ, भोगे यथार्थकी भाति, सामान्य धरातलपर उतर आईं। मुझे लगा कि बडे-बडे 'रिसर्च इस्टीट्यूट'की भव्य अट्टालिकाओ और उनकी सजावट, फर्नीचर आदिपर खर्चा करना व्यर्थ है। मानवमें यदि शोध-जिज्ञासा है तो वह साधारणसे कमरेमें भी परितुष्ट हो सकती है।

'आप कहांसे पधारे है?'

'जी, मैं पिलानीसे आ रहा हूँ।'

'अच्छा-अच्छा! तो डॉ० कन्हैयालालजी सहलके विद्यार्थी हैं। ठीक है, विषय क्या रखा है?'

'राजस्थानी दोहा-साहित्य।'

'ओहो, दोहा-साहित्य।'—कहकर नाहटाजीने कमर सीधी की और एक बार अपना चश्मा उतारकर नेत्र बन्द कर लिये—मानो मौन रूपमें कह रहे हो कि इस दोहा-साहित्यकी अगाधताका पार पाना बडा कठिन है।

दोहोके बारेमें कितने ही सदर्भ, परिवेश और कोण देख-सुनकर एक बार तो मैं हतप्रभ-सा हो गया, परन्तु कृष्णका शिष्य होनेके कारण गीताकी कर्मभूमिपर मैं लड चुका था। नाहटाजीने अपने ग्रथालयके दोहो और ग्रथोकी जानकारी देनी प्रारंभ की। मैं थक गया, पर वे नही थके। विद्याव्यासग और शोधमनीषीके ये ही तो गुण है। उन्होने मुझे मात्र जानकारी ही नही दी, अपितु दोहोकी प्रतिलिपि आदिको व्यवस्था भी करवाकर दी। मुझे इस शोधकार्यके 'फील्ड-वर्क'में बडे-बडे कटु अनुभव हुए हैं, यहाँपर उन अनुभवोको विपरीत पाकर मैं नाहटाजीकी ओर देखता ही रह गया।

बीकानेरी पगडी और पोषाक, तेजस्वी और जिज्ञासु आँखें, गरिमामडित चेहरा और मूंछें, मृदु स्वभाव और अतल ज्ञान, हाथोकी मुद्राएँ और व्यस्तता—सब मिलकर अगरचन्दजीके व्यक्तित्वको एक ऐसा स्पर्श देते हैं, जो अपने आपमें विरल हैं। वर्षों पहले पिलानीमें देखे बीकानेरी प्रो० सूर्यकरण पारीककी धुंधली-स्मृति रह-रहकर कौंधने लगी थी। सोचता हूँ, शोधके क्षेत्रमें 'बीकानेरी' सज्ञासे ईर्ष्या करने लगूँ।

सैकडो शोधछात्रोने नाहटाजीसे ज्योति ली है। इसका कारण, व्यापारी होते हुए भी आप निरन्तर विद्याव्यासग रहे हैं। पाण्डुलिपियो और ग्रन्थोका पारायण चलता ही रहता है। आपके लेखो और अभिभाषणोंसे आपकी विद्वत्ता और विश्लेषणकी कलाके स्पष्ट दर्शन होते हैं।

लगभग चालीस वर्षोसे आपका जो लेखन-कार्य चल रहा है, उसके परिणामस्वरूप चालीसो ग्रन्थ और हजारो लेखादि प्रकाशित हुए है। इसमें हस्तलिखित ग्रन्थोकी खोज और सूची-निर्माण जैसा महत्त्वपूर्ण कार्य शोधके क्षेत्रमें आवश्यक ही नही, अपितु अनिवार्य है। इसमें भी पाण्डुलिपियोका सग्रह भी एक जटिल कार्य है। आपने श्रम, समय और धन लगाकर सम्पूर्ण भारतका पर्यटन किया है तथा अनेकानेक अनुपलब्ध पाण्डुलिपियोका सग्रह, परिचय, एवं प्रकाशन किया है।

नियतिके क्रममें ऐसे मानुष-फल बहुत कम पकते हैं। लाखो साहित्यजीवियोकी शुभ भावनाएँ है कि 'तुम जीवो हजारो साल, सालके दिन हो लाख-हजार।'

●

साहित्यमूर्त्ति श्री अगरचन्दजी नाहटा

श्री उदयवीर शर्मा एम० ए०, बी० एड०

पीळ्या सूं बतळावती ऊँची धोती, चोडो लिलाड, काळा धोळा केस, कटारी सी तीखी सोवणी रोबीली मूछया, मझलो कद, तगडो सरीर, पकती ऊमरमें भी सरावणा जोग फुरती, हासतो मोवणो मुखडो, जोध जवाना नैं मात करणियो उत्साह, प्यारा बैंण अर मोटा नैण हाळा, धुन रा धणी, आप री मिहनत मीन्नत सू कीरत कमावणिया उद्भट साहित्यकार श्री अगरचन्दजी नाहटा राजस्थानी साहित्य रा जीवन-धन है। आप जूनै अर नूवैं साहित्य रा सूचना केन्द्र है। नूई सूं नूई जाणकारी भी आप सू छानी को रै सकै नी।

आप समै रो मोल जाणणिया अर करणिया है। एक छिण भी अकारथ कोनी खोवैं। के तो साहित्य साधनामें, के नूवा साहित्यकारा अर साहित्य रै निरमाणमें, अर के भजन-भावमें लाग्या रैणिया है श्री नाहटा जी। काया रा धणी श्री नाहटाजी दिनूगैं तडकाऊ चार बजै सू लगैर रात पडै १०-११ तक काम करता ई रैवै। घणखरो वखत सुरसत-सेवा में ही लगावै, जणा ही सुरसत इना पर राजी होयरी है।

श्री नाहटाजी रो जीवन सदा ही इकरंगो रह्यो है। आज जिया पढाई-लिखाई में झूझता रै है बिया ही आप बचपनमें हा। बचपन सूं ही गैरो ग्यान ग्रहण करणै री रुचि राखणिया रैया है। शोध अर जूनी जाणकारी लेवणी आपरो उद्देश्य रैयो है। इकलग पढणो अर एकान्त साधना आपरी सुफलता री सीढया है।

साहित्य रा सागर है नाहटा जी। आज भी देस री २००-२५० पत्र-पत्रिकावामें आपरा लेख एकर साथ छपता रैवै। अब तक आप कई हजार लेख छपवा चुक्या है।

आपरै पुस्तकालय मैं आख्या देखै जणा बेरो पडै कै यो विद्वान किसोक है। छोटा-मोटा, छप्योडा अणछप्योडा, हस्तलिखित, पत्र-पत्रिकावा सै मिलार कोई ळगवा पोथिया अर सगला री साची सूची है श्री नाहटा जी। चाहे जणा जाय र बतल्याल्यो पोथी त्यार है।

श्री नाहटाजी दया, सील अर स्नेह रा खजाना है। छोटे साहित्यकार सू लेयर बडै तक सू वै खुलकर बात करै। कोई भेदभाव नी। सत्य लाए नैं आप रै ग्यान रो परसाद देवै।

हिन्दी साहित्य रै इतिहास नैं नुवो मोड देवण ताई भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजी एक साहित्यकार मडल वणायो हो। इण भाँति ही आप भी एक साहित्यकार मंडल वणा राख्यो है। आप री प्रेरणा सूं घणा साहित्यकार त्यार होया है, नाम कमावणिया लूंठा साहित्यकार बण्या है।

राजस्थानी अर जैन साहित्यमें पी-एच० डी० लेवणिया नैं आप खनै आया सरै। आप कागदी डिगरी हाळा विद्वान कोनी पण ग्यान रा सागर है। डाक्टर री डिगरी विना श्री नाहटाजी लोगा नैं डाक्टर थणावैं। आप जिसा मनीसी तपसी अर लगनी विद्वान मिलणा दोहरा भोत। आपनै भारत सरकार री ऊँची सू ऊँची सम्मान-पदवी दी जा सकै है। आप बीरा खरा पात्र है।

आप सैंकडी बरसा तक सुरसत माता री सेवा मे ळण्या रैवै अर परै जीवण रो एक दिन हजार वरसा रै बरोबर हो, या ही भगवान सू अरदास है।

शोध-मनीषी श्री अगरचन्द नाहटा

श्री गोविन्द अग्रवाल, लोक-संस्कृति शोध-संस्थान, नगर श्री, चूरू

श्रीअगरचन्दजी नाहटा भारतवर्षके लब्धप्रतिष्ठ विद्वान् है। उनके विषयमें खूब पढा, खूब सुना। लेकिन अति निकटसे दर्शन-लाभका अवसर आजसे कोई ५ वर्ष पूर्व बीकानेरमें प्राप्त हुआ। "चूरू मण्डल" के इतिहासके सदर्भमें राजस्थान-अभिलेखागार आदिसे सामग्री जुटाने हेतु मैं बीकानेर गया हुआ था। दिन भरके कामसे निपटकर नाहटाजीके दर्शन करने चला तो अँधेरा हो गया था। उनका मकान जानता न था, गलियाँ अपरिचित थी और अधेरा बढ रहा था, अत एक तागा किराये पर लिया।

जाकर देखा तो नाहटाजी अभय जैन ग्रन्थालयमे कार्यरत थे, कुछ अन्य सज्जन भी बैठे थे। नाहटाजीसे यद्यपि पहले साक्षात्कार नही हुआ था, लेकिन मेरा नाम वे जानते थे, अत' नाम बतलाना मात्र ही परिचय था। उनकी अतरग गोष्ठीमें मैं भी सम्मिलित हो गया। मैंने अपनी "राजस्थानी लोक कथाएँ" नामक पुस्तकोके दो भाग उन्हें भेंट किये। उनको देखकर वे बहुत प्रसन्न हुए और मुझे इस कार्यमें लगे रहनेके लिए खूब प्रोत्साहित किया। वहाँसे लौटा तो एक नवीन उत्साह मनमें भरा था।

फिर चूरू-मण्डलके इतिहासके सिलसिलेमे कई बार बीकानेर जाना पडा। अगली बार बहुत सवेरे ही नाहटाजीसे मिलने गया तो देखा कि वे मेरेसे पहले ही ग्रंथालयमें मौजूद है। पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओ आदिके ढेर चारो ओर लगे थे और वे उनमें डूबे हुए थे। मुझे कुछ पुस्तकें देखनी थी, सहसा ध्यान आया कि पुस्तकोके इन ढेरोसे इच्छित पुस्तकें जल्दी नही मिल सकेंगी। परन्तु पुस्तकोके नाम बतलाते ही नाहटाजीने इतनी शीघ्रतासे पुस्तकें निकालकर मेरे सामने रख दी कि देखकर आश्चर्य हुआ, क्योकि वैज्ञानिक रीतिसे व्यवस्थित पुस्तकालयोसे भी इतनी जल्दी वाछित पुस्तकें नही मिल पाती।

अगली बार बीकानेर गया तो एक शामको डॉ० मनोहरजी शर्मा मिले। उन्होने बतलाया कि नाहटाजीकी धर्मपत्नीजीका स्वर्गवास हो गया है। दूसरे दिन सवेरे मैं ग्रंथालय गया तो वहाँ एक अन्य सज्जन बैठे थे। उन्होने कहा कि नाहटाजी अभी आनेवाले हैं। कुछ देर बाद नाहटाजी आये, सिरपर शोक-सूचक हरे रगकी ऊँची पाघ थी, चेहरे पर क्षोभकी हल्की-सी परत। मैंने नमस्कार किया और इससे पहले कि मैं कुछ कहू, उन्होने हमारे कार्यकी प्रगति आदिके बारे में चर्चा प्रारभ कर दी। कुछ देरकी बात-चीतके बाद वे सदैवकी तरह ही साहित्य-साधनामें लीन हो गये, जैसे कोई विशेष घटना नही घटी थी।

इसके बाद भी एकाध बार और नाहटाजीके यहाँ जाना हुआ और जब भी गया उन्हें सदैव साधना-निरत ही पाया। नाहटाजी का प्रत्येक क्षण साहित्य-साधनाके लिए अर्पित है। हर जिज्ञासु, साधक व शोधके विद्यार्थीके लिए उनका द्वार खुला है। शोधके विद्यार्थी निरंतर उनके पास आते रहते है और नाहटाजी उन्हें यथोचित मार्ग-दर्शन देते हैं। नाहटाजीके पास शोध-विषयक प्रचुर सामग्री एकत्रित है। यो वे स्वय चलती-फिरती जीवत सस्था हैं। वास्तवमें अनेक सस्थाएँ भी उतना काम नही कर पाती. जितना उन्होने किया है और कर रहे है।

जैन साहित्यके तो वे विश्वकोश ही हैं। शोधके क्षेत्रमें उन्होने जितना कार्य किया है, उतनेसे शोधके अनेक छात्र पी०-एच० डी० की उपाधि प्राप्त कर सकते हैं। आशा है, राजस्थान विश्वविद्यालय नाहटाजी की साहित्य-साधनाका उचित मूल्याकन कर उन्हें डी० लिट की उपाधिसे विभूषित कर उपाधिको सार्थक बनाएगा।

•

अभिनन्दनमभिनन्दनीयस्य

श्रीविश्वनाथमिश्र प्रधानाचार्य, श्रीशार्दूल संस्कृत विद्यापीठ बीकानेर (राजस्थान)

को नु खलु अभिनन्दनीयतामर्हति । जायन्ता लोके नानाविधा लोका, सम्पद्यन्ता तैः क्षणभगुराणि कार्यजातानि, क्रियन्तामुपाया स्वाभीष्टसिद्धये, लम्यन्तामुच्चतमानि पदानि कैश्चिदपि, पर यस्य कार्यमशाश्वतिकम्, यश्च यतते केवलम् आत्मतुष्टये, यत्र नौदार्यम्, न सौहार्द, न वैचक्षण्यम्, न लोकनैपुण्यम्, न वा सारस्वतरसौन्मुख्यम्, वर्तता नामासौ लोकेऽस्मिन् कथञ्चित् पर कथमिवासौ अभिनन्दनीयतामर्हेत् ?

इह खलु विविधवैचित्र्योपेते जगज्जाले, भवति यस्य प्रज्ञा विशाला, यस्य सुकोमले मानसेऽनवरत प्रवहति परमपवित्रपानीयप्रवाहपूरा सुविमला सहृदयतासरित्, यश्चाविरत रमते सारस्वतसमज्यासु, यस्य निरन्तरं गतिमती लेखनी सृजति किमप्यपूर्व सारस्वतलोकचक्रवाल, यत्रानुद्घाटितान्युद्घाट्यन्ते, अप्रकाशितानि प्रकाश्यन्ते, अज्ञातानि विज्ञाप्यन्ते, अद्योतितानि समुद्द्योत्यन्ते, किं बहुना परिपूर्यन्ते भाण्डागारा भगवत्या सुरसरस्वत्यास्तथ्यभरितैर्निर्माणप्रकारैः नूनमेतादृशो जनो भवति सर्वेषामभिनन्दनीय. प्रशसनीय, अनुकरणीयश्च ।

श्रीअगरचन्दनाहटामहोदयो वर्तते एतादृश एव विलक्षणो विचक्षणश्च । यस्याकृतौ सरलता, वाचि स्निग्धता, हृदये विशालता, प्रतिभाया नवनवोन्मेषशालीनता च प्रतिपद सलक्ष्यते । यश्च कर्मणि कुशल, सतत जागरूक, भारत्या समुपासक, भाषणे प्रवीण, लेखने सुदक्ष, अन्वेषणे अप्रतिम, आराधको भारतीयसस्कृते, पोषक प्राचीनताया, प्रतिमूर्तिः विनम्रताया, किं बहुना आदर्शः अनुकरणीयानामस्ति । यश्चानवरतमविश्रान्त वरदोपासनापरायणस्तिष्ठति । यश्च निर्दिशति अनुसन्धानपरायणान् प्रतिदिनम्, यश्च लिखत्यजस्रम् । सत्यमेतादृक् जना भवति देशस्य गौरवायालम् । इत्थभूत जन कोऽभिनानुमन्येत, को नाभिनन्देत्, प्रशसेच्च । श्रीनाहटामहोदयस्याभिनन्दन सर्वथा तथ्यमेवावलम्बते । महानुभावोऽयं दीर्घायुषा युज्यतामिति वर्तते मे हृद्या समीहा ।

◎

लिखमी अर सरसुती रा लाडला संत श्री अगरचन्दजी नाहटा

श्री मुरलीधर व्यास 'राजस्थानी'

आ बात, अडगडै आधै सईकै अर्थात् ४० वरसा पैली री है, जद म्हारी ओळखाण पैल्ली-पोत श्री नाहटाजी सूं, नागरी भडार रै किणी उच्छव रै मोके माथै, स्वर्गीय राज-जोतसी श्री विष्णुदत्तजी ज्योतिषाचार्य, उण वेला रै मत्री नागरी भण्डार री मारफत हुई ही । उण समै ज्योतिसाचारजजी कै यो हो कै श्रीनाहटाजी, सईका जूनी हस्तलिखित अलभ साहित्यक पोथिया री, बीकानेर अर वारै, खोज-पडताल कर कर एक विसाल सूची त्यार की है; जिको कामकै भलै-भलै साहित्य सेविया री बूथी रै वारै है । अै, औ सरसुती सेवा रो पुण्यकार्य नही करता तो अलभ्य अर अमोलो साहित्य अधकार सू ग्रसित रैवतैथका पाठका नेई आपरै परचै, परकास अर अमोलै ज्ञान सू अधकारमें पडियो राखतो ।

उण दिन सूं, म्हा दोनुवा मेल-मिळाप, तर-तर-तर-तर बधतोई गयो। अर पछै, म्हारी सर समरथ मा राजस्थानी री उपेक्षा अर उणमैं प्रात री मातृभाषा रै सिंघासण ऊपर बिराजमान करावण रै प्रथम कार्य रै निमित खरै प्रयत्न नाम जुट जावणरै सवाल नै लेय र म्हा दोनोमें खरो वधुत्व वणग्यो।

श्री नाहटाजी रीईज, प्रेरणा सूं, म्हा लोगा, राजस्थानी साहित्य परिषद् री स्थापना कीवी-सायत सन् १९३० रै आसरै। जिणरी साहित्यिक साप्ताहिक गोष्ठिया, नेमसू, श्री गुणप्रकाशक सज्जनालय भवन हुया करती। प्रत्येक साहित्यकार, पणले राखियो हो कै गोष्टीमें नवी रचना सुणावै। इण सूं मोकळा नवा लेखक परकासमें आया अर मोकळोई मातृभासा रो पस्वार हुयो।

सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट री स्थापनामें आपरी प्रेरणा अर अरपिरचयतन वैरो रैयो। आप इन्स्टीट्यूटरा बरसा ताई, निरदेशक रैया। अर आपरो लगन सू ईज, इन्स्टीट्यूट सू "राजस्थान भारती" नावरी पिरसिद्ध शोध पत्रिका रो पिरकासन सरू हुयो। अर हुयो तीस-पैंतीस अमोली पोथ्या रो पिरकासन।

आप, अभै जैन ग्रथालै री थरपना कीवी, जिणमें ५०-६० हजार जैन व जैनेतर हस्तलिखित ग्रंथ रहना रो सग्रै है। भारत रै छावा लेखका, कवियारी पोथ्या, ग्रथाळैमें भरी पडी है। अर भारत व विदेसरा सोधराव सादा पत्र बराबर आवता रै वै है। इणरै पाखती सैनडा कळा कृतिया कळा-कक्षरी सोभा कधाय रैया है।

आपरै ग्रंथालैमें, शोधन, कर्तावानै जोयीजती सामगरी, सोरी-सोरी-सोरी मिळसकै है नै बैठै ई बैठार आपरो काम-काज करणेरा सुभीतो ठूक सकै है।

राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर रै आप सस्थापक सदस्य है। दशाब्दी सम्मेलन माथै, अकादमी, आपनै 'राजस्थान रै वरिष्ट साहित्यकार' रै रूपमें सुवरण पदक सू अलकृत किया हा।

राजस्थानी भासा नै साहित्यिक मान्यता मिळणै रै मोटै हरखमें, सोनगिरी कूवैरै खनै होवणियै विसाल समारोहमें, आपरी वरसरी अगली आयुरी प्राप्ति री खुसीमें आपरो नागरिक सनमान हुयो हो।

श्री नाहटाजी, शोध सवधी अर बीजा उपयोगी विसया पर तीन हजार वेसी लेख लिखिया है, जिकै, भारत रै लगै-रगै सगलैई नवजादीक पत्रोंमें पिरकासित हुय चुका है। अर हालताई लिखताई जाय रैया है—लिखताई जाय रैया है। दिन अर रात। साधना रतयोगी अर सतरी तरै। थकण रो नावई को लेवैनी।

आप मोकळी पोथ्या निरमायी है अर मोकळया रो सपादन करियो है, जिकारी साहित्य जगतमें मोकली सरावणा हुई है।

अवार इणी जुलाई मास सन् १९७१ री ११ वी तारीखनै, राजस्थानी भासा पिरचार सभारी परिख्या समिति, आपरै दीक्षान्त समारोह [कीकाणी व्यासा रो चौक, बीकानेर] में आपनै मानद [ऑनरैरी] उपाधी "राजस्थान साहित्य वाचस्पति" सूं अलकृत किया हा।

ग्रथालै ने, भरो-पूरो राखण सारू, आप साहित्यिक सामगरी नै कळा-कृतियाँ री प्राप्तिमें, खुलै हाथा खरच करै है। पण, इया, बीजी वातामें पाई-पाई रो है साव करणमें आप "पक्का वाणिया" है।

आपरो, अन्तसरो ध्येय, सरसुती री साची सेवा, नैं अन्तसमें सतगुरुजी रै चरण कमळा सूं उभर-चोडी धरम भावना नैं, खण-खणमें बद्योत री दैणं रो है।

'वाणियो अर लिखमी' नातो आदू सूं है। जद लिखमी री साधना-मानता सूं। आप विरत किया रैय लकै है? सालमें तीन महीना, आप, दुकानो रो काम-काज सभालण सारू बारै जावै है, बाकीरा नव महीनामें सरसुती री साधनामें अवधूत बण्या जुरया रैवै है। इसै बडै नाव अर ख्याति रै मिनख सू, कोई देस-परदेस रो छावा विदवान अर सिख्य सासतरी, कदैई सजोगबस मिलण नैं पधारै, तो, उणरी मनो कल्पित मूरती सूं पखार एक बीजोई अलोदरी सिकल-आधी धोती पैरियोडी नै आधी ओढियोडी, सीधी-सादी, पण आपरै अन्तसमें अगाध पाडित्य भरियोडी नैं जोय' र, एक रसी तो, लाई चकरीज जावै अर खण भर सोचण नैं बेबस हुय जावै, कै वो, 'अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति वालै मोटै विद्वान श्री नाहटाजी सूं मिल रैयो हूँ कै कोई बीजै सू? कदास, वैरी ओळखाणमें भूल तो नही हुयी है? भलै जद चरचा छिडै तद, वो सतोस री सास लेवै कै है तो ऐईज नाहटाजी। जद बारै, अगाध ज्ञान सू तिरपत होय' अर सरधासूं वानै माथो निवाय है।

श्री नाहटाजी, खुद तो, साहित्य रा 'डाक्टर' कोनी पण सैकडी सोध विद्वाना नैं मारग दरसण देय र डाक्टर वणाय दिया। अै, खरै अरथामें 'डाक्टर रो जामणा' है। आकैवा तो, अण आपतर नैं अलोदारी बात नी लागै।

ओ हुयो आपरो साहित्यिक रूप जिकै ऊपर अन्तस रै अजळासरी गैरी छाप खरैखर पडी है। बिना, इया, हुया, साहित्य सूका, सूना, अरस अर ऊण उपयोगी रैय जावै।

अबै जोवो, इणा रो मायलो धरम रूप —

(१) आप, ध्यान-धारणामें सतरै आना खरै-खर।
(२) जीरणामें अजोड।
(३) समै रा पावद।
(४) समैरो खरो मोल जाणनिया।
(५) साधु पिर किर तीरा।
(६) बिना मोट-वडाई सगळा सूं मेळ-मिळाप।
(७) साहित्यकार बंधुवारै घरै जाय र, उणारी सुख-सायत पूछणमें व उणारी साहित्य-संरचनाॅ रो ब्योरो पूछणमें तत्पर।
(८) ढीलास, जोय र अणांनै प्राणमयी प्रेरणा देखणमें आगै।
(९) सुख-दुखमें, बणै जिसी, उणानै, सारी तरैरी सायता देवणमें त्यार।
(१०) चरो भेळो कर र अथवा बीजै उपावासू उण बधुवारै रचियोडै ग्रथानै छपावणमें पिरयतनसील।
(११) सादो वेस--सादो ढग।
(१२) ऊँचा उजळा विचार।
(१३) वैर-विरोध, राग-द्वेस सूं परै-घणापरै।
(१४) देव-पुरस अर परकास-पुज।
(१५) मानखै नैं, ऊजळो-फूटरो वणावणमें कमर कसियोड़ा।

इसा महापुरसानै जलम देय र भूमी धन-धन हुई है ।

म्हारी मोकळी आसीस है के श्री नाहटाजी, दीर्घायु, शतायु अर चिरजीवी रैय 'र, आपरै पाडित्ये अर संत पणै सूं मान खैरी सेवा करता रैवै । इणी मगळमयी कामना रै सागै, हूँ, म्हारी लेखणीने विसराम देवूं हूँ ।

●

मां राजस्थानी रा समरथ सपूत नाहटोजी

श्रीलाल नथमलजी जोशी

इतिहास बतावै कै झूपड्यामें रतन जलमै, गढामें सूरमा अवतरै अर हवेल्यामें वौपारी सेठ पैदा हुवै । इसा अपवाद जोया भी नीठ लाधसी के हवेलीमें, लिछमीजी रै घरमें, कोई सरस्वती रो पूत जलमग्यो हुवैं । लिछमी रै घरमें जलम लेवण कारण सरस्वती नै काई पडी कै वा टाबर री देख-रेख करै ? नतीजो ओ हुयो कै सरस्वती रै मिंदरमें टावर रो प्रवेश ई नई हुयो । अर जे हुयो, तो खाली नाव रो । सरस्वती री तरफ सूं छिटकायोडो देख्यो, तो लिछमी उण टाबर नै थपथपायो—आ बेटा, तू क्यूं घबरावै ? थारी मा तनै नई लडावै, तो कोई बात कोनी, हूँ भी थारी मा हूँ, म्हारे घरै तै जलम लियो है । जद लिछमी टावर नै आपरी छत्तरछैयामें लेवण लागी. तो सरस्वती नै कद बरदास हुवतो ? बा बोली—क्यू वैन, पारका पूत किया खोसण लागगी ? लिछमी कैयो—थारो अैतराज तो ठीक है, पण म्हारै घरमें जायोडै माथै की तो म्हारो ई अधिकार हुवैलो ?

आमतौर सू लिछमी अर सरस्वती आपसमें झगडो ई राखै, आपसमें समझो तो कदमकाल ई करै, पण इण मौके सुमत सूझी । लिछमी बोली—"बेटो तो थारो है, पण अगरचद महना खातर म्हारी हाजरी में तू भेजती रैवै, तो फेर मनै कोई अैतराज कोनी । बारै महनामें नव मइना थारा, तूं मा है, लारला तीन मइना म्हारा सरस्वती अैकर तो विचारमें पडगी, फेर उदारता बरतता हंकारो भर लियो ।

लिछमीजी टुरण लाग्या । वारी जीभ माथै अै सबद उथळीजता हा—"अगरचन्द मइना, अगर चन्द, अगर चन्द ।" वानै ध्यान आयो अर सरस्वती नै कैयो, आपारै करार नै तूं भूल नईं जावै, इण कारण इण री नाव हूं थरपसु—अगरचन्द । अगर अर चन्नण ज्यूं आपरी मैक सूं वातावरण खुसबू फैलावै, इणी तरै थारो औ लाल आपरी कीरत दिग्दिगतमें फैलासी, पण वीस बरसा री ऊमर पाया अगरमें रस भरीजे, इण कारण अगरचन्द री कीरत भी वीस वरसा रो हुया फैलणी सरू हुवैली ।"

वीकानेर रै धनी-मानी सेठ संकरदानजी नाहटै री धरमपत्नी श्रीमती चुन्नीवाई री कूख सू सं० १९६७ री चैत वदी ४ नै हुयो । वा दिना बीकानेरमें सरकारी मदरसा तो हा, पण रवीन्द्रनाथ ठाकुर ज्यूं इस्कूली पढाईमें ही टावर नाहटै री पढाई पुण हुणै जोग नईं : इणी कारण वा पढाई पाचवी किलास सूं आगै नईं चाल सकी । उण जमानेमें साधारण काम चलावण सारू पाच किलास अग्रेजी रो ग्यान भी काफी हो, घर रा कारबार हुवण रै कारण नोकरी तो जोवणी ही कोनी ।

इस्कूल तो छूटगी, पण आपरै मनमें ग्यान री जिकी भूख ही, वा भी वुझगी हुवै, आ वात कोनी वा तो दिनूं ड़े दिन वधती ई गई । इण कारण आप साहित्यिक अर सामाजिक अनेक विपया री पीथ्या

रो अध्ययन कर्‌यो। जद घडो भरीजै तो पाणी वारै आवैं ई। अठारै बरसा री ऊमरमें आपरै विचारामें परिपक्वता आवण लागगी अर उणी दिना आप 'विधवा कर्त्तव्य' नाव सू हिन्दीमें पोथी लिखी जिकी स० १९८६ वि० में छपगी।

गौतम बुद्ध नै हर बगत ऊंडै विचारामें डूब्योडा देखर माईत डरचा कै बेटो हाथ माय सूं निकळै है। इणी तरैं व्यापार खानी कम रुचि अर साहित्यमें अगाध प्रेम देखर आपरै माईना सोच्यो कै टावर हाथ सू नईं निकट जावै। ज्यू राजस्थानी साहित्य री भूख तिस डाक्टर टैसी टोरी नै अळेगी इटली सूं ठेट भारत अर बीकानेर तईं लिआई, इणो तरै ग्यान री भूख तिस सू युवक नाहटो जी इत्ता तडफण लागग्या कै आपरो निजू ग्रन्थागार वणाया बिना काम पार पडतो ओखो लागण लागग्यो। इण कारण आप जेष्ठ भ्राता स्व० अभयराजजी री यादमे श्री अभय जैन ग्रथालय री स्थापना करी, जिणमें आज चालीस हजार छप्पीडी पोथ्या अर लगभग चालीस हजार ई पाण्डुलिप्या है। शोधार्थिया-सारू इत्ती सामग्री अेक ठौड मिलण आळा इणी-गिणी सस्थावामें इण रो स्थान है।

इण ग्रंथालय री स्थापना सू आपरै ग्यानार्जन री लगन तो सावित हुवै ई है, इण रै सागै समाज नै लाभान्वित करण री अर स्वार्थ-त्याग री भावनात्रा भी चवडै आवे। इसा मोकळा मिनख है, जिका हजारूं ग्रन्थ आपरै निजू सग्रहमें घर राख्या है, पण दूजै आदमी नै पोथी रै आगळी ई लगावणदै कोनी, बाचण खातर देवणो तो अळगो रैयो। पण नाहटैजी रै ग्रन्थालय रो ना तो कोई प्रवेश शुल्क है, ना मासिक शुल्क, ना बठै जामनी रा रुपिया भरणा पडै। आप पाच, दस, बीस, जचै जित्ती पोथ्यां घरे लावो, परोटो, लिछमी रै लाडलैमें इत्ती उदारता ? पण बेटो सरस्वती रो है नी। इण उदारता रो दुरुपयोग भी हुवै- कोई पोथ्या पाछी आवै कोनी, केई फाट-फूटर आवै, पण फेर भी पढारा खातर श्री अभय जैन ग्रन्थालय रा बारणा खुल्ला है।

छोटा तो बडां नै जाणै पण बडोडा छोटा नै ओळखै कोनी। नाहटैजी नैं आज सू ३६ बरसा पैली म्हैं जैन-समाज रै अेक उत्सव माथै देख्या। रामपुरिया जैन स्कूल रै विद्यार्थी रै नातै, म्हारो भी अेक-दो गीत गावण रो 'आइटम' हो। हजारू मिनख लूगाया री भीड, अेक तेईस-चौईस बरसा रो पछो जवान— तीन लाग री धोती, चुण्योडो चोळो, केसरिया पाघ—राजस्थानीमें भासण देवै। उण बगत मनैं ठा पडी कोनी कै वक्ता राजस्थानी अर शोध रा उदीयमान विद्वान श्री अगरचन्दजी नाहटो है। इण रै थोडा वरसा पछै जद राजस्थानी विद्यापीठ रै तत्वावधानमें साप्ताहिक गोस्ठ्यामें मिलणो हुयो, तो वो जूनो चितराम फेर उभरग्यो अर ध्यान आयो कै उण दिन श्री अगरचन्दजी नाहटो ई हा।

जिका अणजाण शोधार्थी बारै सू PH D करण खातर नाहटैजी कनै आवै, वारी कल्पना सदेई धोखा खावती रैसी। आज जद आडै सू आडो आदमी पैंट पैरै इण हालतमें आवणआळा रै मनमें भाव उठै—नाहटोजी मूछया सफाचट राखता हुसी, टेरालीन रा पैंट-बुशर्ट पैरता हुसी, टाई तो पक्कायत लगावता हुसी, काईं ठा बीकानेर यया सू बोलसी' क नी ? पण अठै आया सगळा भय भाग जावै। कल्पतरु ज्यूं आप सगळी मनोकामना पूरै। तरु इण खातर कै ग्रन्थालयमें आया पछै 'तरु' खिसकै तो खिसकै—ईत्ता आप आसण रा साचा है। इणी कारण जिका भी शोधार्थी अठै आवै, बारो सगळो प्रयोजन सध जावै अर वै पाछा हरख्या हरख्या जावै।

डा० टैसी टोरी, प० सूर्यकरणजी पारीक अर प्रो० नरोत्तमदासजी स्वामी राजस्थानी भासा रै प्रचार वावत जिको काम सरु कर्‌यो, उण सू नाहटोजी वेगा ई प्रभावित हुयग्या अर आपरी आ धारणा

वणगी कै राजस्थानीभासा नै पनपावणो चाईजै, कारण अठै रै टावरा र बौद्धिक-विकास तदे ई सभव है जद कै बानै सरू सूं मायड भासा रै माध्यम सूं पढाई कराईजै। इण कारण आपरो प्रमुख विषय प्राचीन ग्रथा माथै शोधकार्य हुवता थका भी राजस्थानी भासा रै प्रचार खानी भी आप पूरो ध्यान दियो। राजस्थानी सू रुचि राखणियो जिको आदमी आपरै ध्यानमें आय जावै, वो फेर आपरी निजर सू ओलै नईं हुय मकै।

राजस्थानी विद्यापीठमें रचनापाठ री वेळा नाहटैजी सूं पैली वार परिचय हुयो, फेर जद विद्यापीठ री गोस्ठ्या तो बध हुयगी ही, पण 'राजस्थान भारती' रो अक त्यार करणो हो, तो राजस्थानी विभागमें रचना देवण खातर आप मनै याद कर्‌यो। मनै सनेसो मिल्यो कै नाहटैजी अेक कहाणी मगवाई है। नाहटैजी जिसा विद्वान म्हारै कनै सू कहाणी मगबावै, अर वा भी 'राजस्थान भारती' में। म्हारै खातर आ घणै हरख री वात ही अर इण तरै म्हैं म्हारी पैळी राजस्थानी कहाणी 'छत्तरछैया' त्यार करी। उण सू पैली म्हारी राजस्थानी अर हिन्दी री दूजी रचनावा छप जरूर चुकी ही।

इण सू पैली री अेक घटना रो उल्लेख भी जरूरी लागै। गुणप्रकाशक सज्जनालयमें राजस्थानी-गोस्ठी रै दौरान म्हारी अेक रचनामें म्हैं—गाव सू वैन नै लावण खातर—'बाथड' सवद रो प्रयोग कर्‌यो। नाहटोजी धीरै सीक बोल्या 'बाथड' री जागा 'रळी' सबद ओपतो है। म्हैं उणी वगत सुधार कर लियो। मनै ख्याल भी आयो कै सायद पैली ही सबदा रै अरथ माथै इत्तो विचार नईं करतो, पण नाहटैजी रे सुझाव पछै हूं ध्यान राखण लागग्यो।

देखणमें तो ऊ ऊरवै है कै जद विद्वाना रै घरे जावा तो बानै बोलण खातर ई फुरसत नीठ लाधती दीसै, अर बै जे बोले तो भी इसा भाव वताया बिना नई रैवै कें आगन्तुक माथै किरियावर करै हैं। पण नाहटोजी खाली बोलण री फुरसत काढ र ई राजी नईं हुय जावै, राजस्थानीमें दो आखर माडणिया लिखारा रै घरे भी पूग जावै अर बारो लेखो-जोखो देखै अर तेज गत सू लिखण री प्रेरणा देवै। प्रसिद्ध विद्वानामें इण तरै प्रेरणा देवणआळा नाहटोजी संभवत अकेला ई है। अेक पाश्चात्य लिखार बावत भी म्हैं वाच्यो कै वै छोटै-मोटै लिखारा रै कागदा रो उथळो पक्कायत देवता, पण नाहटैजी ज्यू घरे जायर सँभाळणआळा विद्वान आज तइ सुण्या-देख्या कोनी।

नाहटैजी री आ प्रेरणा-फेरी घणी फळदाई हुवै। कलम काटी ज्योडा म्हारै जिसा कदमकाळै लिखणिया भी विचारमें पड जावै कै इया पोल चलाया सरै कोनी, अर अबकै नाहटोजी आवै जित्तै कीन-की ओपती रचना जरूर त्यार रैवणी चाईजै। वे पूछसी कई लिख्यो र लिख रहत हो।

जद स्वामीजी रो स्थानान्तरण बीकानेर सू वारै हुयग्यो तो साप्ताहिक गोस्ठ्या रो काम नाहटैजी इन्स्टीट्यूट रै अन्तर्गत लेय लियो और वरसा तई आपरै अभय जैन ग्रन्थालयमें गोस्ठ्या हुई, जिणामें उपस्थित हुवणआळा। सगळा ई कोई-न-कोई नवी रचना लाएर सुणावता।

शोध रा विद्वान आमतौर सू हस्तलिखित ग्रन्था माथै शोध करै अर आपरी मान्यतावा रै आधार माथै योमिम अयत्रा नत्रो ग्रन्थ त्यार करै। नाहटाजो इण दरजैमें नई आवैं। आपरो प्रमुख काम तो है हस्तलिखित ग्रथा माथै नईं पण वारी आपरी खोज करणी। जद भी आपनै मालम पडै कै फलाणी जागा फलाणो ग्रन्थ उपलब्ध हुवण री संभावना है तो आप उणनै पावण सारू कोई कसर नई राखै—आपरा आदमी भेजै, पइसो खरचै अर खुद भी गाव गाव घूमै।

शोध रै सागै आप कळा रा भी मोटा पारखी, प्रेमी अर हिमायती है। इण कळा-प्रेम रै फळ-सरूप ई आप स्व० पिताजी सेठ शकरदानजी नाहटै री स्मृतिमें अेक कला-भवन री भी थरपणा करी है,

जिणमें सिक्का, मूरत्या अर कळा-कृतिया रै सिवाय तीन हजार दुरलभ चित्र भेळा कर राख्या है। नाहटैजी रै इण कळा प्रेम सूं कळा सागै लगाव राखणिया लोग परिचित है अर प्राय रोजीनै कोई-न-कोई आदमी कोई चित्र या कळाकृति लेयर आपरै कनै पूगै ई है। इण तरै इण कळा-भवन री श्री वृद्धि रा बारणा भी खुल्ला है अर इणमें सदेह नईं कै अेक दिन आपरो कळा भवन भी ग्रन्थालय जिसो बडो आकार बणाय लेसी।

धरम, साहित्य अर इतिहास रै क्षेत्रामें आप जिकी अमोलक सेवा करी है, उण रै प्रताप आप क्रमश 'विद्यावारिधि', 'सिद्धान्ताचार्य' अर 'इतिहास रत्न' जिसी रळियातणी उपाधिया सूं अलकृत हुया है तथा न्यारै-न्यारै क्षेत्रामें आपरो जिको सेवा है, उण पर हरेक माथै न्यारो ग्रन्थ लिखीजण री गुजायश है।

इणी तरै आप द्वारा रच्योडै अर सपादित ग्रन्था माथै भी घणै विस्तार सू लिख्या पार पडै। आपरा निबध भी सैकड नई हजारा री सख्यामें है, जिण स आपरी साधना रो अन्दाजो सहज ही लाग जावे।

म्हारै विचार सूं **नाहटैजी कनै जे सगळा सूं बडो कोई चीज है- तो बा है,—साधना, साधना** अर हूं समझ कै जे नाहटैजी नै 'साधनाचार्य' री उपाधि जे दी जावती, तो बा सभवत सगल्या स वेसी ओपती लागती।

इणी तरै नाहटैजी री अन्यत्र दुर्लभ विशेषता रो बखाण भी कर्‌या विना रैईजै कोनी अर बा है आपरी अक्रोध री वृत्ति। आप सूं ऊँचा अर बडा कनै सू तो सगळा ई लोग खरी-खोटी बात दोरी-सोरी सुण लेवै, पण आपरी बराबरी आळै अथवा आप सू नीची हैसियत आळै सू हळका बोल सुण्या पछै भी सेर रो उथलो सवा सेर सूं नई देवै, इसा 'स्थितप्रज्ञ' धरती माथै नीठ निरावळ ई लाधै। **भगवान नाहटैजी नै अक्रोध रों गुण उदारता सूं वांट्यो है।** छोटा री मूरखता भरी छेडछाड माथै भी आप उखडै कोनी, मुळकै—सायद भगवान सं अरदास करै कै थोडी सावळ बुद्धि देवै तो ठीक रैवै। व्यक्तिगत जीवणमें आपरी क्षमा रा दरसण हुबता ई रैवै।

आपरी षष्टिपूर्ति रै अवसर माथै अनेक आयोजन हुया, जिणामें बीकानेरै सोनगिरी चौक रो आयोजन परम विशाल हो। जठै म्हारै साथ्या नै डर हो कै उपस्थिति काईं ठा कित्तीक हुसी। पण बठै तो मिनख माया ई कोनी। इण सभा रो सभापतित्व डा० मनोहर शर्मा कर्‌यो अर आयोजन बीकानेरी प्रमुख सात शैक्षणिक, साहित्यिक व शोध संस्थावा री तरफ सू हुयो, जिणामें राजस्थानी भासा समिति, बीकानेर, अग्रणी ही।

नाहटोजी धर्मनिष्ठ व्यक्ति है। आप नेम सू भजन-पूजन आराधना करै। धरम रे करडै नेमा नै भी आप पाळै। उदाहरण सारू जेठ असाढ री गरमीमें भी आप सूरज आथम्या पछै जल नई पीवै। ईण धार्मिक साधना रो वेळा भी सरधालू लोग आपरो सान्निध्य-लाभ उठावै अर सिझ्वा री प्रार्थना आपरै सागै कर्‌या करै। पण इण साधना रै विचाले भो के कोई साहित्य-प्रेमी आयग्यो तो उण रो माग पैलों पूरा करण रो—पोथी या सुझाव देवण रो ध्यान पक्कायत राखसी। औ इण बात रो सबूत है कै धर्मनिष्ठ हुवण रै साथै साहित्य नै आप सर्वोपरि दरजो देय राख्यो है।

म्हारा केई साहित्यकार भाई तो सवाल उठावै नवी अर पुराणी पीढी रै सघर्ष रो, पण नाहटैजी नै हमेसा इण बात रो फिकर रैयो है कै साहित्यकारा री नवी पीढी त्यार हुई कोनी। जे कोइ कदमकाळ अेक-दो ओळ्या माड दै तो उण स् की हुवणी जाणी कोनी। इण कारण जठै भी नाहटैजी नै थोडसीक

प्रतिभा रा दरसण हुवै वै उण नै आगै लावण री चेष्टा करै। स्व० गिरधारी सिंहजी पड़िहार जदपी राजस्थानी में घणा बरसा सूं ओष्ठखीजताको हा नी, पण जद वै अेकाअेक आगै आया, तो झट बारो नाव 'बाठिया पुरस्कार' सारू सामनै आयग्यो।

दूजै सेठा सारू ज्यूं इष्ट रुपियो है, नाहटैजी रो इष्ट साहित्य है। बीकानेर री जैठ असाढ री गरमीमें थे-म्हें बैठा अळसावण ळाग जासा अर तावडैमें आडा हुयर तीन-च्यार घटा मजै सूं गमाय देसा, पण (**वगत गमावणो नाहटोजी सीख्या ई कोनी**) मौसम रो इणा माथै असर कोनी। सरदी रै डर सूं वैगा विछावणांमें बडै कोनी तो गरमी रै कारण उबास्या नै नूतो देवै कोनी। जिको आदमी इण तरै अथक गति सू साहित्य रै सागरमें डूबक्या लगावतो ई रेवै, बो पक्कायत सागर-तळ सूं घणमोला रतन काढर लावै अर तीर माथै ऊमोडा अनुभवी अर विद्वान चकरायोडा हुवै ज्यूं देखता रैवै। 'चरैवेति चरैवेति'— चालता रैवो, चालता रैवो, इण सूत्र नै नाहटैजी आपरे सामनें राख्यो हुवै ज्यूं माळम पडै। फेर वें ऊचै आसण रा अधिकारी किया नई वणै ?

घणी वार देखणमें आई है के आछा-आछा लिखार भी मंच माथै उभर आपरा विचार सावळे जाहिर कर सकै कोनी, कारण वक्तृता भी तो खुद अेक कळा है। आ कळा भी किणीमें ईश्वर-दत्त ई हुवै, जरूरी कोनी। जिका लोग सरूमें मंच माथै, ऊभता ई धुजण लाग जावै, याद कर्‌योडी या घोट्‌योडी बाता अेकदम भूल जावै अर जिका री आख्या आगै जमीन घूमती लागै, वै ई सागी लोग अभ्यास करता करता धडल्लै सूं भाषण देवण लाग जावै। नाहटैजी भी आपरै जीवणमें साहित्यिक ज्ञान रै सागै-सागै भाषण कळा रो क्रमिक विकास कर्‌यो है, अर आज तो आपरी शैली इत्ती मनभावणी है कै अनेक विश्वविद्यालया री तरफ सूं आपरे कनै भाषण सारू निमन्त्रण आवता ई रैवे है।

इण सबधमें नाहटैजी री कळकत्ता-यात्रा री चरचा भी करीज सकै है। बठै अेक सार्वजनिक सभामें आप राजस्थानी भाषा बाबत परिचयात्मक भाषण दियो जिण सूं प्रभावित हुयनै स्व० सेठ सोहनलालजी दूगड उणी वगत पाँच हजार रुपिया रो चेक राजस्थानी री पोथ्या छपावण सारू भेंट कर दियो। उणी रकम सूं म्हारी पोथी—'सबड़का', व्यासजी री 'इक्कैवाळो' अर डा० जयशकर देवशकर जी री 'प्रकृति से वर्षा ज्ञान' दो भागामें छपी।

राजस्थान भासा प्रचार सभा, जयपुर (परीक्षा विभाग, बीकानेर) रै पाठयक्रममें शोध रै छात्रा सारू 'राजस्थानी साहित्य वाचस्पति' री उपाधि रो प्रावधान है। इण उपाधि सूं वै विद्वान भी सम्मानित कर्‌या जा सकै है, जिका री साहित्य, इतिहास, संस्कृति आदि रै क्षेत्रामें नामजादीक सेवा गिणीजती हुवै। भासा प्रचार सभा री तरफ सूं जुलाई १९७१ में अेक विराट आम सभा हुई जिणमें राजस्थानी रै तीन विद्वाना नै 'राजस्थानी साहित्य वाचस्पति' री उपाधि सू सम्मानित कर्‌या। अै है सर्व श्री अगरचंदजी नाहटो, मुरलीधरजी व्यास, 'राजस्थानी' अर सीतारामजी लाळस।

नवी पीढी रा कैवावाणिया के ई लोग छाटा म्हाखै कै पुराणी पीढी रा लोग खाली वोदी पोथ्या सूं माथो लगावता रैया, इण रै सिवाय बा राजस्थानी री कोई सेवा नई करी। इण सदर्भ आ बात भुलणजोग कोनी कै राजस्थानी नै जिकी साहित्यिक भाषा रै रूपमें मान्यता मिली है, उणरो सेवरो आपानै प्राचीन साहित्य रै माथै ई बाधणो चाइजै, नवो साहित्य हाल इत्ती प्रचुर मात्रामें लिखीज्यो कोनी कै आपा छाती ताणर उभ जावा। **प्राचीन साहित्य नै जिका साधक अर तपसी प्रकाशमें लाया है, बारै माय नाहटैजी रो प्रमुख स्थान है।** इण कारण राजस्थानी री साहित्यिक मान्यता सारू आपा प्राचीन

लेखका-कविया रो जिया आभार माना, बिया शोध विद्वानां सारू भी आभारी हुवणो जरूरी है। लोकमें प्रसिद्ध है—भीतडा पड जावै, पण गीतडा रैय जावै । ठीक है, गीतडा रंय जावै, पण गीतडा री पोथ्या भी पडी-पडी दीमका रो भोजन बणण लाग जावै । अर जिका श्रमशील साधक आ पोथ्या री रिछपाळ करै, भूल्यै-बिसर्यै लिखारां कवियां नै पाछा प्रकाशमें लावै, बै आपारी घणी-घणी सरधा रा पात्र है। इण पात्रतामें नाहटैजी रो नांव निश्चित रूप सूं अग्रणी है।

बीकानेर अर राजस्थान प्रदेश ई नईं आखै देस खातर आ गौरवै री बात है कै नाहटैजी जिसा विद्वान आज आपां रै बिचाळै है अर उणा री षष्टिपूर्ति माथै च्यारूमेर सू उणा रै अभिनन्दन सारू शुभ-कामना संदेश आवै अर अेक अभिनन्दन-ग्रंथ आपा उणानै भेट करा।

भगवान सूं प्रार्थना है कै नाहटैजी नै सर्वथा सुखी राखै ताकि बै साहित्य-साधनामें अबार ज्यूं ई दत्तचित्त हुयोडा रैवै अर मा राजस्थानी अर आखै देश री सागोपाग सेवा करता रैवै।



स्मृति पटलपर तैरते श्री नाहटाजी

श्री दीनदयाल ओझा

मैं जब भी मेरेपर अनुकंपा रखने और मार्ग दर्शन देनेवाले साहित्यकारोको स्मरण करता हूँ तो सर्वप्रथम श्री अगरचन्द नाहटाके दर्शन करता हूँ। श्री नाहटाजी को 'साहित्य रत्न' की परीक्षासे पूर्व मैं नही जानता था। हाँ उनके उद्धरणोंका प्रयोग अवश्य स्थान-स्थान पर किया करता था। जब मुझे 'राजनीति रत्न' करनेका अवसर मिला और पुस्तकें लेने गुरुवर श्री अक्षयचद्रजी शर्माके साथ 'अभय जैन ग्रंथालय पहुचा तो वहाँ श्री अगरचदजी नाहटा बनियान पहने, पालथी लगाये कुछ किताबोको देख रहे थे। उनके चतुर्दिक् किताबो-पत्रो और हस्तलिखित ग्रथोके ढेर थे। मैं समझ गया कि श्री नाहटाजी यही हैं। मैंने प्रणाम किया और श्री शर्माजीने मेरा परिचय कराते हुए कहा—ये दीनदयाल ओझा हैं, हमारे भारतीय विद्यामंदिरके छात्र हैं, इन्हें पुस्तकोकी जरूरत हो तो आप मेरे नामसे दे देना।

इतना सब कुछ सुन लेनेके उपरान्त श्री नाहटाजीने मेरी ओर ध्यानसे देखा। मुझे लगा आज परीक्षा हो रही है पर उन्होंने मुझे कहाँके हो, कहाँ काम करते हो आदि प्रश्न पूछे और उठकर जो किताबें चाहिए थी नाम पूछ-पूछकर मुझे ला दी और अपने रजिस्टरमें लिखने और हस्ताक्षर कर देनेको कहा।

मैंने जब यह कहा कि मैं जैसलमेरका हूँ तो उन्होंने तुरन्त ही कहा कि तुम्हें तो जैसलमेर पर लिखना चाहिए। मैं उन दिनो लेखनकी ओर प्रवृत्त नही हुआ था, अत मैंने कहा—क्या लिखूँ, किसपर लिखूं ? बडे सहज भावसे उत्तर देते हुए कहा—तुम जैसलमेरके हो और यह कहते हो किस पर लिखू। वहाँके तो एक-एक पत्थर, एक-एक गीत, एक-एक कथा, एक-एक भवन पर बीसो लेख लिखे जा सकते हैं। तुम लोकगीतो और लोक कथाओंपर लिख लावो। और कुछ न हो सके तो जैसलमेरी बोलीमें ही लिख लाना मैं छपवा दूंगा।

मैं दूसरे दिन दो रचनाएँ लेकर श्री नाहटाजीके पास पहुँचा। उन्होने मुझे पढकर सुनानेको कहा। जैसे ही मैंने रचनाएँ पढकर सुनाई उन्होने तुरन्त ही कहा—बडा अच्छा लिखा है और लिखो मैं छपवा दूँगा।

कुछ दिनो पश्चात् मेरी वे रचनाएँ 'मरु भारती' (पिलानी) में छपी। उन मुद्रित रचनाओको आज जब भी याद करता हूँ तो मुझे ऐसा लगता है जैसे श्री नाहटाजी लेखनकी निरन्तर प्रेरणा देते जा रहे हैं कि तुम लिखो।

इस घटनाके पश्चात् श्री नाहटाजीसे सबध उत्तरोत्तर गहरे होते रहे और मैं वहाँ बैठकर लिखने, पढने और नोट लेने का कार्य करता रहा। मुझे हस्तलिखित ग्रथ पढने नही आते थे। कई अक्षर बडे अटपटे लिखे होते थे। श्रीनाहटाजीने इस समस्त बाधाओसे समय समयपर सहायता देकर पार किया। परिणाम यह हुआ कि मैं अनूप सस्कृत लाइब्रेरी और अन्यान्य ग्रंथागारोके प्राचीन ग्रथ पढने ही नही लगा अपितु उन्हें सग्रह भी करने लगा। आज भी कोई प्राचीन हस्तलिखित प्रति पढने बैठता हूँ तो उन दिनोकी समस्त बातें आँखो आगे आ खडी होती हैं।

बढते हुए इस सपर्कका एक और सुपरिणाम निकला। वह यह था कि मैंने सार्दूल राजस्थानी इन्स्टीट्यूटकी सदस्यताका आवेदन पत्र दिया था। उन दिनों श्री नाहटाजी इन्स्टीट्यूटके अध्यक्ष थे। उन्होने एक लेख लिख लानेका कहा। मैंने एक सुन्दर लेख तैयार किया और उसे पढकर एक गोष्ठीमें सुनाया। इस बीच मेरे कई लेख विभिन्न पत्रोके द्वारा प्रकाशमें आ चुके थे। श्री नाहटाजीने मुझे इन्स्टीट्यूटका सदस्य ही नही बनाया अपितु साहित्य परिषद् का भी सदस्य बना दिया। आज भी जब कभी इन्स्टीट्यूट जाता हूँ तो वे दिन स्मरण आए बिना नही रहते।

नाहटाजी सौजन्यकी तो मूर्ति हैं। जब कभी मेरे योग्य कार्य देखा अथवा कोई बाहरका व्यक्ति भी मिलने आ गया और उसे मेरी सहायताकी आवश्यकता ज्ञात हुई तो तुरन्त नाहटाजीने बुलवाकर उस व्यक्ति विशेषसे मिलाकर सदा आगे लानेकी कोशिश की।

वैसे तो सभी मिलने जुलने वाले होते हैं, परन्तु निरन्तर साहित्य साधनाकी ओर प्रेरित करनेवाले विरले ही होते हैं। आज भी कई महीनोमें कुछ नही लिखा जाता तो तुरन्त बुलाकर यही कहते हैं—क्यो भाई! लिखना क्यो बद कर दिया? क्या किताबें नही या आलस्यमें बैठे हैं? यह मत करो कुछ साहित्य सेवा करो। समय जो जा रहा है, वह लौट कर आनेका नही। अभी तो युवक हो। मेहनत करो। जब भी कोई रचना किसी पत्रमें स्थान पाती है तो मुझे उस प्रथम श्रमका स्मरण हो आता है जो श्रीनाहटाजीकी पावन प्रेरणासे प्रारभ किया था।

प्रत्येकपर स्नेह-वृष्टि करना तो उनका स्वभाव सा हो गया है. निकटका सपर्क होने पर मैं प्राय अभय जैन ग्रथालय जो श्री नाहटाजीका निजी पुस्तकालय है और जिसमें ४० हजारके करीब हस्तलिखित ग्रन्थ हैं, जाता तो वहा नित नूतन सामग्रीके दर्शन होते। श्रीनाहटाजी सदैव जैसलमेर पर लिखनेके लिए अनुप्राणित करते रहते। फलस्वरूप मैंने जैसलमेर पर एक पुस्तक लिखनेका निर्णय किया: जब मैंने 'जैसलमेर दिग्दर्शन' लिखना प्रारम्भ ही किया था तो अनेक कठिनाइयाँ आ उपस्थित हुई। परन्तु श्रीनाहटाजीने उन कठिनाइयोको अपने ज्ञानलोक एव सत्यपरायणता द्वारा दूर किया और पग पग पर मुझे अत्यधिक वात्सल्य भावसे मार्गदर्शन दिया। आज जब भी मैं 'जैसलमेर दिग्दर्शन' को देखता हूँ तो मुझे वे समस्त घटनाए एक साथ स्मरण हो आती हैं।

श्रीनाहटाजीको प्रत्येक विद्वान्से कार्य करवानेकी अनोखी सूझ है। वे जितने ज्ञानी, गुणी और मर्मज्ञ हैं उतने ही व्यवहार कुशल भी। अपने सद्व्यवहार द्वारा प्रत्येकका हृदय जीत लेते हैं। मैं पिछले १५-२० वर्षोंसे उनके सपर्कमें हूँ परन्तु मैंने उन्हें कभी क्रोधित अथवा असंतुलित नही देखा। जीवनमें उन्हें कई ऐसे शोध कार्य करनेवाले नये-पुराने सभी विद्वान् मिले, जिन्होंने सामग्री लेकर अथवा श्रीनाहटाजीसे अपना स्वार्थ सिद्ध करके फिर मुँह ही नही दिखलाया ऐसे व्यक्तियोके प्रति भी उनके मानसमें सदा सद्-भावना ही बनी रही। आश्चर्य तो इस बातका है कि वे जब भी लौटकर नाहटाजीके पास आये तो उन्होने उसी स्नेह भावसे बातचीत ही नही की अपितु उसे हर सकटसे उबारा। यह है श्रीनाहटाजीके हृदयकी पवित्रता और सात्त्विक भावना। आजके इस भौतिक युगमें ऐसे विरले ही पावन हृदय मानव दिखाई देते हैं।

श्रीनाहटाजी बहुमुखी प्रतिभाके धनी हैं। इतिहास, कला, पुरातत्त्व, लोक साहित्य, प्राचीन साहित्य आदि सभी विषयोपर गवेषणात्मक कार्य करना उनका स्वभाव सा हो गया है। मैं जब भी जैसलमेर जाता हूँ सदैव आप कुछ-न-कुछ सामग्री मँगाते ही रहते हैं। एक बार मुझे याद है आपने 'कँडियाके' से पत्थर मँगवाए जो वहाँ विशिष्ट आकारोंमें उपलब्ध होते हैं। जब वे पत्थर मैंने नाहटाजीको ला दिये तो वे बडे प्रसन्न हुए। उन्होने बडे मधुर स्वरोमें कहा—आज आपने मेरा कार्य किया। मुझे बडा आश्चर्य हुआ कि जैसलमेरमें इन पत्थरोका कोई मूल्य नही है परन्तु श्रीनाहटाजीने अपने कला भवनमें इन्हें कितने अच्छे ढगसे सभाल कर रखा है। इसी तरह आपके कला भवनमें चित्र-पट्टिकाएँ, चित्रपट, अन्य कलापूर्ण वस्तुएँ, अलभ्य चित्र-सचित्र ग्रन्थ न जाने कितनी सामग्री आपके पास एकत्रित है यह सब सग्रह-भावना श्री नाहटा-जीकी कलाप्रियताका परिचय देती है। काश ऐसे कलानुरागी राजस्थानके प्रत्येक भागमें होते तो प्रत्येक स्थानकी कलापूर्ण सामग्री आज जिस रूपमें नष्ट हो रही है, नही होती।

नाहटाजीकी सबसे बडी विशेषता मिलन की है। जब भी बीकानेर रहते हैं और अधिक दिनो तक कोई साहित्यकार अथवा लेखक नही मिल पाते तो वे सीधे उनके घर चले जाते हैं और कुशलादि पूछनेके उपरान्त बडे सहज भाव और मधुर उपालंभ देते हुए कहते है क्यों, इन दिनो दिखाई नही दिये ? क्या लिख रहे हो आदि आदि प्रश्नोकी झडी लग जाती है। वह आश्चर्यमें डूबा यही कहता है कोई काम हो गया आदि। इस स्नेह भावको जब गहराईसे देखा जाय तो प्रतीत होता है कि वे कितने सहृदय और छोटे बडेके भेद-भावसे परे हैं। उनके दिलमें जो लिख रहा है वह लेखक है और आज नही तो कल विकासकी ओर बढेगा। अत उसे हर दिशामें प्रोत्साहन मिलना चाहिए। अगर प्रोत्साहन पूरा नही मिला तो यह विकसित होनेवाला पुष्प अपने यौवनसे पूर्व ही मुरझा जायेगा। साहित्य जगत्की कितनी बडी क्षति होगी। अत नित नई पौध तैयार करना, उन्हे समुचित सहायता एव मार्गदर्शन देना उनका स्वभाव सा हो गया है।

राजस्थानी भाषा साहित्य, सस्कृति और पुरातत्त्वके आप अन्यतम अनुरागी हैं। जहाँ कही भी राजस्थानीकी चर्चा होती है, वे सदैव आगे रहते हैं। हृदयमें अपनी मातृभाषाके प्रति जो सहज अनुराग होना चाहिए वह श्री नाहटाजीके पावन हृदयमें अवस्थित है। और यही कारण है कि वे राजस्थानीके उत्थानके लिए दिन-रात प्रयत्न करते रहते हैं। इस दिशामें उनके प्रयत्न लेखो आदिके रूपमें ही नही व्यक्तित भी सराहनीय एव अभिनन्दनीय है। अगर ऐसे ही राजस्थानी भाषाके हृदयसे अनुरागी दस-बीस

ही हो जावें तो राजस्थानीकी प्रतिष्ठा अपनी चरम सीमापर पहुँच सकती है और उसे अपना उचित स्थान सहज भावसे प्राप्त हो सकता है।

श्री नाहटाजीकी अनेक विशेषताएँ हैं उन विशेषताओंका जिस किसीने उचित लाभ लिया वे वास्तवमें धन्य हो गये। श्री नाहटाजी अपने आपमें एक सदर्भ-पुस्तकालयकी तरह ज्ञान राशिको सजोये हुए हैं। जब भी कभी किसी विषयमें पूछ-ताछ करनी हो तो प्रश्न करते ही तुरन्त उत्तर तैयार है। आजसे शताधिक वर्षों पूर्वकी सामग्री कहाँ मिलेगी किस भण्डारमें है—आपको भली भाँति स्मरण है। यही कारण है कि भारतके विभिन्न भागोंसे आपके पास निरन्तर शोध-छात्र आते है और लाभान्वित होते हैं। राजस्थानी कवयित्रियो पर कार्य करते समय आपने जो सहायता मुझे दी, वह आज भी स्मरण है। अगर आपका उचित मार्गदर्शन न मिला होता तो संभवत मेरा यह कार्य अपूर्ण ही रह जाता।

श्री नाहटाजीके पावन प्रसगोको जब भी स्मरण करता हूँ तो वे एकके बाद एक निरन्तर आते रहते हैं। वस्तुत वे एक सहृदय और सच्चे साहित्यकार हैं जिनका हृदय गगा-सा पवित्र, हिमालय सा सुदृढ और निर्झर सा अमृत वृष्टि करने वाला है। उनका एक ही ध्येय है—निरन्तर कार्य करते रहो। चलते रहो। स्वय काम आपका परिचय देगा। वह घर-घर जाकर आपकी भावनाओंको सुनायेगा। नाहटाजीकी ये पावन प्रेरणा आज भी मुझे अनुप्राणित करती है और जब भी मैं उनके पास आता हूँ तो सामग्री छन्दका ग्रन्थोसे ज्ञान सीखनेके साथ-साथ उनके व्यक्तित्वसे भी बहुत कुछ प्राप्त करता हूँ।

आपके पास भारतके विभिन्न क्षेत्रोंसे अनेक पत्र प्रतिदिन आते हैं। परन्तु आप किसी भी पत्रका उत्तर दिये विना नही रहते। इसी तरह चाहे कोई छोटा पत्र हो या बडा आप उसे लेख अवश्य देते है। ग्रन्थोकी सुन्दर प्रेरणाप्रद, सम्मति देना, आशीर्वचन लिखना भी आपका एक स्वभाव-सा हो गया है। जब मैंने अपने विभिन्न ग्रन्थो पर सम्मतियाँ चाही तो आपने बडी सहृदयतासे उनपर प्रेरणाप्रद सम्मतियाँ लिखकर प्रोत्साहित किया।

श्री नाहटाजीके ये रग-विरगे चित्र जब भी स्मृति पटल पर तैरते उभरते है तो सहज भावसे एक सहृदय साहित्यकारके दर्शन होते हैं जिसे देखकर हृदय गद्गद् होने लगता है और सिर चरणोमें झुक जाता है। ऐसे वरेण्य पुरुषको मेरा भी नमन।

•

श्रद्धेय नाहटाजीसे भेंट

डॉ० व्रजनारायण पुरोहित

जून सन् १९५८ की बात है। सुबहके करीब साढे आठका समय रहा होगा। मैं श्री अभयजैन ग्रथालयके कमरेमें गया। मैंने चारो ओर दृष्टिपात किया तो पुस्तको व पत्रोके अतिरिक्त बहुतसे 'बस्ते' भी रखे हुए नजर आये। चारो ओर देखने लगा। पूर्णत शान्त वातावरण में निस्तब्धताको आघात पहुँचानेवाला वहाँ कोई नही था। मैं 'किसी'के आनेकी प्रतीक्षा करने लगा और सोचने लगा कि बिना किसी पुस्तकाध्यक्षके यह ग्रन्थालय खुला कैसे ? परन्तु मेरा कौतूहल कुछ ही क्षणोमें शान्त हो गया। जब एक-दो पलों के अन्तरसे

ही दो व्यक्ति कमरेमें प्रविष्ट हुए । एक व्यक्तिके पासके कमरेकी पुस्तकोको टटोलकर कुछ ग्रन्थ हाथमें लेकर आया, जो अप-टू-डेट था । दूसरे ही पल एक सज्जनने जूती खोलकर 'कमरे'में प्रवेश किया । ऊची-ऊची पगडी, श्वेत कोट व धोती पहने हुए और गलेमें सफेद दुपट्टा धारण किये हुए थे वे । उन्नत ललाट, गठे हुए वदन व सौम्य स्वरूप वाले उन महानुभावने धीरेसे पूछा "कहिये कहाँसे आये हैं ?"

मैंने कहा, "यही (बीकानेर) से । मुझे श्री अगरचन्दजी के दर्शन करने हैं ।

वे बोले—"रिसर्च करते हैं ?"

मैंने कहा—"जी हाँ, इसी सिलसिलेमें उनसे कुछ निवेदन करना है । वे कबतक आ जावेंगे ?"

उन्होंने मुस्कराकर कहा—"हा, तो फरमाइये न ।"

मुझे वस्तु-स्थिति को समझते देर नही लगी । अपनी झेंप मिटाते हुए मैंने कहा—"क्षमा कीजिए, यह मेरा ही कसूर है कि इसी शहरमें रहते हुए भी मैं आपके दर्शनोसे वञ्चित रहा मैं . "

मैं कुछ और कहना चाहता था पर उन्होने मेरे शोधके 'विषय' के विपय में पूछा । मैंने विषय[1] बतलाया और आवश्यक सामग्री व निर्देशनके लिए निवेदन किया । मैं झिझक रहा था कि अभी तक अपरिचित होनेके कारण मुझे सहयोग मिलेगा या नही ? सामग्री प्राप्त करनेमें बाधाओको निवारण करने हेतु मैंने निवेदन किया—"यदि पुस्तको आदिके लिए किसी जामिनकी आवश्यकता हो तो मैं श्रद्धेय शास्त्रीजी (आदरणीय विद्याधरजी शास्त्री विद्यावाचस्पति) अथवा श्रद्धेय स्वामी जी (विद्यामहोदधि श्री नरोत्तमदासजी स्वामी)से लिखवा कर ला सकता हूँ। और मेरे बडे भाई साहब प० लक्ष्मीनारायणजी पुरोहित एडवोकेटसे परिचित ही होगे ?"

हाँ-हाँ मैं पण्डित जी से परिचित हू और हमारे घरू सम्बन्ध है सभी से । पर अपने यहा सिफारिश की आवश्यकता नही है । सिफारिश इतनी है कि आप रिसर्च करते हैं ।?'

मैं श्रद्धासे नत हो गया और गदगद् होकर उनकी ओर देखने लगा । पर वे तो एक आलमारीको टटोल रहे थे । मैं कुछ कहने ही वाला था कि उन्होने मेरे समक्ष दो ग्रन्थ लाकर रख दिये और कहने लगे— "अभी इन्हें देख लीजिए, फिर यथासम्भव सामग्री जुटानेमें जो भी सहयोग अपेक्षित होगा, मिलेगा ।"

इतना कहकर एक रजिस्टर में मेरा नाम व पता (मुझे पूछकर) लिख लिया तथा दोनो ग्रन्थ मेरे खातेमें लिखकर मुझे घर ले जानेके लिए दे दिये ।

मैंने झिझकते हुए पूछा—"ये ग्रन्थ कितने दिनो तक रख सकता हूँ ?"

"आवश्यक सामग्री नोट करके लौटा दीजिए । पुस्तकोको अपनी समझे ।"

"पुस्तकोको अपनी समझेका भाव मैं समझ गया और नाहटाजीके मनकी वेदनाको भी ताड गया । वहाँ पडी हुई कुछ पुस्तकोकी दशा देखकर ज्ञात हुआ कि इनका पोस्ट-मार्टम नही तो 'आपरेशन' अवश्य हो गया है । अस्तु ।

नाहटाजीने एक बात और कही । उन्होने कहा—"आपके भाई साहब से हमारा पुराना परिचय है पर मेरे लिए आपका इतना परिचय काफी है कि आप 'शोधार्थी' हैं ।"

इस प्रथम दर्शनसे ही मैं इतना आश्वस्त हुआ कि अपनी सफलताकी मजिल तक निर्बाध पहुँचनेका विश्वास कर लिया । मैंने एक ग्रन्थ (विक्रम स्मृति ग्रन्थ)को टटोला जिसमें श्रद्धेय नाहटाजीका एक शोधपूर्ण

---

१ विक्रमादित्य एव तत्सम्बन्धी साहित्य ।

निवन्ध था। दूसरे ग्रन्थमें भी अभीप्सित सामग्री थी। मैंने उस निवन्धमें वर्णित सामग्री (रचनाओ)की उपलब्धिके लिए पूछा तो इतना ही उत्तर मिला कि आप पहले इन निबन्धोको पढ लीजिये और 'रूपरेखा' वनाकर विश्वविद्यालयसे स्वीकृति प्राप्त कर लीजिये।

मैंने 'रूपरेखा' वनाने में सर्वाधिक उपयोग नाहटाजी के उस निबन्धका ही किया और 'प्रवन्ध' लिखने में अभय जैन ग्रन्थालयमें सुरक्षित अधिकाश हस्तलिखित प्रतियो का। नाहटाजी की महती कृपा से ही अन्यत्र सुरक्षित 'वस्ते' भी मुझे देखने को मिल सके। अन्यथा उन 'वस्तो'के दर्शन करना मेरे लिए सभव नही होते।

नाहटाजी के इस निबन्ध जैसे न मालूम कितने अन्य निबन्ध होगे जो मेरे जैसे उपाधि प्राप्त करनेकी इच्छा रखनेवालोके लिए आधार बने हो। अस्तु।

नाहटाजीको नमस्कार करके मैं वहाँसे रवाना हुआ। मैं प्रसन्न था और नाहटाजीको उन ग्रन्थोको विशेष सावधानी से थैलेमें डालकर ले जा रहा था। उस दिन मैंने उनसे प्रेरणा लेते हुए सोचा कि शोध कार्य केवल उपाधि-प्राप्तिके लिए ही नही होना चाहिए और न ही दूधमें पानी मिलने वाली प्रवृत्ति ही अपनाई जानी चाहिए।

पुस्तकोपर दयाभाव रखनेकी सीख भी नाहटाजीने अत्यन्त मधुर ढगसे दी। उनकी सीख सही है क्योकि पुस्तकोके साथ क्रूरता करनेसे वे रुग्ण होकर रुष्ट हो जाती हैं।

मैंने 'रूपरेखा' तैयार करके नाहटाजी को दिखलाई। उन्होने एक-आध स्थान पर सुझाव देकर उसे पसन्द किया। फिर मैं उनके 'ग्रन्थालय' में आने जाने लगा और आवश्यक (मुद्रित व हस्तलिखित-ग्रन्थ) घर लाने लगा। इतनी सुविधा प्राप्त करके मैं कृतकृत्य हो गया।

नाहटाजीकी कार्य-कुशलताको देखकर मैं आश्चर्यचकित होता रहता हूँ। जब भी जाता हूँ, उन्हें ग्रन्थोकी ढेरियो के बीच आसीन देखता हूँ। वे समय को व्यर्थ खोना तो शायद सीखे ही नही हैं। हर-समय पढते-लिखते रहना तथा अपने नित्य कार्य घडीको सुइयोके आधारपर करना। नियमसे पत्र लिखना या लिखाना भी उनके कार्यक्रमका एक आवश्यक अग है। नित्य आनेवाली 'डाक'को देखकर प्रतीत होता है मानो किसी 'सरकारी कार्यालय'में आने वाली 'डाक' हो।

मनुष्यका मस्तिष्क आराम भी चाहता है पर नाहटाजीका मस्तिष्क चौबीस घण्टोकी अवधिमें १४ से १६ घन्टोतक कार्यरत रहता है। मैंने उन्हें ग्रन्थालयमें सोते हुए या आराम करते हुए देखा ही नही। 'काम से काम' करते रहना ही उनका अभ्यास हो गया है। न कभी 'गप्प-शप्प' करते हैं और न किसी प्रकार की व्यर्थकी बात ही।

शनिवार-रविवारके दिन 'ग्रन्थालय' में साहित्य-गोष्ठीका आयोजन नियमित रूपसे किया जाता रहा है। नाहटाजी व आठ-दस अन्य व्यक्ति एकत्र होकर साहित्य-चर्चा करते हैं और नये लेखकोको प्रेरित करते है कुछ लिखनेके लिए। सप्ताहमें जो भी विशेष रचना की जाती है उसे वहाँ सुनाई जाती है और फिर आवश्यक चर्चा होती है उस रचनाके विषयमें। इस प्रकारकी परिचर्चा एक दिन हो रही थी। मैंने नाहटाजीसे एक विषय वतलाया जिसे मैंने दूसरी बार पी-एच डी. की उपाधिके लिए शोध-प्रवन्ध लिखनेके लिए चुना था।[1] उन्होने उस विषयसे सम्वन्धित वहुतसे ग्रन्थोका विवरण उल्लेख तत्काल वतला दिया। मैं विस्मित था कि इतनी स्मरण शक्ति, इतना अध्ययन और इतनी कर्तव्यनिष्ठा कितने अध्ययनशीलताका

१ तेरापन्थी जैन श्वेताम्वर सम्प्रदायका राजस्थानी और हिन्दी साहित्य।

परिणाम होगा। और इससे बढकर मैं उनकी उदारता देखकर दग था कि 'तेरापन्थ' के इतर सम्प्रदायके अनुयायी होने पर भी उनमें संकीर्णताका कही भी लेशमात्र नही है।

नाहटाजीके सम्पर्कमें जो व्यक्ति आते हैं वे उनकी सहज सहयोग देनेकी उदार वृत्ति, सादगीसे जीवन यापन करनेकी प्रवृत्ति, विज्ञापनसे अरुचि, मिथ्या आडम्बरसे विरक्ति, तथा आत्मीयताकी भावनासे प्रभावित हुए विना नही रह सकते। अपने परिचित किसी छोटे या महान् व्यक्तिके यहाँ खुशी या गमीके अवसर पर जाने में वे सकोच नही करते। उनके व्यवहारमें निष्कपट भाव सर्वदा देखनेको मिलता है।

अन्तमें कृतज्ञता पूर्वक इतना ही कहना पर्याप्त समझता हूँ कि नाहटाजीके जिस स्नेहका भाजन मैं बन सका हूँ बस मेरे लिए गौरवकी बात है। ऐसे महान् व्यक्तित्वकी अहैतुक कृपाका ध्यान आते ही सिर श्रद्धासे नत हो जाता है। मनमें सदैव कामना रहती है कि श्रद्धेय नाहटाजी चिरंजीवी हों तथा साहित्यिक शोध-साधनामें रत रहकर माँ भारतीके अक्षय भण्डारको अलभ्य रत्नोसे अलकृत करते रहें।



वयोवृद्ध, तपोवृद्ध एवं ज्ञानवृद्ध श्री नाहटाजी

श्री जयशकर देवशकर शर्मा

श्री अगरचन्दजी नाहटा जैसे प्रतिभासम्पन्न व्यक्तिके लिये लिखना सूर्यको दीपकसे दिखानेके समान है। आपके सान्निध्यमें रहकर अनेकोंने साहित्य-साधना की है और शोध-कार्य किया है। ऐसे व्यक्तिके सम्बन्धमें क्या लिखा जाय, यह एक जटिल कार्य है।

मेरे बीकानेर आगमनके पश्चात् राजस्थानीके साधक श्री मुरलीधरजी व्यासके माध्यमसे मैं आपके सम्पर्कमें आया। यदि मैं नही भूलता हूँ तो यह राजस्थानी साहित्यकी एक मीटिंगका अवसर था। आपकी सादगी, साहित्य-साधना और मितव्ययताका ज्यों-ज्यो मुझे पता लगा, मेरी आपकी ओर श्रद्धा वढने लगी। आप मिलनसार, निरभिमानी एवं इतिहासके प्राचीन वृत्तोके प्रकाण्ड।विद्वान् हैं।

आपमें राजस्थानीके प्रति अगाध प्रेम है और आप सदैव इस प्रयत्नमें रहते है कि आधुनिक-शिक्षा प्राप्त व्यक्ति भी राजस्थानी भाषाकी ओर आकर्षित हो। प्रेरणा देने, साधन जुटा देनेमें आपका सहयोग सदैव हर एकको मिलता रहा है और आशा है भविष्यमें भी मिलता रहेगा।

साहित्य एवं पुरातत्त्व-सामग्रीकी खोज करना और उसे प्राप्त करना सदैव आपका लक्ष्य रहा है, जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण आप द्वारा संचालित 'अभय जैन ग्रन्थालय, बीकानेर' है। यद्यपि इस संस्थाका नाम जैन ग्रन्थालय है किन्तु इसमें जैनेतर साहित्य भी प्रचुर मात्रामें उपलब्ध है। यह तो मानना ही होगा कि जैन साधुओ द्वारा प्राचीन कालमें साहित्य-सेवा प्रचुर मात्रामें हुई और उनका संग्रह भी जैन विद्वान् एवं जैन सस्थाओ द्वारा हुआ है। इसलिए अभय ग्रन्थालयके स्थान पर अभय जैन ग्रन्थालय नाम उपयुक्त ही है।

मै चिकित्सा क्षेत्रमे कार्य कर रहा हूँ किन्तु साहित्य-साधनाकी ओर भी रुचि रखता हूँ। श्री नाहटा-जी द्वारा मेरी रुचिको प्रोत्साहन मिलता रहा और साथ-ही-साथ तदनुकूल सामग्री भी। यही कारण है कि

मैं इस दिशामें यत्किंचित् कार्य कर सका। आप ही की प्रेरणा एवं परामर्शके आधारपर मैं 'प्रकृतिसे वर्षा ज्ञान' का पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध तैयार कर सका। आपने इसके प्रकाशनकी व्यवस्था की। मैं आपकी इस कृपाके लिए पूर्ण आभारी हूँ।

यह मेरा सौभाग्य है कि इस अवसर पर मैं अपनी ओरसे आपको श्रद्धा-सुमन प्रस्तुत कर रहा हूँ। ऐसे मनीषी-विद्वान्का सान्निध्य जिस किसीको प्राप्त होगा, वह निहाल हो जायेगा।

प्रभु आपको शतायु करें और आपके स्वास्थ्यकी रक्षा करे ताकि आप द्वारा निरन्तर साहित्य-साधना होती रहे और मा राजस्थानीका भण्डार भरा जाता रहे।



वन्दे महापुरुष ! ते कमनीय कीर्त्तिम्

डॉ० ईश्वरानन्द शर्मा शास्त्री, एम. ए, पी-एच डी.

उत्तुंग शिखर मारवाडी पगडी, ओठो पर सघन पीन वलखानेको उत्सुक मूंछें, निर्मल नेत्रोमें सरल पैनी दृष्टि, मुखाकृत पर शालीनता और सज्जनताकी युग्मधारा, गतिमें गौरव, बन्द गलेका कोट, उसपर पडा उत्तरीय मारवाडी धोती और साधारण उपानत्—यह व्यक्तित्व है उस महापुरुषका—श्री अगरचन्द नाहटाका जो सैकतावृतधरा मरुधरामें ज्ञानगगा प्रवहण कर रहा है, शोधसागरतितीर्षुओको सेतु बनकर पार उतार रहा है और ज्ञानामृत भोजनसे अहर्निश छका रहनेके कारण कालगाल विलुप्त सरस्वतीको समुद्-धृत कर रहा है।

मैंने श्री नाहटाजीके लिये श्रद्धाके जिस बीजको कभी मानसधरा पर अनायास बोया था, वह उनके प्रभावक, निश्छल आत्मीयता भरे सरल व्यक्तित्वके जीवनदानसे अकुरित, पुष्पित और फलित होता गया और अब उसका फल मधुर तो है ही, आनन्दप्रद भी है।

बात कुछ वर्ष पूर्वकी है। मैं शोधगुरु और शोध विषयके अन्वेषणमें लगा हुआ था। वर्ष पर वर्ष बीत गये, न शोधगुरु ही मिला और न विषय ही। कहते है, बारह वर्षोंके बाद घूरेके दिन भी बदलते हैं और मेरे भी बदले। आनन फाननमें शोधगुरु मिल गये और श्री नाहटाजीने शोध विषयोंका अम्बार सा प्रस्तुत कर दिया। एक-से-एक आकर्षक, नये-पुराने, अछूते-अर्द्धछूते, अपूर्ण-पूर्ण कई तरहके, राजस्थानी, हिन्दी, मराठी जैन कवि, जैनेतर कवि—सभी भव्य, आकर्षक और प्रेरक। ऐसी स्थितिमें विषयचयनमें मेरी वही दशा हुई, जो दशा निर्धन व्यक्तिकी चमकते हुए रत्नोंसे भरे भण्डारमें प्रथम बार पहुचनेपर होती है। मैंने अनुभव किया कि श्री नाहटाजीका हृदय, जिज्ञासुओके लिए कितना सवेदनशील, कितना सहायक और कितना अधिक मार्गदर्शक है। उन्होने अपने विशाल पुस्तकालयमें शोध विद्वानोके लिये आवास व्यवस्था भी कर रक्खी है। श्री नाहटाजीके आत्मीय भावकी पीन परतके कारण कोई भी छात्र यह अनुभव नही कर पाता कि वह अपना घर छोडकर कही अन्यत्र रह रहा है। आप किसी भी समय और कोई भी साहित्यिक उलझन श्री नाहटाजीके सम्मुख प्रस्तुत कर सकते हैं—वहाँ समाधान तैयार है। श्री नाहटाजी तन, मन और धनसे जिज्ञासु शोध-छात्रोकी सहायता करते हैं और करवाते भी हैं। प्रस्तुत

लेखकको अपने शोधकार्यके निमित्त लगभग दो मासकी गुजरात और राजस्थानकी यात्रा करनी पडी थी। इस सरस्वती यात्राको सफल बनानेमें श्री नाहटाजीका बहुत बडा हाथ था। उन्होने लेखकके लिए पाटण, अहमदाबाद, बडौदा, छाणी, सूरत, मेंहसाणा, जैसलमेर आदिके आचार्यों, सूरियो, पट्टाधीश्वरो, धनीमानी सज्जनोको अनेक पत्र लिखे और यात्राको श्रेयस्कर बनाया। लेखकने अपने सारस्वत प्रवासमें यह अनुभव किया कि भारतके विभिन्न प्रान्तो, परिवारो और धनीमानी प्रतिष्ठितोमें श्री नाहटाका कितना अधिक आदर सम्मान है। धर्माचार्य उन्हें अपना आशीर्वाद भाजन अभिन्न अंग समझते हैं तो धनीमानी वर्ग उन्हें प्रतिष्ठित परिवारका। विद्वत् वर्गकी दृष्टिमें श्रीनाहटा कनिष्ठिकाधिष्ठित विद्वानोमें से हैं तो शोध ससारमें औढर दानी। भारतके किसी भी प्रान्तमें चले जाइये, श्री नाहटाजीकी कलकीर्ति वहाँ आपका स्वागत करनेके लिये पहलेसे ही तत्पर मिलेगी।

श्री नाहटाजीने समयके महत्त्वको समझा है। वे जीवनका एक क्षण भी व्यर्थ जाने देना नही चाहते। दिन रातके चौबीस घण्टोमें वे प्रति पलका सदुपयोग उठाते हैं। मैं सस्कृतकी इस शब्दावलीको उनमें अक्षरश. चरितार्थ पाता हूँ कि उम्रका क्षणलेश करोडो स्वर्णमुद्राओसे नही खरीदा जा सकता। उसी अमूल्य अलभ्य क्षणको अगर व्यर्थमें बिता दिया तो उससे अधिक हानि और क्या हो सकती है।[1] श्री नाहटाजी प्रतिदिन १४ घण्टे पढते हैं, लिखते है और लिखाते हैं। वे न निन्दा करते है और न निन्दा सुनते है। अगर कोई व्यक्तिगत आक्षेपो पर आ जाता है अथवा निन्दापरक सही बातें भी कहवा है तो श्रीनाहटा-जी उसे 'विकथा' की सज्ञा देकर टाल देते हैं और अपवाद सुननेकी अनिच्छासे अपने पठन कार्यमें लीन हो जाते हैं। श्रोताको रुचिरहित पाकर वक्ताका कथनोत्साह भी मन्द पढ़ जाता है। इसका सुफल यह मिलता है कि परदोष-दर्शनके पापसे तो हम बचते ही हैं—हमारा अमूल्य समय रूपी हीरा भी कोड़ियोमें नही बिकता।

श्री नाहटाजी शोधरस पीन भ्रमर हैं। उन्हें नई उपलब्धिसे अपार सन्तोप मिलता है, वे गद्गद् हो जाते हैं। कभी-कभी तो इस रसमें वे इतने तल्लीन हो जाते हैं कि उन्हें खाने-पीने तककी सुध नही रहती। उनकी यह ध्यानस्थिति तभी टूटती है जब घरवाले बार-बार आवाज देकर उन्हें याद दिलाते हैं कि 'भोजनका समय हो गया है'—अधिक देर स्वास्थ्यके लिये अहितकर है आदि आदि।

श्री नाहटाजी को मैं निरा शिक्षाशास्त्री, साहित्य रसिक और कलाप्रेमी ही समझता था, लेकिन अवसर पर मेरे अनुभवने बताया कि वे परम कारुणिक महामानव भी हैं। बीकानेरका ग्राम जीवन निरन्तर तीन सालोंसे दुर्दान्त दुर्भिक्षकी द्रष्ट्राके नीचे दब चुका था चतुर्दिक अभावकी स्थितिने धैर्य धनियोका भी मन विचलित कर दिया था। चूं कि मेरा मन भी संकट प्राप्त जनतासे सहानुभूति रखता है, इसलिए मैंने शोधरसमें लीन श्री नाहटाजी को ग्रामीणोके दु ख दर्द, अभाव अभियोगकी कहानी सुनायी। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि महामानवके नेत्र सजल थे, करुणाका आपूर अपने चरम स्तर पर था। उन्होने अपना समस्त ध्यान इस दर्दकी स्थितिपर केन्द्रित करते हुए स्वयकी जेबसे और नाहटा धर्मार्थ न्याससे और धनी मानियोंसे सक्रिय साहाय्य देना दिलाना स्वीकार किया और उन्हें तब और भी प्रसन्नता हुई जब उनका दान-पात्र लोगों तक पहुँचा। जब कभी मैं उनके पास बैठता हूँ, वे गांव और गाँववालोका हालचाल अवश्य पूछते हैं।

---

१. आयुष. क्षणलेशोऽपि न लभ्यो स्वर्णकोटिभि.।
स एव व्यर्थता नीत, का नु हानिस्ततोऽधिका।।

मैं जब भी श्री नाहटाजीके दर्शनार्थ गया मैंने उन्हें किसी-न-किसी कार्यमें रत पाया। आलस्य तो छू तक नही गया है। जो काम उन्हें करना होता है, तुरन्त करते हैं और कार्यावसान रूपी परिणाम फलसे ही प्रसन्न होते हैं। पत्रोत्तर देनेमें श्री नाहटाकी शीघ्रता वरेण्य हैं। वे प्रतिदिन दर्जनो पत्र लिखते हैं और इस अवसर पर उन लोगोकी मीठी चुटकी भी लेते हैं जो आलस्यके वशीभूत होकर पत्रोत्तर नही देते।

श्री नाहटाजी अन्तर्मुखी प्रवृत्तिके मूक साधक है। वे गृहस्थ योगी है। सासारिक सुख साधनोकी समुपस्थितिसे भी वे उनके प्रति व्यामोह नही रखते। लक्ष्मीका आगमन अथवा निर्गमन उन्हें साधनासे विचलित नही कर पाता।

ससार यात्रामें सदैव साथ देनेवाली, पतिपरायणा अर्धाङ्गिनीके स्वर्गवासी होनेसे जो असाध्य दु ख नाहटा परिवार पर आ पडा था, उस दु खको श्री नाहटाजीने समत्व योगीके समान सहन किया और वे दु खकी अवधिमें शीघ्र ही प्रकृतिस्थ वन गये। सासारिक कृत्यो और दायित्वोका परिपालन करते हुए भी वे उनमें लिप्त नही होते। सकट, कष्ट और दुःखकी घडीमें जब-जब मैने श्री नाहटाजी को देखा है, मैं उनसे प्रभावित हुआ हूँ और उनके स्थितधी व्यक्तित्वने मुझे गीताके स्थितधीका सामीप्य सुख प्रदान किया है।[1]

मेरी दृष्टिमें श्री नाहटाजी निश्छल सखा, स्पष्टवक्ता, पथप्रदर्शक, वचनबद्ध बन्धु, सच्चे सहायक, गहरे गुरु, सयमधनी और धर्मभीरु-महामानव हैं। मैं उनके सुखद भविष्य और दीर्घायुष्यकी कमनीय कामना करता हूँ।

श्री नाहटाजी : एक संदर्भ ग्रंथ

श्री यादवेन्द्र शर्मा

व्यवसाय और साहित्य सृजनका सम्बन्ध जरा कठिन ही है। जो व्यवसायी हैं, वह साहित्यकार नही और जो साहित्यकार है वह व्यवसायी नही हैं, ऐसी धारणा प्रचलित है। राजस्थानी लोगोकी पृष्ठ-भूमिमें देखा भी जाय तो इस कथनमें कुछ वास्तविकता परिलक्षित होती है। राजस्थानका एक बहुत बडा समुदाय व्यापारी है, विशुद्ध व्यापारी इतना विकट व्यापारी है कि उसने अपनी नैसर्गिकता, साहित्य, सस्कृति और जन-जीवनको विस्मृत कर दिया। केवल पैसा, पैसा और पैसा।

ऐसी स्थितिमें कुछ नाम अपवाद स्वरूप लिये जा सकते है। उनमें श्री अगरचन्दजी नाहटाका नाम उल्लेखनीय है। श्री नाहटाजी पिछले अनेक वर्षोसे प्राचीन साहित्य व अनुपलब्ध ग्रन्थोका अन्वेषण कर रहे हैं। येन केन प्रकारेण वे हस्तलिखित ग्रन्थोको एकत्रित कर रहे हैं। केवल एकत्रित ही नही, वे उन ग्रन्थोका सम्पादन व प्रकाशन भी करवाकर उनको दूसरोके लिए उपलब्ध भी करा रहे हैं।

---

१ दु.खेष्वनुद्विग्नमना, सुखेषु विगतस्पृह.।
वीतरागभयक्रोध. स्थितधीः मुनिरुच्यते ॥

उनका अभय जैन ग्रन्थालय एक तीर्थस्थली है। तीर्थोंकी संगमस्थली कहूँ तो भी अत्युक्ति नही होगी क्योकि उस तीर्थमें जैनधर्मकी विशाल सरिता तो प्रवाहित होती ही है, साथमें अन्य धर्मोंकी कई नहरें भी देखनेको मिल जाती हैं।

श्रीनाहटाजीको उदार भी कहा जा सकता है और अनुदार भी। अविश्वासकी जरा सी झलक भी उन्हें कंजूस कर देती है परन्तु, यदि आपने उनका विश्वास प्राप्त कर लिया है तो वे खजानेकी 'कूँची' तक देनेमें एक पल भी नही हिचकेंगे।

मेरा सम्बन्ध उनसे काफी पुराना है। वस्तुतः राजस्थानी भाषाके लेखनके प्रति मुझे जो सम्मान हुआ, वह अत्यधिक रूपसे श्री अगरचन्दजी नाहटाकी ओरसे ही मिला है। वैसे मुझे कुरेदनेमें राजस्थानी साहित्य स्रष्टा श्री मुरलीधर व्यासजी भी कम नही रहे किन्तु श्री नाहटाजीका सहयोग इसलिए स्तुत्य है कि उन्होंने मेरी रचनाओके प्रकाशनका भी भार वहन करनेका आश्वासन दिया था। श्री नाहटाजीने राजस्थानी भाषाके निर्माण और परिष्कृत करनेमें महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

श्री नाहटाजीका जीवन एक संयमीका जीवन है। विलासी-जीवनसे दूर एक नियमित जीवन। कब व्यापार करना है और कब अन्वेपण व ग्रन्थ सग्रह करना है, उन्होने इस हेतु वर्षका विभाजन कर रखा है। इतना ही नही, अपने समस्त कार्यकलापोको रोककर श्रीनाहटाजी शोध-कर्त्ताओको प्राथमिक सहयोग देते हैं।

शोधकर्त्ताओके लिए श्रीनाहटाजीको एक कोष भी कह दें तो अत्युक्ति नही होगी। वर्षोंकी पुरानी पत्र-पत्रिकाओंकी सूचियाँ उनके मस्तिष्कमें 'अल्फावेटिक' ढगसे मानो लगी हुई है। कौन-सी पुस्तक कौन सी जगह है, उसमें आपके विषयसे सम्बन्धित सामग्री कौनसे अध्यायमें है, यह भी आपको श्रीनाहटाजी वता देंगे।

श्री नाहटाजी लोक-साहित्य, प्राचीन लिपियाँ व जैन-साहित्यके ज्ञाता है। जैन परिप्रेक्ष्यमें प्राचीन ग्रन्थो व सदर्भोंको देखने और उनको अन्वेषित करनेमें वे कठोर श्रम करते हैं। यही कारण है कि श्रीनाहटा-जी द्वारा काफी जैन साहित्य प्रकाशमें आया है।

श्रीनाहटाजी राजस्थानी है, पक्के राजस्थानी। राजस्थानी भाषाके प्रेमी है और राजस्थानी पहनावा भी पहनते हैं। कही भी जायेंगे पर मरुधराकी शान 'पगडी' को सिर पर रखे बिना नही जायेंगे। इसीलिए वे एक राजस्थानीके रूपमें पहचाने जाते है। पुराने मूल्योसे प्रतिबद्ध श्रीनाहटाजी लिखित अलिखित ग्रथ सग्रहका जो महान् कार्य कर रहे है, उनके लिये उन्हें राजस्थानका प्रचडकर्मी कहें तो भी अतिशयोक्ति नही होगी। राजस्थान ऐसे योग्य वरद पुत्रको पाकर गौरवान्वित है।

o

जैन इतिहास-रत्न : शोधशास्त्री श्रीअगरचन्द नाहटा

श्री मोहनलाल पुरोहित

महापुरुष, और ये कलाकार, साहित्यकार, मनीषी-विद्वान् आदि प्रतिभाके धनी तो होते ही हैं, साथ ही ये लोग भगवान्के घरसे दैवी-शक्ति लेकर इस धरापर अवतीर्ण होते है। इनका दैनिक-जीवन और क्रिया-कलाप अपनी विचित्रताओसे भरा हुआ रहता है। त्याग-तपस्या, सदाचार, संयम, परोपकार, पर-दुःखकातरता,

अनोखी सूझ-बूझ, कर्तव्य-परायणता, सादगी आदि सात्त्विक-गुण जैसे इन्हें विरासतमें मिले हो—इनके दैनिक जीवनमें एक-रस होकर, घुल-मिलकर अभिन्न-अग बन गये हों।

श्रीअगरचन्द नाहटा भारतके एक बहुत ही वडे शोध-शास्त्री हैं। शोधका ऐसा कोई भी अग नही कहा जा सकता, जिसपर इस मूकसाधक, प्रकाण्ड-पण्डितने अपनी लेखनी न उठाई हो।

भारतके हर कोने-कोनेसे कई शोधके विद्यार्थी श्रीनाहटाजीकी प्रतिभाका लाभ उठा चुके हैं। श्रीअगरचन्दजी, राजस्थानी, प्राकृत, अपभ्रंश और गुजराती भाषाके तो प्रकाण्ड-पण्डित हैं ही—आपका ज्ञान जैनधर्म, भारतीय-दर्शन, इतिहास, पुरातत्त्व, मूर्तिकला और चित्रकला आदि पर भी गहन और अनूठा है। भारतकी ऐसी शायद ही कोई साहित्यिक-सस्था रही होगी, जिसका सीधा-सम्पर्क श्रीनाहटाजीसे न रहा हो। इनकी प्रतिभाका सागोपाग आभास इनकी बहुमुखी सेवाओकी प्रचुरतासे मिलता है।

व्यक्तिगत मान-प्रतिष्ठासे कोसो दूर, दोषान्वेपण अथवा छिद्रान्वेपणसे परे, सरस्वतीके इस लाडले पुत्रको कभी भी अपने पुस्तकालयमें अध्ययन-रत और लेखन-कार्यमें रत देखा जा सकता है। लाखो नही, तो हजारो व्यक्ति आपके निकट-सम्पर्कमें आये होगे। फिर भी हमारा सन्निकटका या व्यक्तिगत-सम्पर्क ऐसा कुछ रहा है—कुछ सस्मृतियाँ ऐसी रही हैं, जो किसी भी हालतमें भुलाई नही जा सकती।

साहित्यकारका जीवन एक समुद्रकी तरह गम्भीर और गगाके समान पावनप्रवाहमय रहता है। समुद्रकी गहराई और उसके पानीको लेकर यदि कोई उसका माप-तोल करना चाहे, तो भले ही किसी साहित्यकारके जीवनकी व्याख्या करनेमें वह सफल मनोरथ हो सकता है। हम तो यहाँ श्रीनाहटाजीके जीवन-का पक्ष, 'सादगी' को लेकर ही कुछ झाँकियाँ प्रस्तुत करना चाहेंगे। और यह सत्य भी है—Simplicity is next to godliness—श्री नाहटाजीके जीवनमें सादगी और उच्च-विचार [Simple Living and High Thinking.] जैसे उनके जीवनके अभिन्न-अग वन गये हो। सादगीके तो मानो श्री नाहटाजी प्रतीक ही वन गये हो।

[एक]

वैसे तो श्री नाहटाजीके निवन्धोको पढनेका सुअवसर मुझे सन् १९३६ से मिलता रहा है। जैसलमेर भी आप सन् १९४२ में आये; लेकिन आपसे साक्षात्कार होनेका शुभ अवसर मुझे सन् १९५० में बीकानेरमें मिला। उन दिनो मैं लोक-साहित्यके विषयको लेकर एक पुस्तक लिखनेकी योजनामें था और मुझे तद्-विपयकी पुस्तकोकी वडी ही आवश्यकता थी। काफी-कुछ इधर-उधरके पुस्तकालयोकी खोज-वीन करनेके उपरान्त किसी भले आदमीसे ज्ञात हो सका कि ये पुस्तकें तो श्री नाहटाजीके यहाँ 'श्री अभय जैन-ग्रन्थालय' में आपको वडी आसानीसे मिल सकती हैं। फिर भला क्या था—वैसे भी आपके दर्शन तो करने ही थे, मैं उस दिन सायकाल चल पडा, आपसे मिलनेके लिये।

आपके मोहल्लेमें जिस समय पहुँचा उस समय लगभग छ वजनेको थे। मैंने यहाँ पहुँचकर एक सज्जनसे पूछा, 'श्री नाहटाजीका मकान कहाँ है ?' वह सज्जन एक लकड़ीके पाटेपर वैठा हुआ था। यहींसे वैठे-वैठे उसने इशारा करते हुए बताया—वह रही लाल-पत्थरवाली वडी-सी हवेली। मैं उस निर्देशित हवेलीके पास पहुँचा ही था कि मैंने देखा—वहाँ एक व्यक्ति खडा है।

मैंने उनसे पूछा—कष्ट तो आपको होगा, लेकिन मैं क्षमा चाहता हूँ, 'क्या आप मुझे श्रीनाहटाजीका मकान वता सकते हैं ?' सज्जनने वडी गम्भीर मुद्रामें पूछा,' आपको उनसे कोई विशेप कार्य ?' मैंने फौरन छूटते ही कहा, इन दिनों कुछ लिखनेकी झक सवार हो चली है। एक पुस्तककी आवश्यकता है। काफी कुछ

ग्रन्थालयोंकी छानबीन कर चुका हूँ—पुस्तक नहीं मिल सकी। श्री नाहटाजीके 'ग्रन्थालय' में बताते हैं यह पुस्तक है। वैसे उनसे एक लम्बे असेंसे मिलनेकी साध भी है।

यह भला आदमी इतना सुनते ही फौरन उलटे पैरों मेरे साथ चल पडा, अपने ग्रन्थालयको। स्मरण रहे—ग्रन्थालय आपके मकानके बहुत ही समीप है।

ऊँची-ऊँची धोती, साधारण कोटिका बनियान, सिर नगा, बाल अस्त-व्यस्त बिखरे हुए ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे कघीके दर्शन इन्हें एक लबे समय तक नही कराये गये हो। रग सांवला, ललाट काफी चौडा, जिसपर जीवनके ठोस अनुभवकी रेखाएँ स्पष्ट प्रतीत हो रही थी। चाल बडी तेज, मित-भाषी।

एकही झटकेमें 'ग्रन्थालय' का ताला खुला और हम दोनों उसकी ऊपरकी मंजिलमें आ-पहुँचे। मैंने देखा—यहाँ तो पुस्तकोका अबार लगा पडा है। नीचे, ऊपर, दाएँ, बाएँ, अलमारियोंमें, यत्र-तत्र कोनो में, पुस्तकें ही पुस्तकें रखी पडी हैं। सज्जनने पूछा, 'आपको कौन-सी पुस्तक चाहिए?' मैंने पुस्तकका नाम बताते हुए पूछा—श्रीनाहटाजी कब मिल सकते है? आलमारीमेंसे मेरी इच्छित पुस्तक निकालकर मुझे देते हुए, उसने बहुत-ही धीरेमें कहा—कहिए क्या काम है? मैंने पुन अपने गलेको जरा साफ करते हुए रूखाईसे उत्तर दिया—मुझे आपसे नही मिलना है। और न आपसे मेरा कोई कार्य ही बनना-बनाना है। मुझे तो श्रीनाहटाजीसे मिलना है। वे मुझे कब मिल सकते हैं? उस सज्जनने गम्भीर एव बडे सधे हुए स्वरमें कहा—कहिए भी आपको क्या काम है?

अपने पत्रकार युगमें मैं काफी कुछ घूमा-भटका हूँ। काफी लोगोसे मेरा मिलने-मिलानेका काम भी पडा है। मैंने सुन रखा था—श्रीनाहटाजीका सम्बन्ध कलकत्तासे है। आपका कारोबार, व्यवसाय आदि कलकत्ता, सिलचर आदि बडे नगरोंमें भी फैला हुआ है। मैंने समझा, हो-न-हो यह व्यक्ति श्रीनाहटाजी का कोई निजी-नौकर 'भईया' (पूर्वी लोगोको हमारे यहाँ राजस्थानमें 'भईया' कहते हैं) होगा। घरका भी यह काम काज करता होगा और ग्रन्थालयका भी।

मैंने देखा, सज्जन जरा मुस्कराहटके साथ बडी ही मधुर वाणीमें कहने लगा, नाराज होने जैसी तो कोई बात नही है। आप अपना कार्य तो कहें। मैं तो सभी साहित्यकारोंका दास ही हूँ और आपका भी'।

मैं उछल पड़ा। मैं चाहता था—ऐसे 'विनम्र, सादगीके अवतार साहित्य-तपस्वीकी पावन-चरण धूलिसे अपने आपको पवित्र कर सकूँ—उन्होने फौरन मुझे दोनों हाथोमें बाँधकर छातीसे लगा लिया। मेरा कंठ अवरुद्ध हो चला। मैं केवल इतना ही कह सका—मा-भारती आज धन्य है, आप जैसे वरिष्ठ पुत्रको पाकर। आप सचमुच भारतीय साहित्य-जगत्‌के देदीप्यमान नक्षत्र हैं। आपको पाकर आज मैं अपना जीवन धन्य समझता हूँ—श्रद्धेयवर, मेरा नमस्कार स्वीकार करें।

[दो]

सम्भवत: यह घटना सन् १९५१–५२ की रही हो—हमलोग (मैं और श्री नाहटाजी) बैठे साहित्यिक-चर्चा कर रहे थे। पाठकोको यह तो ज्ञात ही होगा, कि श्री नाहटाजीका अपना एक निजी पुस्तकालय है। पुस्तकालयका नाम है—श्री अभय जैन-ग्रन्थालय।

एक पुस्तक-विक्रेताका एजेण्ट उस दिन आ पहुँचा पुस्तकालयमें और लगा दिखाने पुस्तकें। पुस्तकें अधिकतर-कहानियाँ, उपन्यास, और नाटक आदिको लेकर ही थी।

एजेण्ट एक-एक पुस्तक अपने बैगमेंसे निकालता और उसकी थोडेमें समीक्षा भी करता जाता। वह जितनी बार भी अपनी ओरसे पुस्तककी उपयोगिताको लेकर प्रशसाके पुल बाँधता, श्रीनाहटाजी अपना सिर हिलाकर अस्वीकृति का-सा संकेत करते और मैं सिर हिलाकर स्वीकृतिका सकेत देता उसे।

जब वह एजेण्ट इस प्रकार आठ-दस पुस्तकें दिखा गया और सभी पुस्तकोको लेकर श्रीनाहटाजी यही 'एक सकेत' रहा—उन्हें यह रुचिकर नही है। तो अपना सोदा बना हुआ न देखकर वह झुंझला उठा। मुझे खादी कपडो में, काला चश्मा लगाये, टिपटाप जो देखा, तो समझा—सम्भवत. श्रीअगरचन्द नाहटा यही है। इसके पास मैं बैठा तो कोई अन्य व्यक्ति हो सकता है। अपनी झुँझलाहट और खोजमें आकर उसने कहा, 'देखिए, मैं ये ढेर सारी पुस्तकें आपको नही दिखा रहा हूँ—श्री अगरचन्द नाहटाको दिखा रहा हूँ, फिर आप बीच-बीचमें सिर क्यो हिला रहे हैं ?

अब तो मैं बडे जोरसे हँस पडा। मैंने कहा—भाई ! तुम जिसे श्री अगरचन्द नाहटा समझे बैठे हो, यह तो मोहनलाल पुरोहित है। श्री अगरचन्द नाहटा तो यही है, जो यह पासमें बैठे हुए हैं। बेचारा पुस्तक एजेण्ट अब क्या कुछ बोलता। उसने पुस्तकें उठाई, थैला सम्भाला और चुपचाप वहाँसे चल पडा।

[तीन]

श्री नाहटाजीकी यह प्रमुख विशेषता रही है—वे सभी साहित्यकारो, कलाकारोका समान दृष्टि-से सम्मान करते हैं। यह छोटा है या बडा, ऐसा भेद-भाव श्री नाहटाजीके यहाँ कहाँ ? जब भी किसी साहित्यकारसे भेंट होगी, फौरन पूछेंगे—क्या कुछ हो रहा है ? और फिर उसे भविष्यके लिए प्रेरित करते रहते हैं। कहने का तात्पर्य यही कि श्री नाहटाजी अपनी ओरसे सभी साहित्यकारोको प्रेरणा देते ही रहते हैं।

श्री नाहटाजी जितने विशाल और खुले हृदयके हैं, उनका पुस्तकालय [श्री अभय जैन-ग्रन्थालय] भी सभी साहित्यकारोंके लिए समान रूपसे खुला रहता है। कभी भी कोई साहित्यिक-बन्धु चला जाये, वे अपने सभी आवश्यक कार्योंको एक ओर रख उस साहित्यकारको उसकी इच्छित पुस्तक फौरन दिलवाने की व्यवस्था कर देते हैं। कभी ऐसा रहा है—पुस्तकालयके प्रबन्धकको पुस्तकके निकालनेमें विलम्ब हो जाता है तो श्रीअगरचन्दजी नाहटा स्वय उठकर पुस्तक निकालकर ले आते हैं। पाठकोंको यह पढकर हर्ष भी होगा तो ताज्जुब भी—श्री नाहटाजी साहित्यिक-बन्धुके घर स्वय जाकर पुस्तक पहुँचा आते है। मेरे जीवन में ऐसे अनेको अवसर आये हैं, जब श्रीनाहटाजी मुझे पुस्तकें घर आकर दे गये हैं। वे यह सहन नही कर सकते—एक साहित्यकार पुस्तक-विशेपके अभावमें अपना समय नष्ट करे और साथ-ही प्रतिभाका उपयोग न कर सके।

श्री नाहटाजीको, उनकी विशेष वेष-भूषा देखकर कोई भी व्यक्ति सहजमें अनुमान नही कर सकता—यह एक इतना बडा साहित्यकार भी हो सकता है। यदि मेरा अनुमान सही है तो मैं कह सकता हूँ कि भारतवर्ष तो क्या विदेशोंमें भी ऐसा एक-आध ही साहित्यकार रहा होगा जो शोध-निबन्ध जैसी गहन-विद्याको लेकर श्री नाहटाजीकी समतामें खडा होनेका साहस कर सकता हो। श्री नाहटाजी ऐसे एक व्यक्ति है जिन्होने आजतक चार-पाँच हजार निबन्ध लिखकर माँ-सरस्वतीके भण्डारकी श्रीवृद्धि करनेका सौभाग्य प्राप्त किया है। इनकी इस अपूर्व साधना पर जहाँ मरुभूमिको गौरव है, उनके मित्र वर्गको भी—उनपर बहुत बडा अभिमान है।

एक बार श्री नाहटाजी मेरे घर पर आये। उस समय तक न तो पत्नी ही उन्हें जानती थी और न बच्चोका ही उनसे साक्षात्कार हो सका था। सुबहका यही कोई साढे आठ—नव बजेका समय था। उन्होने दरवाजे पर आकर आवाज लगाई, पुरोहितजी हैं क्या ? मेरी बडी लडकी (आज वह ३४-३५ वर्ष की है) ने फौरन दरवाजा खोला और पूछा आप कौन ? उत्तर मिला, 'हूँ अगरो।'

मैं उस समय अपने अध्ययन-कक्ष [Study Room] में एक कहानी लिख रहा था। दूसरी मजिल पर कमरा ऊँचा होनेके कारण बच्चोने बडे जोरोंकी आवाज लगाई, 'पिताजी ! एक आदमी आया है।'

लिखते समय जब किसी लेखक या साहित्यकारको छेडा जाये, या उसके लिखनेके कार्यमें विघ्न-बाधा डाली जाये तो ऐसेमें तिलमिलाना और झल्लाना उसका स्वाभाविक कर्म है। मैं भी जरा विचलित हो उठा और वहीसे वैठे-वैठे मैंने पूछा,' कौन है ??? उत्तर मिला, 'हूँ अगरो।' मैं उस समय अपना सन्तुलन ठीक नही कर पाया था। अत उत्तरको ठीक प्रकारसे सुनकर भी मैं सही निर्णयपर नही पहुँच सका और दुबारा जोरसे पूछ ही वैठा, 'अगरा कौन ?? और तभी बडी सयत और गम्भीर आवाजमें सुनाई दिया, 'हूँ अगरचन्द।'

मैं ऊपरसे भागकर नीचे आया। उन्हें अपनी छातीसे लगाते हुए मैंने कहा, 'नाहटाजी, आपने तो कमाल ही कर दिया !!! इस समय कैसे आनेका कष्ट किया। अब उन्हें अपने कमरेमें ऊपरको ले जाते हुए मैंने पत्नीको और सभी बच्चोको सम्बोधित करते हुए बताया, 'अरे-यह तो श्रीअगरचन्दजी नाहटा हैं, राजस्थानके ही नही, भारतके एक-बहुत बडे विचारक, साहित्यकार, इतिहासवेत्ता और सबसे बडे सशोधक है।



राजस्थानके गौरव एवं विद्वद्रत्न

श्री दे० न० देशबन्धु

श्री अगरचन्दजी नाहटा अपनी महत्तासे प्रशसित हिन्दी एवं राजस्थानीके मूर्धन्य विद्वान् है। बीकानेरके ओसवाल समाजमें प्रतिष्ठित व्यापारी परिवारमें आपका जन्म हुआ। बचपनमें ज्यादा शिक्षा प्राप्त नही हो सकी, लेकिन फिर भी अपनी सहज प्रतिभा, कुशाग्र बुद्धि, एव अथक परिश्रमके बल पर ४० वर्षोसे साहित्य एव इतिहास आदि की महान् सेवा कर चुके हैं और इसीमें सदा कार्यरत मिलते हैं।

श्री अगरचन्दजी नाहटा प्रसिद्ध लेखक, समालोचक एव एक सफल अन्वेषक हैं। आप लेखकके अतिरिक्त अनेक पत्र-पत्रिकाओंके सम्पादक भी हैं। आपने हिन्दी एव राजस्थानी भाषामें कितने ही नये तथ्य उपस्थित किये हैं जिनका शोध क्षेत्रोमें अच्छा स्वागत हुआ है। देशके किसी भी कोनेसे आनेवाला शोधार्थी नाहटाजीके सादे जीवन, विनम्र स्वभाव एवं परिपूर्ण सहयोगकी प्रवृत्तिको देखकर निर्भय हो अपनी समस्या उनके सामने रखता है और नाहटाजी उसकी जटिल-से-जटिल समस्या का तुरन्त समाधान कर देते है। इस प्रकार देशके विभिन्न विश्वविद्यालयोसे पी-एच० डी० कर रहे शोध छात्रोका सही मार्ग दर्शन करते रहनेके कारण आपको शोधके क्षेत्रका महान् पथ-प्रदर्शक होनेका गौरव भी प्राप्त है।

श्रीअगरचन्द नाहटा से मेरा प्रथम परिचय सन् १९६५ में मेरे अभिन्न मित्र श्री दाऊलाल शर्मा के माध्यम से हुआ और तभी से मेरा नाहटाजीसे निरन्तर सम्पर्क बना हुआ है। वह उदार एव समय-असमयपर अपने हितैषियो एव मित्रोके दु ख दर्दमें काम आनेवाले व्यक्ति हैं। उनके यहाँ आते-जाते रहनेके कारण उनकी शिक्षाके क्षेत्रमें उदार वृत्तिका सस्मरण याद आ गया है जिसे लिखे विना नही रहा जा रहा है।

तारीख एव वार तो मुझे स्मरण नही है परन्तु इतना अवश्य याद है कि मैं उनके पास किसी कार्यवश गया था। मैं और श्री नाहटाजी आपसमें वार्तालाप कर ही रहे थे कि एक कालेजका विद्यार्थी उनके पास आकर बडा उदास सा बैठ गया। थोडी देर बाद नाहटाजीने उससे हाल-चाल और पढाईके सम्बन्धमें पूछा। वह लडका बडा ही दुखी मनसे कह रहा था कि मेरे पिताजीको ४-५ माहसे वेतन नही मिल रहा है ऐसी स्थितिमें मैं विना पुस्तकोके पढ भी कैसे सकूँगा ? नाहटाजीने उससे पूछा कि यदि पुस्तकोंका इन्तजाम हो जाये तो तुम्हें आगे पढ़नेमें कोई बाधा तो नही होगी। वह बोला-मुझे पुस्तकें उपलब्ध

हो जाये तो मैं अन्य बाधाओंको अकेले ही झेल लूँगा। श्री नाहटाजीने उससे पूछा कि पुस्तकें यहाँ उपलब्ध हो जायेंगी क्या ? कहा कि प्राप्त हो जाएँगी कुछ बाजारसे तथा कुछ सेकेण्ड हैण्ड मिल जाती हैं। नाहटाजीने उससे कहा कि पुस्तकोंके पैसे मुझसे ले जाना और पुस्तकें खरीद लाना और 'अभय जैन ग्रन्थालय' में पजीकृत कराके अपने नाम लिखाकर पढाई शुरू कर दो। जब पढाई पूरी हो तो पुस्तकें वापस जमा करा देना ताकि यही पुस्तकें अगले वर्ष अन्य किसी छात्रके काम आ जाएँगी। वह बडी प्रसन्नताके साथ बिदा हुआ।

देखनेमें तो यह एक छोटी सी बात है परन्तु देशवासियोंको शिक्षित बनानेकी दृष्टिसे देखा जाय तो बहुत ही महत्त्वपूर्ण है।

श्रीयुत नाहटाजी उन इने-गिने व्यक्तियोमें हैं जिन्होने भारतीय सस्कृतिकी अमूल्य धरोहर प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थोको सुरक्षित करके भारतीय सस्कृतिकी महान् सेवा की हैं। जब आम लोगोको इस बातका ज्ञान भी नही था कि इन ग्रन्थोंका कोई महत्त्व है। मैं स्वय जब छोटा था उस समयके कई सस्मरण मुझे याद हैं। मेरे पूज्य पिताजी नित्य लीलास्थ गोस्वामी श्रीउद्धवलालजीके सग्रह किये हुए अमूल्य ग्रन्थ अव्यवस्थित रूपसे रखे रहनेके कारण आये दिन टूटते फटते जा रहे थे और मेरी माताजी एव मेरे बहिन भाई आग जलानेके प्रयोगमें इन्ही टूटे-फटे पन्नोका उपयोग किया करते थे। यह स्थिति सिर्फ मेरे ही घरपर हो ऐसा नही, वरन् उस समय प्राय सभी घरोमें हस्तलिखित ग्रन्थोकी यही दुर्गति हो रही थी। उस समय श्री अगरचन्दजी नाहटाने प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थोको सग्रह करके जिस प्रकार सुरक्षित किया है उसके लिए उनका सारा साहित्य जगत् सदा ऋणी रहेगा।

श्री अगरचन्द नाहटाकी आम जनतामें प्रशसा होती है तो वह स्वाभाविक ही है। किसी भी व्यक्ति की प्रशसा उसके गुणके आधारपर ही होती है। फिर नाहटाजीकी महत्ता एव प्रतिभा ही ऐसी है जो कोई भी विद्वान् उनकी विद्वत्ताको देखकर नतमस्तक हुए विना नही रहता।



सरस्वतीके वरद-पुत्र : श्रीअगरचन्दजी नाहटा

श्रीमाधव प्रसाद सोनी, एम० ए० रिसर्च स्कालर

श्री अगरचदजी नाहटाके कृतित्वका परिचय तो मुझे विगत कई वर्षोंसे पत्र-पत्रिकाओंके माध्यमसे था, किन्तु उनके व्यक्तित्वसे परिचित होनेका सौभाग्य मुझे सन् १९६९ में मिला, जब मैं अपनी शोध-सम्बन्धी समस्याओंको लेकर बीकानेर उनके निवासस्थानपर गया। स्मित-हास, जीवनमें उल्लास, प्राचीन और अर्वाचीन समस्त वाङ्मयके प्रति अनुराग, कर्मठ, बोलनेमें सयत और मृदु-भाषी, मा सरस्वती-की आराधनामें लीन यह साधक भारतके उन साहित्य-मनीषियोमे से है, जिनकी गणना उँगलियोपर की जा सकती है।

आजसे लगभग ६० वर्ष पूर्व श्री नाहटाजीका जन्म राजस्थानके बीकानेर नगरमें हुआ था। यद्यपि अध्ययन सम्बन्धी सुविधायें आपके अध्ययनकालमें विश्वविद्यालयी स्तरकी उपलब्ध नही थी, किन्तु फिर भी आपके विद्याके सस्कार प्रबल थे। वीर-प्रसवनी धरा राजस्थान और यहांके रण-बाँकुरोकी कहानियाँ तथा गौरव-गाथायें अपने पूर्वजोंसे सुनी थी। फलत. राजस्थानकी संस्कृति और साहित्यने भी आपको

प्रभावित किया। सत्साहित्य आपको जहाँ भी और जिस भी भाषामें मिला, आपने उसका आस्वादन करनेका प्रयास किया। यही कारण है कि आपका प्राकृत, पाली, अपभ्रंश, गुजराती, सस्कृत हिन्दी और राजस्थानी पर असाधारण अधिकार है।

"सादा जीवन और उच्च विचार" की उक्तिको चरितार्थ करनेवाले सौम्य-स्वरूप श्री नाहटाजीको मैंने देखा तो मैं आश्चर्यचकित रह गया। राजस्थानी पगडी, बन्द गलेका जोधपुरी कोट, धोती और देशी जूतियाँ यह है आपका पहनावा।

आपकी साहित्य-साधना और साहित्यानुरागका क्या कहें? आप द्वारा संचालित आपका "अभय-जैन-ग्रथालय" बेजोड ग्रन्थालयोमें से है, जिसमें गुण और परिमाण दोनो ही दृष्टियोंसे देखनेपर साहित्यका वैविध्य मिलता है। जिस प्रकार जैन-यतियोने अपने उपाश्रयोमें साहित्यको सम्हाला, उसका पोषण तथ सवर्धन किया, वैसी ही प्रवृत्ति आपकी भी है। एक ओर जहा आप ग्रन्थालयमें आये शोध-विद्वानोकी समस्याओका समाधान करते हैं, वहाँ दूसरी ओर आप वही बैठकर ढेर सारे पत्रोका प्रतिदिन उत्तर देकर साहित्य-तृपितोको तृप्त भी करते हैं। नाहटाजीके जीवन और साहित्य-साधनाका यदि सही रूपसे आकलन किया जाये तो उनका व्यक्तित्व और कृतित्व अलगसे एक शोध-प्रबन्धका विषय बन सकता है।

श्रीनाहटाजीका जीवन और साहित्य दोनो ही बहुमुखी रहे हैं। एक ओर जहाँ अनेक पत्र-पत्रिकाओ में हजारो लेख लिखकर आपने प्राचीन तथा अर्वाचीन विशाल राजस्थानी साहित्यको प्रकाशमें लानेका अथक प्रयास किया है, वहाँ दूसरी ओर आपकी शोधकी पैनी दृष्टि तथा सम्पादन कार्यमें कुशाग्रता दिखाई देती है। राजस्थान ही नही वरन् भारत का ऐसा कोई प्राचीन पुस्तक-भडार शायद ही शेष रहा हो जिसका अवलोकन आपने न किया हो। आपने व्यक्तिगत रूपसे तथा सह-सम्पादकके रूपमें अनेक प्राचीन ग्रन्थोका सपादन किया है, जिनमें प्रमुख हैं सीताराम चौपई, जिनहर्ष ग्रन्थावली, धर्मवर्द्धन ग्रथावली, पीरदान लालस-ग्रन्थावली, छिताई-चरित्र, क्यामखारासा और भक्तमाल आदि।

शोध-कार्यमें व्यक्तिगत रुचि लेकर शोध-सम्बन्धी तथ्योको प्रकाशमें लानेके लिए भरसक चेष्टा करते हैं और शोधार्थियोसे पूर्ण आत्मीयता रखते हुए उन्हें दिशा-सकेत देकर उनका मार्ग प्रशस्त करते हैं। आप द्वारा लिखे गये लेख चुस्त, छोटे तथा तथ्यपरक अधिक होते हैं और उनमें अनावश्यक सामग्रीके लिए कोई स्थान नही होता। 'साहित्यकारकी कृतिमें उसका व्यक्तित्व झाँकता है' के अनुसार आपके लेखोको पढकर कोई भी जानकार यह सहज ही पता लगा लेता है कि अमुक लेख नाहटाजी द्वारा लिखित है।

साहित्यके चयनमें समाज, धर्म, जाति आदिकी सकीर्णताओंसे ऊपर उठकर जहाँ भी और जब भी किसी साहित्यमें आपको नवीनता दिखाई दी आपने उसे आदर दिया और अपने ग्रन्थालयमें उसकी पाण्डुलिपियाँ मँगवाने का प्रयास किया। आपके अभय-जैन-ग्रन्थालयमें जहाँ एक ओर जैन साहित्य और जैन-दर्शनके अलभ्य और पुरातन ग्रन्थ मौजूद हैं, वहाँ दूसरी ओर चारण साहित्य, इतिहास, दर्शन, धर्म, जीवनियाँ आदि से सम्बन्धित ग्रन्थ भी पर्याप्त मात्रामें है। देशके विभिन्न भागोसे आने वाली सभी पत्र-पत्रिकायें अपने पुराने और दुर्लभ अको सहित आपके यहाँ मौजूद हैं। लगभग ३५,००० हजार पाडुलिपियोका संग्रह आपके यहाँ है। किसी भी विश्वविद्यालयका कोई भी शोध-विद्वान् आपके यहाँ आकर इन पुस्तकोंका लाभ ले सकता है। मेरा तो यह दावा है कि एक बार आपके संपर्कमें आ जाने पर कौन ऐसा व्यक्ति होगा जो आपके गहन पाण्डित्यसे प्रभावित न हो।

माँ सरस्वतीकी साधनामें रत श्रीअगरचन्दजी नाहटाके इस अभिनन्दन-पर्व पर मैं आपका हार्दिक

अभिनन्दन करता हूँ और आपके शतायु होनेकी कामना करता हूँ। प्रभु आपको और अधिक बल दे, जिससे शेष आयुमे भी आप साधनामें लगकर विभिन्न ग्रन्थ-रत्नोकी खोज तथा सम्पादन कर माँ सरस्वतीका शृंगार कर सकें।

●

भारतीयविद्याविदों (Indologists) में श्रीअगरचन्द नाहटाका स्थान

डा० आनन्दमङ्गल बाजपेयी

भारतीयविद्या (Indology) ने विदेशोमें प्रभूत ख्याति अर्जित की है। जर्मनी, इग्लैंड, फ्रास, अमेरिका आदि देशोके विद्वानोने बहुत श्रमपूर्वक भारतीयविद्याका अध्ययन किया और प्राप्त सामग्रीके आधार पर विविध ग्रंथ लिखे। उन पाश्चात्य विद्वानोके कार्यसे ही यहाँके विद्वानोका ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ। आज संसारमें शेक्सपियर और कालिदासकी काव्यगत तुलना की जाने लगी है। गान्धार कलामें एशियाकी सास्कृतिक चेतनाका मूल्याकन होने लगा है। वैदिक भाषा और हिब्रूमें मूल भारोपीय भाषाका विकास लक्षित किया जाने लगा है। एशियाके सुन्दर देशोके मठ-मन्दिरोकी रचना-पद्धतिमें बौद्ध प्रतीक खोजे जाने लगे हैं और जैनदर्शनके विज्ञानवादका आजके यूरोपीय विज्ञानके परिप्रेक्ष्यमें अध्ययन होने लगा है। यह सब भारतीय विद्याके अध्ययन विवेचनका परिणाम है।

किन्तु, इसका श्रेय पाश्चात्य विद्वानोको ही नही है। भारतीय विद्वानो और मनीषियोके सतत अध्यवसायका फल इसे मानना चाहिए। स्वामी विवेकानन्द, डॉ० राधाकृष्णन, डॉ० काशीप्रसाद जायसवाल, डॉ० पी० वी० कणे, डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल, प्रो० कृष्णदत्त वाजपेयी, श्रीअगरचन्द नाहटा प्रभृति विद्वान् तत्त्ववेत्ताओंने भारतीय विद्याके विविध पक्षो पर प्रकाश डाला है। इसी सन्दर्भमें श्रीअगरचद नाहटाके कार्यका किंचित् निभालन प्रस्तुत करना यहाँ अभीप्सित है।

पाश्चात्य विद्वानोने भारतीय विद्याके क्षेत्रमें जो कार्य किया है, उसका अपना ऐतिहासिक महत्त्व है। अग्रेज यहाँ शासक बनकर आये थे। यहाँके धन-वैभव पर उन्होने अपना अस्तित्व जमाया। साथ ही, यहाँके भाषा, जाति, धर्म, सास्कृतिक चेतना, कला और साहित्यको अत्यन्त हीन एव निकृष्ट सिद्ध करने हेतु इस सबका ज्ञान प्राप्त किया। उनकी मूल भावना यह थी कि पराजित भारतीय जातिमें प्रगतिशीलता नही है, इसी कारण वह शताब्दियोसे परास्त एवं परतन्त्र बनी रही है। वे विद्वान साधन-सम्पन्न थे और उनमें अपने देश तथा अपनी यूरोपीय सस्कृति को ससारके सम्मुख गौरवपूर्ण सिद्ध करनेकी सच्ची लगन थी। सस्कृत-प्राकृत आदि भाषाएँ न जानते हुए भी वे भारतीय पण्डितोंकी सहायतासे प्राचीन शिलालेख, ताम्रपत्र आदि पढकर अपना नाम रोशन करना भलीभाँति जानते थे। उन्होने अग्रेजी भाषाके माध्यमसे भारतीयविद्या कुछ सही, कुछ गलत रूपमें संसारके सामने प्रकाशित की। शासकीय भाषाके माध्यमसे जो भी प्रकाशित होता था, उसकी प्रामाणिकता उन दिनों स्वत सिद्ध थी। परिणामत. हमने उनकी बात पर विश्वास करके आत्मविश्वास खो दिया। अपने धर्मको रूढ़िग्रस्त समझा, अपनी भाषाको (सस्कृतको) Dead Language मृतभाषा मान लिया, वैदिक ऋषियोको पशुचारणयुग (Pastoral Age) का चरवाहा समझ लिया और अपनी कलाकृतियाँ लंदन म्यूजियममें रखवा दी। कुछ विद्वानो जैसे मैक्समूलर, पिशेल प्रभृतिने अग्रेज

इतिहासकारोंकी भारतीय विद्या विषयक भ्रान्त मान्यताओका खण्डन भी किया किन्तु तब हमारा स्वाभिमान खो गया था । हम अपने भारतको अपनी दृष्टिसे नही अल्बेरूनी, टाड, कनिघम और प्लाटकी दृष्टिसे देखनेमें गर्व अनुभव कर रहे थे । फलत' अपनी सास्कृतिक, कलात्मक एव शैक्षणिक परपराएँ हमने खो दी । दूसरेके सकेतपर हमने अपनी मणियाँ लुटा दी और दूसरेका काच बटोरते फिर रहे हैं ।

फिर भी, बीसवी शतीमें भारतीय नवजागरण हुआ और यहाँके मनीषियोने उसे समझा । भारतीय विद्याको व्याख्या उन्होंने नए सिरेसे, नए ढगसे, नए ही रूपमें संसारके समक्ष रखी । स्वामी विवेकानन्द तथा डॉ० राधाकृष्णन जैसे मनीषियोने भारतके प्राचीन दर्शनकी महत्ता प्रतिपादित की । पश्चिमी देशोमें जाकर उन्होंने भौतिकतासे दृप्त अहकारी जातियोको बतलाया कि भारतीय दर्शन एक शक्तिशाली जीवन एव प्रबुद्ध जातिका दर्शन है, उसमें ससारके समस्त प्राणियोके लिए अपार करुणा है, कोटि-कोटि प्राणियोको शाश्वत शान्तिका सदेश देनेकी क्षमता है ।

प्रजातन्त्र, गणतन्त्र, साम्यवाद आदि शासन-प्रणालियोको अद्यतन माननेकी पश्चिमी प्रवृत्तिकी विडबना डॉ० काशीप्रसाद जायसवाल तथा श्रीपाद अमृत डाँगेने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थो (हिन्दू पॉलिटी, भारत 'साम्यसघ ') में की है । भारतके प्राचीन मालव-कठ आदि गणो और गणसघोका प्रामाणिक विवेचन डॉ० जायसवालने Hindu Polity में खूब विस्तारसे किया है । श्री डाँगेने वैदिक युगमें साम्यसघकी स्थिति-का परिचय दिया है ।

इसी प्रकार डॉ० पी वी कणेने 'हिन्दू धर्मशास्त्र' लिखकर लोगोका ध्यान इस ओर आकृष्ट किया कि हमारा धर्म रूढिग्रस्त नही रहा है । समयके अनुसार उसमें अपेक्षित परिवर्तन होते रहे हैं । ग्रन्थके 'कलिवर्ज्य' प्रकरण में यह विवेचन देखा जा सकता है । इसके अतिरिक्त भारत की प्राचीन मूर्तिकला, चित्र-कला, स्थापत्यकला, सगीत कला आदि की ओर भी विद्वानों ने ध्यान आकृष्ट किया । डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल, डॉ० मोतीचन्द्र, डॉ० भगवतशरण उपाध्याय, आनन्दकुमार स्वामी, प्रो० कृष्णदत्त वाजपेयी प्रभृति विद्वानो और पुरातत्त्वविदोने अपने ग्रन्थोमें भारतीय पुरातत्त्वके सदर्भमें जिन तथ्योका प्रतिपादन किया, उनसे भारतीय सभ्यताकी उन्नति और गुरुता सिद्ध हुई और ससारके अन्य देशोंसे भी, यहाँ की उन्नत सस्कृति एव कलाका परिचय पाने हेतु विद्यार्थी आने लगे । आज भारतके विश्वविद्यालयोमें सैकडो पश्चिमी देशवासी छात्र Indology (भारतीय विद्या) विषयमें अनुसधान कार्य कर रहे हैं ।

खेदके साथ कहना पडता है कि हमारी जिस उन्नत प्राचीन सस्कृतिको विदेशी छात्र अधिकसे अधिक समझ लेनेकी चेष्टा कर रहे है, हम उसके ज्ञानसे अछूते हैं । न हम अपनी प्राचीन भाषाओंसे परिचित है, न कलासे । हमारे प्राचीन ग्रन्थ हैं , हमारे मठ-मन्दिर, स्तूप और उपाश्रय है, हमारे देवी-देवताओकी मूर्तियाँ हैं, फिर भी हम उन सबसे अपरिचित हैं । विदेशी लेखक हमें उनके बारेमें बताएँ, यह कितनी लज्जाकी बात है । उक्त भारतीय विद्वानोने अपने ग्रन्थोके माध्यमसे हम भारतीयोको आत्मपरिज्ञान कराया है । **राजस्थानके प्रसिद्ध भारतीय विद्याविद् श्री अगरचन्द नाहटा भी इसी श्रेणीके विद्वान् हैं । उनका कर्तृत्व भारतीय विद्या का स्वाभिमानपूर्ण वैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत करता है ।**

अपने बचपनसे ही मै देखता आ रहा हूँ कि भारतकी सभी प्रसिद्ध पत्रिकाओमे अगरचन्द नाहटाके प्रशस्त लेख प्रकाशित होते रहे हैं । हिंदी और सस्कृतके विद्वान् लेखकोने अपने ग्रन्थोमें कला, साहित्य, सस्कृति, दर्शन आदि विषयोके विवेचन-संदर्भमें श्रीनाहटाजीका सादर उल्लेख किया है । राजस्थान साहित्यकी गद्य-पद्य विधाओ, लोकसाहित्य तथा लोककलाओका रूपविकास नाहटाजीने अनेको लेखो तथा

ग्रन्थोके माध्यमसे प्रस्तुत किया है। हिंदीके विद्वान् डिंगल' काव्यकी रूढियो और रचनागत विशिष्टताओके विषयमें निर्भ्रान्त नही थे। नाहटाजीने उस भ्रातिका मूलोच्छेदन कर दिया है और आजके राजस्थानी साहित्यका प्राचीन साहित्यसे सबध दिखलाकर परम्परा का निर्धारण भी किया है।

राजस्थानसे जैन-दर्शन कला एव साहित्यका प्राचीन एव मध्यकालमें खूब विकास हुआ परन्तु उसके विषयमें अभी तक प्रामाणिक सामग्री का अभाव था। श्री अगरचन्द नाहटाने प्राचीन जैन-साहित्यको प्रकाशित कर इस अभावकी पूर्ति की। उन्होने इसी सदर्भमें 'जिनराजसूरिकृति कुसुमाजलि', 'सीताराम चौपाई', 'जिनहर्षग्रन्थावली' आदि ग्रन्थरत्नोंका सपादन किया है। जैन-मतका जो प्रभाव राजस्थानी कला एव साहित्यपर पडा, उसका सही मूल्याकन उन्होने किया है[1]।

श्री अगरचन्द नाहटा भारतीय विद्याके व्याख्याता और प्रकाशक ही नही उसके अद्वितीय सकलन-कर्ता भी हैं। प्राचीन साहित्यकी सस्कृत, प्राकृत, पाली, अपभ्रश जैनमागधी, गुजराती, राजस्थानी, व्रजभाषा आदि भाषाओमें हस्तलिखित प्रतियोका जैसा प्रामाणिक संकलन श्री नाहटाजीके पास उपलब्ध है वैसा भारतके दो-एक विद्वानोंके पास ही मिल सकता है। दो वर्ष पूर्व मैंने 'भारतीय अङ्गविद्या' पर कुछ लिखनेकी बालसुलभ चेष्टा की थी। तदर्थ मैंने श्रद्धेय प्रो० कृष्णदत्त वाजपेयीसे निवेदन किया था और निर्देशन माँगा था। उन्होने इस सदर्भमें श्रीनाहटाका उल्लेख करते हुए मुझे जो पत्र लिखा था, वह इस प्रकार है—

प्रिय वाजपेयी जी, सागर विश्वविद्यालय

नमस्कार दि० जु० २३, १९६९

आपका ८-३-६९ का पत्र यथा समय मिला था। यह जान कर प्रसन्नता हुई कि आपने 'अंगविज्जा' ग्रन्थका अध्ययन किया है तथा उसके अनुवादमें आपकी रुचि है। मेरे विचारसे इस ग्रन्थ तथा तद्-विषयक अन्य साहित्यके आधारपर आप हिन्दीमें 'भारतीय अगविद्या' शीर्षक नया ग्रन्थ लिखें —आपको इस विषयका साहित्य बीकानेरमें श्री अगरचद नाहटाके पुस्तकालयमें तथा जोधपुरके प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान-में प्राप्त हो सकेगा।

भवदीय
ह० कृष्णदत्त वाजपेयी
प्राचार्य तथा अध्यक्ष
प्राचीन भारतीय इतिहास, सस्कृति
तथा पुरातत्त्व विभाग, सागर विश्वविद्यालय

किन्ही कारणोसे मै उस कार्यसे विरत रहा किन्तु पूज्य वाजपेयीजीके पत्रसे सहज ही ज्ञात होता है कि श्री अगरचन्द नाहटाका हस्तलेखागार कितना मूल्यवान है। 'राजस्थानी हस्तलिखित ग्रन्थोका विवरण' नामक ग्रन्थमें श्री नाहटाजीने काफी ग्रन्थो का परिचय भी दिया है। अच्छा हो, अपने पास रखे सभी ग्रन्थोका ऐसा ही विवरण वे प्रस्तुत करें, जिससे लोग लाभान्वित हो सकें।

श्री नाहटाजी भारतकी प्राचीन भाषाओ संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रश आदिके प्रकाण्ड विद्वान् हैं।

---

१ ये तीनो ग्रन्थ श्री शार्दूल शोध सस्थान बीकानेरसे प्रकाशित हुए है।

ग्रन्थ-सपादन एव पाठशोधके क्षेत्रमें उन्होने नवीन दिशानिर्देश किया है और राजस्थानअचलके दार्शनिक, धार्मिक, कलात्मक एवं लोकसाहित्यपरक ग्रन्थो का उद्धार कर उन्होने भारतीयविद्याके प्रकाशनमें अभूतपूर्व योग दिया है।

मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि वह ऐसे महान् साहित्यसेवी एव भारतीयविद्याविद् श्रीअगरचंद नाहटा को दीर्घायु प्रदान करे।

•

नाहटाजीका अभिनन्दन

जैन साप्ताहिक, वर्ष ६८ अक २२

कोई व्यक्ति जन्मसे वणिक् व्यवसायके साथ व्यापारी होते हुए भी जीवनपर्यन्त विद्यासेवी हो, ऐसा सुयोग बहुत ही कम देखनेमें आता है। इसपर भी अर्थपरायण और निरन्तर व्यापार-परायण जैन-गृहस्थ वर्गमेंसे धार्मिक एव अन्य प्राचीन साहित्य और भाषाके अध्ययन, सशोधनको जीवन-व्रत बनाकर निष्ठापूर्वक इसमें निमग्न हो जानेवाले व्यक्ति तो बहुत ही विरले दृष्टिगत होते हैं। राजस्थान और जैन-समाजमें सुप्रसिद्ध विद्वान् श्रीयुत अगरचन्द नाहटा इसी प्रकारके एक विरल व्यक्ति हैं, जिसकी सतत विद्या-साधना अन्य लोगोके लिये प्रेरणादायक उदाहरण-स्वरूप बनकर हर एक का प्रशसा-पात्र बनने योग्य है।

जैन-सघका विरासती ज्ञान, इसके प्राचीन एव अर्वाचीन ज्ञानभण्डारो द्वारा सगृहीत हस्तलिखित प्रतियो में सुरक्षित हैं यह बात सर्वविदित है। जिस प्रकारसे इन समृद्ध ग्रन्थसग्रहोमें जैन एव जैनधर्मके समस्त मतो (फिरको)का धर्म-साहित्य सुरक्षित रखा गया है उसी प्रकारसे अन्य धर्मोका एव सामान्य किंवा सर्वग्राही विद्याओकी समस्त शाखाओका सस्कृत, प्राकृत एव अन्य लोक-भाषाओमें रचे गये साहित्यको भी प्रचुर मात्रामें सुरक्षित रखा गया है।

क्रियाके आचरणके समान ही ज्ञानकी साधनाको भी जैन-धर्ममें जीवन-साधनाका एक अनिवार्य अंग होने के कारण इसे आत्म-साधनामें प्रथम स्थान देकर साहित्य सृजन एव रक्षणको धार्मिक कर्तव्यके समान ही महत्त्व दिया गया है। यही कारण है कि स्थान-स्थान पर जैन-भण्डारोकी स्थापनाएँ की गई और समस्त विद्याओंकी पुस्तकोकी रक्षा करना एक श्लाघनीय परम्परा, प्राचीन कालसे ही जैन सघमें चली आ रही है। इस प्रकारसे जैनसघने समस्त भारतीय साहित्यकी और भारतीय साहित्यके ही एक अंग-स्वरूप जैन-साहित्य की रक्षार्थ जो लगन व्यक्त की है, उसकी अपने देशके महत्त्वपूर्ण तथा अन्य देशोके विद्वानोने मुक्तकण्ठसे प्रशंसा की है।

इतना होते हुए भी मध्ययुगमें और विशेषकर जबसे अपने देशमें अग्रेजी राज्यकी स्थापना हुई उससे पूर्व के वर्षोंमें एव अग्रेजी शासन-कालके प्रारम्भिक समयमें भी हमारी लापरवाही एव हमारे अज्ञानके कारण स्थान-स्थानपर हजारो ही हस्तलिखित प्रतियाँ दीमक, वर्षा किंवा सुरक्षा की समुचित व्यवस्थाके अभावके कारण नष्ट हो गईं। अनेको हस्तलिखित-ग्रन्थ हमारे अज्ञानके कारण विदेश चले गये। इस

प्रकारसे हमारी साहित्य-निधि हमारे हाथोमें से पर्याप्त सख्या में चली गई। वर्तमानमें भी हमारे अनेको हस्तलिखित ग्रन्थ-भण्डार असुरक्षित एव उपेक्षित स्थितिमें ही पडे हैं।

हमारी साहित्य-सम्पत्तिको इस प्रकार की उपेक्षित स्थितिमें जिन व्यक्तियोने इन हमारे ज्ञान-भण्डारो एवं हस्तलिखित ग्रन्थोकी रक्षा करनेके कार्यमें अग्रगण्य भाग लिया है उन्होने धर्मसघ और साहित्य रक्षा-कर हमारे ऊपर अत्यन्त उपकार किया है। इस दिशामें श्री नाहटाजीने जो विशेष रुचि दिखाई है और हमारी साहित्यविरासतको सुरक्षित रखनेका जो कष्ट उठाया है, उसके लिये वे धन्यवादके पात्र हैं। श्री नाहटाजीने साहित्य-सशोधन एव साहित्य-सृजनके क्षेत्रमें जो कार्य किया है, वह यदि नही किया गया होता और मात्र प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थो की रक्षा हेतु जो कार्य किया है उतना ही करते तो भी यह निस्सकोच कहा जा सकता है कि इनकी सरस्वती-सेवा सदैव स्मरणीय ही बनी रहती। इनके सतत प्रयत्न से कितनी ही हस्तलिखित प्रतियाँ सुरक्षित रहकर विद्वानोके लिये सुलभ हो सकी हैं।

श्री नाहटाजीकी विद्या-साधनाके कार्यकलापपर विचार करते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि विद्यालय, महाविद्यालयका विशेष अध्ययन किये विना ही एक निष्ठावान विद्या-सेवी बननेकी इनमें क्षमता रही है। यश-कीर्ति पूर्ण सफलता प्रदान करा दे ऐसी विद्यारुचि, सूझबूझ एव कार्यनिष्ठा तो मानो आपको वचपनसे ही पुरस्कारस्वरूप प्राप्त थी जिसका आप, उत्तरोत्तर अधिकाधिक लाभ लेकर अपने विकास-की साधना करते हुए भी आप अपनी ६० वर्षकी वृद्ध आयुमें भी इसे (साधना को) अखण्डरूपसे चालू रखे हुए है, यह प्रसन्नता की वात है। जव कभी भी देखा जाय तो आप हस्तलिखित प्रतियोकी खोज करने, इनकी सुरक्षा करनेमें ही लगे मिलते हैं। आप सशोधित एवं सम्पादित तथा प्रकाशित धार्मिक, सामाजिक लेख लिखने अथवा विद्यार्थियों एव शोधकार्य करनेवाले तथा जिज्ञासुओको मार्ग-दर्शन किंवा सहायता हेतु उन्हें आवश्यक सामग्री देनेके कार्यमें सदैव लगे हुए ही मिलते हैं। यह है आपके विद्यानुरागके भाव। इस हेतु व्यक्त की जा रही आपकी इस प्रकार की उत्कट प्रवृत्ति, आदर्श एव श्लाघनीय है।

श्री नाहटाजीका परिपक्व विद्यानुराग न होता तो एक व्यापारीके रूपमें ये लक्ष्मीके रगमें रगे जाकर विद्यानुरागके दुर्गम-क्षेत्रको कभीका छोड देते। व्यापार चलानेके लिये ये सुदूर आसाम प्रदेशमें जा वसे और वर्षों तक वहा रहे थे। किन्तु आपके अन्तरमें विद्याकी ओर गहरे अनुरागका एक ऐसा स्रोत वह रहा था कि जो व्यापार-सम्पादन करते हुए मुरझाने की अपेक्षा सतत प्रवाहित होता रहा। इतना ही नही, जैसे-जैसे समय व्यतीत होता गया वैसे-वैसे ही आपके हृदयमें व्यापार-वृत्ति कम होती गई और विद्या-नुरागकी भावना दिनोदिन ऐसी प्रवल होती गई कि अन्तमें आपने इसे अपने जीवन का ध्येय ही वना लिया। श्री नाहटाजी एक सुप्रसिद्ध विद्वान्के रूपमें जो गौरव प्राप्त कर सके, इसका कारण यही है।

श्री नाहटाजीने अनेको प्राचीन ग्रन्थोका सशोधन एव सम्पादन कर उनका उद्धार किया है। इसके उपरान्त भी आपने जैनसस्कृति और इतिहासके अनेक प्रसगोपर प्रकाश डालते हुए साहित्यका सृजन किया है। प्राचीन साहित्य सम्बन्धी सामग्रीका सग्रह करनेकी आपका प्रवृत्तिके कारण ही बहुमूल्य साहित्य सुरक्षित रह पाया है। यह सव आपके विद्यानुरागका ही परिणाम है।

श्री नाहटाजीकी विद्योपासनाकी एक अन्य विशेषता भी है जिसका यहाँ वर्णन कर देना उचित होगा। प्राचीन साहित्य और कला का सशोधन, सम्पादन-प्रकाशन किंवा सरक्षण मर्यादित होता है और जनो-पयोगी लेखन-प्रवृत्ति तक यह भाग्य से ही विस्तृत हो सकता है। किन्तु, श्री नाहटाजीकी वात अलग है। आप, समस्त मत-मतान्तरों वाले जैनसघोको स्पर्श करते हुए धार्मिक, सामाजिक किंवा शिक्षण-साहित्य

विषयक वर्तमान प्रश्नोको समझकर उनका निराकरण कर सकते हैं। जैनसंघके समस्त मत (पंथ) जो लेखक आदरपूर्वक अपनाते हो, इस प्रकारके लेखक हमारेमें कितने हैं ? श्री नाहटाजी ऐसे ही लेखक हैं। यह इनकी अनोखी विशेषता है। इसके उपरान्त जैनेतर जनताके लिए भी आपने अगणित लेख लिखे हैं। आपसे लेख माँगते ही वह तुरन्त मिल जाता है। श्री नाहटाजी इस प्रकारसे एक सिद्धहस्त लेखक हैं।

एक विद्याव्यसनीके अनुरूप ही आपका धर्ममय जीवन है। श्री नाहटाजीकी विद्या-साधनाको श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हुए आपकी तन्दुरुस्ती और दीर्घजीवनकी हम कामना करते हैं। हमारी आन्तरिक यही शुभेच्छा है कि आप अपने सत्कार्य द्वारा विशेष यशस्वी बनें।

•

नाहटाजीके सान्निध्यमें

डॉ० सत्यनारायण स्वामी

[१]

कौन व्यक्ति कितना प्रशसनीय है, अभिनन्दनीय है, यह उसके उन शब्दोसे जाना जा सकता है, जिनसे कि वह दूसरोकी प्रशंसा करता है। यह बात मेरे मनमें उस समय घर कर गई थी, जब एक दिन श्री अगरचन्दजी नाहटाने वाराणसीमें डॉक्टर वासुदेवशरण अग्रवालका परिचय देते हुए भावविभोर होकर मुझे बतलाया था—डॉक्टर साहब प्राचीन भारतीय ऋषिके नवीन संस्करण हैं। पाणिनिवादके प्रवर्तक डॉक्टर साहबकी अप्रतिम विद्वत्ता और उनके ऋषिकल्प जीवनपर भला किसे संदेह हो सकता है ? मैंने डॉक्टर साहबको प्रणाम कर उनका आशीर्वाद प्राप्त किया। मैंने देखा—कुशलक्षेम की सामान्य बातोके बाद श्री नाहटाजी और अग्रवाल साहब अपनी साहित्यिक चर्चामें जुट गये थे। एक दूसरे को पाकर दोनो हर्ष-विह्वल थे, आनन्दका पार न था। और मेरा मन कह रहा था—ऋषि एक नही, दो हैं, डॉक्टर साहब भी और नाहटाजी भी। डॉक्टर साहब नाहटाजीकी साहित्यसेवाकी भूरि-भूरि प्रशसा कर रहे थे। मेरे जीवनके धन्य क्षणोमें वे क्षण चिरस्मरणीय रहेंगे। यह बात है दिनांक ९-३-१९६५ ई० की।

[२]

पूज्य नाहटाजीसे मेरा परिचय बडी विचित्र स्थितिमें हुआ था। सन् १९६०में मैंने अपने बी० ए० के एक साथी श्रीउदयलाल नागोरीके हाथमें एक बार अभयजैन ग्रन्थालयकी एक पुस्तक देखी। पुस्तक मेरे भी कामकी थी। श्री नागोरीने उसकी दूसरी प्रति उसी पुस्तकालयमें होनेकी सूचना दी। ने उस पुस्तकालयके सम्बन्ध में अपनी अनभिज्ञता व्यक्त की तो उन्हें आश्चर्य हुआ—अरे, बीकानेरमें रहकर अगरचन्दजी नाहटाका पुस्तकालय नही जानते! और उनने स्वय साथ चलकर मुझे वह 'ग्रन्थालय' बतलाया। नाहटाजी उस समय पुस्तकालयसे बाहर गए हुए थे। निराश होकर हमें लौटना पडा। नाहटाजी-का नाम तो इससे पूर्व अनेक पत्र-पत्रिकाओमें देख चुका था। 'कल्याण'में प्रकाशित उनके आध्यात्मिक लेखोसे भी मैं प्रभावित था। उनके दर्शन करनेकी लालसा बहुत दिनोंसे थी ही, अब मौका भी मिल

नौकरी करनी चाहिए, पर इच्छा थी कि मैं एम. ए भी करूँ। नाहटाजी उन दिनो सार्दूल राजस्थानी रिसर्च इस्टीच्यूटके डाइरेक्टर थे। उनके सामने समस्या रखी—पढाई करूँ या नौकरी ? नाहटाजीने तो तत्काल हल निकाल दिया—'दोनो।' मेरे 'कैसे ?' के प्रत्युत्तरमें उनने कहा—हमारी इस्टीट्यूटमें एक लिपिकका स्थान रिक्त है। तुम उसमें अपनी पढाईके समयके अतिरिक्त सुबह अथवा शामको कुल मिलाकर प्रतिदिन छह घण्टे काम कर दिया करो और पढाई भी चालू कर दो। मेरी खुशीका पार नही था। सोना और सुगन्ध दोनो अनायास सुलभ हो रहे थे। उस दिन कालेजमें एडमिशन लेनेकी अन्तिम तिथि थी। तत्काल कालेज पहुँचकर फीस जमा करा दी और एम ए (प्रीवियस) हिन्दीमें एडमिशन ले लिया। उन दिनों संस्था में श्री मुरलीधरजी व्यास और बदरीप्रसाद साकरिया काम किया करते थे। व्यासजी राजस्थानी मुहावरोका सकलन कर रहे थे और साकरियाजी सस्थाकी मुखपत्रिका 'राजस्थान भारती'का सपादन किया करते थे और मुझे दोनो विद्वानोका सान्निध्य और उनके साथ काम करनेका सुयोग प्राप्त हुआ। राजस्थानी भाषा और साहित्य के प्रति आकर्षण भी मुझे तभीसे हुआ। मैं प्रात॰ सात बजेसे दोपहरके एक बजे तक सस्थामें काम करता और दो वजे जब मेरी पढाई शुरू होती, मैं कालेज में होता था। कालेजका पुस्तकालय वडा समृद्ध है। अपने पाठ्यक्रमकी अधिकाश पुस्तकें वहीसे ली परन्तु नाहटाजीसे भी इस सम्बन्धमें मुझे यथेष्ट सहायता प्राप्तहुई।

[७]

दो वर्ष और बीते और मेरी एम ए की धारा पूरी हो गयी। नाहटाजी का आशीर्वाद लेने गया तो उन्होने कहा—लगे हाथो पी-एच डी. भी कर डालो, विषय और सामग्रीका अपने पास भण्डार भरा है। मनमें इच्छा जागी और कुछ ही दिनोमें वह बलवती भी हो गयी—पी-एच डी भी की जाय। पर निर्देशन कौन करे। सौभाग्यकी बात, उस समय तक राजस्थान तथा राजस्थानीके मूर्धन्य विद्वान् और साहित्यकार प्रो॰ नरोत्तमदासजी स्वामी उदयपुर से सेवामुक्त होकर यहाँ लौटकर आये थे। उन्होने कृपापूर्वक मुझे अपने निर्देशनमें शोध प्रवन्ध लिखनेकी अनुमति दे दी। नाहटाजी और स्वामीजी की सलाहके बाद शोधका विषय तय हुआ—महाकवि समयसुन्दर और उनकी राजस्थानी रचनाएँ। महाकवि समयसुन्दरके साहित्य की खोजके कामसे ही नाहटाजीने अपना साहित्यिक जीवन प्रारम्भ किया था। उन्होने अपने पास उपलब्ध एतद्विषयक सम्पूर्ण सामग्री मुझे जिस स्नेह और उदारताके साथ एक ही बारमें उपयोगके लिए दे दी उसका वर्णन शव्दातीत है। महाकविके जीवन और साहित्यके सम्बन्धमें नाहटाजीको प्रभूत ज्ञान है और वे मुझे भरसक सहयोग भी देते रहे हैं। यह सोचकर स्वामीजी मेरे कामके सम्बन्धमें निश्चिन्त हो गये थे। विषय का रजिस्ट्रेशन राजस्थान विश्व-विद्यालयमे करवाया गया। अब मेरा शोध-कार्य चालू था।

[८]

इसी वीच सन् १९६३ में मैं राजकीय सेवामें चला गया। डूगर कालेजमें पुस्तकालय-लिपिक के रूपमें मेरी नियुक्ति हो गयी।

सन् १९६४ के मार्च माहमें मारवाडी सम्मेलन, बम्वईका स्वर्णजयन्ती महोत्सव मनाया जाने था। निश्चित तिथिसे दो-तीन दिन पूर्व नाहटाजीका एक कर्मचारी डूगर कालेजमें मेरे पास आया—आपको वम्वई जाना हो तो आज दोपहरको नाहटाजीसे अवश्य मिल लें। वे आज ही वम्वई जा रहे हैं। छुट्टी भी प्रबन्ध करके आयें, लगभग दस दिन लग सकते है। पहली वार महानगरी बम्बई जानेका अवसर मिल रहा था। यात्राका प्रयोजन बिना जाने भी कुतूहलवश मैंने छुट्टी मन्जूर करवा ली और नाहटाजी

पास जा पहुचा। उन्होने बताया कि मारवाडी सम्मेलनने उन्हें आमन्त्रण दिया है और यहांके एक-दो साहित्यकारोको साथ लेकर आनेका अनुरोध किया है। बस मुझे तैयार होनेमें क्या देर लगती ! निश्चित समय पर बम्बई पहुँचे।

मारवाडी सम्मेलनने अपना स्वर्णजयन्ती समारोह बडे ही शानदार ढगसे मनाया था। भारत भरसे मारवाडी लोग आये थे। समारोहके अन्तर्गत सम्मेलनकी अनेक सभाए हुई, कवि-सम्मेलन हुआ, साहित्यिक गोष्ठियां हुई और सास्कृतिक कार्यक्रमोका आयोजन किया गया। सभी कार्य-क्रमोमें उच्चकोटिके नेताओ, कार्यकर्ताओ, विद्वानो और कलाकारोका जमघट लगा रहा। मैंने उससे पूर्व उतना सुन्दर समारोह कभी नही देखा था। आश्चर्य-चकित हुआ मैं कभी समारोह की गतिविधियां देखता और कभी नाहटाजीको ही देखता रहता-कितना अनुग्रह रखते है ये मुझ पर ! वहांकी साहित्यिक गोष्ठियोमें तो नाहटाजीने भाग लिया ही, सम्मेलनने एक खुले मञ्च पर उन्हें राजस्थानी भाषा और साहित्य पर बोलनेके लिए भी विशेष रूपसे आमन्त्रित किया था।

तब पहली बार मुझे चौबीसों घण्टे नाहटाजीके साथ रहने का मौका मिला था। सम्मेलनके प्राय सभी विशिष्ट व्यक्तियोंका परिचय करवाया। खाली समयमें वे वहांके अपने इष्ट-मित्रोके यहां मिलने जाते तो भी मुझे अपने साथ ही रखते थे। जैनमुनि श्री चित्रभानुजी, शतावधानी श्री धीरजलाल टोकरशी शाह, प्रो० रमणलाल शाह आदि अनेक सहृदय विद्वानो का आतिथ्य लाभ भी बम्बई प्रवास की एक विशिष्ट उपलब्धि रही।

(९)

नाहटाजीके साथ प्रवासका एक अन्य अवसर मुझे मार्च १९६५ में मिला। तब बनारसके सस्कृत विश्वविद्यालयमें अखिल भारतीय तन्त्र सम्मेलनका आयोजन किया गया था, जिसमें नाहटाजीको भी भाग लेने जाना था। उस सम्मेलनसे कुछ दिन पूर्व प्रयागमें हिन्दी साहित्य सम्मेलनका विशेष अधिवेशन भी सम्पन्न होनेको था। नाहटाजीने एक लम्बा कार्य-क्रम बनाया—लगभग एक माहका। इस बार फिर मेरी इच्छा हुई कि नाहटाजीके साथ जाकर ये शहर भी देखे जायं। नाहटाजीके सामने इच्छा व्यक्त की तो उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया।

यात्रा प्रारम्भ हुई। बीकानेरसे दिल्ली पहुँचे। वहां हम एक जैन उपाश्रम में ठहरे थे, जो स्टेशनके पास ही था। वहांसे नाहटाजीको एक अन्य उपाश्रयमें वहांका हस्तलिखित ग्रन्थोका सग्रह देखने जाना था। नाहटाजीके साथ मैं भी दूसरे दिन प्रात वहां गया। नाहटाजीने मुझे वही रुकने को कहा और बताया कि थोडी देर बाद वहीसे खाना खाने चलेंगे। प्रतीक्षामें समय बडी देरसे कटता है। बारह बजे तक प्रतीक्षा की, पर नाहटाजी थे कि अपने आसनसे हिले तक नही, सारे रजिस्टरोको जैसे आत्मसात् ही कर लेना चाहते थे। दो बजे तक अपने रामके तो पेटमें चूहे कूदने लग गये थे। नाहटाजीके पास जाकर सकेत किया—मैं थोड़ा बाजार में घूमकर आ रहा हूँ। मुझे लगा, नाहटाजी उस समय तक यह भूल ही गये थे कि मैं भी उनके साथ हूँ। मेरा सकेत समझकर वे खेद जताने लगे—घूम तो आओ ही, पर पहले खाना जरूर खा लेना। शामका खाना हम साथ ही खायेंगे। हुआ भी यही, नाहटाजी दिनभर बिना भूख-प्यासकी परवाह किये निरन्तर उस सग्रहके रजिस्टरो और पोथी-पत्रो को देखते रहे। दूसरे दिन वहां के कुछेक दर्शनीय स्थान देखे।

देहलीके बाद हम गये हाथरस। वहां नाहटाजीके भानजे श्री हजारीमल बाठिया रहते हैं। श्री

डा० एल० पी० तेस्सितोरीके परमभक्त और राजस्थानी साहित्यके प्रेमी हैं। उस समय वे हाथरसमें नही थे। एक दिन वहाँ रहकर हम लोग आगरा पहुँचे।

आगरा का मुख्य आकर्षण तो ताजमहल ही होना चाहिए ? परन्तु जब ताज देखनेकी बात नाहटाजी के सामने रखी तो बोले—इन पत्थरकी इमारतोको देखनेके लिए इतना लालायित होनेकी क्या जरूरत हैं, ये तो देखेंगे ही। आओ पहले यहाँ के कुछ विशिष्ट व्यक्तियोसे मिल आयें। ऐसी विरल विभूतियोसे मिलने का सुयोग तो भाग्य से मिलता है। वहाँ सबसे पहले हम सन्मति ज्ञानपीठके उ०अमर मुनि जी के यहाँ मिलने गये। मुनिश्री उस समय बीमार थे। अनेक भक्तो से घिरे मुनिजी नाहटाजीको देखते ही पुलकायमान हो उठे। सबके सामने उन्मुक्त हृदयसे उन्होने नाहटजी द्वारा सम्पादित जैन शासन और साहित्यकी सेवाओकी प्रशंसा की। अपनी सद्य प्रकाशित कतिपय कृतिया भी उन्होने नाहटाजीको भेंट की और पूरा आतिथ्य-सत्कार किया। वहाँ से विदा होने के बाद अनेक लेखको, प्रकाशको तथा पुस्तक-विक्रेताओ से मिलते हुए हम ताज की ओर रवाना हुए। ताज देखा। ताज तो ताज ही है। उसकी प्रशसामें कितनों ने क्या नही कहा ? वहाँ थोडी देर बैठनेकी, दूबमें लेटनेकी और शातिसे सोचनेकी तबियत हुई परन्तु हमारे नाहटाजीको इतनी फुरसत कहाँ थी। शामकी ट्रेनसे ही मथुरा रवाना होना था। पर ज्यो-त्यो करके हमने वहाँसे चलकर आगरेका किला भी देख ही लिया।

अगले दिन मथुराका भ्रमण किया। तीन लोक से न्यारी मथुरा हमें विशेष लुभा न सकी। कुछेक दर्शनीय स्थान और परिचित लोगो से मिलकर हम शामको ही ट्रेन से प्रयाग के लिये रवाना हो गये।

प्रयाग हिन्दी का गढ है। हिन्दी साहित्य सम्मेलनके विशेष अधिवेशनका निमन्त्रण-पत्र नाहटाजीको मिला ही था। हम दोनो वही उतरे। सम्मेलनमें राष्ट्रके ख्यातिप्राप्त अनेक विद्वानोंका जमघट लगा था। विद्वानोके ठहरने और भोजन आदिकी सम्पूर्ण व्यवस्था सम्मेलनकी ओरसे की गई थी। सम्मेलन तीन दिन चला। कहना न होगा, वहाँ प्रादेशिक भाषाओके साथ हिन्दीके सम्बन्धोपर राजस्थानीको लेकर नाहटाजीने ही अपना सारगर्भित भाषण दिया था। मुझे पहली बार वहाँ हिन्दी क्षेत्रीय उतने विद्वानोके दर्शनलाभका अवसर मिला। स्वय नाहटाजीने अनेक विद्वानोंका परिचय करवाया। श्री नर्मदेश्वरजी चतुर्वेदीके यहाँ नाहटाजीने आतिथ्य स्वीकार किया था। एक दिन विश्व-विद्यालय भी गये जहाँ डाक्टर रामकुमार वर्माने अपने विद्यार्थियोके लिए 'राजस्थानी भाषा और साहित्य' पर नाहटाजीसे साग्रह एक भाषण करवाया।

प्रयागमें भी हम अनेक साहित्यिक सस्थानो, प्रकाशको और पुस्तकालयो आदिमें गये। सरस्वती प्रेस, हिन्दुस्तानी एकादमी और विश्व-विद्यालयीय पुस्तकालयमें मन कुछ विशेष रमा।

एक दिन हम त्रिवेणी-स्नानके लिए गये। वहाँ एक रोचक घटना घटी। ज्योंही हम स्नान करने पानी की ओर बढे कि एक मल्लाह हमारे पास आया और बोला—सेठ साहब, आपको त्रिवेणीकी सैर कराएं। एक-एक रुपया लूँगा, आनन्द आ जायेगा। नाहटाजीने ना कर दी। मल्लाहने कहा—दोनो का डेढ रुपया दे देना, बस। नाहटाजीने कहा—नही भाई, हमें सैर नही करनी है। मल्लाहने पैसे कुछ और कम किये—कोई बात नही एक रुपयेमें दोनोको का बिठा लूँगा। पर नाहटाजीने ना कर दी सो कर ही दी। मल्लाह भाँगकी मस्तीमें था। वह बोला—सेठ साहब, त्रिवेणी में तो सगम-स्थल पर जानेका ही माहात्म्य है। आप तो बहुत दूरसे पधारे हैं, फिर दो-चार आनेके लिए यह मौका क्यो खो रहे है ? लो, आप

आठ आने ही देना, हम आपकी जय वोलेंगे। सेठ साहबकी नाको हमीं बदलनेवाले ही बदल सकते हैं, हरेकके वशकी बात कहाँ ? मैंने संकोचवश कुछ भी नही कहा। अब तक तो मल्लाह अपनी नाव नाहटा-जीके करीब ही ले आया था। बोला—कोई बात नही सेठ साहब, आप कुछ भी मत देना, हमारी नावको तो पावन कर दो। मैं मन-ही-मन राजी हुआ—अब सेठ साहब क्या मना करेंगे? किताबोमें पढा नौका-विहार आज प्रत्यक्ष कर लेंगे। पर उस दिन तो शायद वह नौका-विहार मेरे भाग्यमें नही था क्योकि मल्लाह यदि मस्त था तो हमारे सेठ साहब भी पूरे अलमस्त थे। बडे सहज भावसे उत्तर दिया—भई, हमारे धर्ममें नदीके बीचमें जाना और उसमें स्नान करना वर्ज्य है। उसमें तो जितने कम पानीसे नहाया जाय उतना ही ज्यादा अच्छा माना गया है। तू हमारा पीछा छोड दे। और स्वयने देखते-देखते दो-चार लोटे पानीसे नहाकर धोती बदल ली। मल्लाहने साश्चर्य मेरी ओर देखा। मैं क्या करता? मैंने आँखोंमें ही कह दिया—बन्धु छुट्टी करो, मैं भी यो ही नहा लेता हूँ। अबकी आयेंगे तब मिलेंगे और मैंने तीन डुबकी लगाकर त्रिवेणी-स्नानका फल पाया।

प्रयागके बाद नम्बर आया बनारस का। बनारसमें हम एक धर्मशालामें ठहरे। बनारसके सस्कृत विश्व-विद्यालयमें अखिल भारतीय तत्र सम्मेलन हो रहा था। वहाँ हम दो दिन देर से पहुँचे थे। वहाँ स्थानीय पडितोके अतिरिक्त देशभरसे अनेक तान्त्रिक और तत्र-साहित्यके ज्ञाता एकत्र हुए थे, जिनमें काश्मीरके पडितोंकी सख्या अधिक थी। सम्मेलनका सयोजन प्राय सस्कृतके माध्यमसे ही हो रहा था परन्तु कभी-कभी हिन्दी भी कानोमे पड जाती थी। विद्वानोके निबन्ध प्राय संस्कृतमें थे। नाहटाजीका निबन्ध 'जैन तत्र साहित्य' हिन्दीमें लिखा था। उस दिन अभिभाषकोकी सख्या अधिक होनेसे सभी विद्वानोसे निबन्धका पूरा पाठ न कर उसका सार बतानेकी प्रार्थना की गई थी। नाहटाजीने भी अपने विस्तृत निबन्धका सार ही पढकर सुनाया था।

बनारसमें संस्कृत विश्व-विद्यालयके अतिरिक्त हिन्दू विश्व-विद्यालय भी देखा। वहाँ हम डॉक्टर वासुदेव शरण अग्रवालसे (अब स्वर्गीय) मिलने उनके निवास-स्थान पर गये। डॉक्टर साहब अपने काममें जुटे हुए थे। दोनो एक दूसरे को पाकर धन्य हो रहे थे। दो पृथिवीपुत्रोके परस्पर मिलनेकी उस वेलाका स्मरण आज भी हृदयको आह्लादित कर रहा है। हम वहाँ काफी देर ठहरे थे और तब तक उन दोनोंने अनेक विद्याओंके ओर-छोर माप लिये थे। चलते समय डॉक्टर साहबने नाहटाजीको अपनी कुछ नवीन कृतियाँ भेंट की और मुझे आशीर्वाद-स्वरूप मेरी डायरीमें एक सूक्ति-सी लिख दी—'दृढ सकल्पपूर्वक विद्या-भ्यासको जीवन-व्रत बनाओ।'

वही हम भारतके एक और मनीषी डॉ॰ गोपीनाथ कविराजके दर्शनार्थ गये। बडी मुश्किलसे उनके निवासस्थानका पता लगा पाये थे। सयोगकी बात, उस दिन कविराजजीका मौनव्रत था, इसलिए हम उनके दर्शनमात्र ही कर सके, गिरा-ज्ञानसे वचित रहना पडा। हाँ, नाहटाजीके कुछ प्रश्नोका उन्होने सकेतसे उत्तर अवश्य दे दिया था।

बनारसके काशी विश्वनाथ मन्दिर, भारत माताका मन्दिर, विश्व-विद्यालयका शिवमन्दिर, भारती-ज्ञानपीठ, गगाजीके घाट, विश्वविद्यालय और उसका पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, सत्यनारायण मानस मन्दिर और शहरकी सँकरी गलियाँ आदि तो आज भी स्मृतिपटपर अकित हो रही हैं, जहाँ कदम-कदमपर नाहटाजीने मुझे अपने साथ रखा था।

बनारससे हम कलकत्ताको रवाना हुए। बहुत लम्बा रास्ता था। बनारससे कुछ नई पुस्तकें ले ही

आये थे, सारे रास्ते उनका स्वाध्याय चलता रहा। यह भी ध्यातव्य है कि नाहटाजीने पूरी यात्रामें भी अपनी समाई (सामायिक-स्वाध्याय) में किसी प्रकारकी कमी नही आने दी थी। जब भी थोडा खाली समय मिला कि वे अपने स्वाध्यायमें जुट जाते।

कलकत्तामें नाहटाजीकी स्वयकी गद्दी है—नाहटा ब्रदर्स, जो जगमोहन मल्लिक लेनमें स्थित है। हम वही उतरे। नाहटाजीके भ्रातृज श्री भँवरलालजी नाहटा उस समय वही थे। उतरते ही, सभी से अत्यल्प, पर अनौपचारिक कुशल-क्षेमकी बातें करके नाहटाजी तो जुट गये अपनी डाक देखनेमें, जो पन्द्रह दिनों से वहांके पते पर Redirect होकर जमा हो रही थी। सभी पत्र खोलकर पढे, पत्रिकाओके लेख आदि देखे और भँवरलालजीको उन पत्रोके उत्तर लिखनेकी हिदायत देने लगे। साहित्य तो नाहटाजीके रग-रग में रमा है, कलकत्तेमें उनसे विलग कैसे हो जाय? देखने तो आये थे, व्यापार, और काम चल रहा है साहित्यका। मैं दग था—भँवरलालजीसे उन्होने खाते और रोकड की वहियां नही मागी, वल्कि वे रजिस्टर मागे जिनमें वीकानेरसे भेजी हुई उनकी हस्तलिखित प्रतियोकी भँवरलालजीने नकलें करके रखी थी। अथवा कुछ ग्रन्थो का संपादन कर रखा था। भँवरलालजीने अपनी साहित्यिक गतिविधिका पूरा-पूरा विवरण दिया। वे तो साहित्य और नाहटाजी दोनोके पुजारी हैं न ! नम्रताके मूर्तिमत प्रतीक। नाहटाजीकी साहित्य-साधना में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान है।

कलकत्तामें नाहटाजीको अपने कामसे रुकना था परन्तु मुझे अपने कामसे चलना था क्योकि छुट्टियां समाप्त हो रही थी। इसलिए कलकत्तेसे मुझे विना घूमे-फिरे नाहटाजीसे विदा लेकर बीकानेर लौटना पडा।

[१०]

नाहटाजो जिस दुनियाँमें रहते हैं उसकी वे कोई खबर नही रखते पर जो नई दुनियां (राजस्थानी और जैन साहित्य का क्षेत्र) उन्होने वसाई है, उससे वे वेखवर नही हैं। यही कारण है कि नाहटाजी कभी कोई दैनिक पत्र नही पढते और न ही रेडियो सुनते हैं। कहते हैं—इस दुनियांमें तो जो होना है, वह होगा ही। हम इसमें क्या हेर-फेर कर सकते हैं? इसलिये रेडियो और अखवारमे क्या लाभ? परन्तु दूसरी ओर, आप देखिये, उनके यहां आने वाली साहित्यिक साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक और त्रैमासिक पत्रिकाओमें प्रकाशित सूचनाओका उन्हें सर्वदा और अद्यतन ध्यान रहता है।

नाहटाजीका काम भी साहित्य है, व्यसन भी साहित्य है और मनोरजन भी साहित्य है। आज उनका नाम मूर्धन्य साहित्यकारो, साहित्य-सशोधकोमें लिया जाता है परन्तु इस साहित्य को अपनाने के लिए उन्हें कितने कठोर पथ पर चलना पडा होगा, यह उनके दीर्घकालीन अभ्यासके अतिरिक्त और कौन बता सकता है। दुरूह मे दुरूह प्राचीन शिलालेखो और हस्तलिखित प्रतियो को पढनेका उन्होने स्वयमेव अभ्यास किया था, न तो इसमें उन्होंने किसीसे सहायता मागी और न वे ऐसा चाहते ही थे। यही तो उनकी तपस्या थी, उनकी साधना थी। मनोयोगपूर्वक की गई साधना फल तो लायेगी ही। हा, इस फलप्राप्तिमें निमित्त तो कुछ न कुछ वन ही जाता है। नाहटाजी अपने जीवनकी सफलतामें इन तीन दोहोकी भूमिकाको महत्त्व देते हैं, जिनसे वे पग-पग पर प्रभावित होते रहते हैं—

१. करत-करत अभ्यासके, जडमति होत सुजान।
रसरी आवत जात ते, सिल पर होत निसान ॥

२ काल करै सो आज कर, आज करै सो अब ।
पलमें परलै होयगो, बहुरि करैगो कब ॥

३. रे मन अप्पहु खच करि, चिन्ता जाल म पाड़ि ।
फल तित्तउ हिज पामिस्यइ, जित्तउ लिह्यउ लिलाडि ॥

सरलता और सादगी नाहटाजीके जीवनके अन्यतम गुण हैं । आचार और विचारोकी एकरूपता ही उनके निर्मल व्यवहारकी कुन्जी है । मुझ पर उनका जो अपार स्नेह है, उसीका परिणाम है कि मैं अनेकानेक बाधाओके बावजूद 'महाकवि समयसुन्दर और उनकी राजस्थानी रचनाएँ' विषय पर शोध प्रबन्ध लिखकर उनके प्रारम्भ किये कामको कुछ आगे बढा सका हूँ । उनके अभिनन्दनके इस पावन अवसर पर मैं उनके दीर्घायुष्यकी मगलकामना करता हूँ ।

नाहटाजीके अभिनन्दनको अभिवदन ।



श्री नाहटाजी, शोधके प्रेरणा-स्रोत

श्री वेदप्रकाश गर्ग

परम श्रद्धेय श्रेष्ठिवर श्री अगरचन्दजी नाहटा तथा उनके भ्रातृपुत्र श्री भँवरलालजी नाहटा, राजस्थान, देश तथा हिन्दी-जगत् के विश्रुत, स्वनामधन्य शोध-मनीषी हैं । लक्षाधिक धार्मिक, साहित्यिक, सास्कृतिक एव कलापूर्ण ग्रन्थो और कृतियो के पुनरुद्धारक, सग्रहकर्त्ता तथा प्रसारक इन विद्वद्‌द्वयने अपनी आदर्श-सेवाओंसे एक विशिष्ट पद प्राप्त किया है ।

श्री भँवरलालजी नाहटाके लेखोंको मैं पत्र-पत्रिकाओंमें पढता रहा हूँ, लेकिन मेरा प्रत्यक्ष कोई सम्बन्ध उनसे नही रहा और न ही कभी साक्षात्कार का सौभाग्य प्राप्त हो सका, किन्तु श्री अगरचन्दजी नाहटासे मेरा एक शोधकर्त्ताके नाते बराबर सम्बन्ध बना रहा है । उनके दर्शनोका सौभाग्य भी मुझे प्राप्त हुआ है । व्रज-साहित्य-मडलके मथुरा अधिवेशनके अवसरपर वे साहित्य-परिषद्‌की अध्यक्षता करनेके लिए वहाँ पधारे थे । मैं भी उक्त अधिवेशनमें मण्डलका सदस्य होनेके नाते, भाग लेनेके लिए मथुरा गया था । वही उनसे भेंटका अवसर मिला था । मेरा उनसे पत्र-सम्बन्ध इस भेंटसे पूर्व ही हो चुका था । अत बडी आत्मीयतासे उन्होने मुझसे बात-चीत की । उनका अध्यक्षीय-भाषण उनकी विद्वत्ताके अनुरूप अनेक ज्ञातव्योका भण्डार था ।

दैवी कृपासे अनुसन्धान-कार्यमें रुचि होनेके कारण मैंने प्रारम्भसे श्री नाहटाजीको अपना आदर्श समझा है । उनकी कार्य-प्रणालीको अपनाकर उनके चरण-चिह्नोपर चलनेका यथासामर्थ्य कुछ प्रयास किया है । शोध-विषयक जब भी कोई समस्या मेरे सामने आयी, मैंने श्री नाहटाजीको कष्ट दिया । उन्होंने निस्सकोच तुरन्त सहायता कर मेरी कठिनाइयोको दूर किया । वे इस प्रकारके सहायता-कार्यके लिए सदा तत्पर रहते

हैं। उन्होने मेरे समान सैकडो शोधार्थियोका मार्ग-दर्शन किया है तथा अनेक व्यक्तियोको आवश्यक जानकारी व सामग्री प्रदान कर उपकृत किया है। वे अनुसधित्सुओके प्रेरणा-स्रोत हैं।

गम्भीर व्यक्तित्ववाले श्री नाहटाजी बडे शान्त, सरल, मिलनसार एवं सहृदय व्यक्ति हैं। अपनी धार्मिक मान्यताओके प्रति वे आस्थावान हैं किन्तु सकीर्णता उनमें लेशमात्र भी नही है। वे मौन साधक हैं। आडम्बर उन्हें पसन्द नही। प्रचार और यशसे दूर रहकर एकान्तभावसे कार्य करना उनका उद्देश्य है। वे अन्वेषण-कार्यके भीष्म पितामह हैं।

श्री नाहटाजी मुख्यत व्यापारी हैं। अपने व्यावसायिक कार्योंमें सलग्न रहते हुए भी वे साहित्यिक तथा सास्कृतिक कार्योंके करनेमें पूर्ण रुचि लेते हैं। वे अपने व्यापारिक कार्योंसे कैसे अवकाश निकाल पाते है, जब इस तथ्यपर विचार करता हूँ, तो आश्चर्य होता है। विद्यालयी-शिक्षा नहीके बराबर होते हुए भी श्री नाहटाजीने अपने विद्या-प्रेम और अध्यवसायसे उच्चतम योग्यता प्राप्त की है। उन्हें श्री और सरस्वती दोनोकी कृपा प्राप्त है। उनकी प्रतिभा बहुमुखी और उनका कृतित्व परिमाण-बहुल है। वे ४० वर्षोंसे साहित्य-साधनामें रत है। उनके द्वारा लिखित एव सम्पादित ग्रथोकी सख्या लगभग ५० है और पचासों ही ग्रन्थोकी उन्होने भूमिकाएँ लिखी हैं। उनके विविध विषयोपर विशेषकर शोधपरक लगभग ३००० लेख देशकी विभिन्न पत्र-पत्रिकाओमें प्रकाशित हो चुके हैं। लक्षाधिक हस्तलिखित प्रतियोकी खोज कर अनेक अज्ञात ग्रथोके विवरणोको वे प्रकाशमें लाये हैं। हस्तलिखित प्रतियोंकी खोज करना और अज्ञातग्रथोंको प्रकाश में लाना उनका विशिष्ट कार्य है। वे अपने दायित्वके प्रति सतर्क हैं। इसीलिए वे ग्रन्थो तथा लेखकोकी त्रुटियोका सशोधन तथा परिमार्जन समय-समय पर करते रहते हैं। अनेक ज्ञानभडारोकी हस्तलिखित प्रतियोकी आवश्यक विवरणो सहित सूचियाँ उन्होने बडे परिश्रम तथा लगनके साथ तैयार की हैं, जो शोध-कार्यके लिए विशेष सहायक हैं। 'श्री अभय जैन ग्रन्थालय' तथा 'शकरदान नाहटा कला भवन' उनके विद्या-प्रेम, कला-अभिरुचि तथा सग्राहकवृत्तिके कीर्ति-स्तम्भ हैं। उनका लेखन-कार्य अत्यन्त त्वरा गतिपूर्ण है।

श्रद्धेय नाहटा बन्धुओकी षष्ठिपूर्तिके शुभ प्रसङ्गमें उनकी अप्रतिम साहित्य-साधना और अमूल्य सेवाओके उपलक्ष्यमें इस विद्वद्-पूजनके पवित्र अनुष्ठानका आयोजन सर्वथा उचित है। इस अवसरपर मैं नतमस्तक होकर उनका अभिनन्दन करता हूँ। प्रभुसे प्रार्थना है कि वे शताधिक वर्षोंतक हमारे बीच रहकर हम सबका मार्ग-दर्शन करते रहें।

प्रबुध चमकते जैन सितारे : श्री अगरचन्दजी नाहटा

श्री विमल कुमार रॉका,

श्री अगरचन्दजी नाहटाका नाम जैन जगत्में एक उज्ज्वल नाम है। जैन जगत्का पढा लिखा ही नही बल्कि अनपढे लोग भी उनके नामसे भलीभाँति परिचित हैं।

अवश्यमेव यश गाथा तो जरूर गायी ही जानी चाहिए। हमने देखा है कि समय-समय पर लोगोने

उन्हें "जैनसंघरत्न" "राजस्थानी साहित्य वाचस्पति" एवं "जैनजगत्के चाँद" आदि उपाधियोंसे अलकृत कर उनके जीवनमें चार चाद अवश्य लगाये हैं।

बिना किसी भी डिग्रीको हासिल किये ही जैन जगत् में उथल-पुथल मचा देने वाले मूक सेवक व मिलनसार सहयोगी और वस्तु स्थितिको परखनेवाले यशस्वी कर्मवीर आप सदा रहे हैं हमारे श्री नाहटाजी।

सरस्वतीके वरदपुत्र हैं ही, महादेवी लक्ष्मीको भी हार खानी ही पडी। कमाया भी खूब व दान दिया भी खूब आपने अपने जीवनकालमें। बडे परिवारके प्रमुख होकर भी हमारे नाहटाजी सदा हर काममें अपने पारिवारिक जनो व मित्रोंसे खूब ही सलाह मशविरा किये बिना कोई नया काम कभी नही करते हैं। यही वजह है कि आपको सदा अपने हर काममें गहरी सफलता मिलती है।

विचारोके बडे बलवान् धीर पुरुष सदा रहे हैं। कम बोलना और जो भी बोलना, तोल-तोलकर बोलना उनमें दैवी गुण है। घर व परिवारमें भी इसी मर्यादाका पूर्ण पालन करना-कराना उन्हें अत्यधिक प्रिय भी है तथा घर आये मेहमानका भ्रातृवत् सत्कारसम्मान करना उन्हें सबसे ज्यादा प्रिय लगता है। परिवारके हर बन्धु चाहे छोटा या बडा हो, नित्य पूछताछ करना, दैवी गुणोकी एक उनकी थाती रही है।

सन्तोका समागम तो इतना उन्हें सुहाता है कि वे घण्टो उनके चरणोमें ज्ञानचर्चामें बिता देते हैं। आगम, शास्त्र, व्यवहार, लौकिक आदि मसलोपर तरह-तरहका विचार, समीक्षा, वादविवाद करना उन्हें प्राणवत् प्रिय है। पर जहाँ भी सम्प्रदायवादकी बू दिखी, उठकर चल दिये वहाँसे। प० रत्न आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी महारासाबके अनन्य भक्त होते हुए भी वक्त-वक्त उनसे अपनी बातोके लिए अड जाया करते हैं। आप जब तक निष्कर्ष पूर्ण नही पा जाते स्थानक ही में वासा कर देते देखे गये हैं।

लेखकके साथ तत्त्वज्ञ विचारक भी नम्बर एकके रहे हैं। साहित्यप्रेम, साहित्यसृजन व पठन-पाठनका भी उन्हें कम शौक नही। हम नित्य ही पत्र-पत्रिकाओमें उनके लेख-सामग्री देखते ही रहते आये हैं। लेखन शैली आपकी उत्कृष्ट व मँजी हुई सदा दिखी है। आप उपदेशात्मक लेख नही लिख, जीवनमें सुधार लाने वाले लेख अमूमन लिखते अत्यधिक हैं।

प्राकृत साहित्यका हिन्दी रूपान्तर करने-करानेका काम आपने बहुत कुछ किया है तथा स्वबुद्धिसे प्रयोग खुदने बहुत किया है।

कार्य जो छेड दिया उसे पूर्ण तो करना ही चाहिए, उनसे यह सबकरूप सीखा ही जा सकता है।

पदके कायल श्री नाहटाजी कभी नही रहे। मेरी भावनाका वह श्लोक—'लाखो वर्षो तक जीऊँ या मृत्यु आज ही आ जावे" या "कोई बुरा कहे या अच्छा लक्ष्मी आवे या जावे" वे सदा याद रखते हैं। लक्ष्मी आवे या जावे जीवनमें कभी गहन विचार किया तक नही। सदा विनीत रहनेवाले कमठ कर्म-वीर हैं।

विएगएण णरो गधेण, चदण सोमयाई रयणियरो
महुरर सेण अभयं, जण पिय्यतम् लहई भुवणे ॥

अर्थात् जैसे ससारमें सुगन्धके कारण, चन्दन, सौम्यताके लिए शशि एव मधुरताके लिए अमृत यशस्वी है इसी प्रकार विनयके लिए ही मनुष्यके आपका प्रिय बने हुए हैं। उन्होने जीवनमें घमण्ड तो

शायद ही किया हो । मैंने कई मर्तबा उनके मुखसे सुना है कि वर्षा वर्षेगी तो सभी ठौर ही फिर क्यों तरसना उस हित ।

सहनशीलता एव मिठासके तो खीरसागर ही है । स० १९४९ के दिसम्बर मास की बात है जब मैं कान्फ्रेन्सके ११वें अधिवेशन हेतु रेलसे मद्रास जा रहा था तो अहमदाबादसे चढ रेलमें, भीडका कोई पार नही, पैर डिब्बेमें वढा ही नही पा चुका था हमारे चरित्रनायक श्री नाहटाजी उसी डिब्बेमें विराजमान थे। स्वधर्मी भाईके नाते मैं पूछ बैठा कि आपका नाम—तो प्रेमसे जबाव दिया कि—मैंने अगरचन्द नाहटा केवे हैं । मैं भौचक्का-सा हो कुछ पीछे हटा तो झट मेरा हाथ पकड कहा—भाई इतने क्यों चमके ? बात-चीतके दौरान मेरा भी नाम पूछ बैठे । मैं बोला—मेरा विमलकुमार राँका नीमाजवाला । मेरा नाम सुनते ही वे बोले, अरे भाई तुम हो राँकाजी, आओ । एक सीट तुरन्त दे दी । तुम तो वडे प्रतिभाशाली लेखक व कवि भी हो । जव तक हम वम्बई नही पहुँचे वहुत ही आवभगत की । तथा मुझे जबरदस्ती एक दिनके लिए बम्बईमें उतार अपने वहाँ ले गये । खानेपर पुन. स्टेशन तक पहुँचाने आये । रेलमें बिठा एक पुस्तक "ज्ञानकी गरिमा" भी भेंट की जो उनके द्वारा ही लिखित है ।

ओसवाल बन्धुओको, सभीको भ्रातृवत् प्रेमसे देखते रहे हैं । आप गहरे मिलनसार सज्जन भी हैं । ओसवाल नामसे ही आपको बडी रुचि रही है । आप कबके मध्यवर्गी कर्मठ धर्मनेता वर्षोंसे रहे हैं । कम शिक्षा प्राप्त कर भी आपने साहित्य जगत्में खूब धूम मचाई है ।

श्रमणोमें आपसी मनमुटाव उन्हें सदा अखरता रहा है । पर इस तरफ वे कभी भी खीचातानी नही करते । कही बोलनेका अवसर आपको इस बावत दिया भी गया तो भी आप उसमें नही उलझे क्योंकि उन्हें यह मसला प्रिय ही नही । जब लाग लपेट ही नही रखते तो फिर क्यो उलझें इस उलझनमें ।

उनके विचारोमें सदा लेखनी व संघ एकताका ही सार होता है । डरना तो उनके जीवन-इतिहासमें लिखा ही नही भगवान्ने ।

कान्फ्रेन्सका नाम तो आप लेतेपर रुचि उस मार्गमें आपकी नही है । फिर भी कान्फ्रेन्सके कोई कर्णधार उन तक पहुँच जाय तो घण्टो चर्चा, विश्लेषण व सहायता भी मनमानी कर देते हैं ।

रूढिवाद, अधश्रद्धा व मूर्तिपूजाके कट्टर विरोधी रहे हो । निर्गुणवादमें उनकी पक्की आस्था-है । टोना-टोटका करना व शीतलामाता या भैंसेजी वगैराको पूजना भी उन्हें नही सुहाता है । वे पक्के श्रद्धावान हैं जप व माला के अटूट ।

जैन-अजैन सभी पत्रिकायें व पत्र उनकी सामग्रीके लिए लालायित रहते ही दिखे हैं । लिखते तथा भेजते ही रहते हैं । कलम उठाई, कुछ गुनगुनाया, घण्टोमें कुछ न कुछ लिख ही देते हैं । आपके ही लेख बडे समयोचित व एकता के सच्चे मार्गदर्शक रहे हैं ।

नाम-वासना उन्हें कभी भी प्रिय नही । पर वे लिखते ही रहे हैं निरन्तर अपना कर्तव्य मानकर ही ।

आपके यहाँ अपना एक छोटा सा 'सहायता ट्रस्ट' खोल रखा है जिसमे कई असहायो व उदीयमान बच्चो को छात्रवृत्ति भी देते हैं । आपकी दानप्रियता सदा मूक रही है । जो भी उनतक माँगन गया, खाली कभी नही लौटा तथा उल्टे यह उसे रवाना करते है कि—ये ले जाओ पर किसीको कहना मत ।

ये हमारे छिपे नवरत्न है जो वडे लाल लाडले माताके पुत्र है । आज साठ (६०) से आगे निकल चुके हैं । आज उनके जीवनकी हीरक जयन्तीपर हमारा जैनजगत् एक अमूल्य ग्रन्थका प्रकाशन कर उन्हें

अलकृत कर रहे हैं। मुझे भी इस ग्रथ हेतु कुछ लिखनेका आदेश मिला है सो, मोहनराज द्विवेदीकी उस रावतीके अनुसार—

वन्दाके इन स्वरोमें एक स्वर मेरा भी मिला लो।
हो जाओ बलिशीश अगणित एक स्वर मेरा भी मिला लो।

के अनुमार मैं भी चन्द पक्तियाँ लिख भेज रहा हूँ सो स्वीकृत की जाँय। ऐसे मौकेपर मैं भी उन्हें

"प्रबुद्ध चमकते जैन सितारे"

उपाधि प्रदान कर दू तो कोई अतिशयोक्ति नही कि यह बात गलत हो। इसी आशाके साथ मैं लेखक भी आपका हार्दिक अभिनन्दन करता हुआ छोटी-सी सामग्री श्रद्धारूप भेज रहा हूँ सो अभिनन्दन ग्रन्थ द्वारा उनके चरणकमलोको सदा-सर्वदा छूती रहे तथा उनके दीर्घ जीवनकी प्रभु पितासे प्रार्थना भी करती रहे।



नाहटा बन्धुओंकी विशिष्ट उपलब्धि

श्री शुभकरण सिंह

हमारे लिए तरुण वय काल था अत इसे विवर्तकाल भी कहे तो अयुक्त नही होगा। सभीके जीवन में यह समय आता ही है एव अपने-अपने सयोगके अनुसार उपलब्ध वातावरणका स्थायी-अस्थायी प्रभाव ग्रहण करना ही पडता है किन्तु जब किसीको उस वयमें सामान्योकी भाति राग-रंगकी प्रवृत्तियोंसे तनिक सम्हल कर विद्याध्ययनका विस्तृत अवकाश न मिलने पर भी, पठन-शोध-लेखन वृत्तिकी ओर सोत्साह झुकते ही नही, बढते हुए देखा तो स्वभावत आकर्षण हुआ। प्रेरणाका स्रोत कुछ भी क्यो न हो कायिक आमोद-प्रमोदके बहावसे अपने आपको यथा सभव वचित रख एव सुसासारिक नियमोका यथाशक्य अनुगमन कर जीवनकी धाराको अपने पारिवारिक व्यवसायका अवलम्बन करते हुए भी साहित्य-साधन व ज्ञानार्जनकी ओर उन्मुख करना उस वयमें असहनीय कहा जायेगा।

नाहटा बन्धुओंने अपने जीवनके प्रारम्भमें ही साहित्य-साधनाका आग्रह मानो अतीतार्जित सस्कारोसे पाया हो-ऐसा प्रतीत होता है। कलकत्ता महानगरीमें हम कतिपय समरुचि मित्र यत्र-तत्र सप्ताहातमें सन्ध्या समय उन दिनो किसी स्थान पर परस्पर-नैतिक-धार्मिक विचार चिन्तनके लिए एकत्रित हुआ करते थे। इन प्रसगोमें नाहटा बन्धुओका सहयोग अनिवार्य था। चर्चा प्रसगमें अनेक सध्याए प्रात कालमे परिणत हो जाती-समय, विचार आदान-प्रदानमें बहता रहता नाहटा बन्धु ऊँघते कभी नहीं देखे गये। विशेषकर श्री अगरचन्दजी अपनी मधुर स्वर-लहरीमें योगी आनन्द घनजीके पद या स्तवनोको गाते व उन पद्योमें भरे हुए आध्यात्मिक भावोका स्पष्टीकरण करने व उन्हें हृदयगम करनेकी चर्चा-धारा वह चलती।

जीवनको कैसे विवेककी ओर बढाया जाय? जैन सस्कार पाकर भी तदनुसार जीवनको मात्र

परम्परागत आचरण तक ही सीमित रखना यथेष्ट है क्या ? जीव जडके चिर सम्बन्धको व्युच्छिन्न करनेकी ओर, हम जैन संस्कार पाकर भी स्वेच्छासे स्वभावत प्रवृत्त क्यो नही होते ? ऐहिक आभिजात्य प्रदर्शनकी ओर हम सहसा क्यो झुक जाया करते है ? मनोद्वेगोको युक्त समय पर रोकनेमें हम कैसे समर्थ हो सकें ? आदिमे लेकर जीवके जन्म जन्मान्तर प्रवाही अस्तित्वको स्पष्ट रूपसे कैसे प्रमाणित किया जाय ? हमारी वाह्य रुचि न रहने पर भी अनावश्यक प्रसगो पर मोहावेश या कषायोका उदय कैसे उपस्थित होता है एव इसका परिमार्जन करने हेतु हम आचार व्यवहारको कैसे परिवर्तित व्यवस्थित करें ? ध्यान-साधनाकी रुचि व अभ्यास कैसे ग्रहण व उद्दीप्त किया जाय कि कायिक सुखोकी अपेक्षा सद्भावनात्मक वैचारिक अनुभूतियोकी ओर हम आकर्षित हो सकें ? ज्ञानका अर्थ व उद्दिष्ट दिशा क्या है ? जैन दर्शन सम्मत ज्ञानकी स्व पर प्रकाशक परिभाषाका ध्येय विस्तार कैसा व कितना माना जाय कि हमें मार्गदर्शन मिल सके ? पुण्य व पापकी व्यावहारिक किन्तु प्रवाह परिस्थिति परिवर्तित व्याख्याओ व धारणाओंके अनिर्धारित तुमुलके अवेष्टनसे प्रताडित होकर हम आज जो दिग्भ्रान्त हो उठते हैं उसका कोई आत्मोन्नति-सम्मत विश्लेषण व स्पष्टीकरण किया जा सकता है कि नही ? रुचि प्रेरित मानसिक साधनाका अवलवन कैसे किया जाय तदर्थ किन-किन अस्वस्थ वैषयिक प्रवृत्तियोकी तिलाञ्जलि देनी आवश्यक है ? गभीर दार्शनिक प्रश्नो व समस्याओको अपनी-अपनी मेधानुसार सुलझानेका निष्कपट प्रयत्न भी सदा चलता रहता—उपासना की व्यक्ति विशेषके दृष्टिकोणसे क्या मर्यादा है ? व्यावहारिक व आन्तरिक उपासनाकी सीमा रेखाएँ किन भावनाओके उद्वर्तनके सहारे निर्धारित की जा सकती हैं । सकोच विकास अथवा सुख-दु ख कायिक इ गित ही क्या चेतन-अचेतनकी सीमा निर्धारित करनेका मापदण्ड है ? प्रत्येक जीवके कर्मोंकी सत्ता क्या अपना इतना स्वतत्र अस्तित्व रखती है कि जीव उसके प्रावल्य वश मदा सर्वदा ही नतमस्तक होनेको बाध्य होता रहे । इसका अपवाद कब कैसे व क्यो होता है या हो सकता है ?

कितने सवादोकी यहाँ गणना की जाय बीच-बीचमें कारणवश व्यवधान पडने पर भी यह क्रम वर्षों तक चलता रहा । नाहटाबन्धु इन चर्चाओमें अपेक्षाकृत अधिक लगनसे भाग लिया करते, प्रेरक बनते, उत्साहित करते व अपने अध्ययन-मनन शोधके उपहारोको मित्रोमें अनवरत बाँटते रहते ।

चर्चा प्रसगमें अनेक बार आधुनिक विज्ञानकी कई नई उपलब्धियाँ, जिनका पद विषयक जैन तत्त्व विवेचनकी सम्मतियोंसे सतुलन करना आवश्यक प्रतीत होता, गहन मनोविशेषका हेतु बन जाती । उस समय नाहटा बन्धुओका जैन सिद्धान्त आग्रह देखते बनता—जैन विवेचन युक्तिवाह्य प्रमाणित होने पर उनके हृदयमें आघात पहुँचता और उसका समन्वय (युक्तिसिद्ध) किये जाने पर बाँछें खिल जाती ।

इन सवाद-चर्चा गोष्ठियोका मनोभावो व आचरण पर कितना प्रभाव पडता था यह तो उसमें भाग लेने वाले व्यक्ति ही निर्णय कर सकते हैं । परन्तु नाहटा बन्धुओंके उन अवसरो पर परिस्फुट होने वाले उत्साह व लगनके साक्षी तो सभी रहे हैं तभी उनके आह्वान पर अनेक बार उनके स्व स्थान पर इन गोष्ठियोका आयोजन होता रहा है । साहित्य साधनाके साथ-साथ विचार आदान-प्रदान साधना, वह भी सूक्ष्म निर्णय व समन्वय दृष्टि मनोनियोग पूर्वक करनेकी कृति सहित नाहटा बन्धुओंकी विशिष्ट उपलब्धि है ।

आशा ही नही, विश्वास भी है कि वे अनागत कालमें भी पूर्वकी भाँति, साहित्य सेवा परायण बने रहेंगे एव अपने अध्ययन मनन लेखनके फलस्वरूप नये-नये विचार उपहार भावी सततिके लिये देते रहेंगे ।



श्री नाहटाजीका अद्भुत व्यक्तित्व

श्री रिखबराज कर्णावट, एडवोकेट, जोधपुर

स्वनामधन्य श्री अगरचन्दजी नाहटाका नाम मैं अपने विद्यार्थी-जीवनसे सुनता आ रहा था। उनके द्वारा किया गया शोध कार्यका विवरण उनके लेखोके माध्यमसे मुझे पत्र-पत्रिकाओंमें पढनेको मिलता रहा। उनकी गवेषणा व सत्यान्वेषणकी शक्तिका मैं कायल था। उनके व्यक्तित्व व रहन-सहनके सम्बन्धमें मैंने एक विशेष प्रकारकी धारणा बना रखी थी किन्तु प्रथम साक्षात्कार में जब मैंने श्री नाहटाजीके दर्शन किये तो मैं कुछ क्षणोके लिए विश्वास नही कर सका कि बीकानेरी पगडी व ठेठ राजस्थानी वेषभूषामें ऐसा महान् विद्वान् देखनेको मिलेगा। नाहटाजोकी व्यक्तिकी भाँति राजस्थानी भाषामें निरहकार वार्ता करते देख कर मैं उनके प्रति आकर्षित हुए बिना न रह सका। उसके बाद तो ज्यो-ज्यों मिलनेका काम पडता गया, मेरी भक्ति उनके प्रति उत्तरोत्तर बढती गई।

श्री नाहटाजी व्यवसायसे व्यापारी हैं। व्यापारी चतुर, परिश्रमी व लगनशील होता है। शोधके कामोमें उनके ये गुण स्पष्टतया परिलक्षित होते हैं। अनेक दुर्लभ छिपे हुए ग्रन्थोका पता लगाकर श्री नाहटाजीने भारतीय वाङ्मयकी अद्भुत सेवा की है। जब मैंने यहा सुना कि सरस्वती माकी अनवरत सेवा करनेवाले इस सपूतको अभिनन्दन ग्रन्थ भेट करनेका निर्णय हुआ है तो मेरा हृदय प्रसन्नता व प्रफुल्लतासे भर गया। भारतीके इस वरद पुत्रका अभिनन्दन करने मात्रसे हमारे कर्त्तव्यकी इतिश्री नही हो जाती। जो महान काम इस विभूतिने अपने हाथमें लिया और जिसे वे बिना रुके अभी तक करते आ रहे हैं, उस काममें गति देनेमें हमारा भरपूर सहयोग हो और जो मशाल इन्होंने जलाय है, उसे मन्द न होने देनेकी प्रतिज्ञा योग्य विद्वान् लें तो श्री नाहटाजीको सन्तोष होगा। श्री नाहटाजी चिरायु होकर अपने मित्रोको भी इस शोधकार्यको बढ़ानेमें प्रेरणा प्रदान कर उनका मार्ग प्रशस्त करते रहें।

हार्दिक अभिनन्दन

श्री मोतीलाल खुराना

- मा भारतीकी सेवामें सदैव रत।
- अहिंसा परमो धर्म की ज्ञान ज्योति प्रज्वलित रखने वाले।
- पुरातन आध्यात्मिक ग्रन्थोको अपना समस्त जीवन समर्पित करने वाले।
- जिनकी लेखनी कभी विश्राम नही लेती।
- जो सभी पत्र-पत्रिकाओको अपना ही मानते हैं।
- उन श्री अगरचन्दजी नाहटाके प्रति अपनी समस्त शुभ कामनाएँ प्रेषित करते हुए हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ।

मेरी दृष्टिमें श्री अगरचन्द नाहटा

श्री चन्दनमल 'चाँद' एम० ए०, साहित्यरत्न

स्वस्थ शरीर, लम्बा कद, धोती कुर्ते पर बन्द गलेका सफेद कोट, सिर पर बीकानेरी पगडी, मोटे फ्रेमका चश्मा लगाये बडी-बडी मूँछो वाले श्याम वर्ण, व्यक्ति कलकत्तेके एक समारोहमें बैठा देखकर मुझे लगा कि कोई सेठ हैं जिसे लक्ष्मीकी कृपासे इस साहित्यिक-समारोहमें भी मच पर प्रतिष्ठित कर दिया गया है। लेकिन जब सयोजकने परिचय देते हुए कहा कि साहित्य, कला और पुरातत्त्वके शोधक श्री अगरचन्दजी नाहटा आपके सामने, अपने विचार व्यक्त करेंगे और वही सेठ माईकके सामने खडा हुआ तो मैं चौंक उठा। एम० ए० की परीक्षामें हिन्दी साहित्यके इतिहासके प्रश्नोको हल करते समय जिन अगरचन्द नाहटाका नामोल्लेख पृथ्वीराज रासोकी प्रामाणिकताके सन्दर्भमें कई स्थानो पर किया था, क्या यही वे नाहटा है ? मेरी कल्पनामें उभरता हुआ उनका स्वरूप प्रत्यक्षके इस स्वरूपसे एकदम भिन्न था। लेकिन जब उनका धारा-प्रवाह शोधपूर्ण वक्तव्य हुआ तो विश्वास करना ही पडा कि ये ही वे श्री नाहटाजी हैं, जिनकी विद्वत्ताका मैं कायल था और जिनसे मिलनेकी मेरी भावना अत्यन्त प्रबल थी। संयोग ही कहना चाहिए कि मेरी जन्मभूमि श्री डूगरगढ बीकानेरके निकट होते हुए भी उनसे पहली बार वही प्रत्यक्ष मिलना हुआ। कलकत्तेकी उस दूर-दूरकी मुलाकातके बाद तो अब तक नाहटाजीसे मिलने, चर्चा करने और पत्र-व्यवहारके अनेक अवसर प्राप्त हुए हैं और ज्यो-ज्यो उनके साथ परिचय एव निकटता बढी है, उनके व्यक्तित्वके अनेक पहलू मेरे सन्मुख स्पष्टतासे उजागर हुए हैं।

श्री नाहटाजीके अध्ययन-लेखनसे हिन्दी, राजस्थानी और प्राकृतके पाठक भलीभाति परिचित हैं। उनके हजारो लेख एव सैकडो ग्रन्थ उनकी विद्वत्ताके परिचायक है। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ में प्रतिमाह नियमित रूपसे उनके शोधपूर्ण निबन्ध प्रकाशित होते रहते हैं। अत मैं इस सम्बन्धमें अधिक कुछ न लिखकर नाहटाके व्यक्तित्व पर ही कुछ लिखना चाहूँगा।

श्री नाहटाजी वैश्यकुलके सम्पन्न परिवारमें लक्ष्मीके लाडले होते हुए भी साहित्यके अनुरागी कैसे बने, और मुश्किलसे प्राइमरी तककी स्कूली-शिक्षाके बावजूद उन्होंने एम० ए० और पी-एच० डी०के विद्यार्थियोके मार्गदर्शक बननेकी योग्यता कैसे प्राप्त की, यह सचमुच प्रेरक एव आश्चर्यजनक है। ज्ञानकी अखण्ड प्यास, विद्याकी लगन, सत्यके अनुसन्धानकी तीव्र भावना और सतत श्रम ही इस सफलताके साधन हो सकते हैं और श्री नाहटाजीके व्यक्तित्वमें ये गुण सहजरूपसे मिलते हैं। स्वभावसे सरल, निरभिमानी किन्तु वाणीसे अत्यन्त स्पष्ट तथा निर्भीक।

जो सत्य लगा उसे कहनेमें कही सकोच अथवा भय नही। खुले रूपमें उसे कहना और लिखना वे अपना धर्म मानते हैं। इसमें किसीको प्रिय-अप्रिय लगे तो इसकी परवाह नही। जैन सस्कार इनके जीवनमें रमे हुए है। सात्त्विकता और सहजता इनके व्यक्तित्वके दो महत्त्वपूर्ण गुण हैं। कही कोई दिखावा प्रदर्शन और बडप्पन नही। मिलनसारिता ऐसी कि सामान्य व्यक्तिको अपने पाडित्यके बोझसे कभी बोझिल नही होने देते और विद्वानोके बीच विद्वान्की तरह उसी सहजतासे पगडी लगाये गलेमें चादर डाले शोध-प्रबन्ध पढ रहे होते हैं या चर्चामें व्यस्त।

सादगी और धार्मिक सस्कार उनकी अपनी विशेषता है। रात्रि भोजन नही करना, जमीकन्द नही खाना, सामायिक और नियमित स्वाध्याय करना उनकी दिनचर्याके अग हैं। परन्तु

प्रवासमें भोजन आदिके लिए मेजबानको कोई कष्ट देना उनको पसन्द नही। जहाँ उनकी सुविधा और सस्कारोंके अनुकूल व्यवस्था नही, वहाँ अलगसे अतिरिक्त व्यवस्थाके लिए मेजबानको परेशानी देना नही चाहते। स्वय सयमसे काम चला लेते हैं।

पिछले दिनों बम्बई विश्व-विद्यालयकी प्राकृत सेमिनारके लिए आमन्त्रित होकर बम्बई पहुँचे तो भारत जैन महामडलके कार्यालयमें भी आये। सध्याका समय था। भगवान् महावीरके २५ सौवे निर्वाण-महोत्सवके सम्बन्धमें प्रकाशित होने वाले साहित्यकी चर्चामें डूब गये। सुझाव देने लगे और इधर सूर्य अस्ताचलकी ओर बढने लगा। मैंने पूछा—"सध्याका भोजन"? सहजतासे बोले—"मैं रात्रि-भोजन तो नही करता।" फिर मुझे संकोचमें पडा देखकर बोले कि परेशानीकी कोई बात नही, यदि कुछ फल, दूध वगैरह मिल सके तो काम चल जायेगा। आफिसमें बैठकर ही थोडे फल एवं दूध लिया और फिर साहित्य-चर्चामें डूब गये। न भोजनकी चिन्ता, न नियममे व्यवधान। साहित्य और विद्याकी धुनमें ही मस्त रहकर आनन्द मान लेना उनका स्वभाव है।

जैन समाजमें समन्वय, प्रेम और मैत्रीपूर्ण वातावरणके लिए श्री नाहटाजी सदा प्रयत्नशील रहते है। सम्प्रदायका भेद नही, साम्प्रदायिकताके आग्रहसे मुक्त हैं। श्वेताम्बर आचार्य हो या दिगम्बर मुनि, स्थानकवासी हो या तेरापन्थी—सबके साथ आपका निकटतम सम्बन्ध है। जिन आचार्यों, साधुओ एव साध्वियोके ज्ञान, ध्यानसे वे प्रभावित होते है, उनकी प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रसन्नतापूर्वक चर्चा करते है। जिस विचारको ठीक समझते हैं उसको अपने लेखो और ग्रन्थोंमें उद्धृत करते हुए यह ध्यानमें नही रखते कि वे उनके सम्प्रदायके हैं या नही। नाहटाजीकी इसी गुणग्राहकताने उनको किसी सम्प्रदाय विशेष का नही बल्कि सारे समाजका प्रिय विद्वान् बना दिया है।

श्री नाहटाजी कर्मयोगी हैं। साहित्य-मन्दिरके ऐसे पुजारी, जो प्रतिपल अपनी साहित्य साधना में संलग्न रहते हैं। कही भी रहें, कही भी जायें उनकी शोध-वृत्ति और जिज्ञासा प्रतिपल सजग रहती हैं। सग्रह और परिग्रह धार्मिक दृष्टिसे गुण नही है किन्तु आपने संग्रहको भी गुणके रूपमें प्रतिष्ठित कर दिया है। हजारों हस्तलिखित दुर्लभ ग्रन्थ, हजारो प्रकाशित ग्रन्थ, प्राचीन कलाकृतिया, मूल्यवान सिक्को आदिका उनका निजी संग्रहालय एक सग्रह तो अवश्य है किन्तु परिग्रह नही।

वर्षके बारह महीनोंमें से ग्यारह महीने वे अपने सग्रहालय और पुस्तकालयमें बैठकर अध्ययन एव लेखनमें रत रहते है। वे ज्ञानका कोरा बोझ नही ढोते, उसे चरित्रमें उतारते है।

नाहटाजीकी एक दुर्लभ विशेषता यह भी है कि वे नये साहित्यकारो, नई पीढीके युवा लेखकोको प्रोत्साहित करते हैं। उनकी विद्वत्ता वह वटवृक्ष नही, जिसके नीचे कोई नन्हा पौधा पनप ही नही सकता वरन् उस मेघकी तरह है जो, नये अंकुरोको प्रस्फुटित होनेके लिए प्रोत्साहनका जल देता है। मैंने आजसे लगभग कई वर्षों पूर्व अपनी नई प्रकाशित दो पुस्तकें उन्हें भेजी थी, जिसकी प्राप्ति और बधाईका पत्र उन्होंने हाथोहाथ भिजवाया। उस समय तक उनसे मेरा साक्षात्कार नही हुआ था लेकिन उनके उस पत्रसे मुझे अत्यन्त आनन्द और उत्साह मिला। इसी प्रकार अनेक छोटे-बडे, नये-पुराने लेखको और कवियोकी विशेषताओंको वे सराहते, प्रोत्साहित करते रहते है।

श्री नाहटाजीके सम्पूर्ण व्यक्तित्वको समझना उतना ही कठिन है, जितना कठिन उनकी लिखावटको पढना। मैंने उनकी लिखावटके सम्बन्धमें उनसे जब शिकायत की तो वे मुस्कुराकर टाल गये। वैसे उनके पत्र पढते-पढते एव जैनजगत्में प्रकाशित होनेवाले लेखोको टाईप कराते-कराते उनकी लिखावट पढनेमें

तो लगभग सफल हो गया हूँ किन्तु उनके व्यक्तित्वको पूरी तरहसे समझना उतना सरल और सहज नही। अत अभिनन्दनके इस अवसर पर आडी-तिरछी रेखाओसे उनके व्यक्तित्वका एक लघु रेखाचित्र प्रस्तुत करते हुए मैं शुभकामना करता हूँ कि वे सफल स्वास्थ्यपूर्ण शतायु बनकर साहित्यकी सेवा करते रहें।



श्री अगरचन्द नाहटा : एक व्यक्तित्व

श्री ताजमलजी बोथरा

भाई साहब श्री अगरचन्दजी नाहटासे मेरा सम्बन्ध हुए प्रायः ४ युग व्यतीत होने आये हैं। सं० १९८४-८५ की बात होगी जब हम गाँव पूनरासरमें रहा करते थे और बीच-बीच में मैं बीकानेर आया करता था। उस समय पूज्य महाराज साहब १००८ श्री जिन कृपाचन्द्रसूरिजी इनके बीकानेर स्थित नोहरेमें ही विराजा करते थे और उक्त महाशय, पूज्य महाराज साहबकी सेवामें प्राय वही मिलते। उनसे वही बीच-बीचमें मुलाकातें होती। इस तरह स० १९८७ की वह शुभ घडी भी आई जब कि हम लोग बीकानेर में आ बसे तबसे हमारा और इनका सम्पर्क बढने लगा। हमारा सम्बन्ध दृढतर होनेका यह भी एक कारण था कि इनकी पूज्य मातुश्रीजी बोथरोकी लडकी होनेके नाते मेरे पूज्यपिताजीको भाईजीके नामसे सम्बोधित किया करती थी, और वे इनको बाई साहबके नामसे सम्बोधित किया करते थे, इस तरह इन भाई-बहिनोका सबध भी दृढतम हो गया। पिताजीको ये लोग मामाजी और हमलोग इन भाइयोको भाई साहबके नामसे पुकारते। इस तरह हमारा समागम बढने लगा। समागम जरूर बढने लगा पर केवल व्यावहारिकही, ज्ञान गरिमा की दृष्टिसे नही। मुझे कई जगह इनके साथ यात्रा करनेका सुअवसर प्राप्त हुआ। कई तीर्थों एव मीटिंगो आदिमें भी इनके साथ गया।

आपका व्यापारिक ज्ञान भी उच्चकोटि का था। आप पहले आसाममें जहाँ कि आपका कारोबार था, जाया करते थे और महीनो वही रहा करते तथा काम-काज देखा करते थे पर उस व्यस्तता पूर्ण वातावरण में भी आपका साहित्यिक प्रेम स्पष्टरूपसे परिलक्षित होता था। जब देखिये तब साहित्य सेवामें ही लीन। व्यापारिक कार्योंसे अवकाश मिलते ही आप साहित्य साधना में जुट जाया करते थे। वहाँके योग्य विद्वानो, साहित्यकारोसे मिलना-जुलना समय-समय पर जब भी धार्मिक, जयतिया, सभाओ आदिका भव्य आयोजन होता उस समय स्थानीय विद्वान् मडलिया आदि साहित्यिक गोष्ठी आदिका आयोजन करना अपनी अपनी साहित्यिक अभिरुचिका परिचय देता रहा। इस तरह कई वर्ष समयकी गतिने आपके कार्यक्रमोंमें भी कुछ परिवर्तन कर दिया। इधर अब कई वर्षोंसे वर्षमें एक बार जाते हैं, उसमें भी तो कई घण्टा वही काम ।

जब मैं इनकी साहित्य सेवाका अन्दाज लगाता हूँ तो मस्तिष्क चक्कर काटने लगता है। दैनिक एवं मासिक लेकर प्राय· एक सौ तो पत्र आते हैं। उन सबोको देखना जिनको कुछ लिखना आवश्यक हो उनको लिखना, अन्यान्य विषयों पर लेख लिखवाना, कई पत्रादि लिखवाना, आये हुए महानुभावोसे बातचीत

करना, कोई मीटिंग आदि हो तो उनमें भी सम्मिलित होना, खास खास दिनोंमें व्याख्यान श्रवण करने जाना और अपना अध्ययन अध्यापन करना। आदि आपके जीवनके प्रधान कार्यक्रमसे बन गये हैं। शायद ही कोई जैन-अजैन ऐसा पत्र होगा जिसने इन्हे लेख आदि भेजनेका अनुरोध किया हो और इन्होंने इसे नही भेजा हो। किसी भी विषय पर आपकी लेखनी अबाध गतिसे अग्रसर होती है। बिना इस बातकी अपेक्षा किये ही कि यहाँ कौन सा शब्द उपयुक्त होगा, आपकी लेखनी इस गतिसे दौड पडती है यही कारण है कि आज ये इतने बडे लेखक हो गये हैं। शताधिक शोध छात्रोको पथ-प्रदर्शन, हजारो व्यक्तियोको साहित्यिक एवं धार्मिक सामग्री प्रदान करना इनके लिए साहजिक था।

आपके सग्रहमें ४०००० हस्तलिखित ग्रन्थ ४००० मुद्रित ग्रन्थ एव कलाभवनमें ३००० चित्र होगे। आप इतनी विशाल साहित्य सामग्रीको लिये उसमें अकेले ही तप रहे हैं। उनसे कोई भी सज्जन जो जितना चाहे लाभ ले सकता है। आपने अपने ऐतिहासिक एवं साहित्यिक ज्ञानसे जैन धर्म और खासकर खरतरगच्छकी जो महिमा बढायी है उसकी जितनी भी प्रशसा की जाय कम है। आपको जैसे भी अवसर प्राप्त होता है आप दिन भरमें ६–७ सामायिकें कर लेते है, जिससे पठन पाठनका कार्य सुचारु रूपसे हो जाता है। आप सदा यही कहते रहते हैं कि मेरे पर तो इन सामायिको का बडा भारी उपकार है और आज जो मैं इस अवस्था पर हूँ उसका मूल कारण ही ये ही है। इसी प्रकार सामायिक करनेकी प्रेरणा सबको देते रहते हैं।

मेरे पर तो स्नेहके साथ ही साथ इतनी कृपा है जिसकी अन्यथा अपेक्षा नही की जा सकती है। करीब २।। वर्ष पूर्वकी बात होगी जबकि कलकत्तेमें एक बहुत बडी बीमारीसे छुटकारा पानेके पश्चात् नई जिन्दगी लेकर जब उसके ४ महीने पश्चात् बीकानेर विश्राम लेनेके लिये गया तो आप मेरी सुख शाता पूच्छाके लिए पधारा करते। एक दिन आपने फरमाया कि 'अपना सम्बन्ध और पूज्य मामा साहबका स्नेह मुझे प्रेरित करता है कि तुम्हें कुछ आध्यात्मिक प्रेरणा दू। इसलिए मैंने सोचा है कि घण्टाभरके लिए यहाँ आऊ और हम ज्ञान चर्चा करें। आपके साथ ज्ञान चर्चाके योग्य तो मैं था ही कहाँ। यह तो आपकी कृपाके सिवाय और था ही क्या? उसी दिनसे आपने पधारना प्रारम्भ कर दिया और हमारा यह क्रम चलता रहा। चलता रहा तब तक, जब तक कि मैं आपके यहाँ जाने योग्य नही हो गया। फिर भी जब मैं गया तो आपने कहा कि 'तुम अभी क्यो आये हो मैं वहाँ आता ही। मैंने कहा कि 'अब मैं आ सकता हूँ इसलिए आया हूँ। आपने बडा भारी कष्ट किया इसके लिए मैं आपका हार्दिक आभारी हूँ।''

मैं बहुत व्यक्तियोंके सम्पर्कमें आया, बहुत व्यक्तियोंसे मिला पर ऐसा कर्त्तव्यपरायण निष्ठावान एव लगन वाला मानसिक कार्यकर्ता मेरी नजरोमें नही आया। जब कभी देखिये तभी अध्ययन मनन एव पठनका कार्य चलता ही रहता है। इनके अध्ययनको देखकर न तो आश्चर्यका ठिकाना ही नही रहता कि क्या ही गजबका है इनका क्षयोपशम कि वे थकते ही नही, चाहे रात-दिन पढते ही रहें।

इनके पुस्तकालय को लीजिये। चारो ओर पुस्तके छिटकी हुई पडी हैं। बीचमें नाहटाजी बैठे अपने कार्यमें व्यस्त हैं। आस-पासमें किसीको आप लिखा रहे हैं तो कोई अपने आप लिख रहे हैं। कोई इनसे प्रश्न पूछता है तो कोई अपने शोध कार्य सम्बन्धी अध्ययनमें लीन है। इनके साधु जीवनकी कहाँ तक प्रशंसा की जाय। न खानेकी चिन्ता, न पीनेकी और न सोने की ही और न नहाने निपटे की ही। जहाँ जो खानेकी मिल गया वही ठीक। न-नमकीनका विचार और न मीठेका ही सोच जहाँ जो मिल गया वही ठीक। कई यात्राओंमें नाहटाजीको खाते पीते देखकर मनमें विचार आता कि नाहटाजीका इन चीजोको

और इस तरहसे खाना इनको अवश्य बीमारीका शिकार बना देगा। पर सब हजम। स्वास्थ्य पर भी गुरुदेवकी ऐसी कृपा है कि ६१ वर्षकी उम्रमें भी सब कुछ हजम समयका सदुपयोग तो ऐसा देखनेमें ही आता जहाँ दो मिनट भी समय मिला कि लगे पढने। समयका ऐसा सदुपयोग देखकर मनमें आता है कि कहाँ तो इनका सदुपयोग और कहाँ मेरा दुरुपयोग। मनमें आता है कि इनका फोटो उतरवाकर रखलू और समय-समय पर दर्शन करता रहूँ।

इनके सम्बन्धमे कहाँ तक लिखा जाय, जितना लिखूं उतना ही कम है। इन्होने हमारे समाजका जो गौरव वढाया है वह अकथनीय हैं। गुरुदेव इन्हें चिरायु करें और वे एक वीर युवाकी तरह माँ सरस्वती की सेवा करते रहें, यही शुभेच्छा है।

श्री भँवरलालजी नाहटा

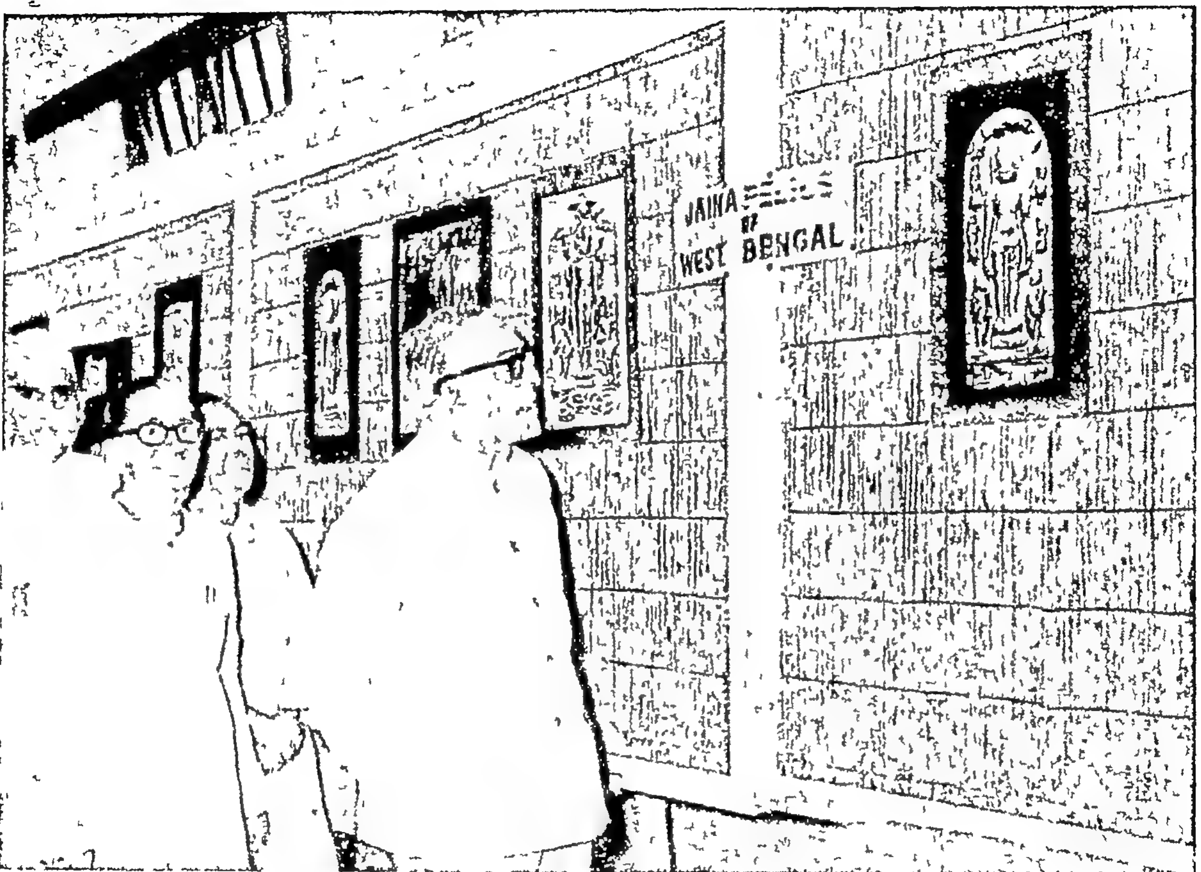
श्री ताजमलजी बोथरा

करीव ४३-४४ वर्ष हुए होंगे जब मैं अपने गाँव पूनरासरमें रहा करता था। तब मुझे ख्याल आता है कि एक दिन किसी साप्ताहिक अखबारको पढते हुए मैंने एक छोटी सी कविता पढी, जिसमें उसके रचयिता का नाम श्री भवरलालजी नाहटा लिखा था। यद्यपि उस वक्त मैं उन्हें जानता नही था पर उसे देखकर मुझे हर्ष हुआ। उसके एक दो वर्ष पश्चात् ही उनका और मेरा परिचय हो गया और तबसे आज तक वही प्रेम भाव चला आ रहा है। भाई साहब श्री अगरचन्दजीके साथ ही साथ आपके साथ भी प्रेमाधिक होता जा रहा है। आप श्रीमान् अगरचन्दजीके भ्रातृज हैं। आपकी व्यावहारिक शिक्षा भी श्री अगरचन्दजीके समान ही समझिये पर क्षयोपशम तेज होनेके कारण ही इतनी उन्नति कर पाये है। आप हिन्दी, सस्कृत, गुजराती, प्राकृत एवं बगला आदि सभी भाषाओंसे अपना काम निकाल लेते हैं और थोडे बहुत काव्यों की रचना भी कर लेते हैं। आप पुरातत्त्वका भी ज्ञान रखते हैं आप लेखादि भी लिखा करते है। आप लिपिकार वहुत उच्चकोटिके है। चाहे आप जितना भी इन्हे लिखनेको दे दीजिये लिख डालेंगे। मुझे जब कभी भी किसी प्राचीन, राजस्थानी भाषा आदिके शब्दोका अर्थ आदि जाननेकी आवश्यकता होती है तो मैं सीधा इन्हीके पास दौडा जाता हूँ। गुरुदेव इन्हें दीर्घायु करें और ये पूर्ण स्वस्थ रहकर जैन समाजकी सेवा करते रहे, यही मगल कामना है।

श्री नाहटाजी जैनधर्मके सच्चे सेवक

श्री मानचन्द भन्डारी

बीकानेर निवासी श्री अगरचन्दजी सा० नाहटा ६१ वे वर्षमें प्रवेश कर रहे है। उसके उपलक्षमें अभिनदन ग्रन्थ भेंट कार्यका विचार प्रशसनीय है। श्री नाहटाजीने ऐतिहासिक खोजके साथ जैनधर्मके विषयमें जो पुस्तकें लिखी हैं, वास्तवमें सराहनीय है।



भँवर लाल अध्यक्ष (जैन भवन) — विजय सिंह जी नाहर — सुकोमल कान्ति घोष — A L डायस



पुरातत्वाचार्य मुनि जिनविजय जी अभिनन्दन समारोह चित्तौड मे
महातीर्थ पावापुरी पुस्तक समर्पण करते हुए श्री भँवरलाल जी नाहटा ।



भँवरलाल जी नाहटा	विजय सिंह जी नाहर	सुकोमलकान्ति घोष	डायस	शंकर प्रसाद मित्र प्रधान न्यायाध्यक्ष Calcutta High Court



शिवदास चौधरी (एसियाटिक सो० लाइब्रेरियन) — गभीरचदजी बोथरा — विजय सिह नाहर — सुनीतिकुमार चटर्जी — भँवरलाल जी नाहटा (अध्यक्ष जैन भवन)

श्री नाहटाजीसे मेरा सम्पर्क काफी समयमे है। यो मिलनेका अवसर बहुत कम प्राप्त हुआ किन्तु पत्र व्यवहार कई वर्षोंसे चलता है। इनकी लिखी हुई पुस्तकें व लेख मैं रुचिपूर्वक पढता हूँ और उनके प्रति मेरी सद्‌भावना एव श्रद्धा अटूट है।

श्री नाहटाके दिलमें जैनधर्मके प्रचार व प्रसारका जोश है। इसी कारण वे समय-समय पर विद्वत्तापूर्ण लेख लिखते रहते हैं। जिनके पढनेसे जैनधर्मके प्रति श्रद्धा उत्पन्न होना स्वाभाविक है। यही नहीं, ऐतिहासिक जानकारी भी प्राप्त होती है।

सबसे बडी खूबी उनमें यह है कि वे सरल एव निरभिमानी है। वे हर एक व्यक्तिके कथनोका उत्तर सतोषजनक देते हैं। साथ ही नेक सलाह देनेमें भी सकोच नही करते।

२ वर्ष पूर्व जब श्री कापरडाजी तीर्थ स्वर्णजयन्ती महोत्सव ग्रथके प्रबधक था मैंने आपसे पत्र व्यवहार द्वारा काफी जानकारी प्राप्त की। मेरे अनुरोध पर आपने श्री नाकोडाजी व साचोर तीर्थके लिए लेख लिखकर भेजे। साथ ही श्री नाकोडाजी तीर्थके शिलालेखोकी नकलें व श्री कापरडा तीर्थके सम्बधमें रचे पुराने रासा वि० स० १६७३-८३ व ९५ की प्रतिलिपियाँ भी भेजी जिससे मुझे काफी सहायता मिली।

श्री नाहटाजी किसीके पत्रका उत्तर देनेमें विलम्ब नही करते। उनका ऐसा नियम है कि आज पत्र प्राप्त हुआ उसका उत्तर एक या दो दिनमें दे ही देते। उनके पास काफी कार्य रहते हुए भी वे किसीकी प्रार्थनाको नही ठुकराते, यथायोग्य सहयोग देकर उन्हे सन्तुष्ट करनेकी भावना रखते है।

उनको जैनधर्मके प्रत्येक गच्छके सम्बन्धमें काफी जानकारी है। विशेषकर खरतरगच्छके सम्बन्धमें जितनी जानकारी उनको है, शायद ही किसी और को हो, ऐसा मेरा अनुभव है। उन्होंने इस गच्छकी जो सेवा की है•चिरस्मरणीय रहेगी।

श्री नाहटाजी समय समय पर सभाओमें भी अपने विचार व्यक्त करते हैं। उनके वक्तव्यसे समाजन इसलिए अधिक प्रभावित होते हैं कि वे सच्ची व ऐतिहासिक बातोपर ही विशेष प्रकाश डालते हैं।

हाल हीमें दिगम्बरदास जैनका एक लेख छपा है उसमें "भगवान महावीरको चोइसवाँ तीर्थंकर सिद्ध करना" इसके लिए ११ सदस्यके नाम हैं जिसमें श्रीनाहटाजीका नाम भी आपको "सिद्धान्त चक्रवर्ती" के नामसे सम्बोधित कर "यथानाम तथा गुण"की कहावतको चरितार्थ किया है। वास्तवमें नाहटाजी जैसे विद्वान् लेखक श्वे० जैनमें कम हैं। जैन धर्मावलम्बियोको गर्व है कि इस सघमें आप जैसे इतिहासप्रेमी सज्जन विद्यमान हैं। अन्य धर्मावलम्बियोसे आपका काफी सम्पर्क हैं और आपकी पुस्तक व लेख पढकर सतोष व्यक्त करते हैं।

मैं उनकी दीर्घायु व स्वास्थ्य ठीक बना रहे, इसकी शुभ कामना करता हूँ। •

साहित्यके सितारे व शोध-निर्देशक

श्री अगरचन्दजी नाहटा

श्री प्रकाशचन्द सेठिया

शान्त स्वभावी, मृदुभाषी, अह एव क्रोधादिसे कोसो दूर परम सन्तोषी श्रीनाहटाजीका व्यक्तित्व प्रभावशाली एव अत्यन्त ही सरल है। आर्थिक सम्पन्नता होते हुए भी आप मात्र धोती, कुर्ता, दुपट्टा व पगडी

ही पहनते हैं । सच ही तो है—व्यक्ति वस्त्रोसे नही, गुणोसे पहचाना जाता है । यही नही, भावोकी उच्चताके कारण आप कई शुभ कार्योंमें आर्थिक योग भी देते रहते है । सात्त्विक जीवन यापन करते हुए भी आप अपने अध्ययनको निरन्तर विस्तृत बनाते जा रहे हैं । अध्ययन व लेखन कार्यमें व्यस्त होते हुए भी आप समय-समय पर विभिन्न सभाओ, आयोजनोमें भी सम्मिलित होते हैं व हर आगन्तुकसे इस तरहका व्यवहार करते है कि इसका तो स्वय ही अनुभव किया जा सकता है । आपकी भाषणकला व शैली अत्यन्त आकर्षक एव ज्ञानवर्द्धक है । आपके विस्तृत व्यक्तित्वका अनुभव तो सम्पर्कमें आकर ही किया जा सकता है ।

जहाँतक मेरा नाहटाजीसे परिचयका सबन्ध है, मुझे अपने आपपर गर्व होना चाहिए कि श्रीनाहटाजी मेरे अत्यन्त निकट सम्बन्धी व पूज्य है। परन्तु हम नवयुवकोका यह दुर्भाग्य ही है कि हमने घरकी ज्ञानगगासे भी लाभान्वित होनेका कभी प्रयास तक नही किया । यद्यपि कुछ साथी प्रसगवश कहा करते हैं कि श्री नाहटाजीके निर्मल ज्ञानका लाभ अवश्य प्राप्त करना चाहिए मगर व्यवहारमें कोई भी उनके पास बैठकर उनके विचारोसे लाभान्वित होनेका प्रयास नही करता , तथापि नाहटाजी स्वय मुझे बुलावा भेजकर कुछ देना चाहते है ।

मैंने अनुभव किया है कि आप इस ६१ वर्षकी वृद्धावस्थाके बावजूद अपनी साधनामें ज्योंके त्यों सलग्न हैं । आपकी कार्यक्षमता अद्‌भुत है । आप पुस्तकालय व सग्रहालयके सचालन, पुस्तको, पत्र-पत्रिकाओ आदिके लेखन व प्रकाशनके साथ ही रात्रिमें ग्यारह बजे तक अध्ययन भी किया करते है और सुबह भी ब्राह्ममुहूर्त्तमें उठकर फिर अपनी साधनामें जुट जाते है । साहित्यिक साधनाके अतिरिक्त आप धार्मिक क्रियाएँ—सामायिक, प्रतिक्रमण, देवपूजन, आदि भी नियमित रूपसे करते रहते हैं ।

निष्कर्षके तौरपर हम यही कह सकते है, कि नाहटाजी अपनी साधनाकी सफलता हेतु हर सभव उचित प्रयास करते हैं । वह गृहस्थमें रहते हुए भी अत्यन्त सरल व सात्त्विक जीवन यापन करते है ।

आवश्यकता इस बातकी है कि आपके नवयुवक व सम्पूर्ण नयी पीढी श्री नाहटाजीके लिये दीर्घायुकी कामना करते हुए उनके जीवनसे गुणग्रहण करके साहित्य व समाजकी सेवा की ओर प्रवृत्त हो । आपके द्वारा इस पवित्र वसुन्धरा पर निरन्तर ज्ञान सुधारसकी वृष्टि होती रहे—यही कामना है ।



राजस्थानकी महान् विभूति श्री अगरचन्दजी नाहटा

श्री देवेन्द्रकुमार कोचर (B. Com. LL B)

राजस्थान बहुत प्राचीन कालसे ही अपने शौर्य, साहित्य एव कलाके कारण अपना विशिष्ट स्थान बनाये हुए हैं । राजस्थान अनेक प्रसिद्ध शूरवीरो, विद्वानो, कवियो एव कलाकारोकी जन्मभूमि होनेके साथ-साथ उनकी प्रश्रय भूमि भी रहा है, जिनका भारतीय इतिहासमें विशिष्ट स्थान है। अर्वाचीन कालमें राजस्थानकी भूमि जिन महान् विभूतियोको जन्म देकर कृतार्थ हुई, उनमें एक विभूति श्रीअगरचन्दजी नाहटा भी हैं ।

साहित्यके क्षेत्रमें इनका योगदान विशेष महत्त्वका है । स्वय जाने माने लेखक सम्पादक होनेके साथ-साथ अनेक साहित्यकार आपके सानिध्यसे आज देशमें अपना विशिष्ट स्थान प्राप्त कर चुके हैं । आपका

"अभय जैन ग्रन्थालय" अपने आपमें विशिष्ट स्थान बनाये हुए है। इसमें लगभग ४० हजार हस्तलिखित एव उतनी ही मुद्रित अर्थात् लगभग ८० हजार ग्रन्थोका महत्त्वपूर्ण सग्रह है। आपने अपने अग्रज स्व श्री अभयराज जी नाहटाकी स्मृतिमे स्थापित 'श्रीअभय जैन ग्रन्थमाला' से २५ ग्रन्थ प्रकाशित कराये हैं। इसके अतिरिक्त अपने पिताकी स्मृतिमें स्थापित 'सेठ शकरदान नाहटा कला भवन' में दुर्लभ सिक्को, प्राचीन प्रतिमाओ एव नानाविध कलाकृतियोंका महत्त्वपूर्ण सग्रह है। आप राजस्थानमें चल रही साहित्यिक प्रवृत्तियोके सरक्षक एव पोषक रहे हैं। आपकी लगन एव अथक प्रयासके फलस्वरूप ही आज राजस्थानके विभिन्न साहित्यकारोकी रचनाएँ प्रकाशमे आ सकी हैं।

इस उत्कट साहित्य साधनाके अलावा आपका व्यक्तिगत जीवन भी विशेष महत्त्वका है। आपका जीवन सादगी, सच्चरित्रता एव निष्कटतासे ओतप्रोत है। आपके जीवनकी सबसे बडी विशेषता नियमितता है। प्रात कालीन ब्राह्ममुहूर्तमें उठकर सामायिक जैसी पवित्र एव जीवनके लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण क्रियासे अपनी दिनचर्या आरम्भ करते है एव साहित्य व धार्मिक आराधनासे ओत-प्रोत क्रियाएँ रात्रिके ११ बजे तक अबाध गतिसे चलती है। इसमें व्यवधान उत्पन्न नही होता।

शासनदेवसे प्रार्थना है कि इस नरपुगवको दीर्घायु प्रदान करें, जिससे वे लम्बे समय तक देश व समाजकी सेवा कर सकें।



श्रेष्ठिवर श्री अगरचन्दजी नाहटा

श्री कन्हैयालाल लोढा एम ए

श्रेष्ठिवर श्रीअगरचन्द जी नाहटा राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त लेखक है। आपने धर्म, दर्शन, आचार, नीति, साहित्य, इतिहास आदि विविध विषयोका सुन्दर व सागोपाग विवेचन किया है उससे आपकी प्रखर बुद्धि, मौलिक विचार एव प्रकर्षविद्वत्ता स्पष्ट झलकती है।

आपका स्वभाव बडा ही मिलनसार, हृदय बडा उदार, बुद्धि बडी ही प्रखर, और विचार बडे ही गम्भीर हैं। आपके मिलनसार स्वभाव एव उदार हृदयका ही प्रभाव है कि केवल जैनसमाज नही अपितु प्रत्येक समाज व संस्था आपकी उपस्थिति व सदस्यतासे अपनेको सौभाग्यशाली मानती है।

आपकी शोधमें विशेष रुचि है। प्राचीन साहित्यका अनुसधान करते समय आपके समक्ष जो नवीन विषय-वस्तु आई वह जिस धर्म, सम्प्रदाय, सस्था, पत्रके लिए उपयोगी हैं, उसे निष्पक्षभावसे लेख-बद्ध कर भेज दी। आप अनेक शोधकर्त्ता छात्रोको बराबर मार्गदर्शन कर प्रेरणा देते व उत्साह बढाते रहते है। भारतके ऐतिहासिक शोध-कार्यमे आपकी महत्त्वपूर्ण देन है।

आप सरलता, सहृदयता, सज्जनता एवं सदाशयताकी तो साक्षात् मूर्त्ति ही हैं। इन गुणोंसे सभी सस्थाओ व व्यक्तियोंसे आपका आत्मीय सबंध है। आपका उद्देश्य सदैव सर्जनका रहा है विध्वसका नही। अत आपने संस्था व व्यक्तिकी उन्नतिमें ही सदैव योगदान दिया है, उसके दोषोपर दृष्टि डालकर द्वेष कभी नही किया।

नाहटाजी केवल विचारक व लेखक ही नही, कर्मठ कार्यकर्त्ता व सुधारक भी है। समय-समयपर अपने समाजको महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये एव उन्हें व्यावहारिक व रचनात्मक रूप भी दिया। अभी-अभी आपने एक अत्यन्त उपयोगी सुझाव प्रस्तुत किया है कि श्वेताम्बर समाजके अनेक विद्वान् व विचारक जो छिपे व इधर-उधर विखरे हुए हैं, उन्हे प्रकाश में लाया जाय और इन्हें सगठित कर परस्पर प्रेरणा देने, प्रगति करने, पूरक बनने व ऊँचा उठानेके लिए प्रोत्साहन दिया जाय।

सर्वतोमुखी प्रतिभाके धनी नाहटाजी भारतकी अमूल्य निधि हैं। आपने तन, मन, धन, लेखन, प्रवचन आदिसे धर्म व समाजकी जो महान् सेवा की है एतदर्थ आप शतश' अभिनदनके पात्र हैं। आप शतायु हो धर्म, समाज व राष्ट्रकी सेवा करते रहें, यही मेरी शुभ भावना है।



मूर्तिमान् ज्ञानकोष—श्री नाहटा

श्री भँवरलालजी पोल्याका

जबसे मैंने होश संभाला और हिन्दी पत्र-पत्रिकाओको रुचि मेरे हृदयमें जागृत हुई तबसे ही श्री अगरचन्दजी नाहटासे उनकी कृतियोके कारण मेरा परोक्ष परिचय हुआ। पत्रिकाओमें जिन लेखकोकी रचनाएँ मैं ध्यानपूर्वक पढता था उनमे श्री नाहटाजी भी थे। शायद ही कभी ऐसा हुआ हो कि उनकी लिखी कोई रचना मेरे हाथमें आई हो और मैंने उसे बिना पढे छोडा हो। इसका कारण था उनकी रचनामें अकाट्य युक्तियो एव तर्कों द्वारा तथ्योका प्रस्तुतीकरण। जब किसी विद्वान् द्वारा प्रस्तुत ऐतिहासिक तथ्यों के विपरीत वे अपनी वात उसके विरुद्ध रखते थे तो सचमुच ही बडा आनन्द आता था। एक विद्वान् द्वारा दूसरे विद्वान्की स्थापनाओका निराकरण उनके निवन्धोमें पढता था तो एक प्रकारसे आत्मतुष्टिका अनुभव करता था। तुष्टिपानका यह लोभ ही मुझे प्रारम्भमें उनकी रचनाओको पढनेके लिए प्रेरित करता रहा। अब भी यह प्रवृत्ति कायम है किन्तु दृष्टिकोणमें परिवर्तन हो गया है। अब उनकी रचनाएँ मैं अपने स्वयके ज्ञानकोपकी वृद्धि हेतु ही पढता हूँ।

श्री नाहटाजीका जन्म बीकानेरके एक व्यापारिक परिवारमें हुआ अत इनके पिताकी इच्छा इन्हें एक सफल व्यापारी वनानेकी रही हो तो इसमें आश्चर्य क्या ? उनके पिताकी यह इच्छा फलवती भी हुई और श्री नाहटा साहित्य सेवीके साथ-साथ सफल व्यापारी एव लक्ष्मीपति भी बने। शायद यही कारण है कि उनकी रहन-सहनमें एक व्यापारीकी सादगी परिलक्षित होती है। ऊँची चौडे पाडकी बीकानेरी ढगसे बधी पगडी, श्यामल चेहरे पर घनी काली मूछें, लम्बा बन्द गलेका कोट और घुटनोसे कुछ ही नीची तीन लागकी धोती इस पहनावेमें वे सचमुच ही पहली नजरमें कोई सेठ मालूम होते है। बिना परिचय दिये कोई शायद ही उन्हें इस वेषभूषामें साहित्यकारके रूपमें अनुमान कर सके। इस सम्बन्धमें स्वर्गीय पूज्य गुरुदेव श्री प० चैनसुखदासजी एक संस्मरण सुनाया करते थे। नाहटाजी जब प्रथम बार किसी कारणवश जयपुर आए तो स्वभावतः वे पण्डित साहबसे मिलने हेतु सस्कृत कालेज आए। पण्डित साहब उस समय

भोजन करने हेतु अथवा किसी अन्य कार्यवश कालेजसे बाहर गये थे अत श्री नाहटाजी बाहर ही कालेजके गोखे पर बैठ गए। कुछ देर बाद पण्डित साहब जब आए तो आपने उतरकर उनसे नमस्कार किया। पण्डित साहबने नीचेसे ऊपर तक उन्हे देखा। पहले देखा तो था नही इसलिए पहचाननेका तो प्रश्न ही पैदा नही होता था। श्रीनाहटाजीने स्वय ही यह कह कर अपना परिचय दिया कि हूँ अगरचन्द नाहटो हूँ। पण्डित साहबका कहना था कि इस प्रकार उनको अपने सामने पाकर उन्हें सुखद आश्चर्य हुआ था और वे उनकी सादगीसे बडे प्रभावित हुए थे। उस समय श्री नाहटाजीके चश्मेकी एक कमानी भी कुछ टूटी सी थी। बादमें जब मैं स्वय बीकानेर गया और नाहटाजीके प्रत्यक्ष दर्शन किए तो स्वय भी उनकी सादगी, सीधेपन एव दूसरोको सहारा देकर आगे उठानेकी प्रवृत्ति आदि गुणोसे प्रभावित हुए बिना नही रहा।

सन् १९५९ में जब मैं अपनी राजकीय सेवाओके कारण बीकानेर गया तो सर्वप्रथम मैंने श्री नाहटाजीके प्रत्यक्ष दर्शन किये। ज्यो ही मेरा उनका परिचय हुआ उन्होने बड़ा प्रेम प्रदर्शन किया। यह उनहीके कारण था कि जब तक मैं बीकानेर रहा श्वेताम्बर समाजके प्रत्येक उत्सवमें उन्होने आग्रहपूर्वक मुझे निमन्त्रित किया और अपने विचार वहाँ प्रस्तुत करनेका अलभ्य अवसर दिया। दिगम्बर समाजके तो वहाँ गिने चुने ही घर हैं अत उनकी ओरसे तो इस प्रकारका कोई आयोजन वहाँ होता ही नही था।

श्री नाहटाजीको हिन्दीके साथ साथ राजस्थानी भाषासे भी बडा प्रेम है और उसकी श्रीवृद्धि करनेका भी आपका बडा प्रयत्न रहता है। एक बार जब मैं बीकानेर था तो आपने कहा कि राजस्थानी हमारी मातृभाषा है अत उस ओर भी हमें ध्यान देना चाहिये। बातो ही बातोमें तै हुआ कि सप्ताहमें एक ऐसी गोष्ठीका आयोजन हो जिसमें राजस्थानीमें ही वार्तालाप, भाषण, चर्चा आदि हो। मैंने भी उसमें सम्मिलित होनेकी हाँ कर दी और प्रथम कार्यवाहीमें सम्मिलित भी हुआ। सच मानिए जब मैं वहाँ अपनी टूटी-फूटी जयपुरी भाषामें बोला तो अपनी असमथता और अज्ञानके कारण शर्मसे झुक-झुक गया। उस गोष्ठीमें वही मेरी प्रथम और अन्तिम उपस्थिति थी और शायद वह गोष्ठी आगे उस रूपमें चली भी नहीं।

श्री नाहटाजीमें किसी प्रकारका साम्प्रदायिक आग्रह नही है। मेरे बीकानेर प्रवास कालमें एक क्षुल्लक सहजानन्द वहाँ आए। आपने एवं आपके भाई श्री अभैराजजी ने उन्हें अपने शिवबाडीके उद्यानमें ठहराया, उनके आहार पान आदिकी व्यवस्था की और उनके प्रवचनोका भी प्रबध किया। साधुओंके पास मैं बचपनसे ही नही जाता या बहुत कम जाता हूँ किन्तु नाहटाजीके आग्रह पर मैं उनके पास गया। क्षुल्लकजीका कहना था कि वे भगवान् महावीरके समवसरणमें साधु थे और मनकी कमजोरीके कारण मुक्ति लाभ नही कर सके तथा जन्म मरणके चक्करमें भटक रहे हैं। आदि। ऐसा उन्हें जातिस्मरण हुआ है। उन्होने वहाँ यह भी कहा कि वे अष्टापद जहाँसे भगवान ऋषभदेवने मुक्ति लाभ किया, के ठीक स्थानसे परिचित है एव अष्टापद पर भरतने जिनमदिरोका निर्माण कराया, वे जहाँ है, वह स्थान भी जानते हैं। इस समय वह स्थान बर्फसे ढका हुआ है। बर्फ हटाने पर मदिर निकल सकते है। उनके इस कथनका विश्वास कर नाहटाजी स्वय तो नहीं किन्तु उनके बडे भाई वहाँसे उनके साथ हिमालयकी ओर गए किन्तु बर्फसे ढके होनेसे वह प्रयत्न सफल नही हुआ और अष्टापद सबधी ज्ञान जहाँका तहाँ ही रहा। इसही सिलसिलेमे मुझे नाहटाजीकी मितव्ययिता एव व्यावहारिकताका भी ज्ञान हुआ। इनही क्षुल्लकजीका भाषण एक बार बीकानेरसे ३-४ मील दूरी पर आयोजित किया गया था जिसे सुनने हेतु मैं और मेरी श्रीमतीजी भी जा रहे थे। तागेमें जब दरवाजेके बाहर निकले तो देखा श्री नाहटाजी खडे है। बैठनेका आग्रह किया तो बोले कि इसही लिए तो खडा हूँ कि कोई ऐसी सवारी मिल जाय जिसमे स्थान हो, नही तो व्यर्थ ही पूरे तागेके

पैसे देने पड़ेंगे। छोटेमे छोटे कागजको भी आप फेंकते नही। उनका भी उपयोग करते हैं। मेरे पास जो उनके लेख आते हैं उन पर कई वार तो १-१।। इंच तक कागज लगा हुआ आता है जिस पर आपकी वात लिखी हुई होती है।

श्री नाहटाजीने अव तक हजारो निवध एव वीसियो पुस्तकें लिखी हैं जो ऐतिहासिक महत्त्व की हैं। भारतकी विख्यात जैनाजैन पत्रिकाओंमें आपके निवध प्रकाशित होते हैं जिनमें हिन्दी, प्राकृत, सस्कृत अपभ्रंश आदि भाषाओके लेखको आदिसे सवधित महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। साहित्यिक कृतियोके लेखकों आदिसे सवधित कई गुत्थियाँ एवं विवाद आपके निवधोके कारण ही सुलझना सभव हुआ है। 'पृथ्वीराज रासो' सवधी विवादका अन्त इसका एक छोटा सा उदाहरण है।

आप वडे कुशाग्र वुद्धि हैं तथा दूसरे लेखकोंकी छोटीसे छोटी बातकी ओर भी आपका ध्यान तत्काल आकृष्ट होता है। प्रमाणमें एक उदाहरण प्रस्तुत है—

'वाबू छोटेलाल जैन स्मृति ग्रथ'में आपका एक निवध '५वी शतीके प्राकृत ग्रंथ वसुदेव हिन्दीकी रामकथा' शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था जिसके सवधमें श्रद्धेय गुरुवर्य प० चैनसुखदासजीने अपने सम्पादकीयमे लिखा था, ग्रंथके नामके साथ जो हिन्डी शब्द लगा है हमारे विचारमें वह हिन्दीका ही पूर्वरूप है। वसुदेव हिन्डी अर्थात् वसुदेव भाषा अर्थात् हिन्दी भाषामें वसुदेव चरित्र। अगर हमारा यह विचार सत्य है तो हिन्दी शब्द और हिन्दी भाषाका प्रार्दुभाव ५वी शतीसे भी अधिक पूर्वमें चला जाता है। भाषा सवधी शोधकर्त्ताओके लिए 'वसुदेव हिन्डी' वास्तवमें एक महत्त्वपूर्ण कडी सिद्ध हो सकता है।" आपने ४-३-६८ को पण्डित साहवको लिखा—"आपने वसुदेव हिन्डीमें हिन्डी शब्दको हिन्दीका पूर्वरूप माना है वह ठीक नही है। हिन्डीका मतलव है भ्रमण करना, घूमना। श्री कृष्णके पिता वसुदेवने जगह-जगह घूमकर वहुतसे विवाह किए उसहीका मुख्य वर्णन इस ग्रथमें है। प्रासगिक रूपसे इसमें वहुत सी कथाएँ आई हैं। सम्पादकीयमें जो भी लिखा गया वह विचार मैंने ही गुरुदेवको दे दिया था और शीघ्रतावश वह सम्पादकीय में चला भी गया। चूंकि यह विचार मैंने ही सर्व प्रथम उनको दिया था अत' उन्होने नाहटाजीका वह पत्र मुझे दे दिया कि मैं इस सवधमें लिखूं। आज भी यह पत्र मेरे पास इसलिए सुरक्षित है कि इस सवव में कुछ लिखना है। समयाभाव किंवा आलस्यवश ही कुछ लिख नही पाया और भविष्यमें लिख सकूंगा या नही कहा नही जा सकता अत सक्षेपमें इस सवधमें कुछ सकेत इस आशाके साथ करना चाहता हूँ कि समर्थ विद्वान् इस विषय पर पूर्वाग्रहोसे हटकर नए दृष्टिकोणसे विचार करें। डा० देवेंद्रकुमार जैनने अपने "अपभ्रंश भाषा और साहित्य" नामक पुस्तकके प्रथम सस्करणमें पृष्ठ १००१ पर लिखा है—

"स्वय पाणिनिने कुछ धातु पाठ दिये है जिनका सवध डा० जोशी प्राकृत धातुओसे मानते हैं जैसे—हिन्ड गत्यर्थे—हिन्डइ (अपभ्रंश), हाट (वगला), हिंटणा (कुमाउनी)। इन धातुओका व्यवहार संस्कृतमें नही होता।" श्री श्यामसुन्दर लाल दीक्षित एम० ए०, सा० रत्न, प्रभाकरने एक 'माडर्न हिन्दी कोप'का सम्पादन किया है जिसमें भी हिण्डनका अर्थ घूमना किया है। पालना या झूला भी हिण्डोला इसलिए कहलाता है कि वह इधर-उधर घूमता है। जयपुरमें हिण्डोलेको हीदा कहते हैं और उसमें झूलनेको हीदना। हिण्डोल एक प्रकारका राग होता है जिसके प्रभावमे झूलना अपने आप झूलने लगता है ऐसा सगीत शास्त्रोंमें कहा है। श्री दीक्षितके कोपमें हिण्डोलका सस्कृत रूप हिन्दोल वताया है। स० दोलाका अपभ्रंश रूप डोला, सं० दहति शब्दका अपभ्रंश रूप डहइ है। इस सवका निष्कर्ष हमारे विचारमें यह निकला कि ये

सब शब्द एक ही क्रियासे सबंधित हैं और इनमें 'ड' का 'द' में परिवर्तन भी हुआ है। इस क्रियाका अर्थ यात्रा करना और इधर-उधर घूमना दोनो ही होता है। इस तरह हिन्डीका एक अर्थ यात्रा करनेवाला, इधर उधर घूमनेवाला भी होगा और उसकी भाषा भी हिन्डी ही कहलावेगी। आर्य जब सप्तसिंधु एव सिंधसे गंगाके मैंदानोकी ओर बढे तो वे एक स्थानपर स्थिर नही रहते थे। वे अपने निवास-स्थानके लिए उपयुक्त स्थानकी खोजमें इधर-उधर घूमते रहते थे। इन ही लोगोकी भाषाने विकसित होकर वर्तमान हिन्दी का रूप लिया है और यह प्राय उस प्रदेश तक फैली हुई हैं जहाँ तक कि ये आर्य लोग गए। इस प्रकारसे मैंने हिन्डी शब्दको हिन्दीका पूर्वरूप अर्थात् अपभ्रंश रूप माना था। मेरे विचारमें इसमे कोई असगति नही है और भाषाशास्त्रियोको इसपर और ऊहापोह करना चाहिये।

सन् १९२९–३० के आस-पास नाहटाजीने जिस अभय जैन ग्रन्थालयकी अपने बडे भाई श्री अभय-राजजी नाहटाकी स्मृतिमें स्थापना की थी वह ग्रथालय ही नही महत्त्वपूर्ण सग्रहालय भी है। इसमें ४० हजारके करीब हस्तलिखित, ४० हजार मुद्रित ग्रथ तो हैं ही, साथ ही हजारो ऐतिहासिक महत्त्वके जैनाचार्यों, यतियो, राजाओंके पत्र, पट्टे, पचाग, चित्र, विज्ञप्ति पत्र, मुद्राएँ, डिब्बिया, कलमदान, गजफा, दात, पीतल आदिकी कलापूर्ण सामग्री है। यह सब श्रीनाहटाजीने अपने स्वयके द्रव्य एव श्रमसे एकत्र किया है। आज इसका मूल्य द्रव्यमें नही आँका जा सकता। नाहटाजो जो समय-समय पर साहित्यिक मणि मुक्ताएँ प्रस्तुत करते है वे प्राय. सब ही इस सागरमें गोता लगाकर निकाली हुई होती है। जबतक नाहटाजी बीकानेर रहते है वे प्रतिदिन नित्य नियमसे प्रात अध्ययनार्थ दो-तीन घण्टे यहाँ अवश्य बैठते है। इसके लिए यहाँ ही आपके लिए एक पृथक् कमरा है। इस समय आप किसीसे भी, जहाँ तक मुझे मालूम है, नही मिलते। आज नाहटाजी जो कुछ भी स्वय बने हैं और साहित्य जगत्को जो वो दे पाए हैं उसमें इस ग्रथालयका योग कम नही है। शायद ही किसी अन्य लक्ष्मीपुत्रने इतने परिश्रमसे ऐसी महत्त्वपूर्ण संस्थाका निर्माण किया हो। नाहटाजीके जीवनका प्रत्येक क्षण ज्ञानोपयोगमें व्यतीत होता है। आप यदि उनसे कभी मिलें तो वे आपसे बातें भी इस हीसे सबधित करेंगे।

श्री नाहटाजी ऐतिहासिक विद्वान्, गद्य लेखक तो हैं ही कवि भी हैं। यद्यपि इसके लिए उनके पास समय बहुत कम है। नवम्बर सन् ५३ की 'वीरवाणी' वर्ष ६ अक ५ में आपकी 'श्री महावीर स्तवन' शीर्षक एक सुन्दर कविता प्रकाशित हुई थी। प्राय साहित्यकार या तो गद्य लेखनमें निष्णात होते हैं या पद्य-लेखनमें। ऐसे विरले ही होते हैं जो दोनो विधाओंपर अधिकार रखते हो। श्री नाहटाजी भी उनमेंसे एक हैं।

श्री नाहटाजी जैसे विद्वान्, मनीषी, साम्प्रदायिकतासे परे रहनेवाले सज्जनका अभिनन्दन करनेका देरसे ही सही, जो निर्णय जैन समाजने किया है वह उचित है। हमारी कामना है कि श्री नाहटाजी दीर्घजीवी होकर एवं स्वस्थ रहकर भविष्यमें भी इस ही प्रकार माँ भारतीके भण्डारको भरते रहें।



मरुभूमिकी देन : अनुकरणीय विद्यापति नाहटाजी

श्री पारसकुमार सेठिया

पूज्यवर श्री अगरचन्दजी नाहटा जैसे मनीषीके व्यक्तित्व एव उनके विचारों तथा उनके द्वारा रचित ग्रन्थोकी गम्भीरताकी दृष्टिसे उनकी महानताके सम्बन्धमें कुछ लिखने या कहनेकी न तो मुझमें कोई क्षमता ही है और न अधिकार ही है। मेरे लिये आपके व्यक्तित्वके बारेमें कुछ कहना सूर्यको दीपक दिखाना है। आपका त्याग अतुलनीय है। आप उन कर्मठ व्यक्तियोंमें-से है, जिन्हें स्वयसिद्ध कहा जाता है। आपने अथक परिश्रम करके अपने साहित्यिक जीवनका सर्वतोमुखी विकास किया है। प्रसन्नतापूर्वक साहित्यिक पुरुषार्थ करनेमें आप अत्यन्त कुशल हैं और यही कारण है कि राष्ट्र और समाजमें आप अपना गौरवपूर्ण स्थान बनाने में सफल हुए हैं। आपकी साहित्यिक साधना और कर्मठता अनुकरणीय है। आपने अपने वित्त और श्रमका सदुपयोग साहित्यसेवाके लिए किया है। उसके लिए तो आप सर्वथा धन्यवादके पात्र हैं। साथ ही आपने एक विशाल पुस्तकालय स्थापित किया है। वह एक ऐसा कल्पवृक्ष है जो सदा फूलता-फलता रहेगा और जिसकी अमृतमयी छायामें ज्ञानार्थियोकी अनेक पीढियाँ तृप्तिलाभ करती रहेंगी।

आप अहकार-शून्य व्यक्ति है। आपकी सादगी और मिलनसारिता देखकर कौन कह सकता है कि आप ऐसे वैभव-सम्पन्न व्यक्ति है। आपको आडम्बरपूर्ण परिधानसे सख्त घृणा है। आप मिष्टभाषी एवं साथ ही मितभाषी भी है।

●

संस्मरण

श्री भँवरलालजी नाहटा

बचपन

काकाजी अगरचंदजी मेरेसे छ महीने बडे और काकाजी मेघराजजी तीन वर्ष बडे है। हम तीनोका पढना, खेलना, जीमना आदि सब एक साथ चलता था। कभी-कभी दोनो काकाजीके आपसमें बोलचाल हो जाती तो मैं मेघराजजीके पक्षमें रह जाता था। थोडी देरका मनमुटाव हवा होते देर नही लगती और हम तीनोंमें परस्पर बडा प्रेम रहता। काकाजी मेघराजजी हमारे से आगे थे और हम दोनो एक ही क्लासमें पढते थे। मेघराजजी चौथी क्लासमें शायद दो-तीन वर्ष जमे रहे तो हम दोनो तीसरी क्लासमें थे। फिर पाँचवी क्लासमे हम लोग साथ रहे। दोनो काकाजी फिर स्कूल छोडकर बोलपुर आ गये और बोलपुरमें बंगलाका सामान्य अभ्यास किया। उन दिनो जैन पाठशालाकी पढाई सब स्कूलोसे अच्छी थी। हम लोग अग्रेजी, हिन्दी, भूगोल, सस्कृत, ज्योमेट्री और ऐलजेब्रा तक पढने लगे थे। धार्मिक ज्ञान दोनो प्रतिक्रमण व जीवविचार पूरा कर नवतत्त्व, २५ बोल और पचप्रतिक्रमण पढने लगे थे। दोनो काकाजीके बगाल आ जानेसे मैं अकेला पड गया और छठी क्लासमें थोडे दिन पढनेके बाद मेरा भी स्कूल छूट गया। काकाजी दोनो जब बीकानेर आए तो उन्हें बंगला लिखते-पढते देख मैं भी देखा-देखी बीकानेरमें ही बंगला लिखना-पढना सीख गया। वाणिका अक्षर आदि भी सीखते देर न लगी। जैसे आजकल पढाई ट्यूटरपर ही प्राइमरीसे ठेठ तक निर्भर रहती है हमारी कभी नही रही। प्रायः हम ट्यूटरके पास नही पढे और न किताबो, पाटी या कापियो-

का विशेष खर्च था। स्कूलका काम हम बराबर घरपर कर लेते और छतपर सुबह-सुबह घूमते हुए धर्मकी गाथा याद कर लेते। पिताजी हमेशा अगरचदजी काकाजीको कविसम्राट् कहा करते वैसे उन्हें 'बावू' नामसे भी सम्बोधित किया जाता था।

सहपाठी

हमारे सहपाठी थे जीवनमलजी कोचर, जसकरनजी कोचर, रतनलालजी सुराना, राधाकृष्ण सुनार, हरिसिंह राजपूत आदि। मुकुनलालजी कोचर, जसराज सोनार वगैरह भी हमारे ऊपरकी कक्षामें थे। मेघराज गोपाछा भी शायद हमारे साथ ही थे। स्कूलमें खेलकूद आदिमें हमलोग कम भाग लेते, गवाडके लडकोंके साथ तो कभी नही खेलते। स० १९८० में मेघराजजीका विवाह हो गया था। उसके बाद हमलोगोंने १९८१में स्कूल छोड दिया। यो हम लोग कभी गवाडमें किसी भी खेलमें भाग नही लेते क्योकि शामको पाटेपर बडे-बूढोके पास बैठना व दादाजी (दोनो—दानमलजी, शकरदानजी)के पैर दबाना नित्य क्रम था। आसकरणजी कोठारी आदि पाटेपर आ जाते और हमें लीलावती गणित आदिके सवाल पूछते, ज्ञान, अनुभवकी बातें सुननेको मिलती। हमें बडोंका इतना भय और आतंक था कि कभी पतग उडाना तो दूर, लूटनेके लिए भी छतपर नही जाते, कभी जाते और दादाजी नीचेसे पुकारते तो हम लोग तीनो अलग-अलग रास्तेसे, कोई बाहरसे—कोई किसी सीढ़ीसे, कोई किसी घरमेंसे आता ताकि वे यह न समझ सकें कि ये लोग तीनो एक साथ छतपरसे आ रहे है। स० १९८२के शेषमें कलकत्तेमे हिन्दू-मुसलमानोका दगा हुआ तो कोई काम-काज था नही, डेढ़ महीने व्यापी दगेमें रात-दिन गप्पें मारना और ताश खेलना ही रह गया था। थोडी-थोडी ताश खेलनी आने लगी और बीकानेरमें बालचदजी नाहटा जो हम सबमें छोटे और पढनेमें बिलकुल मुँह चुरानेवाले थे उनके सगतमें लुक-छिपके ताश खेलने लगे। लेकिन बडोके सामने कभी हमने ताश नही खेली और पुकारनेपर उसी चालसे अलग-अलग रास्तोसे उतरकर नीचे आ जाते।

स० १९८३के आषाढ वदी १२ को हम दोनोंका एक ही दिन विवाह हुआ और हम लोग फिर कलकत्ता आ गये। काम-काज गद्दीमें सीखते-करते। प्रतिदिन मदिर जानेका नियम तो था ही सामायिक भी प्रतिदिन करते सरबसुखजी नाहटाके साथ शत्रुंजयरास गौतमरास आदि बोलनेसे कण्ठस्थ हो गये। काकाजी सिलहट रहने लगे यों मैं भी सं० १९८२ में पर्यूषणके बाद सिलहट गया और खाज-खुजली हो जानेसे दीवालीके थोडे दिन बाद कार्तिक महोत्सवजीपर कलकत्ता आ गया, उसके बाद अधिकांश कलकत्ता ही रहा।

सं० १९८४ में श्री जिनकृपाचदसूरिजी माघ सुदि ५ को बीकानेर पधारे, उस समय मैं बीमार था (गोगोलाव कोचरोकी बारातमें गया, रातमें बुखार होकर शरीर जुड गया) फिर ठीक होनेपर व्याख्यानमें जाना, प्रतिक्रमण करना, दिनमें भी सुखसागरजीके पास बैठना, आगमसार आदिका अभ्यास करना चालू रहा। सा० वल्लभश्रीजीके पास कुछ दिन सस्कृत भी पढ़ी फिर अस्वस्थ होनेसे अभ्यास छूट गया। काकाजीकी 'कवि सम्राट्' बचपनकी उपाधि सार्थक हो गयी और उन्होने बहुत-सी गहूलियाँ (श्रीजिनकृपाचदसूरिजी) कई छत्तीसियाँ, स्तवनादि लिखे। मैं भी कुछ गहूलिया लिखता था। गहूली सग्रहमे वे गहूलियाँ छपी हैं। गहूली सग्रह बीकानेर सेठिया प्रेसमें छपा और उसके माध्यमसे हमने प्रूफ करेक्शन करना सीखा। कलकत्तेमें सर्वप्रथम हमारी ओरसे अभयरत्नसार छपा वह तो पिताजी और काकाजीने प० काशीनाथ जैनके मार्फत छापा। दूसरा ग्रन्थ पूजासग्रहमें हमारे दोनोके कुछ स्तवन छपे हैं उसका सशोधन हमने तिलकविजयजी पजाबीसे कराया, वे उस समय सूर्यमलजी यतिके पास ठहरे थे और श्राद्धविधि प्रकरण छपा रहे थे। हमने उन्हें अग्रिम

ग्राहक बनानेमें सहयोग दिया।

हमारे यहाँ उस समय सौ दो सौ पुस्तकें ही नही थी, क्योकि काकाजी अभयराजजीका देहान्त जयपुर में हुआ और उनके पास रही हुई सैकडो पुस्तकें दादाजी वही छोड आये थे। काकाजी अभयराजजीका देहान्त १९७७में हुआ। इतः पूर्व जब वे बीकानेरमें थे, हम लोगोको आठमचौदसका हरी और रात्रिभोजनका उन्होने ही नियम दिलाया था, काकाजीने उस जमानेमें कुछ पाठ्य-पुस्तकें लिखी थी जिन्हे सशोधनार्थ किसीको दी थी पर वापस नही आई। हमने थोडी-बहुत पुस्तकें मँगानी प्रारभ की। पादरासे कुछ ग्रन्थ आगमसार, आत्म आदि मँगवाये जिससे अध्यात्म रुचि जगी। मो० द० देसाईका कविवर समयसुन्दर निबन्ध आत्म-महोदधिमें पढा तो इच्छा हुई कि ग्रन्थमालाको आगे चलाना है तो समयसुन्दरजीका साहित्य शोधकर हिन्दीमें निकालना है। तो बीकानेर ज्ञानभडारोकी शोध प्रारम्भ की। श्री महावीर जैनमडलसे स० १८०४ का लिखा एक गुटका मिला जिसमें उनकी शताधिक कृतियाँ थी, फिर सभी कवियोका साहित्य देखना प्रारभ किया, स्तवनादि भाषा कृतियाँ सग्रह की। ज्ञानभडारोको देखा तो उनकी सूचियाँ भी बनाई, काकाजीने बडे ज्ञान-भडार, कृपाचद्रसूरि भडार, जयचन्दजीके भंडार आदिकी सूचियाँ १ मुसाफिरीमें बनाईं, दूसरे वर्ष मैंने बीका-नेरमें बोरोकी सेरीके उपाश्रयकी सूची बनाई और कलकत्ते आकर सूर्यमलजी मुनिके उपाश्रय (रगसूरि पोशाल) की ग्रन्थसूची बनाई। नाहरजीके यहाँका विशाल सग्रह समयसुन्दरजीकी पापछतीसी आदि देखनेके लिये गये और उनसे घनिष्ठता बढी तो प्रत्येक रविवारको वहाँ जाकर सारा दिन उनके साथ बीतता। काकाजीने जैनधर्म प्रचारक सभासे प्रकाशित जैनधर्म प्रकाशमें प्रकाशित विधवाकुलकके अनुवादका हिन्दीमें विवेचन करके विधवा-कर्त्तव्य लिखा, उसी वर्ष मैंने समयसुन्दरजीकृत रासके आधारसे सती मृगावती पुस्तिका लिखी। दोनो पुस्तकें आगरा श्वे० जैन प्रेससे छपाकर प्रकाशित की एव तत्पश्चात् स्तोत्र पूजादि-संग्रह प्रकाशित किया। शावप्रद्युम्न चौ० (समयसुन्दर) के आधारसे सार लिखा जो अधूरा पडा था। ३५ वर्ष बाद पूरा करके पजाबकी सप्तसिंधु पत्रिकामें छपाया गया। उसी समय मुनिपतिचरित्रका काम शुरू किया जो अधूरा ही रहा। काकाजीने मनुष्य भव दुर्लभता (१० दृष्टान्त) और सम्यक्त्व स्वरूप नामक पुस्तकें लिखी जो अद्यावधि अप्रकाशित हैं। स० १९८६ में मैंने कलकत्ता 'चन्द्रदूत' क्षापणापत्र श्री जिन-कृपाचन्द्रसूरिजीको बीकानेर भेजा। बीकानेरके जैन अभिलेखोका सग्रह प्रारभ किया और हजारो लेख एकत्र किये। सतियोंके लेख भी मेघराजजी काकाजीके सहयोगसे एकत्र किये। गौ० ही० ओझाके कहनेसे ना० प्र० सभाका मेम्बर बना। जटमलनाहरकृत पद्मिनी चौ० प्रतिके प्रसगसे ठा० रामसिंहजीने बुलाया। उन्हें हस्त० ग्रथादि बतलाये। ओझाजीसे परिचय बढा, वे अपने घर भी आये। ज्ञानभडार दिखाया, लायब्रेरी देखी। मंदिरोमें भी गये, अभिलेख दिखाये, जागलकूप वाला लेख भी दिखाया। शिलालेख आदिके सम्बन्धमें बहुत-सी बातें हुई।

नाहरजीके सग्रहको देखकर अपने भी सग्रह करनेकी इच्छा बलवती होती गई। कई वस्तुओका सग्रह किया। हस्तलिखित ग्रथोका सग्रह रद्दी कूटलेके खरीदसे प्रारभ हुआ। सर्वप्रथम ११) में, फिर २) में, फिर ३०) में जो कूटला लाया सुबहसे शामतक अथक परिश्रम करके हजारो ग्रथ निकाले। इतनी इतिहास मामग्री, विकीर्णपत्र, आदेशपत्र, पत्र-व्यवहार आदि प्रचुर परिमाणमें सग्रह हुआ। चित्र, पूठे, कूटेकी सामग्री आदि भी पर्याप्त सग्रह होने लगी। नाथालाल छगनलाल शाह आये तो उन्हें भी १३ पूठे और सचित्र शालिभद्र चौ० कुल ९५) में दिलाई (गोपाल यथेक्षासे) मैंने भी कुछ वस्तुएँ खरीदी। तिलोक-मुनिसे लगभग ३० बडल हस्त-ग्रथ ३०)में तथा इतनी ही करीब सामग्री भेट रूपमें प्राप्त की। जयपुरमें सस्ते पैसोमें बीसो चित्र खरीद लिये। स० १९९१ में कुछ ग्रंथ पालीतानासे गुलाबचंद शामजी भाई

कोरडियासे लाया । उसे कुछ रुपये सहायता दी । पालीतानेके कुछ लेख संग्रह किये । सतीवावके शिलालेखको प्रगट करके ऐतिहासिक भ्राति दूर की । यु० प्र० श्री जिनचन्द्रसूरि ग्रन्थ जिनकृपाचदसूरिश्रीको पालीताने जाकर भेंट किया । आवूजीमें विद्याविजयजी जयतविजयजी आदिसे मिला । उनके शिलालेखादि देखे । यु०प्र० जिनचन्द्रजीके महान् शासन सेवा प्रकरणके पृष्ठ उनके अनुरोधसे वदल डाले जिसमें सिद्धि चन्द्रका नाम था ।

काकाजी अगरचदजीने स० १९८५ के वाद रात्रिभोजनका त्याग कर दिया । प्रतिदिन हम सुखसागर जीके साथ प्रतिक्रमण करते । हमें महीनेमें बारह दिनका हरी, रात्रिभोजनका त्याग था । चौमासेमें तो मैं ये भी रात्रिभोजन त्याग दिया । वाकी दिन तिथिके अतिरिक्त काम पडता तो रातमें कभी-कभी भोजन हो जाता पर सं० २०१० से सर्वथा त्याग दिया ।

काकाजी की स्वाध्याय क्रम वहुत जवर्दस्त था, श्रीमद्‌राजचद, देवचन्द, आनन्दघन, चिदानन्द आदिके साहित्यका विशेष था । सिलहटके व्यस्त व्यापार में भी सामायिक दोनो वक्त होता था । एक बार आप कालीघाटके मकानमें सामायिक कर रहे थे । रातका समय, आग लगी जोर की । वगलमें हमारा किरासन गुदाम और सामने मकान थे । सामने आग बढती देखकर काकाजीको कहा आप उठिये, सर्वनाश हो जायगा । उन्होंने कहा—कोई चिन्ताकी बात नहीं । गुरुदेवकी कृपासे अग्नि शात हो गई । आत्मविश्वास बडी चीज है । आपकी लेखसिद्धि इतनी जवरदस्त है कि किसी भी विषयमें और कैसा भी जटिल हो तुरत दस-बीस पेज लिख डालना आपके लिए आसान है । लोगोको लेखन कार्यके मूडकी आवश्यकता होती है लेकिन यहा तो हर समय इसके लिए प्रस्तुत है ।

समयका काकाजी इतना सदुपयोग करते हैं कि सुबहसे रात ग्यारह बजे तक निरर्थक पाच मिनट भी खोना आपको बर्दाश्त नही । रोज इतनी डाक आती है पर जवाब हाथका हाथ दे देते है । लायब्रेरीकी तीस चालीस हजार मुद्रित और तीस-पैंतीस हजार हस्तलिखित प्रतियोमें से कोई भी पुस्तक तुरत निकालकर प्रस्तुत कर देते हैं । किसीसे कुछ भी लेखादि तैयार कराना हो तो स्वय मिनिटोमें सारा साहित्य-साधन जुटा डालते है । आवश्यकताएँ अल्प है अत मुसाफिरीमें इनेगिने कपडे वेडिंगमें डालते हैं और उसमें भी भार अधिकतर पुस्तकोंका ही रहता है । मुसाफिरीमें पेटी रखते नही यदि कुली नही मिला तो स्वय ही वगलमें डालकर चल पडते हैं । कही भी जावें इतना व्यस्त प्रोग्राम रहता है कि दस दिनका काम एक दिनमें सलटा डालनेकी तमन्ना-शक्ति होनेसे अविश्रान्त उसी धुनमें लगे रहते है । यही कारण है कि आपकी रेल मुसाफिरी प्राय कष्टकर होती है क्योकि पहलेसे रिजर्वेशन कराते नही और कार्य व्यस्ततासे गाडी छूटते-छूटते जाकर पकडते है । खानेपीनेकी पर्वाह नही, दो वक्त खानेके अतिरिक्त व्यस्ततामें कुछ लेनेका अवकाश ही कहाँ । भागते दौडते जीमे और तुरत चौविहार किया । रोज पाच छ सामायिक कर लेना आपका नित्यक्रम है । इसे हम श्रुत सामायिक कह सकते हैं क्योकि अधिकाश स्वाध्याय ग्रंथोका अध्ययन ही रहता है । इतने व्यस्त प्रोग्राम में भी व्याख्यान, पूजा, सभा-सोसाइटीमें जानेका समय निकाल लेते हैं क्योंकि उनके उद्देश्योंमें शारीरिक खुराकसे अधिक वल मानसिक या आत्मिक-खुराककी ओर वना है ।

विशाल अध्ययन

काकाजी अगरचदजीके वहुश्रुत होनेमें इनके स्वाभाविक गुण विशेष कारणभूत हैं । ये अपना समय व्यर्थ एक मिनट भी नही खोते । ग्रन्थालयमें जो भी ग्रथ आते हैं एक वार सभीपर दृष्टि प्रतिलेखन हो जाता हैं और जो पढने योग्य हैं उन्हें पूरा पढ डालते है । यदि कही भी भूल भ्राति विदित हुई तो तुरत सशोधन अडर लाइन आदि कर डालते हैं । विशेष सशोधन योग्य हुई तो उन मूल भ्रातियोंके सम्वन्धमें लेख भी लिख डालते है । प्रेरणादायक गुणोंके अनुकरण हेतु जनतामें उन ग्रंथोका परिचय करानेवाले नोट भी

लिखकर लेख रूपमें प्रकाशित कर देते हैं। कोई भी ज्ञान भंडारकी सूची या ग्रंथ जो उनके दृष्टिपथसे निकला है देखते ही विदित हो जायगा क्योंकि उसपर उनके संशोधन टंकण किए रहते हैं।

हिन्दी साहित्यके इतिहास या जैन साहित्यपर जो भी अन्धानुकरणसे लिखनेकी प्रवृत्ति और बिना ग्रन्थ देखे उस विषयकी जानकारी या उल्लेख करनेकी आदत प्राय साहित्यकारोमें देखी जाती है आपके लेख उस विषयकी मूलभ्रान्तिया दूर कर वास्तविक सत्य प्रकट करनेवाले होते हैं अत साहित्यिक रेस मैदान-में सरपट कलम चलानेवालोको आपके आलोचनात्मक चाबुकसे सतर्क रहना पडता है।

बचपनसे ही आपकी ज्ञानजिज्ञासा इतनी प्रबल थी कि सभी विषयके ग्रन्थोको पढ डालते और धार्मिक व तत्त्वज्ञानके विविध ग्रन्थोपर साधु-मुनिराजोसे चर्चा-जिज्ञासा करते एवं जैन समाजके सुप्रसिद्ध प्रबुद्ध बहुश्रुत कुँवरजीकाका (कुँवरजी आणदजी—भावनगर) से प्रतिमास अनेक प्रश्न किया करते जो जैनधर्म प्रकाशमें नियमित प्रकाशित होते रहते थे। तीर्थयात्रा और साहित्यिक भाषाओका आपको खूब शौक है। प्रतिवर्ष समय निकालकर जाते-आते रहते हैं जिससे आपका सार्वभौम अनुभव अभिवर्द्धित होता है।

सामायिक-श्रुतसामायिक

आपको नियमित सामायिक करनेकी प्रवृत्ति बचपन से ही है। यो तो बचपनसे ही पर्यूषणादि पर्वाराधन सामायिक प्रतिक्रमणादिकी प्रवृत्ति १०-११ वर्षकी अवस्थासे ही थी पर १४-१५ वर्षकी उम्रमें १९८२ मे कलकत्तामे नित्य सामायिक करते व सरवसुखजी नाहटाकी प्रेरणासे गौतमरास-शत्रुञ्जयरास आदि भी कण्ठस्थ हो गए थे। दो प्रतिक्रमण पूरे व पचप्रतिक्रमणका कुछ भाग जीवविचार नवतत्त्व, ३५ बोल तो पाठशालामें ही पूरा हो चुका था। कलकत्तेमें बाबूलाल जी समपुरिया जो प्रज्ञाचक्षु थे—को स्वाध्याय करानेके हेतु कर्म-ग्रथ—संग्रहणी—उपदेश प्रासाद आदि अनेक ग्रथोका पारायण हो गया। श्री जिनकृपाचद्रसूरिजीके चौमासेमें स० १९८५ में हम लोगोने आगमसार आदि पढनेके साथ-साथ अनेक ग्रथोका अध्ययन किया। स्कूलमें पढी हुई थोडी सस्कृतकी भी पुनरावृत्ति हो गई। व्याख्यानमें सुने हुए विषय सस्कृतादि सुभाषित याद हो जाते व इस प्रकार ज्ञानका विकास होने लगा। सूरिजीके अगाध ज्ञान और चारित्रगुणोसे प्रभावित होकर उनके गुण वर्णनात्मक काव्य—गहूलियोका निर्माण भी प्रचुर सख्यामें किया और वे गहूली सग्रहमें प्रकाशित हो गये हमारे प्रूफ संशोधनादिका अनुभव तभी सुखसागरजी महाराजके सानिध्यमें प्रारभ होता है।

पिताजी इन्हें बचपनसे ही कविसम्राट् कहा करते थे। इस समय स्तवन, गहूली व छत्तीसियो आदिके निर्माणने यह चरितार्थ कर दिया। इसके बाद गद्यलेखनकी ओर विशेष प्रवृत्ति हुई। पहला ग्रथ इन्होने विधवा-कर्तव्य लिखा फिर मानव भव दुर्लभता व सम्यक्त्व स्वरूपादि इनकी प्रारभिक कृतियाँ हैं। नित्य सामायिक व सध्याको प्रतिदिन सुखसागरजीके पास प्रतिक्रमण करनेसे वह अभ्यास चालू हो गया। बीकानेरसे सिलहट जानेपर भी काकाजीने सामायिक प्रतिक्रमणका अभ्यास चालू रक्खा और उस समय श्री बुद्धिसागरसूरिजीके ग्रंथ जो मैंने पारदासे मँगाये थे काकाजीने अभ्यास किया और अध्यात्म ज्ञानकी ओर अभिरुचि बढी। श्रीमद्राजचन्द्र ग्रथके अध्ययनसे उनके प्रति आदरभाव जागृत हुआ। उनका 'अपूर्व अवसर एव हे प्रभु हे प्रभु प्रार्थनादि प्रतिक्रमणके पश्चात् गानेसे तल्लीनता उन्हें एक अलग ही लोकमें ले जाती। सिलहटमें मच्छरोका अत्यधिक उपद्रव था फिर भी सामायिक स्वाध्यायमें वे निश्चित रहते थे। एक बार हमारे मकानके सामने ही भयकर अग्निकाण्ड हो गया। पास ही हमारा किरासन गुदाम था। पिताजी वहाँ थे, उन्होने सूचना दी तो काकाजीने कहा, मैं अभी सामायिकमें हूँ जो होगा सो होगा, चिन्ता न करें। थोडी देरमें देखते हैं अग्नि शात हो गई और हमारे मकान गुदाम आदिको कोई आँच नही आई। आप

उस समय अपनी डायरीमें सामयिक विचार भी लिखा करते थे।

अब तो प्राय प्रतिदिन ७-८ सामायिक हो जाती हैं जिसमें अध्ययनका काम चालू रहता है। आपकी स्मरणशक्ति इतनी तेज है कि इतनी बडी लाइब्रेरीकी पुस्तकें बिना सूची देखे तुरत निकाल देते हैं। किसी विषयपर शोध करनेवाले व्यक्तिके समक्ष तुरत पुस्तको व सामग्रीके ढेर कर देते हैं जिससे उसके कार्यमें किसी प्रकारका विलम्ब न हो।

बचपनमें आपके अक्षर बहुत सुन्दर थे पर अधिक लिखने व अक्षरो पर ध्यान न रखनेसे वे दुरूह और अवाच्य हो गये पर बोलकर लिखानेका अभ्यास इतना अधिक हो गया कि चाहिए कोई लिखनेवाला। आप अपने विशाल अध्ययनके बलपर लेख-सिद्ध हो गये और दिनमें यदि लिखनेवाला हो तो पचासो पेज आसानीसे लिखा सकते हैं। अनेक बार ऐसे प्रसग आए जिसमें किसी भाषण, लेख, ग्रन्थको अविलम्ब तैयार करना था तो आप बैठ गये और समयसे पूर्व काम पूर्ण करके ही उठे।

आपमे आलस्यका तो लेशमात्र भी अश नही है। प्रतिदिन सामायिक, पूजन, व्याख्यान आदि सारे कार्य सम्पन्न करते हुए भी मीटिंगोमें जाना, लाइब्रेरियो-ज्ञानभडारोसे ग्रथादि लाना प्रत्येक कार्य आश्चर्यजनक गतिसे कर डालते हैं। जो कार्य हमारे आलस्य-उपेक्षासे महीनो सपन्न नही होते वे कार्य तुरन्त करनेके लिए सामग्री प्रस्तुत कर देते हैं।

स्मरण-शक्तिका यह एक चमत्कार ही कहा जा सकता है कि जैन-साहित्यके हजारो कवियोकी छोटी-मोटी हरेक कृतियाँ और उनमें उपलब्ध-अनुपलब्ध पूछनेपर तुरन्त बता देते है कि यह कृति अमुक ज्ञान-भडारमें है।

स्वय इतना अधिक कार्यरत रहते है कि समय थोडा और काम बेशी। यही कारण है आप प्राय. हरेक काममें ठीक समयपर ही पहुँच पाते है। रेल मुसाफिरीमें भी आप प्राय गाडीके छूटनेके समय ही मुश्किलसे पहुँच पाते हैं और भीड-भडक्केमें आरामका ख्याल किये बिना ही अपनी यात्रा सम्पन्न कर लेते हैं।

आप दूसरोको कार्य करनेमें प्रेरित करते रहते हैं। लोगोको लिखनेके लिए विषय नही मिलता, सामग्री नही मिलती और आप तो इसके लिए समुद्र हैं। कोई काम करनेवाला चाहिए चौबीसो घटे काम करे तो भी सामग्रीका अभाव नही। आपको तो अथक परिश्रम करनेवाला लगनशील व्यक्ति चाहिये। केवल बातें बनानेवाले और कामको जरा भी न करनेवाले व्यक्तिके साथ आप अपना समय बर्बाद नही करना चाहते। ज्यादा बातें बनाना आपको कतई पसन्द नही, आप कामसे काम रखते हैं।

आपकी जिनप्रतिमा और जैन-सिद्धान्तोपर अटूट श्रद्धा है। अपनी मान्यतामें निश्चल होते हुए भी भिन्न मान्यतावाले व्यक्तियो—धर्माचार्यो और कार्यकर्त्ताओंके प्रति उतने ही उदार और सहृदय हैं कि प्रत्येक व्यक्ति आपके व्यक्तित्व और स्वस्थ निष्पक्ष आलोचना और अनुभव प्रधान निर्णयपर आकृष्ट हो जाता है।

आपकी मित्रमण्डली बडी व्यापक है, कार्यक्षेत्र विशाल है। कोई भी विषय किसी भी धर्म सप्रदाय या जातिका हो निष्पक्ष शोध, प्रबुद्ध लेखन और निर्देशन द्वारा अधिकारपूर्वक नेतृत्व करनेके कारण किससे क्या काम लेना, यह कार्य आसानीसे सपन्न कर लेते है। आपका पत्रव्यवहार बहुत विशाल होना स्वाभाविक है। आपका द्वार उनके लिए हर समय खुला है जो आपसे किसी भी विषयमें निर्देश, सम्मति या सामग्री प्राप्त करना चाहता हो। आपके पास जो सामग्री है उसे देना तो सहज औदार्य है पर अन्यत्र स्थानोंसे कष्टपूर्वक जुटाकर प्रस्तुत कर देना और शोधक व अभ्यासियोके लिए सुलभ कर देना यह आपका विलक्षण गुण है। प्रतिदिन आये हुए पत्रोका उत्तर देनेरूप कार्य निष्पन्न करनेमें भी आपका बहुत सा समय लग जाता है पर

आप आजका काम कल पर नही छोडते अन्यथा इतना विशाल कार्य कदापि नही हो पाता। डाक निकालनेके समय तक और उसके वाद तक आप काम निपटाते रहते हैं।

किसी भी धार्मिक साहित्यिक शैक्षणिक कार्योमें आप सबसे आगे रहते हैं। जयन्तियोमें आपकी उपस्थिति अनिवार्य है। वक्तृत्व कला आपकी ओजपूर्ण और सारतत्त्वसे ओत-प्रोत रहती है। विशाल अध्ययन एवं अथाह ज्ञान होनेके कारण आप किसी भी पिक्चर पर घन्टो वोल सकते है और सैकडो पेज लिख सकते है। स्कूलकी पांचवी कक्षा तक शिक्षित व्यक्ति ग्रेजुएटोके ग्रेजुएट व डाक्टरोके डाक्टर है। चुने हुए विषयपर डिग्री हासिल करनेवालोको आपके अथाह ज्ञानके सामने मस्तक झुका लेना पडता है। किसी भी विषयके शोध छात्र आपके शरणमें आनेपर ही अपनेको सही निर्देशन व नेतृत्वमें आया महसूस करता है। और जिस विषयपर कुछ भी साहित्य उपलब्ध न होता हो वह आपके सानिध्यमें प्रचुर सामग्री सम्पन्न अपना अध्ययन कक्ष वना सकता है। आप वहुतसे विद्वानोके लेखकोके कवियोके प्रेरणास्रोत हैं व गुरु हैं। उच्चकोटिके धर्माचार्यो, साधु-साध्वियो व विद्वानोको उचित परामर्श देने योग्य होनेके कारण हर क्षेत्रमें आपका आदर है और आपकी सम्मतिको वडा हीं मूल्यवान व आदरणीय, करणीय गिना जाता है।

व्रत नियम, वृत्ति सक्षेप

आप वचपनसे ही व्रतनियमकी ओर अग्रसर रहे है। काकाजी अभयराजजीके पास प्राय ८-९ वर्षकी उम्रमें आठम चौदस हरी न खाने व रात्रिभोजनका नियम ले लिया था। १८ वर्षकी उम्रमें नित्य चौविहार, अभक्ष्य अनन्तकाय त्याग, आचार, विदूल वासी त्याग, शीतलासातम आदि ठण्डा न खाना, आर्द्रा नक्षत्रके वाद आमफल त्याग आदि सभी श्रावकोचित नियमोंमें रहते हैं। खाने-पीनेमे रसलोलुपता नही, कभी-कभी ऊणोदरी आदि करना, ऊपरसे नमक न लेना, जैसा हो उसीमें सन्तोष आदि गुणोंके कारण भोजन आलोचनादि विकथाओसे विरत रहते हैं। आप दो वखत भोजनके सिवा प्राय. कुछ नही लेते। प्रतिदिन प्राय पोरसी रहती है। चाय तो कभी भी नही पीते, दूध भी पोरसी आनेके वाद ही लेते हैं। नवकारसीसे पूर्व तो मुँहमें पानी डालनेका प्रश्न ही नही। इस अवस्थामें भी कठिन परिश्रममें लगे रहना यह तो अभ्यस्त हो गया है। यात्रामें आपके पास थोडेसे वस्त्र वीडिगमें डाले रखते हैं, पेटी भी नही रखते। आपके पास भार रहता तो मात्र पुस्तकोका, साहित्य सामग्रीका। ग्रन्थोका शौक इतना है कि प्रति वर्ष हजारो पुस्तकें संग्रह कर लेते है। नाटक, सिनेमा आदि खेल-तमाशे देखनेके लिये तो आपके पास समय ही कहाँ? वेकारीकी गपशप और हथाई करनेसे विलकुल दूर रहते हैं। इतने व्यस्त रहते हुए भी जहाँ मिलने-जुलने जाना आवश्यक है और सामाजिक मर्यादा पालनका प्रसंग हो तो उसमें अपना समय देनेमें पीछे नही हटते। अनेक सस्थाओसे सम्वन्धित होनेसे व सार्वजनिक गतिविधियोको सक्रिय योगदान करनेमें भी आप पश्चात्पद नही रहते। कई वर्षोंसे आप प्राय' व्यापारसे निवृत्तसे हैं फिर भी वर्षमें दो मास अपने व्यापारिक केन्द्रोमें हो आते हैं। कामकाज देखकर उचित निर्देश देना व पत्र व्यवहार द्वारा निर्देश करना प्रेरणा देना आपका सतत चालू रहता है। खाता वही और हिसाव कितावके काम आप तुरन्त निरीक्षण कर निपटा देते हैं।

चित्रकला, शिल्पकला, पुरातत्त्व, भाषा विज्ञान व लिपि विज्ञानपर आपका अच्छा अभ्यास है। किसी भी वस्तु विषयको देखकर उसका मूल्याङ्कन करना व उसके तलस्पर्शी सतहपर अधिकार पूर्वक कह देना यह आपकी वहुश्रुतता और विशेषज्ञताका द्योतक है। कलकत्ता यूनिवर्सिटीमें आपके भाषण, वम्वई यूनिवर्सिटीमें महानिवन्ध परीक्षक होना, उदयपुर वाराणसी, दिल्ली आदि स्थानोंमें आपके विविध विषयोमें भाषण होना इसका प्रवल प्रमाण है। विविध सस्थाओंने विद्वत्तासे प्रभावित होकर सघ रत्न आदि

विविध उपाधियोसे विभूषित किया है, सम्मानित किया है। आपकी विद्वत्ताके विषयमें इससे अधिक क्या प्रमाण हो सकते हैं। जब सरदार वल्लभभाई पटेलने आबूको राजस्थानसे निकालकर गुजरातमें मिला दिया था तो नेहरू सरकारने राजस्थानकी न्यायोचित मागपर सद्विचार करना तै किया तो राजस्थानके प्रमुख विद्वानोकी एक मडली नियुक्त हुई जिसने आबू प्रदेशमें भ्रमणकर ऐतिहासिक, सास्कृतिक, वेशभूषा, वोलचाल रीतिरिवाज आदिपर रिपोर्ट दी जिसमें आपभी एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति थे और उन्ही रिपोर्टोंसे राजस्थानका उचित न्याय किया था। राजस्थानी भाषापर आपको बचपनसे ही प्रेम है। उसकी शोधमें आपने हजारों रचनाएँ प्राप्त की और खोज रिपोर्टें लिखी, भाषण दिए, ग्रथ लिख दूसरो द्वारा भी प्रचुर निर्माण करवाया। ये सब कार्य मातृभाषा राजस्थानीकी बडी भारी महत्त्वपूर्ण सेवाएँ हैं।

आपने पचासो ग्रंथो और हजारो निबन्धोका लेखन, सपादन प्रकाशन तथा, कई पत्रोका सम्पादन किया। जैनसाहित्य और राजस्थानी के इतिहासमें ये कार्य अभूतपूर्व और नीवके सुदृढ पत्थर हैं।

• आपके पास कोई भी छोटे मोटे पत्र सपादक आदि लेख माँगते रहते हैं और आप उन्हें निराश न कर यथोचित लेख तुरन्त दे डालते हैं यह आपके औडरदानी होनेका अद्भुत उदाहरण है जो बिना विशाल ज्ञान और लोह लेखनीके धनी बिना यह कार्य हर किसीके वशका नही है।

सरकारी अर्द्ध सरकारी या जानतिक सार्वजनिक सस्थाएँ जो कार्य पचासो वर्षोंमें लाखोंके अर्थव्ययसे नही कर सकती यह कार्य आपने व्यक्तिगत रूपसे समाप्त किया है। अबभी आपके पासजो प्रचुर सामग्री है पचासो विद्वानोको सामग्री सप्लाई करनेके लिए पर्याप्त है जिससे वर्षोंतक उन्हें दिमागी खुराक प्राप्त होती रहे।

आप साहित्यिकोके लिए तीर्थरूप हैं,और ज्ञान-गरिमाकी चलती फिरती इनसाइक्लोपीडिया है। सैकडो वर्षोंमें एकाध व्यक्ति ही क्वचित् इसप्रकारकी निष्ठावाला और वह भी व्यापारी वर्गमें प्राप्त हो जाय तो बहुत समझिये। साधु सन्तोकी बात दूसरी है,वे भी इतना समय निरन्तर लगावें वैसे कम मिलते हैं पर गृहस्थोमें इतनी अप्रमत्त जागरूपता एक अनुपम आदर्श और दृष्टान्त जैसी ही है।



ज्ञानके खोजी : श्रद्धेय नाहटाजी

श्री विजयशकर श्रीवास्तव

अधीक्षक पुरातत्त्व व सग्रहालय विभाग, जोधपुर

ज्ञानके खोज स्वयमें एक ऐसी उपलब्धि है—जो खोजीको अनिर्वचनीय सुख एव आत्मिक शान्ति या सतोष प्रदान करती है और इसीके सम्वलसे वह जीवन पर्यन्त कर्मठतापूर्वक कार्यरत रहता है। श्रद्धेय अगरचंद नाहटा इसके मूर्तरूप हैं। उनके व्यक्तित्व व कृतित्वके सदर्भमें मेरे मानस पटलपर 'दिनकर'जी की वे पक्तियाँ सदा मुखरित हो उठी हैं जिसमें नाहटाजी जैसे कर्मठ व्यक्तित्वको ही स्मरण कर लिखा गया होगा,

"वडा वह आदमी जो जिन्दगी भर काम करता है।" निश्चयत नाहटाजीने "ज्ञानकी खोजमें,

ओज सब खो दिया।"

समूचे देशमें नाहटाजी साहित्य, संस्कृति, इतिहास व पुरातत्त्वके सग्राहक व शोधक रूपमें ख्याति प्राप्त कर चुके हैं। जैन वाङ्मय व पुरातत्त्वके क्षेत्रमें उनका विशिष्ट योगदान है। दर्जनो पुस्तकें व सहस्रो लेख वह प्रकाशित कर चुके हैं। राजस्थानके प्राचीन साहित्य' इतिहास व पुरातत्वके तो वह जीते जागते शब्दकोश हैं। ज्ञानके अर्जन, सरक्षण व प्रकाशनमें उन जैसे दत्त-चित्त एवकर्मठ विद्वान् ही युवापीढीके लिए सदा प्रेरणा-स्रोत रहे हैं। पुस्तको व पत्रिकाओके अथाह समुद्रमें गोते लगानेवाले नाहटाजी विद्यादानमें कितने उदार हैं यह सर्वविदित है। मुझे उनके व्यक्तित्वका यह पक्ष सदा ही आकर्षित करता रहा है। किसी भी विषयपर, किसी भी समय, किसीको भी—यदि शोध खोज सबधी सूचना अपेक्षित है या शङ्का-समाधान करना है तो जितनी त्वरा व तत्परतासे नाहटाजी उसके निष्पादनमें रुचि लेते हैं वह विरले विद्वानोमें ही देखा जाता है। १८वर्षोंके सम्पर्कमें मुझे ऐसे अवसर स्मरण नही आते हैं—जब उससे शोध संबधी किसी भी प्रकारकी सहायताकी आवश्यकता हुई हो और उन्होने अन्यमनस्कता प्रदर्शित की हो। ज्ञानके विस्तारमें उनकी इस उदारताने उन्हें नयी पीढीके शोधक व खोजी विद्वानोके बीच आशातीत रूपसे लोकप्रिय बना रखा है। अनेक बार देशके विभिन्न सभागोमें मेरे सहकर्मियों एव साथियोने जब कभी उनसे भेंट हुई, नाहटाजीकी इस विशाल हृदयताकी भूरि-भूरि प्रशसा करते हुए अपना श्रद्धापूर्वक आभार व्यक्त किया है। वैदिक ऋषियो-की परपरामें उन्होने सदा अपना जीवनदर्शन रखा—"शतहस्त समाहारं सहस्र हस्त समाविरम्।"

कर्मठता उनकी साहित्य-साधनाका रहस्य है। किसी भी काममें जुट जानेपर उसे पूरा कर लेनेपर ही दम लेना उनकी आदत है। बाधाएँ, व्यवधान व कठिनाइया—उनके मार्गमें अवरोधक हो यह उन्हें स्वीकार नही। उनपर विजय पानेकी कलामें वह निष्णात है। उनकी मान्यता है कि शोधार्थीकी सफलताकी आधारशिला उसका अध्यवसाय परिश्रम, लगन व निष्ठा है। जिसमें ये गुण न हों उन्हें इस 'ज्ञानके मार्गपर चलनेका अनर्थक दुस्साहस न करना चाहिए। नाहटाजीका विपुल-साहित्य इस तथ्यका प्रमाण है कि जो भी उन्होने लिखा उसमे अप्रकाशित, अज्ञात एव सर्वथा नवीन सामग्रीका पूर्णत. समावेश किया। उनके साहित्यका बीज-मंत्र है " न अमूल लिख्यते किञ्चित्।

"बीकानेर जैन लेख सग्रह"में बीकानेर व निकटवर्ती क्षेत्रोकी हजारोकी सख्यामें अप्रकाशित जैनमूर्ति व स्मारक अभिलेखोका सकलन व प्रकाशन—उनके अध्यवसायका जीवन्त प्रमाण है। विभिन्न प्राचीन जैन आचार्योंकी जीवनियोके प्रणयनमें भी उन्होने मूलशोध सामग्री व ऐतिहासिक दृष्टि विन्दुको ही प्रमुखता दी। सत्यका उद्घाटन उनका लक्ष्य रहा। देशके विविधानेक शोध सस्थानोसे नाहटाजीका निकटका सम्बन्ध है। शार्दूल राजस्थानी रिसर्च इस्टीच्यूट, बीकानेरसे लम्बी अवधितक उनका घनिष्ठ रहा। सस्थानके माध्यमसे साहित्य व इतिहास सम्बन्धी अनेक अज्ञात रचनाओको विभिन्न विद्वानोसे सपादित करा—राजस्थानके इतिहास व सस्कृतिके विभिन्न पक्षोको प्रकाशित करानेमें उन्होने विशेष रुचि ली। संस्थानकी मुख पत्रिका राजस्थान भारती'के डॉ० टैसीटोरी, पृथ्वीराज राठोड एव महाराजा कुभाविशेपाक—नाहटाजी तथा उनके सहयोगियोके कुशल सयोजन, परिष्कृत सपादन एवं अध्यवसायके परिचायक हैं। इन विशेपाकोके माध्यमसे राजस्थानके सन्दर्भमें जो नवीन ठोस सामग्री प्रकाशमें आई उसका देश विदेशमें जिस प्रकार स्वागत हुआ—वह स्तुत्य है

ऐसे बहु-श्रुत विद्वान् अपनी लेखनीसे राजस्थानकी सास्कृतिक व प्राचीन सपदाके सरक्षण व प्रकाशन-में अधिकाधिक योगदान करें, यही कामना है। ●

धन्य हो रहा अभिनंदन करके जिनका अभिनंदन

श्री शर्मनलाल जैन 'सरस' सकरार (झाँसी)

नयी दिशा दे रहा देशको, जिनका जीवन नदन।
धन्य हो गया अभिनदन, करके जिनका अभिनदन ॥

(१)

जीवनभर जिसने समाजका, हर क्षण अलख जगाया।
अगरचद न-हटा नाहटा, जिसपर कदम वढाया ॥
किया सत्यका सदा समर्थन, तोड भ्रातिका घेरा।
प्रज्ञा-दीप जला धरतीपर, जिसने हरा अँधेरा ॥
दिये सकडो ग्रथ, किया साहित्य देशका भारी।
वृद्धापनमे तरुण-गतिसे, कलम आज भी जारी ॥
ऐसे ज्ञान-दिवाकरका, हम करे किस तरह वदन।
धन्य हो रहा अभिनदन, करके जिनका अभिनदन ॥

(२)

जैन-जातिके रत्न, देश-गौरव, जन-जनके प्यारे।
युगो-युगो तक रहे आप, युगके बनकर रखवारे ॥
पाकर सत सहयोग आपका, जन-मन बने विनोदी।
बीकानेर नगरकी सूनी कभी न होवे गोदी ॥
जिसकी श्वास-श्वासने भूको, माटी कर दी चदन।
'सरस' कलम कर रही सरस हो उनके पदका वदन।
धन्य हो रहा अभिनदन, करके जिनका अभिनदन ॥

वे पुरातत्त्ववेत्तासे तत्त्ववेत्ता बन गये

भँवर लाल कोठारी

जबसे मैं कुछ जानने-समझने योग्य बना, लगभग तबसे ही श्रीयुक्त अगरचन्दजी सा० नाहटाको देखने, सुनने व समझनेके अवसर मुझे उपलब्ध हुए।

मैंने उन्हें चारों ओर फैले-बिखरे पुस्तको, ग्रथो, पाडुलिपियोके अबारके बीच ज्ञानके अथाह सागरमें गहरा गोता लगाते हुए एक गोताखोरके रूपमें देखा और पाया कि ज्ञानके रज्जुको पकडकर जब वे अन्तरतलमें उतर जाते हैं तो अनेकानेक अनमोल रत्न उसी प्रकार इस तलपर ला उडेलते है जिस प्रकार गोताखोर अथवा खनिक समुद्रके अन्तस्तल अथवा वसुन्धराके गर्भमेंसे रत्नोको बटोर लाता है।

प्रारम्भमें जब वे मिलते थे तो जिज्ञासाएँ उभरती थी। अब जब भी मिलते हैं तो समाधान मिल जाता है।

यह चमत्कार है नियमित सामायिक समभावपूर्वक स्वयका अध्ययन-ध्यान अर्थात् स्वाध्याय करनेका। वे आज पुरातत्त्ववेत्तासे तत्त्ववेत्ता बन गये। अध्ययनसे ध्यानको उपलब्ध हो गये।

अभिनन्दनके इन क्षणोमें उनके व्यक्तित्व और कृतित्वका अभिनन्दन और समाधानकारक स्थितित्वका वदन।

•

भारत-विख्यात विभूति

साध्वीश्री चन्द्रप्रभाश्रीजी

श्रमण-सस्कृतिकी तेजोमय आभासे आभासित दिव्य विभूति श्री अगरचन्दजी नाहटा ऊँची बीकानेरी पगडी, स्वच्छ धवल वस्त्र, ऊँची दो-लगी धोती, पैरोमें गोरक्षक जूते तथा आँखोपर उपनेत्र धारण किये हुए प्रथम दर्शनमें एक सम्पन्न किन्तु सात्त्विक धनाधीश ही प्रतीत होते है। बात-चीत करनेपर दर्शक व आगन्तुकको यह जानकर बडा आश्चर्य होता है कि इस सामान्य वेशसे परिवेष्टित यह व्यक्ति कोई सामान्य जन नही है अपितु गभीर ज्ञानका अथाह सागर अपने अन्तस्‌में समाहित किये हुए श्रमण-सस्कृतिके तत्त्वज्ञानका अभिनव व्याख्याता व भाष्यकार है।

इस महामनाकी प्रखर तेजस्वी लेखनीसे निस्सृत शाश्वत चिन्तन-प्रवाहकी सात्त्विक सरिता भारतकी प्राय सभी उच्च-स्तरीय पत्रिकाओमे अपने अबाध-प्रवाहके साथ सतत प्रवहमान है। आप अपने देशके उन तपोपूत ज्ञानवृद्ध लेखको एव विचारकोमें हैं, जो गत ५ दशकोसे निरन्तर अपने साहित्य एव गवेपणापूर्ण सम्पादनोसे भारतीय साहित्यको समृद्ध करते आ रहे हैं। जन-जीवनकी सामान्यसे सामान्य समस्यासे लेकर धर्म और दर्शन जैसे गभीरतम विपयोकी समस्याओ तकका समानरूपसे समाधानपरक चिन्तन अत्यन्त सरल किन्तु प्रमादमयी भाषामें प्रस्तुत करना आपकी लेखनीका विलक्षण कौशल है। हम अनुमान नही लगा सकते कि इस मेधावी प्रतिभाकी कितनी गहराई है? निश्चय ही इस प्रतिभा-पुत्रको अपने ज्ञान-भण्डारके सम्वर्द्धन हेतु कल्पनातीत स्वाध्याय-साधना करनी पडती है। यही कारण है कि आपका अध्ययन केवल स्वाध्याय मात्र न होकर एक स्वतत्र अध्ययन तथा मनन-चिन्तन केवल मन-मन्थक मात्र ही न होकर सभी प्रकारके पूर्वाग्रहोसे मुक्त स्थितिमें अपने नव्य नवीन मौलिक स्वरूपमें हमारे समक्ष आते है।

मैं अपनी सहज एव सात्त्विक श्रद्धा-भक्तिके साथ आपके जीवन व कृतित्वकी अवतारणाके विषयमें बिना किसी अतिशयोक्तिके साथ यह नि सकोच कह सकती हूँ कि वीतराग भगवान महावीरने अपनी परम पुनीत श्रमणीय सस्कृतिकी पवित्र परम्पराको युगानुरूप स्वरूप प्रदान करने तथा उसका प्रचार-प्रसार व सवर्द्धन करने हेतु ही इस प्रज्ञा-प्रतिभासम्पन्न व्यक्तित्वका इस धराधामपर सम्प्रेषण किया है, अन्यथा यह कैसे सभव है कि गृहस्थ-जीवनके सम्पूर्ण उत्तरदायित्वोका सम्यक् प्रकारसे निर्वहन करते हुए उससे भी द्विगुणित उत्साह एव प्रबल शक्तिमत्ताके साथ सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक एवं आध्यात्मिक प्रवृत्तियोंके विकासार्थ केवल सामान्य योगदान ही नही अपितु उनमें अपना पूर्ण सक्रिय सहयोग, प्रेरणा व उद्दात्त दिशा-बोधन भी आप करते रहें।

आपके द्वारा सस्थापित एव सचालित श्री अभय जैन पुस्तकालयमें अन्य अमूल्य वृहद् पुस्तकोके साथ अलभ्य प्राचीन आगम ग्रन्थोकी पाण्डुलिपियोका भी विपुल सग्रह है, जिसके कारण यह ग्रन्थागार शोध-अध्येताओके लिए सदा ही आकर्षणका केन्द्र बना रहता है। इतना वृहद् सकलन कोई एकाएक नही कर सकता। इसके लिए विपुल द्रव्य-राशि, लम्बा समय तथा बडी ही सूझ-बूझकी अपेक्षा है। किन्तु हम देखते है कि मान्य श्री नाहटाजीका अपनी बाल्यकालीन कल्पनाका स्वरूप आज इस साकार स्थितिमें है। एक ही व्यक्ति द्वारा स्थापित व सचालित यह ग्रन्थागार अपने देशमें अपने प्रकारका एक ही है, जिसमें इतनी अधिक पाण्डुलिपियाँ इतने सुनियोजित ढगसे एक साथ उपलब्ध हो सकें। आप अब भी इसके सवर्धन एव सुनि-योजनके लिए पूर्ण प्रयत्नवान है। इससे लाभ उठानेवाले देश-विदेशके शोधार्थी छात्र पूज्य नाहटाजीके प्रति कितनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करते होगे, इसका अनुमान लगाना भी हमारे लिए अत्यत आह्लादकारी है।

प्रात शय्यात्यागसे लेकर रात्रिमें शयन-विश्रामपर्यन्त आपकी अपनी एक विशिष्ट दिनचर्या है, जिसकी परिपालना आप पूर्ण सतर्कता एव उत्साह तथा सावधानीके साथ करते है। जिन कार्यों व रचनाओंका सम्पादन कार्य आपने एक बार प्रारभ कर दिया, उन्हें अनवरत श्रम करके पूर्ण सम्पादित करके ही विश्राम लेते हैं। किसी भी योजनाकी क्रियान्वितिको अर्धसम्पन्नावस्थामें छोडना आपका स्वभाव नही। नियम-पालन-की कठोरताके आप बडे पक्षधर हैं। नियमानुसार दिनचर्याकी पूर्ति आपका सहज स्वभाव है। इसीका परिणाम है कि जितना कार्य कई संस्थाए मिलकर सम्पन्न नही कर सकती, उनसे कही अधिक कार्य आपने एकाकी रूपसे सम्पन्न किया है। आप धुनके धनी व लगनके पक्के हैं।

आपकी रचनाओके विषयोकी विविधता भी बडी व्यापक है। नैतिक व आध्यात्मिक जीवनसे सम्ब-न्धित शायद ही कोई ऐसा विषय हो, जिसपर आपकी लेखनी नही चली हो। एक साथ अनेक विषयोंसे सम्बन्धित रचना-प्रक्रिया सदा चलती रहती है। इन सबको देखकर ऐसा लगता है कि आपका मस्तिष्क विश्वकोष ही है। प्राचीन पाण्डुलिपियोमें छिपे हुए तत्त्व सर्वसाधारण एव विद्वज्जन दोनोके लिए समानोपयोगी रूपमें प्रस्तुत करनेकी क्षमता आपकी लेखनीकी अपनी मौलिकता है।

अद्भुत रचनाभिव्यक्तिके साथ आपकी वक्तृत्व-शक्तिकी क्षमता भी अनुपम है। घटों तक किसी भी विषयपर बिना थके हुए निरन्तर नवीन विचारो व उद्भावनाओको गभीर प्रवाहमें प्रस्तुत करना, आपकी वाणीका कौशल है। मुझे अनेक बार आपकी ऐसी अमृत-वाणीको श्रवण करनेका सौभाग्य मिला है। अपने भाषणमें जब आप जैनागम निगमोके साथ अन्यान्य दार्शनिक सम्प्रदायोके उद्धरण प्रस्तुत करते हैं तो आपके गभीर ज्ञानकी गहराईपर आश्चर्य होता है। विषय प्रतिपादनमें आप उन्ही शास्त्रीय वचनोका सहारा लेकर भगवानकी वाणीके सार्वभौम स्वरूपकी जब प्रस्तुति करते हैं तो आपकी विलक्षण समायोजन क्षमताके दर्शन होते हैं। ऐसा केवल तत्त्वदर्शीके लिए ही सभव है, सामान्य विद्वत्तासे यह सभव नही।

आपका जीवन न केवल गृहस्थोके लिए ही अनुकरणीय व श्रद्धास्पद है अपितु साधु-जीवनके लिए भी सदा प्रेरणादायी रहा है। गृहस्थ होते हुए भी एक आदर्श सन्तके समान आपकी जीवनचर्या है। सब प्रकारसे सम्पन्न परिवारमें जन्मे व पले श्री नाहटाजी कभी भी सासारिक-भौतिक आकर्षणोकी ओर आकर्षित नही हुए, कभी भी भौतिक देह-सुखको अपना जीवन-लक्ष्य नही बनाया, किन्तु इसके साथ ही अपने सासारिक कर्त्तव्योंके प्रति भी कभी भी विमुख नही रहे। आज भगवत्-कृपासे आपका पुत्र-पौत्रादिसे भरा-पूरा परिवार है, सभी प्रकारकी सुख-सम्पन्नता है किन्तु आपका अन्तर्मन इन सबके प्रति निर्लिप्त, निर्मम तथा अनासक्त है।

पू० श्री नाहटाजीको जितनी निकटतासे देखते हैं, आपकी उच्चताकी भावभूमि अधिकाधिक उच्च होती हुई ही पाते हैं। हम अनुभव करते हैं कि आपका जीवन गीतोक्त स्थितप्रज्ञ तथा दैवी गुणसम्पदासे सयुक्त है। विकास ही आपका जीवन-सूत्र है। अपना विकास व सबका विकास, इसीकी प्रभासनामें आप निरन्तर लगे रहते है। सबको सतत आगे बढते रहनेकी प्रेरणा देना आपका स्वय-स्फूर्त स्वभाव है। चाहे कोई साधु हो या गृहस्थ, युवा हो या वृद्ध, विद्यार्थी हो या व्यवसायी, आप सभीको सही जीवन-दिशा देने, सभीके अन्तरमें छिपी आत्मशक्तिको जागृत करनेका प्रयास करते रहते है।

आपका सम्पूर्ण जीवन आध्यात्मिकतापर आधारित है। अत. आप साधक पहले हैं तथा और कुछ बादमें। आगम-ग्रन्थोमें वर्णित साधनाके विभिन्न सोपानोके अनुसार आपकी आत्म-विकास-विषयिनी ध्यान-साधना सदा चलती रहती है। इस युगके महान् योगी श्री कृपाचन्द्रजी सूरिजी महाराज तथा श्री सहजानन्द-जी महाराज आदिके साथ आपका केवल बाह्य सम्पर्क ही नही रहा है, अपितु आत्म-विकास-विषयक आन्त-रिक सम्पर्क भी रहा है और उनकी आन्तरिक शान्तिसे अनुप्राणित होकर आपने अपनी अन्तश्चेतनाको जागृत किया है।

इसमें कोई सन्देह नही कि आत्म-शिल्पी व आत्मजयी व्यक्ति अपने विकास-पथपर सदा बढता ही जाता है, चाहे परिस्थिति उसके अनुकूल हो या प्रतिकूल। प्राय ऐसा भी अनुभवमें आता है कि परम्परित जीवन-यापन मार्ग व लक्ष्यको छोडकर अपने व अपने परिवारके लिए सर्वथा नये उद्देश्योकी प्राप्तिकी ओर जब कोई बढता है तो उसके परिजन किसी अशमें बाधक हुआ करते है। इस दृष्टिसे आप बडे भाग्यशाली हैं क्योकि आपका परिवार सदा ही आपकी साहित्य-साधनामें सहयोगी ही रहा है। आपके अग्रज सेठ श्री शुभराजजी व मेघराजजीको आपके सृजन-कार्योपर सदा गर्व रहा है तथा आपके भतीजे श्री भँवरलालजी तो सही अर्थमें आपके अनुयायी ही है। वे स्वय आत्मज्ञान-पिपासु, अच्छे लेखक तथा कुशल वक्ता हैं। उन्होने अनेक प्राचीन आगम-ग्रन्थोका आपके साथ सम्पादन किया है और वर्तमानमें "कुशल निर्देश" मासिक पत्रका सम्पादन भी आपके आग्रहपूर्ण आदेशसे कर रहे हैं।

आपकी दृष्टि विशाल है। जैन-धर्मके चारो सम्प्रदायोके साधु-साध्वियोके प्रति आपकी श्रद्धा-दृष्टि एक समान है। यही नही, मत तो सभी धर्मोंके आपके लिए सदा ही पूज्य एव वन्दनीय हैं। इसी प्रकार विद्वान व विचक्षण, चाहे कहीका भी क्यो न हो, उसे आप अवश्य ही सुनते हैं और सम्मान देते हैं। सार-ग्रहणमें किसी भी प्रकारका सकोच-भाव आपमें नही है।

श्रमण-संस्कृतिके इस उन्नायक तपस्वीसे हमें बहुत आशा-आकाक्षाए है। 'सर्वजनहिताय' व 'सर्वजन-सुखाय'के अमर सूत्रोको अपनेमें समाहित करनेवाली हमारी श्रमण-परम्पराके व्यापक प्रचार व प्रसारके लिए आपका सत्प्रयास सदा चलता रहे। आप सुदीर्घ काल तक अपने मनन, चिन्तन व सृजनसे संसारको सही दिशाबोध देते रहें, यही भगवान महावीरसे मेरी अन्त कामना है।





अभय जैन ग्रन्थालय में नाहटा जी



अभय जैन ग्रन्थालय में ग्रन्थो के ढेर के पास खडे नाहटा जी

श्री अभय जैन ग्रंथालयका २५ वर्षीय विकास

श्री भँवरलालजी नाहटा

महापुरुषोके सत्सग और सत्-साहित्यके अध्ययनसे जीवनमें बहुत बडा परिवर्तन आता है, यह हमारे जीवनका भी अनुभूत तथ्य है। छठी कक्षामें प्रवेश होनेके बाद ही हमारा पाठशालाका अध्ययन समाप्त हो गया। सौभाग्यसे उस अध्ययनकी कमीकी पूर्तिका एक सुअवसर हमें सम्वत् १९८४में प्राप्त हुआ। मेरे दादाजी दानमलजी व शकरदानजी खरतरगच्छीय महान् आचार्य जिनकृपाचद्रसूरिजीके विशेष भक्त रहे है क्योकि ये सूरिवर बीकानेरके ही विद्वान् व्यक्ति थे। जब उन्होने सारे परिग्रहका त्याग कर साधु आचारके पालनका निश्चय किया, तो अपने उपाश्रय, ज्ञानभडार एव अन्य वस्तुओकी देखभालका जिम्मा बीकानेरके जिन व्यक्तियोंपर छोडा था उनमें हमारे परिवारके सदस्य भी थे। बहुत वर्षोसे कृपाचन्द्रसूरिजीका बीकानेर पधारना नही हुआ था, इसलिये बीकानेरकी जैन जनतामें उनके चातुर्मास करानेका बडा उत्साह था। फलौधी-में जब वे विराज रहे थे, बीकानेरका सघ उनसे विनती करनेके लिए गया, उनमें मेरे दादाजी भी थे। जैसलमेर ज्ञानभडारका जीर्णोद्धार आदि करानेके बाद सवत् १९८४के वसतपचमीके दिन सूरि-महाराज बीकानेर पधारे और हमारे ही कोटडी वडे भवन)में विराजे। फलत उनके सत्सगका लाभ खूब मिलने लगा। प्रतिदिन उनका व्याख्यान सुनते, वन्दना करते, उनके शिष्योके साथ धार्मिक-चर्चा भी चलती रहती और उनके पास जो भी ग्रथ व पत्र-पत्रिकाएँ आती उनको भी बहुत ही रुचिपूर्वक देखते व पढते। हमारे साहित्यिक जीवनका प्रारम्भ उसी सत्सग और सत्-साहित्यके स्वाध्यायसे होता है।

सवत् १९८४में जिनकृपाचन्द्रसूरिजीने भक्ति-गर्भित स्तुतियोकी रचना प्रारम्भ की जो 'गहुली-सग्रह' नामक ग्रथमें उस समय छपी थी, अर्थात् तुकवन्दीरूप पद्यमय भजन-गीत बनानेका हमारा प्रयास प्रारम्भ हो गया था। एक बार 'जैनसाहित्य सशोधक' और 'आनन्दकाव्य महोदधि' मौक्तिक ७में प्रकाशित जैन-साहित्य महारथी श्री मोहनलाल दलीचन्द देसाईका एक विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण निबध 'कविवर समयसुन्दर' नामक पढनेको मिला तो मनमें यह स्फूर्ति व प्रेरणा हुई कि कविवर समयसुन्दर राजस्थानके एव खरतरगच्छके कवि हुए हैं, उनके सम्बन्धमें बम्बई हाईकोर्टके एक वकीलने गुजरातमें रहते हुए इतना खोजपूर्ण निबन्ध लिखा है, पर उससे तो बहुत अधिक नई जानकारी बीकानेरमें ही मिल सकती है, क्योंकि बीकानेरमें हमारी ही गवाड (मोहल्ला)में जो खरतरगच्छके आचार्य शाखाका उपासरा है, वह समयसुन्दरजीके उपासरेके नामसे ही प्रसिद्ध है, और उसमें समयसुन्दरजीकी शिष्य-परम्पराके यति चुनीलालजी भी उस समय रहते थे। बस इसी एक कविकी रचनाओं एव जीवनीकी खोजके लिए हमने प्राचीन हस्तलिखित प्रतियोको और ज्ञान-भडारोको देखना प्रारंभ किया। सयोगसे स्थानीय 'महावीर जैनमडल'के ग्रथालयमें कुछ हस्तलिखित प्रतियोको देखते हुए एक गुटका ऐसा मिला, जिसमें समयसुन्दरजीकी अनेक छोटी-मोटी रचनाओका महत्त्वपूर्ण सग्रह था, इससे हमारा उत्साह बहुत बढ गया क्योकि पहली और साधारण-सी खोजमें ही हमें बहुत बडी उपलब्धि मिल गयी। फिर तो बडे उपासरेके ज्ञानभडार एव उपाध्याय जयचन्दजी और कृपाचन्द्रसूरिजीके ज्ञानभडारकी एक-एक हस्तलिखित प्रतिको देख करके विवरणात्मक सूची बनायी गयी, जिससे अनेक नये कवियो एत्र उनकी रचनाओकी जानकारी मिली। उस समय हमें जो रचनायें विशेष पसन्द आती उनकी नकल भी हम अपने लिये करते रहते थे और कवियोंकी छोटी-से-छोटी रचनाओका विवरण भी अपनी छोटी-छोटी नोटबुकोमें करने लगे। इस तरह केवल एक कवि समयसुन्दरकी खोज करते हुए हमारा शोध-क्षेत्र विस्तृत होता चला गया।

उन्ही दिनो श्री कृपाचन्द्रसूरिजीके एक यतिशिष्य तिलकचन्दजी वडे उपासरेमें रहने लगे थे। उन्होने देखा कि अनेक हस्तलिखित प्रतियोका ढेर उपासरेके कूडे-करकटमे पडा हुआ है। उन्होने उसमेंसे कुछ इकट्ठा करना प्रारम्भ किया और कुछ यति मुकनचन्दजीने बटोरना शुरू किया तो हमें भी प्रेरणा हुई कि इन हस्त-लिखित प्रतियोका सग्रह करना चाहिए जिससे हमारे पास साहित्य और शोधकी अच्छी सामग्री इकट्ठी हो जाय। हमें कुछ प्रतिया तो वैसे ही मिल गयी और कुछ खरीद भी की। इस तरह हस्तलिखित ग्रथोंके खोजके साथ सग्रहका कार्य भी प्रारम्भ हो गया, पर उस समय जो सग्रह किया गया था वह अधिकाश अस्तव्यस्त था और हस्तलिखित पत्रोके ढेरमें से लिया गया था, अत उनमें बहुत-सी धूलि-धूसरित थी व काटे भी थे, पन्ने तो प्राय सभी अस्तव्यस्त विखरे हुए थे, अत हमने एक छोटे कमरेमें उन पत्रोकी छंटाई करनी प्रारम्भ की। कोई पत्र कही मिला तो कोई पत्र कही, और कोई कही दूसरी प्रतियोके साथ लगा हुआ या दबा हुआ मिला। जब हम छटाई करने उस कमरेमें जाते तो कपडे धोये हुए नये पहने हुए होते, पर वहांसे काम करके वापस निकलते तो कपडोपर धूल भर जाती और एकदम मैले हो जाते, कही काटे चुभ जाते, हाथो और चेहरेपर भी धूल जम जाती, पर इस कठिन परिश्रममें भी हमें नयी-नयी सामग्री मिलती रहती और कार्यमें उत्साह वढता रहता। अपूर्ण प्रतियाँ जब पूरी हो जाती और कोई नया ग्रंथ मिल जाता तो हमें इतना आनन्द होता कि मानो शरीरमें सवा सेर खून बढ गया हो।

हजारो हस्तलिखित प्रतियोके अवलोकन और पढनेसे हमारे ज्ञानमें दिनो-दिन अभिवृद्धि होती गयी, प्राचीन लिपियोका अभ्यास बढने लगा, प्राकृत, सस्कृत, अपभ्रश, राजस्थानी, हिन्दी, गुजराती, इन पाँचो भाषाओके ग्रथ हमें पढनेको मिलते। अत इन भाषाओका ज्ञान भी बढा और साथ ही अनेक विषयोंके ग्रंथ देखनेसे विविध विषयोका ज्ञान विस्तृत होता चला गया। इधर छपे हुए ग्रथोका अध्ययन भी जारी रहा। फलत पाठशालाके अध्ययनमें जो कमी रह गयी थी, उसमें सतगुणी वृद्धि होती गयी। लाखो ग्रथोको देखने एव पढनेका अवसर मिलता गया और हस्तलिखित प्रतियोका संग्रह भी उत्तरोतर बढता चला गया। इधर ज्यो-ज्यो नयी जानकारी मिलती गयी त्यो-त्यो उसके शीघ्र प्रकाशन करनेका प्रयत्न चलने लगा। उस सामग्रीके आधारसे ग्रथ लिखे व सम्पादित किये जाने लगे और हजारो लेख अनेक पत्र, पत्रिकाओमें छपते रहे।

चाचाजी अगरचन्दजी अपने पिताजीके सबसे छोटे पुत्र हैं। उनके बडे भाइयोमें श्री अभयराजजी नाहटा हमारे परिवारमें सबसे अधिक पढे-लिखे थे। दुर्भाग्यवश उनको ऐसी प्राणघातक बीमारी लगी कि २२ वर्षकी अवस्थामें ही उनका जयपुरमें स्वर्गवास हो गया। वे जयपुरके रामबागमें सुप्रसिद्ध वैद्य लच्छीराम-जीसे इलाज करा रहे थे। तब कई महीने अगरचन्दजी, माताजी व भजेईके साथ उनके पास रहे थे। उस समय उनकी आयु केवल १० वर्षकी ही थी। पर देखते रहे कि रुग्ण अवस्था होनेपर भी उनके गुरुभ्राता अभयराजजी नये-नये ग्रथोको पढते ही रहते थे। सोते समय भी उनके तकियेके नीचे पुस्तकें रखी रहती, शायद वे पढते-पढते ही सोते थे। उनकी स्वाध्याय-रुचिका अगरचन्दपर बडा प्रभाव पडा और उनकी मृत्युके बाद तो उनके पिताजी व माताजीको इतना गहरा सदमा पहुँचा कि जयपुरमें अभयराजजीके पास जो भी पुस्तकें थी उनको वही लोगोको दे दी गयी। उनकी एक भी पुस्तक बीकानेर नही लायी गयी। घरवालोको ऐसा लगा कि अधिक योग्य और पढा-लिखा व्यक्ति इस तरह एकाएक चला गया तो अब अन्य लडकोका अधिक पढना ठीक नही। अत हमारी पढाई भी अधिक आगे नही बढ सकी, इसमें यह भी एक कारण बन गया।

मेरे दादाजीने, अभयराजजीकी स्मृतिमें कोई अच्छा या उपयोगी काम किया जाय, इस दृष्टिसे अपने गुरु जिनकृपाचन्द्रसूरिजीके परामर्शसे एक उपयोगी ग्रन्थ-प्रकाशनका निश्चय किया। फलत 'अभयरत्न सार' नामक एक बडा ग्रंथ कलकत्तेसे छपाया गया। इसीसे हमारे 'अभयजैन ग्रथमाला'का प्रकाशन-कार्य चालू

हुआ। दूसरा ग्रंथ 'पूजा सग्रह' निकाला। इसके बादसे ही हमारे लिखे हुए ग्रन्थ इस ग्रन्थमालामें छपने लगे और अब तक अभयजैन ग्रन्थमाला द्वारा ३० ग्रथ प्रकाशित हो चुके है।

हस्तलिखित प्रतियोके साथ-साथ उपयोगी मुद्रित-ग्रन्थोका सग्रह भी किया जाने लगा। जब यह संग्रह कुछ अच्छे रूपमें हो गया तो ग्रथालयकी स्थापना की जानी जरूरी हो गयी। स्वर्गीय अभयराजजी एक ज्ञानी पुरुष थे और ग्रथोके सग्रह और अध्ययनमें उनकी गहरी अभिरुचि थी। इसलिए ग्रथालय उन्हीके नामसे चालू करना ज्यादा उपयुक्त समझा गया। इस तरह 'अभयजैन ग्रथालय'की स्थापना हो गयी। दिनो-दिन ग्रन्थोकी सख्या बढती चली गयी। जो ग्रथ केवल तीन अलमारियोमे सीमित थे, आज १००से भी अधिक अलमारिया ग्रन्थोसे भर गयी है। अब तो हस्तलिखित और मुद्रित ग्रन्थोकी सख्या १ लाख तक पहुच गयी है। इस तरह एक छोटा-सा पौधा, वट-वृक्षके रूपमें विस्तरित होता गया है। करीब ४५००० (पैतालीस हजार) हस्तलिखित प्रतियोका अत्यन्त मूल्यवान, दुर्लभ और महत्त्वपूर्ण सग्रह इस ग्रन्थालयमें हो चुका है और करीब उतने ही मुद्रित ग्रन्थ भी सग्रहीत हो चुके हैं। हजारो पत्र-पत्रिकाएँ, विद्वानोके लेखोके रीप्रिंट्स और अन्य विविध प्रकारकी सामग्री इस ग्रन्थालयमें सग्रहीत हो चुकी है। कई वर्ष पूर्व इसके लिए जो तीनतल्ला बिल्डिग बनवाया गया था उसमें अब ग्रथ रखनेकी तिलभर भी जगह नही रही। ग्रथोके सग्रह और अध्ययनकी रुचि बढती ही जा रही है। अत. जगह न होते हुए भी नित्य नये मुद्रित व हस्तलिखित ग्रथ सग्रहीत होते ही जा रहे है। हस्तलिखित प्रतियोके सग्रहमें तो इतना अधिक उत्साह व आतरिक प्रेरणा है कि उचित मूल्यमें कोई भी हस्तलिखित प्रति मिली तो खरीद ली जाती है, उसे छोडनेकी इच्छा ही नही होती। जहाँ कहींसे भी ग्रथ मिल सकते हैं, वहाँपर स्वयं जाकर या अपने आदमीको भेजकर उनको खरीद लेनेका ही प्रयत्न रहता है।

गत ४२ वर्षोंसे हस्तलिखित प्रतियोके सग्रहका प्रयत्न निरतर चालू है। पर गत २५ वर्षोंमें इस दिशामें जितना अधिक कार्य हुआ है उतना पहले नही हो सका था क्योकि स्वतन्त्रता-प्राप्तिके बाद हस्तलिखित प्रतियाँ बिकनेके लिए जितनी बाहर आयी हैं, इससे पहली कभी नही आयी। मुद्रण-युगमें हस्तलिखित प्रतियोका पठन-पाठन बद-सा हो गया। अत जिनके पास भी हस्तलिखित प्रतियोका सग्रह था वे अब उनकी उपयोगिता नही रहनेसे बेचनेको तैयार हो गये। राजा-महाराजाओ, ठाकुरो, यतियो, विद्वानो और कवियोंके वशजोने अपने सग्रह बेचने प्रारम्भ कर दिये। जब ऐसे सग्रह उचित मूल्यमें मिलनेकी खबर पहुँची तो काकाजी अगरचदजीने बाहर जाकरके भी और लोगोको पत्र लिखकर भी ऐसे संग्रह खरीद करने प्रारम्भ कर दिये। स्वर्गीय मुनि कान्तिसागरजीका जब ग्वालियरमें चौमासा था, तो उन्होने सूचना दी कि जैनेतर वेद आदि ग्रथोका एक अच्छा सग्रह बिक रहा है तो अगरचदजी वहाँ पहुँचे और उसे खरीद लिया। इसी तरह जयपुरके कबाडियोसे अच्छा सग्रह बिकनेकी सूचना मिली तो वहाँपर जाकर ले लिया गया।

भारतका विभाजन होनेपर पजाबका ग्रथ-सग्रह भी खूब बिकने लगा। हमारे मित्र स्वर्गीय डॉ० बनारसीदास जैनने एक कबाडीको कह दिया कि नाहटाजी जो हस्तलिखित ग्रथोका सग्रह कर रहे हैं, उन्हें तुम प्रतियोके बडल भेजते रहो वे उनका उचित दाम लगाकर रुपये भेजते रहेंगे। फलत. उस पजाबी कबाडोने कई वर्षों तक बडे बडे पुलिन्दे पार्सल करके ग्रथ भेजे। इस तरह इधर-उधरसे प्रयत्नपूर्वक सग्रह करते-करते ही इतना बडा सग्रह हो सका है।

अबसे कोई तीस वर्ष पहले हमने अपने यहाँकी हस्तलिखित प्रतियोकी सूची बनायी थी, उस समय तो करीब २००० प्रतियाँ ही थी। इसके बाद करीब २७ वर्ष पहिले जो सूची बनी थी उस समय करीब १५००० प्रतियाँ थी। हमारे इस ग्रथालय एव कला-भवन-सग्रहालयके सबधमें मेरा एक लेख 'राजस्थान

भारती'के अप्रैल १९४६के अकमें प्रकाशित हुआ था तथा हमारे 'बीकानेर जैनके लेख-सग्रह'में बीकानेरके ग्रथ-भण्डारोका जो विवरण दिया गया था, उसमें भी 'अभय जैन ग्रथालय'का जो विवरण दिया गया है उसमें भी १५००० हस्तलिखित प्रतियो व ५०० गुटकोका उल्लेख है। इसी तरह हस्तलिखित प्रतियोके साथ-साथ प्राचीन चित्र, मूर्तियो, सिक्को आदिका भी सग्रह करना प्रारम्भ किया और अपने स्वर्गीय महान् उपकारी श्री शकरदानजीके नामसे नाहटा-कलाभवनकी स्थापना की गयी। वह सग्रह भी वढता ही चला गया। इसमें विविध कलात्मक और प्राचीन वस्तुओका दर्शनीय एव महत्त्वपूर्ण सग्रह है।

विविध विषयोपर जब लेख लिखने चालू हुए तो मुद्रित ग्रथोकी भी बहुत आवश्यकता प्रतीत हुई क्योकि अन्य ग्रथालयोसे एक साथ अधिक ग्रथ पढनेको मिल नही सकते थे, और सब समय ग्रथालयोसे ग्रथ प्राप्त करना भी सभव नही होता। किस समय किस ग्रथकी जरूरत हो जाय, यह भी पहलेसे निश्चित नही किया जा सकता और बिना संदर्भ-ग्रथोके बहुत बार लेख लम्बे समय तक रुके रहते है। इसलिए छपे हुए आवश्यक ग्रथोका सग्रह करना भी जरूरी हो गया तो उनकी भी सख्या वढती ही गयी। इसी तरहसे पत्र-पत्रिकाओमें भी बहुत-सी सामग्री व जानकारी निकलती रहती है। उनको भी मगाकर उनकी फाइलें ग्रथालयमें रखना जरूरी हो गया। इस तरह मुद्रित ग्रंथो व पत्र-पत्रिकाओका भी काफी अच्छा सग्रह हो गया है। साधारणतया लोग पत्र-पत्रिकाओंका सग्रह नही करते हैं, उन्हे रद्दीके भावमें बेच देते है। पर हमने अपने सग्रहकी सब सामग्रीको सुरक्षित रखनेका प्रयत्न किया है, बहुत बार रद्दी बेचनेवालोसे भी ग्रथो एवं पत्रिकाओके अक खरीद करके सग्रह वढाया गया है। इसीका परिणाम है कि हमारे ग्रथालयमें बहुत-सी ऐसी सामग्री है जो अन्यत्र कही नही मिलती। अत विद्यार्थियोंको दूर-दूरसे यहाँपर आकर लाभ उठाना पडता है।

हस्तलिखित ग्रथोकी खोजके लिए अनेक जैन-जेनेतर ज्ञान-भडारोमें जाना पडा है और लाखो हस्तलिखित प्रतिया देखकर उनमेंसे जो-जो महत्त्वपूर्ण एव अमूल्य एव दुर्लभ प्रतिया देखने व जाननेमें आयी, उनके नोट्स ले रखे है। जहाँ तक सभव हुआ अन्यत्रके महत्त्वपूर्ण दुर्लभ ग्रथोंको अपने सग्रहमें भी रखना आवश्यक समझकर सैकडो रचनाओकी नकलें करवायी है और बहुत सी प्रतियोके तो काफी खर्च करके फोटो एव माइक्रोफिल्म करवा ली गयी है। इस तरह जो महत्त्वपूर्ण ग्रथ मूल-हस्तलिखित प्रतिके रूपमे प्राप्त नही किया जा सका, उसकी प्रतिलिपि करवाके 'अभयजैन ग्रथालय' में सग्रहीत की गयी हैं।

भारतकी अनेक भाषाओ एव लिपियोकी हस्तलिखित प्रतिया सग्रह करनेका प्रयत्न किया गया है। इससे दक्षिण भारतके कन्नड और तमिल, पूर्वभारतके बगला, उत्तर भारतके पजाबी, सिन्धी भाषा और गुरुमुखी लिपि तथा उर्दू, फारसी, काश्मीरी और पश्चिमकी प्राकृत, सस्कृत, अपभ्रश, हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती भाषाओके विविध विषयोके ग्रथ और उन स्थानोकी लिपियोमें लिखे हुए हस्तलिखित ग्रथ सग्रहीत किये जा सके है। जिस भाषा और लिपिकी प्राचीन प्रति नही मिल सकी, वहाँकी आधुनिक प्रति भी प्राप्त की गयी है। जैसे—ताडपत्रकी प्रतिया जैन ज्ञान भण्डारोमें १५ वी शताब्दी तककी ही प्राप्त होती है पर कन्नड और तमिलमें इसके बादकी काफी मिलती हैं। उडीसामें तो कुछ वर्षों पहिले तक ताडपत्रपर लिखनेकी प्रणाली थी। अत' उडियालिपिकी ताडपत्रपर लिखी हुई (जो अक्षरोंको खोद करके लिखा हुआ है) एक-दो प्रति प्राप्त की गयी है। बगाल, आसाममे पहले वृक्षोके छालपर ग्रथ लिखे जाते थे। अतः बगालसे ऐसी प्रतिया खरीद ली गयीं। इसी तरह चित्रशैलियोकी दृष्टिसे भारतमें जो बहुत-सी चित्रशैलिया रही हैं उनमें भी जितनी अधिक शैलियोके चित्र मिल सके, सग्रहीत किये गये हैं। महाराष्ट्रकी भी कई सचित्र व अचित्र

प्रतियाँ है। कन्नड और बंगला-भाषाके नागरीलिपिमें लिखे गये ग्रन्थोकी भी कुछ प्रतियाँ हैं। अत अब केवल सख्याकी दृष्टिसे ही नही, विविधता और महत्त्वको ध्यानमें रखते हुए भी बहुत बडी सामग्री सग्रहीत की गयी है। आज भी यही दृष्टि व प्रयत्न है कि जिन विषयो, भाषाओ और लिपियोके ग्रन्थ हमारे ग्रथालय में नही हो, उनको अधिक मूल्य देकर भी सग्रहीत किया जाय। इस तरह गत २५ वर्षोमे इस ग्रथालयका एव सग्राहलयका जो उत्तरोत्तर विकास होता गया उसकी यह सक्षिप्त जानकारी पाठकोके सम्मुख रखी गयी है। आशा है, इससे प्रेरणा प्राप्तकर अधिकाधिक लाभ उठाया जायगा।

अभय जैन ग्रन्थालय एवं कलाभवनके दर्शकोंकी कतिपय आगन्तुक-सम्मतियाँ

बीकानेरकी यात्राका एक वडा आकर्षण श्री अगरचन्दजी नाहटाके प्राचीन ग्रन्थोके सग्रह और कलात्मक वस्तुओंके सग्रहको देखना था। वह अभिलाषा यहाँ आकर पूरी हुई। श्री नाहटाजीने जिस लगनसे इस सग्रहको बनाया है वह प्रशसनीय है। सग्रहमें लगभग १५ सहस्र हस्तलिखित ग्रन्थ हैं जिनमें हिन्दी भाषा और साहित्यके आठ सौ वर्षोंकी अनमोल सामग्री भरी हुई है। नाहटाजीने अकेले एक सस्था का काम पूरा किया है। आगे आनेवाली पीढियाँ इसके लिए उनकी आभारी रहेगी।

जिस तत्परतासे उन्होंने संग्रहका कार्य किया है उससे भी अधिक उत्साह और परिश्रमसे आप इस सामग्रीके आधारपर लेखन और प्रकाशनका काम कर रहे हैं। अबतक वे लगभग पाँच सौ लेख लिख चुके हैं जो अधिकाश उनके अपने सग्रहकी साहित्यिक सामग्रीपर आधारित है। एक सहस्र वर्षों तक जैनोने हिन्दी भाषाके भण्डारको विविध कृतियोसे सम्पन्न बनाया। वह ग्रन्थराशि गुजरात, राजस्थान, सयुक्त प्रान्तके जैन सरस्वती भण्डारोमे सौभाग्यसे सुरक्षित है। नाहटाजीका ग्रन्थ-सग्रह इसी प्रकारका एक सरस्वती भण्डार है। शीघ्र ही हिन्दीकी शोध-संस्थाओको इस सामग्रीके व्यवस्थित प्रकाशनका उत्तरदायित्व सँभालना चाहिए। आशा है नाहटाजीके जीवनकालमें ही यह कार्य बहुत कुछ आगे बढेगा। यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप अभीतक अपने सग्रहको बढा रहे हैं और भविष्यमें एक पृथक् भवनमें उसको स्थापित करना चाहते है। इस कार्यमें उनके विद्या-प्रेमी भतीजे श्री भवरलाल नाहटा भी उनके सहयोगी है जिन्होंने उनको कलाकी अधिकाश सामग्री एकत्र करनेमें सहायता दी है। नाहटाजी जिस मुक्त हृदयसे अपनी प्रिय सामग्रीको विद्वानोके लिए सुलभ कर देते हैं इसका व्यक्तिगत अनुभवकरके मेरा हृदय गद्गद् हो गया। निस्सदेह नाहटा सग्रह हिन्दी साहित्यकी एक अमूल्य निधि है। ईश्वर उसका सवर्धन करें।

वासुदेवशरण अग्रवाल
सुपरिण्टिेण्डेण्ट पुरातत्त्व विभाग
नयी दिल्ली
३०-३-४८

Was Pleased to see the wonderful and valuable collection of Nahata Family at Bikaner,

P. L Vaidya
Professor of Sanskrit
Wadia College, Poona
3-3-47

Dr. Bhogilal J Sandesra M A Ph.D.

Professor of Ardh Magadhi Jugrati,

B J Institute of learning and reserch

Jugrat Vidya Sabha, Bhadra

Ahemdabad,

Date 7th Nov 1950

From 28th to 30th October I was at Bikaner as a guest of Shri Agarchandji Nahata I saw his great Manuscript library which contains about 15000 old manuscripts and also his assume of antiquities and Piefure gallary Seldom one comes across much a devoted reserch worker and a great lover of learning as Shri Nahata, ever ready to help other co-workers in the field in all possible ways Any person interested in Indological reserch and Indian art comming to Bikaner will be immensely benifitted, if he pays just a visit to Shri Abhaya Library and the museum located it so ably and efficiently managed by Shri Nahata

Sect Bhogilal J Sandesra

१९५०के अक्टूबरके अन्तिम सप्ताहमें जैसलमेरसे अहमदावाद लौटनेके पहले वीकानेर देखनेकी इच्छासे मैं और अध्या० डॉ० श्री भोगीलाल सांडेसरा वीकानेर गये थे। वहाँ दर्शनीय अन्यान्य स्थानों, के साथ प्राचीन हस्तलिखित पुस्तकोका और प्राचीन कलाकृतियोका सग्रह भी देखा। यह सग्रह देखकर मुझे विशेष प्रसन्नता इसलिए हुई कि इस जमानेमें भी उच्च अभ्यास और सशोधनोके योग्य प्राचीन ग्रन्थोका और कलाकृतियोका ऐसा सग्रह इतने व्यवस्थित रूपसे, किसी सस्थाने नही, वरन् एक व्यक्तिने किया है। भारतके प्राचीन और मध्यकालीन इतिहास, साहित्य और सस्कृतिके अभ्यासको को जब भी अवसर मिले यह सग्रह अवश्य देखना चाहिए। मुझे पूर्ण आशा है कि उन्हें इससे कुछ नया प्रकाश जरूर मिलेगा।

Sd लि० जितेन्द्र जेटली

जितेन्द्र सु० जेटली, एम० ए० न्यायाचार्य

५४, प्रीतमनगर, अहमदावाद—६

श्री अगरचन्दजी नाहटाकी कला-सम्बन्धी रुचि बडी ही सराहनीय है। मैं तो इस कला सग्रहालयको देखकर मुग्ध हो गया। जो अवतक राज्याश्रय द्वारा न हो सका वह श्री नाहटाजी अपने अथक परिश्रमसे पूरा करनेकी चेष्टा कर रहे हैं और वहुत अश तक सफल भी हुए हैं। आपके भतीजे श्री भँवरलालजीका योग सोनेमें सुहागाका कार्य कर रहा है। भारतीय संस्कृति के पुनरुत्थानमें और विशेषतया राजस्थानी सस्कृतिको जीवित रखने एव गौरवान्वित करनेमें आपके सदृश्य कला-प्रेमियोकी स्वतन्त्र भारतको आवश्यकता है। आप तो मेरे लिये पूज्य है और श्रद्धा के पात्र हैं। आशा है वीकानेर एव राजस्थानके धनीमानी आपका अनुकरण करेंगे और हमारे सास्कृतिक भण्डारकी उत्तरोत्तर वृद्धिमें सहयोग पहुँचायेंगे।

सत्यप्रकाश

राजस्थान पुरातत्व सग्रहालय विभाग

जयपुर

दिनाक २१-३-५१

सयोगसे बीकानेर आनेका अवसर प्राप्त हुआ । श्री अगरचन्दजी नाहटा और श्री भँवरलालजी नाहटाका वृहद्सग्रह देखनेकी इच्छा वहुत दिनोसे मनमें थी जो अब पूरी हुई । यह संग्रह तो एक ऐसा साहित्य-समुद्र है कि इसमें अवगाहनके लिए काफी समय चाहिए । श्री नाहटाजीने साहित्यिक जगतकी जो सामग्री एकत्र की है, उसके लिए कई पीढ़ियाँ उनका गुणगान करेंगी । इस अद्भुत सग्रहमें इतने रत्न भरे पडे हैं कि युगो तक उनका मूल्य बढता ही जायेगा और जितना ही इनका परिशीलन किया जायेगा, जगतको उतना ही रस मिलेगा। भगवान नाहटाजीको इतना सामर्थ्य दें कि वे इसे उत्तरोत्तर बढाते जायें ।

उदयशङ्कर शास्त्री
उप० सग्रहाध्यक्ष
भारत कला भवन, हिन्दू विश्वविद्यालय
काशी–५

This has been a most interesting collection It is truly a great credit that one man have organised so fine a collection of books, manuscripts and objects of art I have been particularly interested to see the collection of Rajasthani Painting works

W S Kula
Scholar of Oriental Shindia
London University
London
11-10-1952

भाई श्री नाहटाजीके इस अनूठे पुस्तकालय और कला-सग्रहका दर्शन करके अतीव आनदकी प्राप्ति हुई । दुर्लभ हस्तलिखित ग्रन्थों, चित्रो तथा अन्य सामग्रीकी खोज और सग्रह जिस लगन, अध्यवसाय और तत्परतासे श्री नाहटाजीने किया है वह अत्यन्त ही सराहनीय है । राजस्थान एक तरहसे स्वय ही उत्तर भारतके साहित्य, कला और सस्कृतिका सग्रहालय है । यहाँकी भूमि, जलवायु, ऐतिहासिक परिस्थितियाँ और सामाजिक सगठन सभी इस सग्रहमें सहायक हुई है, लेकिन आजकल वह सारी सामग्री जिस प्रकार नष्ट-भ्रष्ट होती जा रही है वह प्रत्येक राजस्थानी तथा सस्कृतिप्रिय भारतीयके लिए चिन्ताका विषय है । इन परिस्थितियोंमें श्री अगरचन्दजी नाहटाका प्रयत्न और भी अधिक अभिनन्दनीय है । यह सग्रह अधिकाधिक सर्वद्धित हो और इसका प्रकाशन भारतीय कला और सस्कृति, इतिहास और पुरातत्त्वको अधिकाधिक प्रकाश मे लायें तथा अध्ययनशील युवकोको अपनी धरोहरकी रक्षा करने और उससे प्रेरणा पानेकी स्फूर्त्ति दें, यही मेरी कामना है ।

जवाहरलाल जैन,
जयपुर
१९-११-५२

नाहटाजीका सग्रहालय अतीतके पृष्ठोका उद्घाटन करता है । नाहटाजीके दर्शन पाकर मैं स्वयको भाग्यशाली मानता हूँ कि मेरे युग में ऐसे व्यक्ति है जिन्होने समाज को उसकी धरोहर सौंपी है ।

प्रवीणचन्द्र जैन
२-१-१९५३

श्री अगरचन्दजी नाहटाका सग्रहालय देखनेका आज सौभाग्य हुआ। इनका सग्रह भारतवर्षमें अपने ढगका अनूठा हैं। और सग्रहकर्त्ता स्वय विद्वान् हैं, यह सबसे वडी बात है। इस तरहके सग्रहकर्त्ता और सग्रह जितने भी अधिक हो अच्छा है।

गोपीकृष्ण कानोडिया
विवेकानन्द रोड,
कलकत्ता-६
३१-१-१९५४

I delighted to sei the collection of Mr. Agarchand Nahata

Vyanehet
Keeper Indian Sechar Vehet
Museum London
31-11-1954

जिसकी चर्चा वर्षोंसे कानोंमें पड रही थी उस पुरातत्त्व सम्बन्वी सग्रहको आज देखनेका सौभाग्य मिला। ग्रन्थ-सग्रह तो वडा है ही, उसके साथ पुरातन वस्तु-सग्रह और चित्र-सग्रह तो अमूल्य है। कुछ वस्तुएँ अत्यन्त दुर्लभ है और उनका मूल्याकन नही हो मकता। यह एक चिन्तन, मनन और तल्लीनताका काम है कि जिममें श्री नाहटाजीने अपना सर्वस्व होम कर दिया है।

विद्वान् और कलाकार व्यक्तियोके लिए यह अमूल्य निधि है। देशमें ऐसे थोडे ही व्यक्ति हैं, जिन्होंने सर्वस्वके साथ-साथ अपना शरीर और अपना मन भी इसीमें ढाल दिया है। आनेवालोके लिए यह उपयोगी सामग्री सदैव काम देती रहेगी।

केशवानन्द
ग्रामोत्थान विद्यापीठ, सागरीया
राजस्थान
११-७-५४

अगर चन्द—सग्रह लखे, मिल्यो अमन्द-अनन्द,
वढता रहे, हरि चतुरचित्ति, गगन माहिं ज्यो चन्द।

दुलारेलाल भार्गव,
प्रधान सम्पादक, सस्थापक माधुरी, सुधा
और गगा पुस्तकमाला आदि

एक अनधिकारी जिज्ञासुके नाते मैं यहाँ आया था, पर यह विश्वास लेकर जा रहा हूँ कि मैंने यहाँ कुछ सीखा। सचमुच यह सरस्वतीका मन्दिर है और श्री अगरचन्दजी उसके सिद्ध पुरोहित। हमारे देशको ऐसे विद्यागत-प्राण सत्यशोधकोकी आवश्यकता है।

मन्मथनाथ गुप्त
११-१-५८

I delighted to visit to Sri Nahata's collections of Paintings and Manuscripts Really it is a collection of a devoted scholar

Daylal Bactt
Briteri Buseum, London
12 Jan 1955

श्रीयुत् नाहटाजीके इस अनुपम सग्रहालयमें आनेका सौभाग्य प्राप्तकर अपार हर्ष हुआ। यह सग्रहालय प्राचीन तथा आधुनिक अमुद्रित, मुद्रित एव दुर्लभ ग्रन्थों का भण्डार है। उच्च शिक्षित एव अनुसन्धित्सु वर्गके लिए यह अद्वितीय शोधस्थल है। साहित्यके विद्यार्थियोके लिए यह पथ-प्रदर्शक है। यहाँपर एक क्षण व्यतीत करना अक्षय ज्ञान सचयन के समान है।

कपिलदेव तैलङ्ग
तैलङ्ग भवन
टीकमगढ (म०प्र०)
२३-६-५९

मैं लगभग एक सप्ताहसे नाहटाजीके पुस्तकालय, हस्तलिखित ग्रन्थ तथा कलात्मक सग्रहको देख रहा हूँ। बडे सौभाग्यका विषय है कि राजस्थानी साहित्य और कलाका अनूठा सग्रह, जिससे सैकडो शोधप्रेमियोको लाभ पहुच रहा है बीकानेरमें है। नाहटाजीका यह कर्म-योग सर्वथा स्तुत्य है। आपके अथक परिश्रमका फल आज हम अनेको लेखो व पुस्तकोमें पाते है और आपके जीवनसे प्रेरणा लेते है।

गोपीनाथ शर्मा
अध्यक्ष—इतिहास विभाग
म०भू० कॉलेज, उदयपुर
३-७-५९

श्री नाहटाजीका अभय जैन ग्रन्थालय व संग्रहालय देखा और मुग्ध हो गया। ऐसा लगा जैसे प्रथम वार किसी विद्या-व्यसनीके कक्षमें आया हूँ। पुस्तकोका ऐसा सुव्यवस्थित सग्रह और अन्य कलाकृतियोका सग्रह राजस्थानके लिए गर्वकी वस्तु है।

गणपतिचन्द भण्डारी
हिन्दी प्राध्यापक
श्री महाराजकुमार कॉलेज, जोधपुर
११-१०-५९

श्रीमान् अगरचन्दजी नाहटाके अभय जैन ग्रन्थालय तथा कला-भवनके दर्शन किये। कई दिन तक सग्रहालयमें अनुसधान विषयक कार्य किया। बीकानेरमें इतने बडे ग्रन्थागारको देखकर महान हर्ष हुआ। श्री नाहटाजीकी सतत साधना एव तपस्या साकार रूपमें नेत्रोके सामने प्रस्तुत हो जाती हैं आपका विद्या-व्यसन, अथक अध्यवसाय, तपस्या-भाव एव कार्य-पटुता प्रत्येक विद्याप्रेमी और अनुसधानकर्त्ताके लिए

अनुकरणीय हैं। पुरातन-साहित्यके शोधके लिए यह सग्रहालय विशेष रूपसे आवश्यक सामग्री प्रदान करनेवाला है और यह ग्रन्थालय राष्ट्रके लिए गौरवकी वस्तु है।

टीकमसिह तोमर
हिन्दी विभाग
बलवन्त राजपूत कॉलेज, आगरा
१७-१०-५२

आज ता० २८-७-६०को श्री अगरचन्द नाहटाजीके पुरातन सामग्रीके सग्रहको देखनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ। उनकी अनुपस्थितिमें यह सग्रह देखा, इसका खेद रहा। किन्तु यह सग्रह बडे महत्त्वका है और नाहटाजीको पुरातन सस्कृतिसे कितना लगाव है इससे यह भान हो जाता है। सग्रहके प्रदर्शन और संरक्षणके लिए स्थानका अभाव है। आशा है, नाहटाजी इसके लिए भी कोई उपाय निकाल सकेंगे ताकि यह अमूल्य सस्कृति निधि स्थायी रहे एव आनेवाली पीढियोको पूर्ण प्रेरणा दे सके। सग्रहकी और भी अधिक समृद्धिके लिए मैं हार्दिक कामना करता हूँ।

यज्ञदत्त शर्मा
सुपरिण्टेण्डेण्ट, पुरातत्त्व विभाग
नयी दिल्ली
२८-७-६०

कल बीकानेरमें आपका ग्रन्थ-भण्डार और कला-सग्रह देखकर मैं मुग्ध हो गया हूँ। किसी एक व्यक्तिका इतना बडा ग्रन्थ-वैभव हो, यह इस भौतिक युगमें तो विस्मयजनक ही है। कई मित्रोंसे आपके इस भण्डारका यश सुनता रहा था। प्रत्यक्ष देखकर चकित रह गया।

आप स्वय चलते-फिरते जीवित सग्रहालय है, अद्भुत सस्था ही हैं और वह भी जागरूक एव कर्त्तव्यरत! बीकानेर ही नही समस्त राजस्थानका परम सौभाग्य है कि इतना वैभवपूर्ण कोष उसके आँचलमें एक व्यक्तिने प्रतिष्ठितकर वैभवशाली बना दिया है। वह स्थायी निधि हो और सदैव ज्ञानका आलोक देता रहेगा। मेरा हार्दिक अभिनन्दन।

सूर्यनारायण व्यास
राजभवन, जयपुर
राजस्थान
१४-१२-६६

श्री नाहटाजीसे उनके लेखो द्वारा पिछले बीस वर्षोंसे परिचित था, परन्तु साक्षात्कारका अवसर नही प्राप्त हो सका था। आज वह अवसर अनायाम ही प्राप्त हो गया। मुझे इनमे मिलकर तथा इनके निजी पुस्तकालय एव कला-संग्रहको देखकर अतीव हर्ष हुआ। आप जैसे साहित्य एव इतिहास प्रेमियो द्वारा ही देशके इन विषयो की अविचल परम्परा शताब्दियो से अक्षुण्ण बनी हुई है। आपका कला-सग्रह अपने ढगका अनूठा है। पुस्तकालय अपने में पूर्ण है और शोध कार्यके लिए सर्वथा उपयुक्त है।

रामवृक्ष सिह
गोरखपुर विश्वविद्यालय
३०-११-७०

श्री गुरु रविदास वाणीकी खोजमें मुझे बीकानेर आना पड़ा। नाहटाजीसे पत्र-व्यवहार द्वारा निश्चित समयपर मैं यहाँ पहुँचा। नाहटाजीके दर्शन एव उनके व्यक्तित्वसे मैं बड़ा प्रभावित हुआ। व्यापारी होते हुए भी साहित्यसे ऐसा अनुराग एव खोजकी सूझबूझ कम ही व्यक्तियोमें देखनेको मिलती है। इतनी पाण्डु-लिपियोका भण्डार भी कम ही देखनेमें आया जैसा कि नाहटाजीके भण्डारमें है। इन्हीके सन्तवाणी-सग्रहसे मैंने रैदासवाणीकी प्रतिलिपि की है। नाहटाजीका सौजन्य तो अद्वितीय है।

वेणीप्रसाद शर्मा
अध्यक्ष हिन्दी विभाग
डी० ए० वी० कॉलेज
चण्डीगढ
४-७-७१

ज्ञान-प्रवण तथा भक्ति-प्रवण श्री भँवरलालजी नाहटा

अध्यात्म योगी मुनिश्री महेन्द्रकुमारजी 'प्रथम'

सत्ता, सम्पत्ति व शारीरिक सौन्दर्य व्यक्तित्वकी बहिर्मुखता है। साहित्य, साधना तथा अनवरत स्वाध्याय अन्तरग व्यक्तित्वकी अभिव्यंजना है। अपूर्ण व्यक्ति बहिर्मुखताको प्रधानता देता है। साधक सदैव अन्तरगमे रमण करता है। उसका दर्शन नेत्र-सापेक्ष नही होता। उसका श्रवण कर्णनिरपेक्ष होता है। उसका चिन्तन किसी अज्ञातका तलस्पर्शी होता है। वह प्रतिक्षण अन्वेषण-परायण रहता है। स्थूलतामें वह कभी विहार नही करता। उसकी वाणी अधिकाशत मौन होती है, किन्तु, जब वह मुखर होती है, अनेक नये आयाम प्रस्तुत कर देती है। उसकी लेखनी उस निराकारताको साकार करती है और सहस्रों-सहस्र विद्वानोको प्रीणित कर देती है। साधनाके उत्तुग शृगसे स्वाध्याय एव प्रज्ञाके उभय तटोंके बीच साहित्यकी मन्दाकिनी कल-कल रवसे प्रवाहित होती है। जैनधर्मके प्रमुख उपासक श्री भँवरलालजी नाहटा ऐसे ही मनीषी है, जो श्रद्धाको गहराईमें उतरकर अन्वेषणके माध्यमसे अनेक बहुमूल्य रत्न पानेमें सफल हुए हैं।

जैनधर्मकी पहुँच प्रागैतिहासिक है। चौबीस तीर्थंकरोके युगमें इस धर्मने अनेक प्रकारसे उद्वर्तन पाया है। किन्तु, समयकी प्रलम्बताने बहुत सारे महनीय कार्योंको अतीतकी परतोके नीचे दबा दिया है। आज उन परतोको हटाकर यथास्थितिका उद्घाटन अपेक्षित है। इस कार्यमें मूर्त्तियाँ, अभिलेख, सिक्के, ताम्रपत्र, चित्र, स्तूप तथा उत्कीर्ण स्तम्भ, प्राचीन शास्त्रोंके पृष्ठ आदि योगभूत होते हैं। किन्तु, इस सामग्रीके ज्ञाता, उसके अनुशीलक तथा निर्णयमें सक्षम व्यक्ति विरल ही होते हैं। इतिहासका यह सबसे जटिल पहलू होता है, पर, जब इसके निष्कर्ष प्रस्तुत होते हैं, सर्वसामान्यको भी अतीव आह्लाद होता है। प्रसिद्ध इतिहासकार श्री भँवरलालजी नाहटाने इस क्षेत्रसे सबद्ध अनेक जटिलताओको अपनेपर ओढ-कर जैन-इतिहासके अनेक अनुद्घाटित रहस्योको सप्रमाण प्रस्तुत किया है। इस महनीय कार्यके पीछे कई दशकोंका उनका अथक श्रम साकार हुआ है। कला, पुरातत्त्व, साहित्य, चित्र, तीर्थस्थान, मूर्त्तियाँ, सिक्के, लिपि आदिसे सम्बद्ध जैन-परम्पराके किसी भी प्रश्नके उपस्थित किये जानेपर श्री नाहटाजी द्वारा तत्काल प्रामाणिक उत्तर प्रस्तुत हो जाता है। तिथि, संवत् आदिका गणनात्मक ब्यौरा भी साथ ही अभिव्यक्त हो जाता है। प्राय तिथि, सवत् आदि कण्ठाग्र कम ही मिलते हैं, पर, नाहटाजी इसके अपवाद है। किसी भी पहलूसे सम्बद्ध सन्दर्भ-पद्य भी साथ ही उपस्थित हो जाते हैं। प्रज्ञा पारमिताका ऐसा सुखद योग उसे ही प्राप्त होता है, जिसे ज्ञानावरणीय कर्मका क्षयोपशम प्राप्त हो। श्री भँवरलालजी नाहटा देव, गुरु व धर्ममें हार्दिक अनुरक्ति तथा श्रद्धाके आधारपर उस विरल योगको प्राप्त करने में सफल हैं।

श्री भँवरलालजी नाहटाका ज्ञान छलकनेवाले घटकी तरह नही है। विज्ञापन-भावनासे सर्वथा दूर रहकर अनवरत ठोस कार्यमें वे एकाग्र रहते हैं। दिखावे व आडम्बरसे सर्वथा दूर है। वे वयसे प्रौढ हो चुके हैं, तो ज्ञान व अनुभवोंमे भी प्रौढ हैं। नियमित धार्मिक चर्यामें अपनेको सयोजित रखते हैं। नाना स्तवनोका जब तन्मय होकर संगायन करते हैं, तो किसी भी भक्त हृदयकी सहज स्मृति हो उठती है। ज्ञान-प्रवणताके साथ सहज हार्दिक भक्ति-प्रवणताका सुयोग मणि-काचनके योगका विलक्षण उदाहरण है।

श्री नाहटाजी पिछले कई वर्षोंसे मेरे साथ सम्पर्कित थे। शोधके अनेक प्रसंगोपर बहुत बार गहनें चर्चाएँ होती थी। किन्तु, विगत एक वर्षकी अवधिने उस सम्पर्कको और प्रगाढता प्रदान की है। उनकी निश्छल भक्ति-प्रवणताने किसी भी प्रकारकी दूरीको रहने नही दिया है। सारा दूरत्व सिमट गया है। सच ही है, धर्मका सश्लेष सदैव एकत्वकी अभिवृद्धि करता है। श्री नाहटाजीका सन्मान ज्ञान-प्रवणता तथा भक्ति-प्रवणताका प्रतीक है। जिन व्यक्तियोने इस योजनाको आगे बढाया है, नि सन्देह उन्होने मूक साधकोकी अनवद्य साधनाको अभिनन्दित कर एक नये प्रसगकी ओर जन-मानसको आकर्षित किया है।



समाज इनका सदैव ऋणी रहेगा

श्री यशपाल जैन

लगभग ३५ वर्ष पहलेकी बात है, मैं उस समय कडलेश्वर (मध्यप्रदेश)में रहा करता था। श्री बनारसीदास चतुर्वेदी तथा मैं 'मधुकर' मासिक पत्र निकालते थे। उस पत्रके लिए बहुत-सी रचनाएँ आया करती थी। एक दिन एक लिफाफा मिला। उसमें एक लेख था, लेखक थे श्री अगरचन्द नाहटा। यह नाहटाजीसे पहला सम्पर्क हुआ। प्राप्त लेख 'मधुकर'में छाप दिया। फिर तो एकके बाद एक अनेक लेख उनके मुझे मिलते रहे।

उसके बाद मैं दिल्ली आ गया और 'जीवन साहित्य'का सम्पादन करने लगा। श्री नाहटाजीके लेख इस पत्रके लिए भी आने लगे। एक दिन देखता क्या हूँ कि एक सज्जन मिलने आये। बद गलेका कोट, दो लागकी धोती, सिरपर पगडी, वर्ण श्यामल, कद ऊँचा, बडी-बडी मूँछें, वेश-भूषासे एकदम मारवाड़ी लगते थे। बैठते ही बोले, "मेरा नाम अगरचन्द नाहटा है।" बधुवर अगरचन्द नाहटासे यह मेरी पहली प्रत्यक्ष भेंट थी।

उनके लेख मुझे पसन्द आते थे। उनकी रुचि बडी व्यापक थी। इतिहास और शोधकी ओर उनका बडा झुकाव था और जो भी रचना वे भेजते थे, वह किसी ऐतिहासिक विषयसे सम्बन्धित अथवा शोधपर आधारित होती थी।

मुझे स्मरण है—उस पहली भेंटमें मैंने उनसे पूछा था, "आप शोधपूर्ण विषयोपर इतने लेख कैसे लिख लेते हैं?"

उन्होने जो उत्तर दिया था, वह भी मैं भूल नही पाया हूँ। उन्होने कहा था, "मुझे लिखनेका बहुत अभ्यास है। मैं दिनभर में १० लेख लिख सकता हूँ।"

उनकी इस बातसे जहाँ मुझे विस्मय हुआ, वहाँ उनके प्रति आदरकी भावना भी उत्पन्न हुई। व्यापार करते हुए कोई व्यक्ति इतना अध्ययनशील, और वह भी गम्भीर इतिहास और साहित्यका पढने-वाला हो सकता है, यह मेरे लिये अत्यत कौतूहलकी वस्तु थी।

इसके बाद तो नाहटाजीसे बीसियो बार मिलना हुआ। बीकानेरमें मुद्रित पुस्तको और हस्तलिखित ग्रन्थोका उनका विपुल सग्रह देखा। सच यह है कि ज्यो-ज्यो उनसे सम्पर्क बढा, उनके प्रति मेरी आत्मीयतामें वृद्धि होती गयी। मैंने पाया कि वे मूलत विद्या-व्यसनी हैं।

आचार्य श्री जिन कृपाचन्द्रसूरिके सान्निध्यमें वे ३ वर्ष रहे और ४५ वर्ष पूर्वसे उनका लेखन निरन्तर चल रहा है। उन्होने लगभग ४ हजार लेख लिखे हैं जो ४०० पत्र-पत्रिकाओमें प्रकाशित हुए हैं। कोई ३ दर्जन पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं और करीब ६० ग्रन्थोका सम्पादन किया है।

इतना ही नही उन्होने कई ग्रन्थमालाएँ प्रकाशित की हैं। अपने स्वर्गीय बडे भ्राता श्री अभयराज-जीके नामपर अभय-ग्रन्थमाला निकाली है, जिसके अन्तर्गत ३० ग्रन्थ निकल चुके हैं।

नाहटाजीकी रुचि केवल साहित्य तक ही सीमित नही है। अपने पिता श्री सेठ शकरदानजी नाहटा-की स्मृतिमें उन्होने एक कलाभवनका निर्माण किया है जिसमें प्राचीन चित्रो व कलात्मक सामग्रीका बडा सुन्दर व उपयोगी संग्रह है।

अनेक सस्थाओंसे वे सक्रिय रूपमें सम्बद्ध हैं। इन सस्थाओके द्वारा साहित्य, सस्कृति, कला, इतिहास आदिकी उल्लेखनीय सेवा हुई है व हो रही है।

नाहटाजीने जैनधर्मका गहन अध्ययन किया है व जैनदर्शनको गहराईसे समझा है। उनके विचार बहुत ही सुलझे हुए हैं। वे अच्छे वक्ता हैं। मुझे अनेक अवसरोपर उन्हें सुननेका मौका मिला है। वह गूढसे गूढ बातोको भी सरलतासे स्पष्ट कर देते हैं।

श्री नाहटाजीको उनकी विद्वत्ताके कारण आराके जैन भवनने सिद्धातार्चाय, अलीगढके जैन मिशनने विद्या-वारिधि, महाकौशल मूर्त्ति-पूजक सघने सिद्धात-महोदधि, राजस्थानी सस्थाने साहित्य-वाचस्पति और साहित्य-तपस्वी आदि कई उपाधियोसे विभूषित किया है।

लेखन नाहटाजीका पेशा नही है। पेशेसे वे व्यापारी हैं। विद्या अर्जन व लेखनकी वृत्ति तो उन्हें प्रभुसे वरदानके रूपमें मिली है। वे खूब पढते हैं और जो ज्ञान प्राप्त करते हैं, उसे कजूसकी तरह दबाकर नही रखते, मुक्त भावसे पाठकोमें वितरित करते हैं। नयीसे नयी पुस्तकोके सग्रहकी उनमें अदम्य लालसा है। फलत. आज उनके सग्रहालयमे विभिन्न विषयोकी हजारो पुस्तके हैं। उससे भी बडी उनकी सेवा हस्त-लिखित प्राचीन ग्रन्थोका संकलन है। उनके ज्ञान-भण्डारमें मुद्रितसे भी अधिक हस्तलिखित ग्रन्थ हैं। वे बडे पारखी हैं। जौहरीकी भाँति उनकी निगाह ग्रन्थ-रत्नोपर सहज ही पहुँच जाती है और वे उन्हें प्राप्त करके ही चैन लेते है।

गम्भीर प्रकृतिके दिखाई देनेवाले नाहटाजीका अन्तर बडा ही तरल है। वे बहुत ही मिलनसार व प्रेमल स्वभावके हैं। उनके हृदयमें वात्सल्यकी धारा निरन्तर प्रवाहित रहती है। जब कभी वे दिल्ली आते हैं तो यथासभव विना मिले नही जाते। भगवान महावीरके २५००वें निर्वाण-महोत्सवके प्रसगमें तो हमलोग जाने कितनी बार मिले। मैंने देखा कि उनके मनमें अनेक योजनाएँ घूम रही थी। वे चाहते थे, इस मंगल अवसरपर कुछ ठोस काम हो, कुछ बढ़िया ग्रन्थ प्रकाशित हो। वे जब भी मिलते, बडे विस्तारसे चर्चा करते।

मुझे यह देखकर बडा हर्ष हुआ कि श्री नाहटाजी साम्प्रदायिकतासे परे हैं। दिगम्बर और श्वेताम्बर, तेरापन्थी और स्थानकवासी आम्नायोके मतभेदोमें उनकी कोई दिलचस्पी नही। वे चाहते है कि विवादास्पद बातोमें न उलझकर उन चीजोको लिया जाय, जिनमें सभी आम्नायोमें मतैक्य है। भगवान महावीरने तो जो कुछ कहा था, वह सम्पूर्ण मानव-जातिके लिए था, उनके समवसरणमें सभी लोग बिना भेदभाव एकत्रित होते थे, यहाँ तक कि पशु-पक्षियो तकके लिए उनके द्वार खुले थे।

श्री नाहटाजीकी सेवाएँ नि सन्देह सराहनीय हैं। अन्धकारमें पडे इतिहासके न जाने कितने पृष्ठोंको वे प्रकाशमें लाये हैं और उनका यह सत्प्रयास निरन्तर चल रहा है। ऐसे बहुतसे हस्तलिखित ग्रन्थोका, जो मन्दिरोमें या भण्डारोमें विस्मृत पडे थे, उन्होने पाठकोको परिचय कराया है और उनकी उपयोगिताकी ओर समाजका ध्यान आकर्षित किया है।

मेरी दृष्टिमें यह नाहटाजीकी ऐसी सेवा है जिसके लिए जैन समाज ही नही, भारतीय समाज उनका चिर-ऋणी रहेगा। स्मरण रहे कि नाहटाजीने यह सेवा किसी स्वार्थ-भावसे नही की है—न पैसेके लालचसे, और न यशकी इच्छासे। उनकी दृष्टि शुद्ध परमार्थकी रही है।

प्रभुसे मेरी कामना है कि हमारे ये बन्धु दीर्घायु हो, स्वस्थ रहें और उनके हाथो समाज तथा देशकी आगे भी सतत् सेवा होती रहे।

सिद्धान्ताचार्य, इतिहासरत्न, विद्यावारिधि
श्री अगरचन्द नाहटा

श्रीमती गुणसुन्दरी बाँठिया, एम० ए०, कानपुर

"आतो स्वर्गां ने शरमावें, इणपर देव रमणने आवे।
इण रो यश नर-नारी गावें, धरती धोरांरी, मीरांरी, भगरांरी।"

ऐसी यशस्विनी भूमि है राजस्थानकी। प्रकृतिने इस वीर-भूमि का अद्भुत रगोंसे शृङ्गार किया है। एक तरफ हरे-भरे मैदान और आकाशको छूती-सी पर्वत शृंखलाएँ हैं तो दूसरी तरफ पठार और विशाल मरु-प्रदेश इसकी शोभामें चार चाँद लगा देते हैं। यह भूमि प्राकृतिक सौन्दर्यकी स्वामिनी होनेके साथ साथ महान कवियों, विद्वानो, सन्तो और कलाकारोकी भी जननी रही है। इसी मरुभूमि की अनमोल प्रतिमा है श्री अगरचन्द नाहटा।

नाहटाजीमें लक्ष्मी और सरस्वतीका अनूठा सगम है। दोनो माताओके समान रूपसे दुलारे है। नाहटाजी अतुल धनराशिके होते हुए भी आप साधू-सा जीवन जीते है। आपका जन्म वि० स० १९६७के चैत वदी ४को बीकानेरमें हुआ। १७-वर्षकी अल्पायुमें ही आपमें साहित्य और कलाके प्रति अद्भुत रुचिका विकास हुआ। विगत ४५ वर्षोंमें आपके ४५ ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। तीन सौ पत्र-पत्रिकाओमे इनके पाँच हजारसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण लेख प्रकाशित हो चुके हैं।

लेखक और सम्पादकके साथ-साथ आप बहुत बडे सग्राहक भी है। आपके अभय जैन ग्रन्थालयमें पचास हजार हस्तलिखित और इतनी ही मुद्रित, अर्थात एक लाख ग्रन्थोका महत्त्वपूर्ण सग्रह है। अपने पिता-श्रीकी स्मृतिमें स्थापित सेठ शकरदान नाहटा कला-भवनमें तीन हजार प्राचीन चित्र, सैकडो सिक्के, प्राचीन प्रतिमाएँ और नानाविध कलाकृतियोका विशिष्ट सग्रह है।

आपकी साहित्य और कलाकी सेवाओसे प्रभावित होकर जैन साहित्य भवन, आराने आपको विहारके राज्यपालकी अध्यक्षतामें "सिद्धान्ताचार्य"की पदवीसे सम्मानित किया। इन्टरनेशनल एकाडमी ऑफ जैन कल्चरने आपको "विद्या-वारिधि" से विभूषित किया। श्री जिनदत्तसूरि-सेवा-सघ ने "इतिहास-रत्न" की पदवीसे विभूपित कर आपका गौरव बढाया। बम्बईकी श्रीमान सूरिसारस्वत समारोहकी विद्वत् परिपदने आपको "पद्म-भूपण" की उपाधि प्रदान की।

१८ वर्षकी अल्पायुमें आपने 'विधवा-कर्त्तव्य' नामक ग्रन्थ लिखा। इसके पश्चात् तो आपके निवन्ध और ग्रथ लेखनकी प्रवृत्ति सदा चालू रही। आपके द्वारा लिखित ग्रथोमेंसे 'प्राचीन काव्य रूपोंकी परपरा', 'युगप्रधान जिनचन्दसूरि', 'बीकानेर जैन लेख सग्रह', 'हस्तलिखित ग्रन्थोकी खोज', 'प्राचीन ऐतिहासिक काव्य' और, राजस्थानी साहित्यकी गौरवपूर्ण परंपरा, विशेष उल्लेखनीय है।

अनेक विद्वानो द्वारा लिखित ग्रथोकी आपने प्रस्तावना लिखी। हजारो अज्ञात रचनाओका परिचय साहित्य-जगतको कराया। सैंकडो शोधछात्रोको मार्गदर्शन और साहित्य-सामग्री दे रहे हैं। हस्तलिखित प्रतियोंकी खोज और नवीन जानकारी प्रकाशमें लाते रहना तो आपका व्यसन-सा हो गया है। श्री अभय जैन ग्रन्थालयमें हजारो अज्ञात एव अनन्य अप्राप्य रचनाओका आपने सग्रह किया है। अत शोध विद्यार्थी और विद्वानोंके लिए वह एक साहित्य तीर्थ-सा वन गया है।

नाहटाजीकी धर्ममें गहरी श्रद्धा है। आध्यात्म और दर्शन आपका सदासे प्रिय विषय रहा है। निष्काम कर्ममें आपकी गहरी निष्ठा है। स्वाध्याय और साहित्य-साधनामें लीन रहते हैं। आपका जीवन अप्रमादी और कर्मठ रहा है।

नाहटाजी राजस्थानी भाषाके प्रबल समर्थक और मर्मज्ञ विद्वान हैं। साहित्य अकादमी दिल्लीने राजस्थानी भाषाकी मान्यताके लिए जो समिति बुलायी थी उसमें राजस्थानी भाषाका पक्ष समर्थनके लिए आपको ही निमन्त्रित किया गया था। आपके विशिष्ट व्यक्तित्व और तर्कसगत उद्धरणोसे प्रभावित हो समितिने सर्वसम्मतिसे राजस्थानी भाषाको साहित्यिक मान्यता देना स्वीकार कर लिया।

आबूको गुजरात प्रदेशसे पुन॰ राजस्थानमे लानेका बहुत बडा श्रेय नाहटाजीको है। इसके समर्थनमें आपने बहुत महत्वपूर्ण लेख लोकवाणी आदिमें प्रकाशित कराये। गुजरातके समर्थक श्री अमृत पाण्याके एक-एक तर्कका जवाब बडी सूझ-बूझ व विद्वत्तापूर्वक दिया।

राजस्थानकी साहित्य एव कला समृद्धिको प्रकाशमें लानेका जो आपने भागीरथ प्रयत्न किया है वह विरल एव अन्यतम है। राजस्थानी साहित्य अकादमी, उदयपुर द्वारा तत्कालीन मुख्यमत्री श्री मोहनलाल सुखाडियाने अपने करकमलोंसे राजस्थानके उच्चतम विद्वानके रूपमें आपका स्वागत कर एक अभिनन्दन-प्रशस्ति प्रमाण-पत्र भेंट किया। बीकानेर महाराज डॉ० कर्णीसिंहजीने सार्वजनिक कल्याणके लिए अपने प्रिवीपर्सके पाँच लाख रुपयोका जो ट्रस्ट बनाया है उसमें आपको भी एक ट्रस्टी नियुक्त किया है। यह आपकी अपार विद्वत्ता और लोकप्रियताका परिचायक है।

श्रीअगरचन्दजी नाहटाकी षष्टि पूर्त्तिके शुभ अवमरपर बीकानेरके नागरिको और साहित्यिक सस्थाओंकी तरफसे ता० १४–३–७१को, प्रो० स्वामी नरोत्तमदासजीकी अध्यक्षतामें बीकानेरके महाराज कुमार श्री नरेन्द्रसिंहजीके करकमलो द्वारा नागरिक अभिनन्दन किया गया।

नाहटाजीकी साहित्यिक और धार्मिक सेवाओके लिए १० अप्रैल १९७६को बीकानेरमे अभिनन्दन किया जा रहा है। इसके लिए एक समिति बनायी गयी है। एक बृहद् अभिनन्दन ग्रन्थ जो जैन साहित्य, राजस्थानी भाषा साहित्य और पुरातन सम्बन्धी लेखोंका वृहद् कोष है, आगामी १०–१२ अप्रैलको प्रकाशित हो रहा है। इस ग्रन्थका सम्पादन देशके विख्यात विद्वानों—डॉ० दशरथ शर्मा, डॉ० एन. एन उपाध्ये, डॉ० भोगीलाल सॉडेसरा, प्रो० नरोत्तमदास, श्री रतनचन्द्र अग्रवाल, डॉ० बी एन शर्मा एव प्रबन्ध सम्पादक श्री रामवल्लभ सोमाणी जयपुर हैं। नाहटाजीके साथ-साथ उनके भ्रातज श्री भँवरलालजी नाहटाका भी राजस्थानी साहित्यको बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान है। दोनो चाचा-भतीजोका सम्मान अभिनन्दन-ग्रन्थ द्वारा किया जा रहा है।

ऐसे सरस्वती-पुत्र और राजस्थानके अनमोल रत्न श्री नाहटाजीका उनके ६५ वर्षकी पूर्त्तिपर हार्दिक अभिनन्दन करते है और प्रभुसे प्रार्थना करते हैं कि वे चिरायु होकर माँ भारती और देशकी निरन्तर सेवा करते रहें।



श्री अगरचन्द नाहटा अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशनार्थ

आर्थिक सहयोग देनेवालोंकी शुभ नामावलि

संरक्षक

२५०१) श्री कानमलजी सेठिया, कलकत्ता।
[Continental Transport Agency]

अभिभावक

१००१) श्रीमती मगन बाई बाँठिया, बीकानेर धर्मपत्नी स्व० सेठ फूलचंदजी बाँठिया।
१००१) श्रीमान् उदयराजजी गोलिया एण्ड सस, बम्बई।

सम्मानीय सदस्य

५०१) सेठ अगरचद मानमल चौरडिया ट्रस्ट, मद्रास।
५०१) सेठ लालचदजी ढढ्ढा ट्रस्ट, मद्रास।
५०१) सेठ पूनमचन्द आर० शाह, मद्रास।
५०१) श्री निर्मलकुमारजी जैन, सिलचर।
५०१) श्री जेठमल जी केशरीचन्द जी सेठिया ट्रस्ट, मद्रास।
५०१) श्री नेमचन्दजी नथमलजी रिखवदासजी भसाली, बीकानेर।
५०१) श्री हमीरमलजी चंपालालजी बाँठिया, भीनासर।
५०१) श्री सुगनचन्दजी घोडावत, धर्मनगर।
५०१) श्री राजरूपजी दुलीचन्दजी टाक, जयपुर।
५०१) श्री रावतमलजी भैरुदानजी सुराणा, कलकत्ता।
५०१) श्री मे० नाहटा ब्रादर्स, सिलचर।

सदस्य

२५१) श्री शिवचन्दजी जतनमलजी डागा, मद्रास।
२५१) श्री रतनचन्दजी चोरडिया ट्रस्ट, मद्रास।
२५१) श्री मेहता कवीरचन्दजी वैद, कलकत्ता।
२५१) श्री झँवरीमलजी पगारिया, वम्बई।
२५१) श्री उमरावमलजी सुराणा, मद्रास।
२५१) श्री मगनमलजी भँवरलालजी मन्नूलालजी पारख, बीकानेर।
२५१) श्री सहसमलजी लोढा, पडियरिया।
२५१) श्री महेशकुमारजी जैन, दुर्ग।

२५१) श्री सुन्दरलालजी नाहटा चेरिटेबल ट्रस्ट मद्रास।
२५१) श्री दीपचन्दजी नाहटा, कलकत्ता।
२५१) श्री जालमचन्दजी, रिखबराजजी, मनमोहनचन्दजी बाफणा, आगरा।
२५१) श्री नरेशचन्दजी पारसमलजी, कानपुर।
२५१) श्री शा० मोतीचन्द पारसमल, कानपुर।

सहयोगी

२०१) श्री देवीचन्दजी पारख, दाढी।
१५१) श्री कालूरामजी बाफना, बालाघाट।
१२५) श्री बादरमलजी चोरडिया, मद्रास।
१२५) श्री भँवरलालजी बोथरा, धर्मनगर।
१०१) श्री चन्दनमलजी सुराना, रायपुर।
१०१) श्री श्रीचन्दजी लूनावत, रायपुर।
१०१) श्री उदयकरणजी रीद्धकरणजी, दुर्ग।
१०१) श्री मिसरीलालजी लोढा, दुर्ग।
१०१) श्री कुदनमलजी हमीरमलजी लोढा, दुर्ग।
१०१) श्री पृथ्वीराजजी प्रकाशचन्दजी डाकलिया, पडरिया।
१११) श्री धनराजजी चौपडा, गोदिया।
१००१) प्रख्यात् वक्ता मुनि पूज्य कान्तीसागरजी महाराज के सदुपदेश से सग्रहित मा० सेठ मंगलचन्द चम्पालाल, ब्यावर।

●

श्री अगरचन्द नाहटा अभिनन्दन समारोह समिति के पदाधिकारी

संरक्षक

श्री हरिदेव जोशी, मुख्य मन्त्री, राजस्थान
श्री राजबहादुर, केन्द्रीय मंत्री
श्री रामनिवास मिर्धा, केन्द्रीय राज्यमंत्री
श्री चन्दनमल बैद, वित्तमंत्री, राजस्थान
श्री डा० करणीसिंह संसद-सदस्य, बीकानेर
श्री सेठ कस्तूरभाई लालभाई, अहमदाबाद
श्री शाहू शांतिप्रसाद जैन, दिल्ली
श्री डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, कलकत्ता
श्री शादीलाल जैन, बम्बई
श्री सेठ अचलसिंह, संसद-सदस्य, दिल्ली
श्री पद्मश्री मोहनमल चोरड़िया, मद्रास
श्री विजयसिंह नाहर, कलकत्ता
श्री गुमानमल चोरड़िया, जयपुर
श्री अक्षयकुमार जैन, दिल्ली
श्री प्रभुदयाल डाबलीवाल, कलकत्ता
श्री सीताराम शेखसरिया, कलकत्ता
श्री भागीरथ कानोडिया, कलकत्ता

अध्यक्ष :

पद्मविभूषण डा० श्री दौलतसिंह कोठारी, दिल

उपाध्यक्ष :

विद्यावाचस्पति प० विद्याधर शास्त्री, बीकाने
श्री प्रो० नरोत्तमदास स्वामी, बीकानेर
श्री डा० छगन मोहता, बीकानेर

मन्त्री :

श्री भवरलाल कोठारी, बीकानेर

सहमन्त्री :

श्री मूलचन्द पारीक, बीकानेर
श्री जसकरण सुखाणी, बीकानेर
श्री प्रकाश सेठिया, बीकानेर

कोषाध्यक्ष :

श्री लालचन्द कोठारी, बीकानेर

अभिनन्दन ग्रन्थ :

प्रधान सपादक—डा० श्री दशरथ शर्मा, दिल्
प्रबध संपादक—श्री रामवल्लभ सोमानी, जयपु
व्यवस्थापक—श्री हजारीमल बाठिया, कानपु